संक्षिप्त

विश्व इतिहास

दो भागो मे

संक्षिप्त विश्व इतिहास

पहला भाग

सपादक प्रो० अ०ज० मानफ़ेद

प्रगति प्रकाशन

मास्को

अनुवादक नरेश वेदी

लेखक

अकादमीशियन म० व० नेच्किना म० द० स्काज्किन अ० अ० गूबेर
डी० एस सी० (इतिहास) म० अ० अल्पेरोविच, ल० न० कुताकोव,
ज० ज० मानफ्रेद म० ल० उन्चेंको अ० व० फदेयेव,
पी एच०डी० (इतिहास) द० व० देओपिक

КРАТКАЯ ВСЕМИРНАЯ ИСТОРИЯ

(В ДВУХ КНИГАХ)

КНИГА 1

На языке хинди

सोवियत संघ में मुद्रित

К $\frac{10603-219}{014(01)-80}$ 711—79

10603000

प्रस्तावना

प्राचीन विश्व

मध्य युग

आधुनिक काल

विश्व इतिहास की सक्षिप्त रूपरेखा मानवजाति द्वारा आदिम समाज के युग से लेकर वर्तमान काल तक तय किये गये लबे और जटिल मार्ग का अनुरेखण करने का एक प्रयास है।

स्वाभाविक तौर पर इस पुस्तक के कलेवर के भीतर इन सदियो मे घटनेवाली सभी घटनाओ का पूरा और विस्तृत वर्णन करना असभव है यथा मानव समाज का विकास, प्राचीन सभ्यताए, मध्य युग के सैन्य अभियान और विजये, आधुनिक काल मे सामाजिक प्रगति के लबे डग और क्रातिया, जिनमे विश्व-इतिहास मे एक नये युग का समारभ करनेवाली महान अक्तूबर समाजवादी क्राति सबसे निर्णायक थी। पाठको को इस पुस्तक मे मानव प्रगति के विकासक्रम मे प्रभावी योगदान करनेवाली सबसे प्रमुख घटनाओ से ही परिचय प्राप्त करने का अवसर मिलेगा। हमे विश्वास है कि यह इतिहास के सपूर्ण क्रम की प्रेरक शक्तियो और मुख्य प्रवृत्तियो का स्पष्ट चित्र प्रदान करने के लिए पर्याप्त सिद्ध होगा।

मानव समाज के विकास को निर्धारित करनेवाले मुख्य नियम कौनसे है? ऐतिहासिक प्रगति का सार किस चीज म निहित है? अतीत मे इतने सारे राज्यो के आकस्मिक उत्थान और पतन के कारण क्या है? कम्युनिज्म की विजय अनिवार्य क्यो है, जो सामाजिक तथा राष्ट्रीय उत्पीडन के विरुद्ध अविराम सघर्ष करनेवाले करोडो लोगो क युग युग से सजोये आदर्शो को साकार करेगा?

इस पुस्तक के लेखको ने ठोस ऐतिहासिक सामग्री और मानव समाज के विकास को शासित करनेवाले नियमो के बारे मे मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धात के आधार पर इन प्रश्नो के उत्तर दिये है। सोवियत सघ के इतिहास की ओर

काफी ध्यान देते हुए भी उन्होंने साथ ही पुस्तक के कलेवर द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर संसार के सभी महाद्वीपों के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक विकास के मुख्य लक्षणों को दर्शाने का प्रयास किया है।

पुस्तक के पहले खंड में आदिम समाज से लेकर रूस में १९१७ की अक्तूबर क्रांति तक के विस्तृत काल को लिया गया है। मानव समाज की उत्पादक शक्तियों के क्रमिक विकास के साथ-साथ ऐतिहासिक प्रक्रिया में उल्लेखनीय तेजी आती गयी, जो साथ ही अधिकाधिक सार्वभौमिक स्वरूप भी ग्रहण करने लगी। समस्त नानारूप राजनीतिक घटनाओं का आधार – दासस्वामी समाज के युग में भी और सामंती तथा विशेषकर पूंजीवादी समाज में भी – वर्ग संघर्ष, मेहनतकश जनसाधारण का सामाजिक तथा राष्ट्रीय मुक्ति के नाम पर अपने शोषकों के विरुद्ध संघर्ष रहा है। रूस की अक्तूबर क्रांति इसी संघर्ष की एक निर्णायक विजय थी।

पुस्तक का दूसरा खंड अक्तूबर क्रांति द्वारा उद्घाटित नये युग की घटनाओं के बारे में है। इसका कारण आधुनिक युग की घटनाओं का अपार ऐतिहासिक महत्व है, जिसमें जनसाधारण की सृजनात्मक शक्ति को अपना उपयुक्त स्थान प्राप्त हो गया है और वह इतिहास में वस्तुतः निर्णायक भूमिका अदा करने लगी है। आधुनिक युग वह युग है, जिसमें हम शोषण पर आधारित समाज के अंतिम स्वरूप – पूंजीवाद – की कम्युनिज्म द्वारा प्रतिस्थापना होते देख रहे हैं।

इस पुस्तक की तैयारी में प्रमुख सोवियत इतिहासकारों ने भाग लिया है। इसके लेखकों ने नूतनतम सोवियत तथा विदेशी स्रोतों का उपयोग करते हुए यह सुनिश्चित करने का भी प्रयास किया है कि प्रस्तुत कृति पाठकों के लिए सुगम और रोचक सिद्ध हो।

प्राचीन काल

पहला अध

आदिम स

आदिम समाज का इतिहास

मानवजाति के इतिहास मे पृथ्वी पर मनुष्य का आविभाव होने के बाद का सारा काल आ जाता है, जो मोटे तौर पर दस लाख साल के लगभग है। मानव इतिहास के सबसे प्रारभिक काल मे न अलग-अलग जातियो का अस्तित्व था और न ही राज्यो का। लोग छोटे छोटे समूहो, कुलो अथवा गोत्रो (क्लान) या जनो अथवा कबीलो (ट्राइब) मे रहा करते थे। यह काल आदिम समाज का युग कहलाता है।

पुरातत्वज्ञो ने मानवजाति के इतिहास को मानव उपकरणो के बनाये जाने की सामग्री के अनुसार तीन युगो मे विभाजित किया था – पाषाण युग, कास्य युग और लौह युग।

तथापि ये विभाजन अपर्याप्त सिद्ध हुए, खासकर आदिम समाज के सबसे प्रारभिक कालो के सदर्भ मे, जिनमे से कुछ तो हजारो साल तबे थे। इस कारण उनमे नये उपविभाजनो का समावेश किया गया। पाषाण युग को पुरापाषाण (पेलिओलिथिक) मध्यपाषाण (मेसोलिथिक) तथा नवपाषाण (निओलिथिक) युगो मे बाटा गया। इसके अलावा पुरापाषाण तथा नवपाषाण कालो को पूव, मध्य तथा उत्तर कालो मे विभक्त किया गया।

आदिम मानव

अब अगर हम पुरातात्विक नही, बल्कि भूवैज्ञानिक वर्गीकरण को ले, तो हम पाते है कि इस ग्रह पर मनुष्य का पहले पहल आविर्भाव चतुर्थ महाकल्प (क्वाटर्नरी पीरियड) के प्रारभ मे हुआ था जब उस समय पूरे उत्तरी एशिया यूरोप और अमरीका पर फैल हिमावरण ने पीछे

हटना शुरू किया था और इन इलाको मे उष्णतर जलवायु पैदा हो गया था।

उस काल मे जिस प्रकार के मानव का उदय हुआ था, उसमे कुछ ही ऐसे लक्षण थे जो उसे पशुजगत से अलग करते थे। मिसाल के लिए, उस समय लोग बदरो की तरह पेडो पर रहते थे, उनका कोई स्थायी आवास नही था और वे किसी भी प्रकार के वस्त्र नही पहनते थे। तथापि निर्णायक अतर तो आ ही चुका था और वह यह कि पशुओ के विपरीत मनुष्य औजार बनाना सीख चुका था। शुरू शुरू मे ये औजार बहुत ही भौडी किस्म के थे। मनुष्य द्वारा निर्मित सबसे आदिम प्रस्तर औजार बटिकाश्म उपकरण (पेबल टूल) कहलाता है – यह आम तौर पर अनघड तरीके से तराशा और तेज किये किनारोवाला कोई दो सवा दो किलोग्राम भार का पत्थर का टुकडा हुआ करता था। आदमी इस आदिम उपकरण का प्रतिरक्षा तथा आक्रमण के साधन और काम के औजार दोनो रूपो मे उपयोग किया करता था।

उस सुदूर युग म मनुष्य अपना आहार मुख्यत जगली फलो और कद मूलो जैसे खाद्य पदार्थो को एकत्र करके और छोटे छोटे पशुओ का शिकार करके प्राप्त करता था। उस समय लोग चूकि बहुत हद तक प्रकृति की शक्तियो के आगे बेबस थ इसलिए उन्हे समूह मे रहना और काम करना पडता था और इसी तरह अपनी रक्षा भी करनी पडती थी।

परिणामस्वरूप आदिम मानव के ऐसे समूह पैदा हो गये, जिनके सामुदायिक विकास का स्तर इतना नीचा था कि उन्हे ' आदिम मानव झुडो के रूप मे वर्गीकृत किया जाता है। ये आदिम झुड किसी भी प्रकार की श्रेणीबद्धता या असमानता से अनभिज्ञ थे और न तब उनमे सपत्ति या पारिवारिक सबधो का ही कोई अस्तित्व था।

जो कोई भी झुड से अलग रहता था उसे अजनबी माना जाता था, जो उस समय शत्रु का पर्याय था। यही वह मुख्य कारण था कि जिससे लोग एक साथ रहने का यत्न करते थे – झुड के बाहर जीवन खतरे से भरा हुआ था और किसी भी अकेले व्यक्ति की सामर्थ्य के बाहर था।

पूर्वपुरापाषाण काल के अत मे एक नया (तीसरा) हिमावर्तन हुआ। एशिया और यूरोप के विस्तृत इलाको म जलवायु अतिशीतल बन गया। बहुत से पशु जलवायु के इतने तीव्र परिवर्तन को सहन न कर सके और वे विलुप्त हो गये। इसी बीच मनुष्य ने अपने को नयी अवस्थाओ के अनुकूल करने मे सफलता प्राप्त कर ली थी। पूर्वपुरापाषाण काल मे उसने आग पैदा करना सीख लिया था जिसके उपयोग और सरक्षण के तरीके वह पहले ही जान चुका था। आग के उपयोग न उसे ठड और जगली जानवरो से अपनी रक्षा करने और अपना भोजन पकाने (इसके पहले वह कच्चे भोजन से ही परिचित

था) मे समर्थ बना दिया। आग पैदा करने की कला प्रकृति पर मनुष्य की पहली बडी विजय की परिचायक थी।
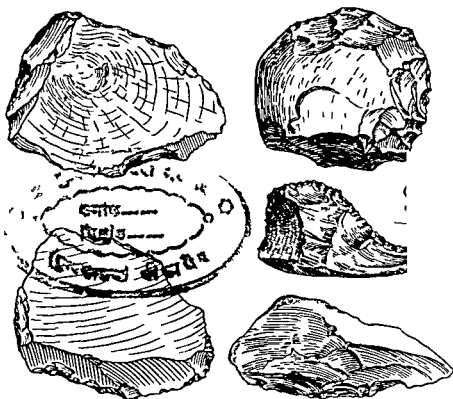
साइनेन्थ्रोपस के औजार

यह इसी युग की बात है कि आदिम मानव भुड का अधिक उन्नत प्रकार के समुदाय मे क्रमिक रूपातरण हुआ। जीवन का सपूर्ण ढाचा और स्वरूप बदल रहा था। आदमी पेडो पर रहना छोडकर जमीन पर उतर आया। लेकिन अब भी वह आवासो का निर्माण नही करता था और प्राकृतिक आश्रयो – मुख्यत गुफाओ – का ही उपयोग करता था। औजार बनाने की विधियो मे भी परिवर्तन आया। इस युग मे अपेक्षाकृत छोटे और सुधरे हुए ओजार – तथाकथित क्रोड तथा शल्क उपकरण (कोर एड फ्लेक टूल्ज) – अस्तित्व म आये।

अपने विकास की इस अवस्था मे मनुष्य का मुख्य उद्यम हिरन और मैमथ (महागज) जैसे बडे जानवरो का शिकार करना था। लेकिन इसका यह मतलब नही कि मनुष्य अब खाद्य पदार्थो का सग्रहकर्ता नही रह गया था। इसका आशय मात्र यही है कि अब आखेट ने खाद्य सामग्री प्राप्त करने की

सजम महत्वपूर्ण पद्धति क रूप म फन व वन्मून बटोरन की जगह ले ली थी।

आधुनिक मानव ई० पू० चालीसवे और बारहवे सहस्राब्दो के बीच, यानी उत्तरपुरापाषाण काल मे विकसित हुआ। इसी काल म पहल नसली भद भी प्रकट हुए।

कुछ ऐसे सिद्धात है जो मानत ह कि नसल – प्रजातिया – सदा से ही, अर्थात जब स मनुष्य शष पशुजगत स भिन्न जाति (स्पीशीज) क रूप म विकसित हुआ है तब स ही अस्तित्वमान रही ह। इस तरह क सिद्धाता क समर्थको का विचार है कि कुछ प्रजातिया कुदरती तौर पर ही श्रेष्ठ होती हैं जब कि अन्या म कुछ विशिष्ट न्यूनताए हाती ह और इसलिए व हीन हैं। यह तर्क पूर्णत अप्रामाणिक है। पहली बात तो यही है कि प्रजातीय विशिष्टताए मानवजाति के अस्तित्व क बिलकुल प्रारभिक काल म ही नही वरन मानव विकास क एक निश्चित चरण मे उदित हुई थी। दूसरे, अत्यत सूक्ष्म और निष्पक्ष विश्लेषण दिखायेगा कि विभिन्न प्रजातियो के बीच कोई मौलिक अतर नही है और जो थोडे-बहुत भेद है भी वे शुद्धत बाह्य, भौतिक भेद (त्वचा का रग केशो का प्रकार आदि क भेद) ही हैं।

पुरापाषाण काल म मानव समाज म यही मुख्य अतर आय थे। आदिम झुड नि शेष हो गया और सामाजिक जीवन का एक नया रूप – गोत्र समुदाय – अस्तित्व म आ गया।

गोत्र युग

सामाजिक सरचना के इस रूप के आधार मे सन्निहित मूल सिद्धात मातृक सगोत्रता (फीमेल किनशिप) थी। इस बात को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि उस समय समूह विवाहो का ही चलन था, जिसके कारण बच्चे अपने पिताओ को नही सिर्फ अपनी माताओ को ही जानते थे। इस प्रकार सगोत्रता केवल मातृवशीय ही हुआ करती थी।

मातृतत्रात्मक पद्धति पर आधारित समाज कई हजार साल अस्तित्वमान रहा। समाज का यह रूप मोटे तौर पर मध्यपाषाण तथा पूर्वनवपाषाण कालो का समकालीन था और मानवजाति के विकास म एक महत्वपूर्ण चरण का द्योतक था। यह इसी काल म हुआ कि मानव ने अपने अपरिष्कृत पाषाण आयुधो क स्थान पर धनुष और बाण जैसे कही अधिक श्रेष्ठतर आयुधो को अपनाया और पशुओ को पालना शुरू किया। सबसे पहले पालतू बनाया जानेवाला जानवर शायद कुत्ता था। लोगो ने इस काल मे मिट्टी के बरतन बनाना भी सीखा जो इस तथ्य का प्रतीक है कि उन्होने अपना भोजन बाकायदा पकाना शुरू कर दिया था। उत्तरनवपाषाण काल मे पत्थर पर काम

की नयी प्रविधिया – छिदाई, कटाई और घिमाई – विकसित हुई। आखिरी और इतनी ही महत्वपूर्ण बात यह है कि कृषि और पशुपालन के आदिम रूपो का भी इसी काल मे आविर्भाव हुआ था।

कृषि तथा पशुपालन का विकास

भूमि का कर्षण पहले के खाद्य सग्रहण का ही तर्कसगत सिलसिला था। कद-मूल, फल और अनाज बटोरते हुए लोगो का ध्यान धीरे-धीरे इस बात की तरफ गया कि ज़मीन पर गिरने के बाद अनाज फिर उगने लगता है। लेकिन इन प्रेक्षणो से मनुष्य को इस निष्कर्ष पर पहुचने मे अभी कई सदिया और लगनी थी कि वह स्वय अनाज बो सकता है और उससे पौधे उगा सकता है। आदिम कृषि की शुरूआत इसी तरीके से हुई।

कृषि मे पहले-पहल प्रयुक्त औज़ार बेहद अपरिष्कृत थे, जैसे खतिया और बाद मे कुदाले। पैदा की जानेवाली फसले जौ, गेहू, बाजरा और मटर जैसे अनाज और गाजर जैसी सब्जिया थी।

पशुओ का पालन आखेट के अनुभव से विकसित हुआ। उस समय तक लोग हाका या खेदा करके शिकार करना सीख चुके थे। लोगो के बडे-बडे दल खेदा करके जगली सूअरो या बैलो को घेर लेते थे और इस तरह उन्हे मारना आसान हो जाता था। शिकार व्यापक पैमाने पर एक सामूहिक कार्य बन गया था। धीरे-धीरे लोगो ने अनुभव किया कि जानवरो को पालतू बनाना और उनकी वश-वृद्धि करना भी सभव है। ये पशुपालन के आद्य समारभी चरण थे।

कृषि तथा पशुपालन का आगामी विकास मातृक सगोत्रता से पैतृक सगोत्रता मे सक्रमण से घनिष्ठत सबद्ध है। कृषि और पशुपालन ऐसे क्षेत्र बन गये, जिनमे से पुरुष ने नारी को धीरे धीरे बाहर निकाल दिया। स्वय यह कदम हल के आविष्कार और खुदाई पर आधारित कृषि के जुताई पर आधारित कृषि मे सक्रमण के साथ जुडा हुआ था। अधिक श्रमसाध्य होने के कारण जुताई का काम भारवाही पशुओ की सहायता मे पुरुषो द्वारा किया जाने लगा। स्त्री को अब घरेलू कामो को सभालने की नयी भूमिका प्रदान कर दी गयी।

पैतृक सगोत्रता अथवा पितृतत्र की स्थापना मानव समाज के विकास मे एक नये चरण की द्योतक थी। इसी काल मे पाषाण उपकरणो मे धातु उपकरणो मे महत्वपूर्ण सक्रमण सपन्न हुआ। सबसे पहले लोगो ने तावे को गलाना सीखा, लेकिन चूकि तावा बहुत ही नरम धातु है इसलिए व जल्दी ही उसे रागे के साथ पिघलाने और इस तरह कासा बनाने लगे। कासा ताबे

की अपेक्षा नहीं कठोर होता है उसमे गीने ताप पर पिघल जाता है और अधिक पिटवा होता है। इस कारण वह औजारो और हथियारो के लिए बहुत ही उपयुक्त सिद्ध हुआ।

कृषि तथा पशुपालन के विकास और धातु उपकरणो के उपयोग के फलस्वरूप शनै शनै कृषि या पशुपालन मे ही विशिष्टता रखनेवाले जनो या कबीलो का उदय हुआ। कृषिजीवी कबीले पश्चिमी गोलार्ध के कई भागो म फैल गये। पूर्वी गोलार्ध म व अधिकाशत बडी-बडी नदियो की घाटियो म बसे जैस मिस्र म नील मेसोपोटामिया म दजला और फरात, भारत म सिधु चीन मे ह्वाग-हो की घाटियो और एशिया ए-कोचक तथा बाल्कन प्रायद्वीप के अनेक भागो म। पशुचारक मुख्यत दक्षिणी साइबेरिया, आमू और सीर दरियाओ के दोआब ईरानी पठार और काला सागर की तटवर्ती स्तेपियो (मैदानो) म बसे।

कृषिजीवियो और पशुचारको के बीच उपज के नियमित विनिमय का सिलसिला पैदा हो गया। जहा पुराने जमाने मे लोग अपने परिवार या गोत्र के भरण पोषण के लिए ही काफी पैदा करने की कोशिश करते थे, वहा अब वे विनिमय की सभावना के कारण कुछ फालतू भी पैदा करने का यत्न करने लगे। अब किसी भी जन गोत्र या परिवार के भीतर बेशी उपज का सचय करने के लिए एक प्रेरक मौजूद था।

विनिमय के लिए बेशी उपज के सचय की लालसा ने जनो के आपसी युद्धो मे पकडे गये लोगो के बारे मे एक नया रवैया पैदा कर दिया। जहा पहले इन लोगो को आम तौर पर मार डाला या विजेता जन की कतारो मे जज्ब कर लिया जाया करता था वहा अब उन्हे पकडकर कैदी बनाने और विजेताओ के लिए काम करने को विवश करने और इस तरह दासो मे परिणत करने का नया रिवाज पैदा हो गया। इस प्रकार पितृतत्रात्मक युग मे आदिम अथवा पितृतत्रीय दासप्रथा अस्तित्व मे आयी। दासप्रथा का उदय आदिम समुदाय के विघटन के सबसे प्रारभिक चिह्नो मे एक था।

गोत्र व्यवस्था का विघटन

लौह उपकरणो के युग का प्रारभ चौदहवी सदी ई० पू० मे, सबसे पहले एशिया ए-कोचक मे हुआ। लोहे के हलो कुल्हाडो और फावडो का चलन शुरू हुआ। लोहे के उपयोग से कृषि प्रविधियो और दस्तकारी मे आमूल क्राति आ गयी। लोहारो का उदय हुआ और उसके बाद चाक तथा करघे का आविष्कार हुआ। जब दस्तकारो ने कृषिकर्म मे और किसानो ने धातु और

मिट्टी की चीजे बनाने मे अपने समय का एक भाग लगाना बद कर दिया, तो इसके साथ एक और श्रम विभाजन हुआ।

इस युग की एक सबसे महत्वपूर्ण घटना निजी सपत्ति की शुरुआत थी। निजी सपत्ति के सर्वप्रथम रूप पशु और दास, अर्थात गुलाम बनाये कैदी थे। धीरे धीरे जमीन निजी सपत्ति का एक और तथा सबसे महत्वपूर्ण रूपो मे एक बन गयी, क्योकि वह समस्त निर्वाह साधनो के मूल की प्रतीक थी। और इसके साथ ही जमीन को काश्त करने के औजार भी निजी सपत्ति बन गये। इससे सापत्तिक सबधो पर आधारित असमानता पैदा हुई और अब स्वतत्र लोगो तथा गुलामो के सवर्गो के साथ-साथ धनी और निर्धन के नये सवर्ग भी उत्पन्न हो गये। जल्दी ही कुछेक परिवार या व्यक्ति जमीन के सबसे बढिया हिस्सो या पशुओ के सबसे बडे रेवडो के स्वामी बन बैठे, जब कि अन्य परिवार अधिकाधिक निर्धन होते गये और कगाल बन गये। विभिन्न गोत्रो के भीतर एक प्रकार का अभिजात वर्ग प्रतीयमान होने लगा, अर्थात वे लोग, जिनके पास धन दौलत और सत्ता थी। इस अभिजात वर्ग से जनो या कबीलो के नेताओ और ज्येष्ठजन परिषदो के सदस्यो का उदय हुआ।

मानव समाज के विकास की इस अवस्था मे गोत्र सबधो की भूमिका कम महत्व की होने लगी और धीरे-धीरे उनकी जगह स्थान-सामीप्य पर आधारित सबध, अर्थात उसी इलाके मे रहनेवाले लोगो के बीच सबध लेने लगे। जब गोत्राधारित समुदाय विघटन की प्रक्रिया मे था, तो प्रादेशिक समुदाय प्रस्फुटित हो पडे। वे सदियो तक अस्तित्वमान बने रहे और कई जगहो पर तो वे ठेठ बीसवी सदी के आरभ तक भी विद्यमान थे, जैसे भारत और क्रातिपूर्व रूस मे।

वर्गो और राज्यो की उत्पत्ति

मनुष्य के प्राविधिक साजसामान के विकास निजी सपत्ति के उदय और अतत दासप्रथा के प्रसार के फलस्वरूप समाज भिन्न भिन्न सामाजिक हैसियत रखनेवाले बड बडे समूहो मे विभाजित हो गया। समाज मे ऐसे लोग थे, जिनके पास जमीन, औजार और गुलाम थे, मगर जो खुद कोई काम नही करते थे और ऐसे भी लोग थे कि जो अपनी गुजर अपने ही श्रम से किया करते थे – चाहे ऐसे कि जिनका अपने श्रम उपकरणो पर स्वामित्व था (किसान और दस्तकार) और चाहे ऐसे कि जिनका किसी भी चीज पर स्वामित्व नही था और जिन्हे गुलामो की हैसियत से अपने मालिको के लिए काम करना पडता था। इतनी अधिक भिन्न-भिन्न सामाजिक स्थिति रखनेवाले ये बडे बडे समूह वर्गो के नाम से विख्यात हुए।

जिस वर्ग का सपदा पर स्वामित्व था और जो अन्यों (दासो, किसानो और दस्तकारो) को अपने लिए काम करने को विवश करता था, उसने उन्हे अपने अधीन बनाये रखने का प्रयास करना शुरू किया। इसके लिए एक नयी सस्था विकसित हुई जो सगोत्रता के सिद्धातो पर आधारित समुदायो मे सर्वथा अज्ञात थी और जिसे हम राज्य कहते है। बदीगृह सेना और न्यायालय जैसे सत्ता के विभिन्न निकाय राजकीय तत्र के सघटक अग थे।

समाज के वर्गो मे विभाजन और राज्य के उदय के समय से ही मानवजाति के इतिहास मे एक नये युग का समारभ हुआ। इसलिए अब हम प्राचीन मानव के इतिहास की सामान्य रूपरेखा से अलग अलग राज्यो और जातियो के इतिहास का विस्तृततर अध्ययन करना शुरू करेगे।

दूसरा अध्याय

मध्य पूर्व

मिस्र

मिस्र अफ्रीकी महाद्वीप के उत्तर-पूर्वी कोने पर स्थित है और नील नदी के निचले भाग मे ४ से ३० किलोमीटर चौडी एक मकरी सी घाटी और उसके दोनो ओर फैले रेगिस्तानी विस्तारो से मिलकर बना है।

प्राकृतिक अवस्थाए

नील मिस्र के जीवन मे बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निबाहती ह। यह उल्लेखनीय है कि प्राचीन काल मे मिस्र को "नील की देन कहा जाता था। नील की घाटी के सिवा सारे के सारे उत्तर-पूर्वी अफ्रीका का इलाका कभी का सूखे रेगिस्तान मे परिणत हो चुका था। नील की घाटी मे जुलाई और नवबर के बीच आनेवाली वार्षिक बाढो की बदौलत प्रचुर उपजाऊ भूमि है, जिस पर काश्त करना बहुत ही आसान है। इस कारण इस इलाके मे परिस्थितिया आदिम कृषि के अनुकूल थी।

नील की घाटी मे प्राचीन काल मे भी खजूर और गूलर जैसे मूल्यवान फलदार वृक्षो का बाहुल्य था, जिनका निर्माण सामग्री के रूप मे भी प्रयोग किया जा सकता था। घाटी के सीमावर्ती पहाडो मे ग्रेनाइट और चूर्णप्रस्तर जैसे इमारती पत्थरो का प्राचुर्य था और निकटवर्ती नूबिया के पहाडो म सोना पाया जाता था। इस प्रकार यह ममभा जा सकता है कि उपजाऊ जमीन के अलावा नील की घाटी प्राकृतिक साधनो म भी समृद्ध थी।

मिस्र में
वर्ग समाज तथा राज्य का उद्भव

प्राचीन मिस्र की आबादी विभिन्न कबीलों से मिलकर बनी थी, जो नील की घाटी में अनादि काल से रहते आये थे। आबादी का मुख्य उद्यम कृषि था, यद्यपि शिकार और मछली पकड़ना भी महत्वपूर्ण थे। इस इलाके में कृषि के लिए सिंचाई प्रणालियों का निर्माण आवश्यक था। चूंकि यह काम अलग अलग परिवारों और गोत्रों के बूते के बाहर था और जमीन के छोटे छोटे टुकड़ों के लिए नहर खोदना कोई लाभकारी भी नहीं था, इसलिए कई कई गोत्र समुदायों से निर्मित अधिकाधिक बड़े समुदाय अस्तित्व में आने लगे। प्राचीन यूनानी इतिहासकारों के अनुसार ये समुदाय नोम कहलाते थे। हर नोम का अपना अलग नाम, अलग रीति रिवाज और कभी कभी अलग बोली भी होती थी। इसके बाद नोमपतियों (नोमार्क) अथवा शासकों का उदय हुआ। नोम के भीतर प्रत्येक परिवार का अपना ज्येष्ठ होता था। दासता अधिकाधिक व्यापक प्रथा बन गयी। शनै शनै नोम भी आपस में मिलने लगे और मिस्र में दो राज्य – उत्तरी और दक्षिणी राज्य – पैदा हो गये।

बाद में दोनों राज्यों में झगड़ा शुरू हो गया, जिसमें दक्षिणी राज्य की विजय हुई। लगभग ३२०० ई० पू० में फराऊन मेनस ने समस्त मिस्री भूमि को एक्यबद्ध किया। तभी देश में राज्यसत्ता की स्थापना भी हुई। यह सत्ता अभिजात वर्ग के बड़े भूस्वामियों के हाथों में थी। मिस्र के इतिहास को आम तौर पर पुरातन, मध्य तथा नूतन राज्य, इन तीन मुख्य कालों में विभाजित किया जाता है।

पुरातन तथा मध्य राज्य

पुरातन राज्य में लोगों का मुख्य कार्य कृषि ही था। जमीन की काश्त कृषक समुदाय करते थे और प्रत्येक समुदाय का प्रशासन उसकी ज्येष्ठ परिषद करती थी। ये परिषदें करों की वसूली और अदायगी तथा 'शाही परियोजनाओं' के लिए बेगार का भी संगठन करती थीं। कृषक समुदायों के लोगों के वास्ते इन 'शाही परियोजनाओं' में काम करना अनिवार्य था। गुलामों से आम तौर पर राजा के दरबारियों और बड़ी बड़ी जागीरों या मंदिरों की ज़मीनों पर ही काम कराया जाता था।

तत्कालीन मिस्री फराऊनों के पास असीम सत्ता थी। उन्हें ऊपरी तथा निचले (दक्षिणी और उत्तरी) मिस्र के राजा की उपाधि प्राप्त थी और वे

दो ताज – एक सफेद और एक लाल – पहना करते थे। फराऊन का मुख्य परामर्शदाता उन लोगो के काम की देखरेख करता था, जो विभिन्न "भवनो"– प्रशासन के विभिन्न विभागो – का निदेशन करते थे। उसके कर्तव्यो मे अनाज व सोने के गोदामो, द्राक्षोद्यानों तथा वृषभशालाओ की देखरेख और फौजी मामलो और बलिदानो का प्रबध करना सम्मिलित थे। इसके अलावा वह फराऊन के सारे कामो का प्रबधक प्रधान कोषाध्यक्ष और उच्च न्यायाधीश भी था। स्वय उसके पास और विभिन्न विभागो मे लिपिको के बडे-बडे दल काम करते थे।

पुरातन राज्य के फराऊनो ने सिनाई प्रायद्वीप और नूबिया के लोगो के खिलाफ फौजी कार्रवाइया की। इन कार्रवाइयो मे मिस्र को मैलेकाइट, ताम्र अयस्क, स्वर्ण, हाथीदात, आबनूस और बडी सख्या मे कैदियो सहित, जिन्हे सारा नही, बल्कि गुलाम बना लिया जाता था, प्रभूत सपदा की प्राप्ति हुआ करती थी (यह अकारण ही नही था कि इन कैदियो को 'जिदा मुरदे' कहा जाता था)।

पुरातन राज्य मे पिरामिड बनाने की अद्भुत प्रथा विद्यमान थी। ये पत्थर के विराटाकार समाधिगृह थे, जिनका फराऊन और उनके दरबारी अपने जीवनकाल मे ही अपने लिए निर्माण करवा लेते थे। मिस्र मे इनमे से कोई सत्तर पिरामिड आज भी मौजूद है। सबमे बडा और सबसे विख्यात किओप्स या खूफू का पिरामिड है जो १४६ ५ मीटर ऊचा है और आधार पर जिसका प्रत्येक बाहु २३० मीटर चौडा है। इसके निर्माण मे दो-दो टन भार के २३,००,००० पाषाण खड लगाने पडे थे। इस पिरामिड को बनाने मे इसके बावजूद बीस साल लगे थे कि मिस्र की सारी देहाती आबादी को प्रति तीसरे महीने एक एक लाख के हिसाब से इस काम पर जबरन लगा दिया गया था। पुरातन राज्य मे "शाही परियोजनाओ पर काम ऐसे ही करवाया जाता था।

पिरामिडो का निर्माण मिस्री धर्म से और खासकर मृत्योपरात जीवन मे विश्वास से जुडा हुआ था। शव के सलेपन अर्थात ममीकरण और उसे नियमित रूप मे खाना पीना देते रहने के मूल मे यही विश्वास निहित था। ममीकरण की कला मे प्राचीन मिस्री बहुत पारगत थे।

पुरातन राज्य के अतिम काल म राजाओ की केद्रीय सत्ता कमजोर होने लगी और मिस्र फिर अनेक नोमो मे विभाजित हो गया जो आपस मे लडते भी रहते थे। बीसवी सदी ई० पू० के आरभ के कुछ पहले देश का पुनरेकीकरण हुआ। यह काल मध्य राज्य के नाम से विज्ञात है।

मध्य राज्य के समय फयूम (अल फैयूम) मरुद्यान मे सिचाई प्रणाली के प्रसार और सुधार के लिए बडे पैमाने पर काम किया गया। व्यापार और

प्राचीन मीश्र
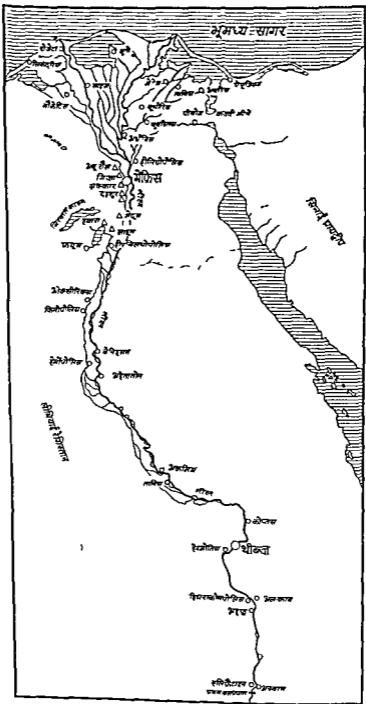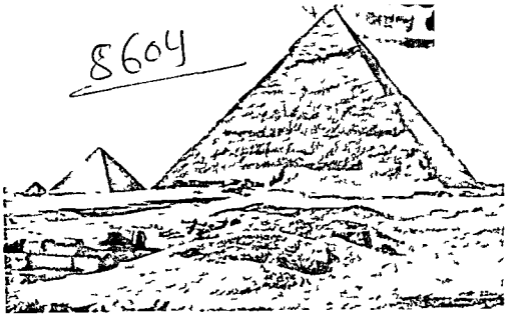
फराऊन केफरेन का पिरामिड

भाति भाति की दस्तकारियो की बहुत उन्नति हुई। इस काल की एक विशेषता कृषक समुदायो का स्तरीकरण था, जिससे बडी सख्या मे किसान कगाली और तबाही के शिकार हुए।

अठारहवी सदी ई० पू० के मध्य म मिस्र मे किसानो, कारीगरो और दासो का एक बडा विद्रोह हुआ। इस विद्रोह ने सारे देश को अपनी लपेट मे ले लिया, जिसके परिणामस्वरूप फराऊन को गद्दी छोडनी पडी और धनी भूस्वामियो को उनके महलो से भगा दिया गया। भूतपूर्व राजाओ के समाधिगृहो और पिरामिडो को लूट लिया और ममियो को बाहर फेक दिया गया। शाही अन्नागारो, खजानो और मदिरो पर कब्जा कर लिया गया और अनाज तथा मूल्यवान चीजो के भडार लोगो मे बाट दिये गये। करो और खिराजो की सारी दस्तावेजे नष्ट कर दी गयी। जैसा कि एक प्राचीन मिस्री इतिवृत्त मे लिखा है, "पृथ्वी कुम्हार के चाक की तरह घूम गयी क्योकि गरीब अमीरो के घरो मे रहने और उनके कपडे पहनन लगे और अमीरो को काम करने के लिए विवश किया जाने लगा।

अठारहवी सदी ई० पू० के अत के मिस्र को हिक्सोस नामक खानाबदोश एशियाई कबीले के हमले ने उजाड दिया। मिस्रियो को कोई डेढ सदी इन विदेशी आक्रमणकारियो की गुलामी मे रहना पडा। आखिर एक मुक्ति आदोलन

ने इतना बल प्राप्त कर लिया कि उसने इन आक्रमणकारियों को खदेड़ कर देश का पुनरेकीकरण किया। यह घटना नूतन राज्य के प्रारंभ की द्योतक है।

नूतन राज्य

उस काल में मिस्र एक बड़ी सैनिक शक्ति बन गया। फराऊन अहमोस प्रथम ने मिस्र को विदेशी विजेताओं से आजाद करके उनका एशिया में दूर तक पीछा किया। उसके बाद उसके उत्तराधिकारियों ने एशिया के खिलाफ फौजी अभियान भी शुरू किया। तथापि, इस नयी मिस्री सैनिक शक्ति का वास्तविक संस्थापक तूयमासिस तृतीय (१५०१-१४६१ ई० पू०) था, जिसने एशिया में सत्रह सैनिक अभियान चलाकर शाम (सीरिया), फिलिस्तीन, लीबिया और नूबिया को जीता। उसके पास तीर-कमान और भालों से लैस पैदल सैनिकों और रथों से सज्जित रिसाले से निर्मित विशाल सेनाएं थीं। स्थल सेनाओं के अलावा तूयमासिस के पास जंगी बेड़ा भी था, जिसमें चप्पूदार और पालदार दोनों तरह के जहाज थे।

इन अभियानों से देश को बड़ी मात्रा में लूट का माल मिला, जो मुख्यतः राजा के कोषागारों और धान्यागारों में गया। शाही जागीरों को भी हजारों गुलाम और ढोर मिले। फराऊनों ने मन्दिरों और पुरोहितों को भी मूल्यवान उपहार और विशेषाधिकार प्रदान किये। उदाहरणार्थ, अमोन रा के मंदिर को, जो राजधानी थीब्ज में सबसे लोकप्रिय देवता था, इनमें से एक अभियान के बाद लेबनान के एक पूरे इलाके पर पूरा अधिकार प्रदान कर दिया गया, जिसमें तीन बड़े शहर थे।

इन सभी बातों से देश के आंतरिक जीवन में पुरोहित वर्ग की शक्ति में अत्यधिक तीव्र वृद्धि हुई। थीब्ज में अमोन रा का मंदिर विशेषकर महत्वपूर्ण था – इस मंदिर के पास इतनी जमीन, दास और किसान थे कि जितने सभी मंदिरों के पास मिलाकर भी नहीं थे। थीबियाई पुरोहितों के अपार राजनीतिक प्रभाव और उनके द्वारा स्वयं फराऊन के भी कुछ अधिकारों को छीने जाने की कोशिशों के पीछे यही कारण था।

फराऊन इखनातोन (अमेनहोतेप चतुर्थ, १४२४-१३८८ ई० पू०) ने इस हालत को सही करने के लिए कदम उठाये और धार्मिक सुधार करने का निश्चय किया। बहुदेववाद को तज दिया गया और उसकी जगह एक देवता – सूर्यदेव अतोन – की उपासना शुरू की गयी। देश भर में और विजित प्रदेशों में भी अतोन के मंदिरों का निर्माण किया गया। नये देवता के सम्मान में नयी राजधानी की नींव रखी गयी। स्वयं फराऊन ने अपनी मूल उपाधि अमेनहोतेप के स्थान पर इखनातोन – अतोन का प्रिय – का नाम धारण किया।

थीब्ज के कर्नाक मदिर का प्रागण

तथापि इखनातोन के सुधार अल्पकालिक थे। उसके सुधारो के विरुद्ध विद्रोह तक हो गया। यद्यपि इखनातोन उसे कुचलने मे सफल रहा पर उसकी मृत्यु के बाद सुधारो को जल्दी ही तिलाजलि दे दी गयी और पुरोहित वर्ग पहले से भी अधिक शक्तिशाली हो गया। मिसाल के लिए रामसेस द्वितीय (१३१७-१२५१ ई० पू०) के शासनकाल मे मदिरो की जमीनो का रकबा दो गुना हो गया और पुरोहित वर्ग के प्रमुख सदस्य अपने को राजा से पूर्णत स्वतत्र समझने लगे। इसी बीच मुख्य पुरोहित का पद पुश्तैनी हो गया।

रामसेस द्वितीय के शासनकाल मे अतिम बडी सैनिक कार्रवाइया की गयी। शाम के इलाके पर मिस्रियो को पहली बार एक नयी और प्रबल शक्ति – हित्तियो के खिलाफ अपनी ताकत की आजमाइश करनी पडी जो उस समय तक लगभग सारे ही शाम को जीत चुके थे। यह लडाई बहुत लबे समय तक चली, मगर उसका परिणाम यही निकला कि शाम हित्तियो और मिस्रियो के बीच विभाजित हो गया।

नूतन राज्य के अत तक मिस्र की सैनिक शक्ति बहुत कमजोर हो गयी। उसके अनेक अधीनस्थ सामती राज्यो ने फिर स्वतत्रता प्राप्त कर ली और विभिन्न नोम उससे अलग हो गये। जल्दी ही खुद मिस्र को भी विदेशी विजेताओ का शिकार हो जाना था।

प्राचीन मिस्र का धर्म और संस्कृति

धर्म प्राचीन मिस्रियो के जीवन मे एक केंद्रीय स्थान रखता था। मिस्री धार्मिक विश्वास का एक विशिष्ट लक्षण पशुओ और पक्षियो को देवत्व प्रदान करना था। मेंफिस नगर मे वृषभदेव अपिस की उपासना की जाती थी, तानिस और बूतो नगरो मे श्येनमुख होरस को पूजा जाता था, जो आकाश का देवता था और कितने ही नोमो के नाम पशुओ पर थे – हिरण नोम, मकर नोम, आदि आदि। धीरे-धीरे सबसे शक्तिशाली नोमो द्वारा पूज जानेवाले देवताओ की देशव्यापी पैमाने पर उपासना होने लगी, मिसाल के लिए, सूर्यदेव रा, विश्वस्रष्टा अमोन और उर्वरता देव तथा देवी ओसीरिस और ईसिस। ओसीरिस और ईसिस की उपासना कृषि परपराओ से घनिष्ठत सबद्ध थी। ओसीरिस की मत्यु और बाद मे पुनरुज्जीवन की कथा अनाज के बोने और अकुरण की प्रतीक कथा ही थी। बुआई और कटाई के समय ओसीरिस ओर उसकी सहधर्मिणी के सम्मान मे भव्य नाटकीय समारोहो का आयोजन किया जाता था।

प्राचीन मिस्री संस्कृति की एक बडी उपलब्धि लेखन का आविष्कार था। पत्थर पर लिखने के लिए मिस्री विशेष चिह्नो अथवा चित्रलेखो का उपयोग करते थे जिनसे बाद मे पैपाइरस (पटेर) पर लिखने के लिए एक सरलीकृत लिपि का विकास किया गया। साहित्य (गीत, आख्यान, यात्रावृत्त, आदि) वास्तुकला और ललित कलाओ मे भी महत्वपूर्ण प्रगति हुई। पिरामिडो के अलावा शानदार मदिरो के खडहर जैसे कर्नाक मे, आज भी देखे जा सकते है।

प्राचीन मिस्री गणित खगोलिकी और चिकित्सा जैसे अनेक विज्ञानो के बुनियादी सिद्धातो से भी परिचित थे। वे दाशमिक गणना प्रणाली का उपयोग करते थे और त्रिभुज, समलब तथा वृत्त तक के क्षेत्रफलो का आकलन कर सकते थे। आकाशीय पिडो की गतियो के प्रेक्षण के आधार पर एक पचाग बनाया गया था, जिसमे वर्ष को बारह महीनो और ३६५ दिनो मे विभाजित किया गया था। शव सलेपन (ममीकरण) के व्यापक प्रचार के फलस्वरूप मानव शरीर के ज्ञान मे अधिकाधिक वृद्धि हुई और चिकित्सा मे शल्यचिकित्सा जैसी शाखाओ का विकास हुआ।

बाबुल और अशर

जिस प्रकार नील की घाटी उत्तर-पूर्वी अफ्रीका मे प्राचीन सभ्यता का केंद्र बन गयी थी, उसी प्रकार पश्चिमी एशिया के प्राचीन राज्यो को दजला और फरात की घाटियो मे, अर्थात उनके दोआब – मैसोपोटामिया – मे विकसित होना था।

प्राकृतिक अवस्थाए

मैसोपोटामिया की प्राकृतिक अवस्थाओ मे बहुत असमानता है। उत्तरी भाग मे छोटे-छोटे पहाडी नालो मे सिंचित पहाडिया है जहा काफी वर्षा होती है। मैसोपोटामिया का दक्षिणी भाग एक कच्छ गर्त है, जिसकी मिट्टी जलोढ निक्षेपो की बनी है। मार्च से जुलाई तक नदियो मे बाढ आयी रहती है और उसके बाद खेतो मे आया पानी सूख जाता है। अलग-अलग जगह पर जमीन के अलग अलग समय पर सूखने के फलस्वरूप प्राचीन काल मे भी जल सभरण को नियमित करने के लिए कृत्रिम साधन बनाना आवश्यक था।

प्राकृतिक सपदा मे मैसोपोटामिया नील की घाटी जैसा समृद्ध नही था। फिर भी कुछ जगहो पर चूनापत्थर और चिकनी मिट्टी प्राप्य थी वनस्पति के मुख्य प्रकार खजूर और सरकडा थे, घाटी के सीमावर्ती पहाडो मे जगली ढोर, बकरे, सूअर और शेर घूमा करत थे और नदियो मे मछलियो की भरमार थी।

अक्काद और सुमेर के प्राचीन राज्य

मैसोपोटामिया के दक्षिणी भाग मे और फारस की खाडी के तटो पर बहुत प्राचीन काल मे ही सुमेरी (शुमेर) नामक कबीले बस गये थे। नहरों जलाशयो और बाधोवाली सिचाई प्रणालियो का इन्होने सबसे पहले निर्माण किया था। सुमेरियो का मुख्य उद्यम कृषि था। मिस्र की ही भाति इस इलाके मे भी जमीन कृषक समुदायो मे विभाजित थी और सबसे आम फसले जौ, गेहू अलसी और तिल थी। कृषक समुदायो को कर जिस के रूप मे देना होता था, जो आम तौर पर उपज का दसवा भाग होता था और शाही धान्यागारो मे जाता था। शाही और मदिरो की जमीनो पर जहा दासश्रम का प्राधान्य था अधिकतर फलोद्यान थे और पशुपालन बहुत विकसित था।

चौथी सहस्राब्दी ई० पू० के अंतिम चरण में दक्षिणी मैसोपोटामिया म बीस स अधिक छोटे छोटे राज्य थ। हम उनके नाम तो नही मालूम, पर यह अवश्य ज्ञात है कि उनके शासक पुरोहित राजा थे, जो एक प्राचीन यूनानी स्रोत के अनुमार पटेसी कहलाते थे और इस कारण उनके राज्यो को पटेसशाही कहा जाता है। चौथे सहस्राब्द के बिलकुल अत म इनमे से सबसे बडी पटेसशाहिया, जैसे लगाश और उम्मा म आपस म सघर्ष शुरु हो गया, जिसमे प्रत्येक सारे दक्षिण मैसोपोटामिया को अपने प्रभुत्व मे लाने के लिए प्रयत्नशील थी।

मैसोपोटामिया के केंद्रीय और उत्तर पश्चिमी भागो मे अक्कादी नामक सामी कबीले रहा करते थे जो सभवत अरब प्रायद्वीप से आये थे और जिन्ह अपना नाम अपने मुख्य नगर अक्काद से मिला था। लगभग २५०० ई० पू० म अक्कादियो का शासक प्रतिभाशाली प्रशासनकर्ता और सैन्य नेता सरगोन प्रथम था। वह इतिहास मे पहला आदमी था जिसने देहाती समुदायो के निर्धन कृषको को भरती करके स्थायी सेनाए बनायी। इन कृषको को बाद म अपनी सैनिक सेवा क बदले जमीन के टुकडे प्रदान किये जाते थे। इन सेनाओ के सहारे सरगोन ने अनेक सफल सैन्य अभियान किये। सुमेरी नगरो को जीतकर उसने सारे मैसोपोटामिया को अपने शासन के अतर्गत ऐक्यबद्ध कर लिया। सभवत उसने मैसोपोटामिया क पूर्व मे पहाडो मे स्थित राज्य एलाम को भी जीता था और शाम तथा एशिया ए कोचक मे भी एक सैन्य अभियान भेजा था। इसीके आधार पर अपने शासनकाल के अत मे सरगोन ने "राजाधिराज" की दर्पपूर्ण उपाधि धारण की थी।

प्राचीन बाबुल

२००० ई० पू० के कुछ ही पहले अक्काद पर अरब से अमोर कबीलो ने और सुमर पर एलामियो न हमला किया। जल्दी ही इन आक्रमणकारियो ने सपूर्ण मैसोपोटामिया घाटी को जीत लिया। इसके बाद अमोरो और एलामियो म लडाई छिडी। युद्ध का अत अमोर राजाओ की निर्णायक विजय और बाबुल (बैबीलोन) नगर क उदय के साथ हुआ जो जल्दी ही एक अत्यत महत्वपूर्ण आर्थिक राजनीतिक तथा सास्कृतिक केंद्र बन गया। प्राचीन बाबुल राज्य का उत्कर्ष और सारे मैसोपोटामिया का अतत इस नये केंद्र के चहुओर एकीकरण विख्यात राजा हमुराबी (१७९२ १७५० ई० पू०) क राज्यकाल म हुआ।

हमुराबी न एलामियो को परास्त करने मे सफलता प्राप्त की और फिर बाबुल के उत्तर म स्थित मारी राज्य को, और अत म असुर नगर को भी जीत लिया जिस आगे चलकर अत्यधिक शक्तिशाली असुर राज्य का केंद्र

बनना था। लेकिन हमुराबी केवल विजेता के नाते ही नही, बल्कि अपनी प्रसिद्ध विधि सहिता के लिए भी मशहूर है। एक बैसाल्ट स्तभ पर उत्कीर्ण २८२ सविधियो की यह सहिता आज भी विद्यमान है। यह सहिता हमे प्राचीन बाबुली समाज की आर्थिक तथा राजनीतिक सरचना की बडी रोचक झाकी प्रदान करती है।

हमुराबी सहिता स्पष्टत कठोर वर्गीय ढाचेवाले समाज से सबद्ध है। जमीदारो, पुरोहितो और व्यापारियो के सपत्ति-अधिकार प्रत्याभूत थे और इन समूहो के हित सावधानीपूर्वक सरक्षित थे। इससे हमे पता चलता है कि बाबुल राज्य मे सिर्फ कृषि ही नही, बल्कि कई शिल्प और व्यापार भी बहुत विकसित थे। सहिता मे इन शिल्पो का उल्लेख है–मृदभाड, सगतराशी, चमडे की कमाई, दरजीगिरी और लोहारगिरी। व्यापार के सिलसिले मे यह बात दिलचस्प है कि मदिर और राजा तक व्यापारियो के ज़रिये बडे-बडे सौदे किया करते थे। व्यापारी लोग भी अपने अभिकर्ता या एजेट और मुलाज़िम रखा करते थे।

हमुराबी सहिता प्राचीन बाबुल मे दासो की स्थिति पर भी प्रकाश डालती है। ऋण-दासत्व की प्रथा विशेषकर व्यापक प्रतीत होती है। अगर ऋणी नियत अवधि के भीतर कर्ज नही चुका पाता था, तो उसे यह ऋण अपने या अपने बच्चो के श्रम से चुकाना होता था। ऐसा दासत्व जीवनपर्यंत चल सकता था। लेकिन हमुराबी ने ऋण-दासत्व को तीन वर्ष की अवधि तक ही सीमित कर दिया था।

हमुराबी के राज्यकाल मे बाबुली समाज विकास के बडे उच्च स्तर पर पहुच गया था, लेकिन यह स्वर्णयुग अल्पकालिक ही था, क्योकि देश को अनेक साघातिक आक्रमणो को झेलना था जिनके परिणामस्वरूप प्राचीन बाबुल राज्य का पतन हो गया।

अशर (एसीरिया)

अशर राज्य उत्तरी मैसोपोटामिया मे असुर या अशर नगर के चहुओर केंद्रित एक छोटे से कृषक समुदाय से पैदा हुआ था। आठवी सदी ई० पू० का काल अशर के सैनिक राज्य के इतिहास का सबसे गौरवमय अध्याय है। अशर राजा तिगलाथ पिलेसर तृतीय (७४५-७२७ ई० पू०) ने अनेक विजय यात्राए की। उसने शाम और फिनीशिया को जीता। टायर और इसराएल के राजा उसे खिराज देते थे। उरार्तू राज्य के विरुद्ध उसके अभियान का अत उरार्तू की पूर्ण पराजय म हुआ। अत मे तिगलाथ पिलेसर ने बाबुल को भी जीत लिया और बाबुल का राजा बन गया।

उसके सैनिक कारनामों को अन्य अशूर राजाओं – सर्गोन द्वितीय (७२२ ७०५ ई० पू०) और असारहद्दोन (६८० ६६६ ई० पू०) – ने जारी रखा। उनकी विजयों और अभियानों के परिणामस्वरूप अशूर एक जबरदस्त शक्ति बन गया जिसमें संपूर्ण मध्य तथा पूर्वी एशिया के अंचल, मैसोपोटामिया, शाम फिलिस्तीन और मिस्र का कुछ भाग शामिल थे। अपने समय के लिहाज से अशूर निस्संदेह एक विश्व शक्ति था।

अशूर सैन्य सामंतों और दासस्वामियों का राज्य था। अशूर में दासप्रथा मिस्र या बाबुल की अपेक्षा अधिक विकसित थी, राजा के पास हजारों दास थे जिनका अक्सर सड़कों नहरों और पूरे के पूरे नगरों तक के निर्माण में उपयोग किया जाता था। दास व्यापार भी काफी व्यापक पैमाने पर विकसित था।

अशूर अपने सैन्य संगठन के उच्च स्तर के लिए विख्यात था। अशूर सेना विभिन्न अंगों में विभक्त थी – १) दो घोड़ोंवाले रथ २) रिसाला (जो सर्वप्रथम अशूर सेना में ही पैदा हुआ था), ३) भारी या हलके हथियारों से लैस पैदल सैनिक ४) इंजीनियर और ५) घेरा डालनेवाले दस्ते (पत्थरफेंकयंत्रों और भित्तिपातकों से लैस)। सेना राजा की शक्ति की रीढ़ थी और राजाओं का सिंहासनारोहण के समय सेना के सामने उपस्थित होना एक परंपरा थी।

तथापि अशूर की सैनिक शक्ति बिना नींव की इमारत ही थी। इस विराट राज्य के विभिन्न भागों के बीच शीघ्र संपर्क की पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी और सभी अधीनस्थ देश तथा जातियां निर्मम उत्पीड़न का शिकार बने हुए थे। मीडों (ईरानी पठार स्थित मीडिया नामक एक बड़े राज्य के निवासी) के साथ मिलकर विद्रोही बाबुल ने अशूर राज्य पर साघातिक प्रहार किया।

बाबुल और अशूर का धर्म तथा संस्कृति

बाबुली समाज में भी धर्म की भूमिका प्राचीन मिस्र से किसी कदर कम महत्वपूर्ण नहीं थी। साहित्य से लेकर विज्ञान तक सांस्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रों पर प्रबल धार्मिक प्रभाव था। सबसे महत्वपूर्ण देवता मर्दूक शमाश और कृषि देव देवी ताम्मुज तथा इश्तर (ओसीरिस और ईसिस के लगभग समतुल्य) थे। इनके अलावा स्थानीय नदियों और नहरों की आत्माओं से संबद्ध लोक प्रचलित विश्वास भी थे और मृतकों की आत्माओं को भी पूजा जाता था।

प्राचीन मिस्रियों के विपरीत मैसोपोटामिया में लिखित भाषा कीलाक्षरी थी। मृत्तिका फलकों पर कीलाकार संकेत गोद दिये जाते थे जिन्हें

उसके सैनिक कारनामो को अन्य असूर राजाओ—सरगान द्वितीय (७२२ ७०५ ई० पू०) और असारहद्दान (६८०-६६६ ई० पू०)—ने जारी रखा। उनकी विजयो और अभियानो के परिणामस्वरूप असूर एक जबरदस्त शक्ति बन गया जिसमे सपूर्ण मध्य तथा पूर्वी एशिया ए कोचक मैसोपोटामिया, शाम फिलिस्तीन और मिस्र का कुछ भाग शामिल थे। अपने समय के लिहाज से अशर निस्सदेह एक विश्व शक्ति था।

अशर सैन्य सामतो और दासस्वामियो का राज्य था। अशर म दासप्रथा मिस्र या बाबुल की अपेक्षा अधिक विकसित थी राजा के पास हजारो दास थे जिनका अकसर सडको नहरो और पूरे के पूरे नगरो तक के निर्माण म उपयोग किया जाता था। दास व्यापार भी काफी व्यापक पैमाने पर विकसित था।

अशर अपने सैन्य सगठन के उच्च स्तर के लिए विख्यात था। अशर सेना विभिन्न अगो म विभक्त थी—१) दो घोडवाले रथ, २) रिसाला (जो सर्वप्रथम अशर सेना म ही पैदा हुआ था), ३) भारी या हलके हथियारो से लैस पैदल सैनिक ४) इजीनियर और ५) घेरा डालनवाले दस्ते (पत्थरफेकयत्रो और भित्तिपातको स लैस)। सेना राजा की शक्ति की रीढ थी और राजाओ का सिहासनारोहण के समय सेना के सामने उपस्थित होना एक परपरा थी।

तथापि अशर की सैनिक शक्ति बिना नीव की इमारत ही थी। इस विराट राज्य के विभिन्न भागो के बीच शीघ्र सपर्क की पर्याप्त व्यवस्था नही थी और सभी अधीनस्थ देश तथा जातिया निर्मम उत्पीडन का शिकार बने हुए थे। मीडो (ईरानी पठार स्थित मीडिया नामक एक बडे राज्य के निवासी) के साथ मिलकर विद्रोही बाबुल ने अशर राज्य पर साघातिक प्रहार किया।

बाबुल और अशर का धर्म तथा सस्कृति

बाबुली समाज मे भी धर्म की भूमिका प्राचीन मिस्र स किसी कदर कम महत्वपूर्ण नही थी। साहित्य स लेकर विज्ञान तक सास्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रो पर प्रबल धार्मिक प्रभाव था। सबसे महत्वपूर्ण देवता मर्दूक, शमाश और कृषि देव दवी ताम्मुज तथा इश्तर (ओसीरिस और ईसिस के लगभग समतुल्य) थे। इनके अलावा स्थानीय नदियो और नहरो की आत्माओ से सबद्ध लोक प्रचलित विश्वास भी थ और मृतको की आत्माओ को भी पूजा जाता था।

प्राचीन मिस्रियो के विपरीत मैसोपोटामिया मे लिखित भाषा कीलाक्षरी थी। मृत्तिका फलको पर कीलाकार सकेत गोद दिय जाते थे जिन्ह

उसके सैनिक कारनामों को अन्य अशूर राजाओं – सारगोन द्वितीय (७२२-७०५ ई० पू०) और असारहद्दान (६८०-६६९ ई० पू०) – ने जारी रखा। उनकी विजयों और अभियानों के परिणामस्वरूप अशूर एक जबरदस्त शक्ति बन गया जिसमें संपूर्ण मध्य तथा पूर्वी एशिया के कोचक, मैसोपोटामिया, शाम फिलिस्तीन और मिस्र का कुछ भाग शामिल थे। अपने समय के लिहाज से अशूर निस्संदेह एक विश्व शक्ति था।

अशूर सैन्य सामंतों और दासस्वामियों का राज्य था। अशूर में दासप्रथा मिस्र या बाबुल की अपेक्षा अधिक विकसित थी राजा के पास हजारों दास थे, जिनका अक्सर सड़कों नहरों और पूरे के पूरे नगरों तक के निर्माण में उपयोग किया जाता था। दास व्यापार भी काफी व्यापक पैमाने पर विकसित था।

अशूर अपने सैन्य संगठन के उच्च स्तर के लिए विख्यात था। अशूर सेना विभिन्न अंगों में विभक्त थी – १) दो घोड़वाले रथ, २) रिसाला (जो सर्वप्रथम अशूर सेना में ही पैदा हुआ था), ३) भारी या हलके हथियारों से लैस पैदल सैनिक ४) इंजीनियर और ५) घेरा डालनेवाले दस्ते (पत्थरफेंकयंत्रों और भित्तिपातकों से लैस)। सेना राजा की शक्ति की रीढ़ थी और राजाओं का सिंहासनारोहण के समय सेना के सामने उपस्थित होना एक परंपरा थी।

तथापि अशूर की सैनिक शक्ति बिना नींव की इमारत ही थी। इस विराट राज्य के विभिन्न भागों के बीच शीघ्र संपर्क की पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी और सभी अधीनस्थ देश तथा जातियां निर्मम उत्पीडन का शिकार बने हुए थे। मीडों (ईरानी पठार स्थित मीडिया नामक एक बड़े राज्य के निवासी) के साथ मिलकर विद्रोही बाबुल ने अशूर राज्य पर साघातिक प्रहार किया।

बाबुल और अशूर का धर्म तथा संस्कृति

बाबुली समाज में भी धर्म की भूमिका प्राचीन मिस्र से किसी कदर कम महत्वपूर्ण नहीं थी। साहित्य से लेकर विज्ञान तक सांस्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रों पर प्रबल धार्मिक प्रभाव था। सबसे महत्वपूर्ण देवता मर्दूक, शमाश और कृषि देव देवी ताम्मुज तथा इश्तर (ओसीरिस और ईसिस के लगभग समतुल्य) थे। इनके अलावा स्थानीय नदियों और नहरों की आत्माओं से संबद्ध लोक प्रचलित विश्वास भी थे और मृतकों की आत्माओं को भी पूजा जाता था।

प्राचीन मिस्रियों के विपरीत मैसोपोटामिया में लिखित भाषा कीलाक्षरी थी। मृत्तिका फलकों पर कीलाकार संकेत गोद दिये जाते थे जिन्हें

उसके सैनिक कारनामों को अन्य अशर राजाओं — सरगोन द्वितीय (७२२-७०५ ई० पू०) और असारहद्दोन (६८०-६६९ ई० पू०) — ने जारी रखा। उनकी विजयों और अभियानों के परिणामस्वरूप अशर एक जबरदस्त शक्ति बन गया, जिसमे संपूर्ण मध्य तथा पूर्वी एशिया के कारक मैसोपाटामिया शाम, फिलिस्तीन और मिस्र का कुछ भाग शामिल थे। अपने समय के लिहाज से अशर निस्संदेह एक विश्व शक्ति था।

अशर सैन्य सामंतों और दासस्वामियों का राज्य था। अशर मे दासप्रथा मिस्र या बावुल की अपेक्षा अधिक विकसित थी। राजा के पास हजारों दास थे, जिनका अक्सर सड़कों, नहरों और पूरे के पूरे नगरों तक के निर्माण मे उपयोग किया जाता था। दास व्यापार भी काफी व्यापक पैमाने पर विकसित था।

अशर अपने सैन्य संगठन के उच्च स्तर के लिए विख्यात था। अशर सेना विभिन्न अंगों मे विभक्त थी — १) दो घोड़ेवाले रथ, २) रिसाला (जो सर्वप्रथम अशर सेना मे ही पैदा हुआ था), ३) भारी या हलके हथियारों से लैस पैदल सैनिक, ४) इंजीनियर और ५) घेरा डालनेवाले दस्ते (पत्थरफेंकयंत्रों और भित्तिपातकों से लैस)। सेना राजा की शक्ति की रीढ़ थी और राजाओं का सिंहासनारोहण के समय सेना के सामने उपस्थित होना एक परंपरा थी।

तथापि अशर की सैनिक शक्ति बिना नींव की इमारत ही थी। इस विराट राज्य के विभिन्न भागों के बीच शीघ्र संपर्क की पर्याप्त व्यवस्था नही थी और सभी अधीनस्थ देश तथा जातियां निर्मम उत्पीडन का शिकार बने हुए थे। मीडों (ईरानी पठार स्थित मीडिया नामक एक बड़े राज्य के निवासी) के साथ मिलकर विद्रोही बावुल ने अशर राज्य पर सांघातिक प्रहार किया।

बावुल और अशर का धर्म तथा संस्कृति

बावुली समाज मे भी धर्म की भूमिका प्राचीन मिस्र से किसी कदर कम महत्वपूर्ण नही थी। साहित्य से लेकर विज्ञान तक सांस्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रों पर प्रबल धार्मिक प्रभाव था। सबसे महत्वपूर्ण देवता मर्दूक, शमाश और कृषि देव-देवी ताम्मुज़ तथा इश्तर (ओसीरिस और ईसिस के लगभग समतुल्य) थे। इनके अलावा स्थानीय नदियों और नहरों की आत्माओं से संबद्ध लोक प्रचलित विश्वास भी थे और मृतकों की आत्माओं को भी पूजा जाता था।

प्राचीन मिस्रियों के विपरीत मैसोपाटामिया मे लिखित भाषा कीलाक्षरी थी। मृत्तिका फलकों पर कीलाकार संकेत गोद दिये जाते थे, जिन्हे

उसके सैनिक कारनामों को अन्य असूर राजाओं – सरगान द्वितीय (७२२ ७०५ ई० पू०) और असारहद्दोन (६८० ६६६ ई० पू०) – ने जारी रखा। उनकी विजयो और अभियानों के परिणामस्वरूप असूर एक जबरदस्त शक्ति बन गया जिसमे सपूर्ण मध्य तथा पूर्वी एशिया के कोचक, मैसोपोटामिया, शाम फिलिस्तीन और मिस्र का कुछ भाग शामिल थे। अपने समय के लिहाज से अशर निस्सदेह एक विश्व शक्ति था।

अशर सैन्य सामतो और दासस्वामियो का राज्य था। असूर मे दासप्रथा मिस्र या बाबुल की अपेक्षा अधिक विकसित थी राजा के पास हजारो दास थे, जिनका अक्सर सडको नहरो और पूरे के पूरे नगरो तक के निर्माण मे उपयोग किया जाता था। दास व्यापार भी काफी व्यापक पैमाने पर विकसित था।

अशर अपने सैन्य सगठन के उच्च स्तर के लिए विख्यात था। असूर सेना विभिन्न अगो मे विभक्त थी – १) दो घोडवाले रथ, २) रिसाला (जो सर्वप्रथम अशर सेना मे ही पैदा हुआ था), ३) भारी या हलके हथियारो से लैस पैदल सैनिक ४) इजीनियर और ५) घेरा डालनेवाले दस्ते (पत्थरफेकयत्रो और भित्तिपातको से लैस)। सेना राजा की शक्ति की रीढ थी और राजाओ का सिहासनारोहण के समय सेना के सामने उपस्थित होना एक परपरा थी।

तथापि अशर की सैनिक शक्ति बिना नीव की इमारत ही थी। इस विराट राज्य के विभिन्न भागो के बीच शीघ्र सपर्क की पर्याप्त व्यवस्था नही थी और सभी अधीनस्थ देश तथा जातिया निर्मम उत्पीडन का शिकार बने हुए थे। मीडो (ईरानी पठार स्थित मीडिया नामक एक बड राज्य के निवासी) के साथ मिलकर विद्रोही बाबुल ने अशर राज्य पर साघातिक प्रहार किया।

बाबुल और अशर का धर्म तथा सस्कृति

बाबुली समाज मे भी धर्म की भूमिका प्राचीन मिस्र से किसी कदर कम महत्वपूर्ण नही थी। साहित्य से लेकर विज्ञान तक सास्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रो पर प्रबल धार्मिक प्रभाव था। सबसे महत्वपूर्ण देवता मर्दूक, शमाश और कृषि देव देवी ताम्मुज तथा इश्तर (ओसीरिस और ईसिस के लगभग समतुल्य) थे। इनके अलावा स्थानीय नदियो और नहरो की आत्माओ से सबद्ध लोक प्रचलित विश्वास भी थे और मृतको की आत्माओ को भी पूजा जाता था।

प्राचीन मिस्रियो के विपरीत मैसोपोटामिया मे लिखित भाषा कीलाक्षरी थी। मृत्तिका फलको पर कीलाकार सकेत गोद दिये जाते थे जिन्हे

हित्ती राज्य

हित्ती राज्य का निर्माण और उत्कर्ष

हित्ती (हिट्टाइट) राज्य २००० ई० पू० के कुछ ही बाद एशिया-ए-कोचक में किज़िल ईरमाक (प्राचीन हालिस) नदी के तट पर अस्तित्व में आया था। इस इलाके के देशज निवासियों पर, जो सामान्यतः आद्य हित्ती कहलाते हैं, दूसरी सहस्राब्दी ई० पू० के आरंभ में निसाई (नसाइट) कबीलों ने हमला किया। हित्ती जाति इन दोनों कौमों के परस्पर विलयन का परिणाम थी।

हित्ती राज्य अर्ध पौराणिक राजा लबरनाश (सत्रहवीं सदी ई० पू०) द्वारा स्थापित किया माना जाता है, जिसका नाम आगे चलकर एक शाही उपाधि के रूप में प्रयुक्त होने लगा था। एक और प्रसिद्ध राजा मुर्शीलिश प्रथम (सोलहवीं शताब्दी ई० पू०) था, जिसने बाबुल को जीता और लूटा था और वहां बड़ी संख्या में बंदी बनाये थे।

पंद्रहवीं शती ई० पू० में राजा शुप्पिलूलिऊमश के राज्यकाल के समय हित्ती साम्राज्य अपने चरम पर था। उसके नेतृत्व में हित्तियों ने अपने राज्य और शाम के बीच एशिया-ए-कोचक के सारे इलाके को जीत लिया था और दजला तथा फरात नदियों के ऊपरी भाग मे स्थित मितानी राज्य को वशीभूत कर लिया था। मिस्र की अस्थायी दुर्बलता का लाभ उठाकर शुप्पिलूलिऊमश के उत्तराधिकारी शाम और फिलिस्तीन तक में जा घुसे। चौदहवीं शती ई० पू० के अंत और तेरहवीं शती ई० पू० के आरंभ मे हित्तियों और मिस्रियों के बीच बड़े पैमाने के टकराव हुए, जिनका आखिर रामसेस द्वितीय के साथ संधि मे अंत हुआ। इस संधि ने निर्धारित किया कि सारा उत्तरी शाम हित्तियों के अधिकार मे रहेगा।

यह शानदार सैन्य विजयों का काल था। लेकिन कुछ ही समय बाद हित्ती शक्ति क्षीण होने लगी। १२०० ई० पू० के आसपास एशिया-ए-कोचक, शाम और फिलिस्तीन पर 'समुद्री जातियों' यानी ईजियन सागर के द्वीपों के निवासियों ने हमला किया। उन्होंने आगे चलकर सारे हित्ती राज्य को ही ध्वस्त कर डाला। हित्ती राज्य अनेक छोटे रजवाड़ों में खंडित हो गया और अंत मे एक अशूर प्रांत बनकर रह गया।

हित्ती राज्य का
सामाजिक ढाचा और सस्कृति

शुप्पिलूलिऊमश के राज्यकाल मे हित्ती समाज दासस्वामी समाज का एक लाक्षणिक उदाहरण था। हित्ती विधि सहिता (पद्रहवी-तेरहवी शती ई० पू०) मे २० से अधिक अनुच्छेद दासो के बारे मे ही थे। युद्धवदी वनाकर देश म लाये गये दासों की सख्या वहुत अधिक थी। दास-श्रम ऋण-शोधन के एक तरीके के नाते भी प्रचलित था।

हित्तियो का मुख्य उद्यम पशुपालन था और उसके बाद कृषि और फल तथा अगूर उगाने का स्थान था। राज्य पर राजा शासन करता था, जिसे सूर्यदेव के समकक्ष माना जाता था। राजदरवारी पुरोहित, सैनिक, महाजन और व्यापारी भी राज्यकार्य मे महत्वपूण भूमिका अदा करते थे। हित्तियो का मिस्र तथा कई अन्य देशो क साथ खूब व्यापार था।

वुगज़कोई (अकारा से १५० किलामीटर) म भूतपूर्व हित्ती राजधानी की स्थली पर उत्खननो न हम हित्ती सस्कृति के बारे मे महत्वपूर्ण सूचना प्रदान की है। यहा हित्ती राजाओ का एक वडा पुरालेखागार मिला है। हित्ती भाषा मूलत चित्रलिपि मे लिखी जाती थी, जिसकी जगह बाद म अशर प्रभाव से कीलाक्षरी लिपि अपना ली गयी। हित्ती शिलालेखो को सबसे पहले चेक विद्वान हूराज्नी ने पढा था। हित्ती कला के विद्यमान स्मारक विशाल मूर्तियो और उद्भृतियो के रूप मे मिले है, जिनपर प्रवल अशर प्रभाव देखा जा सकता है।

उरार्तू

उरातू राज्य एशिया ए-कोचक, ईरान और उत्तरी मैसोपोटामिया के बीच ऊचे पहाडो से घिरे एक व्यापक पहाडी इलाके पर फैला हुआ था। यह देश वन्य सपदा, पत्थर और धातु निक्षेपो की दृष्टि से समृद्ध था।

उरार्तू राज्य का उद्भव और विकास

इस इलाक के प्रारभिक निवासी आद्य हित्तियो से सवद्ध थे। प्राचीन अशर शिलालेखो मे दो राज्यो का उल्लेख मिलता है – वर्तमान आर्मीनिया के प्रदेश पर स्थित उरार्तू और वान झील के तट पर स्थित नायरी जिन्ह आगे चलकर नौवी सदी ई० पू० क लगभग राजा सरदूर प्रथम के अधीन सयुक्त हो जाना था।

उरातू की शक्ति आठवीं शती ई० पू० के आरम्भ में बढ़ी। इस समय
के साथ संघर्ष में उरातुइया ने अनेक भव्य विजय प्राप्त की। आर्गीश्तिम
(७८६-७६० ई० पू०) के राज्यकाल में उरार्तू ने असुर सेनाओं को हरा
पारकाकेशिया के कुछ हिस्से अपने में मिला लिये। सरदूर द्वितीय ने (७६० -
ई० पू०) अपने पूर्ववर्ती द्वारा शुरू की गयी अधिग्रहण की नीति को जारी र
उसके राज्यकाल में पारकाकेशिया में सेवान झील के आसपास और इलाका
गया और उत्तरी शाम को भी उरातू राज्य में मिला लिया गया। लेकिन
सफलता अल्पकालिक ही थी क्योंकि आठवीं शती ई० पू० के मध्य में अ
राजा तिगलाथ पिलेसर तृतीय ने उरातू पर दो आक्रमण किये और देश
उजाड़ दिया। उरातू की शक्ति पर अंतिम प्रहार ७१४ ई० पू० में सरग
द्वितीय ने किया जिसने उसके एक समृद्ध नगर मूसासिर को जीतकर
डाला। दुर्बल उरातू राज्य छठी सदी ई० पू० तक बना रहा जब आरि
मीडों और शकों ने उसे जीत लिया।

उरार्तू का सामाजिक ढांचा और संस्कृति

पूर्व के अन्य प्राचीन राज्यों की भांति उरार्तू भी दासस्वामी समा
ही था। आर्गीश्तिम और सरदूर द्वितीय के सैन्य अभियानों के दौरान ब
संख्या में बनाये गये बंदियों से गुलामों की तरह काम लिया गया। उरार्तु
तांबे और लोहे की खानों में निर्माण तथा सिंचाई कार्यों में और पशुपालन
भी दास श्रम का उपयोग होता था। शासक वर्ग में दासस्वामी अभिजात
सैन्य नेता और पुरोहित थे और राज्य की बागडोर राजा के हाथों में हुआ
करती थी।

उरातुई लोगों का मुख्य धंधा पशुपालन था लेकिन कृषि भी सुविकसित
थी खासकर गेहूं बाजरे और जौ की खेती। उरार्तू में फलों तथा अंगूरों
का भी बड़े पैमाने पर उत्पादन होता था। सुविकसित कृत्रिम सिंचाई प्रणाली
ने कृषि को बहुत बढ़ावा दिया था। पुरातत्त्ववेत्ताओं को खुदाइयों के दौरान
उरार्तुइयों के निर्माण तथा धातु शिल्प कौशल के उच्च स्तर के अनेक प्रमाण
मिले हैं। महलों और मंदिरों के साथ बड़ी बड़ी कर्मशालाएं हुआ करती थीं।
उरातुई संस्कृति बाबुल और अशूर की संस्कृति से काफी घनिष्ठत
संबद्ध थी। मिसाल के लिए, कीलाक्षरी लिपि असुरों से ली गयी थी (और
बाद में किसी हद तक सरल भी कर ली गयी थी)। उरार्तू की सबसे मौलिक
उपलब्धि वास्तुकला थी – त्रिभुजाकार शीर्षवाला, स्तंभों पर खड़ा मूसासिर
का मंदिर यूनानी मंदिरों का लगभग आद्य प्रारूप जैसा ही है। खुदाइयों के
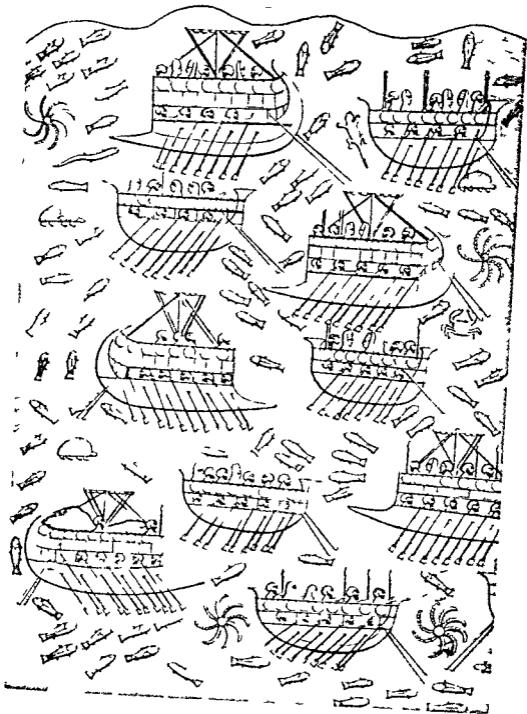
फिनीशियाई वाणिज्यिक तथा युद्धपोत। निनेवेह मे सेनाकेरीब के मंदिर म उद्‌भृत चित्र

दागन वैना की पत्रदार मूर्तिया उगतुई गजाओ के गानदार सिहामन और नामानी वारीक काम म अनदृत ढाना जैसी अनर वाम्य हस्तकृतिया पायी गयी है। विभिन्न प्रामादा और मदिरा न खडहरा म भित्तिचित्रा क हिस्स भी पाय गये है।

फिनीशिया

फिनीनिया गाम के तट पर एक सकरी मी पट्टी पर स्थित या और वहा अनक पश्चिमी मामी कबील रहा करत थे। इन सभी को फिनीशियाई ही कहा जाता था जो उन्ह यूनानिया का दिया नाम था। फिनीशिया कभी भी एक सयुक्त राज्य नही रहा था, वरन स्वतत्र नगरा और बस्तिया का समूह था जिनम स प्रत्यक के पास लगी हुई अपनी कृषिभूमि थी। इन नगरा मे सबसे बड उगारीत विब्लस टायर और सिडोन थे।

कोई १५०० ई० पू० से फिनीशियाई नगर तब तक मिस्री या हित्ती शासन के अधीन रहे, जब तक कि बारहवी शताब्दी ई० पू० मे उन्होंने अपनी आजादी फिर से हासिल न कर ली और टायर उनम प्रमुख न बनन लगा। टायर के राजा हीरम प्रथम (९६९-९३६ ई० पू०) न बडे पैमाने की कई सैन्य कार्रवाईया की और साइप्रस मे एक और अफ्रीका म अनेक सैन्य अभियानो का सचालन किया। इस काल मे टायर न विब्लस और सिडोन नगरा पर भी प्रभुत्व स्थापित कर लिया और एक महत्वपूण राजनीतिक तथा व्यापारिक केन्द्र बन गया। टापू पर अपनी अनुकूल स्थिति के कारण अरसे तक टायर को अभेद्य दुर्ग माना जाता रहा। लेकिन फिनीशियाइयो की स्वतत्रता अल्पकालिक ही थी, क्योकि आठवी शताब्दी ई० पू० के अत म असुरो न उन्ह जीत लिया।

अनाज और अगूर फिनीशिया की मुख्य उपज थे। कृषि म दास श्रम का कम ही उपयाग किया जाता था (वस्तुत वहा दासप्रथा कभी व्यापक पैमाने पर विकसित ही नही हुइ) और मुख्य श्रमशक्ति समुदायो मे रहनेवाले किसानो की ही थी। नगरवासी मुख्यत शिल्पो तथा व्यापार मे लग हुए थ। प्राचीन काल म भी फिनीशिया क लोग व्यापारियो और निपुण नाविका के रूप मे विख्यात थे। फिनीशियाई अपनी शराबो, इमारती लकडी और अपन कारीगरो की बनायी चीजो का तो निर्यात करते ही थे, लेकिन व्यापारी अपन को इन्ही वस्तुआ तक सीमित नही रखते थ – वे अन्य देशो से सामान खरीदकर और उसकी फिर से बिक्री करके बिचौलिया का काम भी करते थे। फिनीशियाई मिस्र अशर मैसोपोटामिया एशिया ए कोचक आदि के साथ व्यापार करते थे।

व्यापार के लिए फिनीशियाई ईजियन सागर तथा भूमध्य सागर के देशो तक लबो-लबी यात्राए किया करते थे और वे ही सबसे पहले समुद्र के रास्ते 'हरक्यूलीस के स्तभ' यानी जिब्राल्टर पहुचे थे। जहा कही भी मूल्यवान सामान को न्यूनाधिक नियमित रूप से प्राप्त करना सभव होता था फिनीशियाई वही बस्तिया या उपनिवेश बसा लेते थे। इस प्रकार के उपनिवेश ईजियन सागर के विभिन्न द्वीपो पर (जैसे थसोस और राडस) और भूमध्य सागर मे (जैसे साईप्रस, माल्टा और सिसली) स्थापित किये गये थे। अफ्रीका के उत्तरी तट पर फिनीशियाइयो ने कार्थेज नगर बसाया था, जिसे आगे चलकर एक महत्वपूर्ण राज्य मे विकसित हो जाना था और स्वय अपने अनेक उपनिवेश स्थापित करने थे।

फिनीशियाई सस्कृति की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि एक वर्णमाला का विकास (तेरहवी शती ई० पू०) और प्रसार था। यह निस्सदेह व्यापार के तीव्र विकास और व्यापारिक दस्तावेजो के बारबार और जल्दी तैयार किये जाने की बढती हुई आवश्यकता का एक प्रत्यक्ष परिणाम था। फिनीशियाइयो ने मिस्री चित्रलिपि और बाबुली कीलाक्षरो के आधार पर २२ अक्षरो की एक वर्णमाला तैयार की। इस वर्णमाला को आगे चलकर यूनानी वर्णमाला के लिए और इस प्रकार लेखन के अनेक उत्तरवर्ती स्वरूपो के लिए आदर्श का काम देना था।

फिलिस्तीन

प्राचीन फिलिस्तीन लेबनान की दक्षिणी पहाडियो से लेकर अरबी रेगिस्तान तक फैला हुआ था और उसका पश्चिमी सिरा भूमध्य सागर से लगता था। देश मे पठारो, सूखे रेगिस्तानो और उपजाऊ घाटियो का बारी-बारी से सिलसिला था। सबसे प्रारभिक काल मे फिलिस्तीन के तटवर्ती प्रदेशो मे "समुद्री जातियो" के फिलिस्तीनी नामक ईजियाई कबीले का और देश के शेष भाग मे उत्तर-पश्चिमी सामी या कनानी कबीलो का निवास था। ईसा पूर्व पद्रहवी तथा चौदहवी सदियो मे इस इलाके मे पहले-पहल हपीरू अथवा इबरानी (हिब्रू) नामक यहूदी कबीले प्रकट होने लगे। इबरानी कबीलो और कनानियो तथा फिलिस्तीनियो के बीच सघर्ष के दौरान फिलिस्तीन के उत्तरी भाग मे शनै शनै इसराएल राज्य पैदा हुआ जिसकी स्थापना ग्यारहवी शती ई० पू० मे साऊल ने की थी।

कोई एक सदी बाद फिलिस्तीन के दक्षिणी भाग मे यहूदिया (जूडिया) राज्य का निर्माण हुआ। आगे चलकर यहूदिया के राजा दाऊद ने दोनो राज्यो को अपने शासन के अतर्गत एक कर लिया फिलिस्तीनियो को खदेड बाहर

किया और प्राचीन कनानी नगर यरूशलम को अपनी राजधानी तथा धार्मिक केंद्र बनाया।

राजा सुलेमान (दसवीं सदी ई० पू०) के राज्यकाल में यहूदिया और इसराएल के संयुक्त राज्य ने उत्कर्ष के नये शिखरों को प्राप्त किया। इस अपेक्षाकृत शांतिमय काल में टायर के राजा हीरम के साथ एक मैत्रीपूर्ण समझौता हुआ, विदेशी व्यापार का तीव्र गति से विकास हुआ और यरूशलम में बड़े पैमाने पर निर्माण कार्य किया गया। विख्यात सुलेमान के मंदिर का निर्माण इसी काल में हुआ था।

लेकिन सुलेमान की मृत्यु के कुछ ही समय के बाद संयुक्त राज्य को दो भागों में बंट जाना था। आठवीं शताब्दी ई० पू० के अंत में इसराएल असुर राजा सरगोन द्वितीय द्वारा जीत लिया गया, जबकि यहूदिया को अपनी आज़ादी बनाये रखने के लिए भारी खिराज देना पड़ा। यहूदिया कोई १५० साल तक और अस्तित्वमान रहा, जिसके बाद वह बाबुल के राजा नबूकदनेसर के कब्ज़े में आ गया, जिसने यरूशलम पर धावा बोलकर उसे सर कर लिया और मिट्टी में मिला दिया (५८६ ई० पू०) और उसके निवासियों को कैदी बनाकर बाबुल ले गया। यह घटना बाबुली कैद के नाम से विख्यात है।

फिलिस्तीन के उत्तरी भाग में मुख्य उद्यम कृषि और दक्षिण में पशुपालन था। किसान समुदायों में रहते थे और फिलिस्तीन में दास श्रम फिनीशिया की अपेक्षा अधिक व्यापक था। दास भारी संख्या में शाही तथा मंदिरों की ज़मीनों पर काम किया करते थे। देश के मूल निवासियों, कनानियों को भी गुलाम बना लिया गया था।

प्राचीन इबरानियों के जीवन में धर्म महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता था। इबरानी मजहब और फिनीशियाइयों के धर्म में अनेक समानताएं थीं। याहवह या यहोवा की उपासना विशेषकर बहुत व्यापक थी। आरंभ में यहोवा यहूदिया के कबीले का देवता था, लेकिन कालांतर में उसकी उपासना देशव्यापी पैमाने पर होने लगी। यहूदी धर्म ने अपना अंतिम रूप बाद में ही जाकर, अर्थात 'बाबुली कैद' के बाद ही ग्रहण किया।

प्राचीन फिलिस्तीन की एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक उपलब्धि इबरानी (यहूदी) जातियों के धर्मग्रंथ और विशेषकर वे अनेक कृतियां हैं, जिन्हें बाद में बाइबिल के पूर्वविधान (ओल्ड टैस्टामेंट) में संग्रहीत किया गया। इनमें ऐसे बहुत से ऐतिहासिक तथा पौराणिक आख्यान, दंतकथाएं, धार्मिक शिक्षाएं और पद्यात्मक रचनाएं शामिल हैं, जिन्हें अब यहूदी और ईसाई दोनों ही धर्मों के अनुयायी 'देववाणी' की तरह पूजनीय समझते हैं।

फारस

प्राचीन फारसी या पारसीक राज्य की जन्मस्थली मैसोपोटामिया के पूर्व मे स्थित विस्तृत ईरानी पठार था। जहा इस पठार का केंद्रीय भाग अपेक्षाकृत सूखी मिट्टी और विरल वनस्पतिवाला था, वहा पहाडियो म जगलो, धातुओ (सोना, चादी, ताबा, लोहा और सीसा) तथा सगमरमर का बाहुल्य था। समूचे तौर पर प्राकृतिक अवस्थाओ ने अनाजो (जई, गहू और जौ) की कृषि और पशुपालन (पूर्व मे खानाबदोश और पश्चिम मे स्थायी) को सभव बना दिया था।

मीडिया तथा फारस

ई० पू० तीसरे सहस्राब्द म उत्तर से ईरानी कबीलो ने ईरानी पठार म प्रवेश किया और कालातर मे इस इलाके का नामकरण इन्ही कबीलो पर हो गया। कुछ भागो म उन्होंन स्थानीय निवासियो को जीत लिया और कुछ भागो मे उनके साथ-साथ शातिपूर्वक बस गये और आगे चलकर उनके साथ घुलमिल भी गये।

लगभग नवी सदी ई० पू० मे ईरानी कबीलो के दो बडे समूह सामने आते है–मीड (मीडियाई) और पारसीक (फारसी)। मीडो न पारसीको से पहले प्रमुखता प्राप्त की लेकिन उनके इतिहास की हमे कम ही जानकारी है और जो है भी, वह अर्ध-पौराणिक ही है। तथापि यह निश्चित है कि सातवी शती ई० पू० के अत म मीडिया एक शक्तिशाली राज्य बन गया था और बाबुल के साथ उसने अशर पर मरणातक प्रहार करने मे सफलता प्राप्त की थी। तिस पर भी छठी शताब्दी ई० पू० के मध्य तक मीडो को अपन पडोसी पारसीका की अधीनता स्वीकार करन के लिए विवश हा जाना पडा।

फारसी राज्य का सस्थापक प्रसिद्ध सेनानायक और राजनता कुरुष या साइरस (५५६-५२६ ई० पू०) था। उसके जीवन का प्रारभिक भाग दतकथाओ म तिमिराछन्न है, जिनके अनुसार राजा का बेटा होन पर भी उसे शैशव मे एक गडरिये ने पाला पोसा था। मैसोपोटामिया के विरुद्ध अतिम मीड राजा के आक्रमण के दौरान कुरुष के नेतृत्व मे पारसीको न मीडिया पर हमला किया और तीन साल लबे युद्ध के बाद उस देश को जीत लिया गया और पारसीक राज्य म मिला लिया गया।

मीडो का स्वामी बनने के बाद कुरुष न और अनक सैन्य अभियानो का सचालन किया। उसने पारसीक सेना का पुनर्गठन करके रिसाले को उसकी मुख्य प्रहार शक्ति बनाया। ५४७ ई० पू० म कुरुष ने आर्मीनिया और कपाडोशिया

का जीत लिया और फिर ५८६ ई० पू० म लीडिया को जीतकर राजा क्रूस (क्रसस) की अपार सपदा को छीन लिया जिसका नाम उस समय भी वैभवशाली राजाओ का समानार्थक बन चुका था। कुरुष न समुद्र तट पर स्थित अनेक समृद्ध यूनानी नगरो सहित सपूर्ण एशिया-ए-कोचक पर अधिकार स्थापित कर लिया।

इन विजयो के बाद लगभग सारा ही मैसोपोटामिया (दक्षिण क सिवा) कुरुष द्वारा विजित दशा मे घिर गया। फलस्वरूप बाबुल के विरुद्ध युद्ध म कुरुष क हाथ बहुत मजबूत हो गय और अत म ८३८ ई० पू० म यह नगर भी उसके कब्जे मे आ गया। इसके बाद कुरुष ने एक घोषणापत्र जारी किया, जिसम उसने वादा किया कि वह बाबुली प्रशासन पद्धति को नहीं बदलगा, स्थानीय देवी देवताओ का आदर करेगा और बाबुल नगर की समृद्धि को बढायेगा। यह घोषणापत्र दिखाता है कि कुरुष केवल अप्रतिम सेनानायक ही नही वरन चतुर राजनेता और कूटनीतिज्ञ भी था।

कुरुष ने फिलिस्तीन तथा फिनीशिया के खिलाफ अपने सैन्य अभियानो का भी इसी प्रकार सचालन किया। उसने लगातार अपने शातिमय लक्ष्यो पर जोर दिया। उसने यरूशलम नगर का जीर्णोद्धार किया जिसे बाबुली विजेताओ ने उजाड दिया था और अनक फिनीशियाई नगरो को सहायता दी। वास्तव मे फिलिस्तीन और फिनीशिया की विजय ने कुरुष को उस समय पूर्व म विद्यमान अतिम महाशक्ति – मिस्र – क विरुद्ध आसन्न युद्ध के लिए अत्यत महत्वपूर्ण प्रहारस्थल प्रदान कर दिया था। लेकिन कुरुष इस योजना को स्वय पूरा न कर पाया क्योंकि वह अपने साम्राज्य के उत्तर-पूर्वी सीमात पर मसागेटो (महाशको) के विरुद्ध युद्ध मे मारा गया।

पारसीक शक्ति का उत्कर्ष

कुरुष की सैनिक नीति को उसके पुत्र कबुज या कबीसेस (५२९-५२२ ई० पू०) ने जारी रखा जिसने फिनीशियाई बेडे की सहायता से मिस्र के विरुद्ध युद्ध के लिए सावधानीपूर्वक तैयारिया की। लेकिन कुरुष के ' उदार " राजनय के विरुद्ध कबुज ने मिस्र को जीतने के बाद वहा आतक का राज्य स्थापित किया। फिर भी पूर्व म बच रही अतिम महाशक्ति को जीत लिया गया था और अशर के चरणो पर चलते हुए फारस अब – तत्कालीन मानको के अनुसार – एक विश्वशक्ति बन गया था।

इस विशाल साम्राज्य के सगठन के विवरणो का पर्वतो मे एक चट्टान पर खुदे हुए शहशाह दारा (डेरियस) प्रथम (५२२-४८६ ई० पू०) के विख्यात अभिलेख स अनुमान लगाया जा सकता है। सारा फारसी राज्य अनेक

क्षत्रपियो या प्रदशो म बटा हुआ था और आम तौर पर पारसीको द्वारा विजित प्रत्येक देश एक पृथक प्रदेश होता था (मिस्र, बाबुल, लीडिया आदि)। इन प्रदेशो के शासक – क्षत्रप – स्वय शहशाह द्वारा नियुक्त किये जाते थे, वे सीधे उसीके प्रति उत्तरदायी होते थे और अपने प्रदेश मे उन्हे सभी न्यायिक तथा प्रशासनिक प्राधिकार प्राप्त थे।

सभी प्रदेशो को नकद तथा जिस के रूप मे कर देने होते थ। उदाहरण के लिए मिस्र को १,२०,००० सैनिको के भोजन जितना अनाज देना पडता था। इन करो के परिणामस्वरूप दारा के खज़ान मे बेशुमार खिराज आता रहता था।

दारा ने मुद्रा सुधार भी किया। इतिहास मे पहली बार अनेक भिन्न-भिन्न देशो से विरचित एक विशाल साम्राज्य एकरूप मुद्रा – सोने के सिक्को अथवा दारिको – का उपयोग करने लगा जिसे ढालने का अधिकार सिर्फ शहशाह ही रखता था (यद्यपि क्षत्रपो को चादी और ताब के सिक्के ढालन का अधिकार था)। दारिक के प्रचलन न व्यापार के प्रसार को बढावा दिया, जिसके लिए दारा की सरकार ने सडको के निर्माण की और उनकी कारगर सुरक्षा की भी व्यवस्था की। उस ज़मान म फारस म सडको का बढिया जाल बिछा हुआ था जिनपर हर २० किलोमीटर फासले पर सराये और डाकचौकिया होती थी। व्यापारिक महत्व के अलावा ये सडके बडा सैनिक महत्व भी रखती थी।

दारा न सैनिक सुधार भी किये। विभिन्न प्रदेशो म स्थायी छावनिया कायम की गयी और सारे राज्य को पाच सैनिक क्षेत्रो म विभाजित कर दिया गया, जो प्रदशो की सीमाओ से मेल नही खाते थे। सैनिक क्षेत्रो के सेनानायक सीधे शहशाह के प्रति उत्तरदायी थे।

यह थी शहशाह दारा के शासनकाल मे राज्य की सरचना। स्वय पारसीको को देश मे प्रभुत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त थी। वे सेना म भी सेवा करते थे और किसानी और पशुपालन का काम भी करते थे। वे सभी प्रकार के करो और बेगार से बरी थे। बेगार विजित जातियो के लिए ही लाज़िमी थी। तिस पर भी अत मे पारसीक राज्य भी अशर की भाति कच्ची नीव की इमारत ही साबित हुआ – वह अपनी सैनिक शक्ति के बूते पर ही टिका हुआ था, जब कि विभिन्न सघटक राज्यो म दृढ आर्थिक तथा राजनीतिक सबधो का अभाव था। पारसीको को जब अधिक गभीर शत्रु – यूनानियो – का सामना करना पडा, तो आतरिक सूत्रबद्धता के इस अभाव को कही अधिक अनुभव किया गया।

फारस का धर्म तथा सस्कृति

उस जमान म पूव व अन्य सभी राज्यो की ही भाति ईरानी समाज म भी धम की भूमिका बहुत महत्वपूण थी। प्राचीन ईरानी धम म प्रकृति (उदाहरण क लिए पर्वता) और पशुआ की उपासना सन्निहित थी। बाद म पारसीक जन दवता अहुरमज्दा और सूयदव मितरस या मित्र की उपासना व्यापक हो गयी। सामान्यत माना जाता है कि जरथुस्त (पारसी) धम का आविर्भाव दारा क शासनकाल म हुआ। नकी और बदी, प्रकाश और अधकार के बीच साविक सघष इस धर्म का एक तात्विक लक्षण था।

ईरानी सस्कृति म एसा बहुत ही कम था कि जिस मौलिक कहा जा सक। प्राचीन ईरानी साहित्य तो लगभग बिलकुल ही नही बच पाया है। मिस्र और असार दाना न ईरानी वास्तुकला पर जबरदस्त प्रभाव डाला। पारसीका न अपनी लिपि बाबुल स ग्रहण की थी, यद्यपि आगे चलकर उन्हान उसी कीलाक्षरी लिपि क आधार पर अपनी अलग वर्णमाला भी विकसित की। महत्वपूर्ण मौलिक सास्कृतिक उपलब्धियो के इस अभाव का कारण स्वय राज्य की सैनिक प्रकृति और उसम एकरूपता की अनुपस्थिति म देखा जा सकता है।
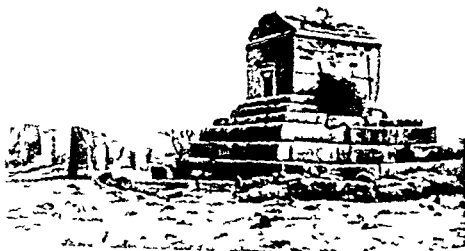
पसारगादे मे कुरुष का मक़बरा

तीसरा अध्याय

भारत तथा चीन की प्राचीन सभ्यताए

भारत

प्राकृतिक अवस्थाए

देश के विराट आकार के कारण प्राचीन भारत म प्राकृतिक अवस्थाओ म अत्यधिक वैभिन्य था। इसलिए देश को उत्तरी (अथवा गगा तथा सिधु नदियो की द्रोणी) और दक्षिणी, इन दो भागा मे विभाजित करना सबसे अच्छा रहेगा। उत्तरी भारत मे प्राकृतिक अवस्थाए इस मान मे मिस्र या बाबुल की अवस्थाओ के कमोवेश समान थी कि जमीन की उर्वरता काफी हद तक सिधु और गगा मे बाढो पर निर्भर करती थी। दक्षिणी भारत की ज़मीन कम उपजाऊ थी, लेकिन देश का यह भाग वनो से अच्छी तरह स ढका हुआ था और मूल्यवान धातुओ तथा रत्नो (सोना, हीरे आदि) मे समृद्ध था। भारत का एक महत्वपूर्ण लक्षण उसका भौगोलिक पार्थक्य था – देश आसपास की दुनिया से ऊचे हिमालय पर्वतो द्वारा कटा हुआ था और समुद्र से घिरा हुआ था। इस देश मे निवास करनेवाले मूल कबीलो को प्राय द्रविड कहा जाता है और भारतीय इतिहास का सबस प्रारभिक काल सामान्यत द्रविड काल क नाम से जाना जाता हे।

प्रारभिक भारतीय इतिहास

द्रविड जनो की सस्कृति और विकास का स्तर लगभग सुमेरी-अक्कादी समाज के अनुरूप ही है। आबादी का मुख्य उद्यम सिचित जमीन पर कृषि तथा पशुपालन था। सबसे आम धान्य फसले गेहू और जौ थे। पालतू पशुओ मे भेड, सूअर और भैस मुख्य थे। ऊटो और हाथियो को भी प्राचीन काल म ही पालतू बनाना शुरू कर दिया गया था।

द्रविड काल म ही हडप्पा और मोहनजोदडो जैसे चौडी सडको और दुमज़िला मकाना वाले शहर पैदा हो चुक थे जिन्हे उत्खनन के ज़रिये खोजा

गया है। मकान पक्की ईंटों के बने होते थे। मोहनजोदड़ो में जल प्रदाय और निकास प्रणालियों के अवशेष मिले हैं और इसका भी काफी प्रमाण मिला है कि यह एक सुविकसित व्यापार तथा शिल्प केंद्र था।

मोहनजोदड़ो और हड़प्पा में पाये गये सबसे बड़े महलों के खंडहर, जो प्रत्यक्षत राजाओं के महल थे, द्रविड समाज में राज्यसत्ता के अस्तित्व के प्रमाण है। तथापि उस समय भारत एकबद्ध राज्य नही था, वरन अनेक छोटे छोटे राज्यों और रजवाड़ों में बंटा हुआ था। अभिजातों के आवासों और निर्धनों के घरों से अनुमान लगाया जा सकता है कि संपत्ति पर आधारित सामाजिक विभेदों और वर्ग समाज के भ्रूण रूपों का उदय हो चुका था। लेखन का अस्तित्व भी विकास के काफी ऊंचे स्तर को प्रमाणित करता है।

आर्य विजय

दूसरे सहस्राब्द के प्रथमार्ध मे उत्तरी भारत पर मध्य एशियाइ स्तेपियो से आर्य जनो ने आक्रमण किया।

आर्य आर्थिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से द्रविडो की अपेक्षा कही कम उन्नत थे। आर्य जन नौ थे, जिनमे भारत जन (भरत का वंश) सबसे महत्वपूर्ण था। प्रत्येक जन का नेता राजा (राजन) कहलाता था और कई जनो के समूह पर महाराज शासन करता था।

आर्य लोग खानाबदोश पशुचारक थे। उनकी संपदा का मुख्य स्रोत ढोर थे और गायो का विनिमय के साधन के रूप मे उपयोग किया जाता था, क्योंकि मुद्रा अभी तक अस्तित्व मे नही आयी थी। तथापि जिन आर्यो ने भारत पर आक्रमण किया था, उन्होंने जल्दी ही श्रेष्ठतर द्रविड संस्कृति को आत्मसात कर लिया और एक जगह बसकर कृषि करने लगे। द्रविड आबादी मे से कुछ का पूरी तरह से सफाया कर दिया गया और कुछ को दास बना लिया गया। इन दासो के साथ अत्यधिक निर्दयता और तिरस्कार का बर्ताव किया जाता था।

प्रथम सहस्राब्द मे आर्य आगे बढते और स्थानीय आबादी को जीतते हुए भारत के ठेठ दक्षिणी प्रदेशो तक जा पहुचे। देशज आबादी और विजेता आर्यो के बीच विद्यमान अनूठे संबंध ही वर्ण व्यवस्था या जाति प्रथा के मूलाधार बने, जो तब विकसित होने लगी थी। भारत की सारी आबादी को चार वर्णो या जातियो मे विभक्त कर दिया गया। सबसे ऊची जाति पुरोहितो अथवा ब्राह्मणो की थी, उसके बाद क्षत्रिय अथवा योद्धा जाति, वैश्य—स्वतंत्र कृषक, शिल्पी और व्यापारी—और अंत मे शूद्र—कामगर, नौकर और दास—आते थे। विभिन्न जातियो के बीच सीमाए पूर्णत अलंघ्य थी

सारा प्रदेश) को सौंपने के लिए विवश किया और एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। लेकिन चंद्रगुप्त द्वारा सम्स्थापित साम्राज्य को तो उसके पोते अशोक (२७३-२३२ ई० पू०) के शासनकाल में और भी अधिक महानता प्राप्त करनी थी। कलिंग के राज्य को जीतने के बाद अशोक ने लगभग सारे ही भारत को अपनी सत्ता के अंतर्गत ऐक्यबद्ध कर लिया। अशोक अपने द्वारा संपन्न कराये गये व्यापक निर्माण कार्य और व्यापार के संरक्षण के लिए भी प्रसिद्ध है। उसके वैश्य जाति को अपना मुख्य आधार बनाया तथा ब्राह्मणों का विरोध किया और बौद्ध धर्म को राजकीय धर्म बनाकर ब्राह्मणों के प्रभुत्व तथा सत्ता पर प्रबल प्रहार किया।

अशोक की मृत्यु के कुछ ही समय के बाद भारतीय राज्य फिर छिन्न-भिन्न हो गया और उसके बाद लगभग १०० ई० पू० में शकों ने भारत पर उत्तर में आक्रमण करके एक भारतीय-शक राज्य की स्थापना की।

प्राचीन भारतीय धर्म तथा संस्कृति

ब्राह्मण धर्म के मूल में निहित आधारभूत सिद्धांत तीन देवताओं—सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, विश्व पालनकर्ता विष्णु और संहारकर्ता शिव (महेश) — में विश्वास था, जो मिलकर महात्रिमूर्ति का निर्माण करते हैं। इस धर्म का विकास पुरोहित ब्राह्मण जाति की सत्ता के दृढ़ीकरण से घनिष्ठतः संबद्ध था, क्योंकि वेदों के निर्वचन का अधिकार मात्र उन्हीं को प्राप्त था। धार्मिक कर्मकांड बहुत ही जटिल थे।

छठी शताब्दी ई० पू० में एक और धार्मिक रुझान को सामने आना था। यह बौद्ध धर्म था। इस धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध थे, जो ब्राह्मणों के धार्मिक एकाधिकार के विरोधी थे और जिन्होंने वर्ण व्यवस्था पर आधारित असमानता को — कम से कम व्यक्ति के आत्मिक जीवन में — समाप्त करने का प्रयास किया। बुद्ध ने निर्वाण की प्राप्ति के लिए अहिंसा, संयम और लौकिक इच्छाओं के त्याग की भी शिक्षा दी। हम देख चुके हैं कि तीसरी शती ई० पू० में अशोक के शासनकाल में बौद्ध धर्म को राजकीय धर्म घोषित कर दिया गया था।

भारत की प्राचीन सभ्यता बहुत उन्नत थी। तीसरी शताब्दी ई० पू० तक भी अनेक आक्षरिक लिपियां अस्तित्व में आ चुकी थीं। महाभारत और रामायण जैसी महाकाव्य काल की अप्रतिम कृतियां आज तक बच रही हैं। प्राचीन भारतीय वास्तुकला भी अत्यंत असाधारण है, उदाहरण के लिए चट्टानों में तराशकर बनाये बहुत ही भव्य बौद्ध मंदिर, जिनमें वक्र रेखाओं और ज्यामितीय अलंकरणों का प्राचुर्य है।

प्राचीन भारतीय गणित खगोल और आयुर्विज्ञान के आधारभूत सिद्धातो मे भी सुपरिचित थे। एक पचाग का विकास किया गया था, जिसमे वर्ष तीस-तीस दिन के बारह महीनो मे विभाजित था और हर पाच साल के बाद एक अतिरिक्त महीना हुआ करता था। तब के चिकित्सीय ग्रथ आज तक विद्यमान है जो शरीर की रचना के ज्ञान और भाति भाति की औषधिक जडी-बूटियो का उपयोग कर सकने की योग्यता को प्रमाणित करते हैं।

प्राचीन चीन

प्राकृतिक अवस्थाए

प्राकृतिक अवस्थाओ के मामले मे चीन मध्य-पूर्व के देशो से भारत से भी अधिक भिन्न है। चीन को तीन सुस्पष्टत अलग-अलग प्रदेशो मे विभाजित किया जा सकता है – १) ह्वाग-हो नदी की घाटी अथवा चीन का बडा मैदान २) पर्वतीय प्रदेशो और यागत्सी घाटी से निर्मित मध्य चीन, ३) पर्वतीय दक्षिणी चीन।

ह्वाग हो नदी की वार्षिक बाढ चीनी मैदान को अत्यधिक उर्वर बना देती है। मध्य चीन और विशेषकर दक्षिणी चीन की मिट्टी कही कम उपजाऊ है लेकिन ये इलाके खनिज साधनो (ताबा टीन और सीसा) तथा नेफ्राइट (हरितमणि) जैसे मूल्यवान रत्नो से समृद्ध है। प्राचीन चीन की आबादी बहुत ही पचमेल थी।

प्राचीनतम काल मे चीन

चीनी इतिहास का सबसे प्रारभिक काल शाग यिन काल (१७६५-११२२ ई० पू०) कहलाता है। उत्तरी खानाबदोश कबीलो – सिउग नू – के विरुद्ध मिलजुलकर सघर्ष चलाने और विद्यमान सिचाई प्रणाली को विकसित करने की खातिर ह्वाग हो नदी द्रोणी के चीनी कबीलो के एकीकरण के परिणामस्वरूप बडे नगरो और आगे चलकर एक सपूर्ण राज्य का विकास हुआ। इस एकीकरण का मुख्य प्रेरक यिन नामक कबीला था और उसने जिस राज्य को स्थापित किया, वह उसके शासक शागवश के नाम पर शाग यिन राज्य के नाम से जाना जाता है।

इस सदी के चौथे दशक मे शाग यिन राज्य के प्रदेश मे किये उत्खननो के फलस्वरूप शाही महल एक मदिर मकानो और कर्मशालाओ से युक्त एक नगर के अवशेष प्रकाश मे आये हैं। ३०० से अधिक समाधियो का पता

ाया गया है, जिनम से चार निर्विवाद रूप म शाही समाधिया थी
ः जिनमे बेशुमार तादाद म सोन नेफाइट और सीप के जेवर मिले है।
शाग-यिन काल मे लोगो का मुख्य उद्यम जौ, बाजरा और गेहू की
ी था। बाद मे वे धान की खेती भी करने लगे। धान के खेता क लिए
सर्वप्रथम आदिम सिचाई युक्तियो का आविष्कार किया गया था। इस
र के काम के औज़ार भी एकदम आदिम ही थे—बस कुदालो और लकडी
हलो का ही उपयोग किया जाता था। तथापि इस पुराने जमाने मे भी
निया न शहतूत के पेड उगाना और रशम बनाना शुरू कर दिया था।
म बनाने की विधि को एकदम गुप्त रखा जाता था। इस भेद को खोलने
सजा मौत थी। नतीजे के तौर पर चीनी इस रहस्य को कोई ढाई हजार
र तक अपन पास ही रख सके, और तब जाकर ही वह आखिर जापान
ः ईरान तक फैल पाया। अन्य उद्यम थे मास के लिए पशुपालन (दूध के
ए नही, क्योकि चीनी दूध नही पीते थे) और मछली पकडना।

काष्ठकर्म (तीर, कमान, रथ और नाव बनाना), प्रस्तरकर्म और
भाड जैसे अनक शिल्प भी सुविकसित थे। उत्खननो ने आदिम कास्यकम
प्रमाण भी प्रस्तुत किये ह। व्यापार भी शुरू हो चुका था और लगातार
कास कर रहा था, लेकिन अभी वह जिसो क आदिम विनिमय तक ही
मित था।

राजा की शक्ति मे अब भी पितृतन्त्रात्मक लक्षण विद्यमान थे क्योकि
न अथवा जन के ज्यष्ठो की परिषद उसकी सहायता करती थी और
ः सैनिक नता के साथ साथ मुख्य पुरोहित क कृत्यो का भी निर्वहन
रता था।

यिन समाज म सपत्ति पर आधारित श्रेणी सगठन और वशागत अभिजात
ी का अस्तित्व था, जिसके हाथो मे जमीन और दास सकेद्रित थे। दासप्रथा
तृतन्त्रात्मक ढग की थी। आबादी का भारी बहुलाश समुदायो या कम्युनो
रहनेवाले किसानो का था।

इस प्रारभिक काल म ही लिखित भाषा भी विकसित हो गयी थी।
सके लिपिचिह्न आदिम चित्रलेखन से उत्पन्न हुए थे। यह लिपि बहुत ही
टिल थी—अब तक इसके लगभग ३,००० चिह्नो को ही पहचाना जा
का है।

बारहवी शताब्दी ई० पू० मे चाऊ कबीलो के साथ लबी और भयकर
डाइयो की शुरूआत हुई, जिन्होने अतत शाग राजधानी पर अधिकार कर
ने (११२४ ई० पू०) और अपने राज्य की स्थापना करने मे सफलता
प्त कर ली।

चाऊ तथा चिन राजवंश

चाऊ राजवंश (११२२-७७१ ई० पू०) के शासनकाल में एक केंद्रीकृत चीनी राज्य का उदय हुआ। राजाओं को देवताओं की तरह पूज्य माना जाने लगा (राजाओं की पदवियां देवपुत्र और देव-सहायक जैसी हुआ करती थी) और सम्राट के महासचिव (ग्रैंड चासलर) का विशेष पद शुरू हुआ। उसके अधीन तीन ज्येष्ठजन कार्य करते थे, जो राज्य कार्य की तीनों मुख्य शाखाओं – वित्त, सैनिक मामलों और सार्वजनिक कार्यों के प्रभारी थे। सार्वजनिक कार्यों में मुख्यत सिंचाई साधनों का निर्माण आता था। बाद में प्रशासनिक प्रभागों की संख्या धीरे धीरे बढती गयी और उनमें अतत शाही परिवार और खजाने, न्यायालय और राजा के पूर्वजों की उपासना के अधीक्षण भी सम्मिलित हो गये।

इधर आम जनता का शोषण अधिकाधिक प्रचंड होता जा रहा था। किसानों को अपनी फसल का दसवां भाग करों के रूप में देना होता था। इन असहनीय अवस्थाओं के कारण ८४२ ई० पू० में विद्रोह हुआ और शासन की बागडोर राजा के हाथों से निकल गयी। इसके शीघ्र ही बाद केंद्रीकृत चाऊ राज्य अनेक स्वतंत्र रजवाडों में विभक्त हो गया।

सातवीं शताब्दी ई० पू० में चीन में पांच राज्यों का उदय हुआ, जो आपस लगातार लडते रहते थे। पांचवीं से तीसरी शताब्दी ई० पू० तक लडाई इतनी भयानक थी कि यह सारा ही काल चान कुओ – 'लडनेवाले राज्य' – के नाम से विख्यात हुआ। चौथी सदी ई० पू० में चिन रजवाडे का उत्कर्ष शुरू हुआ। आनेवाले सौ वर्ष से अधिक चिन राजाओं को चीन भर में अपनी सर्वोच्चता स्थापित करने के लिए संघर्ष करना था।

चिन राजवंश के चरमोत्कर्ष का जमाना शीह हुआंग ती – "चिन राजवंश के प्रथम महान सम्राट" – का शासनकाल (२४६-२१० ई० पू०) था।

शीह हुआंग ती चीनी रजवाडों पर और मंचूरिया तथा मंगोलिया के कुछ भागों पर भी विजय प्राप्त करने में सफल रहा। उसके शासनकाल में देश को ३६ प्रदेशों में विभाजित किया गया और एक विराट प्रशासनिक तंत्र स्थापित किया गया। सिंचाई प्रणालियों के जाल को और फैलाया गया और कई बडी सडकों का निर्माण किया गया। शीह हुआंग ती ने सेना का पुनर्गठन किया, जिसमें रिसाला उसका मुख्य प्रहार अंग बन गया। अनेक आर्थिक तथा सांस्कृतिक सुधार भी क्रियान्वित किये गये, जिनमें वजनों और नापों की एकीकृत प्रणाली और सरलीकृत चित्रलिपि का प्रारंभ भी शामिल हैं। खानाबदोशों के आक्रमणों से साम्राज्य की रक्षा करने के लिए चीन की महान दीवार का निर्माण आरंभ किया गया।

तथापि शीह हुआग ती द्वारा स्थापित शासन की निरकुशता के कारण आवादी के व्यापक भाग म असतोष पैदा होना अवश्यभावी ही था। इस असतोष को कनफूशियस की धार्मिक तथा दार्शनिक विचारधारा के अनुयाइयो ने भडकाया था, जो विभिन्न ऐतिहासिक पुस्तको और दस्तावजो क आधार पर वर्तमान राजवश के मुकावले पूर्ववर्ती राजवशो की अच्छाइयो पर जोर दे रहे थे। शासन ने कनफूशियस के अनुयाइया के विरुद्ध अत्यधिक निर्दयतापूर्ण दमनात्मक कदम उठाये – ४६० कनफूशियसपथी विद्वानो को जिदा दफना दिया गया और सारी ऐतिहासिक कृतियो को जला डाला गया। फिर भी शीह हुआग ती की मत्यु के कुछ ही बाद चिन राजवश का तख्ता उलट ही गया।

हान राजवश

प्रारभिक हानो का शासन (२०६ ई० पू०-२२० ई०) कुछ कम स्वेच्छाचारी था – मृत्युदड इतना ज्यादा नही दिया जाता था, करो को घटाकर व्यक्ति की आय के तीसवे भाग के बराबर कर दिया गया था और उन लोगो को पुन स्वतत्रता प्रदान कर दी गयी, जो अपने को बेचकर दास बन गये थे। हान राजवश के शासको ने हुआग ती की उपाधि को तज दिया और कनफूशियस मत को राज्य-धर्म घोषित कर दिया गया।

वू ती (१४०-८७ ई० पू०) के शासनकाल मे कई जमीदारिया कायम की गयी और ज़मीदार आजाद पट्टेदारो और दासो क श्रम का उपयोग करने लगे। व्यापार और दस्तकारिया के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए कई कदम उठाये गये। यह निष्कृष उत्पादन क बढे हुए पैमाने से और रेशम, चीनी मिट्टी के बरतनो और हाथीदात तथा सीगा की बनी चीजो के नियात से निकाला जा सकता है।

वू ती ने पूर्वी तुर्किस्तान और फरगाना क विरुद्ध कई सैन्य अभियान भेजे। सोग्द और पार्थव (पार्थिया) होते हुए रोम तक पहल व्यापार सम्पर्क स्थापित किय गये। मध्य एशिया से चीनी अगूर, अखरोट और विभिन्न सब्जिया लाये जिन्हे व अपन देश मे उगाने लगे।

पहली सदी ईसवी क आरभ तक चीन बढते हुए वर्ग सघर्ष की जकड म आ चुका था।

८ ई० म प्रतिशासक (रीजेंट) वाग माग ने अवयस्क सम्राट से गद्दी छीनकर स्वय सत्ता पर कब्जा कर लिया और कई रोचक सुधारो को क्रियान्वित करना शुरू किया। मिसाल के लिए, उसने सारी जमीन को राज्य की सपत्ति घोषित करके उसकी खरीद और बिक्री का निषिद्ध कर दिया और ज़मीदारो तथा अभिजातो की ज़मीदारियो की निश्चित सीमाए निर्धारित करके सारी

फालतू जमीनो को ज़ब्त कर लिया। दासो को भी राजकीय सपत्ति घोषित कर दिया गया। इसके अलावा उसने लोहा नमक और शराब पर राजकीय एकाधिकार की स्थापना की और बुनियादी ज़रूरत की चीज़ो के बाज़ार भाव निर्धारित करने की कोशिश की। इन सुधारो का धनियो और अभिजातो ने प्रचड विरोध किया। और सारी बातो के अलावा ये सुधार नितात यूटोपियाई – अव्यावहारिक – भी थे क्योकि निजी भू-स्वामित्व की सस्था तब तक अच्छी तरह से जड जमा चुकी थी।

१८ ई० मे फाग चुग के नतृत्व मे उत्तरी चीन मे व्यापक कृषक विद्रोह शुरू हो गया जो "लाल भौहवालो का विद्रोह" कहलाता है। किसानो ने २५ ई० मे वाग माग की सेनाओ पर विजय भी प्राप्त कर ली, मगर कुछ ही बाद इस आदोलन का चरित्र बदल जाना था – उसमे अभिजातो द्वारा सचालित टुकडिया भी शामिल होने लगी और इस तरह उसका हान वश की पुन स्थापना करने के लिए उपयोग किया गया।

उत्तरवर्ती हान शासको ने केंद्रीकृत सत्ता का सुदृढीकरण करने और देश की अर्थव्यवस्था को बहाल करने मे कोई कसर न छोडी जो वाग माग के सुधारो के खिलाफ सघर्ष के दौरान बेहद कमजोर हो गयी थी। तथापि एक ओर तो बडे जमीदारो और किसानो और दूसरी ओर पट्टेदारो और दासो के बीच विद्यमान अतर्विरोध अधिकाधिक तीव्र होते गये। दास-स्वामित्व के सिद्धातो पर आधारित पुराना समाज एक बडे सकट से गुज़रने लगा। परिणामस्वरूप श्रम के शोषण के रूप बदल गये – एक ओर से तो गुलामो को जमीन और उसकी काश्त करने की छूट दे दी गयी मगर दूसरी ओर से स्वतत्र पट्टेदारो का कम्मियो (कृषिदासो) मे बदला जाना भी शुरू हो गया।

१८४ ई० मे एक और व्यापक कृषक विद्रोह फूट पडा। 'सिर पर पीली पट्टीवालो के विद्रोह' के नाम से ज्ञात इस बगावत का जिसका नतृत्व च्जाग शाओ और उसके भाई कर रहे थे मुख्य नारा सार्विक समानता था। विद्रोही सेना की सख्या लाखो मे थी और पचीस साल तक भयकर सघर्ष चलता रहा। यद्यपि इस विद्रोह का अत मे कुचल दिया गया, पर उसके बाद साम्राज्य की एकता बनी न रह सकी और चीन एक बार फिर कई छोटे छोटे राज्यो मे विभक्त हो गया।

प्राचीन चीन का धर्म और सस्कृति

चीन का प्रारभिक धर्म प्रकृति पूजा से विशेषकर पृथ्वी और पर्वतो की उपासना से सबद्ध था लेकिन धीरे-धीरे धार्मिक धारणाए अधिक जटिल होती गयी। ई० पू० छठी पाचवी सदियो मे कनफूशियस मत ने गहरी जड
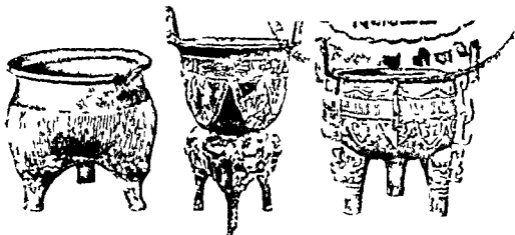
प्राचीन चीनी अनुष्ठान-पात्र। बाये से दाये प्रस्तर पात्र, कासे का सुरापात्र, कासे का मासपात्र

पकड ली। इस धर्म का सस्थापक कनफूशियस एक राजा के दरबार मे उच्च अधिकारी रह चुका था। परपरा और पुराने जमाने के तौर-तरीको के प्रति आस्था और नयी बातो पर अविश्वास उसकी धार्मिक तथा दार्शनिक शिक्षा के सबसे चारित्रिक लक्षण थे। कनफूशियस ने पितृतन्त्रात्मक राजतत्र और पितृतन्त्रात्मक परिवार की नैतिक सहिता का आदर्शीकरण किया। वह नैतिक शिक्षा को बहुत महत्व देता था और सयम बरतन तथा नियति का स्वीकारन का उपदेश देता था। कनफूशियस की कुछ लाक्षणिक सूक्तिया इस तरह की है 'मध्यम मार्ग पर बने रहना भलाई को बनाये रखना है पिता सदा पिता, पुत्र सदा पुत्र और दास सदा दास रहेगा ' आम लोगो की अविनय शीलता ही सारी अव्यवस्था की जड है।"

कनफूशियस मत के अलावा चीन म ताओ मत नामक एक और धार्मिक तथा दार्शनिक प्रणाली न भी जड पकडी और पहली मदी ईसवी मे यहा भारत से बौद्ध धर्म का प्रसार भी होने लगा।

विज्ञान और दर्शन प्राचीन चीन मे अत्यत विकसित थे। एक और उल्लेख नीय दार्शनिक वाग चुग (पहली सदी ईसवी) है जिसन विभिन्न भौतिकवादी सिद्धातो का अनुमोदन किया (और बातो के साथ-साथ उसने आत्मा की अनश्वरता को अस्वीकार किया)। खगोल मे महत्वपूर्ण प्रगति की गयी—नभमडल के मानचित्र बनाये गये और ग्रहणा तथा धूमकेतुओ के उदय कालो की भविष्यवाणिया की गयी। चीनी गणितनो न समकाण त्रिभुज क गुणधर्मो को सिद्ध किया। हमे प्राचीन चीनियो के रोचक भौगोलिक तथा

कृषिवैज्ञानिक प्रबंध भी विरासत में प्राप्त हुए हैं। प्राचीन चीनियों ने बारूद, कागज, कुतुबनुमा और भूकम्पलखी का भी आविष्कार किया था।

प्राचीन चीनी इतिहासकारों में सबसे प्रसिद्ध सुमा चीएन (जीवनकाल-लगभग १०० ई० पू०) था, जो एक महान रचना 'इतिहासकार के अभिलेख' का लेखक है। उस समय की जो साहित्यिक कृतियां हमारे युग तक बची रही हैं, उनमें आनुष्ठानिक भजनों और लोकगीतों का संग्रह 'शीह चिंग' (गीतों की पुस्तक), प्राचीन सम्राटों के भाषण, आदेश और उपदेशों का संकलन 'शू चिंग' (दस्तावेजों का ग्रंथ) और 'चुन चिऊ' (वसंत तथा शरद), जिसे कनफ्यूशियस की कृति बताया जाता है और जो उसके जन्मस्थान लू राज्य का इतिवृत्त है, भी हैं।

अंत में, चीनी मिट्टी, कांसे, लकड़ी और हाथीदांत के काम में प्राचीन चीनियों की कला और शिल्प के क्षेत्र में उपलब्धियों का भी अवश्य उल्लेख किया जाना चाहिए।

चौथा अध्याय

प्राक्-क्लासिकी काल का यूनान

प्राकृतिक अवस्थाएं

प्राचीन यूनान बाल्कन प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग पर स्थित अत्यल्प वर्षा और अनुर्वर मिट्टीवाला देश था, जिसका समुद्रतट अत्यधिक कटा हुआ और ऊबड़-खाबड़ था। सिर्फ कुछ अलग थलग इलाकों – जैसे दक्षिण में लकोनिया और मेसेनिया, मध्य यूनान में बिओशिआ और उत्तर में थेसेली – में ही उपजाऊ मैदान पाये जाते है, जो कृषि के उपयुक्त है।

पूर्वी देशों के पारंभिक इतिहास में नदियों और उनकी सहायक नदियों की जैसी महत्वपूर्ण भूमिका रही है, वैसी यूनान के इतिहास में नहीं थी, क्योंकि पूरे बाल्कन प्रायद्वीप में एक भी बड़ी नदी नहीं है। इसके विपरीत, प्राचीन यूनानी समाज के विकास में समुद्र की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका रही। टेढ़ी मेढ़ी तटरेखा, अनेक सुरक्षित खाड़ियों और बंदरगाहों, एशिया-ए-कोचक और इजियन सागर के द्वीपों से सामीप्य, जो यूनानी मुख्यभूमि और एशिया-ए-कोचक के तट के बीच एक तरह से पैड़ियों की तरह थे – इन सभी बातों से यूनान में बहुत पुराने ज़माने में ही समुद्रगमन और व्यापार विकसित हो गये थे। यूनानी जहाज़ी ज़मीन को निगाहों से दूर किये बिना सारे सागर या एशिया-ए-कोचक की यात्राएं कर सकते थे।

प्राचीन यूनान खनिजों की दृष्टि से समृद्ध था – लकोनिका में लोहा, अतीका (मध्य यूनान) में चांदी और थ्रेस (इजियन सागर के उत्तरी तट पर) में सोना प्राप्य था। इसके अलावा चिकनी मिट्टी, इमारती पत्थर और संगमर्मर की बहुतायत थी।

एक ओर तो अनुर्वर ज़मीन और उसके कारण अनाज की लगातार की किल्लत और दूसरी तरफ खनिज पदार्थों के प्राचुर्य ने व्यापार को और धातु तथा पत्थर की चीजें बनाने की विविध दस्तकारियों और निर्माण कौशल के विकास को प्रोत्साहित किया।

महत्त्वपूर्ण पुरातात्विक खोजे

पिछली सदी के लगभग अंत तक यूनान के प्रारंभिक इतिहास का अनुमान सिर्फ पौराणिक तथा दंतकथाओ और प्रसिद्ध महाकाव्य 'ईलियद' मे ही लगाया जा सकता था जिसे अंधे कवि होमर की कृति बताया जाता है और जिसमे यूनानियो और एशिया ए कोचक के त्रोय (ट्राय) नगर के युद्ध का वर्णन है। इस सामग्री को विद्वान बहुत समय तक काल्पनिक ही मानते आये थे।

किन्तु पिछली सदी के आठवे दशक मे जब जर्मन शौकिया पुरातत्वज्ञ हेनरिक श्लीमान ने त्रोय नगर की अनुमानित स्थली पर उत्खनन शुरू किया, तो इन दंतकथाओ के तथ्यात्मक आधार की अप्रत्याशित रूप से पुष्टि हो गयी। उसके प्रयासो को विस्मयजनक सफलता मिली–खुदाई मे शहरपनाह, विभिन्न इमारतो के खंडहर और अनेक बरतन तथा आभूषण प्राप्त हुए। अपनी त्रोय की खोज के बाद श्लीमान ने यूनानी मुख्यभूमि पर जाकर प्राचीन माइसीन और तिरिन्स नगरियो की स्थलियो पर भी इतनी ही सफलता के साथ उत्खनन कार्य किया।

इस शताब्दी के आरंभ मे अंग्रेज पुरातत्वज्ञ आर्थर इवन्स ने क्रीट द्वीप पर जिसका प्राचीन यूनानी पौराणिक तथा दंतकथाओ मे इतनी ही प्रायिकता से उल्लेख आया है खुदाई का काम शुरू किया। नोसास नगर मे उसने
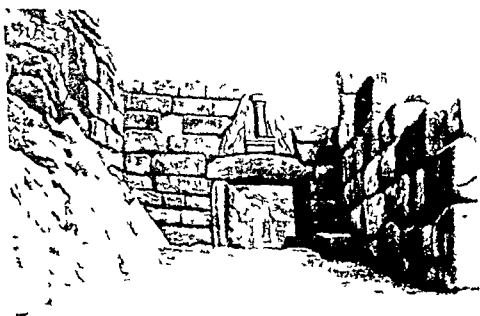
माइसीनी का सिंहद्वार

एक विशाल महल को अनावृत्त किया, जिसमे सिहासन कक्ष अनगिनत गलियारे जलपूर्ति प्रणाली और हमाम—सभी कुछ था। केद्रीय हाल की दीवारे भित्तिचित्रो से अलकृत थी। ये सभी बाते ई० पू० तीसरे और दूसरे सहस्राब्द के क्रीटवासियो की अतिविकसित इजीनियरी प्रविधियो और सस्कृति की परिचायक थी।

लेकिन नोसास की सभी पुरातात्विक खोजो मे सभवत सबसे महत्वपूर्ण एक पुरालेखागार था, जिसमे किसी रहस्यमय और अज्ञात लिपि म लिखे गये लेखो से युक्त सैकडो मृत्तिका फलक थे। बहुत समय तक इस लिपि को पढने क सभी प्रयास असफल रहे। विद्वान इस निष्कर्ष पर पहुचे कि नोसास के फलको पर दो लिपिया और सभवत दो भाषाओ म लेख है। इन्हे A तथा B लिपियो का नाम दिया गया। १९५३ मे युवा अग्रेज विद्वान माइकेल वैट्रिस ने B लिपि को पढने की एक पद्धति प्रस्तावित की, जिसे इस समय अधिकाश विद्वानो द्वारा स्वीकार किया जाता है। वैट्रिस के अनुसार B लिपि मे लिखे गये लेखो की भाषा एक प्रारभिक यूनानी बोली है। पुरातात्विक खोजो और इस लिपि के पढे जान की बदौलत अब प्राचीन या एकियाई यूनान के इतिहास का सामान्य चित्र प्राप्त करना सभव हो गया है।

एकियाई यूनान

१७ वी शताब्दी ई० पू० तक पेलोपोनिसस के प्राचीन यूनानी अथवा एकियाई राज्य आर्थिक तथा सास्कृतिक विकास क काफी उच्च स्तर पर पहुच चुके थ। इनम सबसे बडे आर्गोलिस के माईसीने और तिरेन्स तथा मसेनिया म पाइलोस नगर-राज्य थे।

माईसीने और तिरन्स म ऐसे दुर्गबद महलो के खडहर आज तक मौजूद ह, जो कभी अभेद्य रहे होगे। उत्खनन मे प्राप्त औज़ारो और मिट्टी तथा धातु के बरतनो के अवशेष और गहन अतिविकसित शिल्प कौशल को दर्शाते ह। पाइलोस म उत्खनन कार्य के दौरान प्राप्त B लिपि म लिखित दस्तावेजो स हमे पता चलता है कि एकियाई यूनान मे दासप्रथा प्रचलित थी।

यूनानी मुख्यभूमि के एकियाई राज्य पद्रहवी और तेरहवी सदी ई० पू० के बीच अपन चरमोत्कर्ष पर थे। उस समय बाल्कन प्रायद्वीप के सार दक्षिणी भाग म ही नही, बल्कि क्रीट समत ईजियन सागर के कितन ही द्वीपो म भी एकियाई यूनानियो का बोलबाला था। साइप्रस मिस्र और फिनीशिया क साथ उनका ज़ोरो का व्यापार था। ई० पू० तरहवी सदी क अत और बारहवी सदी क शुरू मे कई एकियाई राज्यो न माईसीन के राजा जिसका नाम 'ईलियद के अनुसार आगामेमनोन था के नतृत्व म एक ऐसा महाकाय

किया जा उस जमान क लिहाज स वहुत ही दुष्कर था और यह था त्राय के नगर राज्य पर हमला।

तथापि एक्रियाई राज्या का यह स्वणकाल अपक्षाकृत अल्पकालीन ही सिद्ध हुआ। तरहवी शती ई० पू० तक दोरियाई (डारिक) कवीला न यूनान पर उत्तर से आक्रमण शुरू कर दिय। इन आक्रमणा का सिलसिला वहुत समय तक चला और उनकी प्रचडता भी उत्तरोत्तर वढती ही गयी। जैस-जैसे आक्रमण कारी थेसेली पेलापोनिसस और एक्रियाई द्वीपो को जीतते गय, वैस वैसे एक्रियाई सस्कृति के कद्रो को भी नष्ट करत गये। उनक निवासियो का या ता मार डाला गया या दास वना लिया गया। इस प्रकार अतिविकसित एकियाई सभ्यता नष्ट हो गयी। विनष्ट नगर धीरे धीरे मिट्टी मे दव गये और उनक निवासियो की वैज्ञानिक तथा कलात्मक उपलब्धिया विस्मृति क गर्भ मे समा गयी।

होमरी यूनान

यूनानी इतिहास के ई० पू० वारहवी स आठवी शताब्दी तक के काल का प्राय होमरी काल कहा जाता है क्योकि ईलियद' और ओदिसा' म जिन्हे यूनानी होमर की कृतिया बताते थे, वर्णित घटनाए और यूनानी समाज की जीवन प्रणाली इसी विशिष्ट काल की है। होमरी समाज दोरियाई विजय और एकियाई सभ्यता के पतन के बाद विकसित हुआ था और कई वातो म वह पूर्ववर्ती युग के समाज म पिछडा हुआ था। होमर की कृतियो मे हम पता चलता है कि उस काल क यूनान मे नैसर्गिक – मुद्राहीन – अथव्य वस्था प्रचलित थी। लोगो का मुख्य उद्यम कृषि और पशुपालन था। पुराने व्यापारिक सूत्र भग हो गय थ व्यापार म गिरावट आ गयी थी और वह मुख्यत आदिम विनिमय पर ही आधारित था।

सामाजिक सबध पितृतन्त्रात्मक थे और उनम गोत्र प्रणाली क आदिम समाज के अनक अवशेष विद्यमान थे। वशागत अभिजात वर्ग इस समाज मे सवस अच्छी जमीनो क स्वामी के नाते वहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निबाहता था और उसक सदस्या को होमर की कृतिया म विपुल भूमि के स्वामी' कहा गया है। उन्हीक साथ साथ किसान भी थ जिनके पास या ता बहुत ही कम और खराब जमीन हुआ करती थी या बिलकुल ही जमीन नही होती थी। भूमिहीन किसान प्रत्यक्षत खेत मजदूरा स ज्यादा कुछ भी नही थे। दासप्रथा भी पितृतन्त्रात्मक प्रकार की थी। दासो की सख्या कम ही थी और उनका अधिकाशत घरलू कामा म उपयोग किया जाता था।

प्रत्यक जन या कवीले का मुखिया या वसिलियस हुआ करता था जा अपन कवील का युद्ध म नतृत्व करता था और सर्वोच्च न्यायाधीश तथा

मुख्य पुरोहित के कृत्यो का भी निष्पादन किया करता था। उसकी सत्त किसी हद तक ज्येष्ठ परिषद स सीमित थी, जिसमे सभी अभिजात परिवारा क प्रमुख हुआ करते थे। अत्यधिक महत्व क प्रश्नो पर विचार करते समय वसिलियस क लिए उनके साथ सलाह-मशविरा करना आवश्यक था। होमर की कविताओ मे जनसभा का भी उल्लेख मिलता है, लेकिन प्रत्यक्षत उस काल म वह कोई महत्वपूर्ण भूमिका नही अदा करती थी।

पुरातन यूनान

यूनान क इतिहास म आठवी से छठी शती ई० पू० तक का काल महत्व-पूर्ण आर्थिक तथा सामाजिक प्रगति का काल है। यह बडी-बडी खोजो और प्राविधिक आविष्कारो का जमाना था। लोहे का व्यापक उपयोग किया जान लगा और उस गढन क कौशल म भी वृद्धि हुई – झलाई पहल पहल किओस द्वीप पर और ढलाई समोस द्वीप पर विकसित हुई। बुनाई (मुख्यत मेगारा नगर मे), मृद्भाडशिल्प और प्रस्तरकर्म (मुख्यत अथेस म) का भी व्या-पक विकास हुआ। कई नये व्यवसाय और उद्यम पैदा हो गये। व्यापारिक सबध कायम किये गये विशेषकर फिनीशियाइया के साथ, जिनसे यूनानियो ने विभिन्न धार्मिक प्रथाओ और कालातर म लिपि (क्योकि उनकी पुरानी लिपि दोरियाई हमले के बाद विस्मृत हो गयी थी) को ग्रहण किया। व्यापार की वृद्धि के परिणामस्वरूप मुद्रा अस्तित्व मे आयी और जल्दी ही यूनानियो ने धातु क सिक्के ढालना शुरू कर दिया।

शिल्पो के विकास और उनके कृषि से पार्थक्य और उसी के साथ साथ व्यापार की वृद्धि के फलस्वरूप विभिन्न आर्थिक (और राजनीतिक) केद्रो – नगरो – का उदय हुआ। यद्यपि नगरो का उल्लेख होमर की कविताओ म भी आता है पर वे वास्तव म दुर्गबद्द बस्तियो क सिवा कुछ भी नही थे। धीरे धीरे, विभिन्न कारणो से, ये बस्तिया आपस मे मिलने और ज्यादा बडे केद्रो म परिणत होने लगी, उदाहरण के लिए अतीका म अथस (मध्य यूनान), स्पार्ता (लकोनिया) और कोरिथ (पेलोपोनिसस को शेष प्रायद्वीप से जोडनवाले स्थल सयोजी पर)। इन यूनानी नगरो का विशिष्ट लक्षण यह था कि उनम से प्रत्यक कोरा आर्थिक ही नही वरन एक पूरे प्रदेश का सामाजिक व राजनीतिक केद्र भी बन गया। इस प्रकार प्रत्येक यूनानी नगर एक छोटे स्वाधीन राज्य जैसा था। ये पोलिस अथवा नगर राज्य कहलाते थे। प्राचीन काल मे यूनान कभी भी एक सयुक्त केद्रीकृत राज्य नही रहा बल्कि हमेशा ऐसे कई नगर-राज्यो से मिलकर ही बना रहा जो न केवल पूर्णत पृथक थे बल्कि प्राय आपस म लडते भी रहते थे।

मुख्यभूमि पर इस प्रक्रिया के ही साथ साथ बाहर बडे पैमाने पर उपनिवेशन भी किया जा रहा था और यूनानी इतिहास का यह काल (आठवीं से छठी शताब्दी ई० पू०) कभी कभी यूनानी उपनिवेशन काल भी कहलाता है।

उस समय "उपनिवेश" शब्द का अर्थ किसी अन्य देश में यूनानियों की बस्ती हुआ करता था। ये उपनिवेश अलग अलग पोलिसों द्वारा स्थापित किये जाते थे और वे अपने को स्थापित करनेवाले पोलिस से पूर्णत: स्वतंत्र मानते थे (अर्थात मातृनगरी या "मीत्रोपोलिस" से)। हर उपनिवेश का अपना पृथक संविधान, नागरिकता, कानून, अदालतें और सिक्के होते थे। उपनिवेश अनेक भिन्न-भिन्न कारणों से स्थापित किये जाते थे – कभी व्यापार के विकास के कारण, जब वे व्यापारिक चौकियों का काम करते थे, कभी इसलिए कि किसी पोलिस में जनाधिक्य हो जाता था और उसकी आबादी का कुछ हिस्सा बेहतर इलाकों की खोज में निकल पडता था, तो कभी राजनीतिक झगडों के फलस्वरूप। मिसाल के लिए, किसी पोलिस में लोकतंत्र की स्थापना होने पर वहां से निर्वासित अभिजात (पितृतंत्रात्मक अभिजात वर्ग के प्रतिनिधि) अपनी नयी जगह पर अपना अलग पोलिस स्थापित कर सकते थे। इसी तरह यह भी हो सकता था कि आबादी के लोकतांत्रिक अंशकों को अभिजात नेताओं द्वारा निर्वासित कर दिया जाये।

आठवीं से छठी सदी ई० पू० में यूनानी उपनिवेशन मुख्यतया तीन क्षेत्रों में हुआ – १) एशिया माइनर का तट और ईजियन सागर के टापू (एजीयन सागर के मिलेतस, हालीकारनासस, समास, रोड्स आदि) २) पश्चिमी भूमध्य सागर (दक्षिणी इटली और सिसिली, गाल में मसीलिया और हिस्पानिया या स्पेन में साग़ुंतम) ३) और पूर्वी जलसयाजी तथा काला सागरतट (बैज़ंतिया या बाइज़ेंटियम, सीनोप, ओल्बिया, खेर्सोनिसस, पंतीकाप्यूम आदि)। इनमें से अनेक उपनिवेश बड़े बड़े स्वतंत्र तथा समृद्ध नगर राज्यों में विकसित हो गये, जिन्होंने अपनी बारी में स्वयं अपने उपनिवेशों की स्थापना की। इस प्रकार ई० पू० आठवीं और छठी सदियों के बीच सारे ईजियन सागर के क्षेत्र में और भूमध्य सागर तथा काले सागर के तटों पर यूनानी पोलिस फैल गये थे।

रिवाज और कानून थे और जो हमे ज्ञात है, जैसे लकोनिया के प्रदेश का ३९,००० जागीरो मे विभाजन, सोने और चादी के सिक्को का उन्मूलन (स्पार्ता मे सिर्फ लोहे के सिक्को का ही प्रचलन था), उनका जनक अनुश्रुत विधिकर्ता लिकूर्गस को वताया जाता है।

लकोनिया की सारी आवादी तीन समूहो मे विभाजित थी। पहला और सबसे अधिक विशेपाधिकारप्राप्त समूह स्पार्तियो का था, जो दोरियाई विजेताओ के वशज थे और अपने को "समानो का समाज" कहते थे। स्पार्ती सारी जमीन के स्वामी थे जो लगभग वरावर जागीरो म विभक्त थी, लेकिन वे स्वय उसे काश्त नही करते थे। वे आवादी का दस प्रतिशत थे और स्पार्ता नगर मे रहते थे और पूर्ण राजनीतिक तथा नागरिक अधिकारो का उपभोग करते थे।

दूसरा समूह पेरिओइसी (स्पाता के आसपास रहनेवालो) का था, जो विजित या आप्रवासी लोगो के वशज थे। इस समूह को व्यक्तिगत स्वतत्रता तो प्राप्त थी, पर राजनीतिक अधिकार नही थे। अधिकाश पेरिओइसी कारीगरो की तरह काम करते थे।

तीसरे और सबसे वडे समूह मे हीलोत या भूदास थे, जो अधीन किये और दास वनाये एकियाइयो के वशज थे। ये लोग जागीरो से सलग्न थे, जिन्ह व काश्त करते थे और साथ ही उन्ह अपने दूरवासी स्पार्ती जमीदारो को मुक्ति-लगान भी देना पडता था। हीलोतो को कोई भी अधिकार प्राप्त न थ और वे अपनी निजी स्वतत्रता से भी लगभग पूर्णत वचित थे। फिर भी स्पार्तियो को हीलोतो का और उनक द्वारा विद्रोह किये जाने का सतत डर लगा रहता था। अत जव-तव हीलोतो के खिलाफ ताजीरी अभियान सगठित किये जाते थे, जिनमे वडे पैमाने पर उनकी हत्याए की जाती थी।

स्पार्ता का अपना विशेप सविधान था। 'समानो के समाज पर दो राजाओ और एक जेरूसिया या ज्येष्ठ परिपद जिसमे अभिजात परिवारो क वशज होते थे (जिनमे स कोई भी साठ साल से कम का नही होता था) का शासन था। जेरूसिया राजकीय मामलो की देखरेख करती थी और न्याय क मुख्य निकाय का भी काम करती थी। इसके अलावा एक अपेला या नागरिक सभा भी थी, लेकिन जिसे कभी-कभी ही, महत्वपूर्ण पदाधिकारिया को चुनने या युद्ध और शाति के प्रश्नो पर विचार करने क लिए ही समाहूत किया जाता था। एक रोचक सस्था एफोरमडल (एफोराल्टी) था जो पाच सदस्यो का निर्वाच्य अधिशासी मडल था और वस्तुत सत्ता का सर्वोच्च निकाय था, जिसके आग राजा तक उत्तरदायी थे।

स्पार्तियो का दैनदिन जीवन और रीति-रिवाज सव एक ही लक्ष्य की ओर निदेशित थे—सैनिक शिक्षा। सात साल की उम्र म वच्चा को राजकीय

लाइसियमा (शिक्षालयो) मे भेज दिया जाता था, जहा उनमे माहस, उपक्रम और तितिक्षा के सस्कार पोषित किये जाते थे और जहा व्यायाम की विशेष शिक्षा दी जाती थी। तीस वर्ष की आयु से प्रत्येक स्पार्ती के लिए सैनिक सेवा अनिवार्य थी और तब से उसका जीवन सैनिक अधीनता का जीवन हो जाता था – अत्यधिक सादा सामूहिक भोजन, नियमित व्यायाम और सैन्य प्रशिक्षण सार्वजनिक सभाओ मे ज्येष्ठो से बातचीत, जिनमे तरुण स्पार्तियो से सक्षेप मे और एकदम सही शब्दो मे बातचीत करने की अपेक्षा की जाती थी।

ऐसे रिवाजो और नियमो ने स्पार्तियो के लिए एक विलक्षण सेना का निर्माण करना सभव बना दिया जिसे बहुत समय तक अजेय माना जाता था। यूनान के दक्षिण मे स्पार्ता ने मेसनिया और आर्गोलिस के कुछ भाग को जीत लिया और कई अन्य पोलिसो के साथ सैन्य सश्रय स्थापित कर लिया। यह सश्रय पेलोपोनिशियाई सघ या पेलोपोनिशियाई लीग के नाम से विख्यात है और स्पार्ता इसका स्वीकृत प्रधान और नेता था।

अथेस का नगर-राज्य

अथेस नगर अतीका (मध्य यूनान) मे एक पर्वतीय, अनुर्वर इलाके मे बसाया गया था।

इस इलाके की जमीन बहुत ही श्रमसाध्य कृषि की अपेक्षा करती थी और इस तरह यहा की मुख्य पैदावार फल और सब्जिया थे। इनमे भी सबसे महत्वपूर्ण जैतून और दाख ही थे। अतीका पर्याप्त अनाज नही उगा पाता था और उसे इसका आयात करना होता था। अतीका की टेढ़ी-मेढी तटरेखा के कारण समुद्रगमन और व्यापार का तीव्र विकास हुआ।

प्राचीन काल मे अतीका पर राजा का शासन था लेकिन अथेनी इतिहास के इस काल का हमारा ज्ञान अपूर्ण और मुख्यत दतकथाओ पर आधारित है। क्लासिकी काल का अथेस गणतत्र था और आरभ मे स्पष्टत अभिजातीय गणतत्र था। ज्येष्ठ परिषद की जगह यहा आरियोपागस नामक सस्था थी और वही मुख्य राजकीय निकाय का काम करती थी मुख्य राजकीय पदो पर आसीन लोग आर्कोन कहलाते थे। हर साल आरियोपागस द्वारा प्रमुख धनी अभिजात परिवारो के प्रतिनिधियो मे से नौ आर्कोन नियुक्त किये जाते थे। नागरिक सभा अभी कोई विशेष महत्व की भूमिका नही अदा करती थी।

अथेस की स्वतत्र आबादी तीन समूहो मे विभाजित थी। समाज का विशेषाधिकारप्राप्त स्तर वशागत अभिजातो का यूपेत्रीद वर्ग था, जिस

पूर्ण राजनीतिक तथा नागरिक अधिकार हासिल थे। अधिकाश आबादी देमोस *या जनसाधारण क नाम से जानी जाती थी जिनमे किसान, कारीगर, जहाजी* आदि और गरीव किसानो से लेकर खुशहाल व्यापारियो और माल तैयार करनेवालो – विनिर्माताओ – तक कई तरह के पेशे और भौतिक खुशहाली के स्तरवाले लोग आ जाते थे। दमोसो को नागरिक अधिकार तो प्राप्त थे पर राजनीतिक अधिकारो से उन्हे लगभग वचित ही किया हुआ था। तीसरा और अतिम समूह तथाकथित मेतिको या अन्यदेशियों का था, जो अथेम मे बस गये थे और अधिकाशत व्यापार या माल तैयार करन म लगे हुए थे। मेतिको को कोई भी नागरिक या राजनीतिक अधिकार नही थे। और दासो की तो निस्सदेह अपनी ही अलग श्रेणी थी, जो अधिकारो से पूर्णत वचित थे और जिन्ह आदमियो की बनिस्वत ढोरो जानवरों जैसा ही ज्यादा माना जाता था।

अथेनी राजकीय ढाच म राजनीतिक अतर्विरोधो न अपन को जल्दी ही प्रकट कर दिया और वहा प्रचड राजनीतिक सघर्ष छिड गया। किसान अपनी स्वतत्रता और भूमि अधिकारो के लिए और विशपेकर ऋण दासत्व की प्रथा के खिलाफ सघर्ष करने लगे। देमोसो के सपन्नतर सस्तरो द्वारा अभि जातो जैसे राजनीतिक अधिकारो और विशेपाधिकारा को हासिल करने के प्रयासो क साथ दमोस और यूपत्रीद वर्गो म भी झगडा शुरू हो गया।

सोलोन और क्लीस्थेनीज के सुधार

प्लेग की महामारियो, खराव फसलो और सलामीस द्वीप के लिए चले युद्ध म शिकस्तो स और भी सगीन होकर यह राजनीतिक सघर्ष ई० पू० सातवी शती क अत और छठी के प्रारभ म अपने चरम पर पहुच गया। ५९४ ई० पू० मे सोलोन आर्कोन चुना गया और उसने कई साहसपूर्ण क्राति-कारी सुधारो को लागू करना शुरू किया। सबसे पहले तो उसन सभी विद्यमान ऋणो को खत्म कर दिया, सभी ऋण-दासो को आजाद कर दिया और आगे क लिए इस प्रथा को निपिद्ध कर दिया। इसके बाद उसने एक नया सविधान प्रवर्तित किया, जिसन अथेस के सभी नागरिको को उनकी भू सपत्ति क आकार या उससे प्राप्त आय के आधार पर चार वर्गों म विभाजित कर दिया। इसके बाद से विशेपाधिकारप्राप्त वर्ग की सदस्यता के लिए अभिजात रक्त की नही, वल्कि धन और सपत्ति की कसौटी ही खरी हो गयी। राज नीतिक विशेपाधिकार भी सपत्ति पर निर्भर हो गय।

सोलोन के आदश स एक नयी निर्वाच्य सस्था की भी स्थापना की गयी। यह ४०० की परिपद थी जिसे कालातर मे आरियोपागस का स्थान ले

लेना था। नागरिक सभा भी राज्य कार्य म कही अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निवाहन लगी क्योकि राज्य की सभी महत्वपूर्ण समस्याआ क बारे म लिय गये निर्णयो म अतिम फैसला करन का अधिकार इसी को द दिया गया। सोलोन द्वारा प्रवर्तित सुधारो न दमोसा के उच्च सस्तरा की राजनीतिक स्थिति को सुदृढ किया और इसी क साथ अथेनी राज्य क सामान्य लाक तत्रीकरण का पथ भी प्रशस्त किया।

इन लाक्तानिक सुधारा को क्लीस्थेनीज (५१०-५०६ ई० पू०) न और भी मवर्धित किया जिसने अतीका का नया प्रादशिक विभाजन करक पुरान गात्र समाज क कई अवशेषो का खात्मा कर दिया। राजकीय पदा और सैनिक सेवा दायित्वो का नये प्रादशिक विभाजना के अनुसार पुनर्गठन किया गया, जिसन वशागत अभिजात वर्ग क प्रभुत्व की सभी सभावनाओ का खत्म कर दिया। क्लीस्थनीज ने ४०० की परिपद के स्थान पर ५०० की परिपद की स्थापना की और एक निर्वाच्य सैनिक अधिशासी मडल कायम किया, जिसमे १० स्नातेगोस (सेनानायक) होते थे।

क्लीस्थेनीज के सुधारो न वशागत अभिजात वर्ग के राजनीतिक प्रभुत्व पर मरणातक प्रहार किया और अथेनी राज्य क और भी अधिक लाकतत्री करण की नीव डाली।

पाचवा अध्याय

क्लासिकी काल का यूनान।

यूनानी समाज मे सकट
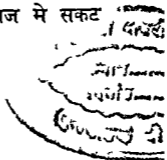
फारस (पारस) के साथ युद्ध प्राचीन यूनान के इतिहास मे एक महत्वपूर्ण मोड के द्योतक ह। इन युद्धो का कारण यह था कि फारस जिसवा कुम्प (साइरस) के समय मे ही एशिया ए-कोचक के तटवर्ती यूनानी नगरो पर प्रभुत्व स्थापित हो चुका था, यूनानी मुख्यभूमि क नगर-राज्यो पर अधिकार करने का आकाक्षी था।

५०० ई० पू० मे एशिया-ए कोचक मे सबस बड यूनानी नगरो मे से एक–मिलेतस–ने पारसीक शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और उसके वाद वहा के शेष यूनानी नगरो ने भी उसका अनुकरण किया। विराट पारसीक साम्राज्य क विरुद्ध अपने सघर्ष म बाहरी सहायता की खोज मे विद्रोही नगरो ने मुख्यभूमीय नगरो की तरफ मदद के लिए मुह किया। जिन अकेले यूनानी राज्यो ने इस अनुरोध पर ध्यान दिया, व थे अथेस जिसन २० जहाज भेजे, और यूबिया टापू पर स्थित छोटा सा नगर इरेत्रिया जिसने ५ जहाज़ भेजे। इस तरह की सहायता अत्यत सीमित और अपर्याप्त थी लेकिन विद्रोह को कुचल चुकने के वाद फारस के सम्राट दारा (डेरियस) ने इसे ही यूनानी मुख्यभूमीय राज्यो के विरुद्ध युद्ध घोषित करने के बहाने के तौर पर इस्तेमाल किया।

मैराथन की लडाई

दारा ने यूनानी नगर-राज्यो को अपने दूत भेजे जिन्होने शाह-शहशाह के नाम पर पूर्ण आधीन्य के प्रतीक मिट्टी और पानी मागे। अधिकाश यूनानी नगर-राज्यो ने अपन को फारसी आक्रमण का सामना करने मे असमर्थ

समझते हुए इस माग को पूरा कर दिया। सिर्फ दो ही राज्यो ने दूता का दूसरी तरह से स्वागत किया – अथेस मे उन्हे जान से मार दिया गया और स्पार्ता मे उन्हे एक गहरे कूए मे यह कहकर फेक दिया गया कि वहा उन्हे काफी मिट्टी और पानी मिल जायेगे।

४९२ ई० पू० मे पारसीको ने यूनान के विरुद्ध अपना पहला अभियान शुरू किया, जो असफल सिद्ध हुआ। फारसी बेडा कल्सीदीस प्रायद्वीप के अथोस अतरीप के पास भयकर तूफान मे फस गया और सारी सेना को स्वदेश लौट जाना पडा। ४९० ई० पू० मे एक और अभियान सेना ईजियन सागर के पार अतीका के तट पर गयी। इन फौजो को यूबिया द्वीप पर उतारा गया, जहा धावा बोलकर इरेत्रिया नगर को सर करके लूट लिया गया और उसके निवासियो को गुलाम बना लिया गया।

यूनानियो और पारसीको मे निर्णायक युद्ध अतीका के पूर्वी तट पर मैराथन नगर के निकट हुआ। अथेनियो के पास सिर्फ दस हजार ही सैनिक थे और इसके अलावा एक हजार सैनिक प्लातीआ नामक छोटे से नगर से मदद के लिए भेजे गये थे। लेकिन फिर भी पारसीक सेना को जो यूनानियो की सेनाओ से कई गुना बडी थी करारी हार खानी पडी। बूढे और अनुभवी सेनानायक मिलतियादीज के नेतृत्व मे जो पारसीक रण कौशल से सुपरिचित था यूनानी सेनाए देशप्रेम और स्वतत्रता के आदर्शो और अपने परिवारो के साथ अनुरक्ति से अनुप्राणित होकर अनुपम साहस और अडिगता से लडी क्योकि उनमे से हर किसी को यह स्पष्ट था कि पराजय का मतलब दासता ही है।

इस खुशखबरी को लेकर एक हरकारा अथेस के लिए रवाना हुआ। भागते भागते दम चुक जाने पर भी वह अतत उस चौक तक पहुच ही गया, जहा वृद्ध स्त्रिया और बच्चे सभी युद्ध के परिणाम की खबर का बेसब्री मे इतजार कर रहे थे – अपनी सारी शेष शक्ति को सचित करके वह चिल्लाया – विजय! और फिर वही ढेर हो गया। वर्तमान ओलिंपिक खेलो मे लबी जानवाली मैराथन दौड ने अपना नाम इसी कारनामे से ग्रहण किया है और यह लगभग उतनी ही लबी होती है, जितनी लबी अथेस और मैराथन के बीच की दूरी है।

क्षयार्ष का अभियान

मैराथन की [illegible] के बाद पारसीको और यूनानियो मे लडाइया फिर [illegible] यद्यपि दोनो ही देश अच्छी तरह जानते थे कि नया युद्ध [illegible] है। [illegible] की मौत के बाद फारसी दरबार मे

ऐसे मौको पर आनेवाली अव्यवस्था का आम दौर आया। आखिर उसका वेटा क्षयार्ष (जेरक्सीज) सिहासन पर वठा। क्षयार्ष ने जल्दी ही यूनान के विरुद्ध नये अभियान के लिए जवरदस्त तैयारिया शुरू कर दी, जो चार साल चली और जिनमे हेलेसपोत (जो अव दर्रे दनियाल या डार्डेनलीज के नाम से जाना जाता है) पर एक पुल का और कपटी अथोस अतरीप के पास कल्सीदीस प्रायद्वीप की सकरी गरदन म होकर एक नहर का वनाया जाना भी शामिल था।

तैयारिया यूनानियो ने भी की। स्पार्ता के नेतृत्व मे कई यूनानी नगर-राज्यो म रक्षात्मक सश्रय की स्थापना की गयी। चूकि स्पार्ता समुद्र के रास्ते दुगम्य था और वह सारे ही यूनान मे सर्वश्रेष्ठ सैन्यबलवाले राज्य की हैसियत से जाना जाता था इसलिए उन्होने यही आग्रह किया कि युद्ध समुद्र के वजाय स्थल पर ही लडा जाना चाहिए।

अथेस मे इस समय हालत अधिक जटिल थी। धनी जमीदारो ने, जिन्हे सबसे वढकर यही डर था कि उनकी जागीरो को उजाड दिया जायेगा प्रतिरक्षा की स्पार्ती योजना का ही समर्थन किया। उनका प्रवक्ता प्रसिद्ध राजनयन अरिस्तीदीज था।

इस योजना का विरोध थेमिस्तोक्लीज ने किया जिसने मात्र अपनी क्रियाशीलता, महत्वाकाक्षा और अप्रतिम योग्यताओ की वदौलत अथेस म एक प्रभावशाली स्थिति प्राप्त कर ली थी। तीस साल से कुछ ही अधिक की आयु म वह आर्कोन चुना गया था और तीन साल वाद मैराथन की लडाई म उसने प्रसिद्धि प्राप्त की थी। लेकिन वह इससे भी सतुष्ट न था और इससे भी अधिक ख्याति का आकाक्षी था। अपने मित्रो के सामने वह मानता था कि 'मिलतियादीज की कीर्ति ने मेरा चैन हर लिया है।

थेमिस्तोक्लीज मानता था कि यूनानियो के पास पारसीको को स्थल पर पराजित करने की कोई भी सभावना नही है। उसने इस पर जोर दिया कि अथेस का भविष्य नौसैनिक शक्ति की हैसियत मे ही है और शक्तिशाली वेडे का निर्माण करने के लिए उसने अपने वस भर सभी कुछ किया। उसने लौरियाई चादी की खानो की आय को जिन्हे राजकीय सपत्ति माना जाता था नौसैनिक जहाजो के निर्माण के लिए विनियुक्त करवाने म सफलता प्राप्त कर ली। फारस के साथ समुद्र पर लडने की योजना अथेनी व्यापारियो और निर्माताओ के हितो के साथ भी मेल खाती थी जिनके पास जमीदारिया नही थी।

यूनान के विरुद्ध तीसरा अभियान ४८० ई० पू० म शुरू हुआ। इसका नेतृत्व स्वय क्षयार्ष कर रहा था, जिसने फारस के अधीनस्थ देशो का उपयोग करते हुए विराट सैन्यवल एकत्र कर लिया था। क्लासिकी युग के लेखको ने

इन सेनाओं की सख्या लगभग पचास लाख बतायी है। अगर यह अतिशयोक्ति भी हो तो भी यह निश्चित है कि फारसी सेना यूनानी सेना से कई गुना ज्यादा थी।

थर्मापोली और सलामीस की लडाइया

पारसीक सेना का कुछ हिस्सा थ्रेस के तट क साथ-साथ आगे बढा और कुछ को जहाजा द्वारा भजा गया। पहला समुद्री युद्ध यूबिया के उत्तरी तट पर अर्तेमीसिया अतरीप के पास और पहला स्थल युद्ध थसली से मध्य यूनान की तरफ ल जानवाल एक सकरे दर्रे – थर्मातीली – म हुआ जा सचमुच इतना सकरा था कि उसम एक बार मे सिर्फ एक ही रथ गुजर सकता था। इसके पश्चिम की तरफ ऊची अलघ्य चट्टान थी और दाहिनी तरफ ठेठ समुद्र तक अगम्य दलदल चले गये थे। इसी स्थान पर यूनानियो की एक अवरोधक सैन्य टुकडी ने स्पाता के राजा लेओनीदस के नेतृत्व मे मोरचा जमा लिया।

विराट पारसीक सेना थर्मापीली के पास पहुच गयी और क्षयार्ष को विश्वास था कि इस जगह उसे किसी गभीर विरोध का सामना नही करना पडेगा। उसन लेओनीदस को सदेश भेजकर यह माग की कि वह हथियार डाल द लेकिन लेओनीदस ने खालिस लकोनियाई तर्ज़ मे जवाब दिया आओ उठा लो। पहले फारसी हमलो को कोई कामयाबी नही मिली अपनी स्थिति का चतुरतापूर्वक उपयोग करते हुए यूनानी दस्तो न दर्रे की वीरतापूर्वक रक्षा की और दुश्मन के सैन्यदलो के हमला को कई दिन तक रोक रखा। लेकिन यूनानी फौजो म से एक गद्दार ने पारसीका के एक बड़े दस्ते को पहाडी दर्रों स होते हुए यूनानियो के पिछवाडे मे पहुचने का रास्ता बता दिया। जब लेओनीदस न देखा कि उसके लोगो को घेरे मे लिया जा रहा है तो उसन अपनी सना के एक बडे हिस्से को युद्धक्षेत्र से दूर भेज दिया और अपने स्पार्ती हमवतना के साथ दुश्मन का अकेले सामना करने के लिए वही रुका रहा। इस असमान सघर्ष म उनम से एक एक मारा गया। बाद म लेओनीदस क सम्मान म थर्मापीली दर्रे के द्वार पर सगमर्मर की सिंह प्रतिमा स्थापित की गयी।

इधर जब थर्मापीली की लडाई चल ही रही थी, आर्तेमीसिया अतरीप के पास एक समुद्री युद्ध लडा जा रहा था। इसम यूनानी विजयी हुए, लेकिन पारसीक सना के थर्मापीली दर्रे का काटन म सफल हो जान के बाद यूनानी बेडे को हटकर अतीका तट पर चल जाना पडा।

स्पार्ती सेनानायको की राय थी कि बेड को और भी पीछे कारिंथ जल सयोजी तक जाना चाहिए जहा न समुद्र और स्थल दोना पर अतिम रक्षापक्ति

स्थापित कर सकते थे। लेकिन अथेनी जिन्हे अपनी नगरी को शत्रु द्वारा लूटे और नष्ट किये जाने के लिए छोड देना पडा था, हठ कर रहे थे कि पारसीक बेडे के साथ युद्ध अतीका तट और सलामीस द्वीप के बीचवाले सकर जलसयोजी म किया जाना चाहिए। इस योजना का थेमिस्तोक्लीज ने खासकर ज़ोरदार समर्थन किया, जिसे बाद की घटनाओ न सही सिद्ध किया।

पौ फटन के साथ क्षयार्ष न आदेश दिया कि उसके सुनहरे सिंहासन को अतीकाई तट की एक ऊची पहाडी पर रख दिया जाये, ताकि वह युद्ध के दृश्य को अच्छी तरह स देख सके। लेकिन सलामीस के युद्ध का परिणाम उसकी प्रत्याशा से बहुत भिन्न रहा। भारी पारसीक पोतो के लिए सकरे जलसयोजी म कावेबाज़ी करना मुश्किल हो रहा था जब कि छोटे और कही हलक यूनानी जहाज बडी आसानी से उन्ह टक्करे मार सकत थे। फारसी जहाज लडखडा जाते थे जिससे क्षयार्ष के बहुत से सैनिक समुद्र म गिरकर *डूब गये। जल्दी ही पारसीक सेनाओ मे आतक फैल गया और जो जहाज* अब भी समुद्रगमन योग्य थे वे वहा से तावडतोड भाग खडे हुए। यूनानी बेडे को निर्णायक विजय प्राप्त हुई। जैसा कि बाद की घटनाओ न दर्शाया सलामीस का युद्ध पारसीक-यूनानी युद्ध का मोड बिंदु था।

सलामीस के युद्ध के बाद क्षयार्ष को अपनी सेना के एक बडे हिस्से को हटाकर यूनान से चले जान को विवश होना पडा। लेकिन वह कोई ६० ७० हजार सैनिको का अनुभवी सनानायक मर्दोनियस की कमान मे छोड गया था और अगले साल (४७९ ई० पू०) दो और महत्वपूर्ण लडाइया हुई। दतकथाओ के अनुसार वे एक ही दिन हुई थी – एक प्लातीआ नगर के पास स्थल पर, जहा मर्दोनियस की सेनाओ को करारी मात दी गयी और पारसीक सेना को अतत यूनान से बाहर खदेड दिया गया और दूसरी एशिया-ए कोचक के तट के निकट मिकाले अतरीप के पास। इस विजय के शीघ्र ही बाद एशिया ए कोचक के यूनानी नगरो को पारसीक जूए से मुक्त करा लिया गया।

लेकिन पारसीक युद्ध को अभी कुछ साल और चलना था। अब मे अधिकतर युद्धो को समुद्र पर ही होना था। यूनानी आक्रमणो के परिणाम स्वरूप पारसीक धीरे-धीरे ईजियन सागर के द्वीपो और एशिया ए कोचक के तट को खाली करके चले गये।

इस प्रकार अपनी स्वतत्रता और अपने देश की रक्षा के लिए प्राणपण से लडकर एक छोटी सी और साहसी जाति न महाशक्तिशाली और अविजय मान जानेवाले पारसीक साम्राज्य पर विस्मयजनक विजय प्राप्त कर ली।

दीलोसी सघ और अथेस की आर्थिक समृद्धि

फारस क विरुद्ध युद्ध की विजयातक परिणति सारे ही यूनान क लिए अत्यधिक महत्व की थी। लेकिन चूकि सघर्ष के अतिम वर्षो म सबसे निर्णायक युद्ध समुद्र पर ही लडे गये थे इसलिए यह स्वाभाविक हा था कि अथस – सबसे बडे नौसैनिक बेडेवाला राज्य – यूनानी राज्या म प्रमखता की स्थिति प्राप्त कर ले।

लडाई क जमान म ही एक अथेनी नौसैनिक सश्रय की स्थापना हा गयी थी जो इतिहास म दीलोसी सघ (दीलियन लीग) के नाम से जाना जाता है। इसम ईजियन सागर के यूनानी द्वीपो के और एशिया ए-कोचक के तट के नगर राज्य पारसीक जूए स आजाद किये जाने के साथ साथ शामिल होते गये थे। सघ लगातार बडा होता गया और अपने चरमोत्कर्ष के समय इसमे २०० से अधिक नोम सयुक्त थे।

आरभ म दीलोसी सघ के सभी सदस्यो को पूर्णत समान अधिकार प्राप्त थे। प्रत्येक नोम अथवा नगर को सामान्य परिषद मे एक मत हासिल था जो दीलोस द्वीप पर सयोजित हुई थी, जहा सयुक्त कोष को भी रखा जाता था। कोष की सप्राप्तिया सघ के विभिन्न सदस्यो के अनुदाना से हाती थी जिनकी मात्रा राज्यो के आकार क अनुसार निर्धारित थी।

चूकि सैन्य कमान अथेसवालो के ही हाथ मे थी इसलिए सघ के कामकाज म देर अबेर निर्णायक राजनीतिक भूमिका भी उन्ह ही प्राप्त हानी थी। नौसैनिक सश्रय का स्थान धीरे-धीरे अथेनी नौसैनिक शक्ति ने ले लिया और उसक भागीदार अथस के अधीनस्थ हो गये, जिनसे खिराज वसूल किया जान लगा। फिर कोष को भी अथेस स्थानातरित कर दिया गया अथेनी अधिकारिया को सभी सदस्य नगरो और नोमो मे भेजा जाने लगा और बात इस हद तक पहुच गयी कि सघ से अलग होने के सभी प्रयासा का विद्रोह समझा जान लगा जिन्हे अथेनी सैनिक शक्ति निर्ममतापूर्वक कुचल देती थी।

दीलोसी सघ की स्थापना और फारसियो पर विजय स अथस मे दासप्रथा और व्यापार तथा वाणिज्य के प्रसार को प्रोत्साहन मिला। दासा की कुल सख्या पारसीक युद्धा क पहले क समय की अपेक्षा कई गुना अधिक हो गयी थी। इसम अचरज की कोई बात नही थी क्यांकि युद्ध म कब्जे म आय अधिकाश युद्धबदिया का गुलाम बना दिया गया था। दास व्यापार की भी वृद्धि हुई। जलदस्यु बडी सख्या म दासा को पकडा करते थ और फिर उन्ह दास बाजारा म बच दिया करत थे जो लगभग सभी बडे शहरा म हुआ करत थ। कभी-कभी गुलामा को नीलामी द्वारा भी बचा जाता था। उनक

साथ घरेलू पशुओ जैसा बरताव किया जाता था, उन्हे भावी ग्राहको द्वारा देखे जाते समय अपने कपडे उतारना, दात दिखाना और दौडना-भागना पडता था। गुलामो की कीमत मे काफी फर्क हुआ करता था – बिना योग्यता-वाले दास बहुत सस्ते बिकते थे, जब कि हुनरमद कारीगरो (जैसे हथियार बनानेवालो) और शिक्षित दासो (जैसे अध्यापको और चिकित्सको) के लिए ऊचे दाम मिला करते थे।

दास श्रम का सबसे बढकर शिल्पशालाओ मे ही उपयोग किया जाता था। ये नियमत छोटी ही होती थी और प्रत्येक मे दस-बारह गुलाम काम किया करते थे। बडी सख्या मे दास सबसे भारी काम – लौरियाई रजत खानो मे काम – के लिए भी इस्तेमाल किये जाते थे।

अन्य सभी दासस्वामी समाजो की भाति अथेस मे भी गुलामो की हालत बहुत ही बुरी थी। दास सभी अधिकारो से वचित थे और उनके साथ ढोरो जैसा सलूक किया जाता था, जिन्हे खरीदा-बेचा जा सकता था और जिनके साथ मालिक जो चाहे सो कर सकता था। नतीजे के तौर पर हर अथेसवासी – निर्धनतम किसान भी – गुलामो की तरफ हिकारत की नजरो से देखा करता था।

दीलोसी सघ की स्थापना और पारसीको पर विजय का अर्थ था कि अथेनी व्यापारिक पोत अब सिर्फ ईजियन सागर और एशिया ए-कोचक के तट के किसी भी भाग को ही नही, बल्कि हेलेसपोत से होकर काला सागर-तटीन देशो को भी बेखटके जा सकते थे। अथेस के व्यापार सबध लगातार बढते जा रहे थे, जिससे एक तत्कालीन अथेनी राजनेता यह कह सका दुनिया भर की चीज़े यहा लगातार आती रहती है और हम दूसरे देशो की अच्छी चीजो का भी वैसे ही मज़ा लेते है कि जैसे अपनी चीज़ो का।"

थ्रेस और काला सागरतट से अनाज आता था जो अतीका की अनुर्वर जमीन पर कभी पर्याप्त मात्रा मे नही पैदा होता था। काला सागरतट से इमारती लकडी, राल, शहद, चमडा और लवणित मछली अफ्रीका से हाथीदात, पूर्व से मसाले और इटली से लोहा तथा ताबा आयात की जाती चीजे थी। फिर कितने ही देशो से दासरूप मे आयातित ज़िदा माल तो था ही। अथेस के मुख्य निर्यात माल थे जैतून का तेल शराब धातु के बरतन और मद्भाड।

अथेस नगर से कुछ ही किलोमीटर दूर स्थित अथेनी बदर पिरीअस मुद भी एक महत्वपूर्ण शहर बन गया था, जिसकी भीडभरी सडको पर कितनी ही भाषाए गूजती रहती थी और जिसकी गोदियो मे हमेशा अनेक सुदूर देशो के जहाज खडे रहते थे। बदर का पण्यावर्त करोडो मे था और

वहा बडे-बडे सौदे सपन्न किय जाते थे। यहा नाना प्रकार की व्यापारिक श्रेणियो (गिल्डो) और सघा की स्थापना हो गयी थी। पिरीअस के ज़रिये कई भिन्न भिन्न देशा की मुद्रा का आवागमन होता था, इसलिए मुद्रा विनिमय के लिए यहा अलग लोग थे। कालातर म इन सामान्य विनिमया की जगह अधिक जटिल वित्तीय सौदे-समझौतो न ले ली। अलग अलग व्यापारिया या व्यापारिया के समूहो को ब्याज की निधारित दरो पर बडी बडी रकम कर्ज दी जान लगी और मुद्रा का विनिमय करनवाले धन का निश्चित समयावधि के लिए सुरक्षित रखन की प्रत्याभूति देने लगे, जिस पर व इसी बीच मुनाफा कमाया करते थे। इस प्रकार का मुद्रा-विनिमय करनवाले कुछ अथेनी व्यापारियो ने इस तरह के सौदो से बेशुमार दौलत जमा कर ली। अथेनी वैदेशिक व्यापार और उससे सबद्ध वित्तीय तथा उधार के लेन देन के विकास का यही सक्षिप्त चित्र है।

अथेनी लोकतन्त्र का शिरोबिंदु

पारसीक युद्धो के दौरान अथेनी बेडे की वृद्धि लोकतत्र के विकास के साथ घनिष्ठ रूप म जुडी हुई थी। अथेस मे बख्तरबद पैदल सेना (जो सेना की रीढ थी) की कतारो म जानवाले हर नागरिक को अपना जिरह बख्तर अपन खर्च से जुटाना होता था। यह सामान खासा महगा था, इसलिए यह ऐसे ही लोगो के बूते के भीतर होता था कि जिनकी आय अच्छी हो। इसके विपरीत नौसेना के नाविको को ऐसे जिरह-बख्तर की कोई दरकार नही थी और इसलिए व ज्यादातर गरीबो की कतारो से भरती किये जाते थे जिन्हे अभिजात और सभ्रात अथेनी तिरस्कार से तैरती भीड कहा करते थे। जैसे जैसे बेडा बढता और युद्ध म अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका ग्रहण करता गया वैसे वैसे दीमोसो का प्रभाव गणराज्य के जीवन मे अपने को अधिकाधिक अनुभूत करान लगा। फलस्वरूप सोलोन और क्लीस्थेनीज़ द्वारा प्रवर्तित लोकतान्त्रिक सुधारो को एक मजिल और आगे की तरफ ले जाया गया।

इस काल का सबस प्रमुख राजनीतिक व्यक्ति पेरीक्लीज़ था, जो एक प्राचीन अभिजात कुल का वशज था और जिसके पिता जाथीपस न मिकाल अन्तरीप के पास प्रसिद्ध समुद्री युद्ध म पारसीको के विजेता के नाते ख्याति अर्जित की थी। पेरीक्लीज़ पद्रह साल अथेनी गणराज्य का प्रधान रहा और उसे सभी समस्त राज्य का नेता मानते थे। वह कुशल राजनीतिज्ञ और श्रेष्ठ वक्ता था। उसे लोग ओलिंपियाई कहते थे क्योकि उसके वक्तृत्व की गर्ज और चमक ने उसे ओलिंपसवासी देवराज जीयस का समकक्ष बना

दिया था। लेकिन वह लोगो के सामने विरले अवसरो पर ही बोला करता था और कहता था कि हर भाषण को उसके श्रोताओ पर स्थायी प्रभाव डालनेवाली अविस्मरणीय घटना होना चाहिए।

पेरीक्लीज के नेतृत्व मे अथेनी राज्य अपनी शक्ति और समृद्धि के चरम पर पहुच गया। नगर को वास्तुकला की श्रेष्ठ कृतियो, मूर्तियो और चित्रो से अलकृत किया गया। अथेनी एक्रोपोलिस (कोट) म ऐसी इमारतो का निर्माण किया गया कि जो आज अपनी जीर्णशीण अवस्था मे भी दर्शको को अपनी बनावट की अद्भुत परिपूर्णता से आह्लादित कर देती ह। ये ह मशहूर पार्थेनन (अथेना पार्थेनोस का मदिर), प्रोपीलिया (एक्रोपोलिस का सिहद्वार) और इरेक्थियम (अनुश्रुत अथेनी राजा इरेक्थियस के सम्मान मे निर्मित मदिर)।

प्रसिद्ध विद्वानो और दार्शनिको ने अथेस मे विद्यालय खोले और अथेनी रगमच को सारे यूनान मे सर्वोत्तम माना जाता था। पेरीक्लीज़ ने अपने आसपास विज्ञान और कला जगत के सर्वप्रमुख व्यक्तियो को एकत्र कर लिया था, उसके सगी-साथियो म दार्शनिक अनक्सागोरस, मूर्तिकार फीदिआस और नाट्यकार यूरीपिदीज जैसे लोग थे। पेरीक्लीज अथेस के "हेलास (यूनान) का शिक्षालय' बन जाने का सपना देखा करता था।

पेरीक्लीज ने कई महत्वपूर्ण लोकतात्रिक सुधारो का सूत्रपात किया। निर्वाचन अधिकारो का प्रसार किया गया और पर्ची डालकर चुनाव किया जाने लगा। राजकीय पदो को वैतानिक बनाय जाने से अब गरीबो के लिए भी उनपर काम करना सभव हो गया। बाद मे जनसभा मे भाग लेने के लिए भी वेतन निर्धारित हुआ। आबादी क निर्धनतम तबको को नाटको के टिकट उपलभ्य बनाने के लिए एक "रगमच निधि की स्थापना की गयी। अथेस म रगमच कोरा तमाशा या मनोरजन ही नही था बल्कि राज नीतिक शिक्षा का साधन भी था।

यह वह काल था, जिसन अथेनी लोकतत्र अपन चरमोत्कर्ष पर पहुचा। राज्य के समस्त जीवन को जनसभा शासित करती थी जो सर्वोच्च निकाय क नाते गृह और विदेश नीति के सबसे महत्वपूर्ण प्रश्नो को निर्णीत करती थी। इस सभा को हर दसवे दिन समाहूत किया जाता था। प्रत्येक अथेनी नागरिक को इसम बोलन का अधिकार था और वह नये कानूनो सहित जो भी प्रस्ताव उचित समझे, उन्ह पेश कर सकता था। पेरीक्लीज़ के सुधारो न सार्विक मताधिकार और राज्य के कामकाज मे सामान्य नागरिको की प्रत्यक्ष सहभागिता का समारभ किया। प्रत्येक नागरिक को नये राजकीय पदाधिकारियो के निर्वाचन म कवल मत दन का ही नही अपितु स्वय भी किसी भी पद क लिए खडे होन का अधिकार था।
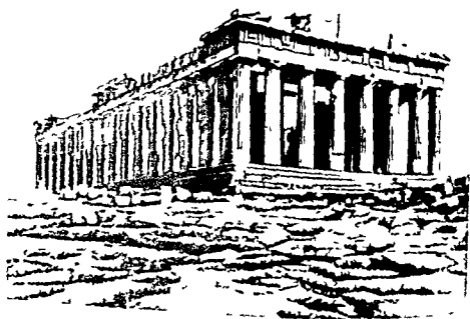
इक्तीनस तथा कालीक्रेतीज द्वारा निर्मित अथेंस का विश्वप्रसिद्ध पार्थेनोन

जनसभा के अलावा अथेनी गणराज्य में अन्य लोकतांत्रिक संस्थाएं भी थीं, जैसे हीलिएया अथवा दिकास्तो (न्यायाधीश तथा जूरी का काम करनेवाले पदाधिकारियों) की अदालत, जिसके ६००० सदस्य थे। हीलिएया केवल न्यायालय ही नहीं था, उसके विधायी कार्य भी थे। इसके अतिरिक्त ५०० की परिषद थी, जिसका कर्तव्य यह सुनिश्चित करना था कि बनाये गये कानूनों का क्रियान्वयन हो। वह पदारूढ़ व्यक्तियों के कार्य की निगरानी करती थी। रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार से बचने के लिए हीलिएया और ५०० की परिषद के सदस्यों का चुनाव पर्ची डालकर किया जाता था – पहले वांछित संख्या से अधिक उम्मीदवार छांट लिये जाते थे और फिर उनके बीच पर्ची डालकर चुनाव होता था। और अंत में दस सदस्यों का एक स्त्रातेगोस (सेनानायक) मंडल था, जो परीक्लीज के समय में विशेषकर महत्वपूर्ण बन गया था, क्योंकि वह स्वयं लगातार दस साल स्त्रातेगोस चुना गया था। इस निकाय के चुनाव पर्ची डालकर नहीं होते थे, वरन अलग-अलग उम्मीदवारों को प्रस्तावित करके होते थे।

ऐसा था पेरीक्लीज़ के समय अथेस का गणतान्त्रिक तथा लोकतान्त्रिक ढाचा। पहली नज़र म यह न केवल क्लासिकी युग के लिए ही, बल्कि उत्तरवर्ती युगो के लिए भी एक आदर्श प्रतिमान प्रतीत होता है। जनसभा की प्रभावी भूमिका, सार्विक मताधिकार, छाटे हुए उम्मीदवारो मे से पर्ची डालकर चुनाव, राजकीय पद के लिए वेतन – भला इससे भी अधिक लोक तान्त्रिक और न्यायसगत क्या हो सकता है? लेकिन अगर हम अथेनी राजकीय ढाचे पर ज़्यादा गहरी नज़र डाले, तो एक मौलिक समस्या सामने आती है। इन लोकतान्त्रिक सुलाभो और विशेषाधिकारो का वस्तुत उपभोग कौन करते थे? सारी ही आबादी या उसका सिर्फ कुछ ही भाग और अगर कुछ ही भाग, तो कौनसा भाग?

दास सभी राजनीतिक तथा नागरिक अधिकारो से वचित थे। इस प्रकार आबादी का यह हिस्सा, जो सख्या के लिहाज से बहुत ही महत्व पूर्ण था, लोकतत्र के सुलाभों के उपभोग से पूर्णत अपवर्जित था। मेनिको (अन्यदेशियो) पर भी यही बात लागू होती थी।

इस तरह सिर्फ स्वतत्र आबादी ही बाकी रह जाती है, जो निस्सदेह गुलामो और मेतिको की सयुक्त सख्या से तादाद म बहुत कम थी। लेकिन सारे स्वतत्र नागरिक भी राजनीतिक जीवन म हिस्सा नही लेते थे, क्योकि स्त्रिया उसस पूर्णत बहिष्कृत थी।

इस तरह अथेनी लोकतत्र स्पष्टत कुछ सकीर्ण और सीमित किस्म का था – एक विशेषाधिकारयुक्त अल्पसख्या का लोकतत्र। अथेनी लोकतत्र एक दासस्वामी समाज मे विद्यमान लोकतत्र का प्रतिनिधित्व करता था जिसमे अधिकार और विशेषाधिकार स्वतत्र आबादी के सिर्फ एक विशिष्ट अशक को ही प्रदान किये जाते ह।

पेलोपोनिशियाई युद्ध

पेलोपोनिशियाई युद्ध क्लासिकी यूनान के इतिहास म सबसे बडा युद्ध है। छोटे छोटे अतरालो के साथ यह युद्ध सत्ताईस साल चला और इसके परिणामस्वरूप यूनानी समाज मे गभीर सकट उत्पन्न हो गया।

युद्ध का सबसे बडा कारण था यूनानी नगर राज्यो के दोनो मुख्य समूहो – अथेनी नौसैनिक सश्रय और पेलोपोनिशियाई सघ – म प्रतिद्वद्विता। अथस द्वारा सघ के कुछ नगरो पर अपने प्रभाव को फैलाये जान के प्रयासो का स्पार्ता न कसकर विरोध किया। पेलोपोनिशियाई सघ म कोरिथ और मेगारा नगर महत्वपूण व्यापारिक केंद्र थे, जो अथेस के साथ अकसर सफलता पूर्वक प्रतियोगिता किया करते थ। राजनीतिक अतर्विरोध [illegible] इस प्रति

द्वद्विता को और भी ज्यादा बढा दिया, क्योकि अथेस पलोपानिशियाइ सघ के नगरो सहित सारे ही यूनान म आवादी के लोकतान्त्रिक सस्तरो का समर्थन प्रदान करता था, जबकि स्पार्ता सभी अथेनी नगरा म अभिजातो के हितो का समर्थन किया करता था। इन परिस्थितियो म युद्ध शुरू करन के लिए कोई उपयुक्त बहाना निकालना जरा भी मुश्किल नही था।

४२१ ई० पू० तक युद्ध का क्रम

युद्ध का आरभ ४३१ ई० पू० मे स्पार्ता द्वारा अतीका पर आक्रमण करने के साथ हुआ। पेरीक्लीज न, जो अथेनी सेना का सेनाध्यक्ष था, फैसला किया कि अथेनियो को स्थल पर रक्षात्मक युद्ध लडना चाहिए। जब स्पार्ती फौजे अतीका के खेतो को उजाडने लगी, तो लोग देहातो से भागकर अथेस के दुर्गबद्ध प्राचीरो के पीछे आश्रय लेने के लिए आ गये। पेरीक्लीज न इस तथ्य को नजरअदाज कर दिया था कि नगर मे लोगो के इस पैमाने पर अतवाह से गभीर खाद्याभाव हो जायगा और तरह-तरह की बीमारिया और महामारिया फूट पडेगी। इन आपदाओ के आने पर लोगो ने विरोध प्रकट किया और पद्रह वर्ष म पहली बार पेरीक्लीज़ स्त्रातेगोस नही चुना गया। वह अगले साल ही किसी महामारी – शायद प्लेग – से मर गया।

शासन की बागडोर अब अथेनी लोकतन्त्र के उन प्रतिनिधियो के हाथ म आ गयी जो युद्ध को अधिक सक्रियता स चलाने के पक्ष म थे। इनम स क्लीओन नामक चर्मशोधक कारीगर ने प्रमुखता प्राप्त कर ली, जो देमासो (जनसाधारण) के तथाकथित नेताओ म एक था। वह कुशल वक्ता साहसी राजनीतिज्ञ और युद्ध को विजयातक परिणति तक ले जाने का पैरोकार था। उसके आग्रह पर अथनी बेडे को पेलापोनिसस क तट के पास आक्रमण करने भेजा गया। ४२५ ई० पू० मे अथेनियो ने पाइलास पर कब्जा कर लिया और इस तरह मेसनिया म एक महत्वपूर्ण अड्डा प्राप्त कर लिया और फिर उसक सामन स्फाक्तेरिया टापू पर अधिकार करके बाद म बधको की तरह इस्तेमाल किये जाने के लिए श्रेष्ठतम स्पार्ती फौजो की एक टुकडी को बदी बना लिया।

स्पार्तियो के लिए स्थिति अत्यधिक गभीर थी और उन्होने तय किया कि युद्ध क मुख्य शत्रु को उत्तर म थ्रेस ले जाया जाये, जहा कई नगर राज्य अथनी नियत्रण स मुक्ति पान क लिए ऐसे ही अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे। स्पार्तिया न चतुर सनानायक ब्रासीदस के नेतृत्व म अपनी फौजो क एक भाग को थ्रेस भज दिया। कई अथेनी नगरो पर कब्जा कर लिया गया और ४२२ ई० पू० म अम्फिपोलिस नगर क पास एक बडी लडाई

हुई, जिसमे दोनो सेनानायक – ब्रासीदस और क्लीओन – मारे गय। इसके कुछ ही बाद अथेस और स्पाता मे निशीयस की सधि (जिसे ५० वर्ष चलना था) सपन्न की गयी, जो अथेनी प्रतिनिधि निशीयस के नाम से विज्ञात है।

सिसलियाई अभियान

लेकिन यह सधि अस्थायी शाति से ज्यादा कुछ नही थी। अथेस मे एक बार फिर सैन्यवादी गुट पैदा हो गये – इस बार युद्ध आरभ करने का मुख्य पैरोकार आल्सीबिआदीज़ था। यह प्रभावशाली व्यक्ति पेरीक्लीज का भतीजा था और युवावस्था से ही अपने रूप, शिक्षा और वक्तृत्व कौशल के लिए मशहूर था। लेकिन साथ ही उसे – और अकारण ही नही – एक सिद्धातहीन राजनीतिक मुहिमबाज भी समझा जाता था।

आल्सीबिआदीज़ सिसली पर हमला करने की राय देता था और वह दक्षिणी इटली और कार्थेज तक को जीतने का सपना देखता था। अथेनी आबादी के व्यापक हिस्सो ने ऐसी योजनाओ का उत्साहपूवक समर्थन किया। ४१५ ई० पू० मे सिसलियाई अभियान की तेयारिया कर दी गयी – २६० जहाजो के वेडे और ४०,००० सैनिको की सेना को सज्जित कर दिया गया।

लेकिन वेडे की अथेस स रवानगी के ठीक पहले एक अजीव और अप्रत्याशित घटना हुई। नगर के चौराहो पर स्थित चौकोर स्तभो पर बनी यात्रियो के देवता हर्मीज की आवक्ष प्रतिमाओ के चेहरे टूटे हुए पाये गये। इसे अपशकुन समझा गया, खासकर इसलिए कि अफवाहो के अनुसार आल्सीबिआदीज़ का नाम इस धर्मविरुद्ध कृत्य से जुडा हुआ था। फिर भी अभियान सेना रवाना हो ही गयी ओर अथेनी सेना ने सिसली के कताना नगर को सर कर लिया और फिर जाकर सिराकूज़ को घेर लिया। आरभ मे घेरा सफल रहा। मगर इसी समय अथेस से एक सरकारी जहाज यह आदेश लेकर आया कि आल्सीबिआदीज़ वापस जाये जहा उस पर तुरत मूर्तियो के अपवित्रीकरण के सिलसिले म मुकदमा चलाया जायेगा। आल्सीबिआदीज़ न इस आदेश का स्वीकार कर लिया, मगर रास्ते म वह वच भागने मे कामयाव हो गया और स्पार्तियो की तरफ चला गया।

आल्सीबिआदीज़ की रवानगी के वाद सिसली म घटनाओ का रुख विगड गया। सिराकूज़ का घेरा खिचता चला गया और इसी बीच घेरेबद शहर की सहायता क लिए स्पार्ती कुमुक पहुच गयी। स्वय भी कुमुक प्राप्त करन के बाद अथेनियो ने समुद्री युद्ध का खतरा मोल लन का फैसला किया। इस युद्ध का अत पराजय म हुआ और अथेनी फौजो न निशीयस और दिमो

स्थीनीज़ की कमान मे भूमि पर पीछे हटना शुरू किया। इस पश्चगमन का अत सर्वनाश म हुआ – सेनानायको को बदी बनाकर मार डाला गया और सात हज़ार अथेनियो को दास बनाकर पत्थर की खाना मे काम करने के लिए भेज दिया गया।

सिसलियाइ अनर्थ के कारण अथेनी समुद्री शक्ति कम हो गयी और कई बडे नगरो और टापुओ ने इस अवसर का लाभ उठाकर अथेस से पीछा छुडा लिया।

युद्ध का उत्तरवर्ती क्रम

सिसलियाई अभियान के अनर्थकारी अत के ही साथ-साथ अथेस को स्वय अतीका म भी कई धक्के खाने पडे। ४१३ ई० पू० मे स्पार्ता ने शाति सधि का खुला उल्लघन किया और आल्सीबिआदीज़ की सलाह से अथेस से कोई २५ किलोमीटर की दूरी पर स्थित रणनीतिक महत्व के नगर देके लिया को सर करने के लिए शक्तिशाली सैन्य दस्ते का उपयोग किया। पहले के सायोगिक हमलो के बजाय स्पार्तियो ने अब अपनी सेनाओ को अतीका के प्रदेश पर एकत्र करना शुरू किया। अनर्थो की इस शृखला म अतिम चोट यह थी कि २०००० अथेनी गुलाम स्पार्ता से जा मिले।

असफलताओ के इस सिलसिले को कई अथेनियो ने लोकतान्त्रिक प्रणाली के शासन का परिणाम माना। ४११ ई० पू० मे लोकतत्र के शत्रुओ ने इस नाजुक परिस्थिति का लाभ उठाकर क्राति कर दी। सत्ता को ४०० की परिषद ने अपने हाथ म ले लिया और लोकतान्त्रिक सविधान को रद्द कर दिया गया। जब इस क्राति की अफवाह अथेनी बेडे पर पहुची जो उस समय एशिया ए कोचक के तट के पास लगर डाले हुए था, तो जहाजियो ने बगावत कर दी और आल्सीबिआदीज़ को अपना सेनानायक घोषित कर दिया, जिसने उस वक्त तक स्पार्तियो से झगडा करके उनसे किनाराकशी कर ली थी। अल्पतत्र का तख्ता उलट दिया गया और आल्सीबिआदीज ने पेलोपोनेसियाई बेडे पर कई विजय प्राप्त की जिसके बाद वह विजयोल्लास के साथ अथेस वापस आया। कुछ ही बाद वह जनसभा द्वारा स्त्रातेगोस चुना गया और उसे असीमित अधिकार प्रदान किय गये। तथापि बाद की असफलताओ और अथेनी बेडे की पराजयो ने आल्सीबिआदीज़ को फिर अथेस छोडने के लिए विवश किया और इस बार उसका जाना सदा के लिए था।

इस लबे पेलोपोनेसियाई युद्ध की अगली मजिल म एक निर्णायक कारक स्वय फारस का भाग लेना था, जिसने स्पार्ता का प्रबल समर्थन प्रदान किया। अथेनी शक्ति उतार पर थी मसलन ४०५ ई० पू० म हेलसपात म इगोस्पो

तामोस (बकरी नदी) के जलयुद्ध मे करारी हार के बाद। आथेनी बेडे को पराजित करने के बाद लीसादर ने स्वय अथेस नगर को ही घेर लिया, जिसे ४०४ ई० पू० के वसत मे उसके सामने आत्मसमर्पण करना पडा। आत्मसमर्पण की शर्ते ये थी कि सारा अथेनी बेडा स्पार्ता को दे दिया जाये, अथेस से पिरीअस जानेवाली मशहूर लबी दीवारो को गिरा दिया जाये और स्पार्ता को हेलास (यूनान) म सर्वप्रमुख शक्ति स्वीकार किया जाये।

स्पार्ती सेनाओ और विशेषकर लीसादर के समर्थन स एक लोकतत्र-विरोधी सरकार ने अथेस मे अपनी सत्ता स्थापित कर ली। लेकिन ३० व्यक्तियो के इस निरकुश अल्पतत्र को अल्पकालिक ही होना था और ४०३ ई० पू० मे लोकतात्रिक सविधान को बहाल कर दिया गया।

पेलोपोनिशियाई युद्ध के परिणाम

इस युद्ध मे जितन भी राज्यो न भाग लिया था उनम निस्सदेह सबसे अधिक हानि अथेस को ही उठानी पडी। किसान कगाल हो गये, व्यापार भग हो गया और युद्ध का अत होते होते खजाना खाली हो चुका था। अथेस अब समुद्रो का स्वामी नहीं रहा था।

स्पार्ता ने भी युद्ध के बाद अपने को घोर विपत्ति मे पाया। औपचारिक रूप मे वह यूनानी जगत मे सर्वप्रमुख शक्ति बन गया था मगर यह भूमिका उसके बूते के बाहर की सिद्ध हुई। स्पार्ता को प्रदत्त सहायता के मुआवजे के तौर पर पारसीकों ने एशिया ए कोचक के तमाम यूनानी नगर उन्ह दे दिय जाने की माग की। स्पार्ता ने स्वाभाविकतया इसे मानने से इन्कार कर दिया और दोनो शक्तियो मे सबध इतने बिगड गये कि उनके बीच एशिया-ए कोचक म लडाई छिड गयी। अनेक स्पार्ती सफलताओ क बाद फारस न थीब्ज, आर्गोस, कोरिथ और अथेस सहित विभिन्न यूनानी राज्यो का स्पार्ता-विरोधी सश्रय स्थापित किया और तथाकथित कोरिथी युद्ध शुरू हो गया। यह युद्ध एक सधि के साथ समाप्त हुआ, जिसने स्पार्ती प्रभुत्व को मान्यता देते हुए यह निर्णीत किया कि पारसीक बादशाह यूनानी मामलो का सर्वोच्च निर्णेता होगा।

कुछ ही बाद स्पार्ता न सदा ही की भाति स्थानीय अभिजात वर्ग को समर्थन देते हुए थीब्ज के आतरिक मामलो मे हस्तक्षेप शुरू कर दिया। लेकिन नगर मे लोकतात्रिक क्राति हो गयी स्पार्ती रक्षक सेना को बाहर खदेड दिया गया और थीब्ज ने अथेस के साथ सश्रय बना लिया। इसने फिर अथस की शक्ति को बल प्रदान किया और फलस्वरूप दूसरे अथेनी नौसैनिक सश्रय की स्थापना हुई। तथापि यह सश्रय अपन पूर्ववर्ती से बहुत छोटा था। इसमे

मात्र अथेस और ईजियन सागर के द्वीप ही सम्मिलित थे और सदस्य राज्यो को अब कही अधिक स्वायत्तता प्राप्त थी।

इसके बाद थीब्ज और स्पार्ता के बीच युद्ध छिड गया। थीबी सेनानायक एपामिनोदास न जो तिरछी कतारो" की रणनीतिक युक्ति (बाय पहलू को सेना के मुख्य भाग मे ज्यादा आगे लाना) का उपयोग करनेवाला पहला व्यक्ति था ३७१ ई० पू० म थीब्ज के निकट ल्यूक्त्रा नामक स्थान पर अभी तक अविजित स्पातियो पर शानदार विजय प्राप्त की। इस विजय के बाद एपामिनोदास ने पेलोपानिसस पर हमला किया, पर वह स्पार्ता को कब्जे मे न ले पाया।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि पेलोपोनिशियाई युद्ध के फलस्वरूप शक्ति सतुलन मे आकस्मिक परिवर्तन आया। ई० पू० चौथी शती के प्रथमार्ध मे यूनानी इतिहास परस्परसहारक सघर्ष मे परिपूर्ण है और अनेक अलग अलग पोलिसो ने अपना प्राधान्य स्थापित करन का प्रयास किया, यद्यपि सभी उसे बचाये या बनाये रखन मे असफल सिद्ध हुए। यूनानी समाज एक सार्विक महापरिवर्तन स गुजर रहा था जो अपन को आर्थिक अपकर्ष और अतहीन आपसी कलह या एक समकालीन के शब्दो म ' सभी के सभी के विरुद्ध युद्धो मे प्रतिबिबित कर रहा था।

यूनानी सस्कृति। अथेस की भूमिका

ई० पू० पाचवी और चौथी सदियो मे और विशेपकर परीक्लीज के समय म अथेस यूनान के राजनीतिक तथा सास्कृतिक जीवन का मुख्य केंद्र था। यह महानगर जो उस जमाने के लिहाज के विराट आकार का था, जिसम कोई दो लाख लोग निवास करते थे बौद्धिक उफान का केंद्र था। दिन म हर समय उसकी सडको पर और चौको मे लोगा की भीड बनी रहती थी क्याकि नगर का सार्वजनिक जीवन पूर्णत घर के बाहर, खुले मे ही, चलता था। सार्वजनिक गतिविधिया मे विस्मयजनक वैभिन्य था – जनसभाए, सामूहिक जलूस और उत्सव राजनीतिक दार्शनिक तथा कानूनी विवाद और रगमचीय मनोरजन आदि-आदि। हर अथेनी नागरिक जनसभा की कार्रवाई म हिस्सा लेता था कानूनी और बौद्धिक तर्को को सुनता था, थियटर जाता था और इन सभी तरीको से वह अपने नगर के राजनीतिक तथा सास्कृतिक जीवन मे प्रत्यक्ष भाग लेता था।

अथेस और ईजियन सागर के द्वीप ही सम्मिलित थ और सदस्य राज्य अब कही अधिक स्वायत्तता प्राप्त थी।

इसके बाद थीब्ज और स्पार्ता क बीच युद्ध छिड गया। थीबी सेनानायक मिनोदास ने जो तिरछी क्तारो ' की रणनीतिक युक्ति (बाय पहलू सेना के मुख्य भाग से ज्यादा आगे लाना) का उपयोग करनेवाला पहला क्त था ३७१ ई० पू० म थीब्ज के निकट ल्यूक्त्रा नामक स्थान पर अभी अविजित स्पार्तियो पर शानदार विजय प्राप्त की। इस विजय क बाद मिनोदास ने पेलोपोनिसस पर हमला किया, पर वह स्पार्ता का कब्जा न ले पाया।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि पेलोपोनिशियाई युद्ध के फलस्वरूप क्ति-सतुलन म आकस्मिक परिवर्तन आया। ई० पू० चौथी शती के प्रथमार्ध यूनानी इतिहास परस्परसहारक सघर्ष म परिपूर्ण है और अनेक अलग ग पोलिसो ने अपना प्राधान्य स्थापित करने का प्रयास किया, यद्यपि ो उसे बचाये या बनाये रखने मे असफल सिद्ध हुए। यूनानी समाज एक वैक महापरिवर्तन से गुजर रहा था, जो अपने को आर्थिक अपकर्ष और हीन आपसी कलह या एक समकालीन के शब्दो मे "सभी के सभी के द्ध युद्धो मे प्रतिबिंबित कर रहा था।

यूनानी सस्कृति। अथेस की भूमिका

ई० पू० पाचवी और चौथी सदिया मे और विशेषकर पेरीक्लीज के मय मे अथेस यूनान के राजनीतिक तथा सास्कृतिक जीवन का मुख्य के । यह महानगर जो उस जमाने के लिहाज के विराट आकार का था सम कोई दो लाख लाग निवास करते थे बौद्धिक उफान का केंद्र था। न म हर समय उसकी सडको पर और चौको मे लोगो की भीड बनी रहती । क्योकि नगर का सार्वजनिक जीवन पूर्णत घर के बाहर खुले मे ही, लता था। सार्वजनिक गतिविधियो म विस्मयजनक वैभिन्य था – जनसभाए मूहिक जलूस और उत्सव राजनीतिक, दार्शनिक तथा कानूनी विवाद र रगमचीय मनोरजन आदि आदि। हर अथेनी नागरिक जनसभा की र्रवाई म हिस्सा लेता था, कानूनी और बौद्धिक तर्को को सुनता था, यटर जाता था और इन सभी तरीको से वह अपने नगर के राजनीतिक था सास्कृतिक जीवन म प्रत्यक्ष भाग लेता था।

की सीमा के परे है। मनुष्य विचारो के इस जगत की कल्पना केवल इस तथ्य के परिणामस्वरूप कर सकते है कि उनके शरीरो म प्रवश करन क पहल उनकी आत्माए इन सितारो मे निवास करती है, जिनकी अनुकूल स्थिति से वे विचारो के जगत को देख सकती है। अत अफलातून की शिक्षा मे भौतिक द्रव्य क प्रति यदि वस्तुत तिरस्कारपूर्ण नही, तो नकारात्मक दृष्टिकोण सन्निहित है जिसे वह अनगढ और अरूप सा समझता है और जो सिर्फ इसी सीमा तक मूल्यवान है कि वह विचारो के रूप म आध्यात्मिकता म युक्त है। इस शिक्षा को सभी उत्तरवर्ती प्रत्ययवादी पद्धतियो और सिद्धान्तो की आधारशिला बन जाना था।

यूनानी दर्शन अपने शिखर पर अरस्तू (३८४-३२२ ई० पू०) क समय पहुचा जो एक सर्वज्ञानसपन्न विद्वान था और एक तरह मे समस्त यूनानी विज्ञान तथा दर्शन के समन्वय का प्रतिनिधित्व करता था।

अपनी दर्शन पद्धति म अरस्तू ने दीमोक्रीतस क भौतिकवाद का अफलातून के प्रत्ययवाद के साथ सयोग करने का प्रयास किया और यही उसके दर्शन का सबसे कमजोर और दोषपूर्ण पहलू है क्योकि प्रत्ययवाद और भौतिकवाद एक दूसरे स असगत और असयोजनीय है। फिर भी अरस्तू ने अनेक मूल्यवान विचार और मत व्यक्त किये जो दर्शन के आगामी विकास के लिए अपार महत्व क सिद्ध हुए। इनमे उसकी रूप (फार्म) और सार (कटट) अथवा पदार्थ की एकता के बारे मे शिक्षा भी है। अरस्तू केवल दार्शनिक ही नही वरन अत्यत बहुविद विद्वान भी था जिसने अपनी योग्यताए विभिन्न क्षेत्रो म लगायी जैसे तर्कशास्त्र खगोलिकी, प्रकृतिविज्ञान और भाषा तथा पद्य रचना की समस्याए।

क्लासिकी यूनानी दर्शन का सार्वभौम महत्व आज भी बना हुआ है और वह विश्व सस्कृति के कोषागार म अद्वितीय योगदान है।

इतिहासलेखन

इतिहास क लिए यूरोपीय भाषाओ म प्रयुक्त शब्द हिस्टरी या हिस्तारिया यूनानी भाषा मे ही आया है और इस तथ्य का प्रतीक है कि इसका उदय यूनान म ही हुआ था।

एशिया म कारक क तट पर हालीकार्नासस नगर के निवासी हेराडोतस (पाचवी सदी ई० पू०) को ही आम तौर पर 'इतिहास का जनक" माना जाता है। उसकी सामान्यत 'इतिहास' क नाम से विख्यात नौ खडीय कृति मुख्यत यूनानी-फारसी युद्धो क बारे म ही है, यद्यपि लेखक न मिस्र फारस और सीथिया (स्कदा) क इतिहास को भी सम्मिलित करन क लिए काफी विषयातर किया है।

एक और बडा इतिहासकार अथेसवासी थूसीदिदीज (४६०-३९५ ई० पू०) था, जिसने पेलोपोनिशियाई युद्ध का, जिसमे उसने स्वय भी भाग लिया था, वडा स्मरणीय विवरण लिखा है। यह इतिहासलेखन की एक असाधारण कृति है, जो ऐतिहासिक समालोचना की विभिन्न युक्तियो और पद्धतियो के पहले उदाहरण पेश करती है और ऐतिहासिक घटनाओ का निष्पक्ष विवरण प्रस्तुत करने के प्रयास का प्रतिनिधित्व करती है।

एक और प्रमुख अथेनी इतिहासकार ज़ेनोफोन (४३०-३५५ ई० पू०) था जो कई ऐतिहासिक कृतियो का लेखक है, जिनमे 'अनाबसिस' सवसे प्रसिद्ध है।

अरस्तू ने भी अनेक ऐतिहासिक कृतिया लिखी थी, जिनमे से कई हमारे समय तक नही बच पायी है। जो बच रही है, उनमे से सबसे रोचक 'राजनीतिशास्त्र' (पोलिटिक्स) है, जिसम अथेनी राज्य के विकास की एतिहासिक रूपरेखा और अथेनी सविधान क आधारभूत सिद्धातो की व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। यूनानी इतिहासकारो की इन बुनियादी कृतियो ने क्लासिकी युग मे इतिहासशास्त्र के उत्तरवर्ती विकास की नीव डाली।

साहित्य तथा रगमच

यूनानियो न कलाओ के क्षेत्र म भी ऐसा ही श्रेष्ठ योगदान किया। यूनानी जाति की प्रतिभा ने रगमच, कविता मूर्तिकला और वास्तुकला मे सदा के लिए अपनी छाप छोड दी है।

यूनान मे रगमच (थियेटर) एक महत्वपूर्ण सामाजिक कृत्य का निष्पादन करता था। प्रारभ म धर्म से सवद्ध होने पर भी बाद मे यह यूनानी राजनीतिक जीवन के सबसे महत्वपूर्ण लक्षणो मे एक बन गया। यूनान मे ही दोना मुख्य रगमच विधाए–सुखातकी अथवा कामदी (कामेडी) और दुखातकी अथवा त्रासदी (ट्रेजेडी)–अस्तित्व मे आयी और विकसित हुई। ये सुरादेव दिआनीसस की पूजा से जुड विभिन्न तत्वो–नृत्य शोभायात्रा और खेलो–के समन्वय को प्रतिनिधित करती थी। महान दिओनीससोत्सव (*दिओनीसिया*) *के दौरान दिओनीसस के सम्मान मे जलूस निकाले जाते* थे, सुरादेव के सगियो – वनदेवताओ (सैतर, जो आधे आदमी और आधे बकरे होते थे) को दर्शान के लिए बकरे की खाल पहने गायकवृद दिओनीसस से जुडी विभिन्न दतकथाओ से सवद्ध भजन गाते थे। इस प्रथा से बाद की त्रासदिया विकसित हुई–यूनानी शब्द 'त्रागदिआ का वस्तुत अर्थ ही बकरे (त्रागोस") का गीत है।

आरभ म रगमचीय प्रदशन सार्वजनिक चौको मे हुआ करते थे लेकिन बाद म व स्थायी इमारतो मे होने लगे। यूनानी रगशाला (थियेटर) खुली

की सीमा के परे है। मनुष्य विचारो के इस जगत की कल्पना केवल इस तथ्य के परिणामस्वरूप कर सकते है कि उनके शरीरो मे प्रवेश करने के पहले उनकी आत्माए इन सितारो मे निवास करती है, जिनकी अनुकूल स्थिति म वे विचारा के जगत को देख सकती है। अत अफलातून की शिक्षा म भौतिक द्रव्य के प्रति यदि वस्तुत तिरस्कारपूर्ण नही, तो नकारात्मक दृष्टिकोण सन्निहित है जिसे वह अनगढ और अरूप सा समझता है और जो सिर्फ इसी सीमा तक मूल्यवान है कि वह विचारो के रूप म आध्यात्मिकता मे युक्त है। इस शिक्षा को सभी उत्तरवर्ती प्रत्ययवादी पद्धतिया और सिद्धातो की आधारशिला वन जाना था।

यूनानी दशन अपने शिखर पर अरस्तू (३८४ ३२२ ई० पू०) के समय पहुचा जो एक सर्वज्ञानसपन्न विद्वान था और एक तरह से समस्त यूनानी विज्ञान तथा दर्शन के समन्वय का प्रतिनिधित्व करता था।

अपनी दर्शन पद्धति म अरस्तू ने दीमाक्रीतस के भौतिकवाद का अफलातून के प्रत्ययवाद के साथ सयोग करने का प्रयास किया और यही उसके दर्शन का सबसे कमजोर और दोषपूर्ण पहलू है, क्याकि प्रत्ययवाद और भौतिकवाद एक दूसरे म असगत और असयोजनीय है। फिर भी अरस्तू न अनेक मूल्यवान विचार और मत व्यक्त किये जो दर्शन के आगामी विकास के लिए अपार महत्व के सिद्ध हुए। इनमे उसकी रूप (फार्म) और सार (कांटेंट) अथवा पदार्थ की एकता के बारे मे शिक्षा भी है। अरस्तू केवल दार्शनिक ही नही, वरन अत्यत बहुविद विद्वान भी था, जिसने अपनी योग्यताए विभिन्न क्षेत्रो मे लगायी जैसे तर्कशास्त्र खगोलिकी, प्रकृतिविज्ञान और भाषा तथा पद्य रचना की समस्याए।

क्लासिकी यूनानी दर्शन का सार्वभौम महत्व आज भी बना हुआ है और वह विश्व सस्कृति के कोषागार म अद्वितीय योगदान है।

इतिहासलेखन

इतिहास क लिए यूरोपीय भाषाओ म प्रयुक्त शब्द 'हिस्टरी' या हिस्तारिया यूनानी भाषा स ही आया है और इस तथ्य का प्रतीक है कि इसका उदय यूनान म ही हुआ था।

एशिया-ए-कोचक के तट पर हालीकानासस नगर के निवासी हेरादोतस (पाचवी सदी ई० पू०) को ही आम तौर पर इतिहास का जनक' माना जाता है। उसकी सामान्यत 'इतिहास' के नाम स विख्यात नौ खडीय कृति मुख्यत यूनानी-फारसी युद्धो के बारे म ही है, यद्यपि लेखक न मिस्र, फारस और सीथिया (शकदेश) के इतिहास को भी सम्मिलित करने के लिए काफी विषयातर किया है।

एक और वडा इतिहासकार अथेसवासी थूसीदिदीज़ (४६०-३९५ ई० पू०) था, जिसने पेलोपोनिशियाई युद्ध का, जिसमे उसने स्वय भी भाग लिया था, वडा स्मरणीय विवरण लिखा है। यह इतिहासलेखन की एक असाधारण कृति है, जो ऐतिहासिक समालोचना की विभिन्न युक्तियो और पद्धतियो के पहले उदाहरण पेश करती है और ऐतिहासिक घटनाओ का निष्पक्ष विवरण प्रस्तुत करने के प्रयास का प्रतिनिधित्व करती है।

एक और प्रमुख अथेनी इतिहासकार ज़ेनोफोन (४३०-३५५ ई० पू०) था जो कई ऐतिहासिक कृतियो का लेखक है, जिनम 'अनावसिस' सबसे प्रसिद्ध है।

अरस्तू ने भी अनेक ऐतिहासिक कृतिया लिखी थी, जिनमे से कई हमारे समय तक नही वच पायी है। जो वच रही है, उनमे से सबसे रोचक 'राजनीतिशास्त्र' (पोलिटिक्स) है, जिसम अथेनी राज्य के विकास की ऐतिहासिक रूपरेखा और अथेनी सविधान क आधारभूत सिद्धातो की व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। यूनानी इतिहासकारो की इन वुनियादी कृतियो न क्लासिकी युग मे इतिहासशास्त्र के उत्तरवर्ती विकास की नीव डाली।

साहित्य तथा रगमच

यूनानियो ने कलाओ के क्षेत्र मे भी एसा ही श्रेष्ठ योगदान किया। यूनानी जाति की प्रतिभा ने रगमच, कविता, मूर्तिकला और वास्तुकला म सदा के लिए अपनी छाप छोड दी है।

यूनान म रगमच (थियेटर) एक महत्वपूर्ण सामाजिक कृत्य का निष्पादन करता था। प्रारभ म धर्म मे सबद्ध होने पर भी वाद मे यह यूनानी राजनीतिक जीवन के सबसे महत्वपूर्ण लक्षणो म एक बन गया। यूनान मे ही दोनो मुख्य रगमच विधाए–सुखातकी अथवा कामदी (कॉमेडी) और दुखातकी अथवा त्रासदी (ट्रेजेडी)–अस्तित्व मे आयी और विकसित हुई। ये सुरादेव दिओनीसस की पूजा मे जुडे विभिन्न तत्वो–नृत्य शोभायात्रा और खेलो–के समन्वय को प्रतिनिधित करती थी। महान दिओनीससोत्सव (*दिओनीसिया*) के दौरान दिओनीसस के सम्मान मे जलूस निकाले जाते थे, सुरादेव के सगियो – वनदेवताओ (सैतर, जो आधे आदमी और आधे वकरे होते थे) को दर्शान के लिए वकरे की खाल पहने गायकवृद दिओनीसस स जुडी विभिन्न दतकथाओ मे सबद्ध भजन गाते थे। इस प्रथा से वाद की त्रासदिया विकसित हुई–यूनानी शब्द त्रागदिआ का वस्तुत अर्थ ही वकरे ('त्रागोस") का गीत है।

प्रारभ म रगमचीय प्रदर्शन सार्वजनिक चौको म हुआ करते थे लेकिन वाद मे वे स्थायी इमारतो मे होने लगे। यूनानी रगशाला (थियेटर) खुली

रगभूमि या एफीथियेटर हुआ करती थी, जिसके केंद्र म गाल मच
था। सवस वडे अथेनी थियेटरा मे स एक एन्नोपोलिस पहाडी की ढाल
बनाया गया था जिसम ३० ००० दर्शक बैठ सकत थे।

महानतम यूनानी त्रासदीकार ईस्कीलस, सोफोक्लीज और यूरीपि
थे। ईस्कीलस (५२५-४५६ ई० पू०) ने कोई ८० त्रासदिया लिखी
जिनम से सिर्फ सात ही अब तक बच पायी है। इनमे से सबसे रोचक 'शृख
प्रोमीथियस है जो प्रोमीथियस के आख्यान पर आधारित है, जिसन म
को आग प्राप्त करना सिखाया और इस तरह सस्कृति तथा सभ्यता के वि
के बीज बोये थ। ओलिपस पर्वत से आग चुराकर प्रोमीथियस न ज़े
का गुस्सा मोल ले लिया जिसन उसे दड देने क लिए ज़जीरो स एक च
के साथ बाध दिया और उसे भयकर यातनाए दी। ईस्कीलस प्रोमथि
को सर्वशक्तिमान देवताओ की साहसपूर्वक अवज्ञा करनेवाले एक वि
के रूप म चित्रित करता है।

सोफोक्लीज (४९६ ४०६ ई० पू०) अथेस के स्वर्ण युग म रह
था। कहा जाता है कि उसकी लिखी त्रासदियो की सख्या १२० से कम न
थी जिनमे से भावी पीढियो के लिए केवल सात ही बच पायी है। साफाक्ल
की त्रासदियो मे हम क्लासिकी चितन के सबसे प्रचलित विचारा म
एक–नियति और प्रतिशोध के विचार–के विकास को देखते हैं।
विषयवस्तु का एक श्रेष्ठतम प्रतिपादन राजा ईडिपस' म पाया जाता
जहा अनजान मे किये अपराध क मामले मे भी प्रतिशोध को अपरिहार्य औ
अनिवार्य दर्शाया गया है।

तीसरा महान त्रासदीकार यूरीपिदीज (४८०-४०६ ई० पू०) था जिस
९० त्रासदिया लिखी थी जिनमे से १८ बच गयी है। इनमे से सवसे प्रसिद्ध मीदिआ
हिप्पोलितस वैक्ई (मधुबालाए) और 'टारिस म इफीजीनिआ है

यूरीपिदीज क नाटक अपनी मनोवैज्ञानिक मर्मज्ञता के लिए उल्लखनी
है जो उसके सभी पात्रो को अनुपम वैयक्तिकता प्रदान कर देती है। यूरी
पिदीज की कृतियो म गायकवृद जिसे उसके पूर्ववर्तियो के नाटका म का
प्रमुखता प्राप्त थी निश्चित रूप स गौण हो जाता है और मुख्य ध्यान पात्र
पर ही केंद्रित किया जाता है।

यूनानी नाटयकला म एक अन्य विधा–कामदी–का भी उदय हुआ
जो लोकप्रिय स्वागा प्रहसना और दिओनीसस की पूजा स जुडी विनोदमय
और मजाकिया रीतिया स निकली थी।

इस विधा का प्रमुख प्रतिपादक अरिस्तोफेनीज (४४६-३८५ ई० पू०)
था। उसके ग्यारह नाटक हमारे समय तक बच रहे है जिनम स सबस प्रसिद्ध
ततैय गाल्ल मढक लीसिस्त्राता और सूरमा' है। अरिस्तोफनीज

की कामदिया स्पष्टत राजनीतिक चरित्र की है। उनका लेखक अनुदार लोकतानिक हलकों से सबधित था और उग्र लोकतान्त्रिक रूपो और उनके क्लीआन जैसे पैरोकारो पर तीखी चोटे किया करता था।

यूनानी कला और स्थापत्य

इन महान साहित्यिक उपलब्धियो के ही साथ साथ हमारा साबका स्थापत्य तथा मूर्तिकलाओ के क्षेत्र म यूनानी देशज प्रतिभा की लासानी मिसालो से भी होता है।

यूनानी स्थापत्य की स्तभो की विभिन्न किस्मो के अनुसार तीन मुख्य शैलिया थी – दोरियाई (*डोरिक*), *आयोनी* (*आयोनियन*) और कोरिंथी (कोरिंथियन)। यूनानी मूर्तिकला की दो मुख्य शैलिया थी – अथेनी, जिसका सबस विख्यात प्रतिनिधि फीदिआस था, और पेलोपोनिशियाई, जिसका सबस बडा प्रतिनिधि पालीक्लितस था। यूनानी मूर्तिकारो ने मानव आकृति के आदर्श अनुपातो का प्रतिपादन किया।

दोरिफोरस (भालेवाला)। पोलीक्लीतस द्वारा निर्मित कास्य प्रतिमा

अथस म परीक्लीज युग के स्मारक यूनानी मूर्तिकला और स्थापत्य की शानदार उपलब्धियो का बडी अच्छी तरह से प्रतिनिधित्व करते है। इस काल म सारे यूनानी जगत के प्रतिभाशाली कलाकार अथेस मे इकट्ठा हो गये थे। महान मूर्तिकार फीदिआस उस समय का प्रमुख वास्तुकार इक्तीनस और प्रमुख चित्रकार पोलीग्नोतस तथा परासियस इन्ही लोगो म थे। इस काल म अथेस को जिन सबस महत्वपूर्ण कलाकृतियो
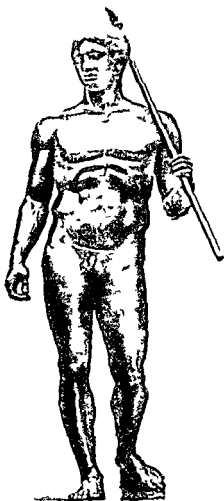
पीस्टम (इटली) में पोसीदन का मदिर

म अलकृत किया गया, वे थी लालित्य और आकृति म अनुपम दव मूर्तिया और सावजनिक इमारत। भवनो मे विशेषकर उल्लेखनीय थे एक्रोपोलिस पर निर्मित पार्थेनन तथा प्रोपीलिया और नगर के निचले भाग म निर्मित ओडियन।

अथना का मदिर पार्थेनन जिसे अथेनी जनता परपरा से कुमारी गृह कहती थी विख्यात वास्तुकार इक्तीनस तथा कल्लीक्रातीज द्वारा रूपायित सफद सगमरमर का भीतर और वाहर सुदर मूर्तियो से अलकृत एव भव्य भवन था। मन्दिर क भीतर हाथीदात व सोन की बनी और सोने क शिरोधान तथा भाल म युक्त दवी अथेना की एक विशाल मूर्ति थी, जिसे फीदिआस ने बनाया था।

फीदिआस की एक और शानदार कृति अथेना प्रामाकोस अथवा रणन्वी अथना की विराट कास्य प्रतिमा थी जो मैराथन के युद्ध म हाथ म आयी धातु म बनायी गयी थी। यह मूर्ति एक्रोपालिस क उच्चतम स्थल पर स्थित

थी, जिससे धूप में चमकता उसका सुनहरा भाला बहुत दूर से ही दिखायी दे जाता था और जहाजों के लिए आकाशदीप का काम करता था।

फीदियास की एक और श्रेष्ठ कृति ओलिंपिया में ज्यूस के मंदिर में स्थापित ज्यूस की विराट मूर्ति थी।

प्रोपीलिया अक्रोपोलिस का विराटाकार सिंहद्वार था। यह चार पार्श्व द्वारों से युक्त छतदार संगमर्मरी स्तंभावली और मुख्य द्वार के दोनों ओर चार हॉलों से मिलकर बना था, जिनमें से एक पालीग्नोतस जैसे विख्यात चित्रकारों की कृतियों से अलंकृत था। प्रोपीलिया तक संगमर्मर की चौड़ी सीढ़ियां जाती थीं।

पेरीक्लीज के समय में निर्मित तीसरी विशाल इमारत ओडियन थी, जो सांगीतिक और काव्य प्रतियोगिताओं के लिए अभीष्ट रंगशाला थी। अन्य रंगशालाओं के विपरीत ओडियन में बेहतर ध्वनिक प्रभाव पैदा करने के लिए उसे छतदार बनाया था। इसे पारसीकों से छीने क्षयार्ष के तंबू की अनुकृति करके बनाया गया था। दंतकथाओं के अनुसार ओडियन की ढलवां छत पारसीक जहाजों के मस्तूलों से निर्मित शहतीरों पर टिकी हुई थी। इस तरह ओडियन यूनान की पारसीक आक्रमण से मुक्ति का स्मारक भी था।

दर्शन, साहित्य और कला के क्षेत्रों में प्राचीन यूनानियों की उपलब्धियां मानवजाति की सांस्कृतिक थाती का एक अक्षय अंग हैं।

छठा अध्याय

मक़दूनिया का उदय। सिकदर महान का साम्राज्य

चौथी सदी ई० पू० के मध्य मे मकदूनिया

ई० पू० चौथी सदी क मध्य मे एक नये बाल्कन राज्य न प्रमुखता मे आना शुरू किया। यह राज्य मकदूनिया (मैसीडोनिया) था, जिसे आगे चलकर यूनान तथा मध्य पूर्व पर प्राधान्य के सघर्ष म फारस का एक शक्तिशाली प्रतिद्वद्वी बन जाना था।

अपनी आर्थिक तथा राजनीतिक सरचना मे मकदूनिया अन्य यूनानी राज्यो मे अत्यधिक भिन्न था। वह समुद्र से दूर स्थित था और बहुत समय तक न विदशी व्यापार कर सका और न ही उपनिवश स्थापित कर सका। इसके परिणामस्वरूप मकदूनिया यूनान के अन्य भागो से काफी पिछडा हुआ था – वह एक कृषिप्रधान देश था और उसकी आबादी का भारी बहुलाश किसाना का ही था।

पलोपोनिशियाई युद्ध के बाद मकदूनिया ने तेजी से यूनानी सभ्यता को आत्मसात करना शुरू किया। लेकिन मकदूनिया ने यूनान से इतना औद्योगिक प्रविधियो, व्यापार और सस्कृति को नही ग्रहण किया जितना कि सैन्य नैपुण्य को। फिलिप द्वितीय (३५६-३३६ ई० पू०) को एक शक्तिशाली सेना का निर्माण करने और प्रसिद्ध "मकदूनी व्यूह" (फैलैक्स) का प्रवर्तन करने का श्रेय प्राप्त है। बख्तरबद पैदल सेना (होपलीतीज़) को १६ २० कतारो मे व्यवस्थित किया जाता था और योद्धा लब भाला (पाच मीटर तक के) से लैस होत थे और पिछली कतारवाले अपने भालो को अपन म आगे की कतारवालो के कधो पर टिकाये रखते थे। बड-बडे ढाला से सरक्षित बख्तरबद पैदलो की यह ठोस दीवार एक दुर्जेय शक्ति थी।

मकदूनी सना का गर्व भारी रिसाला था जिसम मकदूनी अभिजात (हतीरा अर्थात सम्राट क साथी) थे। मकदूनी सेना की एक और महत्वपूर्ण विशेषता थी उसका घेराबदी करन का तरह-तरह का साजसामान।

चौथी शताब्दी ई० पू० के मध्य तक मकदूनिया अपनी सशस्त्र सेनाओं की बदौलत उत्तरी बाल्कन में एक बड़ी शक्ति बन चुका था। एपिरस और थ्रेस के कुछ हिस्से को जीत लिया गया था और तभी से मकदूनिया यूनानी राज्यों के मामलों में एक निर्णायक भूमिका अदा करनेवाला था।

मकदूनिया और यूनान

यूनान के मामलों में फिलिप की दखलदाजी का आरम्भिक बहाना ३५५ ई० पू० में थीब्ज और छोटे से राज्य फोसिस में छिड़ा युद्ध था, जिसमें अथेंस भी खिंच आया था।

फिलिप द्वितीय ने फोसिसियों को बुरी तरह पराजित किया और सारे *उत्तरी यूनान का स्वामी बन गया। वह थेसली, कल्सीदीस प्रायद्वीप के अधिकांश* और लगभग बोसफोरस तक थ्रेस के दक्षिणी तट को भी जीतने में सफल हो गया। इस प्रकार मकदूनिया एक समुद्री शक्ति भी बन गया। अब वह यूनान में काले सागर के मुख्य जलमार्गों को नियंत्रित कर सकता था।

जो अकेला यूनानी राज्य अब भी किसी हद तक मकदूनिया के फिलिप का प्रतिरोध कर सकता था, वह अथेंस था। लेकिन स्वयं अथेंस में भी प्रतिद्वंद्वी गुट थे। मकदूनियापक्षी गुट के समर्थकों के मत में फिलिप के साथ सन्धि ही सतत आंतरिक कलह और वैर को समाप्त करने का एकमात्र तरीका था – फिलिप के अधीन यूनानी ऐक्यवद्ध हो सकते थे और फारस के खिलाफ "जिहाद" शुरू कर सकते थे, जिसमें "मंदिरों के अपवित्रीकरण" के प्रतिशोध के अलावा भारी लूट भी हाथ लग सकती थी। मकदूनियाविरोधी गुट का नेता प्रसिद्ध वक्ता दीमोस्थीनीज था। उसने बताया कि फिलिप के साथ सन्धि का मतलब स्वतंत्रता, स्वाधीनता और लोकतंत्र का अंत होगा। दीमोस्थीनीज एक शक्तिशाली मकदूनियाविरोधी संघ बनाने में सफल हो गया, जिसमें थीब्ज, कोरिंथ तथा कुछ अन्य राज्य भी अथेंस के साथ शामिल हो गये।

इस प्रश्न का निर्णय अगस्त, ३३८ ई० पू० में बिओशिआ में खैरोनिया के युद्ध में हुआ, जिसमें मकदूनी व्यूह ने अपनी ताकत का परिचय दिया और यूनानियों को बुरी तरह हार खानी पड़ी। मकदूनी सेना के बायें पहलू की कमान फिलिप के बेटे सिकंदर (अलक्जेंडर) के हाथ में थी, जो सिर्फ १८ साल का ही था। इस विजय के बाद फिलिप ने कोरिंथ में सर्व-यूनानी सम्मेलन का समायोजन किया, जिसमें महत्वपूर्ण निर्णय किये गये। सभी यूनानी राज्यों का संश्रय स्थापित किया गया और परस्पर युद्धों को निषिद्ध कर दिया गया। यूनानी राज्यों के महासंघ ने मकदूनी राजा

र साथ स्थायी रक्षात्मक तथा आक्रामक संश्रय संपन्न किया और
के साथ युद्ध करने का निश्चय किया गया।

फिलिप द्वितीय ने इस नये युद्ध के लिए सर्वतोमुखी तैयारियां
शुरू कर दिया। ३३६ ई० पू० में उसकी हरावल सेनाओं ने हेलसपान
पार किया और एशिया ए कोचक के प्रदेश पर पांव जमा लिये। फार
साथ युद्ध शुरू हो गया। लेकिन इसी समय फिलिप की हत्या कर दी ग

सिकंदर का पूर्वी अभियान

गद्दी पर बैठने के समय सिकंदर २० साल का था। लेकिन यह
लेना गलत होगा कि वह अपने सामने प्रस्तुत भूमिका का निष्पादन
के योग्य नहीं था। बचपन से ही वह अपने पिता के साथ युद्ध में गया
और अब तक कुशल सेनानायक बन चुका था। उसने अपने परामर्श
और शिक्षक अरस्तू से अच्छी शिक्षा भी प्राप्त की थी। सिकंदर मार्ि
का बड़ा अनुरागी था और 'ईलियद' का अच्छा जानकार था और अखि
उसका प्रिय नायक था।

अपने पिता की रहस्यमय और अप्रत्याशित हत्या के बाद सिक
जब सिंहासन पर बैठा तो उसने अपने को बड़ी कठिन परिस्थिति में पाय
फिलिप की मृत्यु का समाचार पहुंचते ही यूनानी नगरों में उपद्रव शुरू
गये। अथेंस में मकदूनियाविरोधी गुट ने – दीमोस्थीनीज अभी जीवित था
फिर सिर उठाया और थीब्ज में भी विद्रोह फूट पड़ा। लेकिन युवा सम्र
ने सभी आवश्यक कदम उठाकर और कभी-कभी तो निर्मम उपायों द्वा
(जैसे थीब्ज का विनाश और उसके निवासियों का दासों की तरह ब
जाना) मकदूनी शासन के विरुद्ध सारे प्रतिरोध का अंत कर दिया।

३३४ ई० पू० में सिकंदर ने अपने विख्यात पूर्वी अभियान का समार
किया। उसकी सेना बहुत बड़ी नहीं थी – कोई ३०,००० पैदल ५००
अश्वारोही और १५०-१६० जहाजों का बेड़ा। सिकंदर की सेना ने हेलसपा
को पार किया और फिर एशिया ए कोचक में होकर बढ़ना शुरू किया
पारसीकों के साथ पहली लड़ाई ग्रनीकस नदी के तट पर हुई। यद्यपि सिकं
को नदी पारसीक हमले को झेलते हुए पार करनी पड़ी थी, फिर भी व
शत्रु को हराने में सफल रहा और इस तरह उसने एशिया में अपना रास्त
खोल लिया। इसके बाद उसने तट के साथ-साथ दक्षिण की तरफ बढ़ते हु
यूनानी नगरों को पारसीक आधिपत्य से मुक्त किया।

३३३ ई० पू० में सिकंदर को एशिया ए कोचक के दक्षिण पूर्वी भाग
में इसस नगर के निकट फारस के शाह दारा तृतीय की मुख्य सेनाओं क

सामना करना पडा। फारसी सेनाए सिकदर की फौजो से बहुत अधिक थी और इसलिए उसन एक साहसपूर्ण चाल चली। वह अपनी हलकी पैदल सेना और रिसाले को दारा की फौज की बगल से निकालते हुए बहुत आगे ले गया और उस पर पीछे की तरफ से हमला किया। इस तरह उसने पारसीको को घेरने और बुरी तरह पराजित करने म सफलता पा ली। दारा को कैद मे पडन स बचने के लिए भाग जाना पडा।

सिकदर महान। लिसीपस द्वारा निर्मित मूर्ति

इसक बाद सिकदर फिनीशियाई तट की तरफ चल दिया और टायर को सर करने क बाद वह मिस्र म जा घुसा। यहा उसने अपने को फारसियो से मिस्रियो का उद्धारकर्त्ता घोषित किया और पुरोहितो ने उसे भगवान अमोन का बेटा और फराऊनो का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया।

३३१ ई० पू० मे सिकदर फिर एशिया की गहराई म जा घुसा और उसने निनवह के पास गौगामेला नामक स्थान पर दारा के विरुद्ध अपना अतिम बडा युद्ध किया। एक बार फिर पारसीको की हार हुई और दारा को भागना पडा। दारा का पीछा करते हुए सिकदर की सेना फारस म गहराई तक घुस गयी और रास्ते म उसने तीना राजधानियो – बाबुल सूसा और पर्सीपोलिस पर कब्जा कर लिया। इन नगरो मे सिकदर के हाथ बेशुमार खज़ाना लगा। बाबुल मे उसने अपने आपको शान के साथ फारस का सम्राट उदघोषित किया। दारा ओर बाद म उसके क्षत्रपो का पीछा करत हुए सिकदर ने आक्सस नदी (वर्तमान आमू दरिया) को पार किया और इस तरह वर्तमान उज्बेकिस्तान और ताजिकिस्तान के प्रदेश म प्रवश किया। यहा उसने कोई दो साल बिताये (३२७ ई० पू० तक) और इसके बाद भारत की कल्पनातीत सपदा की गाथाओ से मोहित होकर उसन उत्तरी भारत पर

हमला किया। उसने यहा भारतीय राजा पुरु (पारस) की सेनाओ को एक युद्ध मे पराजित किया जिसमे, प्रसगवश, यूनानियो और मकदूनियो दोनो का ही पहली बार हाथियो से सामना होनेवाला था।

सिकदर की सेना सिधु की एक बायी सहायक नदी तक पहुच गयी थी कि तभी घटनाओ ने एक अत्यत अप्रत्याशित मोड लिया। उसकी सेनाओ ने जिन्होने अभी तक तनिक भी अवज्ञा का प्रदर्शन नही किया था, आगे बढने से हठपूर्वक इन्कार कर दिया। दो दिन के विचार विमर्श के बाद सिकदर को उनकी बात को मानना और देश की तरफ लौटने का आदेश देना पड़ा। वापसी यात्रा दो साल चली। सेनाओ का एक भाग समुद्री मार्ग से गया और शेष फारस की खाडी के तट के साथ-साथ। दोनो हिस्से ३२४ ई० पू० मे बाबुल मे फिर मिल गये।

इस प्रकार सिकदर के दस वर्ष लबे पूर्वी अभियान का अत हुआ। इसकी बदौलत उसने पश्चिम मे एड्रियाटिक सागर से लेकर पूर्व मे भारत तक और उत्तर मे काकेशिया की तराइयो से लेकर दक्षिण मे नील के मध्यवर्ती प्रदेश तक फैले एक विराट साम्राज्य की स्थापना कर डाली। लेकिन सिकदर का अपनी इस अभूतपूर्व शक्ति का कोई बहुत समय उपभोग नही करना था – अपनी वापसी के अगले ही साल ३२३ ई० पू० मे ३२ वर्ष की अवस्था मे उसकी मृत्यु हो गयी और उसके तुरत ही बाद उसका विराट साम्राज्य छिन्न भिन्न होने लगा।

सिकदर की विजयो का महत्व। यूनान प्रभावित युग

पारसीक सेना पर सिकदर महान की विजय के कारण पूर्णत स्पष्ट और तर्कसगत है। एक अतीव प्रतिभाशाली सैन्य नेता द्वारा सचालित सुसगठित यूनानी मकदूनी सेना को भाडे के सिपाहियो सहित अलग अलग जातियो और कबीलो के पचमेल से बनी शत्रु सेनाओ पर पार पाने मे कोई ज्यादा कठिनाई का सामना नही करना पडा। सच तो यह है कि विराट पारसीक साम्राज्य किसी भी तरह भीतर से एक सुसहत साम्राज्य नही था – वह बाहुशक्ति के मिट्टी के पैरोवाले दानव का एक आदर्श उदाहरण था।

सिकदर ने पारसीक साम्राज्य को हथियारो के बल पर दबा तो दिया पर एक सयुक्त केंद्रीकृत राज्य के रूप मे उसका सुदृढीकरण करने का कार्य उसके भी बूते के बाहर का सिद्ध हुआ। पारसीक साम्राज्य मे समाविष्ट विभिन्न राज्यो तथा प्रदेशो मे कोई आतरिक आर्थिक या राजनीतिक एकता

नही थी। अत सिकदर महान का साम्राज्य कुछ ही समय के भीतर उसके उत्तराधिकारियो मे लडाइयो के परिणामस्वरूप छिन्न-भिन्न हो गया। इसके बाद जिन मुख्य राज्यो को स्वतत्र अस्तित्व शुरू करना था, वे ये मिस्र जहा तोलेमी राजवश ने अपना शासन स्थापित किया, शामी साम्राज्य (जिसमे शाम, फिलिस्तीन, वावुल और सिधु नदी तक का सारा भूतपूर्व पारसीक साम्राज्य सम्मिलित था), जहा सेल्यूकसी राजवश ने अपनी सत्ता जमायी और अत मे स्वय मकदूनिया, जिसने यूनान और एशिया ए कोचक के तट पर अपने प्राधान्य को बनाये रखा और जो अतीगोनस गोनातस तथा उसके उत्तराधिकारियो के हिस्से मे आया। इन सभी राजवशो के सस्थापक, तोलेमी, सेल्यूकस और अतीगोनस गोनातस सिकदर के सेनानायक और उत्तराधिकारी थे।

यह सोचना गलत होगा कि क्योकि सिकदर का साम्राज्य अल्पकालिक सिद्ध हुआ, इसलिए उसके पूर्वी अभियान के कोई दूरगामी ऐतिहासिक परिणाम नही निकले। इसकी उलटी बात ही सच है – सिकदर की मृत्यु से लेकर यूनान तथा मध्य पूर्व पर रोमन विजय तक का काल सामान्यत यूनान प्रभावित युग (हेलेनिस्टिक युग) *के नाम से जाना जाता है। मध्य-पूर्व* पर यूनानी प्रभुत्व की स्थापना और अर्थतत्र राजनीतिक सगठन तथा सस्कृति के क्षेत्रो म यूनानी तथा पूर्वी सभ्यताओ के पारस्परिक प्रभावो की वात करते समय हम यूनानी प्रभाव – यूनानियत – या हेलेनिज़्म शब्द का प्रयाग करते है।

यूनानियत निस्सदेह एक प्रगतिशील कारक था। यूनानी प्रभाव क काल मे नगरो की तेज़ी के साथ वृद्धि हुई, जो व्यापार और उन्नत उद्योग के केद्र वन गये। मध्य-पूर्व ने पश्चिमी भूमध्य सागर तथा भारत के जरिये सुदूर पूव के साथ घनिष्ठतर आर्थिक तथा सास्कृतिक सबध स्थापित किय। दोना सस्कृतियो के वीच अन्योन्य प्रभाव विशेषकर फलदायी सिद्ध हुआ। कई यूनान प्रभावित राज्यो मे वौद्धिक तथा सास्कृतिक क्रियाकलाप मे चढाव आया। सेल्यूकसी राज की राजधानी अतिओक और तोलेमियाई मिस्र की राजधानी सिकदरिया (अलेक्ज़ेड्रिया) जैसे महत्वपूर्ण वैज्ञानिक तथा कला केद्र पैदा हुए। सिकदरिया मे एक असाधारण वैज्ञानिक सस्था की स्थापना की गयी जिसे इस नगर को विश्वव्यापी ख्याति दिलवानी थी। इसे म्यूज़ियम (म्यूज़ो – कलादेवियो – का मदिर) कहते थे और इसमे एक विशाल पुस्तकालय तथा दुलभ वस्तुओ और कलाकृतियो का विराट सकलन था। इसे विद्वानो की मिलनस्थली की तरह उपयोग मे लाया जाता था। यहा विद्वानो की बैठके और वादविवाद हुआ करते थे। यूनान-प्रभावित काल ने ससार को कई श्रेष्ठ गणितज्ञ खगोलज्ञ, भूगोलज्ञ दिये, जैसे यूकलिद एरतोस्थनीज आदि

मिदीज़ हिप्पाक्स और हीरा। इस काल म यूनानी भाषा भूमध्य सागर क समस्त पूर्वी तट की सपर्क भाषा – लिग्वा फ्रका – बन गयी और यह तथ्य भी यूनान प्रभावित दशो की सास्कृतिक एकता के सवर्धन मे सहायक हुआ।

आर्थिक और सास्कृतिक क्षेत्रों म यूनान प्रभावित राज्यो की इन सभी उपलब्धिया ने सारे भूमध्यसागरीय देशो के एकीकरण का पथ प्रशस्त कर दिया। इस कार्य को शीघ्र ही रोम द्वारा सिद्ध किया जाना था, जिसक साम्राज्य को अतत भूमध्य सागर क्षेत्र के सभी देशा को अपन म सम्मिलित कर लेना था।

सातवा अध्याय

रोमन गणराज्य

प्रारंभिक काल

रोमन राज्य का विकासस्थल भूमध्य सागर के मध्य भाग म स्थित एपिनी (एपेनाइन) प्रायद्वीप था, जो निकटस्थ सिसली के टापू के साथ यूरोप और अफ्रीका के बीच मानो एक प्राकृतिक सेतु का निर्माण करता है। एपिनी प्रायद्वीप का तट बाल्कन प्रायद्वीप के तट की अपेक्षा कम कटा-फटा हुआ है और उसम सरक्षित खाडिया भी कम हे। इटली के तट के पासवाले टापू ईजियन सागर के टापुओ की अपेक्षा सख्या मे कम ह और उनमे उतना वैविध्य भी नही है।

यद्यपि एपिनी प्रायद्वीप यूनान की भाति ही पर्वतीय प्रदेश है, फिर भी यहा मध्य म केवल एक ही पर्वतश्रेणी है जिसके दोनो ओर कृषि तथा पशुपालन के उपयुक्त चौडी घाटिया है। इटली की जमीन यूनान की अपक्षा कृषि के कही अधिक अनुकूल है और प्राचीन काल मे इटली को हमेशा ही एक लाक्षणिक कृषिप्रधान दश माना जाता था। उसके मुख्य प्राकृतिक ससाधन लक्डी और धातु (विशेषकर तावा और टीन) थे।

प्राचीन काल मे एपिनी प्रायद्वीप भाति भाति के लोगो का निवासस्थान था। यहा हम सिर्फ दो मुख्य क्बायली समूहा का ही उल्लेख करेगे। उत्तर म विभिन्न केल्ट (या गाल) जन रहते थे। कुछ और दक्षिण म एत्रुरियाई (एत्रस्कन) जन रहते थे, जिन्होंने प्रारभिक इतालवी इतिहास म महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। प्रायद्वीप के मध्य मे अनक इतालीय जन रहते थे, जिनमे लैटिन अथवा लातीनी भी थे, जिनके प्रदेश म रोम नगर स्थित था। फिर दक्षिण म यूनानी तत्वो का प्राधान्य था और कई यूनानी उपनिवश थ जिनम से अनक समृद्ध और खुशहाल नगर थ जिसके कारण दक्षिणी इटली और सिसली वा मग्ना ग्रीसिआ' (वृहत्तर यूनान) क नाम से भी पुकारा जाता था।

एत्रुरियाई पहेली

इटली मे निवास करनेवाले इन लोगो और जनो मे सबस रहस्यमय थे। उनका मूल आज भी एक अनसुलझी पहेली बना हुआ है। एत्रुरियाइ एक शक्तिशाली जाति थी और उसने लगभग सार ही पर अपना प्राधान्य स्थापित कर लिया था (सातवी छठी शताब्दी ई० पू० विशाल एत्रुरियाई नगरो दुर्ग प्राचीरो, अभिजातो के मकानो और सप समाधियो के खडहर आज भी देखे जा सकते है।

पुरातात्विक खोज यह सकेत देती है कि एत्रुरियाई लाग मुख्यत कृ जीवी थे। एत्रुरियाई कारीगर अपने धातु के काम, दर्पणो और कलशो अ मोने तथा हाथीदात के आभूषणो के लिए भी प्रसिद्ध थे। व यूनानियो, त्रियो तथा अन्य जातियो के साथ खूब व्यापार किया करते थे। उन समुद्री व्यापार और दस्युता साथ-साथ ही चलते थे और एत्रुरियाई जलदस की वजह स मार भूमध्य सागर प्रदेश मे दहशत छायी रहती थी।

चौथी सदी ई० पू० के एत्रुरियाई दासस्वामी लोग थे, जिनके राजा और अभिजात तत्र और दासो तथा असामी काश्तकारो की बडी आ थी। एत्रुरियाई शक्ति क चरमोत्कर्ष के समय उनके बारह नगरो के बीच स की स्थापना की गयी थी।

रोम बसाया जा चुका था, मगर वह एत्रुरियाई प्रभुत्व म था। स और छठी सदी ई० पू० मे रोम पर एत्रुरियाई राजाओ के एक रा का शासन था और नगर की आबादी मे कई एत्रुरियाई कारीगर भी थे- वे सामाजिक तथा घरेलू जीवन मे बरसो बाद तक एत्रुरियाई रीति रि का बोलबाला बना रहा।

लेकिन एत्रुरियाई शक्ति जल्दी ही क्षीण होने लगी। छठी श ई० पू० क अत म एत्रुरियाई नगरो के बीच आपसी युद्ध छिड गया एत्रुरियाइयो को दक्षिणी इटली मे यूनानियो के साथ लडाइयो म भी चोट खानी पडी। एत्रुरियाई राज्य पर अतिम प्रहार रोम के नेतृत्व म इत कबीलो क सफल विद्रोह ने किया।

पुरातात्विक उत्खनना के फलस्वरूप और कलाकृतियो के अलावा मख्या म एत्रुरियाई लेख (कुल मिलाकर लगभग नौ हजार) भी म आय है। लेकिन अभी तक उन्हे पढने क प्रयासो म बहुत सीमित स ही मिल पायी है और इस प्रकार एत्रुरियाइयो की भाषा, उनक गी समस्या और उनके आकर्षक इतिहास क ब्यौरे का स्पष्टीकरण अभी बाकी ही है।

रोम की स्थापना

रोम को, जिसे प्राचीन काल म भी ' सनातन नगर ' कहा जाता था कैसे और कब बसाया गया और इस सुख्यात काय का श्रेय किसको जाता है? इस प्रश्न का कोई सतोपजनक उत्तर नही दिया जा सकता और हमे पुरान ज़मान की एक प्रसिद्ध दतकथा पर ही निर्भर करना पडता हे। यह कथा बताती है कि किस तरह अल्बा लोगा के एक राजा को उसके भाई न गद्दी स उतार दिया था और उसकी बेटी रेआ सिल्विआ को वस्ता की पुजारिणी नियुक्त किया था। वस्ता की पुजारिणी होने स रेआ को ब्रह्मचर्य का व्रत लेना पडा। लेकिन कुछ ही समय बाद उसने जुडवा बेटो को जन्म दिया जिसस वृद्ध राजा ने आदेश दिया कि उन्ह नदी मे डुबो दिया जाये। एक गुलाम न उन्ह टोकरी मे रखकर नदी म बहा दिया। लेकिन बच्चे डूबे नही बल्कि अजीर के एक पेड के नीचे किनारे पर आ लग जहा एक मादा भेडिया न उन्ह स्तनपान कराया। इसके बाद एक गडरिया बच्चो को उठाकर ले गया और उनका पालन पोपण करन लगा। उसन उनका रोमूलस तथा रीमस नाम रखा।

जब बच्चे बडे हुए, तो उनके जन्म का रहस्य जल्दी ही सब जगह फैल गया। उन्होंने अल्बा लोगा म गद्दी छीननेवाले राजा का तख्ता पलट दिया और अपन नाना को फिर सिहासन पर बैठा दिया और उससे उन्होन एक नया नगर बसान की आज्ञा मागी। नगर की नींव डालते समय दोनो भाइयो म भयकर झगडा छिड गया और रोमूलस ने रीमस को जान स मार डाला। रोम के बसाये जाने के बारे मे यही दतकथा है। दतकथा के ही अनुसार नगर का नामकरण रोमूलस पर हुआ था और वही उसका पहला राजा बना था। प्राचीन रोमन इतिहासकारो के अनुसार रोम की बुनियाद २१ अप्रैल, ७५३ ई० पू० को डाली गयी थी, लेकिन इस तिथि की प्रामाणिकता को सिद्ध नही किया जा सकता और कामचलाऊ सूचक ही माना जाना चाहिए।

रोम का राज्य

रोमन इतिहास के प्रारभिक काल को अकसर राजाओ का काल कहा जाता है, क्योकि रोमन परपरा के अनुसार रोम म उस समय राजतत्र था। रोमूलस के बाद छ राजा हुए, जिनमे से अतिम तीन एत्रुरियाई जाति के तारक्विन कबीले के वशज थे। उनके राज्यकाल म रोम एक खासा बडा शहर बन गया था और उसने सारे लातीयम (तिरेनी सागर के तटवर्ती मध्य इटली) को जीतन म सफलता प्राप्त कर ली थी।

रोम के सबसे अंतिम से पहलेवाले राजा सर्वियस तूलियस को इतिहास में एक प्रसिद्ध सामाजिक सुधार का प्रवर्तनकर्ता माना जाता है, जिसके अनुसार समस्त रोमन आबादी और प्रदेश को चार जिलों अथवा कबीलों में विभाजित कर दिया गया था। आबादी को भी संपत्ति और आय के अनुसार पांच वर्गों में बांट दिया गया। सबसे निर्धन नागरिक इन सवर्गों के पूर्णतः बाहर थे और वे प्रोलीतारी कहलाते थे।

अनिवार्य सैनिक सेवा और राजनीतिक अधिकारों के उपभोग के मामले में वर्गों में काफी वैभिन्य था। चूंकि प्रत्येक नागरिक को हथियार अपने ही खर्च से जुटाने होते थे, इसलिए यह स्वाभाविक था कि सिर्फ उच्चतम वर्ग के सदस्य ही अपने लिए पूरे साजसामान (तलवार, ढाल, भाला और जिरह-बख्तर) की व्यवस्था कर सकते थे और घोड़ा रख सकते थे। यही वर्ग राष्ट्रीय लामबंदी के लिए अधिकांश सेंतूरिआ (शतसैनिक दल) उपलब्ध करवाता था और सभी राजनीतिक विशेषाधिकारों का भी उपभोग करता था। जनसभा में लोगों का प्रतिनिधित्व सेंतूरिआ करते थे और प्रत्येक सेंतूरिआ को एक मत प्राप्त था। चूंकि अधिकांश सेंतूरिआ उच्चतम सामाजिक वर्ग से ही आते थे, इसलिए यह वर्ग जनसभा में बहुमत के लिए सदा आश्वस्त रह सकता था।

छठी शताब्दी ई० पू० के अंत में रोम में राजनीतिक जीवन का स्वरूप बदल गया। अंतिम राजा को, जो अपने दर्प और अत्याचारी स्वभाव के कारण घमंडी तारक्विन कहलाता था, निर्वासित कर दिया गया और राजतंत्र का उन्मूलन कर दिया गया। यह माना जाता है कि यह घटना एत्रुरियाई शासन के विरुद्ध विजयातक विद्रोह के साथ-साथ ही हुई थी। इसके बाद रोम में एक गणराज्य की स्थापना की गयी, जिसका इतिहास दीर्घकालिक होनेवाला था।

गणराज्य का प्रारंभिक इतिहास

रोमन गणराज्य का सामाजिक तथा राजनीतिक ढांचा

रोमन राजाओं के राज्यकाल और गणराज्य के प्रारंभिक काल में गोत्र प्रणाली के अवशेष खासे मजबूत थे। राजनीतिक शक्ति गोत्रीय अभिजातों के हाथों में थी, जो कुलीन (पैट्रिशियन) कहलाते थे। आम तौर पर सबसे बढ़िया जमीन उन्हीं के पास होती थी, जिसका मतलब यह था कि कुलीन न सिर्फ अभिजात गोत्रीय थे, बल्कि सबसे धनवान नागरिक भी थे। अधिकांश

रोम के सबसे अन्तिम से पहलेवाले राजा सर्वियस तूलि
मे एक प्रसिद्ध सामाजिक सुधार का प्रवर्तनकर्ता माना जाता।
समस्त रोमन आबादी और प्रदेश को चार जिलो अथवा क
कर दिया गया था। आबादी को भी सपत्ति और आय के
मे बाट दिया गया। सबसे निर्धन नागरिक इन सवर्गो
और वे प्रोलीतारी कहलाते थे।

अनिवार्य सैनिक सेवा और राजनीतिक अधिकारो वे
म वर्गो मे काफी वैभिन्य था। चूकि प्रत्येक नागरिक क
खर्च से जुटान होते थे, इसलिए यह स्वाभाविक था कि
क सदस्य ही अपने लिए पूरे साजसामान (तलवार
जिरहबख्तर) की व्यवस्था कर सकते थे और घोडा
वर्ग राष्ट्रीय लामबदी के लिए अधिकाश सेतूरिआ (शत
करवाता था और सभी राजनीतिक विशेषाधिकारो व
था। जनसभा मे लोगो का प्रतिनिधित्व सेतूरिआ करते
को एक मत प्राप्त था। चूकि अधिकाश सेतूरिआ
मे ही आते थे इसलिए यह वर्ग जनसभा मे बहुमत
रह सकता था।

छठी शताब्दी ई० पू० के अत मे रोम मे राज
बदल गया। अतिम राजा को जो अपने दर्प और
कारण घमडी तारक्विन कहलाता था, निर्वासित कर
का उन्मूलन कर दिया गया। यह माना जाता है
शासन के विरुद्ध विजयातक विद्रोह के साथ साथ,
रोम म एक गणराज्य की स्थापना की गयी जिर
होनेवाला था।

नाम) उत्तरी इटली के रास्ते रोम पर आ चढे। अल्लिआ नदी के तट पर हुए युद्ध मे रोमनो को करारी हार खानी पडी और गालो न बिना किसी विशेष कठिनाई के रोम को अपने अधिकार म ले लिया – सिर्फ कपितोल पहाडी के सिवा, जिसकी रक्षा श्रेष्ठतम रोमन फौजे कर रही थी। एक बार गालो न रात मे कपितोल पहाडी को सर करने की कोशिश की मगर जूनो के मदिर के पालतू हसो न डरकर शोर मचा दिया जिसस रक्षक सचेत हो गये और हमले को विफल करन म सफल रहे। इसी घटना स यह प्रसिद्ध कहावत पैदा हुई है कि "रोम को हसो न बचाया था।

चौथी शताब्दी के उत्तरार्ध म रोमनो न मध्य इटली पर प्रभुत्व स्थापित करन के लिए भीषण सघर्ष किया। उन्हे अपने भूतपूर्व मित्रो, लातीनियो के खिलाफ लडना पडा और इतालियो के बडे सेमनीत कबीले मे तीन युद्ध करने पडे। तथाकथित तीसरे समनीती युद्ध मे रोमनो को सिर्फ सेमनीतो ही नही, बल्कि एत्रुरियाइयो के विरोध का भी सामना करना पडा। इतालीय कबीलो के सहबध के विरुद्ध युद्ध मे अनेक उतार-चढाव आये लेकिन अत म रोमन विजयी हुए और उन्होने मध्य इटली को अपन वश मे कर लिया।

ई० पू० तीसरी सदी म इटली पर प्रभुत्व स्थापित करने के युद्ध का आखिरी दौर शुरू हुआ। अब महना ग्रीसिआ के नगरो की बारी थी। उनम से कुछ रोम के साथ सहबध मे शामिल हो गये और उन्होने उसके नेतृत्व को स्वीकार कर लिया लेकिन दक्षिणी बडे नगरो म से एक तरेतम न रोमन आक्रमण का प्रतिरोध करने का फैसला किया। तरेतम क निवासियो न उत्तर-पश्चिमी यूनान मे एपिरस के राजा पीरस से सहायता मागी। वह सिकदर महान का एक सुदूर वशज था और सिकदर जैसी ही ख्याति अर्जित करन का सपना देखा करता था। वह सहर्ष इटली को जीतने के लिए चल पडा।

२८० ई० पू० मे पीरस और उसकी सेना इटली मे उतरी। रोमनो के खिलाफ पहली लडाई मे उसने जोरदार जीत हासिल की। इसके बाद पीरस ने उत्तर की तरफ कूच किया और कुछ ही बाद आसकुलम म उसका रोमनो स फिर सामना हुआ, जहा उसने दुबारा विजय प्राप्त की। लेकिन यह युद्ध इतना भयकर था और पीरस को इतनी भारी क्षति उठानी पडी कि कहा जाता है कि वह चिल्ला उठा "लेकिन हमारी ऐसी एक जीत और हुई, तो हम खत्म ही हो जायगे। (इसीसे पीरसी विजय या पीरिक विक्टरी का मुहावरा बना है)। इस लडाई के बाद पीरस अपनी सेनाओ के साथ सिसली चला गया जहा उसने कुछ समय गुजारा पर फिर भी द्वीप को जीतन म असफल रहा। बाद मे वह इटली लौट आया और २७५ ई० पू० मे उसने बेनेवेतम मे रोमनो से अपना अतिम युद्ध किया जिसका अत पूर्ण पराजय म हुआ। इस प्रकार पीरस को इटली से वापस लौट जाना पडा। दो साल

मामान्यजनो का सबधविच्छेद ' है जब पूरे जिरह बख्तर म लैस हाकर सभी सामान्यजनो न रोम छोड दिया और "पवित्र पवत' (मास माकर) पर डेरा डाल दिया (४९४ ई० पू०)। सामान्यजनो क प्रस्थान न रोम की सैनिक शक्ति को बेतरह कमजोर कर दिया और कुलीन तरह-तरह की रिआयत देन क लिए विवश हुए। एक नया महत्वपूर्ण पद – जन रक्षक (जनरक्षक) – स्थापित किया गया जिसका कार्य सामान्यजनो क हितो और अधिकारो की रक्षा करना था। ये ट्रिब्यून (आरम्भ मे इनकी सख्या दो थी फिर पाच और बाद म दस तक हो गयी) सामान्यजन की कबायली जनसभा द्वारा चुन जात थ और उन्ह अन्य सभी अधिकारियो के आदेशो के विरुद्ध विरोध प्रदर्शित करने का अधिकार (निषेधाधिकार) प्राप्त था।

इस सघर्ष के दौरान सामान्यजनो न कुलीनो को धीरे धीरे नया-नया रिआयत देने क लिए मजबूर किया। तथाकथित द्वादश पट्टिका नियम प्रवर्तित किये गये (४५१ ४५० ई० पू०) और न्यायालयो को जो अनिवार्यत कुलीनो के हाथो म थे इन नियमो के अधीन कर दिया गया। कुछ समय बाद (४४५ ई० पू०) कुलीनो और सामान्यजनो के बीच विवाह वैध बना दिये गय। ३६७ ई० पू० म सामान्यजन कासुल पद क लिए पात्रताप्राप्त घोषित कर दिय गये (लिसीनियस और सक्सतियस के नियम) और आगे चलकर व गणराज्य म अन्य सभी उच्च पदो के भी पात्र हो गय। यह सब कुलीनो और धनी सामान्यजनो क अधिकारो के परोक्ष समकरण तथा दोनो समूहो के एकीकरण क बराबर था। रोम मे एक नया कुलीन सामान्यजनीन अभिजात वर्ग पैदा हो गया जो अमीर वग (नोबिलिटी) के नाम से विज्ञात हुआ। अमीर वग ने जल्दी ही सारी राजनीतिक शक्ति को अपन हाथ म ले लिया और सीनट उसकी चेरी हो गयी। लेकिन इस बीच निर्धन सामान्यजनो की विशाल सख्या को कुछ भी नही हासिल हुआ था और वे इस सघर्ष के दौरान कम और भी अधिक कगाल ही हो गय थे।

रोम का इटली पर अधिकार

५ वी शती ई० पू० क दौरान रोम लगभग निरतर युद्धो म उलझा रहा था। सीनट द्वारा उत्प्रेरित रोमन विदेश नीति अत्यधिक आक्रामक थी।

पाचवी सदी ई० पू० म रोम निकटवर्ती नगरो और वोलस्की और ईक्वी जैस पडोसी कबीलो स लडता रहा। इन युद्धो म विजय न रोम को टाइबर नदी के निचले भाग व लातिनी तट पर पूर्ण प्रभुत्व दिला दिया। य रोमनो की पहली सैनिक सफलताए थी। लेकिन चौथी सदी का शिरारम्भ दूसरी ही तसवीर पेश करती थी। ३९० ई० पू० म गाल (रोमनो द्वारा केल्टो को दिया

नाम) उत्तरी इटली के रास्ते रोम पर आ चढे। अल्लिआ नदी के तट पर हुए युद्ध मे रोमनो को करारी हार खानी पडी और गालो ने बिना किसी विशेष कठिनाई के रोम को अपने अधिकार मे ले लिया – सिर्फ कपितोल पहाडी के सिवा जिसकी रक्षा श्रेष्ठतम रोमन फौजे कर रही थी। एक बार गालो ने रात मे कपितोल पहाडी को सर करने की कोशिश की, मगर जूनो के मदिर के पालतू हसो ने डरकर शोर मचा दिया जिससे रक्षक सचेत हो गये और हमले को विफल करने मे सफल रहे। इसी घटना से यह प्रसिद्ध कहावत पैदा हुई है कि रोम को हसो ने बचाया था।

चौथी शताब्दी के उत्तरार्ध म रोमनो ने मध्य इटली पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए भीषण सघर्ष किया। उन्हे अपने भूतपूर्व मित्रो, लातीनियो के खिलाफ लडना पडा और इतालियो के वडे समनीत कवीले से तीन युद्ध करने पडे। तथाकथित तीसरे सेमनीती युद्ध मे रोमनो को सिर्फ सेमनीतो ही नही, बल्कि एत्रुरियाइयो के विरोध का भी सामना करना पडा। इतालीय कवीलो के सहबध के विरुद्ध युद्ध मे अनेक उतार चढाव आये, लेकिन अत म रोमन विजयी हुए और उन्होने मध्य इटली को अपने वश मे कर लिया।

ई० पू० तीसरी सदी मे इटली पर प्रभुत्व स्थापित करने के युद्ध का आखिरी दौर शुरू हुआ। अब ' मग्ना ग्रीसिआ ' के नगरो की बारी थी। उनमे से कुछ रोम के साथ सहबध मे शामिल हो गये और उन्होने उसके नेतृत्व को स्वीकार कर लिया लेकिन दक्षिणी वडे नगरो म से एक, तरेतम ने रोमन आक्रमण का प्रतिरोध करने का फैसला किया। तरेतम के निवासियो ने उत्तर-पश्चिमी यूनान म एपिरस के राजा पीरस से सहायता मागी। वह सिकदर महान का एक सुदूर वशज था और सिकदर जैसी ही ख्याति अर्जित करने का सपना देखा करता था। वह सहर्ष इटली को जीतने के लिए चल पडा।

२८० ई० पू० म पीरस और उसकी सेना इटली मे उतरी। रोमनो के खिलाफ पहली लडाई म उसने जोरदार जीत हासिल की। इसके बाद पीरस ने उत्तर की तरफ कूच किया और कुछ ही बाद आसकुलम म उसका रोमनो से फिर सामना हुआ जहा उसने दुबारा विजय प्राप्त की। लेकिन यह युद्ध इतना भयकर था और पीरस को इतनी भारी क्षति उठानी पडी कि कहा जाता है कि वह चिल्ला उठा 'लेकिन हमारी ऐसी एक जीत और हुई तो हम खत्म ही हो जायेगे।' (इसीसे पीरसी विजय या पीरिक विक्टरी का मुहावरा बना है)। इस लडाई के बाद पीरस अपनी सेनाओ के साथ सिसली चला गया, जहा उसने कुछ समय गुजारा, पर फिर भी द्वीप को जीतने मे असफल रहा। बाद मे वह इटली लौट आया और २७५ ई० पू० मे उसने बेनीवेतम म रोमनो से अपना अतिम युद्ध किया जिसका अत पूर्ण पराजय म हुआ। इस प्रकार पीरस को इटली स वापस लौट जाना पडा। दो साल

बाद तरेंतम ने रोमनो के आगे आत्मसमर्पण कर दिया, जिन्होने धीरे धीरे दक्षिणी इटली के अन्य नगरो को भी अपने नियत्रण मे लेने मे सफलता प्राप्त कर ली। पाचवी चौथी और तीसरी शताब्दियो मे रोमनो ने जो निरतर युद्ध किये उनके परिणामस्वरूप उन्होने सारे इटली को अपने वश मे कर लिया। इस प्रकार रोम एक प्रमुख भूमध्यसागरीय शक्ति बनने मे सफल हो गया। रोम की आकाक्षाए अब अपेनाइन प्रायद्वीप की सीमातो से आगे की ओर निर्देशित हो गयी थी और सारे ही भूमध्यसागरीय क्षेत्र पर नियत्रण पाने के लिए रोम का सघर्ष शुरू हो गया था।

भूमध्य सागर क्षेत्र पर प्रभुत्व के लिए रोम का सघर्ष

रोम और कार्थेज

जब रोमनो ने अपना ध्यान आगे एपेनी प्रायद्वीप की सीमाओ से आगे मोडा तो उनकी निगाह सबसे पहले सिसली पर पडी। एक प्राचीन इतिहासकार के शब्दो मे यह द्वीप बिलकुल पास ही एक ऐसी मूल्यवान और लुभावनी निधि थी जिसे मानो इटली से छीनकर अलग कर लिया गया हो।

लेकिन यहा रोमनो को एक अन्य शक्तिशाली दासस्वामी राज्य कार्थेज की सूरत मे एक गभीर प्रतिद्वद्वी का सामना करना पडा। कार्थेज नगर अफ्रीका के उत्तरी तट पर (ट्यूनिस की खाडी के निकट) स्थित था और दतकथाओ के अनुसार नवी सदी ई० पू० मे बसाया गया था। वह रोम से बहुत पहले ही एक महत्वपूर्ण भूमध्यसागरीय शक्ति बन चुका था। कार्थेज की आर्थिक शक्ति एक व्यापारिक केन्द्र के नाते उसकी भूमिका पर आधारित थी। अपनी अनुकूल भौगोलिक स्थिति की बदौलत कार्थेज सारे भूमध्यसागरीय प्रदेश मे कच्चे माल और तैयार सामानो का वितरण केंद्र बन गया था। इसके अलावा उसके पास उन्नत बागान थे — नगर के आसपास धनी कार्थेजियो की जमीनो पर हजारो गुलाम मशक्कत करते थे। उस समय कार्थेजी कृषि के उन्नत तरीको के लिए भी मशहूर थे।

व्यापार की उन्नति और कृषि के बढते हुए महत्व के फलस्वरूप कार्थेज मे राजनीतिक शक्ति जमीदारो और व्यापारियो के हाथो मे आ गयी थी। कार्थेजी राज्य का ढाचा गणराज्य जैसा था लेकिन चूकि देश मे बहुत ही कम स्वतत्र किसान थे इसलिए कार्थेजी सेना [illegible] पहले किसी भी प्रकार के दृढ आधार मे [illegible] थे। [illegible] मामूली भूमिका अदा करती थी। [illegible] जिनका काम

रोमन कोसुलो जैसा था और जिनके पास सेना तथा नौसेना की कमान भी थी। इसके अलावा रोमन सीनेट जैसी ३०० की परिषद भी थी, जिसमे स ३० की परिषद चुनी जाती थी, जो ३०० की परिषद की बैठको के बीच सारा अतरिम कार्य किया करती थी। कार्थेजियो के पास शक्तिशाली सेना और नौसेना थी। उनकी सेना की कमजोरी इस तथ्य मे निहित थी कि वह मुख्यत भाडे के सैनिको की बनी थी। तथापि उसके युद्ध-कौशल का स्तर ऊचा था और उसके पास युद्ध के उन्नत साधन भी थे, जैसे फौजी हाथी, घेरा डालने का सामान, आदि।

कार्थेजी सक्रिय उपनिवेशकार थे। उन्होने अफ्रीका के उत्तरी तट पर, दक्षिणी स्पेन मे और बेलिएरिक द्वीपो पर अपने अधीनस्थ उपनिवेश बसाये थे। कार्थेजी कोर्सिका तथा सार्डीनिया मे भी बस गये थे और रोम के साथ अपनी पहली टक्कर के समय उनका सिराकूज और मेसीना के सिवा लगभग सारे ही सिसली पर नियत्रण था। मेसीना पर अधिकार करने की कोशिशो के दौरान ही उनका रोम के साथ झगडा हुआ।

पहला और दूसरा प्यूनिक युद्ध

पहला प्यूनिक युद्ध (रोमन कार्थेजियो को प्यूनिक जन कहते थे) तेईस साल चला (२६४-२४१ ई० पू०)। पहली मुठभेडे सिसली मे हुई जहा रोमनो ने कई सफलताए प्राप्त की। लेकिन ये सफलताए निर्णायक नही थी, क्योकि रोमनो के पास बेडा नही था और इसलिए वे कार्थेजी समुद्री शक्ति से नही लड सकते थे। रोमनो ने जब बडा बना लिया और अपनी पहली समुद्री विजय प्राप्त कर ली तब जाकर ही वे अफ्रीका की भूमि पर भी युद्ध चलाने मे समर्थ हो सके। लेकिन इस पहले अफ्रीकी अभियान की तैयारी अच्छी तरह से नही की गयी थी और उसका अत पूर्ण असफलता मे हुआ।

युद्ध खिचता चला गया और लडाइया एक बार फिर सिसली पर केन्द्रित हो गयी। दोनो सेनाओ को इस सम-सतुलित युद्ध म आखिर तक जमकर लडना पडा, जिसका अत सिसली के पश्चिम मे ईगादियन द्वीपो के निर्णायक जलयुद्ध (२४१ ई० पू०) के बाद ही जाकर हुआ जिसम कार्थेजी बेडा अतिम रूप से पराजित हुआ। इसके बाद कार्थेजियो के पास सिसली रोम को देकर और भारी खिराज अदा करके शाति सधि सपन्न करने के अलावा और कोई चारा न रहा।

कुछ समय बाद रोमनो ने आक्रमण करके कोर्सिका तथा सार्डीनिया पर भी कब्जा कर लिया। लेकिन कार्थेजियो को इसे भी स्वीकार करने के लिए विवश होना पडा क्योकि इसी समय उनके देश मे भाड के सैनिको न बगावत

बाद तरेंतम ने रोमनों के आगे आत्मसमर्पण कर दिया, जिन्होंने धीरे धीरे दक्षिणी इटली के अन्य नगरों को भी अपने नियन्त्रण में लेने में सफलता प्राप्त कर ली। पाचवी, चौथी और तीसरी शताब्दियों में रोमनों ने जो निरतर युद्ध किये उनके परिणामस्वरूप उन्होंने सारे इटली को अपने वश में कर लिया। इस प्रकार रोम एक प्रमुख भूमध्यसागरीय शक्ति बनने में सफल हो गया। रोम की आकाक्षाए अब अपेनाइन प्रायद्वीप के सीमातो से आगे की ओर निर्देशित हो गयी थी और सारे ही भूमध्यसागरीय क्षेत्र पर नियत्रण पाने के लिए रोम का सघर्ष शुरू हो गया था।

भूमध्य सागर क्षेत्र पर प्रभुत्व के लिए रोम का सघर्ष

रोम और कार्थेज

जब रोमनो ने अपना ध्यान आगे एपेनी प्रायद्वीप की सीमाओ से आगे मोडा तो उनकी निगाह सबसे पहले सिसली पर पडी। एक प्राचीन इतिहासकार के शब्दो मे यह द्वीप बिलकुल पास ही एक ऐसी मूल्यवान और लुभावनी निधि थी जिसे मानो इटली से छीनकर अलग कर लिया गया हो।

लेकिन यहा रोमनो को एक अन्य शक्तिशाली दासस्वामी राज्य कार्थेज की सूरत मे एक गभीर प्रतिद्वद्वी का सामना करना पडा। कार्थेज नगर अफ्रीका के उत्तरी तट पर (ट्यूनिस की खाडी के निकट) स्थित था और दतकथाओ के अनुसार नवी सदी ई० पू० मे बसाया गया था। वह रोम से बहुत पहले ही एक महत्वपूर्ण भूमध्यसागरीय शक्ति बन चुका था। कार्थेज की आर्थिक शक्ति एक व्यापारिक केन्द्र के नाते उसकी भूमिका पर आधारित थी। अपनी अनुकूल भौगोलिक स्थिति की बदौलत कार्थेज सारे भूमध्यसागरीय प्रदेश मे कच्चे मालो और तैयार सामानो का वितरण केंद्र बन गया था। इसके अलावा उसके पास उन्नत बागान थे—नगर के आसपास धनी कार्थेजियो की जमीनो पर हजारो गुलाम मशक्कत करते थे। उस समय कार्थेजी कृषि के उन्नत तरीकों के लिए भी मशहूर थे।

व्यापार की उन्नति और कृषि के बढते हुए महत्व के फलस्वरूप कार्थेज मे राजनीतिक शक्ति जमींदारो और व्यापारियो के हाथो मे आ गयी थी। कार्थेजी राज्य का ढाचा गणराज्य जैसा था, लेकिन चूकि देश मे बहुत ही कम स्वतंत्र किसान थे, इसलिए कार्थेजी सविधान के लोकतात्रिक पहलू किसी भी प्रकार के दृढ आधार से रहित थे। जनसभा बहुत ही मामूली भूमिका अदा करती थी। अधिशासी अधिकार दो सुफीटो के पास थे जिनका काम

रोमन कोंसुलो जैसा था और जिनके पास सेना तथा नौसेना की कमान भी थी। इसके अलावा रोमन सीनेट जैसी ३०० की परिषद भी थी जिसमे से ३० की परिषद चुनी जाती थी, जो ३०० की परिषद की बैठको के बीच सारा अतरिम कार्य किया करती थी। कार्थेजियो के पास शक्तिशाली सेना और नौसेना थी। उनकी सेना की कमजोरी इस तथ्य मे निहित थी कि वह मुख्यत भाडे के सैनिको की बनी थी। तथापि उसके युद्ध कौशल का स्तर ऊचा था और उसके पास युद्ध के उन्नत साधन भी थे जैसे फौजी हाथी घेरा डालने का सामान, आदि।

कार्थेजी सक्रिय उपनिवेशकार थे। उन्होंने अफ्रीका के उत्तरी तट पर दक्षिणी स्पेन मे और बेलिएरिक द्वीपो पर अपने अधीनस्थ उपनिवेश बसाये थे। कार्थेजी कोर्सिका तथा सार्डीनिया मे भी बस गये थे और रोम के साथ अपनी पहली टक्कर के समय उनका सिराकूज और मेसीना के सिवा लगभग सारे ही सिसली पर नियत्रण था। मेसीना पर अधिकार करने की कोशिशो के दौरान ही उनका रोम के साथ झगडा हुआ।

पहला और दूसरा प्यूनिक युद्ध

पहला प्यूनिक युद्ध (रोमन कार्थेजियो को प्यूनिक जन कहते थे) तेईस साल चला (२६४-२४१ ई० पू०)। पहली मुठभेड सिसली म हुई जहा रोमनो ने कई सफलताए प्राप्त की। लेकिन ये सफलताए निर्णायक नही थी, क्योकि रोमनो के पास बेडा नही था और इसलिए वे कार्थेजी समुद्री शक्ति से नही लड सकते थे। रोमनो ने जब बेडा बना लिया और अपनी पहली समुद्री विजय प्राप्त कर ली, तब जाकर ही वे अफ्रीका की भूमि पर भी युद्ध चलाने मे समर्थ हो सके। लेकिन इस पहले अफ्रीकी अभियान की तैयारी अच्छी तरह से नही की गयी थी और उसका अत पूर्ण असफलता मे हुआ।

युद्ध खिचता चला गया और लडाइया एक बार फिर सिसली पर केन्द्रित हो गयी। दोनो सेनाओ को इस सम सतुलित युद्ध म आखिर तक जमकर लडना पडा, जिसका अत सिसली के पश्चिम मे ईगादियन द्वीपो के निर्णायक जलयुद्ध (२४१ ई० पू०) के बाद ही जाकर हुआ, जिसमे कार्थेजी बेडा अतिम रूप से पराजित हुआ। इसके बाद कार्थेजियो के पास सिसली रोम को देकर और भारी खिराज अदा करके शाति सधि सपन्न करने के अलावा और कोई चारा न रहा।

कुछ समय बाद रोमनो ने आक्रमण करके कोर्सिका तथा सार्डीनिया पर भी कब्जा कर लिया। लेकिन कार्थेजियो को इसे भी स्वीकार करने के लिए विवश होना पडा, क्योकि इसी समय उनके देश मे भाडे के सैनिको ने बगावत

बाद तरतम ने रोमनो के आगे आत्मसमर्पण कर दिया, जिन्होने धीरे धीरे दक्षिणी इटली के अन्य नगरो को भी अपने नियत्रण मे लेने मे सफलता प्राप्त कर ली। पाचवी चौथी और तीसरी शताब्दियो मे रोमनो ने जो निरतर युद्ध किये उनके परिणामस्वरूप उन्होंने सारे इटली को अपने वश मे कर लिया। इस प्रकार रोम एक प्रमुख भूमध्यसागरीय शक्ति बनने मे सफल हो गया। रोम की आकाक्षाए अब अपेनाइन प्रायद्वीप के सीमातो से आगे की ओर निर्दिष्ट हो गयी थी और सारे ही भूमध्यसागरीय क्षेत्र पर नियत्रण पाने के लिए रोम का सघर्ष शुरू हो गया था।

भूमध्य सागर क्षेत्र पर प्रभुत्व के लिए रोम का सघर्ष

रोम और कार्थेज

जब रोमनो ने अपना ध्यान आगे, एपेनी प्रायद्वीप की सीमाओ से आगे मोडा तो उनकी निगाह सबसे पहले सिसली पर पडी। एक प्राचीन इतिहासकार के शब्दो मे यह द्वीप बिलकुल पास ही एक ऐसी मूल्यवान और सुभावनी निधि थी जिसे मानो इटली से छीनकर अलग कर लिया गया हो।

लेकिन यहा रोमनो को एक अन्य शक्तिशाली दासस्वामी राज्य कार्थेज की सूरत मे एक गभीर प्रतिद्वद्वी का सामना करना पडा। कार्थेज नगर अफ्रीका के उत्तरी तट पर (ट्यूनिस की खाडी के निकट) स्थित था और दतकथाओ के अनुसार नवी सदी ई० पू० मे बसाया गया था। वह रोम से बहुत पहले ही एक महत्वपूर्ण भूमध्यसागरीय शक्ति बन चुका था। कार्थेज की आर्थिक शक्ति एक व्यापारिक केन्द्र के नाते उसकी भूमिका पर आधारित थी। अपनी अनुकूल भौगोलिक स्थिति की बदौलत कार्थेज सारे भूमध्यसागरीय प्रदेश मे कच्चा माल और तैयार सामानो का वितरण केन्द्र बन गया था। इसके अलावा उसके पास उन्नत बागान थे—नगर के आसपास धनी कार्थेजियो की जमीनो पर हजारो गुलाम मशक्कत करते थे। उस समय कार्थेजी कृषि के उन्नत तरीको के लिए भी मशहूर थे।

व्यापार की उन्नति और कृषि के बढते हुए महत्व के फलस्वरूप कार्थेज मे राजनीतिक शक्ति जमीदारो और व्यापारियो के हाथो मे आ गयी थी। कार्थेजी राज्य का ढाचा गणराज्य जैसा था लेकिन रूप मे बहुत ही कम स्वतत्र किस्म का था। हालाकि कार्थेजी सविधान के बारे मे कुछ ज्यादा जानकारी नहीं है, फिर भी किसी भी प्रकार से वह आधार पर टिका था। जनसभा बहुत ही मामूली भूमिका अदा करती थी। अधिकाश अधिकार दो सूफेतो के पास थे जिनका काम

रोमन कोसुलो जैसा था और जिनके पास सेना तथा नौसेना की कमान भी थी। इसके अलावा रोमन सीनेट जैसी ३०० की परिषद भी थी जिसमे मे ३० की परिषद चुनी जाती थी, जो ३०० की परिषद की बैठको के बीच सारा अतरिम काय किया करती थी। कार्थेजियो के पास शक्तिशाली सेना और नौसेना थी। उनकी मेना की कमजोरी इस तथ्य मे निहित थी कि वह मुख्यत भाडे के सैनिको की बनी थी। तथापि उसके युद्ध कौशल का स्तर ऊचा था और उसके पास युद्ध के उन्नत माधन भी थे जैसे फौजी हाथी घेरा डालने का सामान आदि।

कार्थेजी मक्रिय उपनिवेशकार थे। उन्होने अफ्रीका के उत्तरी तट पर, दक्षिणी स्पेन मे और बेलिएरिक द्वीपो पर अपने अधीनस्थ उपनिवेश बसाये थे। कार्थेजी कोर्सिका तथा सार्डीनिया मे भी बस गये थे और रोम के माथ अपनी पहली टक्कर के समय उनका सिराकूज और मेसीना के सिवा लगभग सारे ही मिमली पर नियत्रण था। मसीना पर अधिकार करने की कोशिशो के दौरान ही उनका रोम के साथ झगडा हुआ।

पहला और दूसरा प्यूनिक युद्ध

पहला प्यूनिक युद्ध (रोमन कार्थेजियो को प्यूनिक जन कहते थे) तेईस साल चला (२६४-२४१ ई० पू०)। पहली मुठभेड सिसली मे हुई जहा रोमनो ने कई सफलताए प्राप्त की। लेकिन ये सफलताए निर्णायक नही थी क्योकि रोमनो के पास बेडा नही था और इसलिए वे कार्थेजी समुद्री शक्ति से नही लड सकते थे। रोमनो ने जब बेडा बना लिया और अपनी पहली समुद्री विजय प्राप्त कर ली तब जाकर ही वे अफ्रीका की भूमि पर भी युद्ध चलाने मे समर्थ हो सके। लेकिन इस पहले अफ्रीकी अभियान की तैयारी अच्छी तरह से नही की गयी थी और उसका अत पूर्ण असफलता मे हुआ।

युद्ध खिचता चला गया और लडाइया एक बार फिर सिसली पर केंद्रित हो गयी। दोनो सेनाओ को इस सम-सतुलित युद्ध मे आखिर तक जमकर लडना पडा, जिसका अत सिसली के पश्चिम मे ईगादियन द्वीपो के निर्णायक जलयुद्ध (२४१ ई० पू०) के बाद ही जाकर हुआ जिसम कार्थेजी बेडा अतिम रूप से पराजित हुआ। इसके बाद कार्थेजियो के पास सिसली रोम को देकर और भारी खिराज अदा करके शाति सधि सपन्न करने के अलावा और कोई चारा न रहा।

कुछ समय बाद रोमनो ने आक्रमण करके कोर्सिका तथा सार्डीनिया पर भी कब्जा कर लिया। लेकिन कार्थेजियो को इसे भी स्वीकार करने के लिए विवश होना पडा क्योकि इसी समय उनके देश म भाडे के सैनिको ने बगावत

कर दी थी और जब लीजिया के लोग भी बागियो मे जा मिले, तो कार्थेज के अस्तित्व के लिए ही खतरा पैदा हो गया।

इस बगावत को कार्थेजी सेनापति हमिल्कार बाका ने कुचला, जिसने प्रथम प्यूनिक युद्ध मे बडा नाम कमाया था। विद्रोह को दबाने के बाद उसका कार्थेज मे काफी प्रभाव हो गया और उस सैन्य नेताओ मे प्रमुख माना जाने लगा जो रोम से बदला लेने का सपना देख रहे थे। नये टकराव के लिए ज्यादा अच्छी तरह से तैयारी करने के लिए हमिल्कार ने कार्थेजी सेना के साथ स्पेन की तरफ कूच किया जिसे जीतकर वह उसे रोमनो के साथ आसन्न युद्ध मे अपने अड्डे के तौर पर इस्तेमाल करना चाहता था।

स्पेन मे हुई लडाइयो के बीच ही हमिल्कार की मृत्यु हो गयी। कार्थेजी सेनाओ की कमान पहले उसके दामाद और बाद मे उसके बेटे हनिबाल के हाथो मे गयी। दतकथाओ के अनुसार जब हमिल्कार ने स्पेन को जीतने के लिए कूच किया था तो हनिबाल ने, जो तब ग्यारह वर्ष का था पिता से अपने को साथ ले जाने का अनुरोध किया था। हमिल्कार इस शर्त पर तैयार हो गया था कि हनिबाल रोम से चिरवैर की शपथ ले। हनिबाल ने शपथ खा ली थी और जीवन भर उसे निभाया भी।

जब हनिबाल ने सेना की कमान को अपने हाथ मे लिया तो उस समय तक रोम के साथ युद्ध के प्रश्न को व्यवहारतः तय किया जा चुका था। दूसरा प्यूनिक युद्ध २१८ ई० पू० मे शुरू हुआ और पूरे सत्रह साल चला। हनिबाल ने रोम के विरुद्ध इतालवी भूमि पर युद्ध की एक साहसिक योजना बनायी। अपनी योजना को पूरा करने के लिए उसे आल्प पर्वतो को पार करने का अतिदुष्कर कार्य भी करना पडा। रोमनो के खिलाफ अपनी लडाइयो मे हनिबाल ने असाधारण सैन्य प्रतिभा दिखायी और रोमन सेनाओ को कई बार मात दी जिनमे सबसे प्रसिद्ध कैनी का युद्ध (२१६ ई० पू०) है, जिसमे हनिबाल शत्रु सेना को घेरकर उसका सफाया करने मे कामयाब हो गया था।

लेकिन रोम के विरुद्ध हनिबाल का अभियान एक शक्तिशाली राज्य के विरुद्ध लगभग अकेले आदमी के प्रयास जैसा ही सिद्ध हुआ। कार्थेज ने अपने सैन्य नेता को आवश्यक सहायता नहीं प्रदान की। इस कारण हनिबाल ने अंत मे यद्यपि वह एक बार भी नहीं हारा था अपने को दक्षिणी इटली मे कटा हुआ और अलग पाया। जो नगर उसके पक्ष मे आ गये थे उन्हे रोमनो ने फिर धीरे धीरे वापस हथिया लिया। युवा रोमन सेनानायक पब्लियस कार्नेलियस स्कीपिओ ने स्पेन मे कार्थेजियो पर कई विजय प्राप्त की। स्पेन को कार्थेजी सेनाओ से साफ करने के बाद स्कीपिओ ने अफ्रीका मे सैन्य अभियान का सुझाव दिया। उसने एक अभियान सेना सगठित की और उसके साथ

कार्थेज मे कुछ दूर उतर गया, जिस पर कार्थेजी सरकार ने हनिबाल को फौरन इटली से वापस बुलाया। २०२ ई० पू० म जामा नामक स्थान पर इस युद्ध की निर्णायक लडाई लडी गयी जिसमे हनिबाल ने पहली और आखिरी हार खायी। इस बार रोम की संधि की शर्ते पिछली बार से भी अधिक कडी थी – कार्थेज के उपनिवेश चले गये उसे अपना बेडा और सारे हाथी रोम को दे देने पडे और आखिर मे भारी खिराज भी देना पडा। इन शर्तो ने कार्थेज के सैनिक तथा राजनीतिक बल को सदा के लिए कमजोर कर दिया। इस तरह दूसरे प्यूनिक युद्ध के परिणामस्वरूप रोम भूमध्य सागर म सबसे प्रबल शक्ति बन गया।

बाल्कन प्रायद्वीप का
अधीनीकरण और तीसरा प्यूनिक युद्ध

लेकिन रोम का कार्थेज से एक बार फिर दूसरे प्यूनिक युद्ध के अंत के कोई पचास साल बाद ही तीसरी बार भी टकराव होनेवाला था।

बीच की इस आधी सदी म रोमन पूर्वी भूमध्य सागर म अपनी क्षेत्र विस्तार की आकाक्षाओ को पूरा करने मे जुटे रहे। उन्होंने अपने सबसे खतरनाक पूर्वी प्रतिद्वंद्वी मकदूनिया से तीन युद्ध किये। दूसरे मकदूनी युद्ध के बाद रोमनो ने धृष्टतापूर्वक अपने को यूनान का मुक्तिदाता घोषित कर दिया और १९६ ई० पू० म रोमन सेनानायक फ्लेमीनियस ने उसे स्वतंत्र घोषित कर दिया। व्यावहारिक अर्थो म यूनान को बस एक के बदले दूसरा शासक मिल गया।

दूसरे मकदूनी युद्ध के बाद शाम के राजा अतिओकस के साथ युद्ध छिड गया, जिसने पूर्व म रोमविरोधी महबंध बनाने की कोशिश की थी। इसके बाद जब मकदूनी राजा पीर्सियस ने रोम के खिलाफ सश्रय कायम करने का अतिम प्रयास किया, तो एक और मकदूनी युद्ध हुआ। उसे हरा दिया गया और कुछ ही बाद मकदूनिया रोम का एक प्रांत बन गया। जब यूनान म मुक्ति आन्दोलन शुरू हुआ तो रोमनो ने उसको निर्दयतापूर्वक कुचल दिया और यूनानियो को और भी अधिक आतंकित करने के लिए कोरिंथ को जो यूनान के सबसे प्राचीन और सबसे प्रसिद्ध नगरो म एक था नष्ट कर दिया (१४६ ई० पू०)।

१४९ ई० पू० मे तीसरा प्यूनिक युद्ध फूट पडा। पिछले युद्ध के बाद से कार्थेज अपनी अत्यंत अनुकूल भौगोलिक अवस्थिति के कारण अपनी आर्थिक स्थिति को पुनःस्थापित करने मे सफल हो गया था। एक बार फिर यह नगर भूमध्यसागरीय व्यापार का एक प्रमुख केंद्र बन गया था। रोमनो को यह हालत

असह्नीय लगी। कार्थेजियो पर २०१ ई० पू० की शाति सधि के एक मुद्दे का उल्लघन करने का आरोप लगाकर उन्होने १४६ ई० पू० मे अपने पुराने प्रतिद्वद्वी क विरुद्ध एक बार फिर युद्ध घोषित कर दिया। कार्थेज का घेरा कोई तीन साल चला। आखिर उसे पब्लियस कोर्नेलियस स्कीपिओ के दत्तक पौत्र स्कीपिओ ईमिलीआनस द्वारा निदेशित एक चाल मे धावा मारकर सर कर लिया गया। रोम के आदेशो के अनुसार नगर को पूरी तरह से नष्ट कर दिया गया – उसमे आग लगा दी गयी और वह सोलह दिन जलता रहा। इसके बाद उस सारी जमीन पर, जिस पर खडहर अब भी दहक रहे थे, हल चलवा दिये गये और उसे सदा के लिए अभिशप्त कर दिया गया (१४६ ई० पू०)।

युद्धो के परिणाम।
रोमन अर्थव्यवस्था। दासस्वामी समाज

रोम द्वारा भूमध्यसागरीय क्षेत्र मे सौ साल से भी ज्यादा किये गये लूटमार के युद्धो ने एक छोटे से और नगण्य नगर राज्य को एक विश्व शक्ति मे परिणत कर दिया। यह बात रोमन समाज के ढाचे मे अनिवार्यत प्रतिबिबित हुई। इस सबध मे अर्थव्यवस्था के क्षेत्र मे आये महत्वपूर्ण परिवर्तन सबसे अधिक उल्लेखनीय है।

रोमन विजयो ने नगर के लिए धन और मूल्यवान वस्तुओ के निरतर प्रवाह को प्रत्याभूत कर दिया। पहले प्यूनिक युद्ध के बाद रोमन कोष को ३ २०० टेलेट (१ टेलेट=६००० यूनानी द्राख्मा) प्राप्त हुए। दूसरे प्यूनिक युद्ध क बाद प्राप्त क्षतिपूर्ति १० ००० टेलेट थी और अतिओक्स से खिराज मे १५,००० टेलेट माग गये थे। विजयी रोमन सेनानायक बेशुमार लूट का माल लेकर वापस आये थे। मकदूनी राजा पीर्सियस पर विजय के बाद ईमीनिअस पाउलस जब रोम वापस लौटा तो लूटी हुई कलाकृतियो, मूल्यवान हथियारो और सोने तथा चादी के सिक्को से भरे विशाल कलशो को लिये या उनसे लदे रथो को खीचते सैनिको के जलूस को रोम मे प्रवेश करने मे तीन दिन लगे थे। अतिओक्स पर विजय के बाद रोमन १ २८० हाथीदात, २३४ मान के कठहार १८७ ००० पौड चादी २२४ ००० चादी के यूनानी सिक्क १४० ००० सोन के मकदूनी सिक्के और बडी मात्रा मे सोन तथा चादी क आभूषण लूट के माल की तरह लेकर आये थ। ई० पू० दूसरी सदी क अत तक रोम मे चादी के सिक्को की कमी थी लेकिन इन विजयो के बाद और विशेषकर स्पेन मे चादी की खानो के अधिकार म आन क बाद रोमन राज्य क पास अपन सिक्के ढालन के लिए काफी चादी हो गयी।

इन सभी बातो के फलस्वरूप रोम के व्यापारिक तथा वित्तीय सबधो मे तीव्र प्रसार हुआ। तरह तरह के ठकेदारो के झुड पैदा हो गये जिन्होने इटली मे विभिन्न प्रकार की सामाजिक सुविधाए ठेके पर उपलब्ध करने का और रोमन प्राती मे कर सग्रह का जिम्मा ले लिया। ये लोग ब्याज पर पैसा भी उधार देते थे।

व्यापार और आय की वृद्धि के साथ साथ दासो की सख्या म भी जबरदस्त बढती हुई। यद्यपि युद्ध ही नये दासो का एकमात्र स्रोत नही था, फिर भी निरतर युद्धो के परिणामस्वरूप बाजार मे भारी सख्या मे दास आये। पहले प्यूनिक युद्ध के दौरान सिर्फ अग्रीगेतम पर विजय से ही रोमनो को २५००० गुलाम प्राप्त हुए थे। कई साल बाद कार्थेजियो पर विजय पाने के बाद रोमन कोसुल रेगूलस ने २०००० गुलामो को रोम भेजा था। २०६ ई० पू० मे तरेतम पर अधिकार के बाद नगर के ३०,००० निवासियो को दासो की तरह बेच दिया गया था। १६७ ई० पू० मे एपिरस के नगरो की पराजय के बाद डेढ लाख इन्सानो को गुलामो के तौर पर बेचा गया था। फिर, तीसरे प्यूनिक युद्ध के अत मे जब कर्थेज को नष्ट किया गया तो उसके सारे निवासियो को गुलाम बना लिया गया था। ये आकडे यो ही ले लिये गये है और वे पूरा चित्र किसी भी तरह प्रस्तुत नही करते है, मगर ये कम स कम उस समय रोम मे शब्दश उमडकर आत लाखो गुलामो के अतहीन प्रवाह का कुछ अनुमान तो करा ही सकते है।

स्वय रोम के अलावा रोमन राज्य के लगभग सभी बडे शहरो मे गुलामो के बाजार थे। दास व्यापार का एक महत्वपूर्ण कद्र दीलोस द्वीप था जहा कभी कभी तो दिन मे १०,००० तक गुलाम बिका करत थ। गुलामो की कीमतो मे उनकी पूर्ति के अनुसार उतार चढाव आता रहता था। सफल सैन्य अभियानो के समय कीमते काफी गिर जाया करती थी। रोम म सार्डीनिया की विजय के कुछ ही बाद "सार्डीनियाई जैसा सस्ता की कहावत चल पडी थी।

लेकिन शिक्षित दासो का, या विशेष योग्यताए रखनेवाले गुलामो (उदाहरण के लिए अध्यापको अभिनताओ बावर्चियो और नर्तको) का मूल्य हमेशा बहुत ऊचा रहा करता था और धनी रोमन नागरिक उनके लिए हजारो की रकम देने के लिए तैयार रहते थे।

स्वय इटली मे जो कृषिप्रधान देश ही बना रहा गुलामो का अधिकतर जमीन पर काम करने के लिए उपयोग किया जाता था। जागीरो या लैतीफुदियो मे और जमीदारो की देहाती हवेलियो मे काम करनेवाले गुलामो की हालत खासकर दर्दनाक थी। रोमन लेखक और राजमर्मज्ञ ज्येष्ठ कातो कृषि क बारे म अपनी विशेष कृति म विस्तार से सलाह दता है कि गुलामो से किस तरह काम लिया जाना चाहिए ताकि मालिक को अधिकतम लाभ हो सक।

उसकी सलाह थी कि उनसे बरसाती दिनों में भी और धार्मिक त्योहारों के मौकों पर भी काम करवाया जाना चाहिए।

ई० पू० तीसरी और दूसरी सदियों के युद्धों ने, जो अधिकांशत इतालवी भूमि पर लड़े गये थे, खेतिहर अर्थव्यवस्था को बहुत क्षति पहुंचायी। दूर देशों को सैन्य अभियानों ने भी इसके ह्रास में योग दिया, जो किसानों को अपनी जमीन से महीनों और कभी-कभी तो लगातार बरसों के लिए अलग कर दिया करते थे। किसान कंगाल हो गये और शहरों में आने और काम पाने के लिए देहातों को तजने लगे। गुलामों का श्रम ही रोमन कृषि का मूलाधार बन गया। इसके अलावा छोटे और मझोले किसान बड़ी जागीरों के साथ प्रतियोगिता नहीं कर सकते थे, जहां दास श्रम का उपयोग किया जाता था। जल्दी ही किसान की निर्धनता और जमीन की भूख रोमन राज्य की सबसे संगीन समस्याओं में एक बन गयी।

व्यापारिक तथा वित्तीय संबंधों का बढ़ना, दासों की संख्या में अपूर्व वृद्धि और किसानों का दरिद्रीकरण – ये सभी इस तथ्य के प्रमाण थे कि रोमन राज्य उन्नत दासस्वामी समाज, अर्थात ऐसा समाज बन गया था कि जिसमें दो मुख्य एकदम विरोधी वर्ग थे – दासों का वर्ग और दासस्वामियों का वर्ग। अपनी बारी में इसका यह मतलब था कि सामाजिक अंतर्विरोधों का और भी अधिक संगीन होना और अंतत प्रखर वर्ग संघर्ष का जन्म लेना अपरिहार्य था।

रोमन गणराज्य का संकट। दास-विद्रोह

सिसली में दास विद्रोह

रोमन राज्य के भीतर तीव्र वर्ग संघर्ष की पहली प्रभावशाली मिसाल सिसली में आयी दास विद्रोहों की लहर थी।

सिसली एक रोमन सूबा बन चुका था, जिस पर एक रोमन सेनानायक शासन करता था। यह बहुत ही उपजाऊ टापू था और यहां बड़े-बड़े जमींदारों की कई जागीरें थीं, जिनमें हजारों गुलाम काम करते थे। बगावत दमोफीलस नामक जमींदार की जागीर पर शुरू हुई थी, जो अपने दासों के साथ अत्यंत निर्दयतापूर्ण बर्ताव करता था। गुलामों ने दमोफीलस को जान से मार डाला और उसकी हवेली को जलाकर फूंक दिया।

इस घटना ने व्यापक विद्रोह के संकेत का काम किया। इस विद्रोह का केंद्र एन्ना नगर था, जिसे दास यूनुस नामक एक शामी (सीरियाई)

गुलाम के नतृत्व म जीतने मे मफन हो गये थे। कुछ ही बाद अग्रीगेतम भी उनके हाथो मे आ गया। यहा दासो का नेतृत्व क्लीओन कर रहा था, जो एक भूतपूर्व *सिलीशियाई गडरिया था। भयत्रस्त दासस्वामियो को आशा थी* कि दोनो नताओ मे मतभेद पैदा हो जायग और दोनो पक्ष एक-दूसरे मे लडने लगेगे। लेकिन ऐसा नही हुआ बल्कि इसके विपरीत दोनो आपस म मिल गये। अब तक लगभग मारा ही सिसली दासो के हाथो मे आ चुका था। चूकि अधिकाश विद्रोही शामी थे इसलिए उन्होने एक नवशामी राज्य की स्थापना की घोषणा कर दी और यूनुस को अपना राजा चुनकर उसे शामी राजाओ का पारपरिक नाम अतिओक्स दे दिया।

सिसली मे तैनात रोमन सेनाओ को बागियो ने कई बार परास्त किया। रोमनो को एक कोसुल के नतृत्व मे बडी सना भेजनी पडी। लेकिन सघर्ष बहुत लबा और कटु था—कुल मिलाकर लडाई चार साल से कम नही चली (१३६ १३२ ई० पू०)। अतत विद्रोह को बडी बेरहमी के साथ कुचल दिया गया। इसके कोइ तीस साल बाद सिसली मे एक नया दास-विद्रोह फूट पडा (१०४ ९९ ई० पू०) और द्वीप काफी समय फिर गुलामो के हाथो मे रहा। एक बार फिर रोमन टापू पर बडी सख्या मे सेनाए भेजने के बाद ही बगावत को कुचल सके।

ग्राकस बधुओ का विद्रोह

सिसली मे पहले दास विद्रोह के ही समय रोम म भी एक व्यापक लोकतात्रिक आदोलन पैदा हो रहा था जो ग्राकस बधुओ (ग्राकी) के आदोलन के नाम से मशहूर हुआ। तिबेरियस ग्राकस सामान्यजन के अमीर वर्ग म पैदा हुआ था। वह सिप्रोनियस कुल का वशज और स्कीपिओ कुनबे का सबधी था। १३३ ई० पू० म ट्रिब्यून चुने जाने पर उसने एक नया कृषि कानून बनाने का इरादा जाहिर किया, जिसका साराश यह था कि जागीरो के आकार को सीमित कर दिया जाये और वे आकार मे १ ००० जूगर (१ जूगर=० ६२ एकड) प्रति परिवार से अधिक न हो। उसने यह भी प्रस्ताव रखा कि बेशी जमीन को जब्त कर लिया जाना चाहिए या ३०-३० जूगर के टुकडो मे बाटकर निर्धन नागरिको को दे दिया जाना चाहिए। इसके लिए तीन व्यक्तियो के आयोग को चुना जाना था और उसे पूरी स्वतत्रता प्रदान की जानी थी।

इन योजनाओ को पेश करते समय तिबेरियस ग्राकस अपने सामने दो कार्यभार रख रहा था—निर्धन किसानो की स्थिति सुधारना और रोमन सैनिक शक्ति को बनाये रखना, क्योकि इस शक्ति का आधार कृषको की सेना ही थी। लेकिन उसके प्रस्तावो का अधिकाश सीनेटरो ने जो सभी बडे जमीदार थे जबरदस्त विरोध किया।

एक प्रचंड संघर्ष छिड़ गया। तिबेरियस ग्राक्स के एक सहयोगी ट्रिब्यून मार्कस ओक्तवियस ने कृषि कानून के विरोधियों के दबाव में आकर अपने ट्रिब्यून के निषेधाधिकार का प्रयोग किया। इस कार्रवाई के जवाब में तिबेरियस ग्राक्स ने सभी राजकीय अधिकारियों को नये कानून पर मतदान के दिन से पहले कोई भी सरकारी काम करने से वर्जित कर दिया।

जब मतदान का दिन आया और सामान्यजन की कबायली जनसभा को समाहूत किया गया, तो तिबेरियस ग्राक्स ने सभा के सामने यह प्रश्न रखा कि क्या जनता के हितों के विरुद्ध काम करनेवाले ट्रिब्यून को पद पर बने रहने दिया जा सकता है। सभा का उत्तर नकारात्मक था और ओक्तेवियस को अपने पद से बरखास्त कर दिया गया। इसके बाद नये कानून का मसविदा बिना अड़चन के स्वीकार कर लिया गया और तिबेरियस, उसके भाई गेयस तथा श्वसुर एपियस क्लाडियस को आयोग का सदस्य चुन लिया गया।

एक साल तक आयोग ने बहुत ही मुश्किल परिस्थितियों में कार्य किया। अमीर वर्ग और सीनेटरों की तिबेरियस ग्राक्स के खिलाफ नफरत की लहर बढ़ती ही गयी और जब अपने सुधार को पूरी सीमा तक कियान्वित कराने की मंशा से तिबेरियस अगले चुनाव में (१३२ ई० पू०) फिर खड़ा हुआ, तो जनसभा में सशस्त्र झड़प हो गयी। तिबेरियस ग्राक्स और उसके कोई ३०० समर्थक मारे गये और उनकी लाशों को टाइबर नदी में फेंक दिया गया।

तिबेरियस की हत्या के बाद सुधार के विरोधियों को कामयाबी मिल गयी। लेकिन उनकी खुशियां अल्पकालिक ही थीं। १२३ ई० पू० में तिबेरियस का छोटा भाई गेयस ट्रिब्यून चुना गया, जो अपने भाई से भी अधिक दृढ़संकल्प और उग्र सुधारवादी था। वह सीनेट का खुलकर विरोध करता था, इसलिए उसने उसके विरुद्ध अपने संघर्ष में नगर की आबादी के निर्धनतम अंशों का समर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया। उनके हित में उसने तथाकथित अनाज कानून मंजूर करवाया, जिसके अनुसार सरकारी अन्नागारों का अनाज कम कीमत पर बेचा जाने लगा। समाज के निर्धनतम संस्तरों के हित में कई उपनिवेशों की स्थापना करने के लिए भी गेयस ग्राक्स ने एक कानून पेश किया। यह एक बहुत ही सामयिक कदम था, क्योंकि कृषि सुधार के बाद जिन जमीनों का पुनर्वितरण किया गया था, वे सब के लिए पूरी नहीं पड़ी थीं। दक्षिणी इटली में कई उपनिवेशों की स्थापना की गयी और विनष्ट कार्थेज की स्थली पर एक और उपनिवेश बसाने की योजना बनायी गयी।

इन कदमों को अमल में लाकर गेयस ने उस लक्ष्य की भी सिद्धि कर ली, जो उसके भाई की पहुंच के बाहर ही रहा था – १२२ ई० पू० में वह दूसरी बार ट्रिब्यून चुना गया। लेकिन गेयस के राजनीतिक शत्रु भी निष्क्रिय नहीं बैठे हुए थे। उन्होंने इस बात का पूरा पूरा फायदा उठाया कि गेयस

कार्थेज मे ऐसी जगह पर उपनिवेश स्थापित करने की योजना बना रहा था जो लोक विश्वासो के अनुसार अभिशप्त थी। इसके अलावा, अपने ट्रिब्यूनत्व के दूसरे वर्ष मे गेयस ग्राक्स ने यह प्रस्ताव रखा कि सभी इतालीय लोगो को रोमन नागरिको के अधिकार – और इस प्रकार विशेषाधिकार भी – प्रदान किये जाये। ग्राक्स के शत्रुओ – सीनेट के समर्थको को रोमनो को इसका कायल करने मे कोई खास मुश्किल नही हुई कि इस तरह का कानून उनके हितो मे नही रहेगा, क्योकि उससे और बातो के अलावा इतालीय लोग भी सभी प्रकार के सैनिक लूट के माल पर उतना ही दावा कर सकेगे कि जितने के स्वय रोमन नागरिक हकदार थे।

अगले वर्ष (१२१ ई० पू०) के चुनावो तक रोम की लगभग सारी ही आबादी दो विरोधी शिविरो मे विभाजित हो गयी। ग्राक्स के समर्थको ने अवेंतीन पहाडी पर कब्जा कर लिया और घेरेबदी के लिए तैयार होने लगे। सीनेट ने नगर मे युद्ध की स्थिति घोषित कर दी और अवेंतीन पर धावा बोलने के लिए विशेष सैनिक भेज दिये। ग्राक्स के समर्थको के प्रतिरोध को जल्दी ही कुचल दिया गया। शत्रु के हाथो जिदा न पडने के लिए ग्राक्स ने अपने एक दास को आदेश दिया कि वह उसे जान से मार दे। विजेताओ ने ग्राकस के तीन हजार समर्थको को मार डाला।

ग्राक्स बधुओ के आदोलन को कुचल दिया गया मगर इस आदोलन को रोम के भावी इतिहास मे अपने प्रभाव को अनुभूत करवाना था। उसने रोम म एक व्यापक क्रातिकारी आदोलन के बीज बोये जो आगे चलकर सारे इटली के किसानो और निर्धन नगरनिवासियो मे व्याप्त हो गया। यह आदोलन जमीन राजनीतिक अधिकारो और अधिक लोकतात्रिक राज्य के लिए सघर्ष मे परिणत हो गया।

ई० पू० दूसरी सदी के अत और पहली सदी के आरभ मे रोमन समाज। गृहयुद्ध

इस काल के रोमन समाज का एक विशिष्ट लक्षण विभिन्न वर्गो तथा श्रेणियो मे वैमनस्यपूर्ण सबधो का बढना था। जैसाकि हम देख चुके है, मुख्य विरोधी शिविर दासस्वामियो और दासो के थे। लेकिन इन दोनो बुनियादी समूहो के अलावा एक वर्ग और भी था, जिसे स्वतत्र उत्पादक कहना सबसे समीचीन रहेगा जिसमे मझोले और गरीब किसान और कई तरह के दस्तकार शामिल थे।

रोमनो ने स्वय समाज को इन मुख्य वर्गो मे विभाजित नही किया था लेकिन उन्होने कई श्रेणिया बना दी थी जो उपरोक्त वर्ग विभाजनो के साथ कभी कभी बिलकुल पूरी तरह से मेल खाती थी। रोमन समाज मे उच्चतम

श्रेणी अमीर वर्ग या सीनटरो की थी जिसम अभिजात और धनी परिवार आते थे जिन्होने राजकीय मामलो म सदा महत्वपूर्ण भाग लिया था। इन परिवारो की सपत्ति का मुख्य स्रोत उनकी जागीर था। इस श्रेणी के प्रतिनिधि अक्सर उच्चतम पदो पर आसीन होते थ और सीनट क सदस्य थ। दूसरी सबसे महत्वपूर्ण श्रेणी तथाकथित इक्वीतियो (अश्वारोही सूरमाओ) की थी। इस नाम का हरगिज यह मतलब नही था कि व रिसाले में काम करते थे— यह शब्द अतीत का एक अवशेष था और रोमन इतिहास के इस दौर म आते आते उन धनी नागरिको पर जो अभिजात वशो के नही थे और व्यापारियो व महाजनो क लिए प्रयोग होने लगा था। अत मे बाकी आबादी थी, जिसे प्लेबो या प्लेबियनो (सामान्यजन) का पारपरिक नाम ही दिया जाता था। देहात म प्लेबियन का आशय किसानो से और नगरो म दस्तकारो छोटे व्यापारियो कुशल कारीगरो और दुकानदारो म होता था। गुलामो की रोमनो की निगाहो म कोई अलग श्रेणी नही थी, यद्यपि व्यवहार मे व एक अलग श्रेणी को ही द्योतित करते थे जो सभी प्रकार के अधिकारो से पूर्णत वंचित थी।

रोम के राजनीतिक जीवन म सीनटर ही सदा सबसे प्रतिक्रियावादी और अलोकतान्त्रिक थे। शहर और देहात दोनो ही म लोकतत्र का मुख्याधार सामान्यजन—प्लेब—थ। इक्वीतियो की स्थिति दोनो के बीच की थी। व अक्सर प्लेबो का समर्थन करत थे खासकर शहरो म लेकिन जब वे यह देखते थे कि सामान्यजन बहुत क्रातिकारी रवैया अख्तियार कर रहे हैं तो वे अभिजातो का साथ देने लगत थे। गुलामो को रोम क राजनीतिक जीवन मे नगण्य महत्व ही प्राप्त था।

ग्राक्स बधुओ के विद्रोह क बाद अमीर वर्ग द्वारा अपनाये कठोर उपायो के बावजूद रोमन समाज मे लोकतान्त्रिक शक्तिया अधिक दृढ स्थिति अपनाने लगी। ग्राक्स बधुओ द्वारा शुरू किये आदोलन को पूर्णत रोक पाना असभव सिद्ध हुआ। इसके अलावा सीनटरो ने अपने को नूमीदियाई राजा जुगूर्था के साथ युद्ध के समय बडी सकटपूर्ण स्थिति म डाल लिया था। यह युद्ध अकुशलतापूर्वक और बिना सफलता के लडा गया था क्योकि जुगूर्था ने विभिन्न रोमन सेनानायको और सीनटरो तक को रिश्वत दे रखी थी। युद्ध का रुख तब जाकर ही बदला कि जब कमान एक ऐसे सेनानायक को सौपी गयी जो अभिजात वश का नही था लेकिन अत्यत प्रतिभाशाली था और लोकतान्त्रिक हलको मे पसद किया जाता था। यह सेनानायक गेयस मरियस था। उसने सिर्फ जुगूर्था को पराजित करने म ही नही बल्कि रोम पर उत्तर से आनेवाले एक बडे खतरे—सिब्री जनो तथा ट्यटनो के हमले के खतरे—का निवारण करने में भी सफलता प्राप्त की।

मरियम ने अत्यत महत्वपूर्ण मैनिक तथा राजनीतिक मुधार किय। मवियम तूलियस क कानूनो क अगीकृत किये जान के बाद मे सिर्फ पाच सपत्तिधारी वर्गों के मदम्यो को ही सैनिक मेवा की पात्रता प्राप्त थी और प्रोलीतारी उसमे पूर्णत अपवर्जित थे। मरियस ने इन नियत्रणो को खत्म कर दिया और इसमे मेना की मामाजिक मरचना मे आमूल परिवर्तन आ गये। जहा अभी तक सेना अधिकाशत कमोबेश मपन्न किसानो से ही निमित थी वहा अब निर्धनतर मस्तरा की भूमिका और प्रभाव न अपने आपको कही अधिक अनुभूत कराना शुरू कर दिया।

ई० पू० दूसरी शताब्दी के अत और पहली के प्रारभ म लोकतान्त्रिक आदोलन और भी अधिक सुदृढ हो गया। ग्राक्स बधुओ क अनुगामी कई ट्रिब्यूनो न रोमन राजनीति म महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। उदाहरण के लिए, १०० ई० पू० म सतूर्नियस ने मरियम के सैनिको को जमीन देन और रोटी की कीमत कम करने के कानून जारी किये। इसके बाद ९१ ई० पू० मे मार्कस लीवियम द्रूमम ने इतालियो को पूर्ण नागरिक बनाने का प्रस्ताव मामने रखा। लेकिन इम काल मे प्रतिक्रिया की शक्तिया और खासकर सीनेट अब भी इतनी मजबूत थी कि इम तरह क मुधारो का विरोध कर सके। द्रूमस को कत्ल कर दिया गया लेकिन इम बार उसकी हत्या न इटली भर म जन विद्रोह के सकेत का काम किया।

सपूर्ण इटली म फैल जानेवाला यह गृहयुद्ध पूरे दो माल चला (९० ८८ ई० पू०)। रोम ने इसके पहले कभी अपन को एसी बुरी स्थिति मे नही पाया था। इस बार रोम की विजय महज औपचारिक ही थी—इतालीय तभी युद्ध बद करने के लिय तैयार हुए जब उन्ह समान अधिकार देने का वचन दिया गया और आखिर यही मुद्दा तो युद्ध का कारण था।

गृहयुद्ध को रोम क आगामी इतिहास मे बडी प्रमुख भूमिका का निर्वहन करना था। इटली के मारे ही निवासी अब रोमन नागरिक बन गये थे इसलिए रोम नगर और उसके रहनेवालो का पुराना महत्व और उनका पहलवाला विशेषाधिकारप्राप्त रुतबा खत्म हो गया। वस्तुत इस युद्ध का परिणाम समूचे तौर पर इटली की रोम पर विजय का द्योतक था।

मरियस तथा सुल्ला मे सघर्ष

उधर गृहयुद्ध चल ही रहा था कि पूर्व म नयी लडाइया छिड गयी। यहा रोमनो न अपने को बहुत ही खतरनाक हालत मे पाया। पोंतस का राजा मिथ्रीदतीज छठा पूर्व के लोगो के हितो का अलमबरदार बनकर खडा हो गया।

मिथ्रीदतीज निस्सदेह एक असाधारण व्यक्ति था। इस बहुत ही लबे

और ताकतवर राजा ने व्यापक शिक्षा पायी थी और उसका २२ भाषाओं पर अधिकार था। उसने अपने राज्य के सीमांतो का विस्तार करके वासफोरस के राज्य कोलक्सि और लघु आर्मीनिया को भी उसमे शामिल कर लिया था। ८८ ई० पू० मे उसने एक बडी सेना के साथ एशिया ए-कोचक मे रोमन प्रदेशो पर हमला किया। स्थानीय आबादी ने उसका मुक्तिदाता की तरह स्वागत किया और जब मिथ्रीदतीज़ ने सकेत दिया, तो एशिया ए कोचक के नगरो मे ३० ००० रोमन सैनिको को एक ही दिन मे मार डाला गया। सफलता के इस चढते ज्वार पर अब मिथ्रीदतीज यूनान पर कब्जा करने के लिए चल दिया।

मिथ्रीदतीज़ का सामना करने के लिए भेजी गयी रोमन सेना की कमान सुल्ला को सौपी गयी थी जो ८८ ई० पू० मे कोसुल चुना गया था। हाल के गृहयुद्ध मे उसने एक प्रतिभाशाली सेनानायक के नाते ख्याति अर्जित की थी। लेकिन सुल्ला सीनेट का समर्थक माना जाता था अत रोम के निवासियो ने ट्रिब्यून सुलपिसियस रूफस के नेतृत्व मे सुल्ला के चयन का विरोध किया। जनसभा ने इस अभियान का सचालन करने के लिए सुल्ला के स्थान पर मरियस को नियुक्त करने का फैसला किया।

जब सुल्ला को, जो उस समय अपनी सेना के साथ इटली के दक्षिण मे था, इस फैसले के बारे मे पता चला तो उसने अपने सैनिको के सामने भाषण दिया। उन्हे अपनी बात का कायल कर लेने के बाद सुल्ला ने रोम पर चढाई कर दी। शहर की सडको पर लडाई छिड गयी – सुलपिसियस रूफस मारा गया और मरियस बचकर भाग गया। इस प्रकार अपने लबे इतिहास मे पहली बार रोमन सैनिको को ही रोम पर कब्जा करना पडा। इसके बाद सुल्ला ने अपनी सेना के साथ यूनान की तरफ कूच किया, जहा उसने कोई तीन साल बिताये और मिथ्रीदतीज पर कई विजय प्राप्त की जिससे उसके लिए सारी शत्रु सेनाओ को यूनान के बाहर खदेडना सभव हो गया। सुल्ला एशिया ए कोचक तक नही गया क्योकि तब तक मिथ्रीदतीज सधि का अनुरोध कर चुका था। अब तक सुल्ला के लिए भी लडाई को खत्म करना जरूरी हो गया था, क्योकि उसकी अनुपस्थिति मे मरियस ने रोम मे सत्ता को हथिया लिया था और परिस्थितिया उसकी तुरत वापसी का तकाजा कर रही थी।

रोम मे जो सत्ता पलट हुआ था उसका नेतृत्व सिन्ना और मरियस ने किया था जिसे सातवी बार कोसुल चुना गया था। लेकिन चुने जाने के कुछ ही बाद मरियस की मृत्यु हो गयी। फिर भी सुल्ला को रोम पर एक बार फिर शस्त्रबल से ही कब्जा करना पडा। ८३ ई० पू० के वसत मे वह अपनी सेना के साथ दक्षिणी इटली मे उतरा और यह इतालवी गृहयुद्ध के दूसरे दौर के आरभ का द्योतक था। सुल्ला इसमे विजयी हुआ और रोम

को दूसरी बार सर करने के बाद वह अधिनायकत्व स्थापित करने मे सफल हो गया। अपने राजनीतिक विरोधियो को दड देने के लिए उसने बाधन सूचिया या प्रोस्क्रिप्शन्स नामक विशेप सूचिया जारी की, जिनमे उन लोगो के नाम थे, जिन्ह सुल्ला विधि बहिष्कृत करना चाहता था और जिन्हे कोई भी जान से मार सकता था और एसा करने के लिए इनाम तक पा सकता था। इस तरह १०० से अधिक सीनेटरो और २,५०० इक्वीतियो को मार डाला गया। सुल्ला ने कई अलोकतात्रिक कानून जारी किये, जिन्होने ट्रिब्यूनो की शक्तियो को सीमित कर दिया, अनाज-अनुदानो को निपिद्ध कर दिया आदि-आदि। लेकिन सुल्ला का आतक राज्य ज्यादा दिन नही चल पाया और उसके जारी किये कानूनो को जल्दी ही रद्द कर दिया गया।

स्पार्तकस की बगावत

स्पार्तकस के नेतृत्व मे दासो का विद्रोह प्राचीन विश्व के सपूर्ण इतिहास मे सबसे नाटकीय और सबसे बडे पैमाने का दास विप्लव था। यह ७४ ई० पू० मे शुरू हुआ और ७१ ई० पू० तक जारी रहा।

मूल पड्यत्र कोई २०० दासो ने कापुआ नगर के एक ग्लेडिएटर (अखाडो मे लडनेवाले तलवारबाज गुलाम) विद्यालय मे रचा था। साज़िश का पता लग गया, मगर लगभग ८० गुलामो का छोटा सा दल बच भागने मे सफल हो गया। उन्होन विसूवियस पर्वत पर डेरा डाला और स्पार्तकस को अपना नेता चुना। वह सचमुच योग्य नेता और प्रतिभाशाली सगठनकर्ता तथा सेनानायक था। वह थ्रेस का रहनेवाला था और सेना से भाग जाने के कारण गुलाम की तरह बेचे जाने के पहले शायद रोमन सहायक सेना मे भी रह चुका था।

पहले इस साजिश और गुलामो की फरारी की तरफ ज्यादा ध्यान नही दिया गया। लेकिन स्पार्तक्स की फौजे तेजी से बढने लगी और आखिर रोमनो ने उसके खिलाफ ३,००० सैनिको की टुकडी भेजी। इस टुकडी ने विसूवियस से उतरने के एकमात्र रास्ते को कब्जे मे ले लिया और इस तरह दास सेना के सचार को भग कर दिया। लेकिन इसी से स्पार्तकस को सेनानायक के नाते अपनी प्रतिभा को जाचने का पहला मौका मिल गया। उसके आदेश पर दासो ने अगूर की बेलो के ततुओ से रस्सिया बटी और रात के अधेरे की आड मे उनकी एक छोटी सी टोली उनके सहारे उतरकर दुश्मन के खेमे के पीछे पहुच गयी और रोमन सैनिको को हराकर भगाने मे सफल हो गयी। जल्दी ही स्पार्तकस की सेना की सख्या कई हजार हो चुकी थी और बगावत लगभग सारे ही दक्षिणी इटली मे फैल चुकी थी।

लेकिन इसी बीच विद्रोही दास सेना में फूट पैदा हो गयी, जिसका कारण शायद यह था कि स्पार्टाकस की सेना में विभिन्न जातियों के गुलाम थे – थ्रेसी, यूनानी, गाल और जर्मन। गाल और जर्मन मुख्य सेना से अलग हो गये, जिन्हें रोमनों ने जल्दी ही पराजित कर दिया। इसी बीच स्पार्टाकस उत्तर की तरफ बढ़ गया और बाद में मूतीना नगर के निकट उसने एक और भारी विजय प्राप्त की, जो उसकी सफलता का शीर्षबिंदु था। इसके कुछ ही बाद उसकी सेना की संख्या १२०,००० तक पहुंच गयी।

मूतीना की लड़ाई के बाद स्पार्टाकस ने रोम की तरफ रुख किया। शहर में ऐसा आतंक फैल गया, जैसा कि रोमनों ने संभवतः हनिबाल के समय में कभी अनुभव नहीं किया था। सीनेट ने मार्कस क्रासस नामक अत्यंत धनी दासस्वामी को आपातकालीन शक्तियां प्रदान कीं और उसे स्पार्टाकस के खिलाफ सेनाओं का नेतृत्व करने के लिए भेजा।

लेकिन स्पार्टाकस रोम को छोड़कर निकल गया और दक्षिण की तरफ चल दिया। यह बहुत संभव है कि वह सिसली जाने का इरादा कर रहा था। लेकिन जहाजों की कमी की वजह से यह रास्ता असंभव सिद्ध हुआ और दासों ने इस काम के लिए जो बेड़े बनाये थे, उन्हें एक तूफान ने नष्ट कर दिया। इस समय तक क्रासस की सेना दासों के पास आ पहुंची थी। निर्णायक लड़ाई ७१ ई० पू० में दक्षिणी इटली में हुई। लड़ाई शुरू होने से पहले स्पार्टाकस के सैनिक अपने नेता के लिए एक घोड़ा लेकर आये, लेकिन उसने अपनी तलवार निकाली और यह कहते हुए उसे मार डाला कि अगर वह विजयी हुआ, तो उसके पास बढ़िया से बढ़िया घोड़ों की कोई कमी न रहेगी और अगर वह पराजित हुआ, तो उसे किसी भी घोड़े की आवश्यकता पड़ेगी ही नहीं। बहुत ही भयानक लड़ाई के बाद, जिसमें दोनों ही पक्षों को बहुत क्षति उठानी पड़ी, दास पराजित कर दिये गये। स्पार्टाकस स्वयं युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ने के बाद मारा गया।

दास विद्रोह को निर्ममतापूर्वक कुचल दिया गया। बदले के लिए और अपनी विजय को प्रभावशाली दिखाने के लिए विजेताओं ने कापुआ से, जहां बगावत शुरू हुई थी, रोम तक सड़क के किनारे किनारे छः हजार गुलामों को सूली पर चढ़ा दिया। स्पार्टकस का विद्रोह इस बात का सूचक था कि रोमन समाज के दोनों मुख्य वर्गों – दासों और दासस्वामियों – में अंतर्विरोध कितने ज्यादा संगीन हो चुके थे।

पांपी का पूर्वी अभियान

लगभग स्पार्टाकस के विद्रोह के फूटने के समय ही मिथ्रीदतीज के विरुद्ध एक नया युद्ध शुरू हुआ (७४-६४ ई० पू०)। इस युद्ध के पहले सात साल

जूलियस सीजर की सगमर्मर की प्रतिमा का शीर्ष

रोम की पूर्वी सेना की कमान अनुभवी सेनानायक लुकूलस के हाथो म थी। उसने कई बडी सफलताए प्राप्त की पर वह मिथ्रीदतीज का पूर्णत पराजित न कर सका। इसके अलावा उसकी अत्यधिक सख्ती म सैनिको म तीव्र असतोष पैदा हो गया था। इसके कारण जनसभा न (सीनट की इच्छा के विरुद्ध) पूर्वी सेना की कमान पापी को सौंपी।

ग्नीअस पापी न सुल्ला के सत्ताकाल म ही नाम कमा लिया था और गृहयुद्ध के दौरान अपनी ख्याति को और पुष्ट किया था। बाद म उस स्पार्तकस की बगावत का दमन करने म क्रासस की सहायता के लिए भजा गया। वह क्रासस के पास मुख्य युद्ध के समय तक तो नही पहुच पाया लेकिन स्पार्तकस क मारे जाने के बाद उसका दास सेना की एक बडी टुकडी म सामना हुआ जो बच गयी थी और उत्तर की तरफ जा रही थी और उसन उस पराम्न

कर दिया। ६७ ई० पू० में उसने सारे भूमध्य सागर तट को त्रस्त करनेवाले जलदस्युओं के विरुद्ध अपने सक्रिय और सफल अभियान से बहुत लोकप्रियता प्राप्त की। अब पांपी का अपना अगला कार्यभार – मिथ्रीदतीज को पराजित करना – भी इतनी ही सफलता के साथ पूरा करना था। उसने न केवल पोंतस के राजा की सेना को ही बुरी तरह पराजित किया, बल्कि आर्मीनिया में भी जा घुसा और उसे अधीन राज्य बना लिया। उसने बासफारस राज्य में छिड़े विद्रोह को समर्थन प्रदान किया जिसके बाद मिथ्रीदतीज ने आत्महत्या कर ली। अंत में पांपी ने शाम तथा यहूदिया (जूडिया) को भी जीत लिया। एशिया ए कोचक में उसने रोम के कई छोटे अधीन राज्यों को पुनःस्थापित किया। जैसा कि इस अभियान के बाद उसके रोम में विजय प्रवेश के समय घोषित किया गया था, पांपी ने २२ राजाओं को परास्त किया था, १५३८ नगरों और दुर्गों को जीता था और कोई १२० लाख लोगों को अधीन किया था। दूसरे प्यूनिक युद्ध के बाद यूनान प्रभावित पूर्व पर रोम का नियंत्रण स्थापित करने की जो प्रक्रिया शुरू हुई थी, पांपी के अभियान ने उसे पूरा कर दिया। केवल मिस्र ही रोम के अधिकार में न आ सका।

पांपी के अपनी सेना के साथ रोम लौटने के कुछ ही पहले वहां कतीलीन के षड्यंत्र को विफल बना दिया गया था।

लूसियस सेर्गियस कतीलीन ने जो कुलीनों के एक पुराने वंश का था एक आंदोलन का नेतृत्व किया था, जिसका लक्ष्य सत्ता पर कब्जा करना और नागरिकों के ऋणों की मंसूखी करना था। षडयंत्रकारियों के इस दूसरे लक्ष्य ने अभिजात वर्ग की तरुण पीढ़ी को, जो सिर तक कर्ज़ में डूबी हुई थी और निर्धन नगरनिवासियों को भी आकृष्ट किया था।

प्रसिद्ध वक्ता सिसेरो ने, जो ६३ ई० पू० में कोंसुल चुना गया था कतीलीन और उसके संगियों का सक्रिय विरोध किया। पहले उसने कतीलीन को रोम से निर्वासित करने में और बाद में शेष षड्यंत्रकारी नेताओं को, जो पीछे रह गये थे गिरफ्तार करवाने में सफलता पा ली। सीनेट की एक विशेष रूप से बुलायी बैठक में उनके भाग्य का निर्णय किया गया और उसी शाम उन सभी को प्राणदंड दे दिया गया। इसी बीच कतीलीन ने एत्रूरिआ में एक छोटी सी सेना जमा कर ली थी जिसके खिलाफ सीनेट ने कोंसुल अंतोनियस के नेतृत्व में सेना भेजी। इसके बाद होनेवाली भयंकर लड़ाई में कतीलीन और उसके कोई तीन हजार समर्थकों ने मृत्यु का वीरतापूर्वक सामना किया।

8609

प्रथम त्रिशासकत्व और गालीय युद्ध

कतीलीन षडयत्र के कुचले जाने के कुछ ही बाद रोम मे राजनीतिक सत्ता को तीन सबसे प्रमुख सेनानायको ने अपने हाथ मे लेकर प्रथम त्रिशासकत्व की स्थापना की (६० ई० पू०)। यह तीन शासको का गठबधन था, जिसे जल्दी ही "तीन सिरवाले राक्षस" का बहुत ही सार्थक नाम दिया जानेवाला था। इसके सदस्य थे पापी, त्रासस और जूलियस सीजर।

गेयस जूलियस सीजर (१००-४४ ई० पू०) अभी पापी या त्रासस जैसा प्रमुख व्यक्ति नही बना था। लेकिन वह जबरदस्त महत्वाकाक्षी क्रियाशील और प्रतिभासपन्न आदमी था। वह जल्दी ही त्रिशासकत्व या शासकत्रयी का वास्तविक नेता बन गया, विशेषकर ५९ ई० पू० मे कोसुल चुने जाने के बाद। कोसुल की हैसियत से सीजर ने लोकतत्रीय ट्रिब्यूनो की नीतियो पर चलने का प्रयास किया। उसने एक कृषि कानून पेश किया, जिसके अनुसार पापी के भूतपूर्व सैनिको को जमीन के टुकडे दिये जाने थे।

लेकिन सीजर यह अनुभव करता था कि आबादी के लोकतत्रीय अशक, अर्थात शहरो और देहातो के सामान्यजन (प्लेब) उसकी सत्ता सबधी महत्वाकाक्षाओ की सिद्धि के लिए अपेक्षित दृढ समर्थन नही प्रदान कर सकेगे। इसके लिए वफादारऔर सुशस्त्रसज्जित सेनाओ का होना जरूरी था। इसलिए पूरी-पूरी कोशिश करके उसने पाच साल के लिए गाल प्रात का राज्यपालत्व प्राप्त किया। चूकि गाल को अभी जीतना बाकी था इसलिए सीजर को सेना जुटाने की आज्ञा दे दी गयी।

गाल के जीतने मे सात साल लगे। सीजर को जिस शत्रु का सबसे पहले सामना करना पडा, वह हेलवेती कबीला था। इसके बाद उसका जर्मनीय कबीले स्वेब मे सामना हुआ जिसका नेतृत्व अरियोवीस्तस के हाथो मे था। आखिर बेल्जियो के साथ लबी और प्रचड लडाई के बाद गाल को जीत लिया गया और उसे रोमन प्रात घोषित कर दिया गया। सीजर की इन विजयो के सम्मान मे सीनेट ने पद्रह दिन धन्यवादज्ञापन समारोह मनाने का आदेश दिया।

५६ ई० पू० के वसत मे त्रिशासको की लूका मे बैठक हुई और गाल मे सीज़र के सत्ताकाल को पाच वर्ष के लिए बढा दिया गया। ५५ ई० पू० मे सीजर ने राइन इलाके मे वहा के जर्मनीय कबीलो को काबू मे लाने के लिए सैनिक कार्रवाई की और ५४ ई० पू० मे वह ब्रिटेन मे उतरा।

लेकिन जल्दी ही यह देखने मे आया कि गाल को पूरी तरह से वश मे नही लाया गया था। ५४ ई० पू० मे व्यापक पैमाने पर गालीय विद्रोह फूट पडा। इस बगावत को वेसिंगेतोरिक्स के नेतृत्व मे अर्वेर्नी कबीले ने शुरू

किया था। रोमन बहुत ही कठिन स्थिति मे थे। सीजर के पास शत्रु के ३,००,००० लोगो के मुकाबले सिर्फ ६० ००० सैनिक ही थे। रोमनो को इस लडाई मे सिर्फ सीजर के चतुर सैन्य सचालन उसकी सगठन तथा सैन्य नेतृत्व प्रतिभा और कुशल राजनयत्व के कारण ही विजय मिल सकी, जिसमे विद्रोही सेना की कतारो मे हुए एक झगडे से भी सहायता मिली थी। ५१ ई० पू० मे शत्रु के अतिम केन्द्रो को भी कुचल दिया गया।

गाल मे पायी गयी विजयों के परिणाम जबरदस्त थे। सीजर ने ३०० कबीलों को काबू मे किया था ८०० नगरो को हल्ला बोलकर कब्जे मे किया था और दस लाख कैदी बनाये थे। वह रोम मे अपार लूट का माल भी लेकर आया था। फलस्वरूप रोम मे सोने का भाव तेजी से गिर गया और वह सेरो के हिसाब से बिकने लगा। इन सभी कारको ने सीजर की लोकप्रियता को बढाने मे सहायता की।

गृहयुद्ध

गालीय युद्ध का अत होते होते प्रथम त्रिशासकत्व पार्थिया मे क्रासस की पराजय और मृत्यु के बाद वस्तुत अस्तित्वहीन हो चुका था। जहा तक सीजर और पाम्पी की बात है तो सीजर जितना ही अधिक सफल और लोकप्रिय होता गया दोनो मे सबध उतने ही अधिक स्नेहहीन और शत्रुतापूर्ण होते गये। गाल मे सीजर का कार्यकाल पूरा होने के बाद उससे यह अपेक्षित था कि वह अपने सैन्यदलो (लीजियनो) को भग कर देगा।

लेकिन सीजर ने ऐसा नही किया और सीनेट ने उसे पितृभूमि का शत्रु घोषित कर दिया। पाम्पी को आदेश दिया गया कि वह इटली मे सेना जुटाकर उसका सामना करे।

सीजर ने पाम्पी की प्रतीक्षा करने मे समय नष्ट नही किया। जनवरी, ४९ ई० पू० मे अपने एक सैन्यदल के साथ उसने रूबिकोन नदी को पार किया जो सीजर की कमान मे स्थित प्रदेश और इटली के बीच सीमा की द्योतक थी। दतकथाओ के अनुसार उसने रूबिकोन को इन शब्दो के साथ पार किया था पासा पड चुका है क्योकि वह जानता था कि उसकी कार्रवाई ने गृहयुद्ध के इतिहास मे एक नये अध्याय का आरम्भ कर दिया है।

उत्तरी इटली के नगरो ने सीजर की सेनाओ का मुश्किल से ही कोई प्रतिरोध किया। पाम्पी ने जिसे तैयारिया करने के लिए आवश्यक समय नही मिल पाया था बाल्कन पर्वतो मे शरण ले ली जहा उसके पीछे पीछे बहुत से सीनेटर भी चले गये। सीजर ने रोम मे बिना किसी प्रतिरोध के प्रवेश किया। लेकिन वहा बहुत ज्यादा ठहरने मे कोई तुक नही था इसलिए वह अपनी सेनाओ के साथ स्पेन की ओर चल दिया जहा पाम्पी के वफादार सात

सैन्यदल थे। उन्हे हराने और इस प्रकार अपने पृष्ठभाग को प्रत्याभूत करने के बाद सीजर ने बाल्कनो को पार करने का फैसला किया।

आरभ मे पापी के विरुद्ध सीजर का अभियान खासा असफल रहा। एक बार सीजर ने बडी हार भी खायी लेकिन उसके विरोधी ने अपनी इस विजय के बाद वाछित सक्रियता नही दिखायी और सीजर अपनी अधिकाश सेना को बचाये रखने मे कामयाब रहा। निर्णायक लडाई ४८ ई० पू० मे फार्सालस नगर के निकट लडी गयी। पापी की सेना पराजित हुई और वह भागकर मिस्र चला गया, जहा उसकी कपटपूर्वक हत्या कर दी गयी।

सीजर भी पापी के पीछे पीछे मिस्र पहुचा। यहा वह रानी क्लिओपत्रा की उसके भाई के विरुद्ध सहायता करके स्थानीय राजकीय मामलो और साजिशो म दखल देने लगा। इसके फलस्वरूप सिकदरिया म बगावत हो गयी जिसे दबाने मे सीजर को बहुत मुश्किल पेश आयी। इसके बाद सीजर को मिथ्रीदतीज के बेटे फार्नसीज से लडने पूर्व जाना पडा। सीजर ने इस अभियान को तडित गति स मात्र पाच दिन म सफलतापूर्वक पूरा किया और फिर सीनेट को अपना 'मैं आया, मैंने देखा मैंने जीत लिया (वेनी विदी, विसी ") का प्रसिद्ध सदेश भेजा।

पापी की मुख्य सेनाए अब अफ्रीका मे थी और उनके साथ सीजर का कट्टर दुश्मन छोटा कातो भी था। ४६ ई० पू० मे अफ्रीका के रोमन सूबे के पूर्वी तट पर थाप्सस के पास एक महत्वपूर्ण लडाई हुई। पापी की सेनाओ को अतिम रूप से पराजित कर दिया गया और कातो ने आत्महत्या कर ली। कुछ ही बाद सीजर न नूमीदिआ को भी वश म करने म सफलता पा ली और उसी साल गरमियो मे रोम लौट आया जहा गाल मिस्र पोतस और नूमीदिआ पर उसकी विजयो के उपलक्ष्य म शानदार समारोहो का आयोजन किया गया।

लेकिन पापी के समर्थको के विरुद्ध सघर्ष का अभी अत नही हुआ था। पापी के पुत्र लडाई को फिर शुरू करने म सफल हो गये—और इस बार स्पेन म। ४५ ई० पू० म मुदा की लडाई मे सीजर न अपने शत्रुओ पर अतिम प्रहार किया, यद्यपि काफी लबे सघर्ष के बाद ही जिसम बहुत सी जान गयी। सीजर ने स्वय स्वीकार किया कि इस बार वह विजय के लिए नही बल्कि अपने प्राणो के लिए ही लडा था।

इस प्रकार आखिर गृहयुद्ध का अत हुआ और सीजर को जीवन भर के लिए अधिनायक (डिक्टेटर) बना दिया गया। अब उसकी शक्तिया की कोई सीमा ही नजर नही आती थी। जनसभा उसकी इच्छाओ को आज्ञाकारिता पूर्वक क्रियान्वित करती थी और राजकीय पद सीजर की सिफारिशो के मुताबिक ही दिये जाते थे।

धीरे धीरे सीजर के आचरण में राजतन्त्रवादी प्रवृत्तिया अधिकाधिक उभरकर सामने आने लगी। सीजर के निकटतम अनुयाइयो ने कई बार अनुरोध किया कि वह ताज ग्रहण कर ले। जब सीजर ने क्रासस की मृत्यु का बदला लेने के लिए पार्थवो के विरुद्ध अभियान की तैयारिया शुरू की, तो रोम मे इस आशय की अफवाह फैलने लगी कि पार्थिया को तो सिर्फ राजा ही जीत सकता है।

इन सभी बातो से सिर्फ जनता मे ही नही, बल्कि कई सीनेटरो म भी असतोष फैल गया जो सीजर को निरकुश शासक मानते थे। उसके खिलाफ एक षडयन्त्र रचा गया और १५ मार्च ४४ ई० पू० को सीजर को सीनेट म ब्रूतस तथा केसियस के नेतृत्व मे षड्यन्त्रकारियो के एक दल ने छुरा घोपकर हत्या कर दी। उसके शरीर पर २३ घाव पाये गये थे।

द्वितीय त्रिशासकत्व

सीजर की हत्या के बाद असतोष फूट पडा। रोम की जनता की सहानुभूति षडयन्त्रकारियो के साथ नही थी और ब्रूतस तथा कसियस को नगर से भागकर जाना पडा। इसके बाद रोम का वास्तविक स्वामी मार्कस अतोनियस (मार्क एंटोनी) था जो सीजर के घनिष्ठतम मित्रो मे एक था और ४४ ई० पू० म कौसुल चुना गया था।

कुछ ही बाद मच पर एक खतरनाक युवा प्रतिद्वद्वी का अवतरण हुआ। यह सीजर का उन्नीसवर्षीय दत्तक पुत्र ओक्तेवियन था। आरभ मे मार्कस अतोनियस उसके साथ तिरस्कार से पेश आया, लेकिन ओक्तेवियन ने इसका जवाब सीनेट के साथ अस्थायी सघट्ट बनाकर दिया। सिसेरो ने अपनी वक्तृत्व प्रतिभा ओक्तेवियन की सेवा मे लगा दी और अपनी निपुण वाकशक्ति के सारे प्रहार नये निरकुश शासक मार्कस अतोनियस के खिलाफ केंद्रित कर दिये।

अब गृहयुद्धो के अतिम अध्याय का प्रारभ हुआ। सीनेट ने ओक्तेवियन को मार्कस अतोनियस स लडने के लिए नियुक्त किया, जिसे पराजित कर दिया गया। अभी सीनेट अपनी जीत की खुशिया मनाने की तैयारिया ही कर रही थी कि ओक्तेवियन ने मार्कस अतोनियस और सीजर के एक और प्रसिद्ध समर्थक लेपीदस के साथ समझौता करके द्वितीय त्रिशासकत्व या शासकत्रयी की स्थापना कर दी। जनसभा ने इस सघट्ट को आधिकारिक मान्यता दे दी (ऐसा प्रथम त्रिशासकत्व के मामले म नही हुआ था)। त्रिशासको ने अभूतपूर्व आतक का राज्य स्थापित कर दिया – उनकी वाधन सूचिया के शिकार होकर हजारो लोग मारे गय और इनमे से सबसे पहलो मे मार्कस अतोनियस का कट्टर दुश्मन सिसरो भी था।

इसी बीच जूलियस सीजर के खिलाफ साजिश करनेवाले नेताओं – ब्रूतस और केसियस – ने बाल्कन प्रदेश में एक बड़ी सेना इकट्ठा कर ली थी। त्रिशासकों ने उनके खिलाफ कूच किया और ४२ ई० पू० में दोनों सेनाओं का मकदूनिया में फिलिप्पी के पास सामना हुआ। इस लड़ाई में ब्रूतस और केसियस दोनों मारे गये और यह हार भूतपूर्व सीनेटी गणराज्य के समर्थकों की अंतिम पराजय की परिचायक थी।

जिस तरह पहले त्रिशासकत्व में हुआ था, उसी तरह एक बार फिर त्रिशासकों में गंभीर वैमनस्य पैदा हो गया। लेपीदस तो खैर कभी भी किसी महत्वपूर्ण शक्ति का प्रतिनिधि नहीं रहा था, मगर मार्कस अतोनियस ने, जो पूर्व चला गया था, क्लिओपेत्रा के साथ संघट्ट स्थापित कर लिया और फिर कोरा रोमन राज्यपाल ही नहीं, एक नया स्वेच्छाचारी शासक भी बन बैठा। क्लिओपेत्रा के बच्चों को पूरे के पूरे सूबे भेंट देकर वह रोम के पूर्वी प्रदेशों के साथ इस तरह पेश आने लगा, मानो वे उसकी निजी संपत्ति हों।

इन सभी हरकतों के फलस्वरूप ओक्तेवियन और मार्कस अतोनियस में अंतिम अलगाव हो गया। रोमनों ने क्लिओपेत्रा के विरुद्ध आधिकारिक रूप से युद्ध की घोषणा कर दी और ३१ ई० पू० के शरद में मिस्री बेड़े को अक्तियम के युद्ध में पराजित किया गया। इसके कुछ ही बाद ओक्तेवियन की सेनाएं सिकंदरिया में पहुंच गयीं और मार्कस अतोनियस ने और फिर क्लिओपेत्रा ने भी आत्महत्या कर ली। इस तरह यूनान प्रभावित भूमध्यसागरीय राज्यों में से अंतिम, मिस्र भी रोमन राज्य का एक भाग बन गया। उसका एकमात्र शासक ओक्तेवियन था, जिसके पास असीम शक्तियां थीं। गृहयुद्ध का आखिर अंत हो गया।

१३ जनवरी, २७ ई० पू० को ओक्तेवियन ने एक कुटिल चाल चलकर सीनेट और जनसभा में पाखंडपूर्वक यह घोषणा की कि वह अपने आपातकालीन अधिकारों को त्यागने और गणराज्य की "पुनःस्थापना" करने की तैयारी कर रहा है। लेकिन सीनेटरों ने उसे राज्यसत्ता हाथ में रखने के लिए रजामंद कर लिया और उसे आगस्तस की सम्मानिक उपाधि प्रदान की। यह दिन प्रथम रोमन सम्राट आगस्तस सीज़र के शासन के आरंभ का द्योतक था। गणराज्य का अंत हो गया था और रोमन साम्राज्य के युग का समारंभ हो गया था।

आठवा अध्याय

साम्राज्यिक रोम

प्रारंभिक काल

आगस्तस सीजर का प्रमुखतंत्र

अपने धर्मपिता जूलियस सीजर के विपरीत ओक्तेवियन अपनी सत्ता के राजतांत्रिक पहलुओं को यथासंभव कम करने की कोशिश करता था। वह बहुत एहतियाती और मितव्ययी आदमी था और अपने को प्रिंस-समपु प्रथम (समकक्षों में प्रथम) या प्रिंसेप (प्रमुख) ही कहा करता था क्योंकि उसका नाम सीनेटरों की सूची में सर्वप्रथम था। आगस्तस सीजर के शासनकाल में रोमन राज्य के राजनीतिक ढांचे ने जो रूप लिया और जो साम्राज्य के प्रारंभिक काल भर में बना रहा वह प्रिंसीपेत (प्रमुखतंत्र) कहलाया।

प्रिंसीपेत को गणराज्य का आभास देनेवाला राजतंत्र कहा जा सकता है। उसमें सीनेट तथा सभी गणतंत्रीय राजकीय पदों को कायम रखा गया। इसके अलावा ओक्तेवियन सीनेटरों के प्रति विशेष सम्मान प्रकट करता था और उसने स्वयं अपने को तेरह बार कोंसुल निर्वाचित करवाया। उप कोंसुलों (प्रोकोंसुलों) तथा ट्रिब्यूनों के बारे में भी उसका यही रवैया था। उसने महापुरोहित का पद लिया और 'पितृभूमि पिता' की साम्मानिक उपाधि धारण की। गणतंत्रीय राजकीय ढांचे की यह पुनःस्थापना शुद्धतः औपचारिक ही थी क्योंकि सभी राजकीय पद एक व्यक्ति के हाथों में संकेंद्रित थे। इसके अलावा आगस्तस सीजर को सशस्त्र सेनाओं का प्रधान सेनापति घोषित किया गया और उसके नामों तथा उपाधियों में इंपेरातोर (सम्राट) की पारंपरिक सैनिक उपाधि भी जोड़ दी गयी।

आगस्तस के शासकत्व में जनसभा धीरे-धीरे अपने महत्व से वंचित कर दी गयी। प्लेबों के प्रति आगस्तस सीजर की नीति को 'रोटी और तमाशा' शब्दों द्वारा पूर्णतः व्यक्त किया जा सकता है, दूसरे शब्दों में आबादी

की मुह भरायी के लिए अक्मर मुफ्त रोटी बाटी जाती थी और भडकीले खेल-तमाशे दिखाय जाते थे, जबकि उसका राजनीतिक जीवन म भाग लेना रोकन के लिए हर मभव प्रयाम किया जाता था। आगस्तम अपने ममर्थन का मुख्य आधार वडे दामस्वामी जमीदारो – सिर्फ रोम के ही नही बल्कि सारे इटली के – और रोमन मेना को मानता था।

आगस्तस सीजर ने दासप्रथा को दृढ करन के लिए कई कदम उठाये। इस आशय का कानून स्वीकार किया गया कि किसी दासस्वामी की हत्या होने पर उसके सभी घरेलू दासो को जान मे मार दिया जायेगा। आगस्तस ने मुक्त किय जा सकनेवाले दासो की सख्या को भी सीमित कर दिया और मुक्त किये गुलामो को समाज की उच्चतर श्रेणियो मे शामिल किये जाने पर पाबदी लगा दी। जहा तक सेना की बात है गृहयुद्धो का अत होने के बाद आगस्तम न सैन्यदलो की सख्या काफी कम कर दी और तथाकथित प्रीतोरी रक्षकदल की स्थापना की जिसमे प्रिसेप की अत्यत विश्वस्त अगरक्षक सेना के सैनिक थे।

आगस्तस सीजर की विदेश नीति बहुत एहतियातभरी थी। वह रोम की शक्ति का युद्ध की बजाय राजनयिक वार्ताओ के जरिये प्रसार करना बेहतर समझता था। उसने अर्मीनिया और बासफोरस राज्य को इसी तरह अपने नियत्रण मे लाने म सफलता प्राप्त की थी। जर्मनी म रोमन प्रवेश का आरभ खासा सफल रहा था लेकिन बाद म जर्मनीय कबीलो के विद्रोह ने इस प्रक्रिया को रोक दिया। ९ ईसवी मे बागी कबीलो ने टयूटोबर्गर वाल्ड की लडाई मे रोमन सेनाओ को बुरी तरह से पराजित किया।

आगस्तस सीजर ४५ साल रोमन साम्राज्य का सर्वोच्च शासक रहा। उसने विहित किया कि साम्राज्यिक शक्ति को वशागत बना दिया जाना चाहिए और जब १४ ई० मे उसकी मृत्यु हुई तो उसके बाद उसका सौतेला बेटा तिबेरियस गद्दी पर बैठा।

रोमन साहित्य का स्वर्णयुग

आगस्तस का शासनकाल रोमन साहित्य के स्वर्णयुग का समानुवर्ती था। इस प्रसग म सबसे पहले वर्जिल (पब्लियस वर्जिलियस मारो ७०-१९ ई० पू०) का उल्लेख किया जाना चाहिए जिसने बूकोलिक्स जो प्रकृति के सौदर्य और ग्राम्य जीवन की अच्छाइयो के बारे म दस कविताओ की पद्यवेणी है, जार्जिक्स' जो कृषि सबधी नीतिवचनो के बारे म कविता है और पूर्वोक्त कृतिया से भी अधिक प्रसिद्ध इनीद – होमर के नमून पर बारह खड के महाकाव्य – को लिखा। इनीद म जूलियन वश जिसम

जूलियस सीजर और आगस्तस पैदा हुए थे, के पौराणिक पूर्वज की कथा दी गयी है। वर्जिल की यह कविता काल्पनिक वीरकाव्य की मिसाल है, क्योकि यह पौराणिक तथा दतकथाओ पर आधारित है, 'इनीद' का वास्त विक महत्व इस बात मे है कि उसमे आगस्तस के एक व्यक्तित्व और शासन का लगभग प्रकट प्रशस्तिगान किया गया है।

इस युग का एक और प्रमुख कवि होरेस (क्वितस होरेशियस फ्लाकस, ६५-८ ई० पू०) था जिसने अवगीत (सैटायर्स), 'अत्यपदिया' (इपो डस) सबोधगीत (ओड्स) और 'सदेशपत्र' (एपिस्टल्स) लिखे है। होरेस मूलत गीतिकार था यद्यपि उसकी कुछ कृतियो मे स्पष्ट विनडा त्मक प्रवृत्ति देखी जा सकती है। वर्जिल की ही भाति उसने भी आगस्तस का गुणगान किया है। उसकी प्रसिद्ध कविता एक्सेगी मोनूमेतम (स्मारक) की तो आधुनिक काल म भी ढेरो अनुकृतिया की गयी हैं।

इस काल का तीसरा महान कवि ओविद (पब्लियस ओविदियस नासो, ४३ ई० पू० १७ ई०) था। उसकी प्रारभिक कविताए अधिकाशत प्रेम सबधी कविताए थी। उसकी सबसे प्रसिद्ध कविताए 'मेटामोरफोसीज' (रूपातरण) जो विभिन्न मिथको का काव्यबद्ध वर्णन है और 'फास्ती' हैं जिसम प्राचीन दतकथाओ को सभी जातीय त्योहारो और उत्सवो सहित रोमन पचाग के रूप म प्रस्तुत किया गया है। ८ ई० मे आगस्तस ने ओविद को साम्राज्य के एक सुदूर प्रदेश मे निर्वासित कर दिया। इस निर्वा सन के कारण हम ज्ञात नही है और यही उसके जीवन का अत भी हुआ। त्रीस्तिआ और एपिस्चुली एक्स पोतो उसकी इसी काल की रचनाए है।

इस युग की रोमन विद्वतमडली के सबसे उल्लेखनीय व्यक्तियो म एक रोम क १४२ खडीय वृहदाकार इतिहास – अब उर्बे कोदिता लिब्री' – का लेखक लिवी (तीतस लिवियस, ५९ ई० पू०-१७ ई०) था जिसकी कृति म नगर के गौर्यमय अतीत का यशोगान किया गया था। एक और प्रमुख विद्वान ज्येष्ठ प्लिनी (पहली सदी ई०) था, जिसकी कृतियो मे प्रसिद्ध हिस्तोरिआ नेचुरलिस' (प्राकृतिक इतिहास) भी था जिसमे उसने प्राकृतिक विज्ञानो के विभिन्न क्षेत्रो – सृष्टिवर्णन, वनस्पतिविज्ञान, जीवविज्ञान खनिजविज्ञान आदि के बारे मे लिखा है।

आगस्तस के शासनकाल म स्थापत्य तथा ललित कलाओ का भी मुकु लन हुआ। रोमन फोरम (केद्रीय चौक) का पुनर्निर्माण किया गया और सुख्यात आरा पासिस आगस्ती (शाति की वेदी) सहित अनेक मदिरो तथा शहरी इमारतो का निर्माण हुआ। आगस्तस का स्वय कई बार इगित करना था कि उसने अपना राज ईंटो के शहर म शुरू किया था और अपने पीछे

वह सगमर्मर का नगर छोडकर गया है। वस्तुत उसके शासनकाल म रोम काफी बढा और धीरे धीरे वह अधिकाधिक एव महान साम्राज्य की राजधानी जैसा नगर लगा।

पहली सदी ईसवी में रोमन साम्राज्य

पहली सदी ईसवी म रोम पर जूलियो-क्लाउदियन वश के शासको ने राज किया जिनम सबसे मशहूर नीरो (५४ ६८ ई०) था, जो एक भ्रष्ट और निर्दय आदमी था और जिसन अपनी मा और भाई की भी हत्या करवा दी थी। नीरो सीनेट की कोई परवाह नही करता था और अपने स्वेच्छाचारिता के रुझान को छिपाने की कोशिश किये बिना उसने कई सीनेटरो को मरवा दिया था। उसके शासनकाल म शाही दरबार के रखरखाव पर बशुमार धन खर्च किया जाता था और वह स्वय तथा उसके प्रियपात्र अभूत पूर्व ऐशोआराम म रहा करते थे। नीरो सगीत और गायन का बडा शौकीन था, मच पर स्वय भी आया करता था और उसन सागीतिक कार्यक्रम पेश करत हुए यूनान का दौरा तक किया था। ६४ ई० म रोम मे भयानक आग लग गयी, जो पूरे एक हफ्ते जलती रही और जिसने नगर के १४ मे से १० मुहल्लो को जलाकर खाक कर दिया। इस सबध मे रोम मे अफवाह फैली कि नीरो ने यह आग खुद लगवायी थी, ताकि वह एक विरल दृश्य का आनद ले सके। सम्राट की निर्दयता और उसकी बीभत्स सनको के कारण अत मे विद्रोह हो गया। प्रीतोरी रक्षकदल ने उसके साथ विश्वासघात किया और नीरो को आत्महत्या करनी पडी। कहा जाता है कि मरने के पहले उसने कहा था 'मेरे साथ कैसा कलाकर मर रहा है!'

नीरो के बाद वेस्पासियन ने अपन सैयदलो की सहायता से सत्ता पर अधिकार कर लिया और फ्लेवियन राजवश की स्थापना की। वस्पासियन ने, जिसने ६९ मे ७९ ई० तक राज किया था पहले जूदिया (यहूदिया) मे नीरो के शासनकाल मे शुरू हुए विद्रोह (६६ से ७० ई० तक) को कुचलने के समय सैन्य नेता के नाते नाम कमाया था। वस्पासियन के बाद उसके दो पुत्र, तीतस और दोमीतियन गद्दी पर बैठे। तीतस के शासन काल मे विसुवियम पर्वत का उदगार हुआ और उसने पापी तथा हर्कूलेनियम नगरो को लावा से ढक दिया। वर्तमान काल मे इन नगरो का उत्खनन किया जा चुका है और उससे हमे रोमन साम्राज्य के कसबो के जीवन और रीति रिवाज का खासा स्पष्ट चित्र प्राप्त हुआ है।

फ्लेवियन राजवश के शासनकाल मे रोमन राज्य मे महत्वपूर्ण परिवर्तन आन लगे। सम्राट प्रातीय अभिजात वर्ग पर अधिकाधिक निर्भर करने लगे

और सीनेट मे उनके प्रतिनिधियो की लगातार अधिक सख्या के लिए गुजाइश पैदा करने लगे। इस प्रकार सिर्फ रोम और इटली ही नही, बल्कि समूचे तौर पर पूरे साम्राज्य के बडे दासस्वामी साम्राज्यिक सत्ता का मुख्य आधार बन गये।

दूसरी शताब्दी मे रोमन साम्राज्य

दूसरी सदी ई० मे रोमन साम्राज्य पर अतोनिन राजवश का शासन था। इस राजवश के सबसे प्रसिद्ध सम्राट थे त्राजन (९८-११७), जिसके शासन काल म रोम ने अपना अतिम क्षेत्रीय विस्तार किया (डेशिया, अरबिया, आर्मीनिया और मसोपोटामिया के सूबे), हेड्रियन (११७-१३८), जिसन नये प्रदेश जीतने के स्थान पर अपना ध्यान इतने विराट साम्राज्य के नियत्रण के लिए आवश्यक प्रशासनिक तथा नौकरशाही तत्रो को विकसित करन पर केद्रित किया और मार्क्स आरेलियस (१३१-१८०) जो अपनी दार्शनिक कृतियो के लिए विख्यात है। अतोक्त सम्राट के शासनकाल म सीमातो पर बर्बर जातियो के दबाव के साथ साम्राज्य मे सकट के पहले चिह्न प्रकट हुए।

दूसरी शताब्दी को रोमन साम्राज्य का स्वर्णयुग माना जाता है। यह साम्राज्य के अधिकतम क्षेत्रीय प्रसार का युग था। उसकी सीमाए उत्तर मे स्काटलैड मे दक्षिण मे नील महाप्रपातो तक और पश्चिम मे अटलाटिक तट से लेकर पूर्व मे फारस की खाडी तक फैली हुई थी।

लेकिन रोमन राज्य की प्रकृति मात्र इन बाह्य कारको द्वारा ही निर्धारित नही होती थी। दासस्वामित्व पर आधारित यह समाज इस समय तक अपने विकास के शिखर पर पहुच चुका था। अधिकाश जमीदारिया और दस्तकारी उद्योग बाजार-अर्थव्यवस्था के अनुकूल किये जा चुके थे और विदेश व्यापार खूब उन्नत हो चुका था। इसके परिणामस्वरूप दासस्वामी अपने गुलामो से यथासभव अधिकतम लाभ पाने की कोशिश करते थे और शोषण के अत्यधिक पाशविक रूपो का प्रयोग करने से भी नही झिझकते थे। दासो की दशा अत्यत दारुण थी। छोटे से छोटे अपराधो के लिए भी उन्हे हर जागीर पर मौजूद विशेष कैदखानो मे झोक दिया जाता था बेडिया पहनकर काम करने के लिए मजबूर किया जाता था मारा पीटा जाता था और जान तक से मार दिया जाता था। गुलामो को खुले आतक द्वारा वश मे रखा जाता था। एक बार किसी अभिजात रोमन को उसके दास न मार डाला। फलस्वरूप आगस्तस के शासनकाल मे जारी किये गये कानून के अनुसार उसके सभी ४०० घरलू दासो को मृत्युदड दे दिया गया यद्यपि इस

बात की भी संभावना थी कि रोम के निवासी इस क्रूर कदम के उठाये जाने से नाराज हो जायेंगे और विरोधस्वरूप विद्रोह तक कर देंगे।

रोमन साम्राज्य के स्वर्णिम काल में प्रांतों में और विशेषकर उनके शहरी जीवन में भी आर्थिक उन्नति हुई। पश्चिमी प्रांतों (गाल, स्पेन आदि) के नगरों में मंडलियों (कॉलेजियमों) में संगठित नानारूप्य व्यापारी और दस्तकार प्रकट हो गये। ये मंडलियां सिर्फ स्थानीय व्यापार केंद्रों में ही नहीं, बल्कि साम्राज्य के सुदूरतम भागों में भी काम करती थीं। पूर्व में व्यापार ने एशिया माइनर और शाम में भी महत्वपूर्ण प्रगति की। इसके अलावा अरब और भारत के साथ और बाद में चीन तक के साथ नियमित व्यापारिक सूत्र स्थापित किये गये। इन देशों से मसालों, रत्नों, हाथीदांत और रेशम का आयात होता था।

नये और बढ़ते हुए व्यापार मार्गों के परिणामस्वरूप उन जगहों में कई नये शहर बसाये गये, जहां रोमन सेना की टुकड़ियों को लंबे समय के लिए तैनात किया जाता था। इस काल में कई पुराने शहर भी फिर फूलने फलने लगे। सामान्यतः प्रांतीय नगरों को सीमित मात्रा में स्वायत्तता प्राप्त थी और उनके अपने सीनेटर और अधिकारी होते थे।

लेकिन प्रांतों में सामान्य लोग रोमन शासन से नाराज थे। स्थानीय किसानों से जमीन छीन ली गयी थी और रोमन आबादकारों को दे दी गयी थी, जबकि स्थानीय किसानों को अक्सर ऋणदासत्व में पड़ना पड़ता था। सूबों में आबादी पर करों का भारी बोझ था और फौजों के लिए अक्सर जबरन रसद, वगैरह वसूल की जाती थी। गाल, ब्रिटेन और अफ्रीका जैसे कुछ प्रांतों में पहली सदी में और फिलिस्तीन में दूसरी सदी में होनेवाले बड़े-बड़े विद्रोहों के मूल में यही कारण थे। लेकिन रोमन साम्राज्य के पास उस समय इन आंदोलनों को कुचलने के लिए काफी ताकत थी और उनसे उसकी केंद्रीकृत सत्ता के लिए कोई गंभीर खतरा नहीं था।

रोमन साम्राज्य का उत्कर्ष और पतन

तीसरी शताब्दी का संकट

रोमन साम्राज्य के स्वर्णयुग का १९२ में अंत हो गया, जब अंतोनिन राजवंश का अंतिम सम्राट कमोदस षड्यंत्रकारियों के हाथों मारा गया। सिंहासन के विभिन्न दावेदारों में संघर्ष के बाद सेप्तीमियस सेवेरस विजयी हुआ और उसने १९३ से २११ ई० तक शासन किया। उसके शासनकाल

रोम का कोलोजियम

मे साम्राज्य ने खुला सैनिक स्वरूप ग्रहण कर लिया। सेप्तीमियस सेवेरस न सेना म कई सुधार किय। उदाहरण के लिए सामान्य सैनिको को अब सैनिक सेवा मे बने रहने का और तरक्की पाकर सेनानायक तक बनने का और इक्वीती श्रेणी मे लिये जाने का अधिकार मिल गया। इस कार्रवाई से सैनिको के आगे सैनिक सेवा और नागरिक जीवन – दोनो मे व्यापक सभावनाओ के द्वार उन्मुक्त हो गये। यह कोई आकस्मिक बात न थी कि बाद के वर्षो मे कई सैनिक सम्राटो' को आगे आना था। वास्तव मे इस आशय की अफवाहे काफी फैल गयी थी कि सेप्तीमियस सेवेरस ने मृत्युशैया पर अपने पुत्रो को सैनिको को धनी बनाने और अन्यो की तरफ कोई ध्यान न देने का आदेश दिया था।

सेवरीन राजवश का शासन लम्बा नही चला। इस वश के अतिम शासक की हत्या किये जाने के बाद कुछ समय सत्ता मक्सीमीनस के हाथो मे रही जो एक भूतपूर्व गडरिया था और सेना मे सामान्य सैनिक की हैसियत से भरती हुआ था। लेकिन उसकी भी जल्दी ही हत्या कर दी गयी और उसके बाद तो सम्राटो, सैनिक विद्रोहो और तख्ता पलटो का एक लम्बा सिलसिला सा शुरू हो गया। साथ ही सीमातो पर बर्बर कबीलो का दबाव और ज्यादा

हो गया। फ्रैंको और अलीमानियो ने गाल पर हमला किया, सैक्सनो ने ब्रिटेन पर आक्रमण किया और मूर अफ्रीका मे फैल गये, जबकि काले सागर के तटवर्ती देशो मे विभिन्न गोथिक कबीलो का एक शक्तिशाली बर्बर सघट्ट रूप लेने लगा। केंद्रीय सरकार के लिए इन बर्बर कबीलो का सेना द्वारा सामना करना इसलिए और भी ज्यादा मुश्किल हो गया था कि उसे साथ ही अपने देश के भीतर भी उपद्रवो को कुचलना पड रहा था। जल्दी ही कई पश्चिमी सूबे – गाल, ब्रिटेन और स्पेन – रोम के हाथ से निकल गये। पूर्व मे पालमीरा राज्य पैदा हो गया, जिसने फारस के साथ सश्रय बनाने के बाद साम्राज्य के लगभग सभी पूर्वी प्रातो पर नियत्रण प्राप्त कर लिया।

वर्ग सघर्ष का तेज होना भी इस युग की एक विशेषता थी। ईसा पूर्व दूसरी और पहली सदियो के विपरीत नये विद्रोहो मे मुख्य भूमिका दासो ने नही, बल्कि शोषित और पराधीन किसानो के समूहो ने अदा की थी। लेकिन इसका यह अर्थ नही कि गुलामो ने इन आदोलनो मे कोई भी भाग नही लिया था। अफ्रीका और एशिया एक-कोचक मे कई बगावते हुई, लेकिन इनमे सबसे महत्वपूर्ण गाल मे हुआ किसानो और दासो का महान विद्रोह था। यह विद्रोह दूर दूर तक फैल गया और अत मे स्पेन तक पहुच गया। यह तीसरी सदी के सातवे दशक मे शुरू हुआ था और बीच-बीच मे अतरालो के साथ कई दशक तक चलता रहा।

इस प्रकार रोमन साम्राज्य शब्दश बिखर रहा था। केंद्रीय सत्ता का कमज़ोर होना, उसके सीमातो पर युद्ध और देश मे विद्रोह – ये सब एक गहन सकट की सामाजिक तथा राजनीतिक अभिव्यक्तिया ही थे।

लेकिन इस सकट की जडे और भी ज्यादा गहरी थी जो रोमन समाज की आर्थिक बुनियादो के साथ ही जुडी हुई थी और जो उस समय की बदलती हुई विचारधारा मे प्रतिबिबित हो रही थी। रोमन समाज के आर्थिक आधार का विघटन कोलोनसो (स्वतत्र वर्ग मे पैदा हुए कम्मियो) के उदय के साथ घनिष्ठ रूप से जुडा हुआ था। विचारधारात्मक सकट ने सर्वोपरि ईसाई धर्म के उदय तथा प्रसार मे अपनी अभिव्यक्ति पायी।

कोलोनस प्रथा का उदय

दास-श्रम और दासप्रथा पर आधारित अर्थव्यवस्था अब समय की अपेक्षाओ को पूरा करने मे असमर्थ थे। गुलाम को अपनी मेहनत के फलो मे कोई दिलचस्पी नही थी और वह हमेशा दबाव मे ही काम करता था। गुलामो की विराट सख्या के समुचित अधीक्षण को सुनिश्चित करना लगभग असभव या कम से कम बहुत जटिल तो था ही और यह हालत दास श्रम के

आधार पर गठित बडी जमीदारियों के विकास म अवरोध की तरह काम करने लगी थी।

दूसरी सदी के उत्तरार्ध म रोमन सम्राटो को दासस्वामियो की शक्ति और अधिकारो को एक हद तक सीमित करनेवाले कई कदम उठाने पडे। जमीदारियो म मौजूद दास-बदीगृहो को खत्म कर दिया गया और गुलामो को हमेशा बेडियो म रखना गैरकानूनी बना दिया गया। इसके अलावा दास स्वामियों को अब अपने गुलामो को जान से मारने का हक नही रहा। इस प्रकार मालिको और गुलामो के सबधो मे राज्य अब पहले की बनिस्बत कही अधिक सक्रिय भूमिका का निर्वहन करने लगा।

दूसरी तरफ दासस्वामी स्वय दासो को काम करने के लिए प्रोत्साहन और प्रेरणा प्रदान करने लगे। कुछ अपने गुलामो को भाडे पर काम करने के लिए भेजने लगे और इस तरह अर्जित आय के एक हिस्से को दासो के पास रहने देने लगे। इससे भी ज्यादा आम रिवाज यह था कि दासो को जमीन के टुकडे कारखाना या दूकान के रूप म कुछ सपत्ति दे दी जाती थी। इस प्रकार गुलाम अपना कारोबार चला सकता था और अपनी आय का एक हिस्सा मालिक को एक तरह के मुक्ति-लगान की तरह देता रहता था।

लेकिन सबसे महत्वपूर्ण नयी प्रवृत्ति कोलोनसो की बढती हुई सख्या थी। कोलोनस उन लोगो का (आम तौर पर स्वतत्र लोगो) दिया गया नाम था जो लगान पर जमीन लिया करते थे। जमीन को लगान पर देने की प्रथा बहुत पुरानी थी लेकिन दास श्रम पर चलनेवाली जागीरो के स्वर्ण काल मे यह सामूहिक पैमाने की प्रथा का रूप नही ले पायी थी। लेकिन अब जमीदार और विशेषकर साल्तियो (बडी जागीरो) के मालिक इस निष्कर्ष पर पहुच चुके थे कि अपनी जमीन की काश्त के लिए कई सौ गुलामो को लगाने के बजाय जमीन को छोटे छोटे टुकडो म विभाजित करके उसे कोलोनसो को लगान पर दे देना उनके लिए कही अधिक लाभदायक रहेगा।

इस तरह कृषि श्रम का यह नया स्वरूप अधिकाधिक व्यापक होता गया। दूसरी सदी के अत तक कोलोनसो और जमीन के टुकडे रखनेवाले गुलामो या मुक्त दासो (सपत्ति का अधिकार रखनेवाले) के बीच भेद करीब करीब गायब हो चुका था। वे साल्तीस्वामियो पर लगभग समान मात्रा मे निर्भर थे अलग फार्मो अथवा गावो मे रहते थे, जिनमे अपनी कार्यशालाए दूकाने और बाजार थे, जहा जमीन को काश्त करनेवाले अपनी उपज को बेचते थे और अपनी जरूरत की चीजे खरीदते थे।

तीसरी शताब्दी के सकट काल मे जब शहरी जिंदगी प्रगतिरोध की अवस्था मे पहुच चुकी थी और बहुत कम मुद्रा ही परिसचरण मे थी, तब बडी जागीरो के मालिको ने अपना लगान जिस रूप मे मागना शुरू कर

दिया। कोलोनस को अब अपने मालिक को अपनी फसल का एक हिस्सा (आम तौर पर तिहाई) देना पडता था और साल मे छ से बारह दिन मालिक की ज़मीन पर काम करना पडता था। यह कोलोनसो के बधन के आरभ का द्योतक था, जिसे चौथी सदी मे सम्राट कोन्स्तान्तीन के शासन-काल मे विहित करके कानून बना दिया गया। कोलोनसो की स्थिति अधि-काधिक भूदासो जैसी बनने लगी। कोलोनस का काम कई लिहाज से दास के काम मे एक सुधार था – कोलोनस, जो अपने श्रम के उपकरणो का स्वामी था, उनकी ज़्यादा ध्यान मे देखभाल करता था और चूकि उसे अपनी उपज का सिर्फ एक हिस्सा ही मालिक को देना होता था, इसलिए अपनी मेहनत के फलो म उसका ज़्यादा निहित स्वार्थ था। ये सभी कारक इस तथ्य के द्योतक थे कि दासस्वामी-अर्थव्यवस्था और दासप्रथा अब कालातीत हो चुकी थी और उनकी जगह अर्थव्यवस्था तथा श्रम के एक नये और अधिक फलोत्पादक रूप द्वारा लिया जाना अनिवार्य था। रोमन दासस्वामी समाज के गहन आर्थिक सकट का मर्म यही था।

ईसाई धर्म

ईसाई धर्म, जो रोमन साम्राज्य के सकट की विचारधारात्मक अभिव्यक्ति था, पहली सदी ईसवी मे प्रकट हुआ था लेकिन दूसरी सदी के अत के बाद से यह बहुत ही तेज़ी के साथ फैला। अनेक देवी-देवताओ, महज विश्वासो और कर्मकाडोवाला रोमनो का प्राचीन धर्म अब समाज की आध्यात्मिक आवश्यकताओ को तुष्ट करने के लिए काफी नही रह गया था। सम्राट की पूजा, जिसे स्वय सम्राट बहुत महत्व देते थे इस कसर को पूरा करन के लिए और भी अधिक अपर्याप्त थी। इस कारण पूर्व के कई धर्म और विश्वास – मिस्री देवी ईसिस, पारसीक देव मित्रस और यहूदी देवता येहोवा की उपासना और अतत, ईसाई धर्मशिक्षा जो पूर्वोक्त देवी-देवताओ की उपासना से किसी भी प्रकार कम महत्वपूर्ण नही थी, रोम मे जड पकडने और लोकप्रियता प्राप्त करने लगे।

इस नये धर्म के सस्थापक नाजरेथ निवासी यीशू या ईसा थे जो ईश्वर के पुत्र और मानवजाति के त्राता होने का दावा करते थे। बाइबिल (इजील) मे बताया गया है कि किस तरह वह अपने शिष्यो के साथ घूमते हुए चमत्कार करते थे और लोगो को उपदेश देते थे। बाद मे उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया और सलीब पर लटकाकर बडे यत्रणामय और अपमानजनक तरीके से उनकी जान ले ली गयी। इजील की कथा हमे यह भी बताती है कि किस प्रकार वह मृत्यु के तीसरे दिन पुनर्जीवित हो उठे और स्वर्ग मे

आरोहण कर गये। नये धर्म के अनुयायियों ने ईसा मसीह के पार्थिव जीवन के बारे में इसी कथा का प्रचार किया था।

ईसाई धर्म ने, जो फिलिस्तीन में पैदा हुआ था और रोमन साम्राज्य के अन्य नगरों तथा देशों में भी फैल गया था, प्रारंभिक ईसाई समुदायों की जीवन प्रणाली की सादगी, समानता और मरणोपरांत जीवन में विश्वास के कारण बहुत से अनुयाइयों को आकर्षित किया। ईसाई समुदायों में सबसे अधिक आबादी के निर्धनतर सस्तर ही शामिल हुए थे, जैसे गरीब किसान, आजाद किये हुए दास और दास। इसने शाही अधिकारियों के सन्देह को जगा दिया और उन्होंने ईसाइयों का दमन करना शुरू किया। लेकिन फिर भी नया धर्म तेजी से जड़ पकड़ता और फैलता गया।

ईसाई धर्म के विकास में एक नयी मंजिल का आरंभ दूसरी सदी में हुआ, जब ईसाई बिरादरियां रोमन समाज के नेतृत्व में संयुक्त हो गयीं। नये धर्म के रहनुमाओं का पदानुक्रम अधिक जटिल हो गया – उसमें धर्माध्यक्ष (बिशप) पैदा हो गये और बिरादरी के आर्थिक मामलों की देखरेख करनेवालों के लिए उपयाजक (डीकन) का पद शुरू किया गया। समुदायों की सामाजिक संरचना भी बदलने लगी – रोमन समाज के ऊपरी वर्गों के अधिकाधिक सदस्य धर्मपरिवर्तन करके नये धर्म के अनुयायी बनने लगे। इस प्रकार धीरे धीरे एक शक्तिशाली संगठन ने रूप ले लिया, जिसे आगे चलकर ईसाई चर्च के नाम से विज्ञात होना था। धीरे धीरे रोमन सरकार और सम्राटों ने यह समझ लिया कि यह नया धर्म, जो लोगों से विनयशील होने का और 'इस संसार की असार वस्तुओं' की ओर ध्यान न देने का तकाजा करता है और उनके सारे कष्टों के लिए स्वर्ग में परितोष की प्रतिश्रुति करता है, उनके हाथों में एक उपयोगी औजार बन सकता है।

इस कारण चर्च और राज्य के बीच की दरार धीरे धीरे भर गयी और इसमें अचरज की कोई बात नहीं है कि ईसाई धर्म अंत में आधिकारिक रूप से मान्य राज्य धर्म बन गया। चर्च तथा राज्य के प्रभाव-क्षेत्रों की विभाजक रेखा को निर्धारित कर दिया गया – ईसा को स्वर्ग का सम्राट मान लिया गया और रोमन सम्राट को साम्राज्य का इहलौकिक शासक।

प्रभुतंत्र या दोमिनेत

रोमन साम्राज्य की हालत इतनी संगीन होने के बावजूद उसके शासक राज्य की नैया को कुछ समय तक चालू रख सके। वस्तुतः साम्राज्यिक सत्ता का पुनः सुदृढ़ीकरण ही हुआ। साम्राज्य के उत्तरवर्ती काल में राज्य का जो ढांचा स्थापित किया गया था, वह "दोमिनेत" या प्रभुतंत्र कहलाया (लातीनी

शब्द "दोमिनुस' का अर्थ है प्रभु या स्वामी)। यह पूर्व के स्वेच्छाचारी राज्यो की याद दिलानेवाले खुले राजतत्रीय स्वरूप का राज्य था। उन सभी गण-तत्रीय लक्षणो को अब तज दिया गया, जिन्हे प्रिमीपेत के जमाने मे कायम रखा गया था। सीनेट की हैमियत अब रोम की नगर परिषद मे अधिक न थी और ठाठदार पूर्वी तर्ज पर दरवारी शिष्टाचार और तौर-तरीके भी विक-सित हो गये।

दिओक्लेतियन (२८४-३०५) के शासनकाल मे, जो एक प्रतिभाशाली सगठनकर्ता और सयतवुद्धि राजनीतिज्ञ था, शाही सत्ता का और भी सुदढी करण हुआ। कई प्रातो की अलगाव की प्रवृत्तियो को ध्यान मे रखते हुए दिओक्लेतियन ने साम्राज्य को चार भागो मे विभाजित कर दिया और तीन सहशासको या सहकर्मियो को नियुक्त किया (चतु शासकत्व)। इसके अलावा पूरे साम्राज्य को १०१ सूबो मे बाट दिया गया और सूबो के विभिन्न समूहो को दिओसीज नामक बडी प्रशासनिक इकाइयो मे मिला दिया गया, जिनकी सख्या बारह थी।

इन प्रशासनिक सुधारो के अलावा दिओक्लेतियन ने समान मात्रा मे प्रति व्यक्ति भू-कर लगाकर कर-सुधार भी किया और मुद्रा परिमचग्ण के क्षेत्र मे आवश्यक सतुलन की पुन स्थापना करने के लिए वित्तीय सुधार किया तथा नियत मूल्यो के बारे मे अपना सुप्रसिद्ध राजादेश जारी किया। यह राजादेश सर्वावश्यक वस्तुओ की कीमतो और पारिश्रमिक के राजकीय नियमन का अब तक कभी भी किया गया सर्वप्रथम प्रयास था।

३०५ मे दिओक्लेतियन ने सिहासन त्याग दिया और यद्यपि सत्ता अब भी औपचारिक रूप मे उसके भूतपूर्व सहकर्मियो के हाथो ही रही, फिर भी सिहासन के नये दावेदार पैदा हो गये। उनमे झडपे शुरू हो गयी जिन्होने एक और गृहयुद्ध को जन्म दिया। इस सघर्ष मे दिओक्लेतियन के एक सहकर्मी का बेटा कोन्स्तान्तीन विजयी हुआ और उसने ३०६ से ३३७ तक शासन किया। कोन्स्तान्तीन को अपने प्रतिद्वद्वियो से कई वर्ष सघर्ष करना पडा और आखिर जब वह रोमन साम्राज्य का एकमात्र शासक बन गया तो उसने साम्राज्य के चार भागो मे विभाजन को कायम रखा, यद्यपि उसने चतु-शासक प्रणाली का अत कर दिया था। चारो भागो मे से प्रत्येक पर अब सम्राट के प्रति उत्तरदायी प्रीफेक्ट (अधिपति) शासन करने लगा।

कोन्स्तान्तीन को ईसाई चर्च ने 'महान" की उपाधि प्रदान की। वह बहुत ही चालाक और स्वार्थी शासक था, लेकिन साथ ही वह बडा दूरदर्शी राजनीतिज्ञ भी था। चर्च और राज्य के बीच मैत्री की स्थापना उसी के शासन-काल मे हुई। ३१३ मे मीलान मे जारी किये गये एक राजादेश द्वारा ईसाइयो को धार्मिक स्वतत्रता प्रदान कर दी गयी। उसी समय से चर्च शाही सत्ता का

एक विश्वसनीय मित्र और पैरोकार बन गया और सम्राट चर्च के संरक्षक बन गये। उन्होंने उसे मुक्तहस्त दान देकर, जिसमे धन भी शामिल था और जायदाद भी, खूब समृद्ध बनाया।

११ मई ३३० को कोन्स्तान्तीन रोमन साम्राज्य की राजधानी को पूर्व मे बासफोरस के तट पर ले गया। प्राचीन यूनानी उपनिवेश बैज़ंतिया (बाइजेंटाइन) का प्रसार और पुनर्निर्माण किया गया और सम्राट के सम्मान मे उसका नाम कोन्स्तान्तीनोपोल (कुस्तुतुनिया) रखा गया। राजधानी का पूर्व को स्थानांतरण कोई आकस्मिक घटना नही थी—पूर्वी सूबे पश्चिमी प्रांतो की अपेक्षा अधिक समृद्ध और सांस्कृतिक दृष्टि से अधिक उन्नत थे और साम्राज्य के आर्थिक तथा सांस्कृतिक केंद्र व्यवहार मे बहुत समय से पूर्व मे ही थे। साम्राज्य के राजनीतिक केंद्र को भी वही ले जाना पूर्णत तर्कसगत कदम था।

कोन्स्तान्तीन की मृत्यु के बाद सिंहासन के लिए युद्ध फिर छिड गया। कुछ साल सत्ता उसके पुत्र कोन्स्तान्तियस के हाथो मे रही और फिर उसके पोते जूलियन के हाथो मे चली गयी। जूलियन का शासनकाल इस बात के लिए स्मरणीय है कि उसने प्राचीन रोमन धर्म को फिर से स्थापित करने की कोशिश की थी, जिसका अंत पूर्ण असफलता मे हुआ।

पश्चिमी साम्राज्य का पतन

रोमन साम्राज्य के पतन मे योगदान करनेवाला एक निर्णायक कारक जातियो का एक नया विराट देशांतरण था। इस देशांतरण को प्रारंभिक संवेग हूणो ने प्रदान किया था, जो संभवत मंगोली उद्गम के खानाबदोश कबायली थे और जो नये चरागाहो और जमीनो की तलाश मे मध्य एशियाई स्तेपियो से काले सागर के तटो की तरफ धीरे धीरे बढते आ रहे थे। आगे बढते हुए उन्होंने ओस्त्रोगोथ (पूर्वी गोथ) सभ्य के कबीलो मे से कुछ को तो जीत लिया और कुछ को भागने पर मजबूर किया। परवर्तियो ने अपनी बारी मे विसीगोथ (पश्चिमी गोथ) कबीलो पर दबाव डाला। शरण की खोज मे विसीगोथ कबीलो के नेताओ ने रोमन सम्राट वालेस से उन्हे डेन्यूब नदी को पार करके साम्राज्य के भीतर बस जाने की आज्ञा मागी। यह आज्ञा इस शर्त पर दे दी गयी कि गोथ लोग साम्राज्य के सीमातो की रक्षा करेंगे।

गोथ डेन्यूब के पश्चिमी तट पर मीसिआ और थ्रेस प्रातो मे बस गये। लेकिन शान्तिमय और निश्चिंत जीवनयापन करने की उनकी आशाओ का बहुत जल्दी ही बडी क्रूरता के साथ मिट्टी मे मिल जाना था। कुछ ही बाद रोमन प्रशासको और सेनानायको ने उनके अधिकारो और स्वतंत्रताओ की

हर तरह से अवमानना करना शुरू कर दिया। उनके बीवी-बच्चो को पकड-पकडकर गुलामो की तरह बेचा जाने लगा। गोथ कबीलो के पास खाने की कमी थी और उनके यहा अक्सर अकाल पडा करते थे। इन कारको के फल स्वरूप ३७७ मे एक विद्रोह फूट पडा। विद्रोह दावानल की तरह फैल गया और सम्राट वालेस उसे कुचलने के लिए रोमन सेना को लेकर गया। ३७८ मे अद्रियानोपोल नामक स्थान पर जबरदस्त लडाई हुई, जिसमे रोमन बुरी तरह हारे और जिसके दौरान स्वय सम्राट भी मारा गया।

गोथो के साथ लडाई कई साल चलती रही। उन्हे अतत वालेस के एक उत्तराधिकारी थिओदोसियस ने पराजित किया, जिसने ३७९ से ३९५ तक राज्य किया था। उसके शासनकाल मे साम्राज्य के पूर्वीय तथा पश्चिमी भागो का अतिम बार एकीकरण हुआ। थिओदोसियस के शासनकाल मे ईसाई धर्म की पूर्ण विजय भी हुई, अब वह केवल राज्य धर्म ही नही, अपितु एकमात्र मान्यताप्राप्त धर्म भी बन गया। थिओदोसियस के राजादेशो ने बलिदानो को निषिद्ध कर दिया और आदेश दिया कि रोमन मदिरो को आगे मे कोई अनुदान नही दिये जायेगे और उनकी ज़मीनो को जब्त कर लिया जायेगा। साम्राज्य के कुछ नगरो मे, उदाहरण के लिए सिकदरिया मे, प्राचीन रोमन धर्म के अनुगामियो के हत्याकाड आयोजित किये गये।

थिओदोसियस की मत्यु के बाद साम्राज्य सदा-सदा के लिए दो भागो मे विभाजित हो गया। पूर्वी साम्राज्य को, जो वैज़तिया के नाम से [illegible] हुआ, पद्रहवी शताब्दी के मध्य तक एक सयुक्त राज्य के [illegible] बने रहना था। इसके विपरीत पश्चिमी साम्राज्य, जो [illegible] [illegible] पहले ही कमज़ोर हो चुका था, बर्बर कबीलो के बढते हुए [illegible] का [illegible] मे असमर्थ रहा।

पाचवी सदी के आरभ मे गोथो ने फिर से [illegible] किया। अलेरिक के नेतृत्व मे उन्होने इटली पर [illegible] [illegible] सनातन नगर रोम को घेर लिया। जल्दी ही नगर मे [illegible] [illegible] और सीनेट ने अलेरिक से वार्ताए आरभ की। लेकिन [illegible] से असतुष्ट होकर २४ अगस्त, ४१० को अलेरिक [illegible] के साथ नगर मे [illegible] आया। नगर-द्वार दासो ने खोले थे, [illegible]

गोथो की रोम विजय का [illegible] [illegible] के बाद, जब गालो ने सनातन [illegible] [illegible] कि 'पृथ्वी का प्रकाश [illegible] था।

अगले पचास-साठ साल [illegible] होते रहे और रोमन [illegible] मे वैडल नामक जर्मनीय [illegible]

४५५ में उनके राजा गेजेरिक ने इटली को अपने अधीन कर लिया और रोम को मिट्टी में मिला दिया। ४४६ में ब्रिटेन पर आन्गल-सैक्सनों का आक्रमण हुआ। इसी बीच हूण राजा अतीला के नेतृत्व में डैन्यूब के तटवर्ती इलाकों में बर्बर कबीलों के एक बड़े महासंघ की स्थापना हुई। हूणों ने सबसे पहले बाल्कन प्रदेशों का विनाश किया और फिर गाल की तरफ कूच किया। ४५१ में शैलों नामक स्थान पर 'जातियों का युद्ध' हुआ, जिसमें हूण रोमनों तथा बर्बरों—फ्रैंकों, गोथों और बर्गेडियाइयों की मिश्रित सेना द्वारा पराजित किये गये। इस पराजय के बाद अतीला पीछे हटकर राइन के पार चला गया, लेकिन अगले साल उसने उत्तरी इटली पर एक बार फिर हमला किया। तथापि वह इसके कुछ ही बाद मर गया (४५३ में) और उसीके साथ साथ हूण संघ का भी अंत हो गया।

पश्चिमी साम्राज्य व्यवहार में अस्तित्वहीन हो चुका था। इटली विनष्ट हो चुका था और रोम एक प्रादेशिक कसबे से ज्यादा कुछ नहीं रह गया था। जिस फोरम में कभी दुनिया की किस्मत का फैसला किया जाता था, उसमें घास उग आयी थी और सूअरों को चरने के लिए छोड़ दिया जाता था। पश्चिमी सम्राट अब बर्बर सेनाओं के नेताओं के हाथों में नगण्य मोहरे थे। ४७६ में उनमें से जर्मनीय भाड़े के सैनिकों के एक नेता ओदोसर ने अंतिम सम्राट रोमूलस आगस्तुलस को गद्दी से उतार दिया और स्वयं इटली में पूर्वी सम्राट का प्रतिशासक (रीजेंट) बन बैठा। इस प्रकार पश्चिमी साम्राज्य के नाममात्र के अस्तित्व का भी अंत हो गया। पारंपरिक रूप में ४७६ के साल को पश्चिमी साम्राज्य के पतन की तिथि माना जाता है।

पश्चिमी साम्राज्य के पतन का ऐतिहासिक महत्व

पश्चिमी साम्राज्य के पतन का ऐतिहासिक महत्व निस्संदेह अंतिम सम्राट, जिसे किसी भी तरह से उल्लेखनीय शासक नहीं कहा जा सकता, का तख्ता उलटे जाने के तथ्य में नहीं, बल्कि इस विराट दासस्वामी समाज के ढहने में, दास अर्थव्यवस्था पर आधारित राज्य के पतन में सन्निहित है। इस प्रकार की राजनीतिक संरचना और आर्थिक प्रणाली अब कालातीत हो चुकी थी और यह इसी कारण था कि रोमन साम्राज्य, जो तीसरी सदी के गहन सामाजिक संकट से पहले ही आंतरिक रूप में निर्बल हो चुका था, अपने बर्बर शत्रुओं के बढ़ते हुए दबाव से न बच सका। रोमन साम्राज्य का आर्थिक आधार तभी कमजोर हो चुका था, जब कोलोनस प्रथा ने जड़ें जमाना और शनैः शनैः दास-श्रम की जगह लेना शुरू किया था। तथापि एक राजनीतिक इकाई के रूप में रोमन साम्राज्य ने अपने को इतना काफी मजबूत

सिद्ध किया कि इस सकट से फिलहाल बचकर निकल आ सके। दासस्वामी समाज के अतिम दुर्ग के, और उसी के साथ-साथ दासता पर आधारित अर्थतत्र तथा दासस्वामी अभिजातो और जमीदारो की शक्ति के ध्वस्त होने के लिए साम्राज्य के भीतर अभी डेढ सदी और वर्ग सघर्ष चलना था और सीमातो पर लगातार दबाव बढना था। पश्चिमी साम्राज्य के पतन का ऐतिहासिक महत्व इसी तथ्य मे सन्निहित है।

मध्य युग
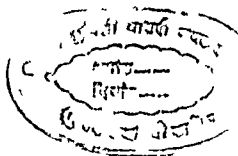
कई विद्वान मध्य युग शब्द का प्रयोग पश्चिमी रोमन साम्राज्य के पतन (४७६ ई०) और १४५३ मे पूर्वी रोमन साम्राज्य अथवा बैजतिया के पतन के बीच की अवधि को व्यक्त करने के लिए करते है। अन्य विद्वान कोलबस द्वारा १४९२ म अमरीका की खोज को वह घटना मानते है जिसे इस काल के अत का द्योतक माना जाना चाहिए। तथापि इस बारे मे सभी एक ही विचार क है कि मध्य युग के अत को पद्रहवी सदी के अतिम दशको मे बाद म नही रखा जाना चाहिए। मध्य युग शब्द ने सत्रहवी शताब्दी के मानवता वादियो द्वारा लिखित पाठ्यपुस्तको तथा सुलभ इतिहासो मे जडे पकडी थी जो अपन समय को विज्ञान के पुनर्जन्म तथा क्लासिकी युग की कला म रुचि क फिर से पैदा होने का युग समझते थे और इस पुनर्जागरण (रेनेसा) तथा क्लासिकी काल के बीचवाले समय को मध्य युग (मेडियम ईवम) कहते थे और उसे वर्बरतापूर्ण विजयो अज्ञान और अधविश्वास के, गहन सास्कृतिक अपकर्ष क समय के रूप म चित्रित करते थे।

सोवियत इतिहासकार मध्य युग शब्द का प्रयोग एक विशिष्ट सामाजिक ढाचे – सामतवाद (फ्यूडलिज्म) – द्वारा अभिलक्षित युग के लिए करते है। अपने पूर्ववर्ती दासस्वामी समाज की ही भाति सामती समाज भी एक वर्ग-समाज था – वह मेहनतकश आबादी के शोषण पर आधारित था। सामतवाद इस अथ मे पूववर्ती समाज से भिन्न था कि मेहनतकश लोग अब मालिको के गुलाम नही वरन उनपर मात्र निर्भर या उनके कम्मी अथवा भूदास हुआ करते थे।

सामती समाज मानवजाति के इतिहास की एक अत्यत महत्वपूर्ण मजिल था और दासस्वामी समाज की तुलना मे यह एक प्रगतिशील समाज था। मानव

श्रम ही समस्त भौतिक तथा आध्यात्मिक सम्पत्ति के आधार का निर्माण करता है और मानवजाति के उज्ज्वलतर भविष्य की ओर विकास तथा प्रगति को निर्धारित करता है। दासप्रथा के युग में शारीरिक श्रम, जो जाति की भौतिक अवस्थाओं के निर्माण की आवश्यक पूर्वापेक्षा है, सर्वप्रथम और सर्वोपरि रूप से दास के हिस्से में ही आया, जो अपने काम से नफ़रत करता था और जिसे सिर्फ़ डंडे के बल पर ही उसके लिए मजबूर किया जाता था। रोमन साम्राज्य के ह्रास के समय दासस्वामी गुलामों की अपने काम में दिलचस्पी पैदा करने की आवश्यकता को समझ गये, उन्होंने उन्हें जमीन के छोटे छोटे टुकड़े रखने और उनको काश्त करने और अपने परिवार बनाने की छूट दे दी। इस तरह से भावी सामंती समाज की बुनियाद पड़ी।

सामंती युग में जमीन सामंती प्रभुओं की सम्पत्ति हुआ करती थी, लेकिन उसे वे छोटे छोटे टुकड़ों में अपने "आदमियों" के बीच, अपने दासो अथवा भूदासो के बीच बांट दिया करते थे, जिन्हें जमीन के बदले अपने प्रभु या स्वामी के लिए काम करना पड़ता था या अपनी उपज का हिस्सा उसे देना पड़ता था। लेकिन सामंती प्रभु पर निर्भर इन लोगों, भूदासो की हस्ती छोटे किसान की हुआ करती थी और उनके अपने सुपरिवार होते थे। चूंकि अधिकांश मामलों में प्रथा द्वारा यह निर्धारित था कि किसान को अपनी उपज की कितनी मात्रा अपने स्वामी को होगी इसलिए भूदास यह पहले से जानते थे कि अगर वे अपनी उत्पादिता के स्तर को ऊंचा कर ले, तो उन्हे स्वयं अधिक उपज अपने उपयोग के लिए उपलब्ध होगी और इस प्रकार वे अपने परिवार की रहन-सहन की हालत को सुधार सकेगे। इस प्रकार इसका यह परिणाम हुआ कि अपने पूर्ववर्ती दास के विपरीत भूदास का अपनी उत्पादिता की वृद्धि करने में निहित स्वार्थ हो गया। इसी तथ्य मे सामंती समाज का प्रगतिशील पहलू सन्निहित था, जिसे आगे चलकर और भी अधिक उन्नत पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में संक्रमण का पथ प्रशस्त करना था।

पहला अध्याय

सामंतवाद में संक्रमण। यूरोप में पहले सामंती राज्यों का उदय
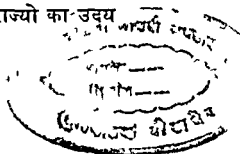
रोमन साम्राज्य के पतन और उसके प्रदेशों पर बर्बरों का अधिकार हो जाने के बाद के प्रारंभिक काल में घोर सांस्कृतिक अवनति हुई। क्लासिकी कला और विज्ञान की महती उपलब्धियों का कुछ ही समय के भीतर नामो-निशान भी बाकी न रहा। बर्बर जन – जर्मन और स्लाव* – अभी आदिम पितृतंत्रीय समुदायों में ही रह रहे थे और युद्ध को वह सब प्राप्त करने का एक साधन समझते थे, जिसे वे अभी तक अपने श्रम से नहीं पैदा कर सकते थे या पैदा करना नहीं जानते थे। वे शहरों और देहातों को लूटते, धनी नागरिकों को कैद करके ले जाते और फिर भारी फिरौती – मुक्ति धन – की मांग करते, या उनकी जागीरों और चरागाहों पर कब्ज़ा करने के पहले उनका काम तमाम कर देते। कभी-कभी वे स्थानीय आबादी को अपनी आय का एक तिहाई उन्हें देने के लिए मजबूर करते थे। स्वयं रोम को कई बार लूटा और बरबाद किया गया।

बर्बरों द्वारा हड़पे इलाकों में शिल्पों और व्यापार का तेजी से ह्रास हुआ और रोमन साम्राज्य के नगरों (विशेषकर भूतपूर्व पश्चिमी सूबों के नगरों) तथा अन्य देशों के बीच के सूत्र जल्दी ही विलुप्त हो गये। हर बस्ती शनै शनै अपने ही पर निर्भर होती गयी और पश्चिमी साम्राज्य जो धीरे धीरे कई बर्बर राज्यों में विभक्त हो गया था, नैसर्गिक (विनिमय-हीन, मुद्राहीन) अर्थव्यवस्थावाली नानासंख्य इकाइयों का समूह बन गया।

---

* 'बर्बर' शब्द यूनानी भाषा के बरबारस शब्द से बना है, जिसका प्रयोग यूनानी उन सभी लोगों के लिए करते थे, जिनकी भाषाएं उन्हें ऊटपटांग, अबोधगम्य लगती थी।

लेकिन यह मान लेना गलत होगा कि ये सभी मूलगामी परिवर्तन अनिष्ट जैसे समझे जाते थे। रोमन साम्राज्य ने अपने नागरिकों की स्थिति को भारी करों के बोझ, प्रशासनाधिकारियों की अंतहीन फौज के असहनीय उत्पीडन, सैनिकों को लोगों के घरों में जबरदस्ती और निःशुल्क टिकाये जाने और रोमनों के जाकर स्थानीय अमीरों के निर्मम शोषण से दूभर कर दिया था। अतः आबादी अक्सर बर्बरों का मुक्तिदाताओं के रूप में स्वागत करती थी, क्योंकि स्थानीय अमीरों के साथ चाहे वे कितनी ही बुरी तरह और कभी कभी निर्दयता से भी क्या न पेश आते थे, सामान्य लोगों को वे आम तौर पर कोई नुकसान नहीं पहुंचाते थे, गुलामों को आजाद कर देते थे और शाही अधिकारियों के असहनीय उत्पीडन के बोझ को दूर कर देते थे। साम्राज्य के पतन के एक प्रत्यक्षदर्शी आरोसिअस नामक रोमन ने बर्बरों के आक्रमण के बारे में यह कहा था : "बर्बरों ने अपनी तलवार अलग रखकर अब हलों की मूठें थाम ली हैं और बच रहे रोमनों के साथ साथियों और मित्रों जैसा व्यवहार करना शुरू कर दिया है। रोमनों में ऐसे लोग तक मिल सकते हैं कि जो रोमन शासन के अधीन रहने और भारी कर अदा करने की बनिस्बत बर्बरों के साथ गरीबी में रहना, मगर अपनी आजादी बनाये रखना श्रेयस्कर समझते हैं।

केल्ट तथा जर्मनीय कबीलों का सामाजिक ढांचा

रोमन साम्राज्य के उत्तर और पूर्व में, मध्य तथा पूर्वी यूरोप में कितने ही बर्बर कबीले रहते थे। रोमनों के निकटतम पडोसी पश्चिमी यूरोप में केल्ट और मध्य यूरोप में जर्मनीय कबीले थे। केल्ट कबीलों को जल्दी ही जर्मनियों ने पीछे धकेल दिया। दोनों जातियों में कुछ अंतर्मिश्रण भी हुआ और इस समय जो एकमात्र केल्ट लोग हैं, वे आयरी, स्काट, वेल्श और उत्तर पश्चिमी फ्रांस के ब्रेतन हैं। शेष केल्ट जनों का उत्तरवर्ती इतिहास जर्मनीय जनों के इतिहास के साथ जुडा हुआ है। आरंभ में जर्मनीय जन पश्चिम में राइन और पूर्व में ओडर नदियों के बीच के प्रदेश में रहा करते थे। उनके पूर्व में लिथुआनी, फिनी और स्लाव कबीले रहते थे, जिन्हें उन्हें धकेलते हुए ईसोपरांत पहली सदियों में एल्ब नदी के पार भगा दिया। जर्मनीय कबीले शनैः शनैः सारे पश्चिम में बस गये – उन्होंने पूरे पश्चिमी यूरोप और ब्रिटिश द्वीपसमूह पर कब्जा कर लिया। ये सभी कबीले आदिम पितृतंत्रीय ढांचे में रहते थे और वे बडी बडी पारिवारिक इकाइयों से निर्मित गोत्र या कुल समूहों में विभक्त थे।

जर्मनीय कबीलों के बारे में जानकारी हमें जूलियस सीजर से, जिसने

उनसे पहली सदी ई० पू० के मध्य मे मामना हुआ था, और तेसितस से, जिसने पहली सदी ई० के अतिम भाग मे उनकी जीवन प्रणाली और रीति-रिवाजो का अध्ययन किया था, प्राप्त हुई है।

जूलियस सीजर के जमाने मे जर्मनीय क्वीलो के मुख्य उद्यम शिकार, मछली पकडना और पशुपालन थे, लेकिन – जैसा कि सीजर ने लिखा है – फसली या नियमित कृषि मे वे ज्यादा दिलचस्पी नही दिखलाते थे। बडे-बडे गोत्र समूह किसी जमीन पर वस जाते थे, जिसे वे मामूहिक तौर पर काश्त करते थे और बाद मे उपज को आपम मे बाट लेते थे। लेकिन इसके डेढ सौ साल बाद ही हम पाते है कि कृपि उनका मुख्य उद्यम बन गया था और वे जमीन को "पारिवारिक' जोतो मे विभाजित करने लगे थे, जिनमे प्रत्येक पारिवारिक इकाई मे तीन पीढिया होती थी। इनमे मे प्रत्येक परिवार अपने सामान्य टुकडे पर मिलकर काम करता था। जर्मनीय जनो मे जमीन का निजी स्वामित्व न तो मीजर और न तेसितस के समय मे ही देखने मे आता है। उनके द्वारा अधिकृत जमीन अगर जगलो से ढकी होती थी, तो वे पेडो को जला डालते थे और जमीन को पारिवारिक टुकडो मे बाट लेते थे। वे लकडी के आदिम हलो का इस्तेमाल करते थे उसी जमीन पर लगातार कई साल खेती करते थे और फिर उमे कई साल के लिए खाली पडा रहने देते थे और इस बीच या तो जमीन के नये टुकडे साफ कर लेते थे, या पहले से साफ किये टुकडो को काश्त करने लगत थे। चूकि आबादी अभी बहुत कम थी इसलिए किसी भी गोत्र ममूह को जमीन की कभी भी किल्लत नही होती थी। लेकिन यह हालत हमेशा ही नही बनी रह सकी और जल्दी ही जर्मनीय जन नयी जमीनो की तलाश मे रोमन प्रदेशो पर आक्रमण करने लगे, जहा बहुत लबे समय से स्थायी और नियमित कृपि का प्रचलन था।

ये कबीले गावो मे रहा करते थे और प्रत्येक ग्राम सामूहिक आधार पर व्यवस्थित होता था। गाव की कृपि भूमि पारिवारिक समूहो के बीच बटी होती थी और चरागाह, जगल तथा बागर शामिलात जमीन होते थे। हर गाव की आबादी का अधिकाश कबीले के स्वतत्र सदस्यो का हुआ करता था, जिन्हे समान अधिकार प्राप्त होते थे।

लेकिन बर्बर समुदायो मे शीघ्र ही विभिन्न श्रेणियो को पैदा हो जाना था। गोत्र तथा सैन्य पदानुक्रमो का उदय हो गया। इन समूहो के प्रतिनिधियो के पास गोत्र के अन्य पूर्ण सदस्यो से ज्यादा जमीन होती थी। उनके पास पशुधन भी अधिक होता था और कभी-कभी दास भी होते थे। इन बर्बर ममुदायो म गुलामो को अपने मालिक की जमीन को काश्त करना होता था और अपनी खुद की उपज का एक हिस्सा अपने स्वामी को देना

होता था। फिर भी इन बर्बर समुदायों की अर्थव्यवस्था का आधार दासप्रथा नहीं थी। दास अपने मालिकों के साथ ही रहा करते थे, अपने स्वामियों की उनके काम में सहायता किया करते थे और रोमन पर्यवेक्षक यह देखकर अचरज में आ जाते थे कि गुलामों के साथ कितनी नरमी बरती जाती थी। तेसितस ने स्पष्ट कहा है कि उसके समय में जर्मनीय लोग अपने दासों को जमीन दिया करते थे उन्हें जमीन के अपने टुकड़े और घर रखने दिया करते थे और बदले में उनसे सिर्फ मुक्ति-लगान ही मांगा करते थे-दूसरे शब्दों में बर्बरों के गुलाम रोम के कोलोनसों की तरह रहा करते थे।

इन समुदायों पर निर्वाचित प्रतिनिधि शासन करते थे जो सारे कबीले, गांव या जिले की सभाओं का आयोजन करते थे। इन सभाओं में महत्वपूर्ण मामलों पर विचार विमर्श किया जाता था और न्यायिक मामले निपटाये जाते थे। समुदायों के सभी वयस्क पुरुष सदस्य सिर्फ काश्त ही नहीं करते थे बल्कि सैनिक भी हुआ करते थे। हथियार रखना पूरे अधिकारों का उपभोग करनेवाले समुदाय के पूर्ण सदस्य का चिह्न माना जाता था। समुदायों के अभिजात और धनी सदस्य अक्सर परिचरों के लश्कर इकट्ठा कर लिया करते थे और इन छोटे छोटे दस्तों की सहायता से, जैसा कि तेसितस ने लिखा है-जिसे और लोग पसीने से अर्जित किया करते थे, उसे खून-खराबा करके हासिल करना बेहतर समझकर पड़ोसी कबीलों पर निरंतर हमले करते रहते थे। ये "अमीर" इसका लिहाज किये बिना अनुचर भरती कर लिया करते थे कि वे किस गोत्र के हैं और यही कारक इस आदिम समाज की गोत्र संरचना के क्रमिक विखंडन का कारण बना। कभी कभी अभिजातों में से कोई कोनूग्र यानी राजा बन बैठता था और फिर कई कबीलों को अपने अधीन एक करना और नयी जमीनें हासिल करने के लिए बड़े पैमाने पर सैनिक कार्रवाइयां करना शुरू कर देता था।

इस प्रकार की विजयें तीसरी और पांचवीं सदियों के बीच बर्बर जातियों के सामूहिक देशांतरण काल के दौरान, जो इतिहास में जातियों के महान देशांतरण के नाम से विज्ञात है, विशेषकर व्यापक थीं, जिसके फलस्वरूप भूतपूर्व रोमन साम्राज्य के प्रदेश पर बड़ी संख्या में बर्बर राज्यों की स्थापना हो गयी।

चौथी सदी में गोथों के अधीन सरदार गेर्मानरीख के नेतृत्व में दनीपर क्षेत्र में बर्बर कबीलों का एक विशाल संघ स्थापित किया गया। इस संघ को नये बर्बर कबीलों-एशियाई स्तेपियों से आनेवाले खानाबदोशों का शिकार होना था। ये लोग हूण थे जिन्होंने कुछ ही पहले चीन पर हमला किया था और उसे तहस नहस कर डाला था।

जातियो के महान देशातरण का प्रारभ। बर्बर राज्यो की स्थापना

चौथी शताब्दी के उत्तरार्ध मे हूणो ने वोल्गा को पार करके गेर्मान रीख द्वारा स्थापित सघ को बुरी तरह पराजित किया और जर्मनीय कबीलो को पश्चिम की तरफ हटने के लिए विवश किया। कुछ गोथ – विसीगोथ (पश्चिमी गोथ) पूर्वी रोमन साम्राज्य के सीमातो को पार करके वर्तमान बुल्गारिया के प्रदेश पर आ बसे (३७६)। साम्राज्य के अधिकारियो ने उनका निर्दयतापूर्वक शोषण किया, जिसके कारण उन्होने शीघ्र ही विद्रोह कर दिया और बैजती सेना को करारी मात दी। फलत बैजतिया को उनके साथ बातचीत चलानी पडी उसने उनमे से कुछ को अपनी सेवा मे ले लिया और उन्हे साम्राज्य के पश्चिमी भाग मे बसने की आज्ञा दे दी। यहा विसीगोथ प्रतिभाशाली नेता अलेरिक के नेतृत्व मे सयुक्त हो गये और ४१० मे रोम पर धावा बोलने और उसे लगातार छ दिन लूटने के पहले उन्होंने आस पास के इलाको मे लूटमार करना शुरू कर दिया। इसके कुछ बाद अलेरिक दक्षिण इटली चला गया जहा उसकी मत्यु हो गयी। बैजतिया के साथ हुई एक सधि के अनुसार उसके वशजो को गरोन नदी और पिरेनीज पर्वतो के बीच के इलाके मे जमीने दे दी गयी। वे लोग वही बस गये और उन्होंने धीरे-धीरे अपनी सत्ता को फैलाते हुए सारे स्पेन को अपने अधिकार म ले लिया। इस प्रकार पश्चिमी गोथो के पहले बर्बर राज्य का जन्म हुआ जिसमे दक्षिण-पश्चिमी फ्रास और स्पेन शामिल थे (४१६)।

चौथी सदी मे गोथो को जीतने के बाद हूण दनेम्नर के तट पर ज्यादा नही टिके, जहा वे शुरू-शुरू मे बस गये थे। पाचवी सदी मे अतीला के रूप मे उन्हे एक दृढसकल्प और निष्ठुर नेता मिल गया जिसने हूणो और कई जर्मनीय कबीलो की एक विशाल सेना एकत्र की और पश्चिम की तरफ चल पडा। उसने बाल्कनो पर कई बार हमला करके बैजतियाई प्रदेशो को उजाडा और सम्राट को खिराज के तौर पर बेशुमार धन देने के लिए मजबूर किया। ४५० मे अतीला ने पश्चिम पर सैन्य अभियान शुरू किया और यद्यपि वह बेल्जियो के देश को उजाडने मे सफल हो गया पर उसकी प्रगति को सयुक्त रोमन तथा बर्बर सेनाओ ने रोक दिया जिन्होंने उसे ४५१ मे शैना सूर मार्न के निकट कतालोनियाई मैदान पर लडाई मे पराजित किया। यद्यपि अतीला और उसकी शेष सेना ने उत्तरी इटली मे विभिन्न नगरो को लूटना जारी रखा पर उसे अब और किसी विजय अभियान पर नही निकलना था। ४५३ मे उसकी मत्यु के बाद उसका साम्राज्य छिन्न भिन्न हो गया और हूण धीरे धीरे स्थानीय आबादी मे घुल मिल गये।

हूणो के मध्य यूरोप मे आ घुसने मे अन्य जर्मनीय कबीले नयी जमाना की खोज मे निकलने को बाध्य हुए। गोथो ने वैडलो को दक्षिणी स्पेन मे निकलने के लिए मजबूर किया जो समुद्र पार करके अफ्रीका चल गये, जहा उन्होने अपना राज्य स्थापित किया और भूमध्य सागर मे लूटमार और जलदस्युता करते हुए रहने लगे। ४५५ मे उन्होने रोम को कब्जे मे ले लिया और उसे पूरे दो हफ्ते लूटा। बर्गडी धीरे धीरे सारी रोन घाटी मे बस गये और फ्रैंक लोग राइन के मुहाने से बढते हुए शेल्ट नदी तक आ गये, जहा से वे लवार नदी तक सारे उत्तरी गाल को जीतने मे सफल हो गये। ४४६ के आसपास जर्मनीय आग्ल सैक्सन जूट तथा थ्यूरिंजी कबीलो ने ब्रिटेन पर आक्रमण किया और वहा कई बर्बर राज्यो की स्थापना की, जिन्हे अनत (नवी सदी तक) इगलैड के रूप मे सयुक्त हो जाना था। इसी बीच ४९३ मे ओस्त्रोगोथो ने राजा थिओदोरिक के नेतृत्व मे इटली को जीत लिया था।

यद्यपि बैजतिया ओस्त्रोगोथो को दबाने और इटली को शेष साम्राज्य के साथ जोडने मे कामयाब हो गया (५५५) पर इतालवी लोग जिन्होने बैजती सेनाओ का मुक्तिदाताओ की तरह स्वागत किया था बर्बरो की अनुपस्थिति का महसूस करने लगे क्योकि वे लोग फिर निर्मम करो और पूर्णत स्वेच्छाचारी नौकरशाही के शिकार हो गये थे। इसलिए यह कोई अचरज की बात नही है कि जब तेरह ही साल बाद ५६८ मे एक नये जर्मनीय कबीले – लबार्ड – ने इटली पर हमला किया तो उन्हे इटली को अधिकार मे लेने – और इस बार सदा के लिए – मे कोई ज्यादा कठिनाई नही हुई। इतिहासकार पाउलस दिआकानस ने लिखा है कि उस समय कई अमीर रोमन लबार्ड राजको (ड्यूको) के अदम्य लोभ के शिकार हो गये जबकि अन्यो को अपनी आय का एक तिहाई बर्बरो को देने को विवश होना पडा।

जर्मनीय कबीलो के पूर्व मे बहुत से स्लाव कबीले रहा करते थे। उनमे तीन मुख्य समूह थे – पश्चिमी, पूर्वी और दक्षिणी स्लाव। पश्चिमी स्लाव विस्चुला ओडर तथा एल्ब नदियो के थाले मे रहा करते थे। चेक और मोराव कबीले एल्ब के ऊपरी इलाको मे रहते थे पोलिश कबीलो का निवास विस्चुला और ओडर के किनारो पर था और पोमेरानी जन बाल्टिक सागर के दक्षिणी तट पर रहा करते थे। जर्मनीय कबीलो की ही भाति इस काल के स्लाव भी आदिम समुदायो मे ही रहा करते थे। स्लाव जनो मे वर्गो और राज्यो का जर्मनीय कबीलो की अपेक्षा बाद मे उदय हुआ।

नवी शताब्दी मे मोराविया के नाम से एक बडा स्लाव राज्य कायम किया गया लेकिन वह अल्पकालिक ही सिद्ध हुआ। * मे इस राज्य पर

पश्चिम से जर्मनो का और पूर्व से खानाबदोश पशुचारी फिनी-ऊग्री कबीलो का दबाव पडने लगा। मोराव राज्य के एक भाग, बोहेमिया ने अपनी स्वतत्रता को बनाये रखा और उसे बाद मे जर्मन जनो के उस साम्राज्य का अग बन जाना था, जो बारहवी शताब्दी के बाद से पवित्र रोमन साम्राज्य कहलाया। ग्यारहवी सदी मे चेक राजक ने बोहेमिया के बादशाह की उपाधि ग्रहण कर ली और जर्मन साम्राज्य का अग होने के बावजूद उसका राज्य खामी मात्रा मे स्वतत्रता का उपभोग किया करता था।

दसवी शताब्दी म विस्चुला तथा ओडर नदियो की घाटियो मे रहनेवाले स्लाव कबीलो ने एक बडे पोलिश राज्य की स्थापना की। पोमेरानी और पोलाबी जनो (एल्ब नदी का स्लाव नाम लाबा था) द्वारा कायम किये गये छोटे छोटे राज्य अपनी आजादी को ज्यादा समय तक नही बनाये रख सके, बल्कि बारहवी सदी मे विदेशी विजेताओ के शिकार हो गये। पूर्वी स्लावो ने, जो पोलो के पूर्व मे रहते थे, नवी सदी मे एक बडा रूसी राज्य स्थापित किया।

दक्षिणी स्लावो न छठी शताब्दी मे ही डेन्यूब के दक्षिण मे बैजतिया मे घुसपैठ करना शुरू कर दिया था। सातवी सदी के अत मे डन्यूब के निचले इलाको मे रहनेवाले स्लाव कबीलो को बुल्गार नामक तुर्क कबीलो ने अपने अधीन कर लिया, जिन्होने शीघ्र ही अपन से अधिक सभ्य विजितो के साथ मेल करके एक शक्तिशाली बुल्गारी राज्य स्थापित कर दिया। नवी शताब्दी मे बाल्कन प्रायद्वीप का अधिकाश इसी राज्य के मातहत था और वह स्वय बैजतिया के लिए भी एक खतरा बन गया था। किंतु ग्यारहवी शती के आरभ मे बैजतिया बुल्गारो को पराजित करने मे सफल हो गया। बुल्गारी राज्य ने बारहवी शताब्दी मे फिर अपनी स्वतत्रता को प्राप्त कर लिया, लेकिन चौदहवी शताब्दी मे वह उस्मानी तुर्को का शिकार हो गया जिनके जूए के नीचे वह उन्नीसवी सदी तक पडा रहा।

डेन्यूब के मध्यवर्ती इलाको मे सर्बो क्रोएशियन जनो का निवास था जिन्होने छठी और सातवी सदियो मे डेन्यूब को पार करने के बाद बाल्कन प्रायद्वीप के मध्य भाग मे कई छोटे छोटे राज्यो की स्थापना कर दी थी। लेकिन इन्हे ग्यारहवी सदी मे बैजतिया ने अपने मे मिला लिया और बारहवी शताब्दी के उत्तरार्ध मे जाकर ही एक शक्तिशाली सर्ब राज्य कायम हो पाया जिसे १३८९ मे कोसोवो मैदान की लडाई मे तुर्को द्वारा पराजित होना पडा और अन्य स्लावी कबीलो के साथ साथ कई सदी तुर्क शासन के अधीन रहना पडा।
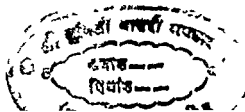
चौथी से सातवीं सदियों का
बैजंतिया

३९५ ई० में पूर्वी तथा पश्चिमी रोमन साम्राज्यों का अंतिम रूप में वियोजन हुआ और बैजंतिया एक अलग राज्य बन गया। इसका नाम उस स्थल के प्राचीन यूनानी नाम से लिया गया था जहां नयी राजधानी कुस्तुंतुनिया का निर्माण किया गया था। बैजंती लोग अपने को रोमेयी और अपने राज्य को रोमेयी साम्राज्य कहा करते थे। बैजंतिया की आबादी बहुत ही पचमेल थी जिसमें यूनानी और यूनान प्रभावित पूर्व के कई कबीले भी शामिल थे। लेकिन प्रधान भाषा यूनानी थी, जो सातवीं सदी में आधिकारिक भाषा बन गयी।

बैजंतिया विघटन की उस प्रक्रिया को रोकने में सफल हो गया, जिसका पश्चिमी साम्राज्य को दास श्रम पर आधारित *अर्थव्यवस्था* के पतन के परिणामस्वरूप सामना करना पड़ा था। बैजंती साम्राज्य की जीवन शक्ति का रहस्य उसके सामाजिक तथा आर्थिक ढांचे में निहित था। कृषि में (अर्थात बड़े जमींदारों की जागीरों में) दास श्रम का उपयोग पश्चिमी साम्राज्य की बनिस्बत कम पैमाने पर किया जाता था। गुलामों को बहुत समय में अपने खुद के औजार और जमीन के अपने टुकड़े तक रखने की छूट मिली हुई थी जिनके बिना उन्हें बेचा नहीं जा सकता था। दूसरे शब्दों में गुलामों को लगभग वही स्थिति प्राप्त थी, जो कोलोनसों को हासिल थी।

कोलोनसों की जोतदारी पर आधारित कृषि ने बैजंतिया में पश्चिमी साम्राज्य की अपेक्षा कहीं अधिक मजबूत जड़ें जमा ली थीं। जमीन का लगान पर और विशेषकर दीर्घकालिक आधार पर दिया जाना भी आम रिवाज बन चुका था और जमीन की पट्टेदारी ने धीरे-धीरे मौरूसी रूप ग्रहण कर लिया। बैजंतिया में पश्चिमी साम्राज्य के मुकाबले कहीं ज्यादा छोटे उन्मुक्त भूमिधर और स्वाधीन कृषक समुदाय बचे रह गये थे।

बैजंतिया के स्थायित्व में योगदान करनेवाला एक और कारक यह था कि उसके समृद्ध प्रदेशों को अपेक्षाकृत कहीं कम बर्बर आक्रमणों को झेलना पड़ा था। उसके बड़े शहर और व्यापारिक केंद्र, विशेषकर बासफोरस जलसंयोजी पर स्थित कुस्तुंतुनिया, शाम में अंतिओक और मिस्र में सिकंदरिया साम्राज्य के लिए व्यापक वाणिज्यिक सूत्र और उसके निर्यात व्यापार के प्रसार की संभावनाएं सुनिश्चित करते थे। बैजंतिया को प्राप्त एक और सुविधा यह थी कि वह यूरोप तथा पूर्व के देशों के बीच व्यापार की कड़ी रूप में काम करता था।

चौथी, पाचवी तथा छठी शताब्दियो की एक विशेषता बैजतिया मे दासस्वामी समाज का क्रमिक विलोपन और साथ ही सामती सबधो का क्रमिक तथा सतत विकास था। जहा पश्चिम मे बर्बर आक्रमणो के फलस्वरूप पुराना सैनिक और नौकरशाही तत्र ध्वस्त हो गया था, वहा बैजतिया मे सामतवाद पुरानी केद्रीकृत सत्ता के ढाचे के भीतर ही विकसित होता रहा। भूतपूर्व दासस्वामियो के शक्तिशाली सामती भूस्वामियो के रूप मे विकसि होने पर भी केद्रीकृत नौकरशाही मे कोई परिवर्तन नही आये, जो निरकुश राजकीय ढाचे का एक आदर्श आधार प्रदान करती थी।

जैसे-जैसे अलग-अलग सामती प्रभु प्रातो मे अपनी नयी स्थिति और शक्ति का सुदृढीकरण करते गये, वैसे-वैसे ही शाही सरकार भी उनके प्रभाव को यथासभव सीमित करने के लिए कदम उठाती गयी। उन्हे अपनी निजी सेनाए रखने और अपनी जागीरो पर कैदखाने बनाने से वर्जित कर दिया गया। सरकार ने दासस्वामित्व काल के सामाजिक पदानुक्रम को भी अक्षुण्ण बनाये रखने का प्रयास किया, यद्यपि कई मामलो मे उसे गुलामो के कोलोनसो की हैसियत मे बदले जाने को मजूरी देनी पडी। कालातीत हो गयी व्यवस्था को टिकाये रखने के प्रयास मे राज्य की यह प्रतिक्रियावादी भूमिका जस्तीनियन प्रथम (५२७-५६५) के शासनकाल मे विशेषकर स्पष्ट रूप मे सामने आयी। यह शासक एक असाधारण राजनीतिज्ञ और राजमर्मज्ञ था, जिसके शासनकाल मे बैजतिया अपनी शक्ति के चरम पर पहुच गया था। जस्तीनियन के आदेश से तैयार की गयी "व्यवहार विधि सहिता' (कोर्पस जूरिस सिविलिस) ने सम्राट की लगभग असीम शक्तियो को निरूपित किया चर्च के विशेषाधिकारो तथा निजी सपत्ति को सरक्षण प्रदान किया और तत्कालीन यथास्थिति की पुष्टि की, जिसके अधीन दास और कोलोनस सभी अधिकारो से वचित थे।

जस्तीनियन की नीतियो ने आबादी के विभिन्न अशको मे गभीर असतोष पैदा कर दिया। साम्राज्य के कई भागो मे बगावतो की लहर दौड गयी। इनमे से वह विद्रोह विशेषकर खतरनाक था, जो स्वय कुस्तुतुनिया मे ही फूट पडा था और जिसे 'नीका!" (जीतो!) के नाम से विज्ञात होना था। इस विद्रोह को कुचलने के बाद जस्तीनियन ने अपना ध्यान विदेश नीति के क्षेत्र मे बडे पैमाने की योजनाओ की ओर मोडा। लेकिन इटली स्पेन और अफ्रीका मे उसने जो सफलताए प्राप्त की, वे शीघ्र की रेत की बुनियाद पर टिकी साबित हुई। जस्तीनियन के तुरत बाद जो शासक आये उनके काल मे ही बैजतिया को अपने नानासख्य विजित प्रदेशो को गवा देना था। इसके अलावा स्वय बैजतिया के प्रदेश पर ही बर्बरो के आक्रमण होनेवाले थे--सातवी सदी मे शाम, फिलिस्तीन और मिस्र को अरबो ने जीत लिया।

जब बर्बर लोग नवविजित प्रदेशो पर अथवा रोमनो स वापस छीनी जमीन पर उसे, तो वे कुदरती तौर पर अपने रीति रिवाजो को साथ लेकर आये। लेकिन विजित प्रदेशो के पुराने निवासी वर्ग समाज मे रहते थे–उनमे स्वतत्र रोमनो के साथ साथ गुलाम और कोलोनस भी थे। इस तरह के समाज के शासन के लिए बर्बरो के अपने परपरागत साधन अपर्याप्त सिद्ध हुए। फलस्वरूप जैसा कि हम आग चलकर देखेगे, बर्बर समाज को भी जल्दी ही पारपरिक सामुदायिक एकता गवाकर वर्गाधारित हो जाना पडा। उसम ऐसे परिवर्तन आने लग जिन्होने राज्यो के आविर्भाव का पथ प्रशस्त कर दिया। विजेताओ को सेनाओ और प्रशासनिक न्यायिक तथा अन्य अगो की आवश्यकता पडी जिनके बिना विजित जनो को काबू मे रखना, उनसे कर तथा खिराज वसूल करना और शोषको तथा शोषितो मे बट हुए उनके समाज मे कानून तथा व्यवस्था बनाये रखना असभव था।

आदिम समुदायो मे सन्निहित समानता के क्रमिक विलोपन क परिणामस्वरूप बर्बर समाज म ऐसे परिवर्तनो का आना अनिवार्य था, जिन्होने उसे आदिम समुदायो के समाज से एक सामती समाज मे परिणत कर दिया।

सामती व्यवस्था के उदय की यह प्रक्रिया क्या थी और नये बर्बर राज्यो म यह कैसे पैदा हुई? इस प्रश्न के पहले भाग का उत्तर बिलकुल सक्षेप म दिया जा सकता है। जमीन पर सामती प्रभु दखल कर लेते थे, जबकि मेहनतकश लोग उनके अधीन हो जाते थे–भूदास या कृषिदास (सर्फ) लिए अपन श्रम या अपनी उपज के एक भाग को सामत की खिदमत मे पश करना अनिवार्य हो जाता था। जमीन पर सामतो का स्वामित्व, मेहनतकशो की सामती अधीनता और शासक वग को मुक्ति लगान देने की उनकी मजबूरी–ये इस प्रक्रिया से जनित कुछ सामाजिक परिघटनाए थी। बर्बर राज्यो मे यह भला क्योकर पैदा हुई?

जब अपने मुखिया और उसकी सेना की रहनुमाई मे बर्बर कबीले कोई नया इलाका जीतते थे, तो मुखिया वहा की काफी सारी जमीन अपने अनुचरो मे बाट देता था। इस तरह उन्ह अक्सर दासो और कोलोनसो सहित रोमन अमीरो की बडी बडी जागीरे मिल जाया करती थी। कबीले के अन्य स्वतत्र (पूर्ण) सदस्यो को अपनी मूल बस्तियो में उपभुक्त भू अधिकारो के अनुसार जमीन मिलती थी। उनके गोत्र एकक ग्राम समुदायो मे रहने आय थे–प्रत्येक बडी पारिवारिक इकाई का जमीन के एक टुकडे पर मौरूसी मालिकाना हक होता था जिसमे उसके पशुओ के लिए बाडे सहित उसका आवास और कृष्यभूमि का खड होता था समुदाय की शेष

ज़मीन – जगल, चरागाह, परती जमीन और जलस्रोत – शामिलात मे आती थी मगर धीरे-धीरे बडे पारिवारिक एकक छोटी-छोटी इकाइयो मे बटते गये और मौरूसी ज़मीन भी उसी के अनुसार विभक्त होती गयी। इस तरह प्रत्येक छोटे पारिवारिक एकक का मुखिया अपनी जमीन का पुश्तैनी मालिक और गाव की सारी शामिलात के उपयोग का अधिकारी बन बैठा। फिर वह समय आते भी देर न लगी, जब ये छोटे किसान, जो आरभ मे स्वतत्र थे, अपनी ज़मीन और आज़ादी को खो बैठे और बडे-बडे भूस्वामियो की ख़िदमत करनेवाले अधीन किसान अथवा भूदास बन गये। यह कैसे हुआ?

बर्बर कबीलो के बडे पैमाने के देशातरणो और पहले बर्बर राज्यो की स्थापना के समय, और बाद मे, बर्बर लोगो के नये इलाको मे आबाद होने और बडी-बडी जागीरो को कब्ज़े मे लेने के समय अक्सर ऐसा होने लगा कि सामान्य कबायली को अपने मूल समुदाय के सह सदस्यो से समर्थन और सरक्षण नही मिल पाता था, जो इस समय तक कमज़ोर और असगठित हो चुका था। न ही वह इसकी अपने कबीले के नेता से आशा कर सकता था, जो अब नवस्थापित बर्बर राज्य का राजा था क्योकि राजा अब बडे-बडे इलाको पर शासन करते थे और दूरिया उन्हे पहुच के बाहर बना देती थी। उस ज़माने के छोटे किसान को सरक्षण के लिए अपने ही इलाके के शक्तिशाली लोगो का मुह ताकना पडता था और ये लोग अधिकतर कबायली नेता के सशस्त्र अनुचर दल के भूतपूर्व सदस्य ही हुआ करते थे, जिन्हे नेता ने बडी-बडी जागीरे दे दी थी, या वे सीधे अपने सशस्त्र अनुचर रखनेवाले धनी लोग हुआ करते थे, जो अपन जोखिम पर ज़मीनो पर दखल जमा लेते थे अथवा स्वतत्र सामान्य कबायलियो से ज़मीन खरीद खरीदकर अपनी जागीरो को बढाते जाते थे। ज़मीन के एक बार वैयक्तिक सपत्ति अधिकारो के अधीन आने के साथ, जिसे खरीदा और बेचा जा सकता था, एक ओर तो बडी जागीरो का बनना और दूसरी ओर निर्वाह-मात्र जोतो और भूमिहीन किसानो का पैदा होना बस वक्त का सवाल ही रह गया। विजित प्रदेशो पर नये राज्यो की स्थापना किये जाने के समय बर्बर समाज मे भी यही प्रक्रिया चल रही थी।

पश्चिमी यूरोप में सामती सबधों का आविर्भाव

धनियो और अमीर वर्ग के आश्रय तथा सरक्षण के इच्छुक छोटे किसानो को अत मे यह आश्रय तथा सरक्षण तो मिल गया, कितु अपनी आज़ादी को गवाने के मोल पर। अगर उनके पास ज़मीन न होती तो उन्हे ज़मीन

के छोटे छोटे टुकडे और कभी कभी कुछ पशु और उन्हें रखने के लिए मकान भी दे दिये जाते थे। लेकिन उन्हें इसका भुगतान या तो अपने मालिकों के लिए मुफ्त काम (बेगार) करके या अपनी उपज का एक हिस्सा (लगान) देकर करना पडता था। कितने मामलों में असहाय छोटे किसानों को प्राप्त भौतिक सहायता इतनी अधिक होती थी कि वे सिर्फ अपने को ही नहीं बल्कि अपने वंशजों को भी अपने नये मालिकों की खिदमत के बंधन में डाल देते थे। चूंकि स्वतंत्र सामान्य कबीला सदस्यों की रहन सहन की हालत कमोबेश एक जैसी ही थी, इसलिए यह जमींदारों और समाज के धनी सदस्यों का इस अधीनता को एक सार्विक रिवाज बन जाना था।

कुछ किसान, इसके बावजूद कि उनके पास अपने खुद के खेत और ठीक से गुजर करने लायक जमीन भी होती थी, धनियों और अमीर वर्ग के संरक्षण और आश्रय को किसी भी कीमत पर प्राप्त करने की इच्छा से उनके खिदमती बन जाते थे। वे अपने जमीन पर अपने अधिकारों को तज देते थे और उसे अपने नये मालिकों को देकर उसे फिर भूधृति के सारे दायित्वों के साथ इस तरह प्राप्त करते थे कि जैसे वह उनकी कभी भी नहीं थी। इस तरह जमीन अब पट्टे की जमीन या जोत बन जाती थी और उनका भूतपूर्व स्वामी पट्टेदार बन जाता था। कैथोलिक चर्च जैसे धनी भूस्वामी और मठों तथा पादरी सभा जैसे प्रतिष्ठान भी छोटे किसानों को सहायता और संरक्षण प्रदान करते थे, जो पट्टे पर जोतों की तरह वापस पाने के लिए अपनी जमीनें उन्हें दे दिया करते थे। मठ आम तौर पर भूतपूर्व स्वामियों को उनकी जोत लौटाने के साथ साथ थोडी सी और जमीन भी देते थे, जो आम तौर पर जंगल या दलदल का हिस्सा होती थी। यह जमीन इस शर्त पर दी जाती थी कि वे उसे खेती के लिए तैयार करेंगे (पेड काटकर या दलदल से पानी की निकासी करके)। धीरे धीरे भूतपूर्व ग्राम समुदायों के निवासी, छोटे किसान, जो अपनी जमीनों को काश्त किया करते थे और अभी तक पूर्ण नागरिक थे, अब जमीन और बडे जमींदारों की खिदमत से बंधनग्रस्त पराधीन कृषक अथवा भूदास या कृषिदास बन गये।

लेकिन इस प्रक्रिया में यही सब सन्निहित नहीं था। बडे जमींदारों ने धीरे धीरे स्थानीय कृषक आबादी पर नये अधिकार प्राप्त कर लिये। चूंकि सडकें खराब होती थीं और लंबे सफरों में काफी खतरा रहता था, इसलिए किसान के लिए अपने और शक्तिशाली सामंत के बीच हितों के टकराव के मामले में उचित फैसले के लिए राजा की शरण में जा पाना कमोबेश असंभव ही होता था। फलत धनी लोग – और इसका अर्थ था सर्वप्रथम और सर्वोपरि सामंत – अपनी विशाल जागीरों की सीमाओं के भीतर न्याय के और अंत में समस्त प्रशासन शक्ति के नियामक बन गये।

अपनी उपलब्धियो को पुख्ता करने के लिए सामत अपने राजा से विशेष अधिकारपत्र (चार्टर) मागते थे, जो उन्हे वे अधिकार प्रदान कर देते थे कि जिन्हे उन्होंने पहले ही हथिया लिया था। ये अधिकारपत्र उन्मुक्ति (इम्यूनिटी) अधिकारपत्र कहलाते थे और इन अधिकारपत्रो के धारको को प्राप्त नयी शक्ति उन्मुक्ति कहलाती थी (लातीनी शब्द इम्मूनिस जिससे इम्यूनिटी बना है, का अर्थ ही छूटप्राप्त है)। इन अधिकारपत्रो ने जमीदारो की सपत्ति को राजा और उसके प्रशासनाधिकारियो के नियत्रण से उन्मुक्त कर दिया। उन्मुक्ति अधिकारपत्र ज़मीदारो को अपनी सारी सपत्ति पर और अकसर उसकी सीमाओ के बाहर भी कानूनी और प्रशासनिक शक्तिया प्रदान कर देता था, क्योकि बर्बर राज्य कमज़ोर और कुगठित थे।

केंद्रीय तथा स्थानीय प्रशासन वास्तविक अर्थो मे था ही नही और राजा लोग सहर्ष अपने कृत्य स्थानीय सामतो के सुपुर्द कर देते थे। इस अतिरिक्त शक्ति के कारण सामतो को सामान्यजन की स्थानीय सभाओ मे, जहा प्राय कानूनी मामलो का निपटारा किया जाता था, नियत क्षेत्र मे कानून और व्यवस्था के पालन का नियमन करने के लिए भाग लेना पडता था। दूसरे शब्दो मे, उन्हे राजकीय प्रशासनिक तथा विधिक कृत्य प्रदान कर दिये गये। इन सेवाओ के बदले मे सामतो को अपने द्वारा प्रशासित क्षेत्र मे राजस्व एकत्र करने और अपराधो के लिए जुरमाने वसूलने का और अपने क्षेत्राधिकार के भीतर रहनेवाले सामान्यजनो से किसी भी प्रकार की खिदमत लेने – सडको की मरम्मत कराने, पुल, घाट और गढ तथा किले बनवाने – का अधिकार मिल गया। बाज़ारो, आदि मे कानून और व्यवस्था कायम रखने के मुआवज़े के तौर पर राजाओ और उनके अधिकारियो ने हाट-बाजार सडक, घाट और पुल शुल्क (चुगी) लगाये हुए थे, जिन्हे अब उन्मुक्ति अधिकारपत्र रखनेवाले जमीदार उगाहने लगे।

इसके अलावा स्थानीय मुखियाओ को एक और मौका मिला, जिसने उनके विशेषाधिकारो की अत्यत मजबूती से और बेहद लबे समय के लिए जडे जमाने मे मदद की। अपने मुखियाओ के साथ युद्ध मे और विजय-अभियानो पर जानेवाली आम लोगो से बनी सेनाओ की भूमिका धीरे-धीरे कम महत्व की हो गयी। रोमन सेनाओ के साथ सपर्को और वास्तविक युद्धो तथा सैन्य प्रविधि मे समूचे तौर पर उन्नति ने धातु के हथियारो और जिरह बख्तर का प्रचलन अनिवार्य बना दिया। पैदल दस्तो के अलावा रिसाले की आवश्यकता ने भी अपने को अनुभूत करवाया और घोडो को भी अपने सवारो की ही भाति कवच चाहिए था। इन नवाचारो को बहुत महगा सिद्ध होना था – पूरे जिरह बख्तर की कीमत ४५ गाय थी, यानी एक पूरा रेवड। इसलिए प्रत्यक्षत जिरह-बख्तर ग्राम समुदाय के सामान्य किसान के लिए एक असभव

राजकीय ढाचो ने विभिन्न विजयो के दौरान रूप ग्रहण किया, क्योकि विजित जातियो के अधीनीकरण के लिए बल और दमन की अपेक्षा थी, जो बर्बर समाज का पुराना ढाचा कारगर ढग से प्रदान नही कर सकता था। बर्बर राज्यो मे जो राजकीय अग व्यवहार मे अपेक्षित बल तथा दमन का प्रयोग करते थे, वे आरभ मे राजा लोग और उनके अनुचरगण थे।

शार्लमान का साम्राज्य

उस समय जिस तरीके से बर्बर राज्यो की स्थापना की गयी थी, उसका एक उदाहरण शार्लमान (शार्ल या कार्ल महान) के शासनकाल (७६८-८१४) मे फ्रेकी राज्य के बनने मे देखा जा सकता है। फ्रेको के राज्य की आधुनिक अर्थो मे कोई भी राजधानी नही थी। जहा कही भी राजा और उसके अनुचरो का डेरा होता था, वही राज्य का केद्र भी हुआ करता था। राजा फ्रेकी कबीलो द्वारा अधिकृत अपने राज्य मे अपने दल-बल के साथ एक जागीर से दूसरी जागीर आता जाता रहता था, जहा स्थानीय आबादी से खिराज और करो के रूप मे खाद्य सामग्रिया तथा अन्य आवश्यक वस्तुए एकत्र करके उसके दरबार तथा अनुचरो की आवश्यकताओ की पर्याप्त मात्रा मे पूर्ति की जा सकती थी। राजा और उसके दरबार के ये दौरे राज्य की प्रादेशिक सीमाओ को निर्धारित करने का काम भी करते थे क्योकि राजा को अदायगी करने को तैयार सभी लोग उसके प्रजाजन माने जाते थे और जिस इलाके मे वे रहते थे, उसे उसके राज्य का अग माना जाता था। बर्बर राज्यो मे स्पष्टत निर्धारित प्रादेशिक सीमाए कदाचित ही देखने मे आती थी। व्यवहार मे उनकी सीमाए वही तक होती थी जहा तक राजा और उसके अनुचर खिराज और कर उगाहकर अपनी सत्ता का प्रयोग कर सकते थे। शार्लमान के साम्राज्य के विराट आकार से इस तथाकथित साम्राज्य की प्रकृति के बारे मे गलत निष्कर्ष नही निकालने चाहिए।

शार्लमान के पूर्ववर्ती शार्ल मार्तेल (७१५-७४१) और उसके पुत्र ठिगने पीपिन को यूरोप पर अरब हमलो का सामना करना पडा था। शार्ल मार्तेल ने बडी मुश्किल से फ्रेकी राज्य पर अरबो के आक्रमण को विफल किया था (प्वातिये का युद्ध, ७३२)। इस युद्ध के अनुभव के फलस्वरूप फ्रेकी राजाओ को अपनी सेना को सुधारना पडा।

इस प्रयास की अभिव्यक्ति सिर्फ सैन्य सज्जा मे बाद मे आनेवाले सुधारो मे ही नही, बल्कि उन सभी लोगो को जमीन और किसान अधिकाधिक प्राथमिकता से प्रदान किये जाने मे भी हुई, जो युद्धकाल मे राजा के परचम के तले गोलबद हो सकते थे। जो लोग इस तरह की सेवाओ का बीडा उठा सकते थे वे समाज के धनवान स्तरो मे ही आते थे, जिनके सदस्य तथाकथित

विलास वस्तु जैसा ही था। इस कारण सार्विक सैनिक सेवा को जल्द ही अतीत की एक बात बनकर ही रह जाना था।

समय के साथ साथ नये बर्बर राज्यो की सेनाए अधिकाधिक ऐसे धनवान प्रजाजनो से ही निर्मित होने लगी, जो अपने को नयी सैन्य प्रविधियों की अपेक्षाओ के अनुसार शस्त्रसज्जित कर सकते थे। इस प्रकार इन नये राज्यों के राजा सैनिक सेवा का दायित्व स्वाभाविक तौर पर या तो अपने ऐसे प्रजाजनो को देते थे, जोकि पहले से ही सपन्न होते थे, या दूसरे लोगों को देते थे जिन्हे वे अपने अनुचरो मे से कुछ को शाही अनुग्रह प्रदान करके या स्थानीय धनवानो को असामी काश्तकारो समेत जमीन प्रदान करके सपन्न बना देते थे, जिसके बदले उन्हे जरूरत पडने पर घोडे और जिरह-बख्तर सहित पूर्णत लैस होकर सेवा के लिए हाजिर होना पडता था। प्रजाजनो को इस प्रकार प्रदान की गयी जमीन सामती जागीर (फ्यूड) कहलाती थी और उन्हे प्राप्त करनेवाले सामत (फ्यूडल) कहलाने लगे। आरभ में सामत अपनी जमीन को तभी तक रख सकते थे कि जब तक वे अपने सैनिक दायित्वो का निर्वहन कर सकते थे, लेकिन बहुत जल्दी ही उन्हे प्रदत्त जमीन वशागत सपत्ति बन गयी और उनके सैनिक दायित्व भी उनके वशजो को विरासत मे मिलने लगे।

इस तरह एक नया शासक वर्ग – सामत वर्ग – अस्तित्व मे आ गया। यह बडे बडे भूक्षेत्रो (किसानो के अकिंचन टुकडो की तुलना मे) के स्वामी शस्त्रजीवी या सैनिक जमीदारो का वर्ग था, जो अपनी जायदाद की सीमाओ के भीतर राज्य शक्ति के सारे कृत्यो का निष्पादन करते थे। नानासख्य वास्तविक उत्पादको – इन सामतो पर आश्रित किसानो – को जमीन के अपने छोटे छोटे टुकडो के लिए बेगार या लगान के रूप मे भुगतान करना पडता था और राज्य शक्ति के स्थानीय प्रतिनिधियो के नाते जमीदारो को भाति भाति की खिदमत भी करनी पडती थी और उन्हे विभिन्न उगाहिया भी अदा करनी पडती थी।

नये समाज के राजनीतिक ढाचे मे भी उल्लेखनीय परिवर्तन आये। आदिम समुदाय और वर्गविहीन बर्बर समाज के युग मे राज्य थे ही नही। बर्बरो का बुनियादी सामाजिक निकाय जनसभा – ज्येष्ठो की सभा – हुआ करती थी जिसमे कबीले के सभी महत्वपूर्ण मामलो को तय किया जाता था – युद्ध और शाति के प्रश्न, कानूनी और न्यायिक मामले और कानून तथा व्यवस्था को कायम रखना। कबायली नेताओ – सरदारो (ड्यूक) अथवा राजाओ – की सत्ता निर्वाच्य होती थी, न कि अवपीडक (जैसा कि अधिक विकसित समाजो मे प्राय होता था) और विभिन्न उम्मीदवारो की प्रतिष्ठा तथा उनमे कबीले के सदस्यो के विश्वास पर निर्भर करती थी

राजकीय ढाचो ने विभिन्न विजयो के दौरान रूप ग्रहण किया, क्योकि विजित जातियो के अधीनीकरण के लिए बल और दमन की अपेक्षा थी, जो बर्बर समाज का पुराना ढाचा कारगर ढग से प्रदान नही कर सकता था। बर्बर राज्यो मे जो राजकीय अग व्यवहार मे अपेक्षित बल तथा दमन का प्रयोग करते थे, वे आरभ मे राजा लोग और उनके अनुचरगण थे।

शार्लमान का साम्राज्य

उस समय जिस तरीके से बर्बर राज्यो की स्थापना की गयी थी उसका एक उदाहरण शार्लमान (शार्ल या कार्ल महान) के शासनकाल (७६८-८१४) मे फ्रेकी राज्य के बनने मे देखा जा सकता है। फ्रेको के राज्य की आधुनिक अर्थो मे कोई भी राजधानी नही थी। जहा कही भी राजा और उसके अनुचरो का डेरा होता था, वही राज्य का केद्र भी हुआ करता था। राजा फ्रेकी कबीलो द्वारा अधिकृत अपने राज्य म अपने दल-दल के साथ एक जागीर से दूसरी जागीर आता-जाता रहता था, जहा स्थानीय आबादी से खिराज और करो के रूप मे खाद्य सामग्रिया तथा अन्य आवश्यक वस्तुए एकत्र करके उसके दरबार तथा अनुचरो की आवश्यकताओ की पर्याप्त मात्रा मे पूर्ति की जा सकती थी। राजा और उसके दरबार क ये दौरे राज्य की प्रादेशिक सीमाओ को निर्धारित करने का काम भी करते थे, क्योकि राजा को अदायगी करने को तैयार सभी लोग उसके प्रजाजन माने जाते थे और जिस इलाके मे वे रहते थे, उसे उसके राज्य का अग माना जाता था। बर्बर राज्यो मे स्पष्टत निर्धारित प्रादेशिक सीमाए कदाचित ही देखने मे आती थी। व्यवहार मे उनकी सीमाए वही तक होती थी जहा तक राजा और उसके अनुचर खिराज और कर उगाहकर अपनी सत्ता का प्रयोग कर सकते थे। शार्लमान के साम्राज्य के विराट आकार से इस तथाकथित साम्राज्य की प्रकृति के बारे मे गलत निष्कर्ष नही निकालने चाहिए।

शार्लमान के पूर्ववर्ती शार्ल मार्तेल (७१५ ७४१) और उसके पुत्र ठिगने पीपिन को यूरोप पर अरब हमलो का सामना करना पडा था। शार्ल मार्तेल ने बडी मुश्किल से फ्रेकी राज्य पर अरबो के आक्रमण को विफल किया था (प्वातिये का युद्ध ७३२)। इस युद्ध के अनुभव के फलस्वरूप फ्रेकी राजाओ को अपनी सेना को सुधारना पडा।

इस प्रयास की अभिव्यक्ति सिर्फ सैन्य सज्जा मे बाद मे आनेवाले सुधारो मे ही नही, बल्कि उन सभी लोगो को ज़मीन और किसान अधिकाधिक प्राथमिकता से प्रदान किये जाने मे भी हुई जो युद्धकाल मे राजा के परचम के तले गोलबद हो सकते थे। जो लोग इस तरह की सेवाओ का बीडा उठा सकते थ वे समाज के धनवान मस्तरो से ही आते थ, जिनके सदस्य तथाकथित

माफिया (वेनिफिस) प्राप्त करके अपनी संपत्ति बढ़ाने मे समर्थ हो गये थे। ये माफिया जल्दी ही मौरूसी हो गयीं और इसलिए पीपिन के शासनकाल मे माफियो के बडे पैमाने पर वितरण के फलस्वरूप शक्तिशाली शस्त्रजात जमीदार शासक वर्ग की संख्या और ताकत मे वृद्धि हुई, जिन पर उस जमीन पर रहनेवाले किसान अब आश्रित हो गये, जिसे उनकी माफी बना दिया गया था।

शासक वर्ग की संख्या मे स्थायी वृद्धि के परिणामस्वरूप शार्लमान के वंश के राजाओ के लिए सक्रिय विदेश नीति का अनुगमन करना और फ्रेंको द्वारा आबाद इलाको के सीमांतो के बहुत दूर-दूर तक धावे मारना संभव हो गया। इस तरह से शार्लमान ने अपनी सत्ता को एक विराट क्षेत्र पर फैलाने मे सफलता प्राप्त कर ली, जिसकी सीमाओ मे वर्तमान फ्रांस, उत्तरी स्पेन, उत्तरी इटली और पश्चिमी जर्मनी का काफी बडा भाग आ जाते थे।

८०० ई० मे पोप ने शार्लमान को सम्राट का मुकुट पहनाकर अभिषिक्त किया और उसके राज्य को साम्राज्य घोषित कर दिया। वास्तव मे यह साम्राज्य एक सफल विजेता द्वारा पराभूत कई देशो का एक ढीला-ढाला और अस्थायी संघ ही था, जिनके बीच कोई वस्तुत दृढ संबंध सूत्र नही था। फलस्वरूप साम्राज्य अपने संस्थापक की मृत्यु के कुछ ही बाद छिन्न भिन्न हो गया।

साम्राज्य के विघटन का कारण केवल यही नही था कि उसमे विभिन्न कबीले रहते थे, जिन्होने शार्लमान की मृत्यु के बाद उससे अपने संबंध तोड़ लिये और अपने पराभव के पहले जैसे रजवाडे फिर से स्थापित करने लग गये। इस विघटन के आधारभूत कारण एक सामाजिक-आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था के रूप मे स्वयं सामंतवाद की प्रकृति मे ही सन्निहित थे। इस समाज की प्रकृति को समझने के लिए उसके नाभिक – सामंती जागीर – की संरचना की प्रकृति की स्पष्ट समझ होना आवश्यक है, जिसे सदियो तक सामंती समाज के पहले पहल प्रादुर्भूत होने से लेकर बूर्जुआ क्रांति के दावानल मे उसके भस्मीभूत होने तक सामंती समाज की बुनियाद का काम करना था।

प्रारंभिक मध्ययुग मे सामंती संबंधो का विकास

ग्यारहवी शताब्दी के आरंभ तक सामंतवाद के जमने की प्रक्रिया संपूर्ण यूरोप मे पूरी हो चुकी थी, अर्थात सारी या लगभग सारी जमीन सामंतो के हाथो मे आ चुकी थी, जबकि सारे मेहनतकश लोग इस शासक वर्ग पर बमारग

मात्रा मे निर्भर थे। इस अधीनता का कठिनतम स्वरूप भूदासो की निर्भरता का था, जो अपने वशजो सहित अपने मालिक और उसकी जमीन की खिदमत के लिए आवद्ध थे। इसका यह मतलब था कि भूदासो को अपने स्वामी की जागीर पर काम करना और उसकी जमीन को काश्त करना पडता था और उसे अपनी और अपने परिवार की उपज (न सिर्फ अनाज, मास और कुक्कुट जैसी कृपिजन्य उपज, वल्कि कपडे और चमडे जैसी दस्तकारी की चीजे भी) का एक हिस्सा देना होता था। दूसरे शब्दो मे, भूदास को अपने मालिक उसके परिवार और उसके बेशुमार सगी साथियो का पेट ही नही भरना पडता था, वल्कि उनके कपडे-लत्ते और जूतो तक का भी इतजाम करना पडता था। ये सभी दायित्व और उपहार सामती लगान या मुक्ति लगान कहलाते थे और इन्हे मालिक की जमीनो को काश्त करने के अधिकार के वदले मे चुकाना होता था, जिसे मालिक किसानो — या जैसा कि वाद मे उनका नाम पडा, विलेइनो (कृषिदासो) — को दे देता था।

उपरिवर्णित ढग पर व्यवस्थित सामती जागीर, जो सामती अर्थव्यवस्था और समाज का नाभिक थी, रूस मे 'वोत्चिना', इगलैड मे 'मेनोरिएल इस्टेट' और फ्रास तथा शेष यूरोप मे (क्योकि फ्रासीसी नमूने को आदर्श माना जाता था) 'सेन्योरी' कहलाती थी। सामती सवधो और सामती समाज के ढाचे के मुख्य लक्षणो को समझने के लिए इसका स्पष्ट चित्र पाना वहुत महत्वपूण है कि सामती जागीर का प्रवध किस तरह किया जाता था और इस सामाजिक-आर्थिक एकक ने मध्ययुग मे सामाजिक तथा राजनीतिक सवधो को किस तरह प्रभावित किया।

सामती जागीर

सामती जागीर सामती समाज और सामती उत्पादन प्रणाली की बुनियादी इकाई थी और इस कारण इसने समाज, राजनीतिक सगठन के स्वरूपो और समूचे तौर पर सास्कृतिक विकास पर भी निर्णायक प्रभाव डाला। मध्ययुग मे — विरल अपवादो के साथ — सारी जमीन सामत शासक वर्ग की ही सपत्ति थी जिनके पास विभिन्न आकारो की जागीर थी। इनका स्वामित्व वूर्जुआ स्वामित्व से इस वात मे भिन्न था कि वह विभिन्न शर्तो के अधीन होता था। यह माना जाता था कि प्रत्येक सामति भूपति अपनी माफी अपने से ऊचे ओहदे के सामत (सेन्योर) से प्राप्त करता था। सबसे ऊचे ओहदे वाले सेन्योर को अपनी माफी राजा से मिली होती थी। बदले मे भूपति के लिए यह आवश्यक था कि जब भी उसका सामत उचित समझे, वह घोडे और जिरह-वख्तर के साथ पूरी तरह से लैस होकर हाजिर हो। इस प्रकार

वह अपने से ऊपर सामंत या राजा की सेवा करता था और उसके प्रति सैनिक सेवा के अलावा उसके कई अन्य दायित्व भी होते थे—जैसे अपने सामंत के बंदी बना लिये जाने की हालत में उसकी रिहाई के लिए मुक्ति धन का कुछ हिस्सा देना होता था, उसके बड़े बेटे के नाइट श्रेणी (सैनिक सामंत वर्ग) में लिये जाने के अवसर पर या उसकी बड़ी बेटी के विवाह के समय नजराना देना होता था, मुकदमों की सुनवाई के समय उसके दरबार में मदद के लिए हाजिर रहना पड़ता था, आदि-आदि। अधीनस्थ सामंत द्वारा इन कर्तव्यों की पूर्ति में चूक किये जाने पर उससे ऊपर सामंत का अधिकार था कि वह उसे दी गयी जागीर छीन ले।

सामंती जमींदार की जागीर दो भागों में बंटी होती थी—एक भाग उसकी स्वभूमि (डामेन) कहलाता था, जिसे बेगार के रूप में भूदास काश्त करते थे, और दूसरा भाग भूदासों को दिया हुआ होता था (उनकी अपनी जोत)। हर भूदास के पास जमीन का एक छोटा सा टुकड़ा होता था, जिस पर वह स्वतंत्र रूप से अपने निजी औजारों और ढोरों की सहायता से काश्त करता था। इन टुकड़ों से किसानों को अपना और अपने परिवार का निर्वाह करने और मालिक को लगान देने के लिए—जब उसे पूर्णतः या अंशतः उपज के रूप में दिया जाना होता था—पर्याप्त उपज प्राप्त हो जाती थी। किसान पर लागू होनेवाली दासता की शर्तें चाहे कितनी भी कठोर क्यों न हों, फिर भी वह अपनी जोत को हमेशा स्वतंत्रतापूर्वक काश्त कर सकता था और भूदास समुदाय के मुखिया इसकी व्यवस्था करते थे कि सामंत की स्वभूमि को किस तरह जोता-बोया जाना चाहिए और फसलों का क्या क्रम रहना चाहिए। इसका यह मतलब था कि भूदास आर्थिक रूप से अपने जागीरदार से आजाद थे और उनसे सामंत जागीरदार आर्थिकेतर दबाव द्वारा—चाहे प्रत्यक्ष या प्रच्छन्न सामंती लगान ही प्राप्त कर सकता था।

आर्थिकेतर दबाव के विभिन्न रूप थे—भूदास की अपने सामंत पर निजी निर्भरता, अपने जमीन के टुकड़े के लिए सामंत पर निर्भरता (यह माना जाता था कि भूदासों की जोतों सहित सारी जमीन सामंत जागीरदार की संपत्ति है), और अंततः राज्य की वैधानिक तथा प्रशासनिक सत्ता के प्रतिनिधि के नाते सामंत पर भूदास की निर्भरता। चूंकि सामंत केवल जमींदार ही नहीं, बल्कि युद्धकर्मी और सैनिक सामंत भी होते थे, इसलिए इसका यह मतलब था कि जब भी जरूरी हो, उनके पास भूदासों को अपने दायित्व पूरे करने के लिए विवश करने के पर्याप्त साधन होते थे।

कृषि में, और जैसा कि हम आगे चलकर देखेंगे, उद्योग में भी मध्ययुगीन अर्थव्यवस्था का चारित्रिक लक्षण छोटे पैमाने का उत्पादन था। कृषि उपकरण छोटे और वैयक्तिक उपयोग के लिए बनाये गये होते थे। दस्तकारों

द्वारा इस्तेमाल मे लाये जानेवाले औजारो पर भी यही बात लागू होती थी। इस प्रकार समस्त मध्ययुगीन संस्कृति का भौतिक आधार सर्वोपरि रूप मे कृषक श्रम और कृषक अर्थतंत्र अथात गावो मे स्वतंत्र छोटे उत्पादक की छोटे पैमाने की जोत, और आगे चलकर, शहरो मे दस्तकारो क छोटे पेमाने के उद्यम थे।

शासक वर्ग उत्पादन प्रक्रिया मे बिलकुल भी प्रत्यक्ष भाग नही लेता था और सामत युग के प्रारंभ मे उसकी सकारात्मक भूमिका मात्र इसी तथ्य मे निहित थी कि चूकि सामत रणनेता भी होत थे, इसलिए व छोटे उत्पादको की सपत्ति की अन्य सामतो तथा विदेशियो द्वारा लूटमार से रक्षा करते थे आर दश मे बुनियादी कानून और व्यवस्था को कायम रखते थे, जो किसी भी प्रकार के नियमित उत्पादन के लिए एक अपरिहार्य शर्त थी। दूसरी ओर सामती ज़मीदारो ने सामती अर्थव्यवस्था के लिए लाक्षणिक शोषण व्यवस्था की रक्षा की और उसे सुदढ किया।

चूकि मनुष्य के दैनदिन जीवन के लिए आवश्यक सभी भौतिक वस्तुओ का उत्पादन छोटी कृषक जोतो मे ही होता था, जिनके स्वामी आर्थिक रूप म अपने सामतो मे स्वतंत्र थे इसलिए इसका यह मतलब था कि ज्यादा मेहनत करके किसान अपने तथा अपने परिवारो के लिए आवश्यक अपज और जागीर के स्वामी को दिये जानवाले भाग के अलावा कुछ वेशी भी पैदा कर सकते थे। इसी बात मे दासस्वामी समाज की तुलना म सामती व्यवस्था की अपार उन्नति और प्रगति सन्निहित थी।

दास अपन मालिक की जमीन को अपन मालिक के औजारो और उत्पादन साधनो का उपयोग करके काश्त करत थ और इसके बाद अपनी मेहनत के सारे फल अपने मालिक के सुपुर्द कर दिया करत थ जिसके बदले उन्हे बस अपन जीवन के लिए एकदम आवश्यक चीज ही मिलती थी। गुलाम अपने काम से नफरत करता था और यथासभव कम स कम करने की कोशिश करता था और अपनी पददलित मानव गरिमा का बदला लन क लिए अक्सर अपने औजारो को तोड दिया करता था और अपन मालिक के भारवाही पशुओ को पगु कर दिया करता था।

इसके विपरीत, मध्ययुगीन भूदास की स्थिति चाहे कितनी भी दुःसह क्यो न रही हो फिर भी वह अपनी जोत का काश्त करता था और अपनी श्रम उत्पादिता का स्तर ऊचा करने म उसका निहित स्वार्थ था। इसके परिणामस्वरूप सामती समाज इस बात क बावजूद अधिक फलदायी यद्यपि अत्यधिक मद गति मे विकास करने मे समर्थ सिद्ध हुआ कि वह दास-प्रथा क खडहरो और पूर्ववर्ती युग की उच्च सांस्कृतिक उपलब्धियो पर निर्मित हुआ था।
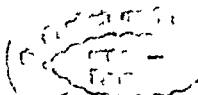
सामंती समाज में युद्ध

सामंती प्रभुओं की शक्ति उनके सामंती लगान देनेवाले असामियों की संख्या पर निर्भर करती थी। इस कारण जागीरों के स्वामी सामंत सदा अपने असामियों अर्थात अपनी खिदमत करनेवाले किसानों और नगरवासियों की संख्या को बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील रहते थे और यह करने का सबसे आसान तरीका था अपने पड़ोसियों अर्थात अपने ही जैसे अन्य सामंतों के असामियों को छीन लेना। अतः सामंतों के बीच स्थानीय लड़ाइयां मध्ययुग की एक स्थायी विशेषता थीं। इन युद्धों के साथ-साथ पूरे के पूरे गांवों और नगरों को जलाकर खाक कर दिया जाना और आम लोगों का कत्ले आम भी चलता था – अर्थात वे सारे तरीके इस्तेमाल में लाये जाते थे जो समाज की उत्पादक शक्तियों को क्षति पहुंचाते हैं। अगर अलग-अलग सामंत एकीकृत और कानूनी राज्यों में प्राप्य विधि-विधान और व्यवस्था की संहिताओं का पालन करते होते तो इससे बचा जा सकता था। लेकिन प्रारंभिक मध्ययुग में ऐसे राज्य थे ही नहीं। जिन आर्थिक कारकों के परिणामस्वरूप बर्बर राज्य सामंती जागीरों अथवा सन्योरियों में खंडित हुए थे वे ही बर्बर राज्यों के अपकर्ष का कारण भी बने। सामंती समाज के, जो स्वयं दो मुख्य वर्गों से बना हुआ था, आर्थिक केंद्र बनने के साथ अलग-अलग जागीरें राजनीतिक जीवन के केंद्रों के प्रतीक बन गयीं। सामंत सिर्फ जमींदार ही नहीं बन गये, बल्कि वे अपने इलाकों में रहनेवालों के लिए राज्यसत्ता के प्रतिनिधि भी बन गये।

जैसे-जैसे सामंती जागीरों का आकार बढ़ता गया, वैसे-वैसे ही जमीन पाने के बाद बर्बर राजाओं के अनुचरों ने और धनी बन जाने तथा पहले के स्वतंत्र छोटे किसानों को अपने संरक्षण में लेने के बाद स्थानीय अमीर उमरा ने कानून और व्यवस्था का उल्लंघन होने पर स्थानीय आम लोगों की सुनवाई करने और उन्हें दंड देने का अधिकार धारण कर लिया। युद्धनेता होने के नाते वे अपने सशस्त्र अनुचर दल भी भरती करने लगे। राजा इतने शक्तिशाली थे नहीं कि स्थानीय अभिजातों का इस तरह अपनी शक्ति बढ़ाना रोक सकें और कुछ बातों के लिहाज से तो उन्होंने उनकी महत्वाकांक्षाओं को प्रोत्साहित भी किया, क्योंकि एक ऐसी अवस्था में जिसमें मुद्राहीन विनिमय का ही बोलबाला था और व्यापार का अभी अच्छी तरह विकास नहीं हुआ था अपने अनुचरों और वफादार सेवकों को पुरस्कृत करने का एकमात्र तरीका उन्हें जमीन की माफी देना और अपने ही लाभ के लिए उन्हें स्थानीय आबादी से जिंस रूप करों तथा उगाहियों को वसूल करने का अधिकार देना ही था। इस प्रकार शक्तिशाली जमींदार अपनी सीमाओं में

भीतर कोरा जमीदार ही नही, बल्कि शासक भी होता था, अर्थात जहा तक आम लोगो का सवाल था, उनके लिए राजा या प्रशासनिक और वैधानिक शक्तियो से सपन्न व्यक्ति भी होता था।

सामती पदानुक्रम

इस काल मे राजाओ का अस्तित्व बना हुआ था, लेकिन वास्तविक सत्ता स्थानीय सामतो के हाथो मे थी। सबसे शक्तिशाली सामत, जिन्होने अपनी जागीरे सीधे राजा से प्राप्त की थी, अपने को राजा के बराबर, उसके पीयर – समकक्षी – मानते थे, यद्यपि वे उसके मातहत सामत (वैसल) कहलाते थे। उनसे कम शक्तिशाली सामत जिन्होंने अपना इलाका सीधे राजा से नही, बल्कि बडे सामतो से प्राप्त किया था, इन बडे सामतो के ही मातहत होते थे और उनकी सेवा के लिए आबद्ध होते थे। सबसे छोटी जागीरो के स्वामी नाइट (सरदार) कहलाते थे और अपनी बारी मे अपने से बडे सामतो के मातहत होते थे। सारा शासक वर्ग एक जटिल पदसोपानिक पिरामिड जैसा था – सबसे ऊपर राजा था उसके नीचे बडे पदवीदार सामत (जैसे ड्यूक, अर्ल और बडे मठो के मठाधीश) इसके बाद बैरन और अत मे सामान्य नाइट आते थे। ऊपर से नीचे तक शासक वर्ग के इन सारे समूहो को एक करनेवाला एक ही सामान्य हित था – मेहनतकशो का शोषण और प्रारभिक मध्ययुग मे यह सामान्य हित किसानो द्वारा शासक वर्ग के लिए भोजन और कपडा लत्ता उपलब्ध करने के दायित्व की आज्ञाकारितापूर्वक पूर्ति करवाने के लिए काफी था। इसीलिए उस समय शासन के कोई और रूप नही थे। यद्यपि बर्बर राज्यो की – शार्लमान के साम्राज्य जैसे विराट राज्यो की भी – एकता राजा के अनुचर वर्ग द्वारा बरकरार रखी जाती थी फिर भी देर-सवेर ये राज्य विघटित हो गये और अनेक जागीरो म विभक्त हो गये, जिनके स्वामी एक दूसरे से और अत मे स्वय राजा के साथ जागीर-दारी सबधो से जुड हुए थे। मगर व्यवहार मे राजा की भूमिका अपेक्षाकृत कम महत्व रखती थी, क्योकि हर सामत का अपन प्रत्यक्ष उच्च सामत से ही सीधा सबध था, जिसकी आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए वह बाध्य था। फ्रेकी राज्य मे जिसम सामती सामाजिक प्रतिरूप विशेषकर स्पष्ट थे 'मेरे सामत का सामत मेरा सामत नही है' क नियम का ही पालन किया जाता था।

इस प्रकार हम देखते है कि प्रारभिक मध्ययुग की अर्थव्यवस्था मुख्यतया कृषि तथा ग्राम्य श्रम पर आधारित थी और उसका सामाजिक चरित्र सामती व्यवस्था के उदय की प्रक्रिया द्वारा निर्धारित होता था। राजनीतिक विकास

की मुख्य विशेषता यह थी कि इस काल में प्रारंभिक बर्बर राज्य में बड़े पैमाने पर राज्यों में संक्रमण हुआ, जिनमें राजसत्ता नानासंख्य सामंतों में विभाजित थी, जिन्हें अपने अधीनस्थ भूस्वामियों पर आर्थिक तथा प्रशासनिक सेना प्रकार की सत्ता प्राप्त थी।

सामंती दासत्व के खिलाफ जन-संघर्ष

मध्ययुग की इस प्रारंभिक अवस्था के एक अन्य पहलू का उल्लेख करना भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। यूरोप में समुदाय पर आधारित आदिम समाज से सामंती समाज में संक्रमण व्यवहारतः एक वर्गपूर्व समाज से वर्ग समाज में संक्रमण था। इस समाज में व्यापक मेहनतकश जनता दासत्वग्रस्त हुई और अपने भूखंडों पर मौरूसी अधिकार रखनेवाले ग्राम समुदायों के भूतपूर्व स्वतंत्र किसान अपनी आजादी और जमीन से, जो अब उनके सामंत की संपत्ति बन गयी थी, वंचित होकर पराधीन भूदास बन गये। स्वाभाविक तौर पर मेहनतकश लोग इस हालत को चुपचाप मंजूर कर लेने के लिए तैयार नहीं थे। किसी भी वर्ग समाज में पाया जानेवाला वर्ग संघर्ष सामंती समाज में भी फूट पड़ा, जो कभी प्रच्छन्न रहता था, तो कभी खुले रूप में सामने आ जाता था। इधर, जब सामंती संबंध रूप ले ही रहे थे, भूदास अक्सर अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने और आदिम समुदायों की समानता को फिर से स्थापित करने की कोशिश में विद्रोह करते रहते थे। सामंती संबंधों के दृढ़तापूर्वक जम जाने के बाद भी भूदासों ने अपने स्वामियों के प्रति अपने दायित्व को बुरी तरह से पूरा करके या विभिन्न अन्य दायित्वों को पूरा करने से इन्कार करके और कई बार शोषक वर्ग के विरुद्ध खुली बगावत करके भी उनका विरोध करना जारी रखा।

चर्च की भूमिका

शासक वर्ग यह समझता था कि खुली हिंसा और जोर जबरदस्ती किसानों की आज्ञानुवर्तिता को सुनिश्चित करने के लिए काफी नहीं था। लौकिक तलवार के अलावा उसने आध्यात्मिक साधनों -- ईसाई चर्च (पश्चिमी यूरोप में कैथोलिक चर्च), जिसका लोगों के विश्वासों और अंतःकरण पर एकाधिकार था -- का सहारा भी लिया।

चर्च शिक्षा देता था कि संसार को दयालु परमेश्वर ने बनाया है और अगर संसार में कुछ लोग धनी हैं और कुछ निर्धन, कुछ राज करते हैं और कुछ आज्ञापालन, कुछ शासक हैं और अन्य प्रशासित, तो यह भी परमेश्वर

द्वारा ही विहित है और जो व्यक्ति ईश्वरीय विधानो के खिलाफ विरोध प्रकट करता है, वह केवल विद्रोही ही नही, अपितु पापी भी है। इसलिए हर मेहनतकश को बिना किसी भी तरह के ऐतराज के अपने कर्तव्यो का पालन करना चाहिए अपने मालिक के लिए खाना पीना और कपडा-लत्ता जुटाना चाहिए और उसके लिए सिर्फ भय के कारण नही बल्कि ईमान की खातिर काम करना चाहिए। मध्ययुग मे अधिकाश लोग किसान थे जो स्वभाव से ही अधविश्वासी थे और चर्च द्वारा सिखाये विचारो को स्वीकार कर लेते थे, जिसका उन पर जबरदस्त प्रभाव था और जो इस तरह शोषण की सामती व्यवस्था को कायम रखने और मजबूत करने के अपने प्रयासो मे शासक वर्ग के हाथो मे एक महत्वपूर्ण हथियार बन गया था।

सामत लोग कैथोलिक चर्च की उपयोगी भूमिका की बहुत सराहना करते थे और उसे खुले दिल और खुले हाथो दान देते थे। इसके परिणामस्वरूप प्रारभिक मध्ययुग मे भी चर्च बडी-बडी जमीनो का स्वामी बन गया था और उसके उच्चाधिकारियो की गणना शासक वर्ग के सबसे प्रभावशाली सदस्यो म की जाती थी। बडे मठो के मठाधीश और धर्माध्यक्ष (बिशप) ड्यूको और काउटो जैसे प्रमुख अभिजातो के समकक्ष माने जाते थे।

रोम के धर्माध्यक्षो को जो पोप कहलाने लगे थे अपने धार्मिक कार्यो के अलावा प्रशासनिक कृत्यो का भी निष्पादन करना पडता था और स्थानीय आबादी की बर्बरो से रक्षा करनी पडती थी। इसलिए उन्हे खासी सत्ता और प्रतिष्ठा प्राप्त हो गयी और जल्दी ही वे सारे ईसाई विश्व के आध्यात्मिक नेतृत्व का दावा करने लगे।

दूसरा अध्याय

पूर्वी, दक्षिण-पूर्वी तथा दक्षिणी एशिया मे सामती सबधो का उदय और विकास

चीन

तीसरी शताब्दी मे दासस्वामी व्यवस्था क विघटन क परिणामस्वरूप हान साम्राज्य का पतन हो गया और उसक केंद्रीय प्रदेशो का, जिनम हान लोग रहते थे राजनीतिक अपकर्ष हो गया। हान साम्राज्य के प्रान्त (ह्वाग हो घाटी) म अतत कई राज्य स्थापित हुआ और यागत्सी की घाटी म जिसके कुछ भाग को हान साम्राज्य म शामिल कर लिया गया था, वू तथा शू राज्यो का उदय हुआ। इस प्रकार मध्ययुगीन चीन मे दो महत्वपूर्ण क्र पैदा हो गय। दक्षिण मे जहा काफी इलाका अछूप्ट ही रहा था, विकास धीरे धीरे हुआ। उत्तर म, जहा बडी-बडी सिचाई प्रणालियो को कायम रखना और खानाबदोशो के हमलो क खिलाफ किलेबदिया करना आवश्यक था, केंद्रीकृत राज्य का उदय और विकास अधिक तजी के साथ हुआ।

उत्तर मे, त्सिन राज्य मे, तीसरी सदी मे ही शोषण के नये सामती रूपो की तरफ सक्रमण शुरू हो चुका था। कुछ सामुदायिक किसान तथा गुलाम पराश्रित किसान बन गय और शक्तिशाली दासस्वामियो के सशस्त्र अनुचरो को भी अपने मालिको से जमीन मिल गयी (भूतपूर्व दासो से अधिक अनुकूल शर्तो पर)। दूसरी ओर आवटन प्रणाली* क पारपरिक ढाचे के भीतर (जा २८० ई० से ही विद्यमान थी) किसानो का एक और हिस्सा राजकीय जमीनो क सामताश्रित असामी काश्तकारो मे बदल गया था (इस

---

*चीन मे तथा कई और सुदूर-पूर्वी देशो म राज्य, जो सर्वोच्च भूस्वामी था, अपनी सपत्ति किसानो को बाट देता था और इसके बदले मे उनसे कर देने, सैनिक सेवा राजकीय निर्माण कार्यो मे भाग लेने आदि-आदि की माग करता था।

तरह की काश्तकारी की एवज मे उन्हे कर देने पडते थे, राजकीय जमीनो को काश्त करना होता था और बेगार तथा सैनिक सेवा करनी पडती थी)। नयी सामती नौकरशाही के ढाचे मे काम करनेवाले प्रशासनाधिकारियो को अपने कार्यकाल के दौरान जमीन के अपेक्षाकृत बडे बडे टुकडे प्रत्याभूत थे। दूसरी सदी के उत्तरार्ध और तीसरी के आरभ मे युद्धो के समय परित्यक्त जागीरो मे एक भू सचय बन गया था जिससे बाद मे भूमिहीन किसानो को जमीने दी जाती थी। लेकिन ह्वाग हो नदी की घाटी मे इन नये सामती सबधो का सुदढीकरण हो सकने के पहले ही उस पर खानाबदोश कबीलो (हूणो तोबाओ, आदि) का आक्रमण हुआ और त्सिन राज्य नष्ट हो गया। सिर्फ यागत्सी के थाले मे ही हान राज्य अक्षत रहे जहा सामती सबधो का अपेक्षाकृत कम गति से विकास हो रहा था।

खानाबदोशो द्वारा उत्तर मे मचायी गयी विनाश लीला ने जिसके बाद उनका हानो के साथ सम्मिलन और अतत आत्मसात्करण हुआ जमीन पर राजकीय स्वामित्व के बने रहने के बावजूद आगे चलकर सामती सबधो के विकास का पथ प्रशस्त किया। विशाल नहर प्रणाली की समुचित देखभाल सुनिश्चित करने की आवश्यकता और खानाबदोशो से सामूहिक प्रतिरक्षा बडे केंद्रीकृत राज्य के निर्माण का तकाजा करती थी। इसके मुख्य आधार छोटे और मझोले भूस्वामी शस्त्रजीवी थे जिनकी जमीदारिया सेवा की शर्तो पर आश्रित थी और जिन्होने शक्तिशाली भूस्वामियो को हटाने तथा बौद्ध मठो को जमीनो से बेदखल करने मे महत्वपूण भूमिका अदा की थी। उत्तरी वेई के हान तोबा राज्य (पाचवी सदी से छठी सदी का पूर्वार्ध) मे एक नयी और अधिक सुचारु आवटन प्रणाली शुरू की गयी – राजकीय भूमि पर अनिवाय श्रम के स्थान पर एक कर लागू किया गया जो किसानो को अपनी जोतो के लिए देना होता था और जिसका कुछ भाग राज्य को चला जाता था तथा कुछ उस प्रदेश विशेष के प्रशासनाधिकारियो मे बट जाता था। राजकीय जमीनो के साथ साथ निजी सपत्ति का अस्तित्व भी बना रहा और इन निजी जमीदारियो को आश्रित किसान काश्त करते थे। निजी जमीदारियो पर शोषण का मुख्य रूप कमरतोड लगान था – किसानो को अपनी लगभग आधी फसल देनी होती थी जिससे बचने का कोई उपाय नही था।

शोषण के नये तथा अधिक उन्नत रूपो के प्रचलन ने उत्तर के सुदृढीकरण मे योगदान किया। उत्तरी राज्य ने ५८९ मे दक्षिणी राज्य को अपने अधीन कर लिया, जहा सामती राजकीय सपत्ति का उदय ज्यादा धीमी रफ्तार मे हो रहा था और जहा भूस्वामी अभिजात वर्ग अब भी अत्यधिक शक्तिशाली था।

पुनरेकीकृत चीन पर सुई राजवश के शासनकाल (५८९ ६१८) के दौरान आवटन प्रथा दक्षिण मे भी फैल गयी। इसी प्रकार शोषण के तरीके

भी समस्त चीन म एकरूप हो गये और राज्य की आनारागिता का मि दनवान राज्यधर्म – रनपूजा मत – को देश भर म निर्विवाद प्रभुत्व प्रा हो गया।

सुई राजवश के अधीन हान प्रदेशो के एकीकरण के स्थान पर विज युद्धो का जमाना आ गया बडे पैमाने की निर्माण परियोजनाए शुरू की ग और महान नहर – ह्वाग हो को यागत्सी स जोडनेवाले एक विराट जलमार्ग का निर्माण किया गया। सरकारी जमीनो पर श्रम सेवा (बगार) म इतन जबरदस्त वृद्धि कर दी गयी कि जनव्यापी विद्रोह फूट पडे। सुई राजवश के बाद आनेवाले ताग राजवश (६१८-६०७) के सम्राटो ने शोषण की सामना नौकरशाही प्रणाली का परिष्कार करना जारी रखा। बगार को कम क दिया गया करो की उगाही की प्रणाली का पुनर्गठन किया गया और व्यापारियो दस्तकारो तथा राजकीय दासो को जमीनो का आवटन किया गया। इन सभी कारको ने कृषक विद्रोहो की लहर को खत्म करने म सहायता दी और आर्थिक तथा सास्कृतिक उन्नति तथा व्यापार और शिल्पो के प्रसार म योग दिया। काफी हद तक ये सफलताए गैर-हान आबादी का सर्वतोमुख शोषण करके पायी गयी थी। इन नयी नीतियो को क्रियान्वित करने के लिए हान किसानो मे स भरती किये गये पैदल सैनिको और विजित कौमो के रिसाले द्वारा समर्थित अत्यत सतर्क निरीक्षको की विशाल सख्या के अधीन एक जटिल बहुशाखित प्रशासनतत्र की स्थापना की गयी।

ताग वश ने दक्षिणी मगोलिया तथा दक्षिणी मचूरिया और तरीम तथा ऊपरी यागत्सी घाटियो मे जाकर युद्ध किये। इन युद्धो ने चीन की आर्थिक व्यवस्था को कमजोर कर दिया जिससे आठवी सदी म वशागत भूस्वामित्व जोर पकडने लगा और सामत लगातार बढती सख्या मे करदाता किसानो को अपने भदास बनाने लगे। युद्धो न देश को निर्धन बना दिया, केंद्रीय प्रशासनतत्र को कमजोर कर दिया और खानाबदोश आक्रमणकारियो द्वारा कई पराजयो के बाद तो भूस्वामी नौकरशाह वर्ग की राजनीतिक स्थिति का अतिम रूप मे तलोच्छेदन हो गया। दक्षिण की अधीनस्थ जातियो (जैसे वियतनामियो) न अपनी स्वतत्रता को फिर से प्राप्त कर लिया और स्थानीय सरदारो ने, जो इसी बीच शक्तिशाली जमीदार बन गये थे अपने को आजाद घोषित कर दिया। इन हालातो मे निजी भूस्वामित्व का तेजी से प्रसार हुआ और उसके अनुपात मे राजकीय राजस्व भी कम हो गया। आवटन प्रणाली को फिर से स्थापित करने की असभाव्यता के परिणामस्वरूप सामती सरदारो के अपनी जागीरो पर स्वामित्व को और अपने भूदासो पर उनके अधिकार को (अपनी जागीरो म रहनेवाले किसानो से वे पहले ही कर उगाह रहे थ) और कितनी भी बडी जागीर रखने के उनके अधिकार को भी आशिक मान्यता देनी पडी।

अन्य मामती राज्यो की ही भाति चीन मे भी नयी आर्थिक व्यवस्था के विकास के फलस्वरूप छोटे तथा मझोले आकार की जागीरो की सख्या मे वृद्धि हुई जिनके स्वामी मौके पर ही कृषक श्रम का प्रत्यक्ष शोषण करते थे। तथापि सिचाई प्रणाली की उचित देखभाल, जो चीन मे विशेषकर महत्वपूर्ण थी और खानाबदोश आक्रमणकारियो के विरुद्ध समुचित प्रतिरक्षात्मक उपायो की आवश्यकता का मतलब यह था कि सुदूर-पूर्व के अन्य राज्यो के विपरीत यहा प्रारभिक सामती युग मे सामती नौकरशाही का विलोप नही हुआ।

नवी सदी मे ताग वश के शासन मे सामती नौकरशाही के साथ साथ उदीयमान भूस्वामी वर्ग भी किसानो का शोषण करता था, जिसके फलस्वरूप किसानो तथा पराभूत जातियो मे अनेक विद्रोह हुए। ८८१ मे हुआग चाओ के नेतृत्व मे विद्रोहियो ने राजधानी चागआन पर कब्जा कर लिया। यद्यपि इस विद्रोह को कुचल दिया गया, पर इसके बाद दुहरे शोषण की प्रणाली को भी खत्म कर दिया गया और सत्ता धीरे धीरे शक्तिशाली सामतो के हाथो मे सकेंद्रित हो गयी, जिन्हे मजबूत केंद्रीय तत्र पर निर्भर करने की कोई आवश्यकता न थी।

सातवी से नवी सदी तक का जमाना चीनी सस्कृति के जबरदस्त मुकुलन का काल था। इस जमाने मे बारूद ईजाद किया गया कागज तथा चीनी मिट्टी की चीजे बनाने की प्रविधिया परिष्कृत की गयी और लकडी के ठप्पो से छपाई की शुरूआत की गयी। विद्यालयो की सख्या बढी अकादमिया की स्थापना की गयी और कई नगर महत्वपूर्ण सास्कृतिक केंद्र बन गये। चीनी विद्वानो ने गणित, खगोल तथा भौतिकी के क्षेत्र मे अनेक महती खोज की और भूगोल तथा इतिहास का भी तीव्र विकास हुआ। ताग राजवश का शासनकाल श्रेष्ठ काव्यरचना काल के नाते भी विख्यात है – यह ली पो तू फू और पो च्यू-इ का जमाना था। ताग काल मे चुआन ची (अचरजो की कथाए) का लेखन हुआ, जिसे गल्परचना का पहला गभीर प्रयास होने के नाते साहित्य के इतिहास मे अत्यत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इनमे से कई लेखको की कृतियो मे वास्तविक विश्व के प्रति भौतिकवादी दृष्टिकोण अपनाया गया था। चित्रकला तथा मूर्तिकला के क्षेत्रो मे भी नयी शैलिया प्रकट हुई और अनेक प्रतिभाशाली कलाकारो ने ख्याति अर्जित की।

दसवी शताब्दी का प्रथमार्ध शक्तिशाली भूस्वामियो और चीनी तुर्की ताई तथा अन्य जातियो के युद्धनताओ के बीच चलनेवाले युद्धो से परिपूर्ण रहा। भूतपूर्व साम्राज्य के भग्नावशेषो पर कितने ही राज्य पैदा हो गये जिनमे सबसे शक्तिशाली खितान कबीले द्वारा स्थापित किया गया राज्य था। ह्वाग हो घाटी पर खितान आक्रमण ने नगरो तथा पुरोहित वर्ग द्वारा समर्थित शक्तिशाली भूस्वामियो मे कुछ हद तक एकता की भावना पैदा की। तथापि

केंद्रीकरण की ओर रुझान इस नये आन्दोलन की मुख्य प्रेरक शक्ति छोटे और मझोले भूस्वामी नौकरशाहों से आई। उत्तरी चाओ कुआंग यिन को सम्राट घोषित कर दिया और उत्तरी सुंग राजवंश (९६० १२७९) की स्थापना की।

अधिक विकसित अर्थव्यवस्था के आधार पर केंद्रीकरण की ओर नीति आंदोलन में एक नयी मंजिल का आरंभ हुआ। सुंग राजवंश का शासन क्षेत्र पहले की अपेक्षा छोटे प्रदेश पर फैला हुआ था लेकिन दूसरी ओर ह्वांग हो, यांगत्सी और सिक्यांग नदियों की घाटियों में उर्वर सघन इलाकों में घनी और सामाजिक दृष्टि से एकरूप (चीनी) आबादी रहती थी। लेकिन इस राज्य की उन्नति में किदान तंगुत, ताई तथा अन्य जातियों के आक्रमण ने बाधा डाली।

शक्तिशाली भूस्वामियों और छोटे तथा मझोले जमींदारों द्वारा समर्थित केंद्रीय सत्ता के बीच संघर्ष अधिक प्रखर हो गया। इस संघर्ष के दौरान सामाजिक संगठन के पुराने रूप खत्म हो गये और उनका स्थान नये रूपों ने ले लिया। इस काल का सबसे महत्वपूर्ण नया लक्षण निजी जागीरों का पैदा होना था, जिन्हें भूदास और असामी काश्तकार काश्त करते थे और जिन्हें कमरतोड़ लगान देना पड़ता था। इसी के साथ-साथ किसानों को राज्य को अब भी कर अदा करने होते थे। महत्वपूर्ण व्यापार मार्गों के संधिस्थलों पर नगर पैदा हो गये और एक जटिल वित्त तथा उधार प्रणाली भी विकसित हो गयी। जहां तक शहरी कारीगरों की बात है वे उद्योग की संबद्ध शाखा के व्यापारियों के साथ श्रेणियों (गिल्डों) में संयुक्त हो गये थे, जो सिर्फ विशेष सामानों के उत्पादन से ताल्लुक रखनेवाले सवालों ही नहीं बल्कि प्रशासन संबंधी प्रश्नों (मुखिया का चुनाव, जरूरतमंद सदस्यों की सहायता, सदस्यों के आपसी झगड़ों का समाधान, नगर अधिकारियों के साथ संपर्क, आदि) को भी तय किया करती थी। नगरों में सत्ता शाही अधिकारियों के हाथों में थी, कोई स्वतंत्र नागर प्रशासन न था और उसके पैदा होने में सबसे महत्वपूर्ण सामानों के उत्पादन तथा विक्रय पर राजकीय एकाधिकार बाधक था।

खाली जमीनों के अभाव और उसके साथ-साथ दसवीं और ग्यारहवीं सदियों में किसानों के शोषण को तेज करने के प्रयासों के परिणामस्वरूप करों में वृद्धि हुई, जिसने अपनी बारी में किसानों के विद्रोहों को, और विशेषकर भीषणतम शोषण का शिकार बनाये जानेवाले गैर हान किसानों के बलवों को जन्म दिया। राजकीय संपत्ति की पुनर्स्थापना करने का (किसी हद तक जमींदारों और व्यापारियों को नुकसान पहुंचाकर) प्रयास किया गया, लेकिन वह पूर्णतः असफल सिद्ध हुआ। परिस्थिति अत्यंत गंभीर थी और जब कुछ ही बाद एक जबरदस्त खानाबदोश आक्रमण हुआ, तो साम्राज्य छिन्न भिन्न होने लगा। ११२७ में उत्तर में चिन नामक हान जुर्चेन राज्य स्थापित किया

नारा (जापान) का याकूशीजी पगोडा

...जब कि दक्षिणी हान प्रांत सुग वंश के अधिकार मे ही रह गये। दा...
ही राज्य आर्थिक तथा राजनीतिक रूप मे कमजोर थे – उत्तर म युद्धा...
कारण अर्थव्यवस्था जर्जर हो रही थी तो दक्षिण म जुर्चेनो से पराजित हा...
क बाद शक्तिशाली सामत पहले स भी अधिक बेकाबू और आजाद हो गये,
जिसके कारण दक्षिणी सुग साम्राज्य की सैनिक शक्ति मे ह्रास के अलावा
आर्थिक शक्ति भी कमजोर हुई और व्यापार तथा नगरो के प्रसार मे अस्थाया
रुकावट आयी।

कोरिया

कोरिया मे सामती सबध प्रारभिक वर्ग-राज्यो – कोगूर्यो, पैक्च तथा
सिल्ला राज्यो – के ढाचे के भीतर विकसित हुए थे। इन राज्यो मे सत्ता
गोन समाज क प्रमुखो व वशज भूस्वामी अभिजातो के हाथो म थी और
समुदायो म रहनेवाले किसान मुख्य उत्पादक थे, जो सीधे या तो राज्य के
या भूस्वामी शस्त्रजीवियो के उदीयमान वर्ग के सदस्य राजकीय अधिकारिया
के अधीन थे। दासो की तीसरी चौथी तथा पाचवी शताब्दिया के कोरियाई
समाज म कोई खास महत्वपूर्ण भूमिका नही थी और उनकी सख्या धीरे धीर
कम होती गयी। प्रारभिक कोरियाई सामती समाज का मुख्य धर्म कनफ्यूश
मत था जिसका स्थान बाद मे बौद्ध धर्म ने ले लिया। कोरिया म तीसरी
चौथी सदिया म नगर पैदा हो रहे थ और व्यापार तथा सचार विकसित हो
रह थे।

कोरियाई राज्यो की जातीय सास्कृतिक तथा भौगोलिक एकता न
राजनीतिक एकता की स्वाभाविक आकाक्षा पैदा की और चीनी साम्राज्य क
आक्रमणो क खतरे ने इस प्रवृत्ति को और पुष्ट किया (कोरिया पर ५९८
६११ ६१३ ६१४ ६४५ और ६६० मे चीनी हमले हुए थे)। एकीकरण
क लिए हुए युद्धो क बाद सपूर्ण कोरिया दक्षिण के सिल्ला राज्य के नेतृत्व
म एकीकृत हो गया (सातवी सदी क अत से आठवी सदी का प्रारभ)।
सयुक्त सिल्ला राज्य म आरभिक सुदूर पूर्वी सामती समाज के सार
ही लक्षण विद्यमान थ – राज्य का ढाचा सारी जमीन के राजकीय स्वामित्व
पर आधारित था और इस जमीन क निजी जोतो या आवटनो के रूप म
किसानो क बीच वितरण न लगान की सूरत म राज्य और सामती अधिकारिया
द्वारा शोषण को जन्म दिया। सामती ... को अपनी सेवाओ क बदल
वर्ग गावो म लगान उगाहने ... अधिकार ... जाता था। समुदायो
का धीरे धीरे विलुप्त ... था। भूपतियो म
आबद्ध किसान बड़े-बड़े ... आवटन

तथा राज्याधीन मानी जमीनो का अस्तित्व केंद्रीकृत राज्यतन्त्र के निमाण मे सहायक हुआ, क्योकि इस तन्त्र के अधिकारियो को वेतन के बजाय जमीन और आम तौर पर इस जमीन के साथ साथ उसे काश्त करनेवाले किसान भी दिये जाते थे। देश के एकीकरण न आतरिक व्यापार तथा शिल्पो के विकास के लिए नया उद्दीपन प्रदान किया। कोरिया मे विदेश व्यापार विकास के बहुत नीचे स्तर पर ही था क्योकि उसे चीनी प्रतियोगिता का सामना करना पडता था।

सुधारो के अभाव म आवटन प्रणालियो की दुर्वह क्रियाविधि सामान्यत आर्थिक विकास मे बाधा डालन लगती थी। भूस्वामी शस्त्रधारी वर्ग के एक हिस्से द्वारा बडे-बडे इलाको पर दखल जमा लेने के परिणामस्वरूप नवी शताब्दी मे आवटन प्रणाली मे सकट की स्थिति पैदा होने लगी। इस समय तक बौद्ध मठो का भी बडी बडी जमीदारियो पर स्वामित्व स्थापित हो चुका था। नये सामतो द्वारा किसानो का गहन शोषण शुरू हो गया, करदाताओ की सख्या कम हो गयी और नतीजे के तौर पर भूस्वामी प्रशासको द्वारा सचालित राजकीय तन्त्र बहुत कमजोर हो गया। अकेले राज्य के लिए कृषक विद्रोहो (८८६ ८९६, आदि म) को कुचलना सभव नही था और ऐसे विद्रोहियो के खिलाफ मौके पर सघर्ष शक्तिशाली जमीदार और उनके अनुचर करते थे। इन हालतो मे केंद्रीय सत्ता जल्दी ही खत्म हो गयी और दो पृथक राज्य पैदा हो गये।

कृषक विद्रोहो के विरुद्ध दीर्घकालीन अभियान और चीन तथा वर्तमान मचूरिया के प्रदेश स होनेवाले आक्रमणो ने शक्तिशाली केंद्रीकृत राज्य की पुनर्स्थापना को अपरिहार्य बना दिया। जब ९१८ मे वाग कोन ने देश के पुनरकीकरण क लिए प्रयास करना शुरू किया तो कई सामत स्वत उसके पक्ष मे आ गये। नये सयुक्त राज्य कोर्यो मे आवटन प्रणाली का पुनर्गठन किया गया – सभी किसानो के लिए राज्य को लगान देना अनिवार्य था (राजकीय जमीनो को काश्त करनेवाले किसान सभी कर राज्य को सीधे अदा करते थे और नौकरशाही के सदस्यो की जमीदारियो को काश्त करनेवाले एक हिस्सा राज्य को तथा शेष अपने मालिको को देते थे)। उत्तर पश्चिम मे जहा बहुत सख्या मे किसान बसाये गये थे और जहा सीमा के साथ साथ किलेबदियो का सिलसिला कायम कर दिया गया था, खाली जमीनो के काश्त मे लाये जाने की बदौलत आवटन प्रणाली का सुदृढीकरण सभव हो गया।

राजकीय तन्त्र मे काम करनेवालो को वेतनस्वरूप लगानमुक्त जमीन दी जाती थी जबकि सभी सामतो को यहा तक कि जो व्यवहारत अपनी जमीन के स्वामी थ, उन्ह भी राज्य को अपनी जमीदारियो की आय से निर्धारित कर अदा करना होता था। कोरिया म चूकि बजर जमीन बहुत थी इसलिए आवटनो मे इसे कृष्य भूमि के साथ शामिल कर लिया जाता
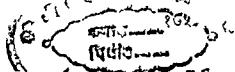
था। इस कारण जापान और वियतनाम के विपरीत, जहा जमीन की ◌ थी कोरिया मे भूदास विशेषकर मूल्यवान थे – उन्हे अधिकाधिक सख्या इन जमीनो के साथ आर्थिकेतर साधनो से आबद्ध कर दिया गया। जमीदारो के बीच लडाइया मुख्यत इन भूदासो को लेकर ही होती थी, जिन्हे बन्दी बना लिया जाता था या दूसरी जगह बसा दिया जाता था, क्योकि उनके बिना जमीदारो के लिए अपनी कर्षित भूमि को बढाना असभव था।

दसवी शताब्दी के अत तक सामती सबधो की प्रणाली को चीनी एकरूप तरीको के अनुरूप बनाया जा चुका था, कारगर राजकीय तत्र की स्थापना की जा चुकी थी और असैनिक प्रशासनाधिकारियो तथा सेनानायको के अधिकारो और कर्तव्यो के बीच सुनिर्धारित सीमारेखाए स्थापित की जा चुकी थी। पहले के अनुचरो के स्थान पर लामबद किसानो की नियमित सेना बनायी जा चुकी थी। इसकी बदौलत कोर्यो के सामतो के लिए ग्यारहवी सदी के आरभ मे खितान आक्रमण को विफल करना और कृषक विद्रोहो को कुचलना सभव हो गया। ग्यारहवी शताब्दी से लेकर बारहवी शताब्दी के आरभ तक का समय कोरिया मे केंद्रीकृत सामती राज्य के मुकुलित होने का काल था। इसमे चीनी सामतो के दबाव के कम होने से भी काफी योगदान मिला (वियतनाम की ही भाति) क्योकि चीनी साम्राज्य इस समय ह्रासग्रस्त था।

इस काल मे किसानो के दो सुस्पष्ट समूहो मे अतर करना सभव हो गया था – स्वतत्र किसान और अलग अलग जमीदारो या राज्य की सेवा के लिए अनुबद्ध किसान। पहले प्रकार के किसानो के शोषण के मुख्य रूप लगान और बेगार तथा सैनिक सेवा थे, दूसरे समूह के किसान आम तौर पर शक्तिशाली जमीदारो या स्वय सम्राट की सेवा करनेवाले अनुबद्ध काश्तकार थे। ग्यारहवी-बारहवी सदियो मे बडे पैमाने पर शहरो का प्रसार और शिल्पोद्योगो का विकास हुआ लेकिन ये प्रक्रियाए अपेक्षाकृत धीमी गति से हुईं, क्योकि इस बात के अलावा कि कोरिया मे निर्मित निर्यात वस्तुए बहुत कुछ चीनी चीजो जैसी ही थी और प्रतियोगिता बहुत तेज थी उनमे राजकीय नियत्रण, निर्यात निषेध और सगठित श्रेणियो का अभाव भी बाधक थे। एकमात्र बडा नगर राजधानी ही था। इसी बीच इस काल मे चीन के साथ सास्कृतिक सबधो और चीनी विज्ञान, कला तथा साहित्य ने कोरियाई सस्कृति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला।

जापान

जापान मे वर्ग समाज का उदय अधिकाश एशियाई राज्यो मे सामती व्यवस्था की ओर सक्रमण के साथ ही हुआ। नवजात जापानी वर्ग समाज

इडोनेशियाई तथा अन्य वर्ग समाजो की भाति त्रिलकुल आरभ मे ही सामती विकास के रास्ते पर चला – दासस्वामी समाज के अतनिहित तत्वो न यहा कभी जड नही पकडी। पाचवी छठी शताब्दी के यामातो राज्य" के वर्ग समाज मे समुदायो मे रहनेवाले स्वतत्र किसानो और पुश्तैनी अधीन किसानो तथा दासो का ही सख्यागत प्रावल्य था। इस काल मे कुल प्रमुखो की कतारो से धीरे धीरे एक वशागत अभिजातवर्ग उदित हुआ। छठी शताब्दी के अत (सुमेरागी वश का प्रथम शासनकाल तक राजसी शक्ति के मुख्य सिद्धात निश्चित रूप ग्रहण कर चुके थे।

इसी के साथ-साथ नगर विकसित हो रहे थे और शिल्पोद्योगो का प्रसार हो रहा था, प्रशासनाधिकारियो की क्रम परपरा पैदा हो रही थी और जापान के पारपरिक शितो धर्म के पुरोहितो की विशेष जाति अस्तित्व मे आ रही थी। वर्ग समाज के निर्माण के साथ साथ प्रखर सघर्ष चला। ५६२ मे सत्ता सोगा वश के हाथो मे चली गयी लेकिन किसानो के लिए जो सुमेरागियो के विरुद्ध विद्रोह करनेवालो के मुख्य अग थे कुछ भी नही बदला। सोगा शासन क समय शोषक शासक वर्ग न जिसे शितो धर्म की अपेक्षा वर्ग समाज के अधिक अनुकूल धर्म की आवश्यकता थी, जापान मे बौद्ध धम के प्रचार को प्रोत्साहन देना शुरू किया (छठी सदी से)। सोगा शासन के अधीन जापान मे प्रारभिक वर्ग समाज का भीतरी ढाचा नही बदला। लेकिन साथ ही आतरिक सामाजिक अतविरोधो के तेज होने और चीन तथा कोरिया क सिल्ला राज्य के साथ लडाइयो न प्रशासन तत्र के पुनर्गठन को आवश्यक बना दिया।

नये सामती समाज के मूल सिद्धातो का शोतोकू ताइशी क विधाना म निरूपण हुआ, जो चीनी विधि सहिता के स्थानीय अवस्थाओ क अनुसार अनुकूलन के प्रतीक थे। केद्रीकृत राज्य सत्ता के इस सुदृढीकरण क ही साथ साथ बौद्ध विहार (मठ) बडी बडी जमीदारिया हासिल करत जा रहे थ जिन्हे सामती आधार पर सगठित किया जा रहा था। सोगा वश के नेतृत्व मे वशागत अभिजातो ने इन नयी प्रवत्तियो का प्रतिरोध किया। सोगाओ को सिहासनच्युत कर दिया गया और सत्ता फिर सुमेरागी वश क हाथो म चली गयी (६४५) लेकिन नये राज्य के सचालन का आधार विशुद्धत सामती था (ताइक्वा क सुधार)।

सुदृढित केद्रीकृत राजकीय तत्र का पूरा पूरा लाभ उठात हुए सामतो न समुदायो म शामिल स्वतत्र किसानो और कुलाभिजात्य क अवशेषो पर हल्ला बोल दिया। इस आक्रमण क परिणाम ताइहो सहिता (७०१) म अभिव्यक्त हुए – सम्राट सारी जमीन का सर्वोच्च स्वामी था स्वतत्र किसानो को कृष्य भूमि क टुकडो पर अस्थायी अधिकार प्राप्त थ जो सम्राट उन्हे

इस शर्त पर प्रदान करता था कि वे लगान अदा करें और अपने दायित्व को पूरा करें। किसानों के लिए अपनी जमीन का परित्याग करना निषिद्ध कर दिया गया। इस प्रकार स्वतंत्र तथा अनुबद्ध किसान राज्य के कृषिदास बन गये और राजकीय दासों के अलावा व सबसे निचले सामाजिक वर्ग में गिने जाते थे। राजकीय अधिकारियों और खिताबदार अमीरों को बड़े बड़े भूखंड मिलते थे, जिनका कुछ भाग मौरूसी होता था क्योंकि सरकारी पद आम तौर पर पुश्तैनी ही हुआ करते थे। उन्हें अपनी सेवाओं के पारि-श्रमिक के रूप में राजकीय किसानों द्वारा अदा किये गये लगान का एक भाग अपने पास रखने दिया जाता था। जापान में आठवीं सदी में सामाजिक तथा आर्थिक संगठन के जो रूप उदित हुए, वे काफ़ी हद तक उसके अधिक उन्नत पड़ोसियों विशेषकर चीन, के नमूने पर थे (आवंटन प्रणाली आदि-आदि)।

सामंतों को भूखंडों का वितरण (किसानों के बिना) और राजकीय कृषिदास प्रथा इन दोनों का एक साथ प्रचलन अंतर्विरोधों से परिपूर्ण था, क्योंकि आवंटित जमीनों के स्वामी किसानों से अपनी जमीनें काश्त करवाते थे और उनकी सेवाओं को प्राप्त करने का एकमात्र तरीका (आठवीं सदी के बाद में दास श्रम का उपयोग बंद हो गया था) राजकीय किसानों को तबाह करना ही था। इससे करदाताओं की संख्या कम होती गयी। लेकिन आठवीं सदी में ये अंतर्विरोध उभरकर अभी सामने नहीं आये थे। तायका सुधारों ने जापानी इतिहास में एक नये काल – तथाकथित नारा काल (७१०-७८४) – का समारंभ किया, जिसे अपना नाम तत्कालीन राजधानी नारा से मिला है।

नारा काल आपेक्षिक आर्थिक तथा राजनीतिक स्थिरता का समय था। कुछ ही पहले वैध ठहराये गये उत्पादन संबंधों ने अभी उत्पादक शक्तियों के साथ टकराना शुरू नहीं किया था। कर्षित भूमि का रकबा बढ़ा, सिंचाई प्रणालियों का प्रसार हुआ और चावल की पैदावार में वृद्धि हुई। खनन और नागर विकास की भी खूब उन्नति हुई। कानूनों को संहिताबद्ध बनाया गया। ऐतिहासिक घटनाओं का एक इतिवृत्त तैयार किया गया, जिसमें वास्तविक घटनाओं को पौराणिक कथाओं के साथ-साथ पाया जाता है (उदाहरण के लिए सम्राटों के सूर्यदेवी अमातेरासू ओमिकामी की संतति होने की कथा)। महत्वपूर्ण साहित्यिक कृतियों की भी रचना हुई, मिसाल के लिए, आठवीं सदी के उत्तरार्ध में 'मन्योशू' नामक संग्रह।

नाराकालीन जापान पर फ़ूजीवारा वंश का शासन था, जिसे प्रायः वंशागत अभिजात वर्ग के अवशेषों ही नहीं, बल्कि सामंती नौकरशाही के प्रमुख सदस्यों से भी संघर्ष करना पड़ता था। आठवीं सदी के अंत तक

अभिजात वर्ग परास्त किया जा चुका था और सामंती नौकरशाही की सत्ता स्थापित हो चुकी थी। सामंती समाज के सामाजिक आधार में इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप उसके ढांचे और सामंती प्रभुओं के बीच चलनेवाले संघर्ष में भी परिवर्तन आया। अब यह प्रशासनिक पदों पर आसीन अभिजात दरबारियों के एक दल द्वारा प्रांतों में प्रशासन के प्रभारी शक्तिशाली जमींदारों के खिलाफ संघर्ष बन गया। ये दोनों दल वंशपरंपरा से प्राचीन कुलागत अभिजात वर्ग से भिन्न थे, अतः उन्होंने अपने पदों के साथ मिलनेवाली जागीरों को मौरूसी संपत्ति में बदलने के लक्ष्य से शाही सत्ता के खिलाफ अपना संघर्ष भी जारी रखा और उसे बेहद कमजोर कर दिया। वास्तविक सत्ता अब सुमेरागी वंश के हाथ में नहीं, बल्कि शक्तिशाली जमींदार पूंजीवारा घराने के हाथ में आ गयी। यह परिवर्तन तथाकथित हेइआन काल (नवीं सदी – ग्यारहवीं सदी की शुरूआत) के आरंभ का द्योतक था।

इस जमाने में भू-व्यवस्था का मुख्य स्वरूप बड़ी-बड़ी निजी भूसंपत्तियों का था, जो शोएन कहलाती थीं और जिन पर कोई कर नहीं लगाये जाते थे। शोएनें आरंभ में पहले की अस्पृष्ट जमीनों के काश्त किये जाने के परिणामस्वरूप पैदा हुई थीं, जिन्हें कृषि में लाने पर लगानमुक्त कर दिया जाता था। इसके कारण राजकीय राजस्व में जबरदस्त कमी आयी, क्योंकि अधिकाधिक किसानों को शोएनों को काश्त करने पर लगाया जा रहा था। इन नये जमींदारों – शोएनपतियों – के उदय ने भी केंद्रीकृत राज्य के राजनीतिक आधार को कमज़ोर किया। उस समय किसी बड़े विदेशी शत्रु का – और इसलिए बड़ी सेना रखने की आवश्यकता का – न होना और बड़े पैमाने की सिंचाई व्यवस्था का अभाव भी विकेंद्रीकरण की इस प्रक्रिया में सहायता देनेवाले अन्य कारक थे।

शक्तिशाली भूस्वामियों के विरुद्ध संघर्ष के दौरान सरकार ने करों के बोझ को बढ़ाया, जिसके कारण सरकारी काश्तकार भागकर शोएनों पर बसने लगे और नवीं, दसवीं तथा ग्यारहवीं सदियों में जन विद्रोह हुए। केंद्र से सरकारी काश्तकारों के श्रम को कारगर तरीके से संगठित करने की असंभाव्यता ने राज्य को अपनी काफी जमीन राजकीय सेवा अथवा शक्तिशाली सामंतों की सेवा करनेवाले सरदारों अथवा समुराइयों को वंशागत जागीरों के रूप में बांटने के लिए विवश कर दिया। भूस्वामी वर्गों का यह हिस्सा बहुत तेजी से बढ़ा और उसने धीरे-धीरे प्रांतों में स्थानीय प्रशासनाधिकारियों का स्थान ले लिया। समुराई श्रेणी का अभ्युदय ग्यारहवीं और बारहवीं सदियों में हुआ, विशेषकर देश के उत्तर और पूर्व में, और जल्दी ही समुराई केंद्रीय सत्ता पर प्रभाव के लिए शोएनपतियों से टक्कर लेने लगे।

देश के दक्षिणी तथा मध्यवर्ती भागों में शोएनपति सम्राटों पर अपने

प्रभाव को कायम नही रख सके और बडे भूस्वामियो तथा समुराइयो के बीच शक्ति-सतुलन के कारण सम्राटो के लिए मठो के समर्थन से स्वतत्र नीतियो पर चलना सभव हो गया (१०६९-११६७)। लेकिन केंद्रीय सत्ता का यह सुदढीकरण अपेक्षाकृत सीमित पैमाने पर ही था। इस काल मे जापान मे छोटी जागीरो का उदय हुआ (एशिया के अन्य देशो की अपेक्षा अधिक पहले), जिनका विकास मुख्यत समुदायो के विघटन के फलस्वरूप हुआ था। यह प्रक्रिया जापान मे विशेषकर तेजी के साथ घटी, क्योकि यहा उन्नत सिचाई प्रणाली आदि जैसी साझे की कोई महत्वपूर्ण सामुदायिक सुविधाए नही थी। इस विघटन मे केंद्रीय सत्ता की कमजोरी के कारण और भी तेज़ी आयी, जिसकी विदेशी आक्रमणकारियो से सदा आतकित सुविकसित सिचाई प्रणालियोवाल अन्य राज्यो की बनिस्बत जापानी द्वीपो म कम सख्त जरूरत थी। जापान मे भूमि के राजकीय स्वामित्व पर आधारित अर्थव्यवस्था, सामती प्रभुओ तथा प्रशासनाधिकारियो द्वारा सचालित कृषि उत्पादन और सामुदायिक कृषि का अपकर्ष कोरिया, चीन, वियतनाम और सुदूर-पूर्व के अन्य देशो की अपेक्षा पहले हुआ।

एक प्रकार के सामती सबधो के स्थान पर दूसरे प्रकार के सामती सबधो की स्थापना रक्तपात के बिना सभव नही थी, क्योकि प्रत्येक प्रकार भूस्वामियो के एक विशिष्ट समूह के हितो का प्रतीक था, जिनमे से कोई भी अपने पुरान अधिकारो और विशेषाधिकारो को तजने के लिए तैयार नही था। बारहवी शताब्दी के मध्य मे जापान मे भूस्वामियो के तीन समूह थे – उत्तर मे समुराई और उनके सामत (मीनामोतो कुल), दक्षिण म, जहा समुराई कही कमजोर थे, बडी-बडी जागीरो के स्वामी (ताइरा कुल) और राजधानी के भूस्वामी राज्याधिकारी, जो सम्राट के अमले मे आते थे (फूजीवारा कुल)। इस सघर्ष मे सामाजिक विकास की दप्टि से अधिक उन्नत उत्तर की विजय हुई जहा छोटी जागीरो का प्राधान्य था। ताइरावशी ११८५ मे पराजित हुए और ११९२ मे सम्राट के अनुचरो को भी हरा दिया गया – प्रसगत सम्राट के अमले की पराजय मे हेइआन घराने की विशाल जागीरो म किसानो के विद्रोहो ने भी काफी योग दिया था। मीनामोतो योरीतामो न अपने को जापान का नया शासक – शोगून – घोषित कर दिया और इस उपाधि को वशागत घोषित कर दिया गया।

समुराइयो की विजय के बाद जमीन के बडे पैमाने पर पुनर्वितरण के फलस्वरूप भूस्वामित्व के पुरान रूपो का स्थान नये रूपो ने ले लिया। देश भर म समुराई जागीर पैदा हो गयी। सम्राट, राजधानी के भूस्वामी राज्याधिकारियो और बौद्ध मठो की सख्या और आकार मे काफी कम हुई जागीरो का हिस्सा अब छोटा हो गया। किसान अब राज्य को कर और

समुराइयो तथा अन्य भूस्वामियों को लगान देने लगे। बारहवी सदी के जापान मे नगर, व्यापार और शिल्पोद्योग विकास के एक ऊचे स्तर पर पहुच गये। देश भर म श्रेणिया (गिल्ड) पैदा हो गयी। छोटी और मझोली समुराई जागीरो के प्राधान्य के फलस्वरूप अनेक आर्थिक केंद्रो का उदय हुआ, जिनमे से प्रत्येक मे कई बडे शहर थे। इस विशेषता ने जापान को एशिया के अन्य लाक्षणिक सामती राज्यों से अलग कर दिया, जिनमे राजधानी तो बहुत बडी हुआ करती थी, लेकिन उसके अलावा छोटे-छोटे प्रातीय कसबे ही हुआ करते थे। आतरिक और – कुछ कम हद तक – विदेशी व्यापार की वृद्धि के फलस्वरूप व्यापारियो और मालवाहको के बडे बड समूह पैदा हो गये। बारहवी सदी का जापान आर्थिक और सास्कृतिक दृष्टि से अत्यत विकसित सामती राज्य था। उसके सामाजिक तथा सास्कृतिक जीवन के कई पहलुओ पर चीन का सशक्त प्रभाव था।

भारत

पाचवी शताब्दी मे दासस्वामी गुप्त साम्राज्य और दक्षिण भारतीय राज्यो के पतन के साथ भारतीय समाज म धीरे धीरे सामती तत्वो का प्राधान्य होने लगा। पहले के कृषक समुदायो के किसानो के बीच से छोटे छोटे भूस्वामी उभरकर सामने आने लगे और बड दासस्वामी कुलो तथा मदिरो की ही भाति शोषण के सामती स्वरूप अपनाने लगे। समुदायों के कगाल किसान जमीन को जोतने-बोनेवाले गुलाम और विजित प्रदेशो के निवासी पराश्रित कृषि श्रम शक्ति का निर्माण करते थे।

उत्तरी तथा दक्षिणी भारत म सामती व्यवस्था की स्थापना की प्रक्रिया साथ साथ ही चली लेकिन उसने विभिन्न रूप ग्रहण किये। फिर भी समूचे तौर पर भारतीय सामतवाद के कई विशिष्ट लक्षण थे – विशेषकर जमीन पर राजकीय स्वामित्व का धीमी गति से सुदृढ होना और अपने शासको की चाकरी करनेवाले सामतो का सीमित भूस्वामित्व। प्राधान्य निजी भूसपत्तियो का ही था, सामती पदानुक्रम वशागत भूस्वामियो के पद सोपान के साथ जुडा हुआ था और सामती व्यवस्था के अतर्गत ग्राम समुदाय ने अपनी आतरिक स्वतत्रता (आर्थिक और प्रशासनिक दोनो) को काफी हद तक बनाये रखा था। सामती समाज की विभिन्न श्रेणियों के विकास मे वर्ण व्यवस्था महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती थी। पट्टेदारी और अनिवार्य लगान शोषण के मुख्य स्वरूप थे।

भारत मे प्रारभिक सामतवाद का विकास राजनीतिक विकेंद्रीकरण के साथ साथ हुआ था लेकिन नागर और सास्कृतिक विकास मे अवनति इस

काल मे इतनी सुस्पष्ट नही थी। यह बहुत सीमा तक प्रभावी नागर प्रशासन के कारण और इस तथ्य के कारण था कि नगरो की समृद्धि का स्रोत बाहरी व्यापार था जो इस काल मे खूब उन्नत था। ग्राम समुदायो म अपने कारीगरो ओर दस्तकारो की मोजूदगी के कारण भारत म शहर और देहात के बीच मालो का विनिमय अन्य एशियाई देशो (चीन, जापान, आदि) के मुकाबले कम महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता था।

प्रारंभिक सामती काल का पहला साम्राज्य उत्तर भारत का पुष्यभूति मौखरी साम्राज्य (थानेश्वर ओर कान्यकुब्ज का सयुक्त राज्य) था। इसके शासक अपनी सत्ता के लिए सामती राजा-रजवाडो के समर्थन पर निर्भर करते थे जमीन पर राजकीय स्वामित्व इतना व्यापक नही था और सीमित भूस्वामित्ववाले राज्याधिकारियो के सस्तर ने तत्कालीन समाज पर अपना प्रभुत्व अभी तक स्थापित नही किया था। सेना अशत सामतो के सशस्त्र अनुचरो से और अशत भाडे के सिपाहियो से मिलकर बनी थी। उस समय प्रवर्तित कानून शोषण के नये स्वरूपो और अधिकाधिक सख्या मे किसानो की दासता को बढावा देने की ओर लक्षित थे।

सातवी शताब्दी के मध्य मे उत्तर भारत मे पुष्यभूति मौखरी साम्राज्य के स्थान पर अनेक रजवाडे पैदा हो गये जिन पर आप्रवासी राजपूत जाति के अभिजात सैन्य नेता राज करते थे। इस जमाने म भूस्वामी शस्त्रजीवी जाति (क्षत्रिय) अधिकाधिक किसानो को अपनी सेवा के बधनो मे आबद्ध करती जा रही थी और हर अलग सामत अपने हथियारबद अमले की सहायता से अपनी सत्ता का सुदृढीकरण कर रहा था। केंद्रीय सत्ता कमजोर थी।

दक्षिणी भारत म भी ऐसी ही प्रक्रियाए चल रही थी, किंतु उनमे नये जातीय समूहो का स्वांगीकरण सन्निहित नही था। यहा भी बडे बडे राज्यो का उदय होना था (जैसे पल्लव और चालुक्य राज्य) जिनमे बडे तटवर्ती नगरो को महत्वपूर्ण भूमिका निबाहनी थी। ईसोपरात पहली सहस्राब्दी के मध्य तक दक्षिण मे भूतपूर्व ग्राम समुदायो के अधिकाश किसान या तो शक्तिशाली सामतो के बधनो मे जकडे जा चुके थे और उन्हे कमरतोड लगान देना पडता था, या वे लगभग उन सभी अधिकारो से वचित किये जा चुके थे जिनका पहले वे समुदायो म उपभोग करते थे ओर उनका समुदाय के मुखियो द्वारा शोषण किया जाता था जिन्होने धीरे धीरे सामती जमीदारो जैसी हैसियत प्राप्त कर ली थी।

ग्यारहवी और बारहवी शताब्दियो म चालुक्य वश द्वारा शासित प्रदेशो म और दक्षिणी भारत के रजवाडो म जिन पर चोल वश का शासन था एकीकरण की प्रवृत्ति प्रकट हुई। इन सदियो मे दक्षिण के एक बड भाग म जमीन पर राजकीय स्वामित्व व्यापक हो गया ओर सामत वग के अनेक

प्रतिनिधि गैन्यगैन्गी जमींदार रा गा। गजगान रा गुगाष्ट गुदृढीकरण हुआ।

गामन्ती और बागन्ती गन्दिा म गग्ग व विभिन्न गग्या म आर्थिक तथा मास्कृतिक प्रक्रिया म और विग्न नीति म भी अधिकाधिक तत्परता आयी जिगम व्यापार न भी काफी यागदान दिया था। नदग म व्यापारिया और न्यापाग र मगठन बहुत महत्व की भूमिका अदा रग्त थ नकित गुन मिलाकर व मामन्ता र नियत्रण म ही थ।

गामन्तकिय विचारा की गर्वत्र गग्गता और गामती गज्या व गुदृढीकरण न लोगा व प्रतिग्गध ना जन्म दिया। इगकी अभिव्यक्ति नई धार्मिक (भक्ति विचारा आदि) गग्दाया व उग्य म हुई जिन्होने धार्मिक, और विभिन्न मात्राआ म, आर्थिक गमानता व विचार का प्रचार और जातीय विशेषाधिकारा पर आक्रमण किया। इग गमय तक लागा र व्यवगाया और आर्थिक कारबार द्वारा निर्धारित पारम्परिक वर्ण व्यवस्था तथा जटिल और रूढ़िवादी गजातीय ढाचे की स्थापना पूरी हो चुकी थी। फलस्वरूप पारम्परिक ब्राह्मण धर्म का भी बदली मामाजिक प्रक्रियो के अनुकूल अपने को ढालना पड़ा और उगर स्थान पर हिंदू धम विकसित हुआ। हिंदू धर्म क वि शिष्ट लक्षण थ धार्मिक पराक्रम और धार्मिक तत्र का पूर्ण अभाव - उच्चतम वर्ण, ब्राह्मण जाति का प्रत्येक सदस्य जन्माधिकार म ही लोगा का आध्यात्मिक पथप्रदशक बन जाता था और हिंदू विश्वासो क अनुसार ब्राह्मणो की अवज्ञा का अर्थ दवताआ क क्रोध का भागी बनना था। शस्त्रजीवी क्षत्रिया क साथ मिलकर ब्राह्मण निम्नतर वर्णो के लोगो - वैश्यो तथा शूद्रा का शोषण करत थ, जिनम सार किसान दस्तकार और व्यापारी तथा व मजदूर आ जात थ, जिनका स्थान सामाजिक सोपान म सबस नीचे था।

भारत म प्रारंभिक सामती युग जबरदस्त सास्कृतिक विकास का काल था - इस जमाने मे तजावूर और एलारा क मदिरा जैसे भव्य वास्तु स्मारका का निर्माण किया गया। अत्यत महत्वपूर्ण उपन्यासात्मक भूमिका का निर्वहन करनवाली धार्मिक मूर्तिकला क क्षत्र म पहली स पाचवी सदियो की यथार्थवादी कला का स्थान विभिन्न देवी दवताआ क रीतिबद्ध प्रस्तुतीकरणो न ले लिया जो अपन आकार और असामान्य मुद्राआ के लिहाज से प्रभावोत्पादक हैं। इस काल का साहित्य विभिन्न राजाओ के प्रशस्ति काव्यो से परिपूर्ण है और उसम ऐतिहासिक लेखन का लगभग सर्वथा अभाव है। दार्शनिक साहित्य का काफी विकास हुआ, लेकिन समूचे तौर पर साहित्य की ही भाति इसमे भी पहले की शास्त्रीय कृतिया क अनुकरण की प्रवृत्ति अधिक लक्षित होती है।

दक्षिण पूर्वी एशिया

भारत और चीन के निवासियो के विपरीत, जिन्होने अपेक्षाकृत विकसित दासस्वामी समाज स सामतवाद मे सक्रमण किया था, अरबो की ही भाति दक्षिण पूर्वी एशिया के लोगों ने भी उन्नत दासस्वामी सभ्यताए नही विकसित की। ससार के इस भाग के देशो मे तीसरी शताब्दी ई० पू० के बाद उभरकर सामने आनवाला सामाजिक ढाचा कई बातो मे अस्पष्ट है, किंतु इसम कोई सदेह नही कि यहा एक प्रकार की दासप्रथा, राजतत्र और गोत्रीय अभिजाततत्र का अस्तित्व अवश्य था, हालाकि सुसगठित ग्राम समुदाय पहले जैस ही प्रबल थे। पूर्व तथा उत्तर मध्ययुग मे भी दक्षिण पूर्वी एशिया के लोग अपन विशिष्ट आर्थिक राजनीतिक तथा सास्कृतिक लक्षणो से युक्त राज्यो के एकीकृत समूह म आते थे जिनम से प्रत्येक राज्य को स्थानीय अवस्थाओ के अनुसार पृथक ढग स विकास करना था। दूसरी-तीसरी सदी ई० मे दक्षिण पूर्वी एशिया के राज्य बडी नदियों के डेल्टा प्रदेशो मे और भारत को सुदूर-पूर्वी देशो तथा मसालो के टापुओ मे जोडनेवाले व्यापार मार्गों के सबसे महत्वपूर्ण स्थलो के आसपास केद्रित थे। इनम स प्रत्यक राज्य व्यापार मार्ग पर पडनेवाले या बडी नदी के डेल्टा मे स्थित किसी बडे नगर के चहु ओर फैला होता था, जहा कृषि अच्छी तरह विकसित थी। मोन बर्मी ख्मेर, वियतनामी और इडोनेशियाई जनो के पूर्वगामियो के उदीयमान वर्ग समाजो ने बडी तेज़ी के साथ उस समय भारत और विशेषकर दक्षिण भारत, जिसके साथ ये राज्य व्यापार करत थे, म प्रचलित वर्ग सगठन के स्वरूपो और धर्म (इस काल म बौद्ध धर्म को सबसे अधिक महत्व प्राप्त था) को अपनाया। चीनी वर्ग सगठन के कुछ स्वरूप भी अपनाये गये किंतु कही छोटे पैमाने पर।

कृषि प्रविधियो के विकास और भारत के साथ व्यापार के प्रसार के साथ साथ ससार के इस भाग के कई छोटे छोटे राज्य समामेलित होकर प्रारभिक सामती साम्राज्यो और राज्यो का निमाण करने लगे। इन राज्यो की आर्थिक व्यवस्था काफी हद तक इस तथ्य से निर्धारित होती थी कि वे प्रमुख व्यापार मार्गों पर स्थित थे। इन राज्यो मे सबसे बडे दक्षिणी ख्मेरो का फूनान साम्राज्य (दूसरी से छठी शताब्दी), पश्चिमी इडोनेशिया का श्रीविजय साम्राज्य (सातवी स चौदहवी शताब्दी) और मध्य वियतनाम का चपा राज्य (दूसरी से पद्रहवी शताब्दी) थे। जैसे जैसे कृषि उन्नति करती गयी और समुद्री व्यापार धीरे धीरे अरबो के प्रभुत्व म आता गया वैसे वैसे ही दक्षिण पूर्वी एशिया के राज्यो म शक्तिशाली जमीदार अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने लगे। प्रारभिक मध्ययुग म हिन्दचीन म राजकीय भूस्वामित्व का प्राधान्य था और उसके तत्व इडोनेशिया म भी देखे जा सकते थे। इसके

चडी मदूत मदिर की बाहरी दीवार का एक भाग (मध्य जावा)

परिणामस्वरूप उत्पन्न सैन्य तथा प्रशासनिक अभिजात वर्ग ने सत्ता के लिए पुराने वशागत अभिजात वर्ग के साथ सघर्ष करना शुरू कर दिया (जैसे वियतनाम मे चीनी अभिजात वर्ग के साथ)। नवी शताब्दी म कपूचिया (कबोडिया) मे दसवी शताब्दी मे वियतनाम म ग्यारहवी सदी म इडोनेशिया तथा बर्मा मे और तेरहवी शताब्दी मे स्याम म उन्नत सामती राज्य स्थापित

हुए, जिनमे अर्थतन्त्र जमीन के लगान और सामुदायिक किसानो द्वारा अनिवार्य श्रम सेवा पर आधारित था। व्यापारी साम्राज्य धीरे धीरे कमजोर होकर छिन्न भिन्न हो गये और आज विद्यमान राज्यो और जातियो ने रूप लेना शुरू कर दिया। इनमे से प्रत्येक राज्य मे छोटे और मझोले जमीदारो (जो राजकीय भूस्वामित्व का समर्थन करते थे) और शक्तिशाली सामतो मे, जो अपने देशो का अपने नियन्त्रण मे स्थित बडे-बडे प्रातो मे विभाजन होने के पक्ष मे थे सत्ता के लिए सघर्ष चला। साथ ही ये दोनो ही समूह सामुदायिक किसानो के हितो का विरोध करते थे जो धीरे धीरे जमीन के साथ बधते जा रहे थे। दक्षिण पूर्वी एशिया के उत्तरी भाग मे राजकीय भूस्वामित्व की जडे दक्षिणी भाग की अपेक्षा हमेशा ज्यादा मजबूत रही थी, लेकिन इसके बावजूद ग्यारहवी, बारहवी और तेरहवी सदियो मे सारे क्षेत्र मे अधिकाधिक किसान जमीन के साथ बधते गये और एक जटिल प्रशासनतन्त्र रूप लेता गया और इसी के साथ साथ धर्मो का रूप बदलता गया और उनका नये युग की अपेक्षाओ के अनुसार अनुकूलन होता गया (बौद्ध धर्म और इस्लाम के नये रूपो का प्रचलन हुआ, जिन्होने हिंदू धर्म तथा अन्य विभिन्न धर्मो का स्थान ले लिया)।

इन शताब्दियो का राजनीतिक इतिहास राज्यसत्ता के मुख्य केंद्रो के चौगिर्द विभिन्न रियासतो के एकीकरण के लिए चले युद्धो और अपनी पुरानी स्वतन्त्रताओ को फिर से हासिल करने के लिए सामुदायिक किसानो द्वारा छेडे गये विद्रोहो से परिपूर्ण है।

सातवी से बारहवी सदी का काल सास्कृतिक उन्नति का जमाना था, जिसके दौरान इडोनेशिया मे बोरोबुदुर स्तूप कपूचिया मे अकोर वाट के मन्दिर और बर्मा मे पगान के मदिरो जैसी वास्तुकला की उत्कृष्ट इमारतो का निर्माण किया गया।

तीसरा अध्याय

कीयेव रूस

प्राचीन पूर्वी स्लाव कबीले

पूर्वी स्लाव अपने वर्तमान इलाकों के प्राचीन निवासी है। जैसा कि उनके नवपाषाणयुगीन और कास्ययुगीन पूर्वजो के अवशेषो मे पता चलता है, वे अनादि काल मे द्नीपर दनीस्तर तथा विश्चुला नदियो की घाटियो मे और कार्पेथियाई पर्वतो की तराइयो मे रहते आये है। पश्चिम मे उनके इलाके डेयूब ओडर और एल्ब के ऊपरी भागो तक फैले हुए थे। शको के समय मे भी *वर्तमान सोवियत सघ के दक्षिणी भागो के प्रदेश पर स्लाव जन रहा* करते थे। स्लाव जनो के बारे मे पहले लिखित ऐतिहासिक हवाले ईसवी सवत के आरभ के कुछ बाद ही मिलना शुरू हो जाते है और बाद मे वे अधिकाधिक प्रायिकता से मिलते जाते है। कई प्रारभिक स्लाव जनो और उनकी बस्तियो की स्थलियो के नाम हमे ज्ञात है। पोल्यान्ये लोग द्नीपर के पूर्वी तट पर रहते थे और उनका मुख्य नगर कीयेव था। द्नीपर के पश्चिमी तट पर ठेठ उत्तरी दोनेत्स तक देस्ना की घाटी मे सेवर्यान्ये रहते थे। प्रिपेत और रोस के बीच का वन्य प्रदेश द्रेवल्यान्ये लोगो का निवास था जिनका कबायली केंद्र इस्कोरोस्तेन था। और उत्तर मे प्रिपत के किनारे द्रेगोविची रहते थे और दनीपर तथा सोज के बीच रदीमिची रहा करते थे। इल्मेन झील के तटो पर इल्मेनी स्लावो या स्लोवेनियो का निवास था। इनमे भी *पूर्व मे रहनेवाले जन व्यातिची कहलाते थे जो ओका और मस्क्वा (मास्को)* नदियो की घाटियो मे रहते थे। पश्चिम मे पार कार्पेथिया मे श्वेत क्रोएत (खोवात) और दक्षिणी बूग की घाटी मे वोलीनियाई रहते थे। उपरोक्त स्लाव जनो के अलावा अन्य स्लाव कबीले भी थे। पूर्वी स्लाव रूसियो उक्रइनियो और बेलोरूसियो के आदिपूर्वज थे।

इन सभी कबीलो का मुख्य उद्यम कृषि था। यहा खेती करना कोई आसान नही था क्योकि ज़मीन जगलो से ढकी थी जिन्हे साफ करना ज़रूरी

होता था। पेडो और झाडियो को काटने के बाद लट्ठो को मुखान म पूरी गरमिया बीत जाती थी और उसके बाद लकडी जला दी जाती थी। नये खेतो को भारी डालो से हेंगे की तरह खरोंचा जाता, जिससे राख ऊपरी परत म मिल जाती और इसके बाद उनमे बीज दिया जाता था।

जब कई फसलो के बाद जमीन की उर्वरता जाती रहती, तो जमीन के नये टुकडे पर खेती की जाने लगती और पुराने को बरसो खाली पडा रहने दिया जाता। स्लाव राइ गेहू, जौ और बाजरा उगाते थे और गाय, घोडे और भेडे पालते थे। लोहे के औजार काफी प्रारंभिक मंजिल मे ही आ गये थे और वे लोहे के कुल्हाडो और हलो के फालो को काम मे लाते थे। यह बहुत महत्व की बात है कि स्लावो ने प्रारंभिक मंजिल मे ही जमीन को काश्त करना शुरू कर दिया था – यह उत्पादक शक्तियो के विकास मे एक बडा कदम था। जब तक लोगो ने लोहा तैयार करना नही सीखा था तब तक विकास की गति बहुत धीमी रही थी, पर इसके बाद तो उत्पादन मे एक तरह से क्राति ही आ गयी। लकडी के हलो पर लोहे के फाल लगने लगे और बाद मे अधिक उन्नत हल बनने लगे, जबकि लोहे के कुल्हाडे खेती के लिए जमीन साफ करने मे पेड काटने के काम आते थे।

मछली पकडना और शिकार स्लाव कबीलो के अन्य उद्यम थे। दनीपर के किनारो के जगलो मे शिकार का प्राचुर्य था और नदिया मछलियो से भरी हुई थी। प्राचीन स्लाव जगली मधुमक्खियो का शहद भी इकट्ठा करते थे। इसके लिए वे पेडो म मधुमक्खियो के छत्तो के लिए कोटर बनाते थे।

प्राचीन स्लाव आरम्भ मे गोत्रीय आधार पर सगठित कबायली समुदायो मे रहा करते थे। बाद मे उनकी आर्थिक व्यवस्था अधिक जटिल हो गयी और विभिन्न समुदायो मे अलग अलग परिवार प्रमुखता की स्थिति प्राप्त करने लगे। नदियो के किनारो पर परकोटेदार बस्तिया पैदा हो गयी। विभिन्न शिल्प तेजी से विकसित हुए और जल्दी ही बहुत से कुशल लोहार कुम्हार राजमिस्तरी सगतराश और काष्ठउत्कीर्णक पैदा हो गये। धीरे-धीरे नगरो का भी उदय हुआ – कीयेव और नोवगोरोद पहले महत्वपूर्ण स्लाव नगर थे। समाज का गोत्र सगठन जल्दी ही आर्थिक विकास मे बाधा डालने लगा और इसलिए वह धीरे धीरे विलुप्त हो गया। उत्तर और दूरस्थ क्षेत्रो मे वह सबसे अधिक समय तक जडे जमाये रहा पर दक्षिण मे पोल्यान्ये जनो मे वह जल्दी ही विलुप्त हो गया।

स्लाव समुदायो मे धनी सरदार अथवा राजा (कन्याज) प्रमुखता प्राप्त करने लगे। प्रत्येक राजा अपने आसपास सशस्त्र अनुचरो का लश्कर (द्रुजीना) इकट्ठा कर लेता था। राजा अपने शासन मे रहनेवाले किसानो से खिराज वसूल करते थे और दूसरे राजाओ के इलाको को लूटकर भी

अपनी मपदा बढाया करते थे। स्लाव राजाओ के बीच आपस मे छठी सदी मे ही दीर्घकालिक सहबध स्थापित होने लगे थे। ये राज्य के सर्वप्रथम स्वरूप थे।

स्लाव जन सदा खतरो के साये मे रहा करते थे। उन पर अक्सर पूर्व के खानाबदोशो – जैसे हूणो और अवारो – के हमले होते रहते थे। ये आक्रमणकारी उन पर महामारी की तरह आ टूटा करते थे और खून की नदिया बहा दिया करते थे। वे अनाज और ढोरो को लूट ले जाते थे, बस्तियो को जला देते थे और आदमियो, औरतो और बच्चो को गुलाम बनाकर ले जाते थे।

स्लावो को आकस्मिक आक्रमणो के विरुद्ध सदा सतर्क रहना पडता था। कभी कभी तो उन्हे खेती का काम भी हथियारो को साथ लेकर करना पडता था और इस कारण वे शीघ्र ही युद्ध की कला मे अत्यत पारगत हो गये।

प्राचीन स्लाव प्रकृति की पूजा किया करते थे – सूर्य वायु, झझा, वन तथा सभी अन्य प्राकृतिक परिघटनाओ को सजीव माना जाता था। सूर्यदेव को दाज्दबोग, पवनदेव को स्त्रीबोग और झझादेव को पेरुन कहा जाता था। सूर्य के सम्मान म उत्सव होते थे। वसत मे शीतऋतु के अत और वसत के आगमन के उपलक्ष्य मे खुशिया मनायी जाती थी और सूर्य के प्रतीक गोल मालपूए तैयार किये जाते थे। जाडे के प्रतीक पुआल के बने पुतलो को बडे विधि विधानानुसार जलाया जाता था या पास की नदी मे बहा दिया जाता था और इसके साथ खूब नाचना और गाना बजाना होता था।

स्लाव बडे शक्तिशाली, उत्साही और जीवट के लोग थे और अपने अतिथि सत्कार के लिए विख्यात थे।

पूर्वी स्लावो मे सामती सबधो का उदय

धीरे धीरे स्लाव जन के आर्थिक तथा सामाजिक जीवन मे अनेक परिवर्तन आ गये। सबसे पहले परिवर्तन आर्थिक स्वरूप के थे। दक्षिणी काली मिट्टीवाले प्रदेशो मे जुताई मे बैलो का अधिकाधिक प्रयोग किया जाने लगा। अधिकाधिक जमीन को काश्त मे लाया जाने लगा। घोडे भी भारवाही पशुओ के रूप मे इस्तेमाल मे लाये जाने लगे। उत्तर मे नयी जमीने उपयोग मे आने लगी और कृषि प्रविधियो मे भी उन्नति हुई – वासतिक और शारदीय जुताई का चलन शुरू हुआ। स्लाव लोग अब पहले से अधिक राइ गेहू जौ, जई और बाजरा उगाने लगे। मटर शलजम और मसूर को भी बडे पैमाने पर पैदा किया जाने लगा। किसान ज्यादा जानवर और घरेलू पक्षी रखने लगे।

निस्सदेह इसका यह मतलब नही कि प्राचुर्य के युग का आगमन हो गया था। मनुष्य के पास अब भी प्रकृति से जुझने के लिए बहुत कम साधन

थे उनके औजार अब भी आदिम थे और उनका काम दूभर और उबाऊ था। फिर भी प्रविधियां अब अपेक्षाकृत उन्नत थीं और उपज आदिम समुदायों के समय की अपेक्षा कहीं अधिक थी। सामाजिक जीवन और उत्पादन के स्वरूप लगातार उन्नत हो रहे थे।

आर्थिक व्यवस्था के विकास के साथ साथ समुदायों के अधिक धनवान सदस्यों और पुराने कबायली अभिजातों की स्थिति मजबूत होती गयी। वे अपनी जमीनों को यथासंभव अच्छी तरह से काश्त करने और भरसक अधिकाधिक जमीन को – जो उस समय आदमी की जीविका का मुख्य स्रोत थी – हथियाने की कोशिश करते थे। इस तरह समाज के उदीयमान समृद्ध संस्तरों ने अपनी सत्ता को सुदृढ किया और अपनी भूसंपत्ति को बढ़ाया। उन्होंने किसानों को जमीन के हथियाये हुए इलाकों के साथ बांध दिया। इस प्रकार स्वतंत्र किसान (स्मेर्द) जो प्रारंभिक रूसी रजवाड़ों की आबादी के बहुलांश का निर्माण करते थे धीरे धीरे अपनी आजादी को गंवा बैठे, जब कि भूस्वामी सामंतों अथवा बोयारों की जागीरों की संख्या बढ़ती ही चली गयी।

कुछ दास श्रम का भी उपयोग होता था, लेकिन इस प्रारंभिक स्लाव समाज में मुख्य श्रम शक्ति किसान ही थे। दास अथवा खोलोप अकुशल, सहायक श्रम शक्ति के रूप में ही उपयोग में लाये जाते थे। सबसे महत्वपूर्ण कृषि कार्य स्मेर्द ही किया करते थे। कृषक समुदायों की जमीनों को अपने कब्जे में ले लेने के बाद बोयारों ने किसानों को जमीन के टुकड़े बांट दिये, ताकि बोयारों के लिए काम करने के साथ साथ वे अपना और अपने परिवारवालों का पेट भी भर सकें।

जल्दी ही दो सुस्पष्ट वर्गों को सामने आ जाना था – अपने मालिक की जमीन से आबद्ध किसान जिसे वे उसके लिए काश्त करते थे और सामंत स्वामी जो जमीन के मालिक थे। यह विकास रूसी समाज में मध्ययुग के समारंभ का द्योतक है।

पहला रूसी राज्य

रूसी रजवाड़ों के बीच छठी शताब्दी से ही कई सहबंध संपन्न हो गये थे। यह प्रक्रिया द्नीपर नदी के आसपास के इलाकों में शुरू हुई थी। नवीं सदी के अंत में राजा ओलेग के राज्यकाल (८७९ ९१२) में कीयेव और नोवगोरोद के रजवाड़े संयुक्त हो गये। कीयेव नये रूसी राज्य का केंद्र बन गया। यह राज्य कई बड़े स्लाव रजवाड़ों के मिलने से बना था जिनमें

पोल्यान्ये, मेवेयान्ये, द्रेवल्याये नोगो के इलाके और स्लाव कबीलो क अन्य महवध शामिल थे।

इस प्रारंभिक रूमी राज्य (रूस) के राजा अपने प्रजाजनो से खिराज स्वय वसूल किया करत थे। वे सरदियो के आरभ मे अपन सशस्त्र अनुचरो के एक वडे दल को साथ लेकर यह खिराज उगाहने निकल पडते थे। राजा जब किसी गाव मे प्रवेश करता तो गाववाले खिराज लेकर उसके सामने हाजिर हो जाते थे। खिराज विभिन्न रूपो मे होता था। ऊदबिलाव, गिलहरी और चितराला (मार्टेन) के समूर अत्यत मूल्यवान समझे जात थे। गाववाले घडो और लकडी की बाल्टियो मे शहद मोम और कृषिजन्य सामान लेकर आते थ।

मेहनतकश जनसाधारण अत मे इस लूट से आजिज आ गय। ज्यादती भर तकाजो से तग आकर उन्होंने ९४५ मे राजा ईगोर को जान से मार डाला।

ईगोर के बाद गद्दी पर बैठने पर उसकी विधवा ओल्गा ने जिसने ९४५ से ९६९ तक शासन किया था बागियो मे निर्मम बदला लिया। कहा जाता है कि उसन उनके गाव को जला दिया और फिर कई गाववालो को भी जिदा जलवा दिया। लेकिन जनश्रुति से यह भी पता चलता है कि उसे खिराज की ज्यादा यथातथ्य मात्राए निधारित करनी पडी और भविष्य मे इन नये नियमो का पालन भी करना पडा।

रूस राज्य धीरे-धीरे अपने सीमातो का प्रसार करता गया। उसकी सैनिक शक्ति और युद्ध कौशल एक दुर्जेय चुनौती के प्रतीक बन गये। स्व्यातोस्लाव (९४२-९७२) न रूस राज्य मे कई नय इलाको को जोडा और व्यातिची जन, वोल्गाई बुल्गारो और खजर राज्य का अधीन किया। उसने डेन्यूब की घाटी म बुल्गार प्रदेश भी जीत।

ईसाई धर्म का अगीकरण

आकार और शक्ति मे बढने के साथ साथ रूस राज्य बैजतिया और यूरोप के देशो क सपर्क मे आन लगा, जहा ईसाई धर्म पहले ही सर्वत स्वीकृत धर्म बन चुका था। लेकिन रूस अब भी बहुदेवपूजक देश ही था। प्रकृति देवताओ की पूजा स्लाव लोगो की प्रकृति की शक्तियो की धारणा को प्रतिबिबित करती थी, लेकिन इसका राजा लोग अपन प्रजाजन पर अपनी शक्ति और प्रभाव को बढाने के लिए उपयोग नही कर सकत थे।

लेकिन ईसाई धर्म के साथ दूसरी ही बात थी। ईसाई धर्म अरसे से सम्राट का पृथ्वी पर ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप मे गुणगान करता आया था। ईसाई धर्म अपने ईश्वर को सारी दुनिया का एकमात्र सर्वशक्तिशाली और

सर्वव्यापी शासक बतलाता था और लौकिक क्षेत्र मे एकल अविभक्त शासन के सिद्धात के समर्थन मे इस पहलू पर विशेष जोर दिया जाता था। नये, अधिक जटिल सामाजिक सबधो के उदय के साथ राजाओ को एक ऐसे धर्म की जरूरत पडी कि जो उनकी निर्विवाद्य सत्ता को बढावा देता।

ईसाई धर्म की शिक्षा थी कि ईश्वर द्वारा विहित सत्ता के अतिरिक्त और कोई सत्ता नही है और इसलिए सभी भले ईसाइयो को बिना किसी सदेह और सशय के अपने सासारिक शासको की आज्ञा का पालन करना चाहिए क्योकि आखिर वे ईश्वर के प्रतिनिधि है।

मृत्योपरात जीवन के सिद्धात से भी ईसाई धर्म की शिक्षा जनसाधारण की आज्ञाकारिता को बढावा देती थी। अपनी नियति को विनयपूर्वक स्वीकार कर लेनेवालो को स्वर्ग मे ईश्वर और फरिश्तो के साथ रहने की प्रत्याभूति दी जाती थी लेकिन पापियो के लिए नर्क मे कष्टो के सिवा और कुछ सभव नही था। अबोध जनसाधारण इस शिक्षा का पालन करते थे और वे और भी अधिक आज्ञाकारी तथा विनयशील बन गये। इस जमाने मे निर्मित भव्य गिरजाघर श्रेष्ठ गायन के साथ आडबरपूर्ण उपासना विधिया, अनुष्ठान तथा कर्मकाड का प्राचुर्य और मोमबत्तियो से अलोकित देवचित्र तथा प्रतिमाए– ये सब सामती राज्य की बढती शक्ति को प्रतिबिबित करते थे और सामान्य लोगो को आकपित करते थे।

स्व्यातोस्लाव के बेटे, कीयेव के राजा व्लादीमिर (जिसने १०१५ तक शासन किया) ने ईसाई धर्म अपनाकर ९८८ मे उसे रूस का राज्यधर्म घोषित कर दिया। प्राचीन देवताओ की पूजा पर पाबदी लगा दी गयी और उनकी मूर्तियो को नष्ट कर दिया गया। कीयेव के निवासियो को दनीपर के तट पर उपस्थित होने की आज्ञा दी गयी, जहा राजा व्लादीमिर के आदेश से उन्हे बपतिस्मा दिया गया।

कीयेव राज्य के अभिजातो ने इस नये धर्म को सहर्ष स्वीकार कर लिया क्योकि उससे मेहनतकश जनता पर उनकी सत्ता और मजबूत होती थी। लेकिन कई इलाको मे आम लोगो ने नये धर्म का विरोध किया और अक्सर ईसाई धर्म को जबरदस्ती स्वीकार करवाया गया। नोवगोरोद और अन्य नगरो मे नये धर्म के प्रचालन के खिलाफ विद्रोह भी हुए। चर्च को राजाओ से भेट मे बहुत जमीन मिलती थी। इसके अलावा राज्य अपनी आय का दसवा भाग भी चर्च को देता था।

ईसाई धर्म ने रूस राज्य को नवबल प्रदान किया। इसने राजा की शक्ति और सत्ता को बढाया और अन्य राज्यो के साथ जो पहले ही ईसाई धर्म अगीकार कर चुके थे सबधो को कही अधिक सरल और आसान बना दिया। अब विदेशी लोग स्लावो की तरफ तिरस्कार के साथ नही देख सकते

ये, क्योकि उन्होने भी उनके धर्म को ग्रहण कर लिया था। सभी ईसाई पादरी पढे लिखे होते थे। गिरजाघरो के पुस्तकालयो मे बहुत सी पुस्तके जमा की जाती थी, जिनकी बाद मे नक्ले तैयार की जाती थी। धार्मिक स्कूल भी खोले जाने लगे। ईसाई धर्म के अगीकरण के बाद सास्कृतिक विकास कही अधिक तेजी के साथ हुआ। राजा यारोस्लाव सुजान के शासनकाल (१०१६ १०५४) मे यह विकास विशेषकर स्पष्टता से देखने म आता है।

यारोस्लाव के शासनकाल मे कीयेव मे सत सोफिया के अनुपम गिरजाघर और सुनहरे फाटकवाले नये नगर-प्राचीर सहित कई शानदार इमारतो का निर्माण किया गया। उसके शासनकाल म कीयेव मे कई निपुण कलाकारो और वास्तुकारो को काम पर लगाया गया जिनमे रूसी और विदेशी – दोनो ही थे। यद्यपि आरभ मे गिरजाघरो, देवप्रतिमाओ और चित्रो पर सुस्पष्ट विदेशी प्रभाव देखा जा सकता था, पर साथ ही धीरे धीरे एक नयी रूसी वास्तु तथा चित्र शैली भी उभरकर सामने आ रही थी।

सुजान यारोस्लाव के शासनकाल मे रूस की शक्ति मे उल्लेखनीय वृद्धि हुई। विदेशी राजा उसके साथ सबध स्थापित करन की कोशिशे करते थे। स्वय यारोस्लाव ने एक स्वीडिश राजकुमारी से शादी की थी और उसकी बेटिया हगेरियाई, फ्रासीसी और नार्वेजियन राजाओ को ब्याही गयी थी। उसके बेटे का विवाह एक बैजतियाई राजकुमारी से हुआ था। इन सब स कीयेवी रूस और अन्य शक्तियो के बीच सबध सुदढ हुए।

सुजान यारोस्लाव के शासनकाल मे रूसी कानूनो को पहल पहल सहिताबद्ध किया गया। 'रूस्काया प्राव्दा के नाम से विज्ञात यह विधिसहिता प्राचीन रूसी आचार पर आधारित थी। यारोस्लाव के पुत्रो ने इस सहिता म कुछ नये आदेश जोडे, जिनमे से एक विशेषकर महत्वपूर्ण था। इस आदेश ने कुलो के बीच कुल वैर को निषिद्ध कर दिया और इस प्रकार गोत्र समाज के एक महत्वपूर्ण अवशेष का उन्मूलन कर दिया। विधिसहिता का तैयार किया जाना राजकीय प्रशासनतत्र की स्थापना मे एक महत्वपूर्ण कदम था।

ग्यारहवीं शताब्दी के जन विद्रोह

जैसे जैसे सामती राज्य का सुदढीकरण हाता गया वैसे वैसे किसाना और जमीदारो के दोनो वर्गो मे भेद अधिक स्पष्ट होता गया। राजा और बोयार अधिकाधिक प्रायिकता से किसानो की जमीनो पर कब्जा करने लग और किसानो से नयी-नयी तरह की बेगारे करवाने लगे। चर्च भी एक महत्व पूर्ण भूस्वामी बन चुका था और किसानो का उत्पीडन करन लगा था।

उत्पीडितो का प्रतिरोध भी जोर पकडता जाता था। प्राकृतिक

आपदाओं – खराब फसलों और अकाल – के वर्षों में वह विशेषकर सख्त हो जाता था। १०२४ में सूज़दल प्रांत में फसल बहुत ही खराब हुई थी, पर स्थानीय अभिजातों के गोदामों में अनाज ठसाठस भरा हुआ था। पुराने धर्म को माननेवाले पुरोहितों ने जन असंतोष की लहर का लाभ उठाते हुए लोगों को भड़काया। जनसाधारण ने रोटी की माग करते हुए अभिजातों के खिलाफ हथियार उठा लिये। उन्होंने ईसाई चर्च के विरुद्ध भी आवाज़ उठायी, जो एक और उत्पीड़क जमींदार बन गया था। इस पर कीयेव का राजा अपनी सेना लेकर सूज़दल गया और उसने विद्रोह को कुचल दिया। उसने कितने ही बागियों को मौत के घाट उतार दिया और बहुतों को जेलों में ठूस दिया।

स्वयं कीयेव में भी मेहनतकशों ने १०६८ में अपने राजा के खिलाफ बगावत कर दी। उस समय पूर्व की तरफ से एक नया खतरा आया हुआ था – खानाबदोश पोलोव्त्सी कबीले कीयेव पर चढे आ रहे थे। कीयेव के राजा इज्यास्लाव (१०२४-१०७८) की सेना उनसे बुरी तरह पराजित हुई। स्वयं राजा इज्यास्लाव ने भागकर नगर प्राचीरों के भीतर शरण ली और कीयेव के इलाके का कोई रक्षक न रहा। कीयेव के नगरवासियों और ग्रामवासियों में खलबली मच गयी और उन्होंने नगर के तिजारती चौक में जनसभा व्येचे का सयोजन किया। व्येचे में लोगों ने एक ही आवाज़ उठायी – 'पोलोव्त्सी हमारे देश पर चढ आये हैं। राजा, हमें हथियार और घोड़े दे, ताकि हम जाकर उनसे लड़ सकें।" राजा ने हथियार और घोड़े देने में आनाकानी की, क्योंकि उसे डर था कि लोग इन हथियारों का उसीके और उसके बोयारों के विरुद्ध उपयोग करेंगे। इस इन्कार से विप्लव फूट पड़ा – लोगों ने इज्यास्लाव को शहर के बाहर खदेड़ दिया, उसके गढ़ पर कब्जा कर लिया और उसकी दौलत – सोना, चादी और समूरों – को आपस में बाट लिया। व्येचे ने एक और शासक का चुनाव किया और इसके बाद पोलोव्त्सियों का सफलतापूर्वक सामना किया गया।

सामंती समाज ने प्रखर वर्ग सघर्ष की इस पृष्ठभूमि में धीरे-धीरे निश्चित रूप ग्रहण किया था।

स्वाधीन सामंती रजवाड़ों की स्थापना

बारहवीं सदी तक रूस एक एकीकृत राज्य था, जिस पर कीयेव का महाराजा राज करता था। यह सही है कि यह एकता कभी बहुत मजबूत या गहरी नहीं रही थी – कीयेवी रूस की अर्थव्यवस्था बुनियादी तौर पर नैसर्गिक (मुद्राहीन) अर्थव्यवस्था थी, अलग अलग बस्तियों के बीच सबध किसी भी तरह सुदृढ नहीं थे और देश का आर्थिक तथा राजनीतिक सगठन कोई बहुत उन्नत नहीं था।

धीरे-धीरे भूस्वामित्व के सामती स्वरूप रूस के अलग अलग रजवाडो – व्लादीमिर, नोवगोरोद चेर्नीगोव, रियाजान, आदि-आदि – मे कही मजबूत जडे जमाने लगे। राजा युद्धनेता और बोयार ग्मेर्दो की अधिकाधिक जमीन को कब्जे मे लेकर अपनी जागीरो को बढाने लगे। देहातो मे भूस्वामियो की और हवेलिया बनन लगी और कृषि श्रम का सगठन ज्यादा व्यवस्थित हो गया। किसान अपने मालिक की जायदाद पर जो बेगार करते थे, उस पर स्वय मालिक या उसके गुमाश्ते की सख्त निगरानी रहती थी। मालिक गाववालो को हाजिर होने का हुक्म देते थे और उन्ह मालिक की हवेली मे घरेलू या बाहर जायदाद पर काम करना होता था।

तिनखेतिया प्रणाली का व्यापक प्रचलन हो गया – इसके अनुसार एक खेत को खाली पडे रहने दिया जाता था, दूसरे को वसत मे और तीसरे को शरद मे जोता-बोया जाता था। इसके फलस्वरूप पैदावार बढी और कृषि उपकरणो मे क्रमिक किंतु सतत सुधार आया और यह एक बडी उन्नति थी। नगरो और दस्तकारियो का भी काफी विकास हुआ।

इन सामती जागीरो के अधिक समृद्ध होन और उनके मालिको के अधिक शक्तिशाली होने के साथ साथ स्थानीय राजाओ की ताकत बढने लगी और कीयेव के महाराजा की ताकत कम होन लगी। स्वतत्र रजवाडो का उदय आरभ मे एक प्रगतिशील ऐतिहासिक परिघटना थी।

उन कई बडे स्वतत्र प्रातो मे, जो पहले रूस के अग रहे थे नोवगोरोद और व्लादीमिर राज भी थे। नोवगोरोद का इलाका इल्मेन झील के आस पास था और उत्तर मे ब्येलोये ओजेरो (श्वेत झील) ओनेगा झील उत्तरी द्विना नदी और उत्तरी उराल पर्वतो तक फैला हुआ था।

बोयार शक्तिशाली जमीदार थे और उन्ह नोवगोरोदी समाज का उच्चतम वर्ग माना जाता था। उनके बाद धनी व्यापारियो और दूसरे जमीदारो का स्थान आता था, जो समृद्ध तो थे, पर बोयारो जितने शक्तिशाली नही थे। ये तीनो समूह "श्रेष्ठ" जन कहलाते थे और यही नोवगोरोद के वास्तविक शासक थे। ये लोग ही मेहनतकश लोगो, किसानो दस्तकारो मामान ढोनेवालो, नाविको और नगरवासियो के भाग्यविधाता थे। यद्यपि इन लोगो की सख्या बोयारो और व्यापारियो के मुकाबले कही ज्यादा थी फिर भी उन्हे हीन' या "निकृष्ट" जन ही कहा जाता था।

जमीन की पैदावार और शहरी दस्तकारो की बनायी चीजे नोवगोरोद के चहल पहल भरे बाजार म बिकती थी। नोवगोरोद की उम्दा और मशहूर चीजो को खरीदने के लिए कितने ही बाहरी व्यापारी जिन्ह उन दिनो मेहमान' कहा जाता था, यहा आया करत थे। उनम प्राय विदेशो से आनेवाले लोग भी होते थे। विदेशी व्यापारी अपन साथ मूल्यवान कपडा

शराब तावा टीन मूगे फर और मेवा और मिठाइया लाते थे। जर्मन व्यापारियो न अपनी अलग व्यापारिक चौकी कायम कर दी थी, जो ऊच घेरे से घिरी हुई थी। फारस भारत और अफगानिस्तान जैसे पूर्वी देशो के व्यापारी भी नोवगोरोद आया करते थे।

नोवगोरोद एक बडा सास्कृतिक केंद्र भी था। यहा बहुत से शिल्पकार और दस्तकार रहते थे। अपने जमाने के लिहाज से यह एक उन्नत नगर था जिसमे पत्थर से पटी सडके थी और नल द्वारा जलपूर्ति की व्यवस्था थी। कितने ही नगरवासी शिक्षित थे। पुरातात्विक उत्खननो के परिणामस्वरूप यहा भूर्जपत्र पर लिखी कई दस्तावेजे मिली है।

नोवगोरोद के प्रशासन मे व्येचे की भूमिका बहुत महत्वपूण थी, जिसम नगर के सभी स्वतत्र गृहस्वामी भाग लेत थे। नोवगोरोद का मुख्य प्रशासक पोसादनिक कहलाता था, जिसे सिर्फ शक्तिशाली बोयारो म से ही चुना जाता था। व्येचे उसकी सहायता के लिए एक सहस्रपति भी चुनती थी, जो नगर आरक्षिणी (सहस्री या तीस्याचा) का नायक होता था। यह नगरवासियो म स चुन लोगो से बना विशेष सैन्यदल था। महाधर्माध्यक्ष (आर्चबिशप) का भी नगर के कार्यकलाप मे महत्वपूर्ण स्थान था। नोवगोरोद मे राजा भी होता था लेकिन यह पद वशागत नही था। नोवगोरोद के राजाओ को चुना जाता था और फिर शहर मे आमत्रित किया जाता था। राजा सैन्यदल और न्यायालय का प्रमुख होता था, लेकिन उसे नोवगोरोद के रिवाजो के अनुसार ही न्याय करना पडता था।

नोवगोरोद मे अकसर हीनजनो ' के श्रेष्ठजनो" के विरुद्ध विद्रोह होते रहत थ। कभी कभी तो एकसाथ दो पृथक व्येचो तक का आयोजन किया जाता था – एक का बाजार चौक म, तो दूसरी का सत सोफिया के चौक मे। ऐसे अवसरो पर नगर के दोनो ही सिरो मे घटे जोरो स घनघनाया करत थे। दोनो विरोधी व्येचे वोल्खोव नदी के पुल पर आमने सामने जमा होती थी और इसके बाद अकसर भयानक लडाइया हुआ करती थी। तेरहवी और चौदहवी सदिया म हीनजनो ' ने 'श्रेष्ठजनो' के खिलाफ कोई पचास विद्रोह किये थे।

जैसे जैसे कीयेव की ताकत कम होती गयी, वैस वैसे व्लादीमिर राज अपनी शक्ति को सुदृढ करता गया और अधिकाधिक प्रभावशाली भूमिका ग्रहण करता गया। यह रजवाडा व्लादीमिर-सूज्दल राज के नाम से भी विज्ञात है और यह वोल्गा नदी से लेकर क्ल्याज्मा नदी तक फैला हुआ था। यह जगलो शहद और मछलियो से प्रचुर था। उपजाऊ जमीन भी काफी थी। रोस्तोव और सूज्दल नगर इसके प्राचीनतम केंद्र थे।

सोवियत राज्य की भावी राजधानी मास्को इसी रजवाडे के प्रदेश म

प्राचीन रूस (९-११ सदी)

पैदा हुई थी। मास्को का इतिवृत्तो मे पहले पहल ११४७ मे उल्लेख आ
है। इतिवृत्तो मे लिखा है कि इस साल राजा यूरी दोल्गोरुकी (१०९० ११५
ने अपने मित्र चेर्नीगोव के राजा को मास्को आमन्त्रित किया था और उन
सम्मान मे एक बडी दावत दी थी। उस समय मास्को एक छोटी सी बस
ही था जो वर्तमान क्रेमलिन के क्षेत्र पर फैला हुआ था। यह मस्क्वा नदी
खडे तट पर एक सुआरक्षित स्थल पर बसा हुआ था। नगरी कारीगरो
व्यापारियो के मकानो से घिरे छोटे से दुर्ग मे मिलकर बनी थी।
न जिनके दौरान यहा बाणाग्र, सूइया और चाकू छुरे मिले है, सिद्ध
कि यहा स्लाव बहुत समय से रहते आये थे।

क्याज्मातटीन व्लादीमिर नगर को आगे चलकर व्लादीमिर राज
राजधानी बनना था। इसके बिलकुल पास ही राजा अद्रेई (१११ ११७४)
ने अपने लिए बोगोल्यूबोव गढी का निर्माण करवाया था, जिसके कारण व
अद्रेई बोगोल्यूब्स्की नाम से विज्ञात है। व्लादीमिर नगर जल्दी ही ए
महत्वपूर्ण राजनीतिक केंद्र बन गया। अद्रेई एक क्रूर और निरकुश शास
था जो अपने से छोटे राजाओ पर अपनी इच्छाए थोपना चाहता था। अ
मे स्थानीय अभिजातो ने उसके विरुद्ध विद्रोह करके उसे जान से मार दिया

अद्रेई बोगोल्यूब्स्की की मृत्यु के कुछ बाद व्सेवोलोद बोल्शोये गने
(महाकुटुबी – यह नाम उसे इस कारण मिला था कि उसका कुटुब बहु
बडा था) व्लादीमिर-सूज्दल का राजा बना और उसने १२१२ तक रा
किया। वह एक निरकुश शासक था जिसने बोयारो को पूरी तरह से अप
वश मे कर लिया था। प्रसिद्ध मध्ययुगीन वीरकाव्य 'ईगोरवाहिनी क
यशगाथा' मे व्सेवोलोद की सैन्य शक्ति का अत्यत सजीव चित्र प्रस्तुत कर
हुए आलकारिक भाषा मे कहा गया है कि राजा की सेना वोल्गा के पा
को अपनी पतवारो से छपकाकर बहा सकती है और अपने शिरस्त्राणो
पानी पी पीकर दोन को रीता कर सकती है।

प्राचीन रूस की संस्कृति

प्राचीन रूस अत्यत समृद्ध और नानारूप संस्कृतिवाला देश था। जबा
किस्सागोई की कला यहा एक स्थापित परपरा बन चुकी थी, जिससे परीकथाए
किस्से और आख्यान एक पीढी से दूसरी पीढी को मिलते जाते थे। नकिमा
नायक इल्या मुरामेत्स तथा दोब्रीन्या निकीतिच चालाक और हसोड अल्या
पोपोविच और नावगोरोद का धनी व्यापारी सादको जिसके कारनामे उ
समुद्र के राजा के अतर्जलीय राज्य मे ले जाते है इन कथाओ के लोकप्रि
जनश्रुत चरित्र थे।

नोवगोरोद से १९५१ मे प्राप्त ग्यारहवीं सदी मे भूर्जपत्र पर लिखित इतिवृत्त
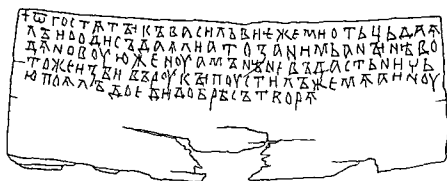
उपरोक्त इतिवृत्त का अनुरखण, १४ १५ वीं सदी

ये किस्से कहानिया और कहावते सामान्य लोगो की भावना और कलाप्रचुर कल्पना को, उनके जीवन और उनके सुख-दुख को अतीत की उनकी समझ को और भविष्य के प्रति उनकी आशाआ आकाक्षाओ को प्रतिबि वित करती थी। ईसाई धर्म के आगमन के भी पहले प्राचीन रूस की अपनी लिपि थी। बाद मे यूनानी मठवासियो ने इसी लिपि के कुछ अक्षरो को आधार बनाकर सिरीलिक वर्णमाला निकाली और उसे उसका वह रूप प्रदान किया जिसमे वह अधिकाश प्राचीन रूसी कृतियो मे देखने मे आती है।

इस समय सभी पुस्तको की हाथ से नकल की जाती थी और महीन चर्मपत्र पर लिखने के लिए हस के पखो का या छोटी टहनियो का उपयोग किया जाता था। उभरे हुए या गुदे हुए अक्षरो मे लिखने के लिए भूर्जपत्र

नोवगोरोद का सत सोफिया गिरजाघर

भी काम म लाया जाता था। नोवगोरोद मे उत्खननो के फलस्वरूप मध्ययुग म भूर्जपत्र पर लिखे बहुत से पत्र प्राप्त हुए है। किताबे तैयार करने मे बहुत समय लगता था और उन्हे अत्यत मूल्यवान माना जाता था।

मठो मे रूसी इतिहास के बारे मे सर्वप्रथम इतिवृत्त भी तैयार किये गये थे जहा वर्ष-प्रतिवर्ष महत्वपूर्ण घटनाओ को कालक्रमानुसार अभिलिखित किया जाता था। प्राचीनतम रूसी इतिवृत्तो मे से एक कीयेव के पेचेर्स्की मठ मे नस्तोर नामक मठवासी ने लिखा था। यह तथा अन्य इतिवृत्त रूस के अतीत के बारे मे अनुपम अभिलेख उपलब्ध करते हैं और रूस के प्रारभिक इतिहास के अध्ययन मे उनसे बहुत मदद मिली है।

प्राचीन रूस अपने निपुण कारीगरो के लिए भी मशहूर था। इस काल के कुभकार सुदर अलकरणो और रगीन ग्लेजवाले बढिया बरतन – सुराहिया और मर्तबान, रकाबिया, घडे, प्याले और खिलौने – बनाया करते थे। छोटी भट्ठियो मे धातु का गलाया जाना एक और सामान्य उद्यम था – इस धातु से बाद म हलो क फाल हसिये और दरातिया फावडे, चाकू छुरे, कीले नाल और ताले बनाये जाते थे। हथियारसाजो का खासकर बहुत नाम था, जो दुधारी तलवार ढाल कवच और जिरह बख्तर बनाया करते थे।

चौथा अध्याय

मध्य पूर्व तथा मध्य एशिया के देशो का सामतवाद मे सक्रमण

ईरान मे सामती सबधो का उदय

ईरान मे तीसरी से सातवी शताब्दी तक सासानी साम्राज्य का बोलबाला बना रहा। सासानियो का इतिहास ईरानी जाति और उसके राज्य के, जो साम्राज्य का केंद्रक था, इतिहास का अभिन्न अग है। यहा सामती सबधो का विकास एक ओर तो भारत या ह्वाग हो घाटी की ही भाति दासस्वामित्व की प्राचीन परपराओ के आधार पर और दूसरी ओर, गोत्रीय तथा सामुदायिक स्वरूपो पर आधारित ईरानी कबीलो के प्राचीन समाज के पतन के परिणामस्वरूप हुआ था। सामती समाज के उदय के साथ सबद्ध सामाजिक-आर्थिक, सास्कृतिक और राजनीतिक परिवर्तन यहा समाग जातीय सरचना और सुदृढ केंद्रीय नाभिक (मध्य तथा दक्षिण पश्चिमी ईरान) के ढाचे के भीतर हुए थे, जिससे ईरान अरबी खिलाफत या चीनी साम्राज्य की अपेक्षा जापान और वियतनाम के अधिक निकट है।

अपने स्वामियो की जमीनो से आबद्ध किसानो के वर्ग का उदय निजी जमीदारियो पर काम करनेवाले गुलामो के भूदासो का दर्जा हासिल करने और समुदायो के धीरे धीरे विघटित होने के साथ हुआ। इसीके साथ-साथ आजात (स्वतत्र समृद्ध अश्वारोही सैनिक) नामक एक नये वर्ग का भी उदय हुआ। नगरो मे शिल्प श्रेणिया भी पैदा हुई लेकिन मध्ययुगीन ईरान मे वे कोई महत्वपूर्ण भूमिका नही अदा करती थी। उस समय तक देश मे एक तरह की जातिप्रथा भी जड जमा चुकी थी लेकिन वह भारत की अपेक्षा कम कठोर थी।

आर्थिक और राजनीतिक लिहाज से ईरान तीसरी से पाचवी सदी के दौरान पश्चिमी एशिया का सबसे शक्तिशाली राज्य था। मुख्य सत्ता भूस्वामी अभिजातो और जरथुस्त्री पुरोहित वर्ग के हाथ मे थी। पुरोहित वर्ग के पास भी बडी-बडी जागीरे और बडी सख्या मे दास थे। जरथुस्त्री धर्मावलबी सूर्य

अग्नि, चद्रमा और तारो की उपासना करते थे। ईसवी सवत के आरभ मे जरथुस्त्री धर्म ईरानी जनता का स्वीकृत आधिकारिक धर्म था। यह धनी तथा प्रभावशाली धार्मिक सस्था ईरान म एक महत्वपूर्ण सामाजिक शक्ति थी।

शोषित जनसाधारण के मानीपथ (मानिकीइज्म) नामक आदोलन के पैदा होन पर ईरान को भी अपने दासस्वामी समाज के सकट का अनुभव करना पडा। लेकिन मानीपथी चाहे विद्यमान सामाजिक व्यवस्था को अनुचित कहकर उसकी आलोचना करते थे, फिर भी उनका विरोध निष्क्रिय प्रतिरोध तक ही सीमित रहा।

किसी भी तरह की बडी आतरिक उथल पुथल के न होने के कारण सासानियो ने अपने साम्राज्य को पारकाकेशिया, मेसोपोटामिया और एशिया एकोचक तक फैला दिया और मध्य एशिया तक भी पहुच गये। इन विजयो के फलस्वरूप, जो दासस्वामी अभिजात वर्ग और साम्राज्य के शासको के लिए प्रभूत सपदा लायी थी ईरानी दासस्वामी समाज के भीतर बढता सकट और भी ज्यादा सगीन हो गया। भुखमरी बडे पैमाने पर फैल गयी और भूस्वामी अभिजात वर्ग के खिलाफ जनव्यापी विद्रोह फूट पडे जिनमे भूतपूर्व सामुदायिक कृषको, जिन्ह अपनी पहलेवाली आजादियो को फिर से हासिल करने की आशा थी, और आजातो, जो छोटी या मझोली जमीदारियो पर अपना अधिकार स्थापित करना चाहते थे दोनो ने ही भाग लिया। साम्राज्य के शासको का भी यह ख्याल था कि बडे बडे अभिजात परिवारो की सपत्ति के कुछ हिस्से पर अपना अधिकार जमाकर वे और अधिक भूसपत्ति प्राप्त कर लेगे जिनके विरुद्ध उन्होने चौथी शताब्दी के अत और पाचवी शताब्दी के आरभ म निरर्थक सघर्ष किया था। साम्राज्य की केंद्रीय सत्ता के सुदढीकरण को अपरिहार्य बनानेवाला एक और कारक पूर्वी सीमातो पर खानाबदोश श्वेत हूणो के आक्रमण का खतरा भी था।

मज्दाकपथ

य भिन्न भिन्न शक्तिया मज्दाकपथी आदोलन (इस आदोलन को अपना नाम अपन नेता मज्दाक से प्राप्त हुआ था) मे सयुक्त हो गयी। अपने पूर्ववर्ती मानीपथियो के विपरीत मज्दाकपथी सामाजिक बुराइयो के विरुद्ध खुले सघर्ष का आह्वान करते थे और विशेषकर अभिजातो से फालतू सपत्ति क ले लिये जाने की माग करते थे। सासानी सम्राट क्वाद प्रथम (४८८-५३१) ने मज्दाकपथियो और आजातो के साथ सहबध स्थापित करके अभिजात वर्ग की शक्ति को भग कर दिया जातिप्रथा को समाप्त कर दिया और मज्दाकपथ को राज्य धर्म बनाया। इस विजय के कुछ ही

वाद एक ओर तो कृषक तथा दस्तकार जनसाधारण और दूसरी आर विद्रोहियो के अगुआ आजाती और राजदरबार (जो उनके हितो का समर्थक बन गया था) मे हित सघर्ष हो गया। आजात और कवाद प्रथम एक बार फिर आपस म मिल गय और उन्होने सामान्य तथा धार्मिक अभिजात वर्ग के शेष प्रतिनिधियो के सहयोग से ५२६ मे कृषक विद्रोह को कुचल दिया।

खुसरो प्रथम के अधीन सासानी साम्राज्य

ईरानी सामती समाज ने पाचवी और प्रारम्भिक छठी शताब्दियो, विशेषकर सम्राट खुसरो प्रथम (५३१-५७६) के शासनकाल मे रूप ग्रहण किया। अभिजात वर्ग पर विजय प्राप्त करने से केंद्रीय सरकार को और भी बडी बडी जमीने मिल गयी और जमीन पर राजकीय स्वामित्व की पुनर्स्थापना के परिणामस्वरूप उनका काफी भाग आजातो को दे दिया गया। सभी मेहनतकशो को अपनी जमीन पर प्रति व्यक्ति कर देना होता था (बार बार की मागो क बजाय), जो समूचे तौर पर पहले के करो के मुकाबले कम कमरतोड था। जमीन पर राजकीय स्वामित्व की पुनर्स्थापना ने अपने को राज्य द्वारा अर्थतत्र मे अदा की जानेवाली भूमिका मे भी अभिव्यक्त किया (किसानो को ऋण देने का प्रावधान, आदि आदि)। राजतत्र समाज के जिस अशक पर समर्थन के लिए सबसे अधिक निर्भर करता था, वह सामती समाज की सैन्यकर्मी श्रेणी – आजात वर्ग – था। अपने अरब समतुल्यो के विपरीत सम्राट की स्थायी सेना भाड़े के सैनिको की बनी हुई थी और आज़ात सैन्य टुकडियो तथा आजात प्रशासनकर्मियो से निर्मित बहुशाखा केंद्रीकृत नौकरशाही के साथ वह सासानी साम्राज्य के प्रशासनिक आधार का निर्माण करती थी।

सामती सबधो के सुदृढीकरण और कृषक उपद्रवो के दमन के परिणामस्वरूप सासानियो के लिए यह सभव हो गया कि वे दक्षिण मे अपने प्रसार अभियान को फिर से शुरू कर सके और श्वेत हूणो को अपनी पूर्वी सीमातो स पीछे धकेल सके। लेकिन पश्चिम मे कुछ प्रारभिक सफलताए प्राप्त करने के बाद ईरान ने अपने आप को बैजतिया के साथ एक लबे और महगे युद्ध म उलझा हुआ पाया।

सातवीं शताब्दी के आरभ का अरब

अरब प्रायद्वीप और उसके एकदम पासवाले इलाको मे सामती सबधो का उदय ईसवी सवत की पहली सहस्राब्दी म इस प्रायद्वीप के दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम म दासस्वामी समाजो के क्रमिक पतन और दूसरे इलाको

मे खानाबदोशो मे आदिम कुल अथवा गोत्र व्यवस्था के विघटन के साथ हुआ।

इस समय तक पशुओ के रेवडो और चरागाहो का एक बडा हिस्सा गोत्रीय अभिजात वर्ग के हाथो मे आ चुका था, जबकि निर्धन खानाबदोश कबीले जमीन की कमी के शिकार थे, खासकर इसलिए कि पिछडा हुआ पशुपालन उद्यम आबादी की बढती जरूरतो को पूरा करने के लिए काफी नही था। इसलिए कबीलो मे जमीन की खातिर पारस्परिक युद्ध शुरू हो गये जिनके दौरान उनमे विभिन्न सबध स्थापित हुए। पडोसी कबीलो की कीमत पर क्षेत्रीय विस्तार करने की आकाक्षा अधिकाधिक बढती गयी। एकीकरण की ओर इस गति का सवर्धन करनेवाला एक और कारक अरब के अधिक विकसित प्रदेशो, जहा सामती स्वरूपो ने जड पकडना शुरू कर दिया था, और इन प्रदेशो तथा खानाबदोश कबीलो के बीच आर्थिक और राजनीतिक सबधो का बढना भी था।

इन परिस्थितियो मे सभी अरबो के एकीकरण के आदोलन का समारभ हुआ, जिसके साथ साथ खानाबदोश – और स्थायी रूप से बसे हुए समाजो, दोनो ही मे सामती व्यवस्था ने भी जडे जमाना शुरू कर दिया। इस आदोलन ने जल्दी ही धार्मिक स्वरूप भी ग्रहण कर लिया और वह एक नये धर्म – इस्लाम – का प्रचार करने लगा।

इस्लाम का आरभ

इस्लाम एकेश्वरवादी धर्म है। वह केवल एक ईश्वर – अल्लाह – को मानता है जिसका पृथ्वी पर उसके पैगबर और उनके सहायक – खलीफा – प्रतिनिधित्व करते है। यह धर्म अपने अनुगामियो से ईश्वर और उसके सेवको के निर्विवाद्य आज्ञापालन की अपेक्षा करता था – मुस्लिम धार्मिक सगठनो और राजकीय सगठनो मे काफी कुछ साम्य था। आरभ म इस्लाम का प्रचार पैगबर हजरत मोहम्मद (५७० ६३२) के नाम के साथ सबद्ध रहा। अरब जनगण मे धार्मिक एकता के आदोलन और दासप्रथा की आलोचना के परिणामस्वरूप हजरत मोहम्मद को विभिन्न सामाजिक सस्तरो मे अनेक अनुयायी प्राप्त हो गये। इस्लाम का एक महत्वपूर्ण पहलू जो प्रारभिक सामती समाज मे अरब जनगण (जिनके जीवन निर्वाह का मुख्य साधन उनक रेवड थे) के एकता अभियान और क्षेत्रीय विस्तार की आकाक्षाओ को प्रतिबिंबित करता था, पडोसी देशो मे बलपूर्वक दीन का प्रचार करन का रुझान था।

अरबो का एकीकरण और खिलाफत का उदय

सातवी शताब्दी के प्रथम तृतीयक मे मदीना म उदित मुस्लिम राज्य ने शीघ्र ही अपने सीमातो को फैलाना शुरू कर दिया। इस क्षेत्रीय विस्तार म इस्लाम के प्रसार से सहायता मिली – राजनीतिक सत्ता के लिए सघर्ष इस्लाम का सबसे दृढ पहलू था। हजरत मोहम्मद द्वारा संस्थापित केद्रीकृत धर्मतत्र को सैन्यदलो से समर्थन मिलता था, जिन्हे पारिश्रमिक जमीन के रूप मे नही बल्कि लडाई म हासिल लूट के माल (मालेगनीमत) के हिस्सा के रूप मे दिया जाता था। इस प्रणाली (जिसमे सैनिको और सेनानायको के भूसपत्ति भी रखने पर कोई रोक नही थी) को पैगबर के उत्तराधिकारी पहले खलीफाओ का पूरा पूरा समर्थन प्राप्त हुआ और इसने अपेक्षाकृत काफी लबे समय तक सेना की युद्ध क्षमता को कायम रखना सुनिश्चित किया। केद्रीय सत्ता के सुदृढीकरण मे योग देनेवाला एक और कारक जमीन के सभी मालिको से करो की उगाही थी यद्यपि सामतो के लिए करो की दर कम थी। जमीन के छोटे से भाग पर ही राजकीय स्वामित्व था (शामिलात जमीन या वह जमीन जिस पर खेती नही होती थी), जबकि शेष या तो निजी सपत्ति थी या किसी कुल अथवा गोत्र की सपत्ति होती थी।

खलीफा सैनिक अथवा प्रशासनिक पदाधिकारियो को अपने कार्यकाल के लिए राजकीय जमीनो के टुकडे दिया करते थे और यह जमीदारो और शक्तिशाली अमीर उमरा के एक नये वर्ग के उदय का द्योतक था, जिनकी जागीर उनकी राजकीय सेवा पर निर्भर करती थी। इन जमीनो को उनके स्वामियो से छीनकर इस शर्त पर नये मालिको को दिया जा सकता था कि नये मालिक अपेक्षित कर्तव्यो को पूरा करेगे। भूस्वामित्व की यह प्रणाली, जो जल्दी ही एशिया एकोचक और उत्तर अफ्रीका मे फैल गयी, सुदूर पूर्व तथा भारत मे प्रचलित प्रणाली से आमूलत भिन्न थी।

सातवी शताब्दी के मध्य तक अरब का एकीकरण हो चुका था, लेकिन यह एकीकरण टिकाऊ साबित नही हो सकता था क्योकि वह जमीन के बटवार की समस्या का कोई हल पेश नही करता था। अपने देश म बडी बडी जागीर कायम कर लेने के बाद अब अरब सामत पडोसी देशो के लोगो की कीमत पर उन्हे और बढाना चाहते थे।

इसी बीच अनेक विजय अभियानो के दौरान अरब खानाबदोश, जिनके लिए सामती अरब म कोई स्थान न था, पशेवर सैनिक और आगे चलकर विजित क्षेत्रो म जमीदार बन गये थे। इसके परिणामस्वरूप सामती सामाजिक स्वरूपो का और दृढीकरण हुआ और इसने खलीफाओ को विश्वसनीय सैनिक प्रदान किये जो आपस म समान धर्म और जातीय पृष्ठभूमि से जुडे हुए थे। ये सैनिक विजित प्रदेशो को लूटकर अपना गुजारा करते थे।

सातवी सदी मे अरबो ने वैजतिया और ईरान के विरुद्ध एक बडा अभियान शुरू किया। ये दोनो ही पारस्परिक लडाइयो और आतरिक उथल-पुथल के कारण कमजोर हो गये थे।

६३६ मे वैजतिया को शाम (सीरिया) तथा फिलिस्तीन से हटने के लिए मजबूर कर दिया गया और ६५१ मे अरबो ने ईरान को जीत लिया। नये विजेताओ की सफलता मे एक बहुत महत्वपूर्ण कारक उनकी धार्मिक सहिष्णुता (इस्लाम स्वीकार करने को प्रोत्साहन देने के लिए सिर्फ आर्थिक उपाय ही अपनाये जाते थे) और बिना प्रतिरोध आत्मसमर्पण कर देनेवालो की सपत्ति के लिए उनका आदर था। इसके प्रभाव से विजित देशो मे आबादी के खासे अशक तटस्थ हो जाते थे खासकर इसलिए कि उस समय खलीफा स्थानीय सामतो के विशेषाधिकारो का उल्लघन किये या जबर्दस्ती सैनिक भरती किये बिना अपने को करो के सग्रहण तक ही सीमित रखा करते थे। इसके अलावा विजित प्रदेशो को राजकीय सपत्ति घोषित कर दिया जाता था और स्थानीय आबादी को चाहे कर अदा करने पडते थे, पर स्थानीय सामतो पर कर का भार काफी कम हो जाता था। इस्लाम ग्रहण कर लेनेवालो को उस विशेष कर (जजिया) से बरी कर दिया जाता था, जो काफिरो को अदा करना पडता था।

खिलाफत की अर्थव्यवस्था का आधार राजकीय सेवा के बदले मे सशर्त भूस्वामित्व, अनिवार्य कर और सैनिक सेवा और अपनी जमीन (जिसके हस्तातरण का अधिकार भी सुनिश्चित था) को काश्त करने का दायित्व था। खलीफाओ द्वारा शत्रुओ की जमीनो के बडे पैमाने पर पुनर्वितरण के बाद सशर्त भूस्वामित्व का ही बोलबाला हो गया था। जमीन का निजी और सामुदायिक स्वामित्व कम प्रचलित था। बडे बडे सरदारो की जमीनो को आम तौर पर बधुआ किसान काश्त किया करते थे।

खिलाफत मे उससे आर्थिक दृष्टि से स्वतत्र तथा अपने अलग इतिहास और परपराओ वाले अलग अलग नसलो के लोगो के इलाको के समावेश के फलस्वरूप राज्य मे वैसी ही अव्यवस्था और गडबडे शुरू हो गयी जैसी सभी आरभिक सामती राज्यो मे हुआ करती थी।

अश्वारोही सेनाए जिन्हे सिर्फ फौजी लूट मे हिस्सा पाने का ही अधिकार हासिल था, हजरत अली (६०२ ६६१) के नेतृत्व मे अरब अभिजात वर्ग के खिलाफ खडी हो गयी जिसने बेशुमार जमीनो पर कब्जा कर लिया था। ६५६ मे अली खलीफा बन गये लेकिन अभिजात एकजुट हो गये और उन्होने उमैयावशी मुआविया के नेतृत्व मे प्रतिरोध आदोलन छेड दिया। उमैया वश का गढ शाम था, जो सबसे विकसित नवविजित प्रदेशो मे एक था।

रिसाले और अभिजात वर्ग के बीच सघर्ष के दौरान सामाजिक

अतर्विरोधो को जल्दी ही अपने को धार्मिक विवाद मे अभिव्यक्त करना था। हजरत अली के समर्थको ने शिया पथ (जिसे शीघ्र ही सारे ईरान मे जड जमा लेना था) तो मुआविया के समर्थको ने सुन्नी पथ चलाया। शिया सिर्फ खलीफा अली के उत्तराधिकारियो को ही दीनदारो का आध्यात्मिक नेता मानते है। सुन्नीपथ सुन्नत पर आधारित है, जो कुरान के बाद की है और जो अरब समाज मे बाद मे लक्षित नये विकासो को, उसके उत्तरवर्ती वर्गान्तरण को प्रतिबिबित करती है। रिसाले के एक और हिस्से ने खारिजी नामक पथ स्थापित किया, जो सभी दीनदारो की समानता का प्रचार करता था।

अरब विजये

शामी जनशक्ति और भौतिक साधनो के आधार पर और शक्तिशाली सरदारो के समर्थन से इन सघर्षो मे मुआविया को विजय प्राप्त हुई। उसने शाम को अपना प्रशासनिक केंद्र बनाये रखा और ईरान तथा इराक के निवासियो का कठोर उत्पीडन किया। उमैयो (मुआविया के उत्तराधिकारियो) ने बैज़ातिया के खिलाफ एशिया एकोचक मे असफल युद्ध किये, लेकिन उनकी सेनाओ ने उत्तरी अफ्रीका को तेजी से सर करके वहा बैज़ती शासन का अत कर दिया। स्थानीय बर्बर सरदार जो बहुत समय से उत्तर अफ्रीकी खानाबदोशो से लड रहे थे अरबो के पक्ष मे आ गये। ७११ से ७१४ के बीच अरब सेनाओ ने अपने सेनापति तफीक की कमान मे इबेरियाई प्रायद्वीप (स्पेन) को जीत लिया और इसके बाद फ्रास पर आक्रमण किया। लेकिन प्वातिये की लडाई (७३२) मे पराजित होने के बाद उन्हे पिरेनीज़ पहाडो के पीछे तक हट आना पडा और पिरेनीज़ पर्वतमाला अरब साम्राज्य की सीमात बन गयी।

इस काल मे अरब सेनाए पारकाकेशिया उत्तर पश्चिमी भारत और ठेठ मध्य एशिया तक भी पहुच गयी। इस प्रकार आठवी शताब्दी के मध्य तक एक विराट उमैया साम्राज्य (खिलाफत) की स्थापना की जा चुकी थी। इसकी सफलता कई बातो के सयोग के कारण थी – शक्तिशाली सेना, स्थानीय शासनतत्रो मे किये गये न्यूनतम परिवर्तन और स्थानीय सरदारो और सामतो को जिनकी सख्या विजित प्रदेशो मे जमीन से पुरस्कृत अरबो से और भी बढ गयी थी, प्रदत्त विशेषाधिकार।

उमैया खिलाफत

राजकीय भापा, श्रम के उपयोजन और कर सग्रहण के तरीफो धर्म और वित्तीय तथा विधि प्रणालियो, आदि मे अरब तत्वो के प्राधान्य के बावजूद उमैयो का शासनकाल (६६१-७५०) अरवो और स्थानीय शासको मे घनिष्ठ सपर्को के तेजी से बढने का जमाना था। लेकिन आठवी सदी के आरभ मे ही इस्लाम मे बडे पैमाने पर लोगो के दीक्षित होने के परिणामस्वरूप गैर-मुसलमानो से प्राप्त करो की राशि मे कमी आ गयी थी, जिसने खिलाफत की आर्थिक शक्ति को कमजोर किया।

उत्तरवर्ती उमैया खलीफाओ ने करो मे भारी वृद्धि की – विराट साम्राज्य की एकता को बनाये रखने मे सन्निहित सैनिक व्यय की अब उसके दोहन से पूर्ति नही पाती थी। आठवी शताब्दी का पूरा प्रथमार्ध विजित प्रदेशो मे विद्रोहो के अविराम सिलसिले मे परिपूर्ण है, जो अतत स्वय शाम तक फैल गय। मध्य एशिया मे एक बडे विद्रोह के फलस्वरूप जो बाद मे ईरान और इराक मे भी फैल गया, उमैया खिलाफत का पतन हो गया। लेकिन इसके बाद भी सत्ता विद्रोहियो ने नही, बल्कि अब्बासीवश ने अपने हाथो मे ले ली, जिसने इस अशात अवस्था का अपने लाभ के लिए उपयोग किया – इस वश के खलीफाओ ने साम्राज्य क इराकी सूबे को अपने समर्थन का आधार बनाया जिस पर बहुत सशक्त अरब प्रभाव पडा था और उन्होंने बगदाद को अपनी राजधानी बना लिया (७५०-१२५८)।

अब्बासी खिलाफत

उमैयो का विराट साम्राज्य अब्बासियो के सत्ता मे आने के सिर्फ छ साल बाद ही ध्वस्त होने लगा। खलीफाओ के सारे प्रयासो के बावजूद विजित प्रदेशो मे सेना बडे मझोले और छोटे भूसामतो के वर्ग मे परिणत हो गयी थी जिनका खिलाफत के केद्र के मुकाबले अपने रहने की जगहो से कही ज्यादा लगाव था और जो अब खिलाफत के समर्थन की आवश्यकता को अनुभव नही करते थे।

लेकिन चाहे अब्बासीवश का शासनकाल खिलाफत के सतत विघटन का समय था फिर भी आठवी और नौवी सदियो ने अरब विश्व की अर्थव्यवस्था और सस्कृति मे जबरदस्त उत्थान भी देखा विशेषकर उसक केद्र इराक मे। यहा केवल एक बडे प्रदेश पर अपेक्षाकृत एकरूप सामती समाज का विकास ही नही हुआ था, बल्कि कृषि शिल्पो और व्यापार के तीव्र विकास के परिणामस्वरूप सामाजिक प्रगति को भी बढावा मिला। उस समय

अरब देश ससार के सबसे उन्नत देशो मे थे। अरब व्यापार मार्ग यूरोप, एशिया और अफ्रीका मे दूर-दूर तक फैले हुए थे। लूट के माल का वितरण अब आर्थिक दोहन का मुख्य स्वरूप नहीं रह गया था। भू वितरण का मुख्य स्वरूप राज्य की सेवा के मुआवजे मे प्रशासको को अकृष्ट जमीन – जो खलीफाओ की सपत्ति थी – के टकडो का दिया जाना था। जमीन का काफी हिस्सा निजी जागीरो और खलीफाओ की सपत्ति के अतर्गत आता था। जिन जमीनो का स्वामित्व सरकारी ओहदे पर आधारित था, उनके मालिको के लिए – उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि के लिहाज के बिना – सैनिक सेवा अनिवार्य थी और खिलाफत का अत होते होते उनके लिए युद्ध मे अपने सशस्त्र अनुचर दल के साथ हाजिर होना लाजिमी हो गया था। इन माफियो या जागीरो के किसान राज्य को कर और अपने मालिको को लगान दिया करते थे। राजकीय राजस्व का अधिकाश भूमि करो से ही प्राप्त होता था।

अन्य सभी राज्यो की ही भाति अरब साम्राज्य मे भी राजकीय सेवा के बदले दी जानेवाली जमीने धीरे धीरे निजी सपत्ति बन गयी। खिलाफत मे यह प्रक्रिया नौवी सदी मे हुई। इस प्रक्रिया मे मुस्लिम धार्मिक सस्थाओ के स्वामित्व की जागीरो या वक्फो की वृद्धि ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इन जमीनो पर न कर लगते थे और न उन पर रहनेवालो के लिए सैनिक सेवा ही अनिवार्य थी। इन वक्फो का कुछ हिस्सा नाम को ही धार्मिक सस्थाओ का होता था क्योकि उन्हे अपने धर्म गुरुओ को दान करनेवाले स्थानीय सामत व्यवहार मे उनसे प्राप्त अधिकाश आय को अपने पास ही रख लिया करते थे। इस तरह की अधिकाधिक जमीनो के मौरूसी जागीरो और वक्फो मे परिणत होते जाने के साथ-साथ किसान भी अपने मालिको पर अधिक और राज्य पर कम निर्भर होते गये।

फिर भी राज्य किसानो से उनकी आय का आधा ही मागता रहा। इस बात को देखते हुए कि निजी जमीनदार भी अपने किसानो पर दबाव बढ़ाते जा रहे थे इसका यही मतलब था कि उनकी हालत पहले से कही ज्यादा मुश्किल होती जा रही थी। गैर अरब किसानो की हालत तो विशेषकर खराब थी – सभी किसानो को जिस रूप कर से नकद कर मे लगभग सार्विक सक्रमण और उसके फलस्वरूप सूदखोरी के प्रसार मे मुसीबतो मे फसना पडा।

खिलाफत का ह्रास

किसानो मे, विशेषकर साम्राज्य के गैर अरब बहिर्वर्ती भागो मे असतोष के बढ़ने के साथ साथ शक्तिशाली भूस्वामियो और केंद्रीय सत्ता मे सघर्ष छिड गया क्योकि भूस्वामी अपनी आर्थिक तथा राजनीतिक स्वतत्रता

स्थापित करना चाहते थे। खिलाफत को राज्यतत्र की सर्वव्यापी अक्षमता और अदक्षता के कारण सूबेदारो को व्यापक अधिकार और सत्ता प्रदान करने के लिए विवश होना पडा था और धीरे-धीरे उसका उन पर नियत्रण खत्म होने लगा था। मिस्र मे तुलूवशियो ने और ईरान मे ताहिरियो ने स्वतत्र हुकूमते कायम कर ली और इस तरह के कई और स्वतत्र राजवश भी पैदा हो गये। इन पार्थक्यवादी रुझानो की रोकथाम के लिए खलीफाओ ने राज्यतत्र को मजबूत करने की कोशिश की और वजीर के पद की स्थापना की। लेकिन साम्राज्य की पुरानी एकता को बहाल करना असभव सिद्ध हुआ। खलीफा की सत्ता का मुख्य आधार – युद्ध की लूट पर जीनेवाली अरब खानाबदोशो की अखडनीय सेना – लुप्त हो चुका था। बर्बरो, खुरासानियो तथा अन्य विजित जातियो के सैनिको से बनी भाडे की सेना अत्यत अविश्वसनीय सिद्ध हुई।

यद्यपि यह कारक साम्राज्य की केंद्रीय सत्ता के क्षय को रोकने मे सहायक रहा कि खलीफा सर्वत्र इस्लाम का आध्यात्मिक नेता या अमीरुल मोमिनीन (ईमानवालो का सरदार) माना जाता था, फिर भी खिलाफत नौवी सदी से जनसाधारण को वश मे रखने के अपने बुनियादी कार्य को पूरा करने मे असमर्थ सिद्ध हो गयी थी। आजरबैजान और उत्तर पश्चिमी ईरान मे बाबेक विद्रोह (८१६-८३७) खिलाफत के अत के आरभ का द्योतक था। कुछ ही समय बाद इराकी किसानो और उत्तरी अरब कबीलो के बलवे भी फूट पडे (८६६-८८३) और इस तरह के उपद्रव दसवी सदी मे भी जारी रहे। खिलाफत की कमजोरी का लाभ उठाकर नौवी शती के द्वितीय चतुर्थक म मध्य एशिया और ईरान ने अपनी आजादी फिर हासिल कर ली और नौवी सदी के उत्तरार्ध मे शाम मिस्र तथा फिलिस्तीन ने भी उनका अनुकरण किया। दसवी शती के मध्य तक बगदाद और उसके आसपास क इलाको के अलावा और कुछ खिलाफत के नियत्रण म नही रहा और व्यवहार म खलीफा अब मुस्लिम जगत के धार्मिक नेता से अधिक नही माना जाता था। १२५८ मे मगोलो ने बगदाद को जीत लिया और खलीफा की हत्या कर दी गयी।

अरब संस्कृति

आठवी से दसवी सदियो के दौरान अरब राज्यो क राजनीतिक प्रभाव के प्रसार क साथ साथ जबरदस्त सास्कृतिक उपलब्धिया भी प्राप्त की गयी विशेषकर खिलाफत के केंद्रीय प्रदेशो और इबेरियाई प्रायद्वीप म। विज्ञान की अभूतपूर्व प्रगति हुई और प्राचीन विश्व स प्राप्त समस्त ज्ञान को और अधिक बढाया और विकसित किया गया।

गणित, खगोल, हिकमत (चिकित्सा), भूगोल और इतिहास के क्षेत्रों में उपलब्धियां खासकर महत्वपूर्ण थीं। अरबों ने चीनियों के कई आविष्कारों को यूरोप पहुंचाया, जैसे, कुतुबनुमा, कागज और बारूद। यद्यपि उन्होंने अपना अधिकांश दर्शन अतीत से प्राप्त किया था, फिर भी मुस्लिम धार्मिक शिक्षा के प्रभाव में उसमें भी काफी प्रगति की गयी। अपने धार्मिक सारतत्व के बावजूद अरब दर्शन ने तर्कबुद्धिवादी पहलू प्रदर्शित किये।

अरबों ने नौचालन और युद्ध कलाओं और अनेक शिल्पों तथा वास्तुकला के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान किये। इस काल के अरब साहित्य ने इब्न इसहाक और तावरी जैसे किस्सागो व लेखक पैदा किये और मध्य पूर्व तथा मध्य एशिया के ताजिक और फारसी साहित्य ने दुनिया को फिरदौसी और उमर खय्याम जैसे महाकवि भी दिये।

पांचवीं से सातवीं शताब्दियों का मध्य एशिया

मध्य एशिया में समाज के सामंती स्वरूप सबसे पहले ख्वारज्म, सोग्द आदि के प्राचीन समाजों में विकसित हुए। इन देशों में गुलामों को धीरे धीरे जमीन दिये जाने और गोत्र नेताओं द्वारा भूतपूर्व समुदायों के किसानों का शोषण शुरू होने के साथ साथ पराधीन कृषकों – बंधुआ काश्तकारों या बंधुआ असामियों – का एक नया वर्ग पैदा हो गया था। सामंती ढंग से विकसित होनेवाले सभी मध्य एशियाई कृषिजीवी रजवाड़ों को (इनकी संख्या २० से अधिक थी) खानाबदोश श्वेत हूणों के सामंती राज्य को खिराज देना पड़ता था, मगर आंतरिक मामलों में उनकी स्वतंत्रता बनी रही थी। सिर्फ ख्वारज्म ही पूरी तरह से स्वतंत्र था।

५६७ में तुर्क खानाबदोशों द्वारा श्वेत हूणों के पराजित किये जाने के परिणामस्वरूप सत्ता तुर्की कगान (खान अथवा सरदार, आगे चलकर सम्राट) के हाथों में चली गयी। यहां स्थिति अरब प्रायद्वीप से बहुत भिन्न थी, जहां सामंती तौर-तरीके अरब किसानों और अरब खानाबदोशों में एकसाथ विकसित हुए थे – यहां जमीन को काश्त करनेवाले (सोग्दी, ख्वारज्मी, आदि) खानाबदोशों से भिन्न नसल के थे, दूसरे धर्म के अनुगामी थे और दूसरी भाषा बोलते थे। इस कारण कृषि जीवन में सामंती तौर-तरीकों ने खानाबदोश तुर्क कबीलों के सामाजिक ढांचे पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं डाला और सामंती व्यवस्था के लक्षण छठी सदी तक विकसित नहीं हो पाये। लेकिन इस अंतर ने उत्पीड़ित तुर्क खानाबदोशों को खानाबदोश अभिजातों और दहकान सरदारों के खिलाफ ५८३-५८६ के विद्रोह में कंगाल हुए सोग्दी किसानों का साथ देने से नहीं रोका। इस विद्रोह के कुचले जाने के फलस्वरूप भूतपूर्व सामुदायिक

कृषकों का शोषण और भी कठोर हो गया। सातवी शताब्दी तक मध्य एशिया की सभी कृषिजीवी जातियो मे सामती सामाजिक स्वरूपो का प्राधान्य स्थापित हो चुका था।

उन्नत सामाजिक सबधो मे सक्रमण ने कृषि के विकास और रेशम उद्योग तथा सिचाई प्रणालियो की उन्नति को बढावा दिया। अनेक परकोटेदार नगर पैदा हो गये, लेकिन उनमे व्यापारियो और दस्तकारो की भूमिका दहकान सामतो से कम महत्व रखती थी, जिन पर शहरी और देहाती दस्तकारो का बहुत बडा हिस्सा आश्रित था। लेकिन मध्य एशियाई और विशेषकर सोग्दी व्यापारी सभी पडोसी देशो, खासकर भारत और मध्य पूर्व के साथ खूब व्यापार करते थे। मध्य एशिया के इन प्रारभिक वर्ग समाजो का मुख्य धर्म जरथुस्त्री धर्म था।

सातवी सदी के मध्य एशिया की नानासख्य रियासतो ने कोई बडे युद्ध नही किये – तुर्क सत्ता के ह्रास के बाद उनमे से अधिकाश स्वतत्र हो गयी। इन देशो मे किसानो के अधीनीकरण की प्रक्रिया की सपूर्ति ने उनके प्रतिरोध को जन्म दिया जिसने अपने को सातवी सदी के अत और आठवी के प्रारभ मे एक विद्रोह मे अभिव्यक्त किया। ये विद्रोही जिन सिद्धातो का अनुसरण करते थे उनका मज्दाकपथी सिद्धातो से काफी साम्य था।

मध्य एशिया की विभिन्न जातियो द्वारा धीरे धीरे सामती व्यवस्था अपनाये जाने के साथ साथ कई जातीय समूहो (उदाहरण के लिए, सोग्द और ख्वारज्म के रहनेवालो) और उनकी सस्कृतियो ने प्रमुखता प्राप्त की। इससे पहले तक मध्य एशिया एक कमोबेश सहत समाग जातीय तथा सास्कृतिक इकाई ही था। भारतीय, ईरानी और ईसाई साहित्य की कई कृतिया इन देशो मे पहुची स्थानीय लिपिया परिष्कृत हुई और उनके भारत तथा चीन के साथ व्यापारिक और सास्कृतिक सबध बढे और मजबूत हुए। मध्य एशिया मे चित्रकला और वास्तुकला की ऐसी शैलिया पैदा होने लगी जो ईरानी और भारतीय कला-परपराओ से सर्वथा भिन्न थी।

६५१ मे अरब सेनाओ ने मध्य एशिया पर आक्रमण किया लेकिन उन्हे भयानक प्रतिरोध का सामना करना पडा जिसे दीर्घकालिक युद्ध (७०५-७१५) के बाद ही कुचला जा सका। इस पराजय मे एक खासा महत्वपूर्ण कारक अलग अलग सामती शासको मे एकता का अभाव था जिनमे से कुछ ने तो एक-दूसरे से गद्दारी भी की। देश के और विशेषकर सिचाई प्रणाली के विनाश किसानो की तबाही, कुछ निवासियो के जबरदस्ती दूसरी जगहो पर बसाये जाने और इस्लाम के बलपूर्वक प्रचार के फलस्वरूप विद्रोह हुए और ये विद्रोह तब तक लगातार होते रहे जब तक कि अत मे मध्य एशिया के राज्य अपनी स्वतत्रता की पुनर्स्थापना करने मे सफल नही हो

गये। लेकिन जहा ७०५-७३७ के विद्रोहो ने किसानो और ग्रामवासियो के साथ साथ स्थानीय सामतो के भी सामान्य हितो को व्यक्त किया था, वहा आठवी सदी के मध्य तक दहकान सामतो ने इस आदोलन से विश्वासघात कर ली और उनके बडी सख्या म इस्लाम मे दीक्षित कर लिया गया। शनै शनै भूस्वामियो और श्रमजीवियो का एक नया सामाजिक समूह पैदा हो गया। इस नये वर्ग के समर्थन तथा आर्थिक प्रभाव के उपयोग से अरब स्थानीय आबादी के एक काफी बडे हिस्से को इस्लाम अगीकार कराने और ज़मीन के राजकीय स्वामित्व तथा अन्य सामती सस्थाओ का प्रचलन करने म सफल हो गये।

लेकिन खिलाफत की सत्ता का आधार मजबूत नही था। मध्य एशिया म शुरू होनेवाले ७४७ के विद्रोह के परिणामस्वरूप उमैयो का तख्ता उलट गया। मध्य एशिया के लोगो न ७५१ ७७६-७८३ और ८०६ ८१० मे उनके उत्तराधिकारी अब्बासी खलीफाओ के खिलाफ बगावते की, बागियो का कुचलन के सघर्ष मे खिलाफत की सेनाओ क ताज़ीरी अभियानो की ही नहीं बल्कि स्थानीय सामतो और विशेषकर ताजिक अमीरो को लगातार रिआयते देने की भी जरूरत पडी। ताजिक अमीरो ने आठवी सदी मे ही उस ज़मीन के बडे बड हिस्सो पर सशर्त अधिकार प्राप्त कर लिया था, जिस पर पहले समुदायो का स्वामित्व था। उसके बाद से अधिकाश किसान सामती बधना मे ही रहे। ८१९ मे ताजिक सरदारो ने एक स्वाधीन राज्य की स्थापना की और स्थानीय सामानी राजवश ने ९९९ तक मध्य एशिया पर शासन किया।

पारकाकेशिया की जातिया

पारकाकेशिया के देशो – आर्मीनिया, जार्जिया की कार्तली और लाजिका रियासतो और अल्बानिया (प्राचीन आज़रबैजान) की अल्बानिया तथा अर्रान रियासतो – मे सामती आर्थिक सबधो मे सक्रमण चौथी शताब्दी म शुरू हुआ जब युद्धनेताओ ने समुदायो की, जिनका तेजी स अपक्षय हो रहा था जमीनो को अपने हाथो मे ले लिया था। इस काल मे दासस्वामी अभिजातो की जागीरो मे भी नये उत्पादन सबध रूप लेने लगे थे। पराधीन कृषक समुदाय के निमाण की ओर ले जानेवाली ये प्रक्रियाए सारे पार काकेशिया मे हो रही थी। ईसाई चर्च को भी इन नये उत्पादन सबधो के सुदढीकरण म महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी थी – चौथी शताब्दी तक वह पारकाकेशिया के अधिकाश देशो मे अच्छी तरह से जडे जमा चुका था। यहा न जमीन पर राजकीय स्वामित्व था और न ही कोई एकीकृत लगान तथा कर प्रणाली। सारी आबादी तीन श्रेणियो मे बटी हुई थी – भूस्वामी

आजात पुरोहितवर्ग और जमीदारो की खिदमत के लिए आबद्ध पराधीन किसान।

पाचवी छठी शताब्दियो मे पार-काकेशिया मे उल्लेखनीय • सास्कृतिक तथा आर्थिक विकास देखा गया और अतर्राष्ट्रीय व्यापार मार्गो के महत्वपूर्ण स्थलो पर खुशहाल तिजारती शहर पैदा हो गये। पार-काकेशिया पर बैजतिया अथवा ईरान के नाममात्र नियत्रण मे स्थानीय राजवश शासन करते थे। इस नाममात्र नियत्रण को अधिक ठोस प्रभुत्व मे परिवर्तित करने के ईरान के विभिन्न प्रयासो का पार काकेशिया के रहनेवालो ने डटकर प्रतिरोध किया। उदाहरण के लिए, आर्मीनियो जार्जियाइयो और अल्बानियो (आजरबैजानियो के पूर्वज) का आत्मसात्करण करने और उसके साथ-साथ करो (चर्च से नियें जानेवाले करो सहित) म वृद्धि करने, ईसाई धर्म पर पाबदी लगाने और आर्मीनियाई राजाओ को राज्य मे उनके प्रमुख पदो से निकालने क प्रयासो के नतीजे के तौर ४५०-४५१ मे आर्मीनी सेनानायक वदान ममीकोन्यान के नेतृत्व मे विद्रोह हो गया। विद्रोहियो को परास्त कर दिया गया, लेकिन आत्मसात्करण के प्रयासो को भी छोड देना पडा।

पारकाकेशिया पर सुदढ ईरानी शासन स्थापित करने के एक और प्रयत्न के परिणामस्वरूप ४८१-४८४ मे एक व्यापक विद्रोह फूट पडा, जिसके कारण सासानियो को एक बार फिर अपने लक्ष्य को त्यागना पडा। इस प्रकार का अतिम हमला खुसरो प्रथम (५३१-५७६) के शासनकाल मे हुआ था, जब करो को बढा दिया गया था और स्थानीय प्रशासनाधिकारियो की जगह ईरानी अधिकारी नियुक्त कर दिये गये थे। इसके फलस्वरूप एक और व्यापक आर्मीनी जनविद्रोह फूट पडा जिसका जार्जियाइयो अल्बानियो और बैजतिया न समर्थन किया। ५६१ मे सपन्न हुई शाति सधि के अनुसार ईरान न पारकाकेशिया क एक बड हिस्से पर अपन दावे को त्याग दिया और ६२८ मे यह सारा इलाका नाममात्र के बैजती शासन के अधीन स्वतत्र हो गया। पाचवी और छठी सदियो के अविराम युद्धो के दौरान आजात धीरे धीरे अधिकाधिक शक्तिशाली होते गये और अपने किसानो से अधिकाधिक मागे करने लगे। लेकिन ईरान और बैजतिया के बार-बार के हमलो और जातीय विभेदो न पार काकेशिया मे केंद्रीकृत सरकार और राजकीय भूस्वामित्व प्रणाली मे युक्त सयुक्त राज्य की स्थापना को पूरी तरह से असभव बना दिया। लगातार की लडाइयो ने बडे व्यापारिक केंद्रो के विकास मे भी बाधा डाली।

अरब सरदार अपन को साठ साल की प्रचड लडाइयो के बाद ही पारकाकेशिया मे जमा पाये – अरब सूबेदारो ने लोगो को जबरदस्ती इस्लाम म दीक्षित किया और खिलाफत की भूव्यवस्था लागू की। लेकिन अरब साम्राज्य

के अन्य भागो के विपरीत पारकाकेशिया मे इस्लाम नाम का भी मुश्किल
म ही जडे पकड पाया और राजकीय भूस्वामित्व की प्रणाली सिर्फ अल्बानिया
म ही प्रचलित हो सकी। पारकाकेशिया मे बहुत ही कम अरब बसे और
यहा उनकी हालत बहुत ही नाजुक थी – शातिकाल मे खिलाफत के अधिकारिया
। कर्तव्य कर उगाहन तक ही सीमित रहते थे। लेकिन ये कर अत्यत अमर्यादित
थे और उनके कारण किसानो और नगरनिवासियो के भी कई बलवे हुए,
जिनसे विदेशी विजेताओ की लिप्मा को कुछ कम करने मे सहायता मिली।
आर्मीनिया के ७४८ ७५० और ७७४-७७५ म विद्रोहो न खलीफा को करा
मे कमी करने के लिए मजबूर कर दिया, ७८१ और ७९५ मे अल्बानिया
मे भी ऐसे ही विद्रोह हुए। आर्मीनिया और अर्रान के राजाओ ने खलीफा क
जुए को उतार फकने की आशा से इन सभी बगावतो को अपना समर्थन
प्रदान किया। अल्बानी विद्रोहो म सबसे महत्वपूर्ण खुर्रमियो और उनके नेता
बाबेक (८१६ ८३७) के नेतृत्व मे होनेवाला विद्रोह था, जिसे आर्मीनिया
का समर्थन प्राप्त था। बाबेक के अनुगामियो ने खलीफा की सेनाओ को कई
शिकस्ते दी जिन्हे उनका दमन करने मे बहुत मुश्किलो का सामना करना
पडा। चौदह साल बाद एक और विद्रोह फूट पडा। यद्यपि इस विद्रोह को
८५५ म निर्ममतापूर्वक कुचल दिया गया, पर अरबो को कुछ ही बाद पार
काकेशिया से चले जाना पडा। पारकाकेशियाई जनो के विरुद्ध युद्धा मे
खिलाफत को इन इलाको के शोषण से प्राप्त धन से कही अधिक धन खर्च
करना पडता था।

पाचवा अध्याय
ग्यारहवीं से पद्रहवीं सदी तक का पश्चिमी यूरोप

हस्तशिल्प का कृषि से अलग होना। नगरो का उदय

प्रारंभिक मध्य युग मे उत्पादक शक्तियो का विकास चाहे धीमी गति से ही हुआ हो फिर भी यह प्रगति सतत थी और इस प्रक्रिया का पहला परिणाम श्रम का एक नया सामाजिक विभाजन था, जिसने यूरोप भर मे आर्थिक प्रगति को सुगम बनाया। धीरे धीरे उद्योग और कृषि के बीच एक सुस्पष्ट विभाजक रेखा खिच गयी। नये नये शहर पैदा हो गये और आकार म बढने लगे। व उद्योग और व्यापार क केद्र बने। इस विकास का एक और परिणाम पण्य द्रव्य सबधो का पैदा होना था।

ग्यारहवी सदी से मध्ययुगीन समाज की बढती हुई आवश्यकताए उन किसानो को, जो अपन मुख्य कृषि कार्य के अलावा लोहार बुनकर दरजी या मोची, आदि के काम भी करते थे, इन सहायक धधो पर लगातार अधिक और खेती पर कम से कम समय लगाने के लिए विवश करने लगी। ये किसान अक्सर अपने गावो को छोडकर ऐसी जगहो पर जा बसते थे जहा उनके लिए अपनी बनायी चीजों को बेचना और उनके बदले वे कृषि पदार्थ प्राप्त करना आसान होता था, जो उनके और उनके परिवारो के भरण पोषण के लिए आवश्यक थे (रास्तो के सगम पर नदियो के किनारे और उन जगहो पर, जहा उन्हे गढो या मठो का सरक्षण मिल जाता था)।

धीर धीरे व्यापारी भी ऐसी जगहो पर आकर बसने लगे और आखिर व व्यापार को बहाल करने म सफल हो गये जिसकी रोमन साम्राज्य के पतन के बाद से बहुत अवनति हो गयी थी।

यूरोप मे जिस तरह के व्यापार की सबसे पहले बहाली हुई वह सुदूरवर्ती देशो, और विशेषकर पूर्व के देशो की महगी और आसानी से लाने ले जाने लायक चीजो का व्यापार था जैसे बैजतिया से कपडा
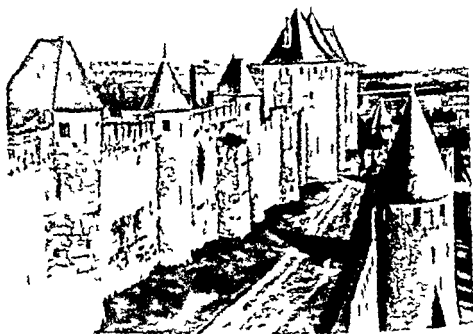
कार्कसोन (फ्रास) की शहरपनाह, १३ वीं सदी

एशिया ए कोचक और मसेरत से हाथीदात और सोना और अरब स इतर और सुगधिया। लेकिन धीरे धीरे वे व्यापारी, जो दस्तकारो के साथ आ बसे थे स्थानीय दस्तकारो की बनायी चीजो को बेचने लगे और इस तरह उन्होने इन चीजो का दूर-दूर तक पहुचना सभव बना दिया। इस प्रकार दस्तकारी और व्यापार के केंद्रो के रूप मे नये नगर विकसित होने लगे।

आरभ मे ये नगर बडे बड गावो या कसबो से ज्यादा भिन्न नही होते थे, जिनके निवासी कृषि के साथ साथ दूसरे धधे भी करते थे। नगर निवासियो के पास अपने चरागाह कर्षित भूमि जगल और जलस्रोत हुआ करते थे। लेकिन कालातर मे उद्योग नगरवासी मेहनतकशो से अधिकाधिक श्रम और समय की अपेक्षा करने लगा और उनके लिए अपने वास्ते आवश्यक कृषिजन्य कच्चे माल और अपने परिवारवालो के भरण-पोषण के लिए जरूरी चीज प्राप्त करने के निमित्त पास-पडोस के गावो के किसानो से अपनी चीजो का विनिमय करना आवश्यक होता गया।

दस्तकार पेशो के अनुसार शिल्प सघो या श्रेणियो (गिल्डो) म सगठित हो गये थे जिनके सदस्य अपनी छोटी छोटी कार्यशालाओ या कारखानो म काम करनेवाले स्वतत्र छोटे छोटे उत्पादक हुआ करते थे। इन कार्य

शालाओ म कारीगर या कमेरे (जरनीमेन) और शागिर्द भी काम किया करते थे, जिनकी सख्या (स्वय काम के सगठन और उत्पादित सामान की भाति ही) श्रेणी की सनद (चार्टर) मे निर्दिष्ट कडे अनुबधो के अनुसार निर्धारित होती थी। इन सनदो का मुख्य प्रयोजन श्रेणी के पूर्ण सदस्यो अर्थात उस्तादो (निपुण कारीगरो) के काम तथा निर्वाह की अवस्थाओ को निर्धारित और सुनिश्चित करना होता था, क्योकि कमेरे तो वस्तुत मजदूरी पर काम करनवाले कारीगर ही होते थे, जबकि शागिर्द अपने शिक्षण का शुल्क अपने काम से चुकाते थे।

कमेरो और शागिर्दो के हित एक तरफ थे और उस्तादो या मालिको के हित दूसरी तरफ और इसलिए वे एक दूसरे के विरोधी थे। उस्ताद जैसे-जैसे समाज का एक विशेषाधिकारप्राप्त तबका बनते गये और कमेरो को अपनी श्रेणी मे घुसने से रोकते गये, वैसे वैसे ही इन दोनो समूहो के बीच वर्ग सघर्ष भी अधिकाधिक प्रखर होता गया।

नगरो और सामती भूस्वामियो मे सघर्ष

शहरो मे सकेद्रित आबादी देहातो की बनिस्बत आपस मे कही अधिक घनिष्ठत घुली मिली हुई थी और उसने भूस्वामी अभिजातो से, जिनकी जमीनो पर शहर बसाये गये थे, सफलतापूर्वक टक्कर ली। अत मे या तो प्रत्यक्ष झगडो के नतीजे के तौर पर, या विभिन्न अधिकारो को खरीदकर कई नगर स्वशासी समुदाय बन गये जो सेन्योरो (जागीरदारो) से लगभग पूरी तरह स स्वतत्र थे। शहरो ने अपनी नगर परिषदे या नगरपालिकाए बनाने, उनके पदाधिकारी चुनने, कराधान, अनिवार्य सैनिक सेवा तथा श्रम सेवा से उन्मु क्ति खरीदने और अपने सभी निवासियो के लिए उनकी व्यक्तिगत स्वतत्रता सुनिश्चित करने का अधिकार भी हासिल कर लिया। उन दिनो यह कहावत अकारण ही नही प्रचलित हो गयी थी कि ' शहर की हवा आदमी को आजाद बना देती है।

सबसे पहले नवी दसवी शताब्दियो मे नगर इटली म पैदा हुए और इतालवी नगरो – विशेषकर वेनिस जेनोवा अमाल्फी नेपल्स पालेर्मो मिलान और फ्लोरेस – ने ही पूर्व के साथ व्यापारिक सबधो को बहाल करना और फैलाना शुरू किया। इन शहरो के व्यापारी तेजी के साथ समृद्ध बनते गये और स्वय शहरो ने भी थोडे ही समय के भीतर उन जागीरदारो से (चाहे वे वडे पादरी और मठाधीश रहे हो या सामत) जिनकी जमीनो पर वे स्थित थे, स्वशासन का अधिकार हासिल कर अपने को स्वतत्र गणराज्य बना लिया। उत्तरी यूरोप म अपने वस्त्र उद्योग के बल पर फ्लैडर्स (आज

के पश्चिमी बेल्जियम और उत्तरी फ्रांस के फ्लेमिश प्रदेश) के नगर बेहद खुशहाल हो गये। बारहवी सदी म दक्षिण-पश्चिमी जर्मनी के शहर भी प्रमुखता पाने लगे। इगलैड और फ्रास मे ग्यारहवी सदी म ही नगरो न तेजी से विकास करना शुरू कर दिया था और बारहवी-तेरहवी सदियो तक उनके शहरो म व्यापार तथा उद्योग खूब फूलने फलने लग गये थ।

उन्नत सामतवाद का युग

इस नगरीय विकास और उद्योग तथा व्यापार के प्रसार के परिणाम यूरोप भर मे इतने प्रबल और विविध थे कि उनके उदय तथा उत्तरवर्ती विकास के काल को उन्नत सामतवाद के युग का उदय काल कहा जा सकता है, जिसमे उत्पादक शक्तिया (अर्थात मामती समाज के लाक्षणिक छोटे पैमाने के उत्पादन मे भाग लेनेवालो की कृषि तथा शिल्प प्रविधिया और कार्य कौशल) छोटे पैमाने की सामती अर्थव्यवस्था मे सभव विकास के उच्चतम स्तर पर पहुच गयी थी।

अपने विकास के साथ शहरी उद्योग कृषि के लिए भी पर्याप्त मात्रा मे लोहे के औजार प्रदान करने लगा जिन्हे अब छोटी से छोटी जोतो पर भी देखा जा सकता था। नगरो के निवासियो की कृषिजन्य पदार्थो की बढती हुई मागो के फलस्वरूप किसान ज्यादा से ज्यादा जमीन को काश्त मे लाने लगे और पशुपालन, कृषि प्रविधियो तथा बागवानी का आगे विकास हुआ। इस तरह कृषि मे तो उल्लेखनीय उन्नति हुई ही लेकिन प्रविधियो और कुशलताओ मे सबसे महत्वपूर्ण सुधार शहरी उद्योग मे आये और इसके परिणाम स्वरूप मध्य युग मे उत्पादक शक्तियो ने सबसे प्रभावी विकास नगरो मे ही प्रदर्शित किया। यहा औद्योगिक केद्र पैदा हो गये (वस्त्र, ऊन, रेशम और बाद मे सूती कपडा तथा चमडा उद्योगो, धातु के काम, काच मृण्भाड उद्योग, आदि आदि के कद्र), जो यूरोप भर मे अपने उत्पादो का निर्यात करते थे।

यूरोपीय नगरो का विकास और फलस्वरूप उत्पादक शक्तियो की उन्नति सामाजिक तथा राजनीतिक विकास मे भी निर्णायक कारक सिद्ध हुए। शिल्पो और व्यापार का केद्र बन जानवाले नगर ही वे स्थान थे जहा शासक वर्ग इतना राजस्व एकत्र कर सकता था कि जो गावो मे प्राप्त राजस्व मे कई कई गुना ज्यादा होता था। लेकिन किसानो की बनिस्बत कारीगर और व्यापारी अपने हितो की ज्यादा एकजुट होकर रक्षा करत थे और व आम तौर पर व्यक्तिगत स्वतत्रता का उपभोग करते थ। उन्होने आरभ से ही भूस्वामी सामतो और उनकी व्यवस्था के विरुद्ध सघर्ष किया था।

ऐसी अवस्था मे कृषकों को नगरवासियो मे अगर जमीदारो के खिलाफ अपने संघर्ष मे वस्तुत साथी नही, तो भी कम से कम हमदर्द अवश्य मिल गये और इस तरह वे अपने बोझ को काफी कम करने मे सफल हो गये।

शहरी विकास के नतीजे के तौर पर इस काल के यूरोप के राजनीतिक जीवन मे भी महत्वपूर्ण परिवर्तन आये। व्यापारियों और कारीगरो की दिलचस्पी अपनी मंडियो का प्रसार करने और समूचे तौर पर व्यापारिक संबधो को बढाने म थी और इसलिए वे अपनी गतिविधियो के देशो (सबसे पहले इसका आशय इस इलाके से था, जिसमे लोग परस्पर समझी जानेवाली भाषाए बोलते थे) म स्थानीय झगडो तथा लडाइयो को समाप्त करने तथा न्यूनतम कानून और व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए प्रयत्नशील हुए। इस वजह से नगरवासी सदा ऐसी केंद्रीकृत सरकार का समर्थन करते थे, जिसके पास भूस्वामी अभिजातो की मनमानी जोर-जबर्दस्ती का, जो रहजनी को भी उदात्त शौर्य की उच्चतम अभिव्यक्ति समझते थे, खात्मा करने के लिए आवश्यक सत्ता हो। नगरो के उदय के लगभग साथ ही साथ यूरोपीय राजाओ और नगरवासियो के बीच स्वत स्फूर्त सहबंध स्थापित हुए। नगरो ने धन से भी और सशस्त्र टुकडियों से भी राजाओ की सामंतो पर लगाम लगाये रखने मे सहायता की। नगरो की इस सहायता के परिणामस्वरूप पद्रहवी शताब्दी के अंत तक कई केंद्रीकृत यूरोपीय राज्यो का आविर्भाव हुआ, जो वर्तमान प्रमुख यूरोपीय राज्यो के पूर्वगामी थे।

धर्मयुद्धो के कारण

ग्यारहवी शताब्दी मे लगभग सारे यूरोप म सामती व्यवस्था की स्थापना की प्रक्रिया के पूरे होने और कमोबेश टिकाऊ अमनो-अमान के सुदृढीकरण के फलस्वरूप उत्पादक शक्तियो मे निश्चित वृद्धि हुई उद्योग तथा व्यापार का पुनरुत्थान हुआ, शिल्पो तथा कृषि मे विभाजन और सुस्पष्ट हुआ और नगरो का औद्योगिक तथा व्यापारिक केद्रो के रूप म उदय हुआ। विदेश व्यापार के – और सर्वोपरि पूर्व के अधिक उन्नत देशो के साथ व्यापार के – पुनरुत्थान ने यूरोप के लोगों मे इन देशो के बारे मे नयी दिलचस्पी पैदा की। इस नयी दिलचस्पी के नतीजे के तौर पर यूरोपीयो के सैनिक अभियान पूर्वी देशो को गये जो ईसाई धर्मयुद्धो, सलीबी जंगो या क्रूसेडो के नाम से विज्ञात है। स्वदेश मे अपनी हालत से असतुष्ट विभिन्न वर्गों तथा सामाजिक संस्तरो के लोगो ने इन धर्मयुद्धो मे भाग लिया था। धर्मसेनाओ के आधार का शासक वर्ग के निम्न सोपानको का प्रसार करके निर्माण किया गया था – नाइट या सैनिक सामत जो आम तौर पर भूस्वामी अभिजातो

के कनिष्ठ पुत्र होते थे और जिन्हें नियमत अपने पिताओं से कोई जमीन विरासत मे नही मिलती थी और उनके अलावा भूतपूर्व खुशहाल किसान और सामंतो के कारिंदो के तौर पर काम करनेवाले भूदास भी होते थे, जो फटेहाल होने के कारण बटमारी और रहजनी भी करते थे और अपने ही लोगो तथा अजन बियो को लूटते थे और किसी भी दुस्साहसिक काम मे कूद पडने को तैयार रहते थे।

उस समय किसानो मे भी बहुत असतोष व्याप्त था, जिनके लिए अपने से अपेक्षित अमर्यादित दायित्वो को बरदाश्त कर पाना असभव हो गया था। १०६५-१०६७ मे फसले लगातार मारी गयी थी और किसान घास छाल और मिट्टी तक खाने को विवश हो गये थे। आदमखोरी तक की वारदाते भी हुई थी। बहुत से किसानो ने अपेक्षाकृत कम दूभर जीवन की खोज मे उन जमीनो को तज दिया था, जिनके साथ वे बधे हुए थे। जब धर्मयुद्धो के लिए सेनाए जुटायी गयी, तो उनमे भरती होकर बडी सख्या मे किसानो ने पूर्व की तरफ कूच कर दिया।

उस आदोलन मे कई बडे नगरो ने, विशेषकर इटली के नगरो ने भी इस आशा से हिस्सा लिया कि वे पूर्व की विलास-वस्तुओ के अपने व्यापार का प्रसार कर सकेगे।

कैथोलिक चर्च ने भी लोगो को धर्मयुद्धो के परचम के तले इकट्ठा करने मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। उसने तुर्को से शाम और फिलिस्तीन को, उस पुण्यभूमि को जहा ईसा का जीवन बीता था और जहा ईसाइयो का पवित्र समाधि का तीर्थ था उद्धार करने का आह्वान किया। वास्तव मे चर्च इस नीति के जरिये दो लक्ष्यो को सिद्ध करने का प्रयास कर रहा था – एक तो अपनी शक्ति और प्रभाव को बढाना, और दूसरे, यूरोप से अस्थायी तौर पर उन अनगिनत नाइटो को हटाना जो गिरजो और मठो को लूटने के आदी थे।

सातवीं से ग्यारहवीं सदियो का बैजतिया

धर्मयुद्ध अनिवार्यत बैजतिया के लिए तात्कालिक महत्व रखते थे जो सदियो से अपने पडोसियो – ईरानियो, अरबो बुल्गार और सेल्जुक तुर्को – से महगे युद्ध करता आया था। कुछ महत्वपूर्ण सैनिक सफलताओ के बाद, विशेषकर मकदूनी राजवश के शासन काल (८६७-१०५६) मे, जब बुल्गारो को पराजित किया गया था और अरबो से शाम, आर्मीनिया तथा मैसोपोटामिया के कुछ हिस्सो को वापस छीन लिया गया था और प्राचीन रूस से सबध को सुदृढ किया गया था बैजतियाई शक्ति तेजी से घटने लगी थी।

ग्यारहवी सदी तक सामती व्यवस्था अच्छी तरह से जड जमा चुकी

थी – स्वतत्र किसान खत्म हो चुके थे और अभिजातो की बडी बडी जागीरो की सख्या मे वृद्धि हुई थी। भूदास प्रथा, शोषण के अधिक प्रचड रूपो और भारी कराधान के प्रचलन ने कई बार जन विद्रोहो को जन्म दिया था। सामती उत्पादन सबधो के विकास और तीव्रतर भू विभाजन के फलस्वरूप भूस्वामियो मे अक्सर झगडे होते रहते थे। साथ ही शासक वर्ग के सदस्यो मे सिहासन के लिए वैमनस्य भी ज्यादा तेज हो गया था। इन सभी कारको ने बैजतियाई राज्य की शक्ति को कमजोर कर दिया और उसके लिए व्यवस्था को कायम रखना तथा अपने सीमातो की रक्षा करना – दोनो काम अधिकाधिक कठिन होते गये। नये वश के सत्ता मे आने के समय तक साम्राज्य की अवस्था गभीर हो चुकी थी। लेकिन सम्राट अलेक्सियस कोमनेनस (१०८१-१११८) और उसके वशज बैजतियाई सत्ता को अस्थायी तौर पर फिर से सुदृढ करने मे सफल रहे।

पहला धर्मयुद्ध

१०९५ मे पोप उर्बन द्वितीय ने क्लेर्मो (दक्षिणी फ्रास) की धर्म-परिषद मे पहले धर्मयुद्ध की घोषणा की और उसमे भाग लेनेवाले सभी लोगो को उनके पापो से मुक्ति प्रदान करने का और लूट का खूब माल मिलने का आश्वासन दिया। धर्मयुद्धो मे लडने के लिए जानेवाली पहली सेनाए गरीब किसानो से बनी थी। शस्त्रो से अल्पसज्जित किसानो की भीडे रास्ते मे लूटमार करती कुस्तुतुनिया पहुची बैजती सम्राट ने उन्हे जल्दी से जल्दी एशियाई तट पर पहुचने के लिए प्रेरित किया जहा उन्हे तुर्को ने जल्दी ही तितर बितर कर दिया। किसान टुकडियो के बदहाल बचे खुचे लोग किसी तरह कुस्तुतुनिया लौट आये और नाइटो की मुख्य अभियान सेना का इतजार करने लगे जिसने यूरोप से १०९६ मे यरूशलम के लिए कूच किया था। लबी और मुश्किल यात्रा के बाद यह सेना १०९९ मे यरूशलम पहुच गयी। उन लोगो ने धावा बोलकर नगर पर कब्जा कर लिया और उसके बाद मुस्लिम आबादी का कत्ले आम किया। शामी तथा फिलिस्तीनी प्रदेशो पर कई मुजाहिदी राज्य कायम कर दिये गये। इन राज्यो पर शक्तिशाली यूरोपीय सामत शासन करने लगे जिनके नीचे क्षुद्र सामतो और नाइटो का जटिल और अनम्य पदसोपान था। यूरोप से आये किसानो की हालत मे फिर भी कोई सुधार नही आया – स्थानीय किसानो की भाति वे भी आर्थिक दासता की जजीरो मे जकडे रहे। स्थानीय आबादी मे विद्रोह फूट पडा और ११४४ मे एदेस्सा ईसाई मुजाहिदो के हाथ से निकल गया, जो उनके सबसे महत्वपूर्ण दुर्गो मे एक था। नगर को फिर से जीतने के उद्देश्य से सगठित किया गया दूसरा धर्मयुद्ध असफल रहा।

बारहवी शताब्दी के मध्य मे छोटे अरब और तुर्क राज्यो को सलाहुद्दीन के रूप मे एक प्रतिभाशाली सेनानायक प्राप्त हुआ। उसने सभी छोटे छोटे राज्यो को ऐक्यबद्ध करने और फिर ११८७ मे ईसाई मुजाहिदो को परास्त करके यरूशलम को जीतने मे सफलता प्राप्त कर ली। बाद के धर्मयुद्ध भी, जिनकी सख्या पाच थी और जो बडे पैमाने पर सगठित किये गये थे, असफल ही सिद्ध हुए। चौथे धर्मयुद्ध मे पश्चिमी नाइटो ने कुस्तुतुनिया को लूटा (१२०४) और इस तरह सबके सामने इस बात का परदाफाश कर दिया कि धर्मयुद्धो का मुख्य लक्ष्य पवित्र समाधि की रक्षा करना नही, बल्कि लूटमार करना ही था क्योकि बैजतिया की राजधानी भी आखिर एक ईसाई नगर ही तो था। इसके कुछ ही बाद तुर्को ने यूरोपीयो को एशिया ए कोचक से खदेड दिया। फिलिस्तीन मे उनके अतिम गढ, आक्रा नगर को तुर्को ने १२९१ मे सर कर लिया और इसी वर्ष को धर्मयुद्धो की समाप्ति का द्योतक माना जाता है।

लेकिन चाहे धर्मयुद्ध यूरोपीय नाइटो द्वारा अपेक्षित राजनीतिक लक्ष्यो की सिद्धि नही कर पाये फिर भी इस आदोलन के परिणाम यूरोपीय सस्कृति के लिए बहुत महत्वपूर्ण साबित हुए। यूरोपीय लोग पूर्व की अधिक उन्नत सस्कृति के सपर्क मे आये और उन्होने ससार के इस भाग मे प्रचलित उन्नत कृषि प्रणालियो तथा शिल्प प्रविधियो को अपना लिया। वे अपने साथ पूर्व से कूटू चावल नीबू जाति के फलवृक्ष गन्ना और खूबानी जैसे कई नये और उपयोगी पौधे तथा रेशम और काच निर्माण जैसी महत्वपूर्ण खोज लेकर वापस आये।

इगलैंड

पाचवी शताब्दी मे इस द्वीप पर, जिसके निवासी केल्ट कबील थे जर्मनीय कबीलो – आग्लो, सैक्सनो, जुटो और थ्यूरिजियो – ने आक्रमण किया। उन्होने यहा सात बर्बर राज कायम किये, जिन्होने छठी और सातवी सदियो के दौरान धीरे धीरे आपस मे मिलकर तीन राज्यो की, और अत मे नवी शताब्दी के आरभ (८२९) मे, वसैक्स के राजा एग्बर्ट के अधीन एक आग्ल-सैक्सन राज्य की स्थापना की। आग्ल-सैक्सन राज्य मे सामती आर्थिक रूपो का उदय इसी काल मे आरभ हुआ और ग्यारहवी शताब्दी के उत्तरार्ध तक जब नार्मडी के विलियम (जो इतिहास मे विजेता विलियम या विलियम दि काकरर के नाम से विख्यात है) के नेतृत्व मे नार्मन सामतो ने आग्ल-सैक्सन राजसिहासन पर अधिकार जमाया (१०६६) यहा सामती व्यवस्था अच्छी तरह से स्थापित हो चुकी थी।

विलियम के साथ इगलेड आकर आग्ल-सैक्सन जमीनो पर कब्जा जमाने-वाले नार्मन और फ्रासीसी सामतों ने अधिक उन्नत सामती राज्य के प्रतिनिधियो की हैसियत मे सामतीकरण की प्रक्रिया को पूरा किया। चूकि वे लोग यहा विदेशी विजेताओ से शत्रुभाव रखनेवाली स्थानीय आबादी के बीच रह रहे थे इसलिए उनके लिए अपने हितो की रक्षा करने और कडे अनुशासन को कायम रखने के वास्ते मिलकर खडे होना अपरिहार्य था। इसलिए उन्होने अपने ड्यूक की शक्ति और सत्ता का समर्थन किया जो अब इगलेड का बादशाह बन गया था। विलियम ने जिसे इस अभियान मे अपना साथ देनेवाले सामतो मे विजित जमीनो का बटवारा करना पडा था यह जानने की इच्छा से कि राजा की हैसियत से उसे कितना राजस्व उपलब्ध होगा अपने राज्य की सभी जमीनो की पैमाइश (उनके क्षेत्रफल, मूल्य स्वामित्व और दायित्वो के ब्यौरो के साथ) करवाने का इतजाम किया। यह पैमाइश स्थानीय बाशिदों की गवाहियो के आधार पर की गयी थी। गवाहिया शपथपूर्वक, केवल सत्य बोलने की प्रतिज्ञा के साथ देनी होती थी मानो साक्षी कयामत के दिन यीशू मसीह के सामने अतिम न्याय के लिए खडे हो। इसीलिए वह पुस्तक, जिसमे ये सारे आकडे है और जिसे आज तक बचाकर रखा गया है, डूम्सडे बुक' (अतिम न्यायदिवस पुस्तक) कहलाती है।

इस पुस्तक मे उन किसानो को जिनकी स्थिति को सुस्पष्टत निर्धारित करना कठिन था अक्सर विलेन अर्थात कृषिदास कहा जाता था और इस लिहाज से यह पैमाइश सामती व्यवस्था की स्थापना के पूरे होने की परिचायक थी। लेकिन यहा यह याद रखना महत्त्वपूर्ण है कि अग्रेज कृषक समुदाय के एक हिस्से की स्वतत्रता बरकरार रही थी। जो आग्ल सैक्सन बैरन नयी व्यवस्था को स्वीकार करने के लिए तैयार नही थे उनकी जगह नार्मन बैरनो ने ले ली। अग्रेज कृषक समुदाय का काफी बडा हिस्सा दासता के बधनो म जकड गया।

अग्रेजी सामती व्यवस्था सिर्फ एक बात म ही महाद्वीपीय सामती व्यवस्था स भिन्न थी – ऊपर बताये कारणो से इगलैड म बादशाही की सत्ता इतनी मजबूत थी कि वह अमीर-उमरा से लेकर निर्धनतम नाइटो तक शासक वर्ग के सभी सदस्यो को ताज की वफादारी से सेवा करने क लिए विवश कर सकती थी। इस शाही सत्ता की बाह्य अभिव्यक्ति यह थी कि शासक वर्ग के प्रत्येक सदस्य के लिए इस बात के लिहाज के बिना कि उसका तात्कालिक सामत-स्वामी कौन है *सम्राट के प्रति निष्ठा की शपथ लेना अनिवार्य था।*

इसके परिणामस्वरूप इगलैड को एकता के उस कठिन और कष्टदायी रास्ते से वास्ता नही पडा जिस पर सभी महाद्वीपीय राज्यो [illegible]

पडा था। अंग्रेज समाज को मजबूत केंद्रीय सत्ता के अभाव से इतनी मुसीबत नही उठानी पडी (यूरोप के अन्य राज्यो म मुसीबतो की जड यहा था क्योंकि वहा बैरनो को प्राप्त आजादियां राजनीतिक प्रशासन और आर्थिक प्रगति – दोनो – के लिए हानिकर थी) जितनी कि बहुत ही मजबूत बनाई सत्ता से जिसका शासक वर्ग के हितो मे अक्सर दुरुपयोग किया जाता था।

ससद का आरभ

इगलैड मे अत्यत प्रबल केंद्रीय सत्ता के अस्तित्व के परिणामस्वरूप बहुत जल्दी ही शाही सत्ता को सीमित करने के कई प्रयास हुए। राजा जान – जिसे भूमिहीन जान कहा जाता था – के शासनकाल (११६६-१२१६) मे बैरनो ने बादशाह को मग्ना कार्टा या महाधिकारपत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया (१२१५) जिसने उसकी बैरनो के सपत्ति-अधिकारो और विशेषाधिकारो को बदलने या सशोधित करने की शक्ति को सीमित कर दिया। १२६५ मे पहली ससद (पार्लियामेट) को समाहूत किया गया। तेरहवी शताब्दी की इस सस्था की आज की ब्रिटिश पार्लियामट से, जो एक बूर्जुआ सावैधानिक सस्था है कोई भी तद्रूपता नही है यद्यपि वह अपना मूल इस पहली ससद मे ही देखती है और अंग्रेज इतिहासकार तथा वकील ब्रिटिश सविधान के लबे इतिहास पर जोर देने के बहुत आदी है। तेरहवी सदी म लेकर सोलहवी सदी तक इगलैड की ससद तीन सत्ता-वर्गो या एस्टेटो – आध्यात्मिक तथा ऐहिक प्रभुओ (स्पिरिचुअल एड टेपोरल लार्ड्स) और सामान्य जनो (कामनर्स) अर्थात काउटियो (जिलो) और नगरो के प्रतिनिधियो – की परिषद थी। उसकी तुलना आगे चलकर यूरोपीय महाद्वीप के देशो म स्थापित की जानेवाली ससदो की जा सकती थी। लेकिन इगलैड के तीव्र आर्थिक विकास उसके नगरो की वृद्धि और व्यापार केंद्रो के जाल के प्रसार न जल्दी ही उसके शासक वर्ग और नगरो को खुशहाल बना दिया जिससे बादशाह की शक्तियो पर लगाये प्रतिबधो ने कुछ ही समय के भीतर जड़ जमा ली। चौदहवी शताब्दी मे ही राजा को नये कर लगाने और ससद की सहमति के बिना लगाये करो का अधिग्रहण करने के अधिकार से वचित किया जा चुका था। ससद, जिसमे शासक वर्ग के अलावा नगरो तथा काउटियो का भी प्रतिनिधित्व प्राप्त था, अधिकाधिक प्रभावशाली राजनीतिक सस्था बनती गयी।

नगरो के प्रसार और पण्य द्रव्य सबधो के विकास न जो परिणाम पैदा किये उन्हे शेष पश्चिमी यूरोप के लिए लाक्षणिक बन जाना था। उनके परिणामस्वरूप सामती समाज की बुनियादी प्रशासनिक तथा आर्थिक इकाई-

मामती जागीर (मेनोरिअल एस्टेट)—के ढाचे मे काफी परिवर्तन आये। चूकि किसानो ने अब अपनी बेशी उपज को स्थानीय मडियो और निकटवर्ती शहरो मे बेचना शुरू कर दिया था, इसलिए बैरन अपने किसानो से जिस-रूप लगान के स्थान पर नकद रकम (कम्यूटेशन अर्थात एकमुश्त अदायगी) की माग करने लगे। इस तरह की एकमुश्त अदायगी चौदहवी सदी तक लगभग सर्वव्यापी बन चुकी थी और उसने महत्वपूर्ण परिणाम पैदा किये। भूस्वामी सामत अपनी निजी जमीन (डोमेन) की उपेक्षा करने लगे और इस जमीन को टुकडो मे बाटकर किसानो को लगान पर काश्त करने के लिए देने लगे। इस तरह जब उनकी निजी जमीन ही नही रह गयी, तो उनके लिए किसानो की अनिवार्य श्रम सेवा (बेगार) की भी जरूरत नही रह गयी और उन्हे मोचन राशियो के बदले स्वतत्र किया जाने लगा। लेकिन भूस्वामियो को धन की तो जरूरत थी ही, इसलिए उन्होने सामुदायिक जमीनो को बाडो से बद करके भेडपालन का प्रसार करना शुरू कर दिया, क्योकि उससे काफी आय हो सकती थी। इस प्रकार बढी हुई आर्थिक स्वतत्रता के साथ-साथ इस नवप्राप्त "स्वतत्रता' के कारण किसानो की रहन-सहन की हालतो मे काफी खराबी आयी। यूरोप के अधिकाश मे यही हालत पैदा होनेवाली थी और उसके परिणामस्वरूप कई बडे कृषक विद्रोह हुए—इगलैड मे वाट टाइलर का विद्रोह, इटली मे दोलचीना का विद्रोह और फास मे जाकेरी।

इगलैड के कृषक विद्रोह (१३८१) का प्रत्यक्ष कारण व्यक्ति-कर (पोल टैक्स) नामक सार्विक कर का लगाया जाना था। यह कर उस समय फ्रास के विरुद्ध चल रहे युद्ध (शतवर्षीय युद्ध) के लिए धन जुटाने के निमित्त लगाया गया था। इस कर को वसूल करनेवाले अधिकारियो ने कई अन्यायपूर्ण और सख्त कदम उठाये। लोगो ने विरोधस्वरूप बगावत कर दी और वह शीघ्र ही कई काउटियो मे फैल गयी। कृषक सेना ने लदन पर चढाई कर दी और नगर के गरीबो ने उसके लिए शहरपनाह के दरवाजे खोल दिये। किसानो के एक दस्ते का नेता एक छतसाज था जिसका नाम वाट टाइलर था। विद्रोहियो ने बादशाह के सामने ये माग रखी—सभी किसानो को पूरी आजादी श्रम सेवा के बदले अल्प नकद शुल्क किसानो को अपने खेतो की उपज को आजादी से बेचने का अधिकार। बादशाह और बैरनो ने घबराकर पहले कुछ रिआयते देने का आश्वासन दिया, जिसके चक्कर मे आकर कुछ किसान दस्ते बिखर गये और अपने घर वापस चले गये। लेकिन एक बार बादशाह के साथ आमना-सामना होने के समय वाट टाइलर की धोखे से हत्या कर दी गयी। घटनाओ ने जो मोड लिया था उसमे बेहद चिंतित होकर बैरनो ने अपनी सेनाए इकट्ठी की और बागी किसानो को निर्दयतापूर्वक

वाट टाइलर का वध

कुचल दिया। लेकिन इस तरह के विद्रोह के फिर से फूट पड़ने की संभावना फिर भी बनी ही हुई थी अतः भूस्वामी सामंत भूदास किसानों को अधिका धिक स्वतंत्रता प्रदान करते रहे और पंद्रहवीं सदी के अंत तक इंगलैंड में भूदास बिलकुल भी नहीं रह गये। तथापि उन किसानों को, जो अपनी जमीनें अब भी अपने सामंत-स्वामियों से ही पाते थे, जमीन के लिए लगान देना होता था।

गुलाबों की लड़ाइयां

इस बीच फ्रांस के साथ शतवर्षीय युद्ध चलता रहा। इस युद्ध में इंगलैंड के राजाओं ने मुख्यतः भाड़े के सैनिकों का ही सहारा लिया था, मगर उनके साथ-साथ अंग्रेज बैरन और उनके सशस्त्र अनुचर भी लड़े थे और फ्रांसीसी इलाकों की लूटमार करते हुए वे खूब मालामाल हो गये थे। कई विजयों – उदाहरण के लिए एजिनकोर्ट के युद्ध (१४१५) में विजय – के बावजूद अंग्रेजों

को अत मे फ्रास से वापस आना पडा। इसके बाद अग्रेज सामतो ने आपस म ही लडना झगडना और अपने ही देश को लूटना शुरू कर दिया। पद्रहवी शताब्दी के उत्तरार्ध मे वे दो सहबधो मे बट गये, जो दो अभिजात कुलो के समर्थन मे गोलबद हो गये थे। ये लैकास्टर कुल और यार्क कुल थे, जिनके कुलचिह्न क्रमश लाल और सफेद गुलाब थे और जो एक दूसरे से सिहासन पर अधिकार के लिए लड रहे थे। इस लडाई के दौरान शक्तिशाली बैरनो का वह वर्ग, जो राजनीतिक एकता तथा केद्रीकृत सत्ता के विरोध का मुख्य गढ बना हुआ था विघटित होने लगा। पद्रहवी शताब्दी के उत्तरार्ध मे इन दोनो कुलो का पतन हो गया और हेनरी ट्यूडर (हेनरी सप्तम) के सिहासन पर बैठने के साथ एक नये राजवश – ट्यूडर राजवश – का उदय हुआ। देश की सभी प्रगतिशील शक्तियो ने – जिनमे अभिजात वर्ग का वह हिस्सा भी शामिल था, जिसने बडे पैमाने पर भेडपालन व्यवसाय शुरू कर *दिया था और जिसे आगे चलकर बूर्जुआ वर्ग का निर्माण करना था* – मजबूत केद्रीकृत राजतत्र को सहर्ष अपना समर्थन प्रदान किया।

पद्रहवी सदी के अत तक इगलैड एक शक्तिशाली केद्रीकृत राज्य बन चुका था जो सक्रिय विदेश नीति का अनुगमन करता था और अपने पास आवश्यक साधन होने के कारण वह इस नीति को शासक वर्ग के हितो के दृष्टिकोण से सफलतापूर्वक चला सकता था। उसका पहला साधन तो यही था कि उसका शासक वर्ग अन्य यूरोपीय देशो के शासक वर्गो की अपेक्षा अधिक सुसगठित और अनुशासनबद्ध था। दूसरे, किसान समुदाय जो अब स्वतत्र था, के प्रतिनिधि सेना मे धनुर्धारियो की तरह भरती होते थे और उस समय अक्सर होते रहनेवाले युद्धो मे बहादुरी के साथ लडा करते थे। तीसरे अग्रेज भूस्वामी शासक वर्ग का व्यापार के प्रसार मे निहित स्वार्थ था जिसका मतलब यह था कि शीघ्र ही वे अलघ्य बाधाए खत्म हो गयी जो प्रमुख बर्गरो (नागरिको) के शासक वर्ग की कतारो मे प्रवश को रोकती थी या भूस्वामी अभिजातो के अपनी शक्तियो को उद्योग तथा व्यापार के क्षेत्र की तरफ मोडने मे बाधक थी। भूस्वामी अभिजातो ने अपनी जागीरो म ऊन उत्पादन करना शुरू किया और इस ऊन को फ्लैडर्स और इटली तक की मडियो म बेचकर भारी मुनाफे कमाने लगे। अग्रेज सामतो को जल्दी ही पैसेभरी थैलियो और लाभदायी उद्यमो का चस्का लग गया था और अपने फ्रासीसी समकक्षो की तुलना मे वे दक्ष उद्यमपति बन गये थे – तेरहवी सदी म ही वे सरकार द्वारा अनुसृत सफल व्यापारिक नीतियो से होनेवाले लाभो को समझने लग गये थे चाहे इन नीतियो मे युद्ध अस्थायी धक्का और वित्तीय बरबादी का भी खतरा क्यो न सन्निहित रहा हो और यह विशेषकर इसलिए था कि उनके यहा परिश्रमी और बगावतो तथा बलवो के बावजूद

सामान्यत आज्ञाकारी किसान समुदाय था। अत मे हमे राजनीतिक एकता के समूचे आर्थिक आधार को – राजनीतिक रूप मे एकीकृत भावी सयुक्त राज्य के प्रदेश पर आर्थिक सपर्को का जाल बिछाये जाने की, अर्थात आतरिक मडी के उदय की पहली मजिलो को – भी ध्यान मे रखना होगा।

फ्रास

फ्रास का एकीकरण अधिक कठिन और कष्टकर प्रक्रिया थी। यह कोरा सयोग नही है कि फ्रास को सामती राज्य का लाक्षणिक उदाहरण माना जाता था। आरभिक मध्य युग मे यही राजनीतिक विभाजना उपविभाजना ने विशेषकर गहरी जडे जमायी थी। प्रत्येक सेन्योरी अपने आप मे एक स्वतत्र आर्थिक तथा राजनीतिक इकाई थी। शार्लमानवश के राजा धीरे धीरे लगातार सत्ता और शक्ति गवाते चले गये और दसवी सदी के आते आते इस सत्ता का सिर्फ नाम ही शेष रह गया था।

नये कपेतवश के पहले बादशाह ह्यूगो कपेत को सिर्फ इसलिए सिहासन पर बैठने के लिए चुना गया था (९८७) कि वह कमजोर था और सामतो का विरोध करने मे असमर्थ था, जो शाही सत्ता की उपेक्षा करते थे। नया राजवश देश के मध्य मे ईल दे-फ्रास नामक छोटे से रजवाडे का मालिक था जहा दो नदियो – पेरिस से होकर आनेवाली सेन और ल्वार (जो ओर्लेआ होती हुई आती है) – का सगम है। लेकिन इस भौगोलिक स्थिति को ही इस रजवाडे को शीघ्र ही देश का आर्थिक केंद्र बना देना था, जिसे सारे फ्रास की राजनीतिक एकता की सिद्धि करनी थी, जिसमे फ्रेंच मूल के लोग रहा करते थे।

इस राजवश के पहले बादशाह सही अर्थो मे केवल "समेषु प्रथम" – समकक्षो मे प्रथम – ही थे जो अपने सामतो से अधिक शक्तिशाली नही, बल्कि अक्सर कमजोर ही होते थे। ये सभी छोटे बडे सामत ऊची जगहो या अभेद्य चट्टानो पर बने पत्थर के गढो मे रहा करते थे। यहा से वे अपने भूदासो तथा आश्रित किसानो पर राज करते और आपस मे लगातार लडते हुए एक दूसरे की प्रजा पर बरबादी ढाते रहते थे। कृषक जनसाधारण बहुत ही भयकर उत्पीडन के शिकार थे। उन्हे अपनी जमीन के लिए लगान भी देना होता था और बेगार भी करनी होती थी। वे अपना अनाज सिर्फ अपने सेन्योर की चक्की मे ही पिसवा सकते थे और इसके लिए उन्हे अपने अनाज का एक हिस्सा भी देना होता था, वे अपनी रोटी सिर्फ उसी की भट्टियो मे पका सकते थे और मुरा बनाने के लिए पिराई भी सिर्फ उसी के कोल्हुओ मे कर सकते थे। शहर पहुचने के लिए किसानो को सडक, पुल, हाट आदि के महसूल

जोन आफ आर्क का शिनो गढ मे आगमन

देन होते थे। सामतो न अपने किसाना का न्याय करन और उनके साथ दासो जैसा व्यवहार करने का अधिकार पा लिया था। किसान अक्सर अपने मालिको के विरुद्ध खडे हो जाते थे लेकिन उनकी बगावतो को हमेशा कुचल दिया जाता था।

बारहवी सदी के बाद से फ्रासीसी राजा धीरे धीरे अपनी सत्ता को सुदृढ करने मे सफल होन लगे। क्पेतवश (९८७ १३२८) क शासको ने शनै शनै अपनी सत्ता को मजबूत बनाया – पहले अपने ही राज के सामतो पर और उसके बाद अपने इलाको के बाहर भी। उसके बाद आनेवाले वैल्वा राजवश (१३२८ १५८९) ने फ्रासीसी प्रदेशो को ऐक्यबद्ध करने के कार्यभार को पूरा किया। इन दोनो राजवशो की सफलता का कारण फ्रास के आर्थिक विकास और फ्रासीसी समाज की बदलती हुई आवश्यकताओ मे निहित है जिसके विभिन्न हिस्स और वर्ग इम मजिल म आकर अपन देश की राजनीतिक एकता को महत्व दने लग थे।

बादशाह की सत्ता के सुदृढीकरण मे नगरो और नगरवासियो ने निर्णायक भूमिका अदा की। कारीगरो और व्यापारियो का जो अपनी बनायी चीज़

ने वदी वना लिया। दोनो ही सेनाओ के सैनिक अक्सर किसानो को लूटा करते थे। फिर युवराज शार्ल की सरकार ने राजा को मुक्त करान के लिए मुक्ति धन जुटाने के वास्ते उनपर भारी कर भी लगाये। इन सभी बातो ने जनसाधारण मे गहरा असतोप पैदा कर दिया। पेरिस की रहनुमाई मे उत्तरी नगरो ने माग की कि युवराज सत्ता स्टेट्स जनरल (महापरिषद)* के सुपुर्द कर दे और जब युवराज ने उसे भग करने की कोशिश की तो पेरिस मे बलवा हो गया, जिसका नेता एत्येन मार्सेल नामक धनी वजाज था। उत्तरी नगरो के विद्रोह के बाद एक कृपक विद्रोह भी हुआ (१३५८)। यह विद्रोह जाकेरी विद्रोह के नाम से ज्ञात है। विद्रोह सिर्फ दो हफ्ते ही चला मगर वह देश के छठे भाग पर फैल गया था। यह घृणा का स्वत स्फूर्त सैलाब था—लूट और भारी करो के वोझ से क्रोधोमत्त हुए किसानो ने सभी सामतो को चुन चुनकर मार डालने की धमकी दी। उन्होने सामतो के गढो और हवेलियो को जलाकर खाक मे मिला दिया और उनमे रहनेवालो को मार डाला। सामतो ने जल्दी ही अपने भय पर काबू पा लिया और बगावत को कुचल दिया। फिर भी इस विद्रोह ने महत्वपूर्ण परिणाम पैदा किय—पद्रहवी शताब्दी के अत तक भूदासता लगभग अतीत की चीज बन चुकी थी।

फ्रासीसी जनसाधारण, जो अग्रेजो और अपने सामतो, दोनो की लूट से त्रस्त थे, विदेशी आक्रमणकारियो के खिलाफ उठ खडे हुए। जोन आफ आर्क (जान द'आर्क) नामक कृपकबाला ने जिसे यह विश्वास था कि ईश्वर ने उस अपने देश की रक्षा करने और बादशाह की सहायता करन के लिए ही भेजा है, फ्रासीसी सेना का नेतृत्व करके घेरे मे पडे ओर्लेआ नगर का उद्धार कर लिया। उसन अग्रेजो को कई माते दी। इसके बाद वह सारे ही देश को अग्रज शत्रुओ से मुक्त करवाने की तैयारिया करन लगी लेकिन एक लडाई मे उमे वर्गडिया न जो अग्रेजो के मित्र थे वदी बनाकर आक्रमणकारियो के हवाले कर दिया। अग्रेजो न जोन पर शैतान के साथ सपर्क रखने का आरोप लगाकर खभे से बाधकर ज़िदा जला दिया (१४३१)। फिर भी फ्रासीसी जनता ने १४५३ तक अपने सारे देश का उद्धार कर लिया और कुछ ही बाद, लुई एकादश के शासनकाल (१४६१ १४८३) मे देश का पूर्ण राजनीतिक एकीकरण सपन्न कर लिया गया।

---

*स्टेटस जनरल—फ्राम की एक श्रेणीगत प्रतिनिधिक सस्था थी जो १३०२ मे अस्तित्व मे आयी थी।
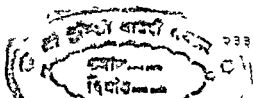
अन्य यूरोपीय राज्यो का उदय

पंद्रहवी सदी यह काल है, जिसमे फ्रांस और इंगलैंड के अलावा कई और छोटे बड़े यूरोपीय राज्यो का भी राजनीतिक एकीकरण हुआ। यह एकीकरण क्रमिक आर्थिक सुदृढ़ीकरण के आधार पर संभव हुआ था। पश्चिमी यूरोप मे एक शक्तिशाली स्पेनी राज्य का उदय हुआ, उत्तर मे तीन स्कडानेवी राज्य – डेनमार्क नार्वे और स्वीडन तथा पूर्व मे अनेक स्लाव राज्य – पोलैंड बोहेमिया और महान मास्को राज्य पैदा हो गये। दक्षिणी स्लाव देश जिन्होने तेरहवी से चौदहवी शताब्दियो के दौरान रूप लिया था (सर्बिया और बुल्गारिया) पंद्रहवी शताब्दी के अंत मे तुर्कों के आधिपत्य मे थे।

तुर्की

सोलहवी सदी से लेकर अठारहवी सदी तक तुर्की यूरोप के सबसे शक्तिशाली राज्यो मे एक था जिसका आसपास के सभी देशो और लोगो पर आतंक छाया हुआ था। चौदहवी सदी मे तुर्कों ने बाल्कन प्रायद्वीप को जीत लिया और १४५३ मे उन्होने कुस्तुनतुनिया को सर करके बैज़ंतिया के सारे इलाके को अपने अधीन कर लिया। वे अपनी अधीनस्थ जातियो को भारी खिराज देने के लिए मजबूर करते थे और पूरे के पूरे शहरो तथा गावो को उजाड़कर उनके निवासियो को बंदी बनाकर गुलामो की तरह बेच देते थे। इस तरह तुर्क इन अधीनस्थ जातियो को कंगाली के गर्त मे धकेल देते थे और उनके आर्थिक विकास के स्वाभाविक क्रम मे बाधा डालते थे।

इटली मे राजनीतिक अनैक्य

इतालवी और जर्मन ये दो जातिया विभिन्न यूरोपीय देशो मे चल रही आतरिक एकीकरण के रोचक अपवाद पेश करती हैं – वे पंद्रहवी शताब्दी के बाद भी सैकडो सालो तक राजनीतिक दृष्टि से अपने को ऐक्यबद्ध नही कर सकी।

इतालवी लोग रोमनो और पाचवी छठी सदियो मे एपेनाइन प्रायद्वीप पर कब्जा जमानेवाले जर्मनीय कबीलो – ओस्त्रोगोथो और विशेषकर लबार्डो – के वंशज थे। प्राचीन रोमन व्यापार मार्गो का उपयोग करते हुए इतालवियो ने दसवी शताब्दी मे ही पूर्व के साथ व्यापार की बहाली कर ली थी और इसके बाद शेष यूरोप के साथ व्यापक व्यापारिक संपर्क कायम करके और
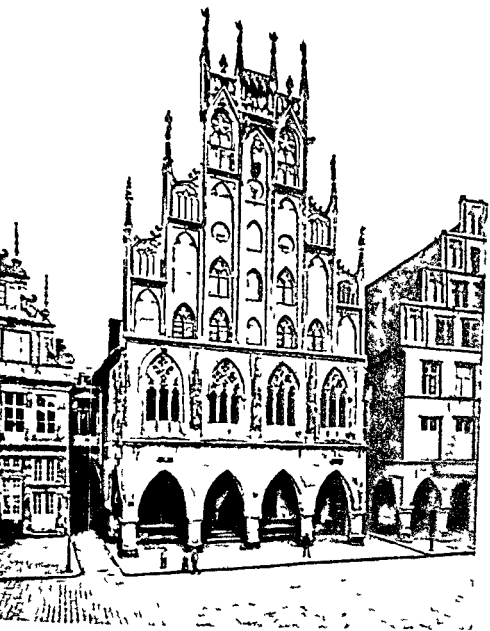
म्यूनस्टर का टाउनहाल (जर्मनी) , १४ वीं सदी

यूरोप के धनी सामंतो को पूर्व की मूल्यवान विलास वस्तुए (सोना, हाथी दात जरी इत्र और सुगंधिया) बेचकर भारी मुनाफे कमाने लगे थे। इस व्यापार के नतीजे के तौर पर इटली मे कई बडे व्यापारिक नगर पैदा हो गये। इन नगरो की खुशहाली की बुनियाद मे सिर्फ पूर्व तथा पश्चिमी यूरोप के बीच व्यापार सूत्र के नाते उनकी भूमिका ही नही, बल्कि इतालवी माल- वेनिस के काच और बिल्लौर, मिलान के धातु के सामान और फ्लारेंस के ऊन तथा रेशम-का व्यापार भी था। इन नगरो के योग्य व्यापारियो ने शीघ्र ही विनिमय की वस्तुओ के लिए स्थानीय उद्योग की तरफ ध्यान दिया और ऐसा करके उन्होने उसके विकास मे योग दिया। चौदहवी सदी के इटली मे ही पहले बडे पैमाने के पूजीवादी उद्यम पैदा हुए थे।

हम पहले ही देख चुके है कि किस तरह इगलैड और उसमे भी अधिक फ्रास जैसे देशो मे राष्ट्रीय आर्थिक एकता के समर्थक नगरवासी राजाओ के सबसे महत्वपूर्ण सहायक थे क्योकि राजा अपने देशो को शक्तिशाली केद्रीकृत राजतत्रो के रूप मे सुदृढ करना चाहते थे। ऐसा लग सकता है कि इटली को जहा व्यापार और औद्योगिक केद्र फूल फल रहे थे, यूरोप के अन्य देशो की बनिस्बत कही पहले सयुक्त केद्रीकृत देश मे विकसित हो जाना चाहिए था। लेकिन ऐसा नही हो पाया और इसका कारण इसी देश द्वारा अनुसृत आर्थिक विकास के पथ मे खोजा जा सकता है।

इटली के प्रमुख व्यापारिक नगरो ने मूलत मूल्यवान पूर्वी माल पश्चिम को बेचने के लिए व्यापारिक केद्रो के रूप मे प्रमुखता प्राप्त की थी। लेकिन स्वय इटली मे ही नानासख्य किसान कगाली की जिदगी जी रहे थे और इसलिए इस तरह की चीजे खरीद पाना उनकी हैसियत के बाहर था, जिन्हे अत मे यूरोप भर के धनी सामत खरीदा करते थे। पूर्व मे इन चीजो की खरीद और पश्चिम मे उनकी बिक्री के बारे मे इतालवी नगरो मे जबरदस्त प्रतिद्वद्विता थी। इसका फैसला उन्होने इटली की सरजमीन पर किया - उत्तरी नगरो ने दक्षिणी शहरो को बाजार मे खदेड दिया और उनके कार्यकलाप को लगभग पूरी तरह से बद कर दिया। पूरी दो सदी तक वेनिस पूर्व के साथ व्यापार के एकाधिकार के लिए जेनोवा से मुकाबला करता रहा और कुछ ही बाद फ्लोरेस ने अपने जबरदस्त प्रतिद्वद्वी पीसा को पराभूत कर दिया। एक नगर द्वारा दूसरे को वश मे लाने के हर प्रयास को जालिमाना कारनामा समझा जाता था। इटली में ऐसे कोई भूस्वामी सामत नही थे कि जो देश के राजनीतिक एकीकरण का सवर्धन करने की स्थिति मे होते। प्रायद्वीप मे एकमात्र बडी सत्ता देश के केद्र - रोम नगर - मे थी जो पोप का था और जिसे सिर्फ एक ही बात का डर था - कही कोई सामत इतना शक्तिशाली न हो जाये कि स्वय उसे (पोप को) ही आदेश देने लगे। इसीलिए सैकडो साल तक पोप की सत्ता

देश की राजनीतिक एकता के मार्ग मे एक सबसे बडी बाधा बनी रही। इटली उन्नीसवी शताब्दी के उत्तराध तक एकता नही प्राप्त कर सका।

कई इतालवी नगर स्वतत्र गणराज्य थे जिनके सामत उनके शासक थे और जिनके नागरिको की देश के राजनीतिक एकीकरण मे लेशमात्र भी दिलचस्पी नही थी। इसके परिणामस्वरूप इटली को अक्सर अपन अधिक ऐक्यबद्ध और इसलिए अधिक शक्तिशाली पडोसियो के हमलो का शिकार होना पडा। दसवी शताब्दी के बाद से उसे अक्सर जर्मन सामतो के हमलो को झेलना पडा और तेरहवी सदी मे फ्रासीसी सामत भी उस पर आक्रमण करने लगे। सोलहवी शताब्दी मे इटली स्पेनियो के हाथो म पड गया ओर इसके बाद सत्रहवी सदी से लेकर उन्नीसवी सदी क मध्य तक वह आस्ट्रियाई जूए के नीचे पडा तडफडाता रहा।

नगरो का उदय
बारहवीं से
पद्रहवीं शताब्दियो के बीच
जर्मन सामाजिक तथा आर्थिक विकास
के विशिष्ट लक्षण

जमन जनता की हालत भी कोई कम मुश्किल न थी। जर्मनी – या जैमाकि तब उसका नाम था पवित्र रोमन साम्राज्य – म कोई राजनीतिक केंद्र नही पैदा हुआ था। सच तो यह है कि इस तरह की प्रक्रिया की पूर्वापेक्षाए ही अविद्यमान थी यद्यपि देश की अर्थव्यवस्था उसका तकाजा करती थी। साम्राज्य का ढाचा ही ऐसा था कि उसका एक ऐक्यबद्ध समष्टि बनना असभव था। उसकी आबादी अत्यधिक विविधतामयी थी – बीच म जर्मन पश्चिम मे फ्रासीसी, दक्षिण मे इतालवी दक्षिण पूर्व म विभिन्न स्लाव जातिया और उत्तर पूर्व मे लिथुआनी फिन और स्लाव। जमन स्वय धार्मिक प्रभुओ और ऐहिक सामतो के नीच असख्य रजवाडो मे बटे हुए थे जिनको आपस मे जोडनवाले कोइ सामान्य हित नही थे अलबत्ता एक सामान्य लक्ष्य अवश्य था और वह था केंद्रीय सत्ता के किसी भी भावी सुदृढीकरण को रोकना। केंद्रीय सत्ता का प्रतिनिधित्व सम्राट या कैसर (काईज़ेर) करता था जो अपन रोबदार खिताब और सभी राजाओ से बडा होने के अतहीन दावो क बावजूद वस्तुत निर्बल और अपने ही सामतो के सामने भी शक्तिहीन था।

जर्मन नगर जो शेष यूरोप के नगरो के मुकाबले धीमी गपत मे विकसित हुए थे और इसलिए उनमे कमजोर भी थे इस योग्य नही थे कि ब्रिटिश

यूरोप के धनी सामंतों को पूर्व की मूल्यवान विलास वस्तुएं (सोना, हाथी दांत, जरी, इतर और सुगंधियां) बेचकर भारी मुनाफे कमाने लगे थे। इस व्यापार के नतीजे के तौर पर इटली में कई बड़े व्यापारिक नगर पैदा हो गये। इन नगरों की खुशहाली की बुनियाद में सिर्फ पूर्व तथा शेष यूरोप के बीच व्यापार सूत्र के नाते उनकी भूमिका ही नहीं, बल्कि इतालवी माल- वेनिस के कांच और बिल्लौर, मिलान के धातु के सामान और फ्लारेंस के ऊन तथा रेशम-का व्यापार भी था। इन नगरों के योग्य व्यापारियों ने शीघ्र ही विनिमय की वस्तुओं के लिए स्थानीय उद्योग की तरफ रुख किया और ऐसा करके उन्होंने उसके विकास में योग दिया। चौदहवीं सदी के इटली में ही पहले बड़े पैमाने के पूंजीवादी उद्यम पैदा हुए थे।

हम पहले ही देख चुके हैं कि किस तरह इंगलैंड और उससे भी अधिक फ्रांस जैसे देशों में राष्ट्रीय आर्थिक एकता के समर्थक नगरवासी राजाओं के सबसे महत्वपूर्ण सहायक थे, क्योंकि राजा अपने देशों को शक्तिशाली केंद्रीकृत राजतंत्रों के रूप में सुदृढ़ करना चाहते थे। ऐसा लग सकता है कि इटली को, जहां व्यापार और औद्योगिक केंद्र फूल फल रहे थे, यूरोप के अन्य देशों की बनिस्बत कहीं पहले संयुक्त केंद्रीकृत देश में विकसित हो जाना चाहिए था। लेकिन ऐसा नहीं हो पाया और इसका कारण इसी देश द्वारा अनुसृत आर्थिक विकास के पथ में खोजा जा सकता है।

इटली के प्रमुख व्यापारिक नगरों ने मूलतः मूल्यवान पूर्वी माल पश्चिम को बेचने के लिए व्यापारिक केंद्रों के रूप में प्रमुखता प्राप्त की थी। लेकिन स्वयं इटली में ही नानासंख्य किसान कंगालों की जिंदगी जी रहे थे और इसलिए इस तरह की चीजें खरीद पाना उनकी हैसियत के बाहर था, जिन्हें अंत में यूरोप भर के धनी सामंत खरीदा करते थे। पूर्व में इन चीजों की खरीद और पश्चिम में उनकी बिक्री के बारे में इतालवी नगरों में जबरदस्त प्रतिद्वंद्विता थी। इसका फैसला उन्होंने इटली की सरजमीन पर किया-उत्तरी नगरों ने दक्षिणी शहरों को बाजार से खदेड़ दिया और उनके कार्यकलाप को लगभग पूरी तरह से बंद कर दिया। पूरी दो सदी तक वेनिस पूर्व के साथ व्यापार के एकाधिकार के लिए जेनोवा से मुकाबला करता रहा और कुछ ही बाद फ्लोरेंस ने अपने जबरदस्त प्रतिद्वंद्वी पीसा को पराभूत कर दिया। एक नगर द्वारा दूसरे को वश में लाने के हर प्रयास को जालिमाना कारनामा समझा जाता था। इटली में ऐसे कोई भूस्वामी सामंत नहीं थे कि जो देश के राजनीतिक एकीकरण का संवर्धन करने की स्थिति में होते। प्रायद्वीप में एकमात्र बड़ी सत्ता देश के केंद्र-रोम नगर-में थी, जो पोप का था और जिसे सिर्फ एक ही बात का डर था-कहीं कोई सामंत इतना शक्तिशाली न हो जाये कि स्वयं उसे (पोप को) ही आदेश देने लगे। इसीलिए सैकड़ों साल तक पोप की सत्ता

देश की राजनीतिक एकता के मार्ग मे एक सबसे बडी बाधा बनी रही। इटली उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्ध तक एकता नही प्राप्त कर सका।

कई इतालवी नगर स्वतंत्र गणराज्य थे जिनके सामत उनके शासक थे और जिनके नागरिको की देश के राजनीतिक एकीकरण म लेशमात्र भी दिलचस्पी नही थी। इसके परिणामस्वरूप इटली को अक्सर अपन अधिक ऐक्यबद्ध और इसलिए अधिक शक्तिशाली पडोसियो के हमलो का शिकार होना पडा। दसवी शताब्दी के बाद से उसे अक्सर जर्मन सामतो के हमलो को झेलना पडा और तेरहवी सदी से फ्रासीसी सामत भी उस पर आक्रमण करन लगे। सोलहवी शताब्दी मे इटली स्पेनियो के हाथो मे पड गया और इसके बाद सत्रहवी सदी से लेकर उन्नीसवी सदी के मध्य तक वह आस्ट्रियाई जूए के नीचे पडा तडफडाता रहा।

नगरो का उदय
बारहवीं से
पद्रहवीं शताब्दियो के बीच
जर्मन सामाजिक तथा आर्थिक विकास
के विशिष्ट लक्षण

जर्मन जनता की हालत भी कोई कम मुश्किल न थी। जर्मनी – या जैसाकि तब उसका नाम था, पवित्र रोमन साम्राज्य – म कोई राजनीतिक केंद्र नही पैदा हुआ था। सच तो यह है कि इस तरह की प्रक्रिया की पूर्वापेक्षाए ही अविद्यमान थी यद्यपि देश की अर्थव्यवस्था उसका तकाजा करती थी। साम्राज्य का ढाचा ही ऐसा था कि उसका एक ऐक्यबद्ध समष्टि बनना असभव था। उसकी आबादी अत्यधिक विविधतामयी थी – बीच म जर्मन पश्चिम म फ्रासीसी, दक्षिण मे इतालवी दक्षिण पूर्व मे विभिन्न स्लाव जातिया और उत्तर-पूर्व म लियुआनी फिन और स्लाव। जर्मन स्वय धार्मिक प्रभुओ और ऐहिक सामतो के नीच असख्य रजवाडो मे बटे हुए थ जिनको आपस मे जोडनेवाले कोई सामान्य हित नही थे, अलबत्ता एक सामान्य तथ्य अवश्य था और वह था केद्रीय सत्ता के किसी भी भावी सुदृढीकरण का रोकना। केद्रीय सत्ता का प्रतिनिधित्व सम्राट या कैसर (काईजर) करता था, जो अपन रौबदार खिताब और सभी राजाओ म बडा होन के अतहीन दावो के बावजूद वस्तुत निर्बल और अपन ही सामतो के सामन भी शक्तिहीन था।

जर्मन नगर जो शेष यूरोप के नगरो के मुकाबले धीमी गति स विकसित हुए थ और इसलिए उनसे कमजोर भी थ इस योग्य नही थ कि ब्रिटिश

या फ्रांसीसी नगरों जैसी भूमिका का निर्वहन कर सके। जर्मन नगर और विशेषकर उत्तर तथा दक्षिण-पश्चिम के नगर, इतालवी नगरों की भांति अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मार्गों के अंतर्वर्ती केंद्र ही थे।

'हांजे' व्यापार संघ

बाल्टिक सागर के तट पर और उसमें जाकर गिरनेवाली नदियों के किनारे स्थित जर्मन नगर पश्चिमी और पूर्वी यूरोप के देशों के साथ खूब जोरदार व्यापार किया करते थे। इन नगरों ने मिलकर अपने एक व्यापार संघ – 'हांजे' की स्थापना की। उनके समुद्री बेड़े पूर्व से खाले, समूरी चाम, लिनन और फ्लैक्स के बीज पश्चिम ले जाते थे और पश्चिम से वे फ्लैंडर्स से ऊनी और अन्य वस्त्रों जैसे सामान लाया करते थे। ये नगर देश के अन्य भागों से ज्यादा संपर्क नहीं रखते थे, क्योंकि उन्हें सिर्फ एक ही डर था कि कहीं जर्मन सामंत लूटने के लिए उन पर हमले न करवा दें। इस डर के कारण ही उन्होंने अपना संघ बनाया था और अपने निजी बेड़े और सेनाओं की स्थापना की थी। हांजे का केंद्र ल्यूबेक नगर था। पश्चिम में लंदन से लेकर पूर्व में नोवगोरोद तक हर राज्य में इस संघ का प्रतिनिधित्व करनेवाले प्रमुख व्यापारिक केंद्र थे। तेरहवीं-चौदहवीं सदियों में अपने चरमोत्कर्ष के दौर में यह संघ डेनमार्क जैसे एक पूरे के पूरे देश भी से टकराया था और इस संघर्ष से हांजे विजयी बनकर ही निकला। यहां तक कि डेनिश राजा भी हांजे के अनुमोदन से ही चुने जा सकते थे।

उत्तर की भांति दक्षिण-पश्चिमी जर्मनी के बड़े नगर भी मुख्यतः पूर्व और पश्चिम के बीच व्यापार सूत्रों के रूप में ही विकसित हुए। आगे चलकर चौदहवीं शताब्दी में उन्होंने अपने यहां बनी चीजों, मुख्यतया वस्त्रों का व्यापार भी करना शुरू कर दिया। उत्तरी नगरों की ही भांति उनका भी देश के शेष भागों के आर्थिक जीवन से अधिक संबंध नहीं था और वे अपनी आजादी तथा स्वाधीनता को स्थानीय राजाओं और सामंतों से बचाये रखने की कोशिश करते थे। उनके विरुद्ध अपने संघर्ष में उन्होंने भी मिलकर संघ बना लिये, क्योंकि वे सम्राट तथा केंद्रीय सत्ता से किसी भी प्रकार की सहायता पर निर्भर नहीं कर सकते थे।

किसी भी अन्य देश में भूस्वामी सामंतों के दबदबे और स्वच्छंदता ने इतना जोर नहीं प्राप्त किया था जितना कि ग्यारहवीं से पंद्रहवीं सदी के दौरान जर्मनी में। लगातार कमजोर होती केंद्रीय सत्ता को इन "अभिजात डाकुओं" के हितों के अनुकूल नीतियां अपनानी पड़ीं और उनकी लूट-खसोट की बुभुक्षा को तृप्त करने के लिए दूसरे देशों के विरुद्ध आक्रामक अभियान संगठित करने पड़े।

इतालवी युद्ध

दसवी शताब्दी के बाद मे जर्मन बादशाहो ने इटली पर जो उनके अपने प्रदेशो से कही अधिक धनवान था बारबार आक्रमण किये ताकि पोप को इस बात के लिए विवश कर सके कि वह उन्हे पवित्र रोमन सम्राट का पद और राजमुकुट प्रदान करे। इटली की सिलसिलेवार लूट के फलस्वरूप जर्मन सामतो की तिजोरियो मे दौलत भरती गयी और शाही सत्ता के विरुद्ध सघर्ष मे उनकी शक्ति बढती गयी। बारहवी शताब्दी के बाद जब उत्तरी इटली के नगर अधिक शक्तिशाली हो गये और कारगर प्रतिरोध करने मे समर्थ हो गये, तो जर्मन नाइटो ने अपने ध्यान को पूर्व की ओर मोडना शुरू कर दिया।

पूर्व की ओर अग्रसरण

ट्यूटानी नाइटो के धर्मसघ (आर्डर) ने लिथुआनिया मे प्रशियाई कबीलो की जमीनो को दबोच लिया और स्थानीय आबादी का लगभग पूरी तरह से सफाया कर दिया। जो लोग बचे रह गये, उन्हे गुलाम बना लिया गया। इसके बाद सेना ने पूर्व की ओर कूच किया और पूर्वी बाल्टिक देशो – लाटविया तथा एस्तोनिया – के निवासियो को अपने अधीन किया। उनके आक्रमण काफिरो के बीच ईसाई धर्म के प्रचार के परचम तले किये गये थे (यद्यपि उनके जूए के नीचे आनेवाले ज्यादातर लोग पहले से ही ईसाई थे) और क्रूरता मे तो उन्होने सभी सीमाओ को पार कर दिया था। तत्कालीन इतिहासकारो ने पूरे के पूरे गावो के उजाड दिये जाने खडी फसलो के जला दिये जाने और आबाल वृद्ध नर नारियो के अतहीन कत्ले आम के बारे मे लिखा है।

इसमे कोई सदेह नही कि इन स्वघोषित सच्ची ईसाई सस्कृति के वाहको को अगर बीच मे ही रूसी राजा अलेक्सादर नेव्स्की ने न रोक दिया होता और उसके हाथो उन्हे जमी हुई चूदस्कोये झील (पाइपस झील) पर ५ अप्रैल १२४२ को कमरतोड मात न खानी पडी होती तो वे पूर्व मे और आगे बढते चले गये होते और रूस मे गहराई तक घुस गये होते।

दो सौ साल बाद, १४१० मे पोलो और लिथुआनियो ने स्मोलेन्स्क राज की सेनाओ के साथ ग्रियूनवाल्ड (पूर्वी प्रशिया) की लडाई मे ट्यूटानी नाइटो को एक और करारी मात दी जिसके बाद स्वतत्र चर्च शक्ति के रूप मे इस धर्मसघ का अस्तित्व समाप्त हो गया।

या फ्रांसीसी नगरों जैसी भूमिका का निर्वहन कर सके। जर्मन नगर और विशेषकर उत्तर तथा दक्षिण पश्चिम के नगर, इतालवी नगरों की भांति अंतराष्ट्रीय व्यापार मार्गों के अंतर्वर्ती केंद्र ही थे।

'हान्से' व्यापार संघ

बाल्टिक सागर के तट पर और उसमें जाकर गिरनेवाली नदियों के किनारे स्थित जर्मन नगर पश्चिमी और पूर्वी यूरोप के देशों के साथ खूब जोरदार व्यापार किया करते थे। इन नगरों ने मिलकर अपने एक व्यापार संघ – हान्जे की स्थापना की। उनके समुद्री बेड़े पूर्व से खाल, समूरी खाल, लिनन और फ्लैक्स के बीज पश्चिम ले जाते थे और पश्चिम से वे फ्लैंडर्स से ऊनी और अन्य वस्त्रों जैसे सामान लाया करते थे। ये नगर देश के अन्य भागों से ज्यादा संपर्क नहीं रखते थे क्योंकि उन्हें सिर्फ एक ही डर था कि कहीं जर्मन सामंत लूटने के लिए उन पर हमले न करवा दें। इस डर के कारण ही उन्होंने अपना संघ बनाया था और अपने निजी बेड़े और सेनाओं की स्थापना की थी। हान्जे का केंद्र ल्यूबेक नगर था। पश्चिम में लन्दन से लेकर पूर्व में नोवगोरोद तक हर राज्य में इस संघ का प्रतिनिधित्व करनेवाले प्रमुख व्यापारिक केंद्र थे। तेरहवीं चौदहवीं सदियों में, अपने चरमोत्कर्ष के दौर में यह संघ डेनमार्क जैसे एक पूरे के पूरे देश भी से टकराया था और इस संघर्ष में हान्जे विजयी बनकर ही निकला। यहां तक कि डेनिश राजा भी हान्जे के अनुमोदन से ही चुने जा सकते थे।

उत्तर की भांति दक्षिण पश्चिमी जर्मनी के बड़े नगर भी मुख्यतः पूर्व और पश्चिम के बीच व्यापार सूत्रों के रूप में ही विकसित हुए। आगे चलकर चौदहवीं शताब्दी में उन्होंने अपने यहां बनी चीजों, मुख्यतया वस्त्रों का व्यापार भी करना शुरू कर दिया। उत्तरी नगरों की ही भांति उनका भी देश के शेष भागों के आर्थिक जीवन से अधिक संबंध नहीं था और वे अपनी आजादी तथा स्वाधीनता को स्थानीय राजाओं और सामंतों से बचाये रखने की कोशिश करते थे। उनके विरुद्ध अपने संघर्ष में उन्होंने भी मिलकर संघ बना लिये, क्योंकि वे सम्राट तथा केंद्रीय सत्ता से किसी भी प्रकार की सहायता पर निर्भर नहीं कर सकते थे।

किसी भी अन्य देश में भूस्वामी सामंतों के दबदबे और स्वच्छंदता ने इतना जोर नहीं प्राप्त किया था जितना कि ग्यारहवीं से पंद्रहवीं सदी के दौरान जर्मनी में। लगातार कमजोर होती केंद्रीय सत्ता को इन 'अभिजात' डाकुओं के हितों के अनुकूल नीतियां अपनानी पड़ीं और उनकी लूट खसोट की बुभुक्षा को तृप्त करने के लिए दूसरे देशों के विरुद्ध आक्रामक अभियान संगठित करने पड़े।

इतालवी युद्ध

दसवी शताब्दी के बाद से जर्मन बादशाहो ने इटली पर जो उनक अपने प्रदेशो से कही अधिक धनवान था, बारबार आक्रमण किये तानि पोप को इस बात के लिए विवश कर सके कि वह उन्हे पवित्र रोमन सम्राट का पद और राजमुकुट प्रदान करे। इटली की सिलसिलेवार लूट के फलस्वरूप जर्मन सामतो की तिजोरियो म दौलत भरती गयी और शाही सत्ता के विरुद्ध सघष मे उनकी शक्ति बढती गयी। बारहवी शताब्दी के बाद जब उत्तरी इटली के नगर अधिक शक्तिशाली हो गये और कारगर प्रतिरोध करन म समर्थ हो गये, तो जर्मन नाइटो ने अपने ध्यान को पूर्व की ओर मोडना शुरू कर दिया।

पूर्व की ओर अग्रसरण

ट्यूटानी नाइटो के धर्मसघ (आडर) न लिथुआनिया म प्रशियाई कबीलो की जमीनो को दबोच लिया और स्थानीय आबादी का लगभग पूरी तरह से सफाया कर दिया। जो लोग बचे रह गये उन्ह गुलाम बना लिया गया। इसके बाद सेना ने पूव की ओर कूच किया और पूर्वी बाल्टिक देशो – लाटविया तथा एस्तोनिया – के निवासियो को अपन अधीन किया। उनके आक्रमण काफिरो के बीच ईसाई धम के पचार के परचम तले किय गये थे (यद्यपि उनके जूए क नीचे आनवाले ज्यादातर लोग पहले स ही ईसाई थे) और क्रूरता मे तो उन्होन सभी सीमाओ को पार कर दिया था। तत्कालीन इतिहासकारो ने पूरे के पूरे गावो क उजाड दिये जाने, खडी फसलो के जला दिये जाने और आबाल वृद्ध नर-नारियो के अनहीन कत्ले आमो के बारे म लिखा है।

इसम कोई सदेह नही कि इन स्वघोपित सच्ची ईसाई सस्कृति के वाहको को अगर बीच मे ही रूसी राजा अलेक्सादर नेव्स्की न न रोक दिया होता और उसके हाथो उन्ह जमी हुई चूदस्कोये झील (पाइपस झील) पर ५ अप्रैल १२४२ को कमरतोड मात न खानी पडी होती तो वे पूर्व मे और आगे बढते चले गये होते और रूस म गहराई तक घुस गये होते।

दो सौ साल बाद १४१० म, पोलो और लिथुआनियो न स्मोलस्क राज की सेनाओ के साथ ग्रियूनवाल्ड (पूर्वी प्रशिया) की लडाई म ट्यूटानी नाइटो को एक और करारी मात दी जिसके बाद स्वतत्र सच शक्ति के रूप म इस धर्मसघ का अस्तित्व समाप्त हो गया।

लेकिन इस लूटमार के नतीजे जर्मनी के लिए विनाशक सिद्ध हुए। इटली की सिलसिलेवार लूट और पूर्व मे उस प्रदेश मे, जो बाद म पूर्वी प्रशा के नाम मे विज्ञात हुआ, सामतो की उत्कर्षमान शक्ति न सम्राट तथा केंद्रीय सरकार की सत्ता को और भी कमजोर किया। पडोसी शक्तियो क विरुद्ध इस निरतर आक्रमकता ने जर्मनी के लिए राजनीतिक एकता की किसी भी आशा या सभावना पर पानी फेर दिया। शीघ्र ही शाही सत्ता किसी भी प्रकार के वास्तविक महत्व से रहित प्रतीक मात्र बनकर रह गया। इधर अलग-अलग सामतो की सत्ता का उत्कर्ष होता गया और उन्होंने सम्राट से अपनी स्वतत्रता का वैधानिक अनुमोदन तक कराने का प्रयास किया। १३५६ म सम्राट कार्ल चतुर्थ के 'स्वर्ण आदेशपत्र' (गोल्डन बुल) ने अधिक शक्तिशाली सामतो (जर्मन राजाओ) की राजनीतिक स्वतत्रता तथा सम्राट को चुनने के उनके अधिकार को मान्यता प्रदान की और उन्हें विभिन्न विशेषाधिकार भी दिये। नगरो के बीच सहबधो को वर्जित कर दिया गया लेकिन अलग अलग सामतो के बीच लडाइयो पर कोई पाबदी न लगायी गयी। जर्मनी शब्दश छोटे छोटे रजवाडो मे विघटित हो गया। अन्यजनों की लूटमार तथा उनके साथ हिंसक दुर्व्यवहार की शतवर्षीय परपरा मे पोषित जर्मन सामतो ने बाद मे उभरकर सामने आनेवाली युकर मनोवृत्ति और उसकी विशेषकर बीभत्स अभिव्यक्ति – प्रशियाई सैन्यवाद – के बीज बोये।

ग्यारहवीं से पद्रहवीं सदियो का बोहीमिया। हुसपथी युद्ध

पवित्र रोमन साम्राज्य के सरचको मे कई जर्मन राज्यो के अलावा बोहीमिया (चेक) राज्य भी था। ग्यारहवी सदी मे ही जर्मन सम्राटो ने बोहीमियाई राजाओ को शाही उपाधि प्रदान कर दी थी और धीरे-धीरे बोहीमिया एक लगभग स्वतत्र देश बन गया था। यह साम्राज्य का सबसे धनी इलाका था जहा उद्योग और व्यापार का तेजी से विकास हुआ था, अनेक मूल्यवान खनिजो का खनन किया जाता था और खुशहाल शहर थे। लेकिन नगरो ने अभी कोई महत्वपूर्ण राजनीतिक भूमिका का निर्वहन करना शुरू नहीं किया था, क्योकि बोहीमियाई सेईम (ससद) मे निर्णायक आवाज़ धर्माधिकारियो और सामतो की ही थी। सारे देश के जीवन पर प्रबल जर्मन प्रभाव पडा था। बोहीमिया एक जर्मन उपनिवेश जैसा ही था। जर्मनों द्वारा उस देश मे लाये गये ईसाई धर्म को स्वीकार कर लेने के बाद बोहीमिया ने परती जमीन के बडे-बडे टुकडे जर्मन मठो को दे दिये थे जिसके बाद उस पर जर्मन किसानो को लाकर आबाद किया गया था। बोहीमिया

जर्मन महतो और विभिन्न जर्मन धर्मसघो तथा सैनिक सामती मघो के प्रतिनिधियो की भरमार हो गयी थी। जर्मन लोग – धनी सामत पादरी खदानो के मालिक और नगरो के उच्चाधिकारी अधिक्तर शासक वर्ग के सदस्य थे। बोहीमिया ने राजनीतिक उत्कर्ष का चरम कार्ल चतुर्थ के शासन काल म प्राप्त किया था, जिसने उस अपने साम्राज्य का लगभग केंद्र ही बना दिया था।

चौदहवी शताब्दी के अत तक बोहीमिया मे हितो के अतर्विरोध असमाधेय हो चुके थे। चेक बर्गर (नगरवासी), नाइट और छोटे सामत जर्मन धर्माधिकारियो तथा भूस्वामियो के प्राधान्य का विरोध करने लगे। इस क्रातिकारी विरोध का मुख्य आधार चेक कृपक समुदाय था, जो अपने को सामती शापण और कैथोलिक चर्च के प्रभुत्व से आजाद करना चाहता था। इस प्रकार सामाजिक तथा राष्ट्रीय प्रश्न आपस मे गुथे हुए थे और उन्होने अपने को जल्दी ही एक धार्मिक आदोलन मे अभिव्यक्त किया। पद्रहवी शताब्दी के बोहीमिया का शक्तिशाली क्रातिकारी आदोलन इतिहास मे हुसपथी युद्धो के नाम से जाना जाता है। उन्ह अपना नाम प्राग विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर, यान हुस (१३७१-१४१५) से प्राप्त हुआ, जिसने पोपशाही का विरोध किया था चर्च मे सुधारो की माग की थी और कैथोलिक पादरी पुरोहित वर्ग के भ्रष्टाचार का परदाफाश किया था। १४१५ मे उसे कोंस्तास की चर्च परिषद मे बुलाया गया। सम्राट सिगसमुद द्वारा उसे प्रदत्त अभयपत्र की उपेक्षा करके उसे जिदा जला दिया गया। हुस की मृत्यु बोहीमिया मे विद्रोह के फूट पडने का सकेत बन गयी। सबसे भयकर लडाइया देश के दक्षिणी भाग मे लडी गयी, जहा जनव्यापी बगावते हो गयी थी। हुसपथियो के आमूलवादी पक्ष का केंद्र तबोर नगर था। तबोर निवासियो की क्रातिकारी सेना ने १४१९ से लेकर १४३७ तक शाही सेनाओ का डटकर मुकाबला किया और उन पर कई विजय तक प्राप्त की। लेकिन हुसपथी आदोलन मे फूट पड जाने क कारण अत मे विद्रोहियो को पराजित होना पडा।

फिर भी हुसपथी युद्ध चेक जनता के इतिहास म अपरिमित महत्व रखते है। उन्होने मानो भावी यूरोपीय धर्म सुधार आदोलन का पूर्वबोध करके पोपशाही तथा कैथोलिक चर्च पर जबरदस्त प्रहार किया। इन युद्धो न चेक राष्टीय चेतना के उदय और चेक राष्ट्रीय सस्कृति के विकास को त्वरित करने म भी योगदान किया।

बारहवीं से चौदहवीं शताब्दी के बीच सामंती समाज के विकास का सारांश

मध्य युग के इस द्वितीय चरण ने अत्यंत महत्वपूर्ण परिवर्तनों का समारंभ करके कृषि तथा उद्योग दोनों में नये उत्पादन संबंधों में संक्रमण का पथ प्रशस्त किया।

लोहे के जो प्रारंभिक मध्य युग में सोने से भी अधिक मूल्यवान था, खनन और उससे चीजें बनाने का अब तक कहीं व्यापक विकास हो चुका था – लोहा अब इतना सस्ता हो गया था कि लोहे के फालों, कुदालों, पटर के दांतों दरांतियों हंसियों तथा अन्य कृषि उपकरणों ने सभी जगह लकड़ी के ओजारों की जगह ले ली थी। बारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में उन जंगलों को जो कभी जर्मनी उत्तरी फ्रांस और इंगलैंड के विराट विस्तारों पर फैले हुए थे साफ करके नयी जमीनों को काश्त के नीचे लाया गया। अब तक खाद देने की विधियों में भी सुधार लाया जा चुका था, जिसके कारण अनाजों की खेती में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। अधिकाधिक नगरों के पैदा होने और शहरी आबादी के प्रसार के साथ-साथ साग़वाडियां और फलोद्यान कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने लगे। यद्यपि चौदहवीं और प्रारंभिक पंद्रहवीं शताब्दियों में महामारियों (मिसाल के लिए १३४८-१३५१ में फैले प्लेग) और बड़ी लड़ाइयों के परिणामस्वरूप यूरोप की आबादी में बहुत गिरावट आयी और श्रम शक्ति की इतनी कमी हो गयी कि उसके कारण कृषि में संकट तक पैदा हो गया था (जिसकी अभिव्यक्ति इसमें हुई कि तेरहवीं सदी में काश्त में लायी गयी काफी नयी जमीनों को परती छोड़ दिया गया, जिसके नतीजे के तौर पर खाद्य पदार्थों की काफी कमी पड़ गयी) फिर भी यह स्थिति अल्पकालिक ही थी और पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से कृषि में और भी उन्नति लक्षित होने लग गयी। उद्योग ने तो और भी ज्यादा तेज गति से प्रगति की।

छठा अध्याय

तेरहवीं शताब्दी मे पूर्वी और मध्य यूरोप, चीन, मध्य एशिया तथा पारकाकेशिया के जनगण का विदेशी कब्जावरो के विरुद्ध सघर्ष

तेरहवीं शताब्दी के आरम का मगोल समाज। मगोल राज्य का निर्माण

तेरहवी सदी के आरभ म एशिया मे एक शक्तिशाली मगोल राज्य पैदा हो गया। ससार के इतिहास मे यह जबरदस्त उथल पुथल का जमाना था। यह वह जमाना था, जिसमे मगोलो ने टिड्डी दलो की तरह विशाल सैनिक अभियान शुरू किये थे और विजित जनो पर अकथनीय मुसीबते और बरबादिया ढायी थी।

मगोलो की जन्मस्थली चीन के उत्तर के मैदानी इलाके थे। अधिकाश मगोल कबीले खानाबदोश पशुचारी थे। आरभ मे उनका समाज आदिम गोत्र समाज था, लेकिन बारहवी शताब्दी तक गोत्र सगठन कमजोर हो चुका था और उनके सरदारो या खानो ने सत्ता हथिया ली थी और अपने हाथों म सपत्ति केंद्रित कर ली थी। ये खा अभिजातो – नोयनों – को अपनी सेवा के लिए गोलबद करते थे। खानो और नोयनो की दौलत साधारण किसानो की मेहनत से बटोरी जाती थी, जिन्हे अपने मालिको को खाने के लिए अपने बेहतरीन ढोर और दुधारू पशु देने पडते थे मालिको के रेवडो को चराना होता था और साथ ही लबे समय तक सेना म सेवा भी करनी होती थी।

तेरहवी शताब्दी के आरभ मे प्रारभिक सामती स्वरूप के एक मगोल राज्य ने रूप लेना शुरू किया। इस नये राज्य मे नुकरो (नौकरो) – खानो की सेवा मे काम करनेवाले सशस्त्र अनुचरो – का स्थान बहुत महत्वपूर्ण था और ये आगे चलकर खानो के सेवक सामत बन गये। अभिजातो ने नुकरो के समर्थन से अपनी शक्ति को मजबूत किया। तेरहवी सदी के आरभ म सभी स्थान स्तेपी प्रदेशो के मगोलो के नेता तेमूजिन (लगभग ११५५ १२२७) के गिर्द गोलबद हो गये, जो १२०६ मे कबायली सरदारो की सभा (कुराल) मे खाकान (महाखान) चुना गया था और जिसने चगेज खा का नाम धारण किया था।

चगेज खा ने सारे मगोलिया को अपने नीचे एक्यबद्ध किया और एक विराट सेना एकत्र कर ली। प्रत्येक मगोल कुशल अश्वारोही योद्धा होता था और थोडे ही समय के भीतर चगेज ने एक बहुत बडी अश्वारोही सेना इकट्ठा कर ली। यह सेना दस-दस हजार के समूहो मे बटी हुई थी, हर समूह मे एक एक हजार की दस इकाइया और हर इकाई मे सौ-सौ दस उप इकाइया थी। मगोल सैनिक अपने शत्रुओ के तीरो के लिए लगभग अभेद्य होते थे, क्योकि व सख्त चमडे के बने शिरस्त्राण और बख्तर पहन होते थे, तीर कमान और तज तलवारो से लैस होते थे और सभी अपने तेज घोडो पर सवार रहते थे। उनकी सैन्य रचना कौशल भी अत्यत उच्च स्तर का था। उत्तरी चीन को जीतने के बाद चगेज खा के लिए अपने राज्य को काफी मजबूत करना सभव हो गया। चीनी इजीनियरो ने मगोल सेनाओ को घेराबदी की युक्तियो मे और भित्तिपातको के उपयोग मे प्रशिक्षित किया और अनुभवी चीनी प्रशासको न राजकीय नौकरशाही का पुनर्गठन किया। बाद म मगोलो ने दक्षिणी चीन को भी जीत लिया। शहरपनाहो पर भारी पत्थर और जलते तेल के बरतन फेकने के लिए विशेष प्रक्षेपास्त्र इस्तेमाल मे लाये जाते थे। इस तरह शस्त्रो से सज्जित अत्यत गतिवान और एक अकेले नेता के नीचे ऐक्यबद्ध मगोल सेना शेष ससार के लिए एक भारी खतरा बन गयी।

चगेज खा न जल्दी ही साइबेरिया की जातियो—बाइकाल झील के तटो पर रहनवाले बुर्यातो, याकूतो और अल्ताई की तराइयो के निवासी ओइरोतो को जीत लिया। इन विजयो के बाद चगेज खा ने अपनी सेना के साथ मध्य एशिया और पारकाकेशिया की ओर कूच किया।

मध्य एशिया तथा पारकाकेशिया मे चगेज खा की विजये

मध्य एशिया मे चगेज खा का धनी नगरो और अतिप्राचीन सभ्यतावाले लोगो से आमना-सामना हुआ। ये इलाके स्मरणातीत काल से आबाद थे। स्थानीय निवासी मुख्यत उपजाऊ घाटियो मे रहते थे और उनके मुख्य उद्यम कृषि पशुपालन और फल तथा साक भाजी उगाना थे। मध्य एशिया क किसानो ने बहुत पहले ही सिचाई प्रविधियो मे नैपुण्य प्राप्त कर लिया था। उन्होने समरकद और मर्व जैसे सपन्न नगर भी कायम किये थे जहा कलाओ तथा शिल्पो ने गहरी जडे जमा ली थी। इन इलाको के वास्तुकार और भवननिर्माता विश्वविख्यात थे।

मध्य एशिया पर मगोल-तातारो के हमले का खतरा मडराने तक उसके निवासी सुस्थापित विकसित सामती समाज मे रहने लग गये थे। स्थानीय
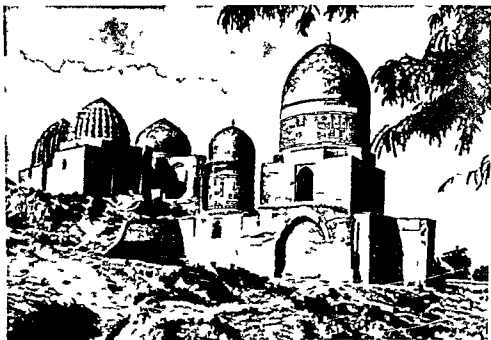
समरकद का शाह ए जिदा मक्बरा, १४ १५ वीं सदी

सामत लगभग स्वतत्र थे और इस क्षेत्र मे कोई शक्तिशाली केंद्रीय सत्ता नही थी। इस कारण चगेज खा के लिए इन इलाको को जीतना कही ज्यादा आसान हो गया।

चगेज खा की फौजे इस इलाके के नगरो और गावो को जीतती लूटमार करती, स्थानीय आबादी का सफाया करती और आदमीऔरतो को गुलाम बनाती ख्वारेज्म राज्य मे जा घुसी। मध्य एशिया के लोगो ने आक्रमणकारियो का वीरतापूर्वक सामना किया। हर शहर मे शक्तिशाली टुकडिया थी और समरकद मे तो २० फौजी हाथी भी थे। लेकिन कई और शहरो की तरह यहा भी गद्दारो ने चगेज के लिए शहरपनाह के फाटक खोल दिये थे। समरकद मे चगेज ने कोई तीस हजार दस्तकारो को कैदी बनाकर अपने अनुचरो मे गुलामो की तरह बाट दिया। उसने दूसरे शहरो मे भी ऐसा ही किया। मर्व तथा कई अन्य नगरो को तहस नहस कर दिया गया।

स्थानीय सामतो मे एकता के अभाव मे मगोल विजय काफी सुगम हो गयी क्योकि उसके कारण आक्रमणकारियो के खिलाफ प्रतिरोध कमजोर हो गया था।

तेरहवी सदी के आरम्भ मे मध्य एशिया को कब्जे मे लेने के बाद चगेज़ अपनी सेनाओ को जार्जिया ले गया। पारकाकेशिया के रहनवालो ने अपनी आजादी के लिए लबा सघर्ष किया, लेकिन अत मे उनके प्रतिरोध का भी कुचल दिया गया। मगोलो ने आर्मीनिया और जार्जिया के निवासियो को अपने अधीन कर लिया जिनकी सस्कृति विजेताओ मे कही उन्नत थी। मगोलो न निपुण जार्जियाई और आर्मीनी दस्तकारो, कारीगरो और विद्वानो को कैद करके गुलाम बना दिया। मगोल आधिपत्य ने पारकाकेशियाई जनगण की सस्कृति पर भारी चोट की। कितने ही नगरो को नष्ट कर दिया गया और जार्जियाइयो तथा आर्मीनियो को अपने नये स्वामियो को भारी खिराज देने के लिए मजबूर किया गया। मगोल हर आदमी की सपत्ति के दसवे हिस्से के अलावा हर खेत से अतिरिक्त कर – १०० कुप्पे (कुप्पा लगभग एक लिटर का होता था और ठोसो और द्रवो दोनो को मापने के काम आता था) अनाज ५० कुप्पे अगव, २ कुप्पे चावल, तीन बोरे, दो रस्से और चादी का एक सिक्का घोडे की एक नाल – भी वसूल करते थे। जो लोग यह न दे पाते थे उन्हे गुलाम बना लिया जाता था।

पारकाकेशिया म अपनी सत्ता मजबूती से जमा लेने के बाद मगोल खानो न करो को वसूल करने का काम स्थानीय रजवाडो के सुपुर्द कर दिया। पारकाकेशिया म मगोल शासन लगभग दो सौ साल – पद्रहवी शताब्दी के अत तक – बना रहा।

रूसी प्रदेशो पर मगोलो का हमला

मध्य एशिया और पारकाकेशिया की विजय ने मगोल सेना को प्राचीन रूस की देहली पर पहुचा दिया। काकेशियाई पर्वतो को पार करके चगेज खा की सेनाए दक्षिणी रूस की स्तेपियो मे पहुच गयी। यहा उनका पोलोव्त्सी खानाबदोशो से सामना हुआ, जिन्होंने सहायता के लिए रूसी राजाओ की तरफ मुह किया। उनके दूतो ने जाकर कहा, "आज वे लोग हमारा सफाया करेगे और अगर तुमने हमारी मदद नही की, तो कल तुम्हारी बारी आयेगी। राजाओ ने चगेज खा के खिलाफ मिलकर लडने का फैसला किया और वे पोलोव्त्सी प्रदेश मे उससे टक्कर लेने के लिए चल पडे।

मई, १२२३ मे काल्का नामक छोटी सी नदी के किनारे, जो दोन नदी के मुहाने के पास ही अजोव सागर मे जाकर गिरती है, लडाई हुई। रूसी सेनाए बुरी तरह पराजित हुई। मगोल खानो ने घायलो और युद्धबन्दियो के ऊपर तख्त बिछा दिये और उन पर बैठकर अपनी विजय के उपलक्ष्य मे शानदार दावत की।

मगाना ना ऐसा कि रूसी उन गन्ना म नाताग म रूम म पनगण पन्ना मा ना पन्ना आगर मा। नतिन न्म बार उन्ना अपनी विजय का गुन्ना रन्ना नी तर्तिना तरी नी और न्नानी जगा गाना गनिया नर गत्र। न्गर गा गान्न नार न्ना बार म कुन ।ी गता ना न्ी मिला।

मार गा नी मृत्यु न बा न्गता बना आग्न मिगमा पर बैठा जिगर अपार नीज बातू गा (मृत्यु–१२५५) ना गगार जीता न निग गा। गार गुगार न ऊपर मन्यानी और गनागी ना गागन मन्गार मगा।

उम समय ना गगुरा रूसी गाज्य नी था। अधिरान रूसी रजवान व्लादीमिर या नारगारन न गजा म छान और रमजार थ। रूम म गामती विगम्न न विन्नी गत्रु न नान्गर प्रतिरोध नी गभावनाआ ना क्षति पन्नायी। रूम न्ना अनान गत्रु न आग पुन्न न गन गया राति बन विभाजित था और न्नानी गनाआ म गनाना ना अभाव था।

१२३६ म बातू नी गनाआ न नाम्पियन गागर नी तटवर्ती न्गगिया नो पार रग्ग बाना: बुल्गार न गज्य पर आक्रमण किया और उननी गजधानी बुल्गार नगर पर न्जा नर लिया। यग म उन्नाने रूम पर नढाई गुन्न नी। अगन वन (१२ ७) नी गर्मियां म बातू न अपनी विगाल सेना म गाथ बोल्गा ना पार किया और रियाजान गज पर न्मला बाना। प्रचड युद्ध म बान आगिर रियाजान न घुटन टन न्यि और उग जनानर गान म मिला न्यिा गया। दूसर रजवान्ना पर भी यनी बीती जिन्हान सामान्य गत्रु का सामना करन न लिए अपन पन्नागिया न साथ मिलन न बजाय इतजार करन और न्यन नो ही तरजीह नी थी। उस तरह व्लादीमिर और सूज्न्न गज व अन्य नगर भी मिट्टी म मिला न्यि गय।

तातार न मास्का का भी भस्म कर दिया। राजा यूरी व्सेवोलोदोविच (११८७-१२३८) न अपन सैनिको और किसानो की बड़ी सेना लेकर सीत नदी क तट पर जाकर शत्रु का सामना किया लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। रूसी इस युद्ध म भी हार और उनका राजा युद्धभूमि म मारा गया।

धीर धीर बातू न सारी न्नपर घाटी का अपन नज म ने लिया।

१२४० म बातू की अपार सेना न कीयव नगर पर चढ़ाई की और उस घर म ने लिया। बातू इस नगर की सुदरता धूप म चमचमाते गिरजा घरो क सुनहरे गुबदो और उसकी खूबसूरत इमारतो के पार्श्वदृश्य स इतना प्रभावित हुआ कि उसन इस नगर पर उस नष्ट किये बिना अधिकार करन का निश्चय किया। उसन कीयव क निवासियो के सामन बिना लड़े आत्मसमर्पण कर देन का प्रस्ताव रखा। कीयववासियो न अतिम सास तक युद्ध को श्रेयस्कर

मानते हुए उसके प्रस्ताव को ठुकरा दिया। इसके बाद घेरा शुरू हो गया और उसके दौरान लगभग सारे ही नगर को जलाकर खाक कर दिया और नष्ट कर दिया गया।

जर्मन और स्वीडनी आक्रमणकारियो के विरुद्ध रूसी तथा बाल्टिकीय जनो का युद्ध

इस आपदा के बाद एक दूसरी आपदा भी आनी थी। जब बातू पूर्व से बिखरे हुए रूसी राजो पर हमला कर रहा था, उसी समय उत्तर पश्चिम में एक और शक्तिशाली शत्रु प्रकट हुआ और नोवगोरोद की तरफ बढने लगा। जर्मन नाइट नयी जमीनो को हथियाने और उन्हे काश्त करनेवाले किसानो को अधीन करने की उत्कठा स रूस की तरफ बढने लगे। उन्होने बाल्टिक प्रदेशो क निवासियो को दासता क बधनो मे जकड दिया और उनकी जमीनो को हथिया लिया। उन्होने लिवोनिया मे पश्चिमी द्विना नदी के मुहाने पर रीगा के दुर्ग का निर्माण किया जिसे निर्मम उत्पीडको – खडग बधु सघ – का मुख्य अड्डा बन जाना था।

नाइटो के एक और सहबध – ट्यूटानी नाइटो के धर्मसघ – ने पश्चिम म लियुआनियो के लिए खतरा पेश करना शुरू कर दिया। जल्दी ही ट्यूटानी और खडग-बधु आपस मे मिल गये और उन्होने एक साथ प्स्कोव और नोवगोरोद पर हमला बोल दिया।

रूस म स्वीडनी सामतो के आक्रामक तत्वो को भी लालच हो आया। उन्हे तातार मगोल आक्रमण क बारे म जानकर बहुत खुशी हुई क्योकि उन्होने सोचा कि इस समय जब रूस पर पूर्व से तातार चढे आ रहे है तो हम उस पर उत्तर स हमला कर सकते है और स्थिति का लाभ उठाकर और इलाके को दबा सकते है।

१२४० म स्वीडनी शासक यार्ल बिर्गर अपनी सेनाओ क साथ नेवा नदी क किनारे पर उतरा। रूसी सेना नोवगोरोद मे सत सोफिया चौक म जमा हो गयी। नगर रक्षक दल के कुछ लोग भी राजा की सेना मे शामिल हो गये। राजा अलेक्सान्द्र यारोस्लाविच (१२२० १२६३) नोवगोरोद की सेना को लेकर बिर्गर की सेना से टक्कर लेने क लिए निकला। दोनो सेनाओ का नेवा के तट पर मुकाबला हुआ। रूसियो न अचानक हमला करके शत्रु को सभलने का मौका भी नही दिया। इसके बाद तो नरसंहार ही हुआ। लडाई क दौरान राजा अलेक्सान्द्र का बिर्गर स आमना-सामना हुआ और अलेक्सान्द्र ने अपने तेज भाले स उसके चेहरे पर निशान बना दिया। ' युवा योद्धा मानो बिगर क गुनहगी छावान सेम म जा पहुचा और उसके सभे का

काटकर गिरा दिया। दोनो सेनाओ के मामन सामने खेमा ढह गया और रूसियो के हर्ष की सीमा न रही। नेवा तट की इस भयकर लडाई का अत रूसियो की विजय मे हुआ और इसके सम्मानार्थ तब से राजा अलेक्सादर यारोस्लाविच को अलेक्सादर नेव्स्की कहा जाने लगा।

लेकिन इधर जर्मन नाइट भी निठल्ले नही बैठ हुए थे। उन्होने एक विशाल सेना के साथ रूस पर हमला बोल दिया। अप्रैल १२४२ म ठड से जमी चूदस्कोये (पाइपस) झील की सतह पर वह मशहूर लडाई हुई जो इतिहास मे 'बर्फ पर नरसंघ' के नाम से जानी जाती है। जर्मनो ने अपनी सेना का विन्यास पच्चड की तरह किया था, ताकि रूसी कतारो मे दरार डालकर सेना को दो टुकडो मे विभाजित कर सके। जर्मन सेना के हरावल मे भारी बख्तरबद रिसाला था उसके पीछे पीछे भालो और तलवारो से लैस पैदल सेना बढ रही थी, जिसके दोनो बाजुओ पर रिसाला चल रहा था।

अलेक्सादर नेव्स्की ने दुश्मन की योजना को समझ लिया और उसने अपनी मुख्य शक्तियो को केंद्र मे नही बल्कि पार्श्वो म सकेंद्रित किया। उसने शत्रु को अपनी सेना पर केंद्र मे आक्रमण करने के लिए लुभाया और बाजुओ से अपनी मुख्य शक्तियो को बढाकर उसे घेरे मे ले लिया। नरसहार शुरु हो गया और जरा ही देर मे बर्फ खून से लाल हो गयी। जर्मन नाइटो की भयकर पराजय हुई, जो थोडे से लोग जीवित बच रहे उन्हे बदी बना लिया गया।

अलेक्सादर नेव्स्की की कमान मे ये विजये बहुत ही महत्वपूर्ण थी और उन्होने उत्तर पश्चिमी रूस को जर्मन तथा स्वीडनी बैरनो की गुलामी से बचाकर अक्षुण्ण रखा।

तातारो के जूए मे रूस

लेकिन चाहे रूस उत्तर पश्चिम मे अपने शत्रुओ को हराने मे सफल हो गया हो, बातू की सेना के आक्रमण का मुकाबला करने मे वह इतना खुशकिस्मत नही रहा। देश के काफी बडे भाग को तातार वलो के जूए के नीचे तडपना पडा और नोवगोरोद तक को—यद्यपि तातार वहा तक नही आये थे—उन्हे खिराज देने के लिए मजबूर होना पडा।

रूस अब तातार खानो के जूए के नीचे आ गया था और यह दासता दो सौ साल से अधिक—तेरहवी सदी के मध्य से लेकर पद्रहवी सदी के अत तक—चली। बातू खान द्वारा स्थापित राज्य स्वर्ण ओर्दू या स्वर्ण लश्कर का राज्य कहलाता था। बातू ने अपनी राजधानी वोल्गा के तट पर सराय शहर मे (वर्तमान अस्त्राखान के निकट) कायम की थी। बाद मे उसे वोल्गा

तट पर और ऊपर वर्तमान वोल्गाग्राद के पास ले जाया गया। नयी राजधानी का नाम सराय (नयी) सराय था। स्वर्ण ओर्दू के राज्य में मध्य एशिया का कुछ हिस्सा और कजाखस्तान, वोल्गा घाटी, क्रीमिया, दनीपर घाटी और समस्त उत्तर-पूर्वी रूस सम्मिलित थे।

तातार विजेता रूस के लोगों से भारी खिराज – उनकी कुल संपत्ति का दसवां भाग – मांगते थे। इसके अलावा वे अनाज, पशुओं और नकदी के रूप में भी खिराज मांगते थे। इस सबकी उगाही बस्काक (कर अधिग्रहाता) करते थे। जो लोग कर दे नहीं पाते थे, उन्हें गुलाम बना लिया जाता था।

अपने शासन के न्यूनतम प्रतिरोध का भी जवाब मंगोल-तातार बड़े पैमाने की लूटमार और कत्ले-आम में देते थे। मंगोल-तातार जूए का मतलब असहनीय निर्मम यातना और खूनखराबी था।

रूसी राजाओं की आजादी जाती रही और वे तातार खान के अधीन हो गये। उन्हें इसके लिए मजबूरन मूल्यवान भेंटें लेकर स्वर्ण ओर्दू की राजधानी जाकर खान के सामने पेश होना पड़ता था, ताकि बदले में उससे अपने पद का यारलिक (अनुमतिपत्र) पा सकें। रूस के महाराजक को भी अब स्वयं खान ही नामजद किया करता था। किसी समय का स्वतंत्र रूस अब स्वर्ण ओर्दू का एक अधीनस्थ राज्य मात्र बनकर रह गया था। तातार शासन रूस के सांस्कृतिक, सामाजिक तथा राजनीतिक विकास में बाधक बना और उसने उसे एक पिछड़े हुए देश में परिणत कर दिया।

लेकिन तातारों के विरुद्ध रूस के संघर्ष ने पश्चिमी यूरोप को मंगोल तातार आपदा से बचाने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। तातारों ने पश्चिम के खिलाफ कई अभियान संगठित किये और पोलैंड, हंगरी तथा वेनिस तक भी हमले किये। लेकिन उनके विरुद्ध रूस के संघर्ष की बदौलत, जिसने विजेताओं के साधनों और शक्ति को बहुत कमजोर कर दिया था, पश्चिमी यूरोप उनके साये से बच गया।

सातवां अध्याय

संयुक्त रूसी राज्य का अभ्युदय

मंगोल तातार विनाश के बाद अर्थव्यवस्था की बहाली। मास्को का उदय

मंगोल तातार आक्रमण के फलस्वरूप रूसी इलाकों की अर्थव्यवस्था को अवर्णनीय बरबादियों को झेलना पड़ा। कितने ही शहरों और गांवों को जला दिया और नष्ट कर दिया गया था। हजारों किसानों को मार डाला गया था या गुलाम बनाकर ले जाया गया था और अनगिनत रूसी परिवारों को रोजी कमानेवालों से वंचित कर दिया गया था। निपुण दस्तकारों को जबरदस्ती स्वर्ण ओर्दू जाना पड़ा और इसके कारण उनके भावी उत्तराधिकारियों का प्रशिक्षण बीच में ही भंग हो गया। इन सभी बातों से कलाओं और शिल्पों में बहुत अवनति आयी। तातारों को दिये जानेवाले खिराज ने देश का सत्व ही निचोड़ लिया था और जो लोग कर अदा करने में असमर्थ होते थे उनके सिरों पर हमेशा दासता का खतरा मंडराता रहता था। इस तरह मंगोल शासन ने रूस के आर्थिक विकास में गंभीर अवरोध डाला।

लेकिन धीरे धीरे दैनंदिन जीवन फिर सामान्य ढर्रे पर वापस आने लगा, खासकर स्वयं रूसी राजाओं के ही खिराज वसूल करने के जिम्मेदार बना दिये जाने के बाद। खानों के उगाहक अब राजाओं में ही खिराज पा जाते थे और इसलिए शहरों और गांवों में स्वयं कम ही नजर आते थे।

आर्थिक जीवन की बहाली किस आधार पर हुई? निस्सन्देह सामंती आधार पर ही। पहले ही की तरह अब भी राजा और बोयार ही जमीन के मालिक थे और किसानों की विशाल संख्या अपने मालिकों पर आश्रित थी। कृषि में धीरे-धीरे फिर तिनखेतिया प्रथा चल पड़ी और पशुपालन का विकास होने लगा। लोहारों, ठठेरों, कुम्हारों और चर्म प्रसाधकों ने फिर अपना काम करना शुरू कर दिया।

पहले ही की तरह किसान, जो अपने मालिको की जमीन पर खेती करते थे, उन्हे लगान अशत जिस की सूरत मे – अनाज, पशु और कुक्कुट – और अशत नकद अदा करते थे। साथ ही वे अनिवार्य श्रम सेवा (बगार) भी करते थे। चौदहवी-पद्रहवी शताब्दियो मे अधिकाश किसान लगान के आधार पर कृषि करने लगे थे। मठ, जो हाल ही मे भूस्वामी सस्थाए बन गये थे अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने लगे थे। कृषि के क्षेत्र मे एक नये प्रकार की बस्तिया पैदा हो गयी – ये स्लोबोदा (स्वोबोदा – स्वतत्रता से) कहलाती थी। राजा अकृष्ट जमीन को एक निश्चय अवधि के लिए करो और अनिवार्य श्रम सेवा से बरी कर देते थे और नये काश्तकारो को आकर उन्हे काश्त करने के लिए आमत्रित करते थे।

भूस्वामित्व का एक नया स्वरूप भी सामने आया – राजा लोग अपनी सेवा करनेवालो को जमीन दे देते थे, जो उन लोगो के पास तब तक बनी रहती थी कि जब तक वे अपने राजा की सेवा करते थे। ऐसी जमीन पोमेस्तिये और इनके टुकडो के अस्थायी स्वामी 'पोमेश्चिक' कहलाते थे। पोमेश्चिको के लिए युद्धकाल मे सुसज्जित रिसाले और पैदल सैनिको की टुकडी के साथ अपने राजा के परचम के नीचे गोलबद होना भी अनिवार्य था। जब ये लोग राजा की चाकरी छोड देते थे, तो राजा यह जमीन अपने किसी और खादिम को दे देता था। इस प्रकार केद्रीय सत्ता के प्रति निष्ठावान सेवको – पोमेश्चिको – का एक नया वर्ग अस्तित्व मे आ गया। सयुक्त रूसी राज्य के निर्माण मे ये आर्थिक विकास अत्यत महत्वपूर्ण कारक सिद्ध हुए।

धीरे-धीरे मास्को बरबादियो के ढेर पर फिर खडा होने लगा। वह अधिक समृद्ध नगर बनता गया और उसके राजाओ की सत्ता तथा शक्ति भी बढती गयी। मास्को के आसपास के इलाको मे कृषि तथा औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक सभी महत्वपूर्ण अवस्थाए विद्यमान थी। ये इलाके नियमित कृषि के पारपरिक केद्र थे। यहा के निवासी अनुभवी किसान, लोहार, कुम्हार, राज और चर्म प्रसाधक थे। प्रतिरक्षा के दृष्टिकोण से भी मास्को बडी अनुकूल जगह पर स्थित था। तातार घुडसवारो को घने जगलो से घिरे इस नगर तक पहुच पाना बहुत मुश्किल लगा था। इसके अलावा आसपास के राज – रियाज़ान और नीजनी नोवगोरोद – उसके शत्रुओ के विरुद्ध ढाल का काम करते थे। इसके कारण कई इलाको के किसान आ-आकर मास्को राज मे बसने लग गये थे।

मास्को पश्चिम और वोल्गा घाटी को जोडनेवाले महत्वपूर्ण व्यापार मार्गो के सगम पर स्थित था। नोवगोरोद के व्यापारी स्वर्ण ओर्दू के साथ व्यापार करने के लिए मस्क्वा नदी होते हुए ओका नदी और वहा से वोल्गा नदी जाते थे। दूसरा व्यापार मार्ग दोन नदी और अज़ोव सागर होते हुए

स्वर्ण ओर्दू के शासन के खिलाफ बगावते।

कुलिकोवो मैदान का युद्ध

तातार-मगोल शासन के जूए के खिलाफ रूसियो ने कितनी ही बार विद्रोह किये।

१२५६ म तातार करसग्राहक कराधान के लिए आबादी की गणना करने के उद्देश्य स नोवगोरोद आये। शहर के मेहनतकशो न तातार महसूल दारो के आगमन पर विरोध प्रकट किया। उन्होंने खान के दूतो को नगर म प्रवेश नही करने दिया और उन्हे जान से मार डाला। नोवगोरोद के निवासियों के प्रतिरोध का कुचल पाना बहुत ही मुश्किल सिद्ध हुआ। १२६२ मे तातारो के खिलाफ कितने ही शहरो मे बलवे फूट पडे। शहरो म घटे बज उठे और लोग व्लादीमिर सूज्दल, रोस्तोव, पेरयास्लाव्ल और यारोस्लाव्ल नगरो के मुख्य चौको म एकत्र हो गये। उन्होंने तातार उत्पीडको को अपने शहरो के फाटको के बाहर खदेड दिया। जो लोग तातारो के साथ सहयोग करते थे, उन्हे मार डाला गया। तातारो ने विद्रोही नगरो को कठोर दड देने की ठानी। लेकिन अलेक्सादर नेव्स्की विशेष रूप से स्वर्ण ओर्दू गया और खान को मूल्यवान नजरे देकर उसे शात करने और नगरो को बचाने मे सफल हो गया।

१२८६ म रोस्तोव के निवासियों न तातारो को अपने शहर के बाहर निकाल दिया और उनके इकट्ठा किये धन तथा मूल्यवान चीजो को छीन लिया। तेरहवी शताब्दी के उत्तरार्ध मे कूर्स्क राज के मेहनतकश लोगो न तातार महसूल दार को अपने शहर के बाहर निकाल भगाया और स्थानीय तातार बस्ती को लूट लिया।

चौदहवी शताब्दी म मास्को वैभव और शक्ति की नयी ऊचाइयो पर पहुच गया जबकि उधर स्वर्ण ओर्दू की शक्ति मे स्पष्ट ह्रास आने लगा। चौदहवी सदी के मध्य म बीस साल के भीतर स्वर्ण ओर्दू म चौदह खान सिहासन पर बैठे क्योकि राजसिहासन के लिए आपसी होड मे कितने ही खान अपने महत्वाकाक्षी प्रतिद्वद्वियो के हाथो मारे गये थे।

चौदहवी शताब्दी के उत्तरार्ध म तातार सेनानायक ममाई खान (मृत्यु-१३८०) कुछ समय के लिए सपूर्ण ओर्दू को एकयबद्ध करने म सफल हो गया। मास्को न इस समय तक खान के सभी आदेशो का विनयपूर्वक पालन करना बन्द कर दिया था। ममाई खान न अपने सरकश प्रजाजनो को सबक सिखान का फैसला किया। उसने एक विशाल सेना एकत्र की और उधर लिथुआनिया के साथ सैनिक सम्बध स्थापित कर लिया।

अगस्त १३८० म ममाई खान न मास्को की तरफ बढना शुरू किया।

कुलिकोवो युद्ध (१४७६-१४७६)

मास्को के राजा इवान कलीता के पौत्र दमीत्री इवानोविच (१३५० - १३८६) ने सेना इकट्ठा करना शुरू किया। इतने भयंकर शत्रु को सामने देख कई रूसी राजाओं ने अपने आपसी झगड़ों को भुला दिया और रोस्तोव यारोस्लाव्ल तथा बेलोजेर्स्क के राजाओं की सेनाएं आपस में मिल गयी।

इस स्थिति में सबसे निर्णायक बात यह थी कि रूस के मेहनतकश जनसाधारण हाथों में हथियार लेकर तातारों के खिलाफ खड़े हो गये – देश के कोने कोने से भालों, लाठियों और कुल्हाड़ों से लैस किसान और दस्तकार लड़ने के लिए आ गये। रूसी सेना की संख्या डेढ़ लाख थी। रूसियों ने दोन की तरफ कूच किया और उसे पार करके दोन की एक छोटी की सहायक नदी नेप्रियाद्वा के संगमस्थल के पास कुलिकोवो के मैदान में व्यूहरचना की। दस वर्ग किलोमीटर के विस्तार पर फैले विराट युद्धक्षेत्र में रूसियों और तातारों का आमना सामना हुआ। भयानक युद्ध शुरू हो गया। खून की नदियां बहने लगीं। रूसी कमजोर पड़ने लग गये थे कि तभी अचानक घात में छिपे रिज़र्व रूसी सैन्यदल निकलकर तातारों पर टूट पड़े। ममाई खान की सेनाओं का सफाया हो गया। जो थोड़े-बहुत लोग बच रहे, वे मैदान छोड़कर भाग गये। दोन नदी के पास इस विजय के उपलक्ष्य में, जो तातार खानों के विरुद्ध पहली बड़ी रूसी विजय थी, राजा दमीत्री को दमीत्री दोन्स्कोई की पदवी दी गयी। उसने रूसी राजाओं को यह दिखाया कि उनकी शक्ति एकता में ही है।

कुलिकोवो मैदान के युद्ध ने तातार आधिपत्य का सदा-सदा के लिए खात्मा तो नहीं किया, मगर उसने उनकी शक्ति को काफी कमजोर अवश्य कर दिया। इस लड़ाई के बाद रूसी लोग अपनी शक्ति को जान गये और उनमें नयी आशाओं का संचार हो गया।

संयुक्त रूसी राज्य के
निर्माण की दिशा में पहले कदम

मास्को के राजा अपने राज का प्रसार करते रहे। उन्होंने वैभवशाली नीजनी नोवगोरोद राज के इलाकों को अपने राज में मिला लिया। नीजनी नोवगोरोद (वर्तमान गोर्की नगर) वोल्गा के तट पर बसा हुआ था। वह एक रूसी सीमांतक चौकी और महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्र था, जहां कितने ही पूर्वी देशों के व्यापारी आते थे। मास्को के अधीन रूसी प्रदेशों के एकीकरण में इवान तृतीय के शासनकाल (१४६२-१५०५) में विशेषकर सफलता प्राप्त की गयी, जो एकीकृत रूसी राज्य का शासक बना। इवान ने १४७८ में मास्को राज के पश्चिम में वोल्खोव नदी के तट पर स्थित प्राचीन और स्वतंत्र नोवगोरोद को मास्को राज में मिला लिया। उसने वोलोग्दा नगर सहित नोवगोरोद के कई अन्य इलाकों को भी कब्जे में ले लिया। विचेग्दा नदी के किनारे पर स्थित कोमी जाति के इलाके भी मास्को राज में मिला लिये गये।

रूसी राज्य के एकीकरण में योग देनेवाला सबसे महत्वपूर्ण कारक मेहनतकश जनता का नवबल और लगन थी। इसकी बदौलत रूस के लिए
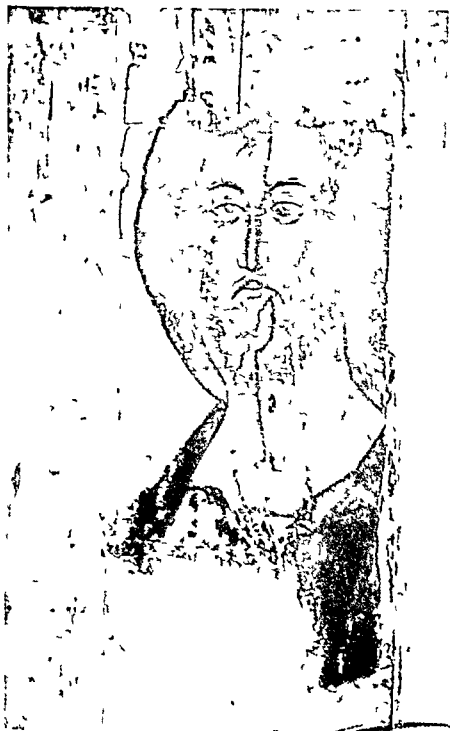
अंद्रेई रुब्लेव द्वारा निर्मित देवचित्र
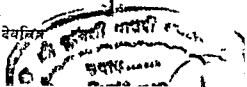
तातारो के विनाश से सभलना और खडहरो पर शहरो और गावो को फिर से खडा करना सभव हो गया। परित्यक्त खेतो को फिर जोता जाने लगा और नयी जमीनो को काश्त में लाया गया। अवनति के गर्त में पडे व्यवसायो और शिल्पो को फिर से बहाल किया गया। इस उद्योग और लगन ने विदेशी शासको के खिलाफ प्रतिरोध की नीव तैयार की। देश की अर्थव्यवस्था को बहाल और मजबूत करके जनता ने सामती राज्यो में बिखरे देश के एकीकरण के पथ को प्रशस्त किया।

इवान तृतीय ने कई इलाको को सधियो के जरिये या हथियारो के जोर पर मास्को राज में शामिल किया। बहुत से छोटे राजा इवान की शक्ति को अच्छी तरह से जानते थे और इसलिए उन्होने उसके द्वारा जीत जाने की बनिस्बत उसके प्रति निष्ठा घोषित करना श्रेयस्कर समझा। उदाहरण के लिए, यारोस्लाव्ल के राजाओ ने इवान को अपना सप्रभु मान लिया और अपने इलाके उसके अधीन कर दिये। जब इवान की फौजे त्वेर के पास पहुची, तो रूस के इस भाग के कई छोटे राजाओ ने भी उसकी सप्रभुता स्वीकार कर ली। त्वेर और मास्को राजो के सघ का बनना एक महत्वपूर्ण घटना थी क्योकि इसके पहले त्वेर रूसी इलाको पर प्रभुत्व के लिए मास्को का मुख्य प्रतिद्वद्वी था।

लिथुआनिया के सामतो का भी रूस की इन घटनाओ की तरफ ध्यान गया और उनमे से कुछ ने इवान तृतीय की अधीनता स्वीकार कर ली, जिसका यह मतलब था कि उनकी विस्तृत जागीरे भी अब रूसी राज्य का अग बन गयी, जो पहले कभी कीयेव रूस का हिस्सा हुआ करती थी। इवान तृतीय के शासनकाल मे इन इलाको को लेकर रूस और लिथुआनिया मे युद्ध छिड गया, लेकिन रूस ने उन पर अपना कब्जा बनाये रखा।

रूस की शक्ति लगातार बढती चली गयी। छोटे छोटे रजवाडो के ढेर से एक शक्तिशाली रूसी राज्य उदित हो गया। यह सयुक्त राज्य ऐसा था कि अब वह तातार-मगोल जूए को और अधिक नही बरदाश्त कर सकता था।

तातार-मगोल आधिपत्य का अत

पद्रहवी सदी के अत मे स्वर्ण ओर्दू अधिकाधिक कमजोर होता गया और विघटित होने लगा। इवान तृतीय के शासनकाल मे रूस ने खानो को खिराज देना बद कर दिया था। १४७६ के बाद से तातारो को कोई खिराज नही दिया गया था।

तातार खान अहमद ने रूसियो को फिर से वश मे लाने का अतिम प्रयास किया। १४८० मे वह अपनी सेनाओ को लेकर ओका नदी के किनारे

मास्को क्रेमलिन का उस्पेन्स्की गिरजा (१४७६ १४७९)

उसके उग्रा नदी से सगमस्थल तक आ गया। लेकिन वह अपने प्रयास म असफल रहा, क्योंकि चार दिन के घमासान युद्ध क बाद रूसियो ने उस पीछे धकेल दिया। इवान तृतीय की शक्तिशाली सेना पर आक्रमण करन की अनिच्छुक तातार सेना बहुत समय तक नदी के दूसरे तट पर खडी रही। किसी भी पक्ष ने लडाई नही छेडी। नववर मे खान अहमद यह महसूस करके पीछे हट गया और स्वर्ण ओर्दू वापस चला गया कि अब वह रूस को अपन अधीन करन की स्थिति मे नही है। खिराज मागन के लिए यह तातारो का आखिरी हमला था। मगोल शासन की आखिरी घडी आ गयी थी। रूस न अत मे १४८० मे अपनी स्वतत्रता को प्राप्त कर लिया।

इधर मास्को और भी ज्यादा बडा और शानदार शहर बनता गया – वह नये एकीकृत राज्य की भव्यता को प्रतिबिबित करता था। मास्को म पत्थर का एक नया महल बनाया गया और क्रेमलिन (दुर्ग) क चहु ओर पत्थर की मोटी दीवारे बनायी गयी। इवान तृतीय न विख्यात इतालवी वास्तुकार अरिस्तोतल फीएरावाती को क्रेमलिन क भीतर उस्पेन्स्की (स्वगारोहण) क पचगुबदी गिरजाघर के निमाण का निदेशन करन क लिए अपन दरबार

में बुलाया। क्रेमलिन की नयी दीवारों के साथ-साथ बुर्ज बनाये गये और फ्योरावांती ने शिल्पियों ने विदेशी दूतों के सम्मान में आयोजित स्वागत समारोहों के लिए ग्रानोवीताया पलाता (बहुपार्श्वीय प्रासाद) का निर्माण किया। इस महल को यह नाम इसलिए दिया गया है कि इसके अग्रभाग पर बहुपार्श्वीय पत्थर लगे हुए हैं। उस समय राज्य के कितने ही भागों के अनेक प्रतिभाशाली रूसी शिल्पकार मास्को में काम कर रहे थे और उसके एक शानदार राजधानी में परिणत किये जाने में योग दे रहे थे।

रोमन सम्राट अपने नाम के साथ 'सीजर' की उपाधि लगाया करते थे। इवान तृतीय ने भी ऐसा ही करने का निश्चय किया और उसने ज़ार (सीजर का रूसी रूपांतर) की उपाधि ग्रहण की। इवान ने बैज़ंती साम्राज्य के राज्यचिह्न – द्विमुखी बाज़ – को भी ग्रहण किया जो १९१७ की फरवरी क्रांति तक रूसी साम्राज्य का राज्यचिह्न बना रहा।

इवान तृतीय और वसीली तृतीय (१४७९-१५३३) के दरबारों में कितने ही देशों – जर्मन साम्राज्य, हंगरी, डेनमार्क, वेनिस और तुर्की – के राजदूत आया करते थे। दरबार में औपचारिक स्वागत समारोहों की एक नयी परंपरा कायम हो गयी।

इवान तृतीय अपने को जार कहनेवाला मास्को का पहला राजा था, लेकिन उस्पेन्स्की गिरजाघर में पूरी शानशौकत और विधिविधान से अपना राज्याभिषेक करानेवाला और अपने को "सारे रूस का जार" घोषित करनेवाला पहला राजा उसका पोता इवान प्रचंड (१५३०-१५८४) था।

आठवा अध्याय

पश्चिमी यूरोप म पूजीवादी सबधो की उत्पत्ति

इस अध्याय म हम मध्य युग के तीसरे चरण की चर्चा करग जिसम सामती उत्पादन सबधो क ताने-बाने के भीतर एक नयी – पूजीवादी – उत्पादन प्रणाली के तत्व प्रकट होन लगे थे। इस प्रक्रिया को उत्पादन प्रविधियो तथा सगठन की उन्नति ने जन्म दिया था।

लोहे के उत्पादन का बढना इस प्रक्रिया म एक अत्यत महत्वपूर्ण कारक था, क्योकि लोहा कृषि तथा उद्योग, दोनो के लिए सबसे जरूरी धातु था। पहली – यद्यपि आकार मे बहुत छोटी – वात्या भट्ठिया उपयोग मे आन लगी, जिनमे कच्चा लोहा तैयार किया जाता था जिससे फिर सामान्य लोहा और इस्पात प्राप्त किये जाते थे। सोने चादी ताबे टीन और सीसे जैसी अधिक मूल्यवान धातुओ का उत्पादन भी बढन लगा और खनन प्रविधियो मे महत्वपूर्ण सुधार आया। लोगो ने गहरे कूपको को उपयोग मे लाना सीखा और खानो से पानी पप करन और उनमे हवा पहुचाने की युक्तिया निकाली। जलचालित मशीनो और पनचरखी का आविष्कार हुआ।

परिवहन मे भी महत्वपूर्ण उन्नतिया हुई। अब कुतुबनुमा की सहायता से स्थल से बहुत दूर-दूर तक समुद्र यात्राए करना सभव हो गया और नयी किस्म क बादबानो का चलन शुरू हुआ, जिनसे हवा के खिलाफ भी जाया जा सकता था। इन सभी नयी खोजो और आविष्कारो ने पद्रहवी शताब्दी के अत से लेकर सत्रहवी शताब्दी के अत तक की महान भौगोलिक खोजो का पथ प्रशस्त किया।

महान भौगोलिक खोजें

इसी काल म यूरोपीया ने अनक नये देशो को खोजा और समार क सुदूरतम कोनो तक नये अनातपूर्व रास्ते खोले। जनोवा मे जन्मे क्रिस्टोफ़र कोलबस नामक एक जहाजी न, जो स्पेनी सम्राट की सेवा मे था, १४६२ मे अमरीका की खोज की जिसे बाद मे एक और जेनोवावासी अन्वेषक – अमरीगो वस्पूची – क नाम पर अमरीका नाम दिया गया। वस्पूची न ही सबसे पहले इस नये महाद्वीप का मानचित्र बनाया था। १४६७-१४६८ मे पुर्तगाल का रहनेवाला वास्को दा गामा अफ्रीका के दक्षिण मे आशा अतरीप (केप आफ गुड होप) होता हुआ भारत पहुचा।

१५१६ म पुर्तगाली अन्वेषक मेजेलन न स्पेनी सम्राट क आदेश पर समार के चहु ओर अपनी पहली यात्रा पूरी की। स्पेन से पश्चिम की ओर जाते हुए उसन अतत दक्षिण अमरीकी मुख्यभूमि को टीएरा डेल फ्यूगो से पृथक करनेवाले जलमयोजक (मेजेलन जलमयोजक) का पता लगाया और प्रशात महासागर को पार करता हुआ फिलीपीन द्वीपसमूह पहुच गया। यहा वह स्थानीय लोगो से एक मुठभेड में मारा गया लेकिन उसके साथियो ने डेल कानो के नेतृत्व म अपनी यात्रा जारी रखी और सितबर, १५२२ मे व स्पेन वापस पहुच गये। इस यात्रा के दौरान नाविकदल के अधिकाश लोग – २३४ मे से २१८ – भूख और बीमारी से मर गये थे। सत्रहवी शताब्दी मे डचो ने आस्ट्रेलिया को खोजा।

पूजीवादी उत्पादन प्रणाली का उदय

उत्पादन प्रविधियो मे विभिन्न नवाचारो के कारण श्रम उत्पादिता का स्तर ऊपर उठा। लेकिन मध्य युग का लाक्षणिक छोटे पैमाने का उत्पादन श्रम साधनो (उपकरणो) के परिष्कार को बढावा देने के अयुक्त था – मध्ययुगीन उद्योग के सगठनात्मक स्वरूप ऐसे नहीं थे कि आविष्कारो या सुधारो को प्रोत्साहित करते। मध्ययुगीन श्रेणिया (शिल्प सघ या गिल्ड) इस डर से प्रविधियो अथवा श्रम सगठन के सुधारो मे बाधाए खडी करती थी कि कही उनके कारण कोई श्रेणी सदस्य औरो से अधिक धनी न हो जाये। इधर उत्पादन के प्रसार की आवश्यकता अपने को अधिकाधिक अनुभत करवा रही थी। वस्त्र उद्योग जैसे उद्योगो के बारे मे यह बात खासकर सही थी, जो कुछ देशो मे लबे समय से घरेलू और विदेशी मडियो के लिए माल तैयार करते आये थे। फ्लोरस के रेशम तथा ऊन उद्योग और गेट, ब्रियूग तथा ईप्र के कपडा उद्योग पर यही बात लागू होती थी। यही वे जगह

थी जहा पूजीवाद की तरफ सक्रमण के लक्षणो ने सबसे पहले प्रकट होना शुरू किया था।

धीरे-धीरे श्रेणी प्रणाली मे नये लक्षण प्रकट होने लगे, जिन्होने भविष्य मे आनेवाले भारी परिवर्तनो के लिए पथ प्रशस्त किया। विभिन्न उद्योगो म उच्चतर श्रम उत्पादिता और उत्पादन के परिमाण मे काफी वद्धि इस बात की सूचक थी कि उत्पादन प्रक्रियाओ का कई अलग अलग कार्यो अथवा प्रक्रियाओ मे विभाजन हो गया था, जिनमे से प्रत्येक को एक अलग श्रेणी पूरा करती थी। मिसाल के लिए फ्लोरेसी वस्त्र उद्योग मे बनकरो, कातनेवालो, रगसाजो आदि की श्रेणिया स्थापित हो गयी थी – इस बात को इस तरह भी कहा जा सकता है कि विभिन्न श्रेणियो मे श्रम विभाजन हो गया था।

इसी के साथ-साथ दूसरे परिवर्तन भी आ रहे थे। पर्याप्त साधनसपन्न व्यापारी अक्सर एक या अधिक श्रेणियो से थोक माल खरीद लेते थे और फिर उसे बिक्री तथा खपत की जगह पहुचाने और बेचने की व्यवस्था भी करते थे। इसके बाद उन्होंने धीरे धीरे कच्चे मालो और फिर श्रम साधनो के प्रदाय को भी अपन ही हाथो मे लेना शुरू कर दिया और श्रेणी सदस्य इस तरह के व्यापारियो के अधिकाधिक आश्रित होते चले गये। लेकिन चूकि मध्ययुगीन श्रेणियो की नियमावलिया इस प्रकार की निर्भरता पर निश्चित सीमाए लगाती थी, इसलिए व्यापारी अपनी गतिविधियो को अक्सर गावो म ही केंद्रित करते थे, जहा किसान अनादि काल से विभिन्न धधे करते आये थे और अपनी तथा अपने परिवारो की जरूरतो को पूरा करन के लिए तरह-तरह के उत्पादन काय (विशेषकर वस्त्र उत्पादन) भी करते थे। व्यापारी इस तरह के देहाती दस्तकारो को कच्चे माल और औजार – चरखे करघे, रग आदि – मुहैया करते थे और जल्दी ही देहाती कारीगर पूरी तरह से उनके आश्रित हो गये। व्यापारी लोग इन दस्तकारो को अपने काम के लिए यथासभव कम से कम देते थे, उन्हे प्रदत्त कच्चे मालो औजारो तथा अन्य सुविधाओ के लिए भारी ब्याज लेते थ और अत मे उनकी बनायी चीजो को यथासभव अधिक से अधिक कीमत पर बेचते थे। कुछ ही समय के भीतर देहाती कारीगरो ने अपन को इन व्यापारियो पर अत्यधिक निर्भर पाया। विशेषकर जब व्यापारियो ने मौके पर ही उत्पादन की देखरेख करना भी शुरू कर दिया तब तो यह निर्भरता और भी भारी हो गयी।

इस प्रकार के व्यापारी दस्तकारो को कच्ची सामग्रिया और औजार कर्ज पर देते थे और यह माग करते थे कि दस्तकार जो कुछ भी बनाय वह सिर्फ उन्ही को बेचे क्योकि व्यापारी अच्छी तरह जानत थे कि उधार

दी हुई चीजों पर उन्होंने जितना खर्च किया है, अंत में उससे उन्हें कहीं ज्यादा प्राप्त होगा। दूसरे शब्दों में उन्हें दस्तकारों को दी हुई चीजों की लागत और पूरा सूद ही नहीं मिल जायेगा बल्कि तैयार माल की बिक्री में अतिरिक्त मुनाफा भी मिलेगा। इसका कारण यह है कि तैयार माल उस कच्ची सामग्री से कहीं अधिक मूल्यवान होता है जिससे यह बनाया जाता है – और सिर्फ इसीलिए नहीं कि तैयार माल के मूल्य में कच्ची सामग्री का मूल्य और उत्पादन में प्रयुक्त औजारों की कीमत का कुछ हिस्सा शामिल होता है, बल्कि सर्वप्रथम इसलिए भी कि उसके उत्पादन के लिए एक विशिष्ट मात्रा में मानव श्रम आवश्यक है।

उद्यमकर्ता कारीगरों को उत्पादन में उनके द्वारा लगाये श्रम के केवल कुछ भाग के लिए ही दकर शेष पैसा अपने लिए रख लेते थे। उद्यमकर्ता इस प्रकार जिस श्रम को चुरा लेता है वह अतिरिक्त या बेशी श्रम कहलाता है। बेशी श्रम द्वारा उत्पादित और बाद में बाजार में बेचा गया तैयार माल उद्यमकर्ता को अतिरिक्त मूल्य अर्थात मुनाफा या लाभ देता है, जिसके लिए उद्यमकर्ता अपनी मजदूरी करनेवाले मेहनतकशों पर अपनी सत्ता स्थापित करता है। सामाजिक विकास की इस अवस्था में वह उत्पादन के अधीक्षण में प्रत्यक्ष भूमिका नहीं अदा करता था और उसने उसे अभी तक चले आये रूप में ही रहने दिया था लेकिन अब वह उन कारीगरों को उजरत देने लग गया था जो अपनी श्रम शक्ति की कीमत से अधिक मूल्य पैदा कर रहे थे। ये उद्यमकर्ता बेशी मूल्य प्राप्त करने के लिए इन उजरती कारीगरों का शोषण करते थे। उद्यमकर्ता जिस कीमत पर मेहनतकश की श्रम शक्ति पर नियंत्रण प्राप्त करता है, वही उस मजदूर की उजरत या मजदूरी होती है। उद्यमकर्ता दस्तकारों और ग्रामीण कारीगरों के काम में जो धन लगाता है वह पूंजी – बेशी मूल्य लानेवाला धन – कहलाता है और स्वयं इस तरह का उद्यमकर्ता पूंजीपति कहलाता है। बेशी मूल्य पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली का एक आवश्यक लक्षण है। यही वह लक्ष्य है जिसकी तरफ पूंजीपति का समस्त कार्यकलाप निर्देशित होता है और जिसमें उसे अपने क्रियाकलाप की सार्थकता दिखायी देती है।

विनिर्माणशाला (मैन्युफैक्टरी)

अब हम यह देखेंगे कि आरंभिक पूंजीपति किस तरह अपने मुनाफों को बढ़ाने की कोशिश करते थे। पहले वे अलग अलग उत्पादकों का तैयार माल खरीदा करते थे, बाद में उन्होंने कारीगरों को कच्चे माल और औजार देना शुरू किया और अंत में वे उत्पादन के अधीक्षण में प्रत्यक्ष भाग लेने लगे। अधीक्षण

विभिन्न रूप लेता था। उदाहरण के लिए उद्यमकर्ता कारीगरों को कुछ ज्यादा सहज और जटिल काम—जैसे कपड़ा रंगना—अपनी इमारत या जगह में अपनी प्रत्यक्ष देखरेख में करने को मजबूर कर देता था। इसके बाद हो सकता था कि वह किसी विशिष्ट प्रकार के उत्पादन में निहित सभी कार्यों को अपने प्रत्यक्ष अधीक्षण के तले किसी विशेष इमारत या इमारतों अथवा जगह में संकेंद्रित कर दे। इस रूप में विनिर्माणशाला या मैनुफैक्टरी का उदय हुआ। विनिर्माणशाला पूंजीवादी उत्पादन की एक प्रारंभिक संस्था थी जो पंद्रहवीं शताब्दी के अंत में यूरोप में सूत्र व्यापक हो गयी थी और जिसे अठारहवीं शताब्दी तक अपना प्रभुत्व जमाये रखना था—इसी कारण यह काल विनिर्माणशाला काल कहलाता है। मैनुफैक्टरी लैटिन के मानू फासिओ' (मैं हाथ से बनाता हूं) से निकला है, क्योंकि इन विनिर्माणशालाओं या मैन्युफैक्टरियों में सारी आवश्यक क्रियाएं हाथ से ही—कारीगर द्वारा छोटे-छोटे वैयक्तिक उपकरणों या औजारों की सहायता से जिन्हें वह अपने हाथ में रखता था—निष्पादित की जाती थीं। अगर उद्यमकर्ता सारे ही काम का अधीक्षण करता था, अर्थात अगर वह किसी नियत चीज की तैयारी के लिए आवश्यक सभी क्रियाओं को अपनी सीधी निगरानी में अपनी जगह में करवाता था तो ऐसी विनिर्माणशाला केंद्रीकृत विनिर्माणशाला कहलाती थी। लेकिन अगर—इसके विपरीत—पूंजीपति अलग-अलग लोगों को उजरत में लेता था जो प्रायः गांवों में रहा करते और अपनी-अपनी कार्यशालाओं में काम करते थे तो उसे विछिन्न विनिर्माणशाला कहते थे। इसके अलावा एक तीसरे प्रकार की विनिर्माणशाला भी होती थी जिसमें कुछ उत्पादन क्रियाएं अलग-अलग कारीगरों की कार्यशालाओं में की जाती थीं और शेष उद्यमकर्ता की जगह में उसके अधीक्षण और प्रबंध में की जाती थीं।

उजरती मजदूरों के वर्ग का आविर्भाव

उपरिवर्णित तीनों प्रकार की विनिर्माणशालाएं पूंजीवादी उद्यम ही थीं, क्योंकि उनमें काम करनेवाले लोग उजरती मजदूर थे जो अपनी श्रम शक्ति पूंजीपति को बेचते थे और पूंजीपति इस श्रम शक्ति का शोषण करके अपने लिए बेशी मूल्य—अपने मुनाफे का मुख्य भाग—प्राप्त करता था। मुनाफे की भूख ही पूंजीपति के सभी उपक्रमों की प्रेरक शक्ति थी और वह सदा मजदूर को यथासंभव कम से कम देने की कोशिश करके और अधिक से अधिक पैदा करने के लिए मजबूर करके इस मुनाफे को बढ़ाने का प्रयास करता था। जहां तक पहले उद्देश्य की बात है तो यह सुनिश्चित करने में पूंजीपति का निहित स्वार्थ था कि समाज में यथासंभव ज्यादा से ज्यादा गरीब उत्पादन साधनों

और निर्वाह साधनो स वचित लोग हो, जो इस वजह से अपनी श्रम शक्ति को – अपने पास बची एकमात्र अपनी चीज को – बेचने के लिए विवश होगे। इस तरह के लोग जितने ही ज्यादा होते, पूजीपति को मजदूरी के रूप म उनको उतना ही कम देना पडता। अपन उजरती मजदूरो की श्रम उत्पादिता को ऊचा करने के लिए विनिर्माणशालापति मिलसिलेवार या तरतीबी श्रम विभाजन शुरू कर देता था – हर मजदूर सिर्फ एक ही क्रिया करता था जिसका मतलब यह होता था कि वह एक ही तरह के औजारो से एक ही तरह की हरकते करने का अभ्यस्त हो जाता था।

इसका लाभ यह था कि ये तथाकथित तरतीबी मजदूर जल्दी ही उत्पादन प्रक्रिया के अपन हिस्से को ज्यादा तेजी स पूरा करने लगते थे और इस तरह मध्ययुगीन दस्तकारो की तुलना मे जो विभिन्न हरकतो की अपेक्षा करनेवाली कई क्रियाओ से बना सारा उत्पादन चक्र अकेले ही पूरा किया करते थे, एक निश्चित समय के भीतर एक ही तरह की कही अधिक क्रियाए पूरी कर लेते थे।

श्रम उत्पादिता को बढान म महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनेवाला एक अन्य कारक उत्पादन म प्रयुक्त औज़ारो मे सुधार था। विनिर्माणशाला के मजदूरो के हाथ म जितने ही बेहतर औजार आते गये और ये औजार मजदूरो द्वारा की जानेवाली एक एक ही क्रिया के जितने ही अधिक उपयुक्त होते गये उतना ही उस क्रिया विशेष मे मजदूरो द्वारा लगाया जानेवाला समय भी कम होता गया और वे उतना ही अधिक उत्पादन करने लगे। स्वाभाविक बात है कि सुधरे हुए नये औजार हासिल करना और इस तरह अपने मुनाफे बढाना विनिर्माणशालापतियो के ही हित मे था।

नयी उत्पादन प्रणाली अपनी पूजी लगानेवाले सभी लोगो को भारी मुनाफो की प्रत्याशा देती थी, इसलिए विनिर्माणशालाओ की सख्या मे तेजी से वृद्धि आयी। अक्सर हर विनिर्माणशालापति के पडोस मे ही कोई उसका प्रतिद्वद्वी भी होता था, जो कम लागत पर बेहतर सामान बनाने की कोशिश करता था, क्योकि इसी तरह से प्रतिद्वद्विता मे जीता जा सकता था। इसलिए पूजीवादी उत्पादन प्रणाली सदा उत्पादन साधनो मे महत्वपूर्ण सुधारो और उत्पादन प्रविधियो मे क्राति के साथ जुडी रही है। आरभिक पूजीपतियो द्वारा अधिकतम मुनाफे हासिल करने के लिए नयी, उन्नत प्रविधियो का प्रचलन इस उत्पादन प्रणाली का एक महत्वपूर्ण प्रगतिशील लक्षण था। उत्पादन प्रक्रियाओ को सुचारू और कारगर बनाने की आकाक्षा ने सबद्ध लोगो को मनुष्य के हाथो की ऐसी मशीनो से प्रतिस्थापना करने के बारे मे सोचने की प्रेरणा दी जो समान क्रियाओ को कही अधिक गति और सुतथ्यता के साथ कर सके। इसके कारण मशीन का प्रादुर्भाव हुआ विनिर्माणशाला

की जगह फैक्टरी – कारखाने – ने ली और आधुनिक युग की लाक्षणिक जबरदस्त प्राविधिक प्रगति हुई। आरभिक उद्यमकर्ताओं ने अपने उद्यमो मे सगठन को सुधारकर, अपने मजदूरो को बेहतर प्रशिक्षण देकर, जिसके परिणामस्वरूप उनमे से बहुत से अपने काम मे माहिर हो गये, और श्रम के बेहतर औजारो का उपयोग शुरू करके अपने उजरती मजदूरो के श्रम का तीव्रीकरण किया।

नयी, पूजीवादी उत्पादन प्रणाली के ऐतिहासिक परिणाम निकले। उसने मानवजाति के इतिहास मे एक नये युग का सूत्रपात किया। इन परिणामो ने अपने-आपको उस महाविपत्ति मे प्रकट किया, जिसने शहरो और गावो, दोनो ही मे सभी छोटे उत्पादको को बरबाद कर दिया। इस महाविपत्ति ने शहरो और दहातो मे मेहनतकश जनसाधारण को कगाल सर्वहारा अर्थात ऐसे लोगो मे परिणत कर दिया, जो उत्पादन के साधनो तथा औजारो से, यानी स्वतत्र आजीविका के साधनो से सर्वथा वचित थे और इसलिए जिनके पास अपनी श्रम शक्ति को बेचकर गुजर करने के अलावा कोई और चारा न था।

पूजी का आद्य सचय

उजरती मजदूरो के शोषण को सभव बनाने के लिए यह आवश्यक था कि किसानो और दस्तकार जनसाधारण के अधिकाश को उत्पादन के औजारो तथा साधनो और जीविकोपार्जन के साधनो से वचित और उन्हे अपनी श्रम शक्ति बेचकर गुजर करने के लिए विवश कर दिया जाये। वस्तुत ससार म सब जगह पूजीवादी उत्पादन प्रणाली के उदय के पहले ऐसा ही हुआ था। किसानो की उनकी जमीनो से बेदखली और दस्तकारो की बरबादी और कगाली के फलस्वरूप उत्पादन के सभी साधन – जमीन और उत्पादन के औजार और इस प्रकार उनके जीविका के साधन भी – थोडे से पूजीपतियो के हाथो मे सकेद्रित हो गये, जिनके लिए अब सिर्फ मेहनतकश लोगो से छीनी गयी चीजो के साथ ही नही, बल्कि स्वय मेहनतकशो के साथ भी जो अपनी श्रम शक्ति को बेचने को विवश हो गये थे मनमानी करना सभव हो गया।

पूजी के इस आद्य सचय के विकास को इगलैड के उदाहरण से आसानी से समझा जा सकता है। इगलैड पूजीवादी विकास का क्लासिकी नमूना प्रस्तुत करता है। पर्याप्त वर्षा और नमी के कारण यहा हरेभरे चरागाहो का प्राचुर्य था। सदियो से अग्रेज भेडो के पालन और ऊन के निर्यात से खूब धन कमाते आये थे। ऊनी वस्त्रो की माग बढने से ऊन ज्यादा महगा हो

और निर्वाह साधना से वंचित लोग हों, जो इस वजह से अपनी श्रम शक्ति को – अपने पास बची एकमात्र अपनी चीज को – बेचने के लिए विवश होंगे। इस तरह ये लोग जितने ही ज्यादा होते, पूजीपति को मजदूरी के रूप मे उनको उतना ही कम देना पडता। अपने उजरती मजदूरो की श्रम उत्पादिता को ऊचा करने के लिए विनिर्माणशालापति सिलसिलेवार या तरतीबी श्रम विभाजन शुरू कर लेता था – हर मजदूर सिर्फ एक ही क्रिया करता था जिसका मतलब यह होता था कि वह एक ही तरह के औजारो से एक ही तरह की हरकते करने का अभ्यस्त हो जाता था।

इसका लाभ यह था कि ये तथाकथित तरतीबी मजदूर जल्दी ही उत्पादन प्रक्रिया के अपने हिस्से को ज्यादा तेजी से पूरा करने लगते थे और इस तरह मध्ययुगीन दस्तकारो की तुलना मे जो विभिन्न हरकतो की अपेक्षा करनेवाली कई क्रियाओ से बना सारा उत्पादन चक्र अकेले ही पूरा किया करते थे, एक निश्चित समय के भीतर एक ही तरह की कही अधिक क्रियाए पूरी कर लेते थे।

श्रम उत्पादिता को बढाने मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनेवाला एक अन्य कारक उत्पादन मे प्रयुक्त औजारो मे सुधार था। विनिर्माणशाला के मजदूरो के हाथ मे जितने ही बेहतर औजार आते गये और ये औजार मजदूरो द्वारा की जानेवाली एक एक ही क्रिया के जितने ही अधिक उपयुक्त होते गये उतना ही उस क्रिया विशेष मे मजदूरो द्वारा लगाया जानेवाला समय भी कम होता गया और वे उतना ही अधिक उत्पादन करने लगे। स्वाभाविक बात है कि सुधरे हुए नये औजार हासिल करना और इस तरह अपने मुनाफे बढाना विनिर्माणशालापतियो के ही हित मे था।

नयी उत्पादन प्रणाली अपनी पूजी लगानेवाले सभी लोगो को भारी मुनाफो की प्रत्याशा देती थी इसलिए विनिर्माणशालाओ की सख्या मे तेजी से वृद्धि आयी। अक्सर हर विनिर्माणशालापति के पडोस मे ही कोई उसका प्रतिद्वद्वी भी होता था जो कम लागत पर बेहतर सामान बनाने की कोशिश करता था, क्योकि इसी तरह से प्रतिद्वद्विता मे जीता जा सकता था। इसलिए पूजीवादी उत्पादन प्रणाली सदा उत्पादन साधनो मे महत्वपूर्ण सुधारो और उत्पादन प्रविधियो मे क्राति के साथ जुडी रही है। आरभिक पूजीपतियो द्वारा अधिकतम मुनाफे हासिल करने के लिए नयी उन्नत प्रविधियो का प्रचलन इस उत्पादन प्रणाली का एक महत्वपूर्ण प्रगतिशील लक्षण था। उत्पादन प्रक्रियाओ को सुचारू और कारगर बनाने की आकाक्षा ने सबद्ध लोगो को मनुष्य के हाथो की ऐसी मशीनो से प्रतिस्थापना करने के बारे मे सोचने की प्रेरणा दी जो समान क्रियाओ को कही अधिक गति और सुतथ्यता के साथ कर सके। इसके कारण मशीन का प्रादुर्भाव हुआ विनिर्माणशाला

की जगह फैक्टरी – कारखाने – ने ली और आधुनिक युग की लाक्षणिक जबरदस्त प्राविधिक प्रगति हुई। आरभिक उद्यमकर्ताओ ने अपने उद्यमो मे सगठन को सुधारकर, अपने मजदूरो को बेहतर प्रशिक्षण देकर, जिसके परिणामस्वरूप उनमे से बहुत से अपने काम मे माहिर हो गये, और श्रम के बेहतर औजारो का उपयोग शुरू करके अपने उजरती मजदूरो के श्रम का तीव्रीकरण किया।

नयी, पूजीवादी उत्पादन प्रणाली के ऐतिहासिक परिणाम निकले। उसने मानवजाति के इतिहास मे एक नये युग का सूत्रपात किया। इन परिणामो ने अपने आपको उस महाविपत्ति मे प्रकट किया, जिसने शहरो और गावो दोनो ही मे सभी छोटे उत्पादको को बरबाद कर दिया। इस महाविपत्ति ने शहरो और देहातो मे मेहनतकश जनसाधारण को कगाल सर्वहारा अर्थात् ऐसे लोगो मे परिणत कर दिया, जो उत्पादन के साधनो तथा औजारो से, यानी स्वतत्र आजीविका के साधनो से सर्वथा वचित थे और इसलिए जिनके पास अपनी श्रम शक्ति को बेचकर गुजर करने के अलावा कोई और चारा न था।

पूजी का आद्य सचय

उजरती मजदूरो के शोषण को सभव बनाने के लिए यह आवश्यक था कि किसानो और दस्तकार जनसाधारण के अधिकाश को उत्पादन के औजारो तथा साधनो और जीविकोपार्जन के साधनो से वचित और उन्हे अपनी श्रम शक्ति बेचकर गुजर करने के लिए विवश कर दिया जाये। वस्तुत ससार मे सब जगह पूजीवादी उत्पादन प्रणाली के उदय के पहले ऐसा ही हुआ था। किसानो की उनकी जमीनो से बेदखली और दस्तकारो की बरबादी और कगाली के फलस्वरूप उत्पादन के सभी साधन – जमीन और उत्पादन के औजार और इस प्रकार उनके जीविका के साधन भी – थोडे से पूजीपतियो के हाथो मे सकेद्रित हो गये, जिनके लिए अब सिर्फ मेहनतकश लोगो से छीनी गयी चीजो के साथ ही नही बल्कि स्वय मेहनतकशो के साथ भी जो अपनी श्रम शक्ति को बेचने को विवश हो गये थे मनमानी करना सभव हो गया।

पूजी के इस आद्य सचय के विकास को इगलैड के उदाहरण से आसानी से समझा जा सकता है। इगलैड पूजीवादी विकास का क्लासिकी नमूना प्रस्तुत करता है। पर्याप्त वर्षा और नमी के कारण यहा हरेभरे चरागाहो का प्राचुर्य था। सदियो से अग्रेज भेडो के पालन और ऊन के निर्यात से खूब धन कमाते आये थे। ऊनी वस्त्रो की माग बढने से ऊन ज्यादा महगा हो

गया और इसलिए पद्रहवी शताब्दी के अत तक अग्रेज व्यापारियो ने ऊनी कपडे के उत्पादन के लिए अपनी खुद की विनिर्माणशालाए बनाना शुरू कर दिया। ऊन की माग बढती ही चली गयी और अग्रेज शासक वर्ग के प्रतिनिधियो ने अपने लाभदायी ऊन उत्पादन का प्रसार करने के लिए किसानो को उनकी जमीनो से बेदखल करना, इस तरह छीनी जमीन की बाडेबदी करना, ताकि और कोई उसे उपयोग मे न ला सके, और उसमे भेडो के बडे-बडे रेवड़ो को रखना शुरू कर दिया। कभी-कभी तो इस तरह से पूरे के पूरे गावो का नष्ट कर दिया जाता था और इस तरह जमीन छिनने से बरबाद हुए किसान शहरो का रास्ता पकडते थे, जहा वे विनिर्माणशालाओ मे काम पाने की कोशिश करते थे।

किसानों का स्वत्वहरण

सोलहवी शताब्दी के सुविख्यात अग्रेज विद्वान टामस मोर ने लिखा था कि इगलैड मे "भेडे लोगो को खा रही है। अठारहवी शताब्दी के मध्य तक एक वर्ग के रूप मे इगलैड मे कृषक समुदाय का अस्तित्व समाप्त हो चुका था। जमीन लार्डो–प्रभावशाली जमीदारो–के हाथो मे पहुच गयी थी जो उसे उजरती मजदूरो की सहायता से काश्त करने के लिए पूजीपति भूस्वामियो (फार्मरो) को लगान पर दे देते थे। इस तरह इगलैड की कृषि मे पूजीवादी उत्पादन प्रणाली का प्रभुत्व स्थापित हो गया।

आर्थिक प्रगति लघु स्तर के उत्पादकों की बरबादी के रास्ते पर चलकर हासिल की गयी थी और चूकि विनिर्माणशालाए – विशेषकर आरभिक अवस्थाओ मे – जमीनो से बेदखल किये गये सारे ही किसानो को जज्ब नही कर सकती थी इसलिए बहुत बडी सख्या मे किसान देश भर मे अनियत मजदूरी की खोज मे भटकने के लिए और यदि वह न मिल पाये तो भिखमगी, चोरी और लूटमार तक करने के लिए मजबूर हो गये। सरकार ने इस स्थिति का सामना करने के लिए आवारागर्दी के खिलाफ कठोर कानून जारी किये। सूअर के बच्चे के मूल्य की भी किसी चीज को चुराने की सजा फासी थी। एडवर्ड षष्ठ ने १५४७ मे एक कानून जारी किया, जिसके अनुसार काम से बचनेवाले सभी लोग उन व्यक्तियो के दास बना दिये जाते थे जो उनकी आवारागर्दी की रिपोर्ट करते थे। आवारा घूमनेवालो को कोडो से पीटा जा सकता था और जजीरो मे जकडा जा सकता था और इस तरह काम करने के लिए मजबूर किया जा सकता था। अगर कोई मजदूर बिला छुट्टी दो हफ्ते गैरहाजिर रहता था तो उसे जीवन भर दासता की सजा दी जाती थी और उसके माथे या गाल पर अग्रेजी का 'एस" अक्षर दाग दिया

जाता था, जो स्लेव, यानी दास या गुलाम था। अगर वह तीसरी बार भाग जाता था, तो राजकीय अपराधी की तरह फांसी पर लटका दिया जाता था।

दस्तकारों की तबाही

यदि अपनी जमीनों से खदेड़े गये किसानों की अवस्था दारुण थी, तो दस्तकारों की दशा भी कोई बेहतर नहीं थी। उद्योग के कई क्षेत्रों में विनिर्माणशालाओं की बढ़ती हुई संख्या के कारण अनिवार्यतः दस्तकारों की तबाही हुई, क्योंकि उनके लिए विनिर्माणशालाओं से प्रतिद्वंद्विता करना असंभव था, जो ज्यादा सस्ते और बेहतर किस्म के सामान तैयार कर सकती थीं। दस्तकारों को अपनी कार्यशालाएं बंद करने और अगर वे खुशकिस्मत हुए तो विनिर्माणशालाओं में मजदूरी करने और नहीं तो आवारागर्दों और कंगालों की कतारों में शामिल होने के लिए विवश होना पड़ा।

औपनिवेशिक लूट

अपने कृषक समुदाय का दरिद्रीकरण करने के बाद अंग्रेज शासक वर्गों ने (विशेषकर उनके वे अंशक, जो पूंजीवादी उत्पादन से प्रत्यक्षतः संबद्ध थे अर्थात जमींदार, जो पूंजीपति और विनिर्माणशालापति बन गये थे) धन की अदम्य लिप्सा से बेचैन होकर अपना ध्यान उपनिवेशों की तरफ मोड़ा। यही वह समय है, जिसमें यूरोपीय शक्तियों की औपनिवेशिक नीतियों और अपनी सारी विभीषिकाओं – अन्य जातियों का दासकरण, उनकी संपदा की निर्लज्जतापूर्ण लूट और स्वत्वहरण – के साथ उपनिवेशवाद ने रूप ग्रहण किया था। सबसे पहले स्पेनियों तथा पुर्तगालियों ने और फिर अंग्रेजों ने नवान्वेषित देशों की तरफ अपनी बुभुक्षित दृष्टि डाली। निर्मम और निष्ठुर स्पेनी तथा पुर्तगाली ईदाल्गोओं (निम्न अभिजातों) ने मध्य अमरीका को शब्दशः उजाड़ दिया, अंग्रेजों ने उत्तरी अमरीका की देशज आबादी का बहुत बड़ी संख्या में सफाया कर दिया और डच दक्षिण पूर्वी एशिया में जा घुसे।

डच लोगों ने, जो आरंभ में अपने अंग्रेज़ और स्पेनी प्रतिस्पर्धियों से पीछे रह गये थे, जल्दी ही खोये समय की कसर पूरी कर ली। सत्रहवीं शताब्दी में हालैंड एक आदर्श पूंजीवादी देश था। इस जमाने का डच उपनिवेशवाद का इतिहास गद्दारी, रिश्वतखोरी, हत्या और पाशविक निर्ममता की अपनी दास्तान के साथ प्रारंभिक औपनिवेशिक शक्ति की एक क्लासिकी मिसाल

पेश करता है। डच उपनिवेशवादी तो जावा मे अपने दासो की सख्या बढाने के लिए सेलीबीज द्वीप से लोगो का अपहरण करके लाने की हद तक चले गये थे और इस कार्य के लिए विशेष टुकडिया बनायी गयी थी। आदमियो के इस व्यापार के मुख्य प्रेरक चोर, दुभाषिये और व्यापारी थे। बचने का काम मुख्यतया स्थानीय सरदार करते थे।

औपनिवेशिक प्रणाली ने व्यापार तथा जहाजरानी की त्वरित वृद्धि को सभव बनाया। इजारेदार या एकाधिकारी व्यापारिक कपनिया पूजा के सकेद्रण के लिए शक्तिशाली उत्तोलक का काम करती थी। उपनिवेश सख्या मे तेजी से बढती विनिमाणशालाओ के उत्पादनो के लिए मडिया बनते थे और इन मडियो के इजारे से सचय मे तेजी आती थी। यूरोप के बाहर सुरा लूट देशज आबादियो के दासकरण और हत्या से हस्तगत धन इन कपनिया की तिजोरियो मे भर-भरकर नयी पूजी उपलब्ध करवाता था, जो आद्य पूजी सचय की प्रक्रिया के दौरान लगातार कगाली के गर्त मे गिरते अपने ही मेहनतकशो के शोषण को तीव्र करने का काम करती थी। औपनिवेशिक प्रणाली, जो अभी हाल ही तक बनी रही थी, अधीनस्थ जातियो का निर्मम शोषण करती थी। इस शोषण को सुनिश्चित करने के लिए उपनिवेशवादी इसकी पक्की व्यवस्था करते थे कि उनके नये प्रदेशो की आबादी निर्धनता और अज्ञान मे रहे क्योकि उन्हे विश्वास था कि औपनिवेशिक जनो की रिहायशी हालते जितनी ही ज्यादा खराब होगी, उन्हे उनकी मेहनत के लिए मजदूरी भी उतनी ही कम देनी पडेगी। इसीलिए उपनिवशवादियो ने उपनिवेशो के औद्योगिक विकास को रोके रखा। उन्होने स्थानीय लोगो को यूरोपीय उद्योगो के लिए कच्चे माल पैदा करने और फिर उनमे निर्मित सामान खरीदने के लिए मजबूर किया। इस तरह का शोषण सदियो तक चलता रहा और अब कितने ही मामलो मे स्पेन, इगलैड हालैड और फ्रास के पुराने औपनिवेशिक शोषको का स्थान अमरीकी इजारेदारियो द्वारा ले लिया गया है। औपनिवेशिक प्रणाली के लिए मुनाफा ही मानवजाति का अतिम एव एकमात्र लक्ष्य था।

बूर्जुआ तथा सर्वहारा वर्गों की उत्पत्ति

पूजीवाद के प्रादुर्भाव के फलस्वरूप समाज की सरचना मे आमूल परिवर्तन आये। उसके उदय के साथ साथ दो नये वर्ग पैदा हुए – औद्योगिक बूर्जुआजी (बूर्जुआ या पूजीपति वर्ग) जिसका उत्पादन साधनो पर स्वामित्व था और सर्वहारा (प्रोलेतेरियट) जिसके पास ये साधन नही थे और इसलिए जिसे अपनी श्रम शक्ति को बेचना पडता था।

निरकुश राजतत्र

इधर राज्य की राजनीतिक व्यवस्था के क्षेत्र मे सीमित राजतत्र का स्थान पूर्ण या निरकुश राजतत्र ने ले लिया था। ये निरकुश राजा पुराने सामती शासक वर्ग और बूर्जुआ वर्ग के बीच मध्यस्थ थे और इन दोनो ही वर्गों की जनसाधारण – जो इन दोनो समूहो के शोषण के शिकार थे – के क्रातिकारी आदोलन से रक्षा करते थे। बूर्जुआ वर्ग अधिकाधिक आर्थिक शक्ति प्राप्त करता जा रहा था लेकिन अभी वह इतना शक्तिशाली नही था कि सत्ता के लिए पुराने शासक वर्ग से सघर्ष कर सके। सत्ता अभिजातो के हाथो मे ही थी, लेकिन अपने राजस्व को बढाने के लिए प्रयत्नशील केद्रीकृत राजतत्र ने अपनी शक्ति को सुदृढ करते पूजीपतियो का समर्थन किया और अपनी बारी मे उन्होंने भी समर्थन के लिए निरकुश राजतत्र की ओर ही मुह किया, क्योकि वह उन्हे विदेशी मडियो मे सफल प्रतियोगिता के लिए सब तरह की सुविधाए देता था और विनिर्माणशालाओ को अनुदान देकर उनके प्रसार को प्रोत्साहित करता था।

यूरोप के छोटे-बडे अनेक राज्यो मे इस प्रकार के राजतत्र कायम हुए। ट्यूडरवशियो के शासनकाल (१४८५-१६०३) मे इगलैड तक मे राजाओ को पार्लियामेट के होने के बावजूद असाधारण मात्रा मे सत्ता प्राप्त थी। लेकिन बूर्जुआ वर्ग और उसके धन की वृद्धि सामतो के प्रभुत्व के अत की परिचायक थी। सामतो तथा सामती शोषण से घृणा करनेवाले जनसाधारण के असतोष का अपने स्वार्थो के लिए उपयोग करते हुए बर्जुआ वर्ग सत्ता की आकाक्षा करने लगा। बूर्जुआ क्रातियो का युग अब कोई बहुत दूर नही रह गया था।

जर्मनी मे
धर्म सुधार आदोलन का आरभ

सबसे पहली, यद्यपि असफल, बूर्जुआ क्राति जर्मनी मे हुई थी। आरभ मे उसने कैथोलिक चर्च – सामतवर्गीय हितो के विचारधारात्मक मुखौटे – के खिलाफ विद्रोह का रूप लिया था। असख्य छोटे-छोटे राज रजवाडो मे विछिन्न ऐसे साम्राज्य म जिसमे उसके रास्ते मे आने के लिए कोई मजबूत केद्रीय सत्ता नही थी व्याप्त राजनीतिक अव्यवस्था का पूरा पूरा लाभ उठाते हुए कैथोलिक चर्च जर्मनी को अपनी आय का मुख्य स्रोत समझता था। इस कारण जब पूजीवादी विकास अपनी बिलकुल आरभिक अवस्था म ही था जर्मन

मार्टिन लूयर चर्च से निष्कासन के पोप के आदेशपत्र को जला रहा है

बर्गरो ने स्थानीय पादरी वर्ग, विशेषतया शक्तिशाली बिशपो और चर्च के मुख्य गढ – पोपशाही – की जाबादी से अतहीन सापत्तिक मागो के खिलाफ विरोध प्रकट करना शुरू कर दिया था।

मार्टिन लूयर

जर्मन बूर्जुआ वर्ग ने अपने प्रवक्ता मार्टिन लूयर (१४८३ १५४६) के जरिये अमर्यादित सापत्तिक मागो के विरुद्ध, पोपशाही के खिलाफ अपना विरोध प्रकट किया और चर्च के लौकिक सत्ता के अधीन किये जाने की माग उठायी। जर्मनी भर म एक व्यापक आदोलन फैल गया जिसे बाद मे जनसाधारण का समर्थन भी प्राप्त हो गया। लेकिन आम लोग सिर्फ चर्च के मामलो म सुधारो की ही नही बल्कि सामती समाज के आधार पर ही कुठाराघात करनेवाले व्यापक सामाजिक सुधारो की माग कर रहे थे। कही कही तो समाज के ईश्वरीय न्याय के अनुसार पुनर्गठन के बारे म और भी अधिक आमूल परिवर्तनवादी विचारो ने भी जड पकड ली थी। ये विचार

जनसाधारण की और विशेषकर जर्मन सर्वहारा के तात्कालिक पूर्वगामियो की सामाजिक समानता की सभावना-विषयक अभी तक अस्पष्ट धारणाओ को प्रतिबिंबत करते थे।

महान कृषक युद्ध

जर्मनी मे १५२४ मे आम किसानो का एक व्यापक विद्रोह फूट पडा जो महान कृषक युद्ध के नाम से मशहूर है। इस विद्रोह ने अपनी व्याप्ति से बूर्जुआवर्गीयो को इस तक आशकित कर दिया कि उन्होने उससे किनाराकशी कर ली और अभिजातो के पक्ष मे जाकर उस निष्ठुर दमन मे शरीक हो गये जिसके फलस्वरूप इस आदोलन को अगले साल कुचल दिया गया। नतीजे के तौर पर जितने भी परिवर्तन क्रियान्वित किये गये, वे चर्च विषयक ही थे – कैथोलिक चर्च के साथ-साथ एक नया लूथरपथी (लूथरन या प्रोटेस्टेट) चर्च भी पैदा हो गया, जो अपनी उपासना विधि, कर्मकाड और रीतिविधान मे कही अधिक सरल और सादा था तथा इजील पर बहुत जोर देता था, जिसे लूथर ने लैटिन से जर्मन भाषा मे अनूदित किया था और इस प्रकार उसे आम लोगो के लिए कही अधिक सुगम्य बना दिया था। ये चर्च सुधार न केवल सामती समाज का खात्मा करने मे ही असफल रहे बल्कि उलटे उन्होने उसका और अधिक सुदृढीकरण किया। चर्चो और मठो की जमीन जायदादो को राजाओ ने जब्त कर लिया जिन्होने धर्म सुधार आदोलन का सबसे अधिक लाभ उठाया था और चर्च की कीमत पर ओर भी धनी हो गये थे। जर्मनी पहले की तरह ही राजनीतिक अनैक्य का शिकार बना रहा और सम्राट की शक्ति लगातार ज्यादा कमजोर ही होती चली गयी।

नीदरलैंड की क्राति

पहली सफल बूर्जुआ क्राति नीदरलैड का स्पेन के खिलाफ विद्रोह था जिसने पद्रहवी सदी मे इस देश पर कब्जा किया हुआ था। नीदरलैड की गणना आर्थिक दृष्टि से उन्नत देशो मे की जाती थी।

नीदरलैड मे सोलहवी शताब्दी के आरभ मे ही विनिर्माणशालाओ मे उत्पादन उच्च स्तर पर पहुच चुका था – दक्षिण मे फ्लैडर्स और ब्रबात मे और उत्तर मे हालैड जीलैड आदि प्रातो मे पशुपालन मत्स्ययन और पोतनिर्माण खूब विकसित थे। एटवर्प अतर्राष्ट्रीय व्यापार का एक प्रमुख केद्र था। नीदरलैड सत्रह प्रातो मे विभाजित था और इन सभी को स्टेटस जनरल म प्रतिनिधित्व प्राप्त था। लेकिन देश पर हाप्सबर्गवशियो जब

सम्राटो और स्पेनी बादशाहो का शासन था, जिनकी देश मे एक सेना प्रतिशासक (रीजेंट) नुमायदगी करता था।

पूजीवाद के पथ पर अग्रसर, आर्थिक दृष्टि से उन्नत नीदरलैंड और सामंती स्पेन के बीच इस असमान सबध को अत्यधिक गभीर परिणाम पैदा करने थे, विशेषकर धर्मोन्मादी फिलिप द्वितीय के शासनकाल मे। नीदरलैंड के बूर्जुआ वर्ग ने प्रोटेस्टेट मत को ग्रहण कर लिया था और अपनी स्वतत्रताओ और विशेषाधिकारो – जिनमे स्वशासन भी सम्मिलित था – की रक्षा के लिए डटकर सघर्ष करने लगा था। उधर फिलिप द्वितीय काफिरो और अपधर्मियो को सता रहा और जिदा जला रहा था और स्पेनी सत्ता के दबदबे को फिर से कायम करने की तैयारिया कर रहा था। वह स्वशासन की सारी आकाक्षाओ का सदा के लिए खात्मा करने के वास्ते अपनी सेनाए लेकर नीदरलैंड आया।

इससे नीदरलैंड मे असतोष की एक नयी और कही अधिक प्रबल लहर दौड गयी, जिसने सिर्फ बूर्जुआ और आम लोगो को ही नही, बल्कि सामंतो को भी अपनी लपेट मे ले लिया, जिन्हे यह डर था कि राज्य प्रशासन और जनता के शोषण मे उनकी भूमिका स्पेनी अभिजात ग्रहण कर लेगे और समूचे तौर पर देश का वही हाल होगा, जो स्पेन के अमरीकी उपनिवेशो का हुआ था।

यह विरोध शीघ्र ही खुले विद्रोह मे परिणत हो गया, जो १५६६ से १६०६ तक चला जब उत्तरी सूबो ने हालैंड के नेतृत्व मे अपने को स्पेनी शासन से आजाद कर लिया और स्वतत्र सयुक्त प्रात गणराज्य (हालैंड गणराज्य) की स्थापना कर दी। सिर्फ दक्षिणी प्रात ही स्पेनी अधिकार मे रह गये और वे अरसे तक बेहाली म पडे रहे जबकि हालैंड, जो औपनिवेशिक व्यवस्था स्थापित करनेवाला पहला देश था १६४८ मे ही अपनी आर्थिक शक्ति के चरम पर पहुच चुका था और वस्तुत वह सत्रहवी शताब्दी का आदर्श पूजीवादी राज्य बन गया था। उस समय आम लोगो को अत्यधिक कठोर कार्य परिस्थितियो और सामाजिक उत्पीडन का शिकार होना पडता था लेकिन यह तो पूजीवादी तरीके से विकास करनेवाले सभी देशो के लोगो के भाग्य मे लिखा हुआ था।

इस तरह हमने देखा कि सामती व्यवस्था के ढाचे के भीतर पूजीवादी विकास की पहली मजिल ने समाज और राजकीय ढाचे मे युगातरकारी परिवर्तन पैदा किये – दो नये वर्ग पैदा हो गये – बूर्जुआ और सर्वहारा वर्ग, और वर्ग सघर्ष न अधिक जटिल रूप ग्रहण कर लिया जिसने अपनी बारी मे निरकुश राजतत्र को जन्म दिया। मध्य युग की इस तीसरी मजिल मे धर्म, विज्ञान और संस्कृति के क्षेत्रो म – दूसर शब्दो म, समाज की वैचारिक अधिरचना म – आनेवाले परिवर्तन भी कोई कम दूरगामी नही थी।

नये बूर्जुआ वर्ग के लिए, जो शहर और देहात – दोनों ही जगह – पूजीवादी उत्पादन का सगठनकर्ता था, अपने उद्यमो मे श्रम उत्पादिता को बढाना और अधिक श्रेष्ठतर तथा सस्ती चीजो का उत्पादन करना जरूरी था, जिससे कि वह प्रतिद्वद्वियो के साथ सफलतापूर्वक प्रतियोगिता कर सके। इसके लिए उपयोग मे लायी जानेवाली कच्ची सामग्रियो के गुणो के बारे मे ज्यादा जानना दूसरे शब्दो मे, प्रकृति और उसके नियमो का अधिक यथातथ्य ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हो गया था।

पूजीवादी युग का समारभ एक नये ही बौद्धिक तथा सास्कृतिक आदोलन के विकास के साथ हुआ था, जो मानवतावाद और पुनर्जागरण (रेनसा) के नाम से विख्यात है। यह पुनर्जागरण का, मानवतावाद का युग यूरोप मे नयी पूजीवादी उत्पादन प्रणाली और बूर्जुआ वर्ग के उदय के साथ जुडा हुआ था। आर्थिक प्रगति और अर्थव्यवस्था के प्रसार ने यूरोप मे कैथोलिक चर्च द्वारा समर्थित उस पुराने, मध्ययुगीन दर्शन पर मरणातक प्रहार किया जो यह शिक्षा देकर न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की आशाओ को दूसरे लोक का विषय बना देने का प्रयास करता था कि मनुष्य को ससार मे अपने अस्थायी प्रवास के दौरान अपनी सारी आशाओ आकाक्षाओ को ईश्वर पर ही छोड देना चाहिए। अब बूर्जुआ उद्यमकर्त्ताओ ने अपनी आशाओ को अपनी ही शक्ति, पहल और सूझ बूझ के साथ जोडना शुरू कर दिया था। यही कारण है कि नया दर्शन ईश्वर नही वरन मनुष्य – मानव (होमो या ह्यूमन) – पर केंद्रित था और इसी से इसे मानवतावाद (ह्यूमनिज्म) का नाम भी प्राप्त हुआ है।

उस काल को, जिसमे मानवतावाद का जन्म हुआ पुनर्जागरण का युग कहा जाता है। मानवतावादी दर्शन सारे यूरोप मे फैल गया था और इसलिए इस युग को इस नाम का दिया जाना यह दिखाता है कि यह किस हद तक क्लासिकी (यूनानी रोमन) सस्कृति के 'पुनर्जन्म" को प्रतिबिबित करता था। मानवतावादियो ने प्राचीन यूनानियो और रोमनो की महान वैज्ञानिक और विशेषकर कलात्मक उपलब्धियो को पुनरुद्घाटित किया। उन्होने उसी पथ पर, खासकर विज्ञान के क्षेत्र मे फिर से बढना शुरू किया और इसीलिए अपने युग को पुनर्जागरण के युग का अर्थात प्राचीन सस्कृति के पुनर्जागरण के युग का नाम दिया।

मानवतावादी सस्कृति के पहले अकुर इटली मे प्रकट हुए और शीघ्र ही बूर्जुआ सस्कृति अन्य यूरोपीय देशो मे भी तीव्र प्रगति करने लगी। इस नये ज्ञान के प्रसार मे योगदान करनेवाला एक अत्यत महत्वपूर्ण कारक जर्मनी

मे जोहान गूटेनबर्ग द्वारा पद्रहवी शताब्दी के मध्य मे मुद्रणकला-छपाई का आविष्कार किया जाना था।

मध्ययुगीन धार्मिक सस्कृति और नयी मानवतावादी सस्कृति के सधिकाल म प्रकट होनेवाला एक महान व्यक्ति फ्लोरेंसवासी कवि दाते अलिग्यरी (१२६५-१३२१) है। उसकी विख्यात कृति 'दिव्य सुखातिकी' इतालवी भाषा मे लिखी गयी थी और यह बात स्वय अत्यधिक महत्व की थी। चौदहवी और पद्रहवी शताब्दियो मे कितने ही देशो म राष्ट्रीय चेतना ने जन्म लिया था और मानवतावादी लेखको ने इसके बावजूद कि क्लासिकी भाषाओं पर उन्हे असाधारण अधिकार प्राप्त था ओर वे अपनी वैज्ञानिक कृतियो को लैटिन मे ही लिखा करते थे साहित्यिक कृतियो के लेखन मे सदा अपनी मातृभाषाओं को ही अपनाया।

मानवतावादी लेखको की कृतियो मे आसपास के जीवन के बारे मे बहुत से विचार पाये जाते है – अपने विषयो के लिए उन्होने धार्मिक विषयवस्तु के बजाय लौकिक विषयवस्तु को और पात्रो के लिए आदर्शीकृत सैनिक सामतो (नाइटो) के बजाय सामान्य लोगो को अपनाया। इस काल के उन अनेक कवियो लेखको और नाटयकारो मे, जिन्होने विश्वव्यापी ख्याति अर्जित की है कुछ ये ह – इटली के फ्राचेस्को पैट्रार्क और ज्योवानी बोकाच्चो फ्रास के फ्रासुआ रबेला जर्मनी के ऊलरिक फान ह्यूटेन, नीदरलैड के रोटरडैमवासी इराज़मस, स्पेन के मीगेल सेवातेस और इगलैड के विलियम शेक्सपियर।

पुनर्जागरण काल मे कला का भी जबरदस्त मुकुलन हुआ। यथार्थवादी सिद्धातो पर चलनेवाले चित्रकारो और मूर्तिकारो ने मानव शरीर के सौन्दर्य और मानव आत्मा की उदात्तता को प्रतिबिबित करते हुए अपने आसपास की दुनिया को निष्ठापूर्वक अभिव्यक्ति दी। इस काल के कुछ महान चित्रकार और मूर्तिकार लेओनार्दो दा विची मिकेलाजेलो, रफाएल टिशन वलासक्स रूबेन्स आदि है।

—

कैथोलिक चर्च पर प्रहार किया, जो यह शिक्षा देता था कि सारे ससार की ही भाति सामती व्यवस्था की सृष्टि भी ईश्वर ने ही की है और इसलिए वर्तमान व्यवस्था का कोई भी विरोध करना पाप है।

धर्म-सुधार आदोलन

उन देशो मे से कइयो मे चर्च सुधारो का क्रियान्वयन किया गया, जिन्होंने पूजीवादी तरीके से विकास करना शुरू किया था। उन्होने रोमन कैथोलिक चच से नाता तोड लिया पोप को चर्च का प्रमुख मानने से इन्कार कर दिया चर्च को लौकिक शासको – बादशाहो, राजाओ या नगर शासको – के अधीन कर दिया और चर्च की शिक्षाओ को बूर्जुआ वर्ग के हितो के अधिक अनुकूल ले आये। धर्म-सुधार आदोलन का एक प्रमुख प्रबोधक जान काल्विन था, जिसकी यह शिक्षा थी कि जो व्यापारी और उद्यमकर्त्ता अपने व्यवसाय मे सफल रहते है, उनके लिए दूसरे लोक मे मुक्ति सुनिश्चित है, लेकिन मजदूरो को अपने मालिको के लिए ईमानदारी के साथ काम करना चाहिए, क्योकि ऐसा करने पर ही वे लोग अपनी बारी मे ऐसे समृद्ध सपत्तिवान बन पायेगे। काल्विन ने दासता तथा उपनिवेशवाद और आद्य पूजी सचय की प्रक्रिया मे पैदा होनेवाली सभी बुराइयो को न्याय्य बताया।

प्रगतिशील अर्थव्यवस्थावाले सभी देशो ने प्रोटेस्टेट मत को अपना लिया। यूरोप के अधिकाश मे इस नये धर्म को या तो लूथर (जर्मनी) की शिक्षाओ के रूप मे, जो राजाओ की सत्ता का समर्थन करता था या स्विस सुधारक स्विग्ली की शिक्षा के रूप मे जिसने अपनी शिक्षा को शहरी व्यापारिक और औद्योगिक बूर्जुआ वर्ग के अनुसार ढाल लिया था, अपना लिया गया।

अपनी पुरानी स्थिति को फिर स हासिल करने के कैथोलिक चर्च के सारे प्रयास असफल सिद्ध हुए। १५४० मे सस्थापित जैसुइट सघ भी अपनी वितण्डा, वाक्छल और चालबाजियो के बावजूद कुछ ही पथभ्रष्टो को अपनी गोद म वापस लाने मे सफलता प्राप्त कर सका और वह भी सिर्फ जर्मनी, पोलैड, लियुआनिया जैसे देशो मे ही।

नवा अध्याय

यूरोपीयो द्वारा जीते जाने के समय अमरीका

मध्य अमरीका के लोग

यूरोपीय उपनिवशको द्वारा खोज और जीत जाने क समय अमरीका म अनेक इडियन (अमरीकी आदिवासी) कबीले रहा करते थे, जिनके सामाजिक तथा सास्कृतिक विकास के स्तर म काफी वैभिन्य था। उनम मे कुछ ने सभ्यता के अत्युच्च स्तर को प्राप्त कर लिया था, तो कई अत्यत आदिम अवस्था मे ही रह रहे थे।

अमरीकी महाद्वीप पर नात प्राचीनतम सस्कृति -- माया सस्कृति -- मध्य अमरीका के उत्तर पश्चिमी भाग मे विकसित हुई थी। आरभ मे यह पेतेन इत्सा झील के तटो पर उसके दक्षिण पूर्वी इलाके और उसूमासिता नदी की घाटी (उत्तरी ग्वाटेमाला और वर्तमान मेक्सिको के तबास्को राज्य का प्रदेश) म केद्रित थी। लेकिन बाद म माया सस्कृति का केद्र यूकतान प्रायद्वीप बन गया जहा चिचेन इत्सा मायापान, ऊष्माल तथा अन्य नगर राज्यो का उदय हुआ, जिनमे आपस मे सदियो तक भयकर लडाइया चलती रही।

अपने अपकर्ष काल (दसवी पद्रहवी शताब्दी) मे माया समाज का ढाचा किसी भी प्रकार समाग नही था। पुरोहित और अभिजात शासक वर्ग म आते थे। कोको बागानो मधुवाटिकाओ और नमक की खानो पर अभिजातो का स्वामित्व था और उनके पास बहुत से दास भी थे। व्यापारियो का एक अलग ही वर्ग था। प्रत्येक बस्ती के निवासी समुदाय के रूप मे रहते थे, जिसम गोत्र समाज के विभिन्न लक्षण विद्यमान थे। आम लोगो को अभिजातो की जमीनो को काश्त करना और उन्हे जिस रूप मे लगान देना होता था और साथ ही सडको मदिरो अभिजातो के मकानो तथा अन्य इमारतो का निर्माण भी करना पडता था। दासो को, जिनमे युद्धबदी, अपराधी कर्जदार और अनाथ आते थे सबसे श्रमसाध्य कामो मे लगाया जाता था। इस प्रकार

गोत्र समाज की अनेक लाक्षणिक सस्थाओ के रहते हुए भी माया बस्तियो मे दासस्वामी समाज के लक्षण भी थे।

माया जन ने उन्नत सस्कृति विकसित की थी जिसने पडोसियो पर प्रबल प्रभाव डाला था। उनके यहा कृषि, मधुमक्खीपालन शिल्प और व्यापार सुविकसित थे और उनकी मौलिक कला (वास्तुकला, मूर्तिकला और चित्रकला) का स्तर भी अत्यत ऊचा था। गणित तथा खगोल म उन्होने विलक्षण उपलब्धिया हासिल की थी। ईसवी सवत के आरभ मे एक चित्रलिपि का भी आविष्कार हुआ था, जो अमरीकी महाद्वीप पर प्रकट होनेवाली सर्वप्रथम लिपि थी।

माया लोगो के पडोसी ज़ापोटेक, ओल्मेक और टोटोनाक लोग थे। मेक्सिको के उत्तर-पूर्वी तट पर ह्वास्टेक लोग रहा करते थे। ये लोग चाहे माया भाषा ही बोलते थे पर उनका सास्कृतिक स्तर बहुत ही नीचा था।

केंद्रीय मेक्सिको मे जिसका नाम उस समय अनाह्वाक की घाटी (नाह्वा भाषा मे इसका अर्थ पानी का देश है) था, ईसवी सवत की पहली सहस्राब्दी के उत्तरार्ध म टोल्टेक जनो की सस्कृति विकास के अत्यत ऊचे स्तर पर पहुच चुकी थी। उनके यहा बडे बडे शहर (जिनमे सबसे बडा तेओतीह्वेकान था) थे। इन शहरो म अतिविशाल इमारते और मूर्तिया थी। व्यापार खूब उन्नत था। टोल्टेक जनो की अपनी लिपि और अपना पचाग था, जो माया जाति की लिपि और पचाग पर आधारित थे।

दूसरी सहस्राब्दी के आरभ मे युद्धप्रिय नाह्वा कबीलो द्वारा अनाह्वाक की घाटी पर आक्रमणो के परिणामस्वरूप टोल्टेक सस्कृति का विनाश हो गया। इस काल मे इन कबीलो मे कुलह्वा कबीला बहुत महत्वपूर्ण था। कुलह्वाओ का केंद्रीय नगर कुलह्वाकान तेस्कोको झील के पूर्वी तट पर स्थित था। एक अन्य महत्वपूर्ण नगर-राज्य इसी झील के पूर्वी तट पर स्थित तेस्कोको था। चौदहवी सदी के अत और पद्रहवी के प्रारभ मे तेपानेक जन ने प्रमुखता प्राप्त कर ली और कुलह्वाकान तेस्कोको तथा अनाह्वाक घाटी मे उनके अधीनस्थ राज्यो को अपने अधीन बना लिया। तेपानेको ने तेस्कोको झील के एक टापू पर स्थित तेनोच्तीत्लान को भी जीत लिया जिसे १३२५ के आसपास अज्टेको ने बसाया था, जो कबीलो के उसी समूह के थे, नाह्वा भाषा बोलते थे और इस घाटी मे बारहवी शताब्दी मे आये थे।

१४२६ मे तेनोच्तीत्लान के अज्टेको ने तेस्कोको और त्लाकोपान (जो तेस्कोको झील के पश्चिमी तट पर रहते थे) कबीला के साथ सहबध बना लिया। तेपानेक शासन का तख्ता उलटने के बाद इस कबायली सहबध न पडोसी कबीलो के खिलाफ लडना शुरू कर दिया और अतत सारी अनाह्वाक घाटी को अपने नियत्रण मे ले लिया। शीघ्र ही अज्टेक इस सहबध के नेता
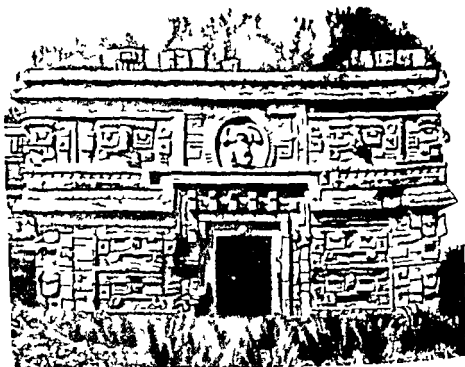
चीचन इटजा के एक माया मंदिर का अग्र भाग

बन गये और बाद मे होनेवाले विभिन्न युद्धो के दौरान उन्होने सारे मध्य मेक्सिको को अपने अधिकार मे ले लिया। इन सैनिक उपलब्धियो के अलावा उन्होंने उस समय तक अनाहुआक घाटी मे विकसित मिश्रित सस्कृति को भी आत्मसात कर लिया। पद्रहवी शताब्दी के आरभ मे तेनोच्तीत्लान के अज्टेकों के प्रमुख मध्य अमरीकी कबीला बन जाने के बाद इस सस्कृति ने बहुत उन्नति की।

अज्टेक कृषि का आधार सिचाई प्रणालियो की सहायता से खेती करना था। मुख्य फसल मक्का थी, जो पूर्णत शारीरिक श्रम पर आधारित बहुत ही पिछडी हुई कृषि विधियो के बावजूद अच्छी पैदावार देती थी। फलिया, कद्दू टमाटर कोको कपास और तबाकू की भी खेती की जाती थी। अज्टेको के मुख्य शिल्प मिट्टी के बरतन बनाना कपडा बुनना और धातु

कर्म थे। निर्माण प्रविधिया काफी उन्नत थी, जिससे ये लोग बाध नहर और कच्ची ईटो या पत्थरो के किलेनुमा मकान बना सकते थे। तेनोच्तीत्लान तथा अन्य नगरो के भीडभरे बाजारो म विनिमय के आधार पर खूब व्यापार होता था।

अज्टेक लोग गोत्रो मे रहा करते थे जिनके नेता चुन हुए होते थे। जमीन पर समुदायो का स्वामित्व था और समुदाय के सदस्य ही उस काश्त करते थ। अज्टेको का मुख्य सेनानायक (त्लाक्तेवूहत्ली), जो किसी एक कबीले मे से चुना जाता था, व्यवहार मे युद्धकाल और शातिकाल दोनो म सर्वोच्च शासक भी हुआ करता था। वह महत्वपूर्ण धार्मिक कृत्यो का निष्पादन भी किया करता था। सहबध के सभी सदस्यो द्वारा की जानेवाली सैनिक कार्रवाइयो पर अज्टेक सेनानायक और उसकी परिषद का नियत्रण रहता था। फ्रेडरिक एगेल्स ने अज्टेको के नेतृत्व मे काम करनेवाले इस सहबध को 'तीन कबीलो का महासघ" कहा है जिसने कई अन्य कबीलो को अपना करद बना लिया था और जिस पर एक सघीय परिषद तथा सघीय सैन्य प्रमुख का शासन था।"

अज्टेको के अविराम युद्धो के परिणामस्वरूप अत मे सपत्ति के वितरण मे असमानता पैदा हो गयी क्योकि जो योद्धा युद्ध मे सर्वाधिक शौर्य का प्रदर्शन करते थे, उन्ह युद्ध की लूट और विजित प्रदेश के बटवारे के समय अपन अन्य साथियो मे अधिक हिस्सा मिलन लगा। अक्सर लडाई मे कैद किये लोगो से दासो की तरह काम करवाया जाता था। इस असमता के बढने पर ऐसा भी होन लगा कि कुछ अज्टेको को अपने ही कबीले के धनी सदस्यो का गुलाम बनना पड जाता था। दासप्रथा अज्टेक समाज की एक आवश्यक संस्था बन गयी। साथ ही गोत्रीय अभिजात वर्ग का भी तेजी से उदय होने लगा और निरतर युद्धो के कारण सर्वोच्च शासक की सत्ता मजबूत होती गयी और व्यवहार मे यह पद जल्दी ही वशागत हो गया।

य सभी बात अज्टेक समाज के गोत्रीय ढाचे के विघटन की परिचायक थी। पद्रहवी शताब्दी के अत और सोलहवी शताब्दी के आरभ मे इस समाज मे राज्यसत्ता और वर्गो का आविर्भाव शुरू हो चुका था।

इस काल मे अज्टेको की कला असाधारण उत्कर्ष पर पहुच चुकी थी, विशेषकर वास्तुकला तथा मूर्तिकला के क्षेत्रो मे। अज्टक लोग सौर पचाग का उपयोग करते थे जो मूलतया माया पचाग ही पर आधारित था। उनकी लिपि इस काल मे भ्रूणावस्था मे ही थी और वह चित्रलेखीय स्वरूप की थी, जिसमे कुछ चित्राक्षर भी थे।

गोत्र व्यवस्था के अतिम अवशेषो के क्रमिक विलोपन के साथ-साथ अज्टेक शासक वर्ग अपने ही कबीले के निर्धन सदस्यो और अधीनस्थ-जातियो के दासकृत सदस्यो के शोषण और लूट को बढाता गया। पद्रहवी शताब्दी

के अधिकाश और सोलहवी शताब्दी के प्रारभिक भाग म लडे गये अनेक युद्धो के दौरान अज्टेको न अनाहुआक घाटी म रहनेवालो को ही नही पराजित किया बल्कि पहाडो के पार बढते हुए व मक्सिको की खाडी और प्रशात महासागर क तटो तक भी पहुच गये। वे विजित कबीलो से खिराज वसूल करते थ और कभी-कभी उनकी जमीनो क कुछ हिस्से भी छीन लेते थे और बडी सख्या मे बदी बनाते थे। इन बदियो म स बहुतो को अज्टेक देवताओ के आगे बलि कर दिया जाता था और शेष को जमीन को काश्त करने, मदिर तथा अन्य इमारते बनाने या घरेलू दासो की तरह काम करने क लिए गुलाम बना लिया जाता था।

पराधीन जनो के साथ ऐसे बर्ताव क कारण अक्सर विद्रोह होते रहते थे और अज्टेक जिन कबीलो को अपने वश मे लाना चाहते थे, उनका प्रतिरोध बल पकडता गया। मोतेजूमा द्वितीय के शासनकाल (१५०३-१५२०) म जिसने विघटन की इस प्रक्रिया को रोकने की कोशिश की, स्थिति विशेषकर सगीन हो गयी थी।

दक्षिणी अमरीका के निवासी

दक्षिणी अमरीका की प्राचीन सभ्यताओ का विकास ऐडीज पर्वतो मे हुआ था, जहा केचूआ आईमारा तथा अन्य जन रहा करते थे, जिन्होने भौतिक तथा सास्कृतिक विकास का अत्युच्च स्तर प्राप्त कर लिया था। पद्रहवी और प्रारभिक सोलहवी शताब्दियो मे इकाओ (जो उसी भाषा वर्ग के थे जिसके कि केचूआ थे) ने पाचाकूतेक तूपाक यूपाकी और ह्वायना कपाक के नेतृत्व मे इस इलाके के कई कबीलो को अपने अधीन कर लिया और एक बडे राज्य की स्थापना करके कूस्को को अपनी राजधानी बनाया। इस राज्य का नेता सापा इका ('एकमात्र इका") कहलाता था, जो अपने को सूर्य का पुत्र मानता था और जिसकी देवता की तरह पूजा की जाती थी। इका राज्य की राजभाषा केचूआ भाषा थी। अनेक अधीनस्थ कबीले इस भाषा की ही बोलिया बोलते

थी, मिलकर काश्त करते थे। लेकिन सापा इका को मारी ज़मीन का स्वामी माना जाता था। कृषि तथा पशुजन्य पैदावार का काफी बडा हिस्सा राजकीय तथा धार्मिक कार्यो के लिए उपयोग मे लाया जाता था।

रियो ग्राडे तथा कोलोराडो नदियो की घाटियो म निवास करनेवाले प्वेब्लो इडियन कबीने (होपी, जूनई, तानयो केरेम आदि) ओरीनोको तथा अमेजन नदियो के थालो मे रहनवाले तूपी ग्वारानी करीबनी, अर्वाक और ब्राज़िली कयापो, पापाओ (दक्षिणी अमरीकी शीतोष्ण घास मैदानो) तथा प्रशात महामागर तट के युद्धप्रिय मपूचे (जिन्हे यूरोपीय लोग अराउकी कहते थे), वर्तमान पेरू तथा इक्वडोर के विभिन्न भागो मे रहनेवाले कोलोराडी, हिवारो और ज़ापारो कबीले, ला प्लाटा प्रदेश के कबीले (दिआगीता, छार्रुआ क्वेरादी, आदि), पटागोनी तेह्युल्चे और टिएरा डेल फ्यूगो के इडियन (ओना याहगान चोनो) – ये सभी आदिम समाज के विकास की विभिन्न मज़िलो मे थे। उत्तरी अमरीका के नानामभ्य इडियन तथा एस्कीमो कबीलो पर भी यही बात लागू होती है। इनमे से कई कबीले आपस मे मिनकर कबायली समूह और सहग्रध बना लिया करते थे – जैसे अलगाकिन, इरोक्वा, मुस्कोगी, सिऊ, अथापस्कानी आदि-आदि।

अमरीका का उपनिवेशन

पद्रहवी शताब्दी के अत और सोलहवी शताब्दी के आरभ म अमरीकी जनगण के विकास का स्वाभाविक सिलसिला यूरोपीय विजेताओ और विशेषकर स्पेनी कोंकीस्तादोरो – विजेताओ – द्वारा बलात भग कर दिया गया।

अमरीकी महाद्वीप की देशज आबादी की नियति के बारे मे लिखते हुए फ्रेडरिक एगेल्स ने कहा था "स्पेनी विजय ने समस्त आगामी स्वतत्र विकास को सहसा समाप्त कर दिया।

अमरीका के जीते जाने और उसके उपनिवेशन के जिसका परिणाम उसके निवासियो के लिए इतना विनाशक सिद्ध हुआ मूलो को उस समय यूरोपीय समाज मे आनेवाली जटिल सामाजिक आर्थिक प्रक्रियाओ मे तलाश किया जा सकता है।

पद्रहवी शताब्दी के अतिम तथा सोलहवी शताब्दी के प्रारभिक चरणो मे पश्चिमी यूरोप के सामती समाज के भीतर व्यापार तथा उद्योग के विकास और बूर्जुआ वर्ग तथा पूजीवादी उत्पादन सबधो के उदय ने नये व्यापारिक मार्गो को उद्घाटित करने और पूर्वी तथा दक्षिणी एशिया की अथाह सपदा को हथियाने की आकाक्षा को जन्म दिया था। इसी लक्ष्य को लेकर अनेक

अभियानो का आयोजन किया गया था, विशेषकर स्पेनियो द्वारा। इस
की महान भौगोलिक खोजो म स्पेन की भूमिका की व्याख्या केवल उ
भौगोलिक स्थिति से ही नही, वरन विपन्नताग्रस्त अभिजातो की बडी सख्
मौजूदगी मे भी की जा सकती है जिन्हे १४६२ म मूरो का निष्कासन
हो जाने के बाद से कोई भी उपयुक्त धधा नही मिल पा रहा था और
एल्डोराडो नामक काल्पनिक 'सोने के देश' को खोजने के सपने देखते
बेतहाशी के साथ सपत्ति प्राप्त करने के साधनो को ढूढ रहे थे। एगेल्
लिखा है 'सोना ही वह जादुई शब्द था कि जो स्पेनियो को अटलाटिक
पार ले गया। सोना ही वह सर्वप्रथम वस्तु थी कि जिसे अज्ञात देश के तट
पैर धरने के साथ गोरा आदमी मागा करता था।'

सोलहवी शताब्दी के आरभ तक कोलबस तथा दूसरे समुद्रयात्री
इडीज़ के कितने ही द्वीपो की खोज कर चुके और दक्षिण अमरीका के उ
तथा पूर्वी समुद्र तट के काफी भाग और मध्य अमरीका के अधिकाश कैरीबि
समुद्रतट का मानचित्राकन भी कर चुके थे। स्पेन तथा पुर्तगाल के औपनिवे
क्षेत्रो का निर्धारण करने के लिए दोनो देशो के बीच १४६४ म तोर्देसी
की सधि सपन्न हो चुकी थी।

इबेरियन प्रायद्वीप से बहुत बडी सख्या मे जाबाजो, वैपन्न्य की च
मे आये अभिजातो भाडे के सैनिको और अपराधियो, आदि-आदि ने
खोजे देशो का रास्ता पकडा। उन्होने छलकपट और जोर-जबरदस्ती स स्थान
निवासियो के इलाको को हथिया लिया और उन्हे स्पेनी अथवा पुर्तगा
अधिकृत प्रदेश घोषित कर दिया। कोकीस्तादोर इडियनो को लूटते-खसो
और दास बनाते थे और उनका शोषण करते थे। प्रतिरोध के हर प्रयास
निर्ममतापूर्वक कुचल दिया जाता था। पूरे के पूरे शहरो और गावो को पाशवि
निर्दयता के साथ बरबाद कर दिया जाता था। जैसा कि मार्क्स ने लिखा
'लूटमार और हिसा ही अमरीका मे स्पेनी जाबाजो का एकमात्र लक्ष्य था।

सोने की अदम्य लालसा ने विजेताओ को नये-नये देशो की खोज
लिए उत्प्रेरित किया। १५१३ मे बालबोआ ने पनामा स्थलसयोजक को प
किया और वह प्रशात महासागर तट पर जा पहुचा। पोस दा लीओ
फ्लोरिडा प्रायद्वीप को खोजा, जो उत्तरी अमरीका मे सर्वप्रथम स्पेनी प्रदेश था

कुछ ही वर्ष के बाद युकतान प्रायद्वीप की खोज की गयी और १५२
म हरनादो कोर्तेस ने तीन साल लबे युद्ध के बाद अतत मध्य मक्सिको क
जीत लिया। अज़्टेको की प्राचीन सस्कृति और उनकी राजधानी तेनोच्तीत्ला
को पूर्णत ध्वस्त कर दिया गया। इसी काल मे मजेलन ने ला प्लाटा
दक्षिण म इस महाद्वीप के अटलाटिक तट और मुख्यभूमि को टिएरा डे
फ्यूगो से पृथक करनेवाले जलसयोजक का मानचित्राकन किया था।

जल्दी ही कोंकीस्तादोरो के जत्थो ने अपना ध्यान दक्षिणी अमरीका की ओर मोड लिया। सोलहवी शताब्दी के चौथे दशक के आरभ मे फ्रासिस्को पिजारो तथा दीएगो दा अलमाग्रो की कमान मे एक स्पेनी अभियान ने पेरू को जीत लिया और शानदार इका सभ्यता को खाक मे मिला दिया। इस विजय अभियान का समारभ काहेमार्का नगर के निस्सहाय इडियनो के खूनी दमन के साथ हुआ था, जिसे शुरू करनेवाला वालवेर्दे नामक पादरी था। इका शासक आतहुआलपा को छलपूर्वक बदी बनाकर मार डाला गया। कोंकीस्तादोरो ने इका राजधानी कूसको को भी जीत लिया। दक्षिण की तरफ प्रगति करते हुए अलमाग्रो और उसके सैनिको ने उस प्रदेश मे प्रवेश किया (१५३५-१५३७), जिसे आगे चलकर उन्होने चिली का नाम दिया था। लेकिन यहा उनका युद्धप्रिय अराऊकनो के साथ आमना सामना हुआ और उनके प्रसार मे अस्थायी अवरोध आ गया। इसी बीच पेद्रो दा मेदोजा ने ला प्लाटा का उपनिवेशन करना शुरू कर दिया था। बहुत से यूरोपीयो ने दक्षिणी अमरीका के उत्तरी भाग पर भी कब्जा जमाने की कोशिश की, जहा उनके खयाल के मुताबिक सोने और मूल्यवान हीरे-जवाहरात से भरपूर काल्पनिक एल्डोराडो देश था। एल्डोराडो ही की खोज मे ओर्दास, हीमेनेस दा केसादा तथा बेनालकासर की कमान मे स्पेनी अभियान और आल्फिगर, फान स्पेयर तथा फेदरमान के नेतृत्व मे भाडे के जर्मन सैनिको के दस्ते सोलहवी शताब्दी के चौथे दशक मे ओरीनोको और मग्दालेन नदियो की घाटियो मे जा पहुचे थे। १५३८ मे हीमेनेस दा केसादा फेदरमान और बेनालकासर, जो क्रमश उत्तर पूर्व तथा दक्षिण की ओर से बढ रहे थे कुदीनमार्का पठार पर बगोटा नगर के पास आपस मे जा मिले।

इधर ब्राज़ील का पुर्तगालियो द्वारा उपनिवेशन किया जा रहा था। सोलहवी शताब्दी के पाचवे दशक के आरभ म ओरेल्लाना अमेज़न नदी के तट पर जा पहुचा और वहा से वह उस पर होता हुआ अटलाटिक तट पर पहुच गया। उसी समय पेद्रो दा वाल्दीविआ की कमान मे चिली मे एक नया अभियान भी भेजा गया, लेकिन छठे दशक के आरभ तक वह उस देश के सिर्फ उत्तरी और मध्यवर्ती भागो को ही अधिकार मे ले पाया था।

स्पेनी तथा पुर्तगाली उपनिवेशको द्वारा दक्षिण अमरीकी महाद्वीप के मध्यवर्ती प्रदेशो मे प्रवेश करने का सिलसिला सोलहवी शती के उत्तरार्ध मे भी चलता रहा। कुछ इलाको, जैसे दक्षिणी चिली और उत्तरी मक्सिको के उपनिवशन मे तो कही अधिक लबा समय लग गया। लेकिन अग्रेज फ्रासीसी और डच भी नयी दुनिया के विराट और समृद्ध प्रदेशो के दावेदार बनने को बेचैन थे और वे भी दक्षिणी तथा मध्य अमरीका और वेस्ट इडीज मे इलाके हथियाने मे कामयाब हो गये।

दसवा अध्याय

पद्रहवीं सदी के अत से सत्रहवीं सदी के आरम तक केद्रीकृत रूसी राज्य। कृपक युद्ध

अभिजातो की बढती शक्ति

सोलहवी शताब्दी मे रूसी समाज के ढाचे के भीतर महत्वपूर्ण परिवर्तन आये। यद्यपि समाज का सामती स्वरूप बना रहा, फिर भी भूस्वामी अभिजात वर्ग के ढाचे मे अनेक अतर आने लगे। पहले शक्तिशाली बोयार ही मुख्य भूस्वामी थे। इस समूह मे भूतपूर्व राजको के वशज विशेष रूप से धनवान और प्रभावशाली थे, जिनके पास बहुत-बहुत सारी जमीन थी।

जब एकीकृत राज्य ने रूप लिया, तो इन शक्तिशाली बोयारो की स्थिति अधिक कठिन हो गयी, जबकि द्वोर्यानिनो की स्थिति सुधरने लगी। ये द्वोर्यानिन पुराने पोमेश्चिक – शासक की सेवा करने और उसके बदले ज़मीन पानेवाले सामत – ही थे। जैसे जैसे अलग-अलग रजवाडे अपनी पुरानी स्वतत्रता गवाते गये, वैसे वैसे बोयारो और राजको की समृद्धि भी कम होती गयी और उनकी जागीरे अक्सर टुकडो मे बटने और बिकने तथा गिरवी भी रखी जाने लगी। द्वोर्यानिनो की सख्या बढती चली गयी। बोयार सत्ता के लिए जारो के प्रतिद्वद्वी थे। फलत बोयारो की शक्ति पर अकुश लगाने के अपने प्रयास मे जार द्वोर्यानिनो पर अधिकाधिक निर्भर करने लगे।

द्वोर्यानिन भी भूस्वामी थे पर उनकी जागीरे बोयारो की जागीरो से भिन्न थी। बोयारो की बडी-बडी जागीरे पिता से पुत्र को प्राप्त होनेवाली वशागत सपत्ति थी। द्वोर्यानिनो की जागीरे आकार मे उनसे छोटी होती थी और उनके मालिक उन्हे उत्तराधिकार मे नही, बल्कि ज़ार से सैनिक सेवा की एवज़ मे प्राप्त करते थे। अगर द्वोर्यानिन रूसी राज्य की सेना मे सेवा करना बद कर देता था तो उसकी जागीर भी स्वत ही जब्त हो जाती थी।

मतलब यह कि द्वोर्यानिन रूस के जार के अधीन – उसके आश्रित – थे। उन्हे यह स्थिति पूरी तरह सतोषजनक लगती थी, क्योकि पहले, जब

वे सोचते थे कि अपने शाही मूल के आधार पर वे सामाजिक स्थिति में ज़ार के समकक्ष है और इसलिए वे उसकी सर्वोच्च सत्ता को स्वीकार करना नहीं चाहते थे। ये राजा केंद्रीकृत राज्य के सुदृढीकरण में बाधक और उसके अस्तित्व के लिए खतरा थे। अत अपने शासन के आरभ से ही इवान चतुर्थ मजबूत केंद्रीय शासन स्थापित करने के तरीकों की खोज में लग गया।

बोयारो के विरुद्ध अपने संघर्ष में ज़ार ने द्वोर्यानिनो का सहारा लिया। इस संघर्ष ने १५६४ में एक निर्णायक दौर में प्रवेश किया, जब ज़ार ने एकतत्र का सुदृढीकरण करने के लिए कई कदम उठाये। उपायो की यह समष्टि ओप्रीच्निना के नाम से जानी जाती है।

१५६४ में इवान प्रचड मास्को से अचानक ही अलेक्सांद्रोव्स्काया स्लोबोदा चला गया जो राजधानी के उत्तर में कुछ ही दूर था और उसने बोयारो से कहा कि वह अब और उनका ज़ार रहना नहीं चाहता। उसने कहा कि उसे राज्य की ज़मीनों में उसका हिस्सा अलग दे दिया जाय, जहा वह अपनी मरज़ी के मुताबिक राज कर सकेगा। उसके सबसे पहले कामों में एक यह होगा कि वह अपने ऐसे मातहत छाटेगा जिन्हे वह अपनी खिदमत में रखना चाहता है और जो उनसे अपेक्षित कार्यों के उपयुक्त होगे।

ज़ार के अनुरोध को स्वीकार कर लिया गया और राज्य को दो स्पष्ट तथा स्वतत्र क्षेत्रो – ओप्रीच्निना और ज़ेमश्चिना – मे विभक्त कर दिया गया, जिनमे से प्रथमोक्त उसके निजी शासन के नीचे थे। धीरे धीरे इवान चतुर्थ ने राज्य के श्रेष्ठतम अर्धांश को इस क्षेत्र में शामिल कर लिया, जिसमे समृद्ध नगर और व्यापार मार्ग थे। उसने बोयारो को उनके वशागत अधिकारो से वचित करके खदेड बाहर किया और उनमे से कई को मरवा भी डाला। जिन बोयारो को उसने कोई हानि नही पहुचायी उन्हे भी निष्कासित करके ज़ेमश्चिना भगा दिया गया जहा अब भी पुराने बोयार शासन का ही बोलबाला था। इवान प्रचड ने दिखावे के लिए सिमेआन बेकबुलातोविच नामक तातार को वहा का ज़ार तक बना दिया, जो इवान से बहुत खौफ खाता था और उसके सभी आदेशो की आज्ञाकारितापूर्वक पूर्ति करता था। ज़ार जान बूझकर उसके नाम औपचारिक दरख्वास्ते भेजा करता था जिनमे वह अपने नाम को बिना किसी उपाधि के लिखा करता था, मानो वह बेकबुलातोविच का एक सामान्य प्रजाजन ही हो। लेकिन व्यवहार मे इवान प्रचड ही उन सभी पर शासन करता था।

इस प्रकार प्रातो में बोयारो की सत्ता को बुरी तरह से कमज़ोर कर दिया गया। लेकिन उन्हे विशेषाधिकारप्राप्त भूस्वामियो की हैसियत से वचित नही किया गया। उनमे से जो लोग ज़ार के साथ संघर्ष से बच रह गये, उनकी हैसियत भी अब द्वोर्यानिनो के समान ही हो गयी और जहा कही भी

उन्हे जागीर दी जाती थी, उसे वे सहर्ष स्वीकार कर लेन लग। जार ने बोयारो की मौरूसी जागीरो को द्वोर्यानिनो मे बाट दिया, उन्ह कई नयी जागीरे भी प्रदान की गयी जिनके साथ आम तौर पर किसान भी हुआ करते थे, जिन्ह अपन मालिको के लिए काम करना होता था।

इवान क अनुचरो के अविवचित लोभ की कोई सीमा न थी। वे लोग बोयारो की जायदादो पर कब्जा कर लेते थे और किसाना के घोडा गायो तथा अनाज को छीन लेते थे। अगर किसान ज़रा भी विराध करते, तो उह मौत के घाट उतार दिया जाता था। उसके एक अनुचर न तो शेखी बघारते हुए कहा था, म एक घोडा लेकर निकला था और उनचास घोडो के साथ लौटा। इनमे से बाईस घोडे तरह तरह के माला स ऊपर तक लदी हुई हिमगाडियो को खीचते आ रहे थे।

इवान प्रचड के ओप्रीच्निकी (वे द्वोयानिन जिन्होने ओप्रीच्निना की स्थापना के समय इवान चतुर्थ का समथन किया था) अपने घोडा पर सवार होकर उनकी काठियो के साथ बधा कुत्ते का सिर लेकर और एक झाड़ू लटकाकर दश भर मे घूमा करत थे। यह इस बात का प्रतीक था कि व अपन गजा के सभी शत्रुओ को कुत्तो की तरह मार डालेगे और राज्यद्रोह को बुहारकर देश क बाहर फेक देग।

इवान चतुर्थ ने अपने सुधारो को निमम क्रूरता क साथ क्रियान्वित किया। यह कोई सायोगिक बात नही है कि आगे चलकर ओप्रीच्निक और ओप्रीच्निना" शब्द निरकुश शासन के वफादार टहलुआ और उनकी बेलगाम मनमानी के पर्याय बन गये। इस प्रकार बोयारो की सत्ता का उनकी भूतपूर्व रियासतो मे अत कर दिया गया और पुरानी व्यवस्था के स्थान पर ज़ार की वास्तविक सत्ता की स्थापना की गयी। इस प्रक्रिया म उन क्षुद्र सामतो ने आगे चलकर कही अधिक शक्तिशाली सामाजिक समूह का निर्माण किया, जिन्ह अपनी सेवा की एवज़ मे जमीन दी गयी थी और जा ज़ार के मुख्य अवलब थे।

भूदास प्रथा

जैस-जैस द्वोर्यानिनो की शक्ति बढती गयी वैस वैसे किसाना की स्थिति भी बेहद ख़राब होती गयी। अपन मालिका के प्रति किसानो क दायित्व बहुत बढा दिये गये और उसीक साथ साथ भूस्वामियो क उन्ह काम क लिए विवश करन के अधिकार भी बढ गये। पहले किसान अपन मालिक बदल सकते थ और साल की निश्चित अवधियो म दूसर इलाका म जाकर बस भी सकते थे। इवान प्रचड ने इस सबका बदल दिया – किसाना क अपन मालिका का बदल सकन की अवधि को सत यूरी दिवस (२६ नवबर) क पहल या

बादवाले सप्ताह तक सीमित कर लिया गया, जो फसल कटाई के मौसम के अंत में आता था और इसलिए जिससे भूस्वामियों को न्यूनतम हानि होना था।

इवान प्रचंड के शासन के अंतिम वर्षों में इस प्राचीन अधिकार को पूरी तरह से ही खत्म कर दिया गया। धीरे धीरे भूस्वामियों ने अपने किसानों को जमीन के साथ जकड दिया और भूदास प्रथा या कृषिदासत्व ने गहरी जड पकड ली।

वोल्गा के थाले तथा पश्चिमी साइबेरिया का रूस में सम्मिलन

रूसी राज्य के पूर्वी सीमांतो के पास ही चौडी और नौवाहनयोग्य वोल्गा नदी थी जो कास्पियन सागर के जरिये फारस तथा तुर्की और उनसे भी आगे यात्राएं करने का बढिया मार्ग प्रदान करती थी। लेकिन अभी तक इस नदी की पूरी लंबाई पर रूसियों का नियंत्रण स्थापित नहीं हो पाया था। स्वर्ण ओर्दू के विघटन के बाद तातारों ने वोल्गा प्रदेश में दो खानशाहियों की स्थापना कर दी थी जिनके केंद्र कज़ान और अस्त्राखान थे।

१५५२ में इवान प्रचंड ने १५०,००० सैनिकों और १५० तोपों की विशाल सेना लेकर कज़ान पर चढाई कर दी। रूसी सेनाओं ने नगर को घेर लिया और इस बार रूसी सैन्य सज्जा तातारों की सैन्य-सज्जा से श्रेष्ठ सिद्ध हुई। रूसी इंजीनियरों ने कज़ान की शहरपनाह के नीचे गढे खोदकर उनमें बारूद के बक्से रख दिये और फिर उनमें पलीता लगा दिया। इसके बाद शहरपनाह में आयी दरारों से रूसी सेनाएं शहर में घुस गयी। इवान प्रचंड ने विजेता की तरह नगर में प्रवेश किया। चार साल के बाद इवान की सेनाओं ने एक और विजय प्राप्त की – इस बार अस्त्राखान की खानशाही पर। इस तरह रूस ने अपनी सत्ता को सारे वोल्गा थाले में फैला लिया और अपने पूर्वी सीमांतों को मजबूत करने के अलावा एक नये और महत्त्वपूर्ण व्यापार मार्ग पर अधिकार कर लिया। दक्षिण में रूस के सीमांत तेरेक नदी के निचले भाग और काकेशिया की तराइयों तक पहुंच गये। कबार्दा स्वेच्छा से रूसी संरक्षण में आ गया और सोलहवीं शताब्दी के मध्य में बश्कीरिया ने भी उसका अनुकरण किया।

लेकिन उराल पर्वतों के उस पार साइबेरियाई खानशाही अब भी मौजूद थी, जो तोबोल तथा इरतीश नदियों की घाटियों सहित साइबेरिया के समस्त पश्चिमी भाग में फैली हुई थी। नोवगोरोद के व्यापारी समूरों के लिए प्रायः यहां आते थे। सोलहवीं शताब्दी में इस प्रदेश पर खान कुचूम का शासन था जो स्थानीय निवासियों का शोषण करता था और उनसे समूरों की सूरत में खिराज मांगता था।

स्त्रोगानोव परिवार के रूसी ड्वोर्यानिनो ने, जो इन इलाको मे आकर बस गये थे, रूसी राज्य की साइवेरियाई खानशाही पर कब्जा करने म सहायता की। उन्होने आजाद कज्जाको की जो वोयारो के उत्पीडन स बचने के लिए रूस से भाग आये थे, एक छोटी सी फौज इकट्ठा की और उन्ह तथा येर्माक तिमोफेयेविच के नेतृत्व मे अपने सशस्त्र अनुचरो के कई दलो को इस काम पर लगा दिया। उन्होने येर्माक को बारूद गोलिया तोपे और अनाज की भी पूर्ति की। येर्माक की सेना म कुल मिलाकर कोई ८०० लोग थे। इस छोटी सी सेना के बल पर ही उसे बडे-बडे इलाको को कब्जे मे लेना था।

१५८१ मे इवान ने स्त्रोगानोव परिवार को अधिकारपत्र प्रदान करक साइबेरिया को जीतने की अनुमति दे दी। येर्माक के दस्तो ने उराल की पूर्वी ढालो से उतरकर साइवेरियाई खानशाही पर हमला बोल दिया। तातार रूसी सैनिको के बारूदी हथियारो का सामना न कर सके। येर्माक विजयी रहा, किंतु वह साइवेरिया से स्वदेश लौटने मे सफल न हो सका। वह तातारो के एक रात्रिकालीन हमले स बचकर भागत हुए इरतीश नदी मे डूब गया। साइबेरिया की आबादी के कुछ भाग ने स्वेच्छा से रूसी आधिपत्य को स्वीकार कर लिया और सोलहवी सदी के अत तक वहा रूसी बस्तिया पैदा होने लग गयी।

आगे चलकर, सत्रहवी शताब्दी मे पूर्वी साइबेरिया को भी रूसी राज्य मे मिला लिया गया। इस तरह अब उसमे यूरोप का पूर्वी भाग ही नही उराल पर्वतो के बहुत दूर आगे तक का प्रदेश भी शामिल हो गया। इवान प्रचड के शासनकाल मे रूसी राज्य की आकार और शक्ति दोना लिहाज से काफी वृद्धि हुई।

सास्कृतिक विकास और मुद्रण का आरभ

पद्रहवी तथा सोलहवी शताब्दियो मे रूस मे महत्वपूर्ण सास्कृतिक उन्नति हुई। रूसी सस्कृति का केंद्र मास्को था।

इवान प्रचड के शासनकाल मे मास्को मे पहला छापाखाना स्थापित किया गया था। हम जानते ही है कि मुद्रण के आविष्कार के पहले किताबो को हाथ से लिखा जाता था। पुस्तको का हाथ से लिखा जाना मुश्किल काम था और उसमे समय भी बहुत लगता था। इस कारण किताबे बहुत महगी होती थी और सख्या मे भी बहुत कम होती थी। अब पुस्तक उत्पादन की प्रक्रिया कही अधिक तेज़ और सस्ती हो गयी।

इवान प्रचड के दरबार मे नोगाई के दूत। सोलहवीं शती का लघुचित्र

रूस का सर्वप्रथम मुद्रक इवान फ्योदोरोव था, जिसका देहात १५ ३ म हुआ था। मास्को मे प्रकाशित होनेवाली सवसे पहली किताबा म एक धर्मदूत थी। यह पुस्तक जालकारिक स्लाव लिपि मे छापी गयी थी।

पहले छापेखाने को उन लोगो के क्रोध का भाजन बनना पडा, जो किताबो की हाथ से नकल करने का काम किया करते थे। उन लोगो को मुद्रणालय एक खतरनाक प्रतिद्वद्वी प्रतीत होता था, जो उनकी जीविका का छीन सकता था। उन्होने छापेखाने को नष्ट कर दिया और इवान फ्योदोराव को जान बचाकर भाग जाना पडा। कुछ समय बाद इवान प्रचड ने छापेखाने के फिर से स्थापित किये जाने की व्यवस्था की लेकिन इस बार अपने दरबार के निकट। बाद म इवान फ्योदोरोव की स्मृति मे मास्को म क्रेमलिन से कुछ ही दूरी पर उसके पहले छापेखाने के पास ही उसकी एक मूर्ति स्थापित की गयी।

इस काल में रूसी दस्तकारिया का भी खूब विकास हुआ। मास्को में शाही ढलाई का एक सबसे मशहूर ढलाईगर अद्रेई चोखाव (देहात लगभग १६३०) था, जो मास्को के तोप ढलाईखान में काम करता था। उसकी ढाली हुई हर तोप एक विशिष्ट आकार की होती थी — उसकी तोप माम के साचा में ढाली जाती थी और यौद्धिक दृष्टि से आला दरजे की मानी जाती थी। उसकी हर तोप का एक अलग नाम था जैसे भालू, भेडिया, लोमडी, एकोनीस, आदि-आदि। उसकी ढाली तोपों में से सबसे मशहूर ज़ार तोप थी, जो आज भी मास्को क्रेमलिन के भीतर गडी हुई है। इसका भार चालीस टन है और इसके अलंकरणों में घोड़े पर सवार ज़ार की आकृति भी है जिससे इसे अपना नाम प्राप्त हुआ है।

सोलहवीं शताब्दी में निर्मित कितनी ही भव्य इमारतों की गणना रूसी वास्तुकला के सबसे प्रसिद्ध उदाहरणों में की जाती है। इन इमारतों में संत वसीली का भव्य महागिरजा भी एक है, जो आज भी लाल चौक के सौंदर्य की श्रीवृद्धि कर रहा है। इस गिरजाघर का निर्माण कज़ान की विजय के उपलक्ष्य में ज़ार इवान प्रचंड के आदेश से किया गया था। यह गिरजाघर मीनारनुमा प्रार्थनालयों से मिलकर बना है, जिनमें से प्रत्येक पर एक गुबज है। सभी प्रार्थनालय आपस में मेहराबदार छतोंवाले गलियारों से जुड़े हुए हैं और परिक्रमा दीर्घाओं से घिरे हुए हैं। हर गुबज अलंकृत है और एक-दूसरे से भिन्न है। लेकिन इसके बावजूद उनमें आपस में विस्मयजनक सामंजस्य और समस्वरता है और पूरा गिरजाघर एक अद्भुत और चित्ताकर्षक छटा प्रस्तुत करता है।

इस ज़माने का एक सबसे मशहूर रूसी इंजीनियर फ्योदोर कोन था, जिसने सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अनेक प्रसिद्ध रक्षा प्रणालियों और किलेबंदियों का निर्माण किया था। श्वेत नगर (वर्तमान मास्को का केंद्रीय भाग) की शहरपनाह और किलेबंदी की योजना उसीने तैयार की थी, जिसके परिणामस्वरूप मास्को नगर एक दुर्ग में परिणत हो गया। उसने स्मोलेन्स्क नगर की मज़बूत शहरपनाह और मीनारों के निर्माण का भी अधीक्षण किया था। इस विराट निर्माण कार्य को पूरा करने के लिए छः हज़ार मजदूरों को काम करना पड़ा था।

सोलहवीं सदी के बिलकुल अंत में मास्को में क्रेमलिन प्राचीरों के भीतर इवान महान का घंटाघर ८२ मीटर तक ऊंचा किया गया। एकदम सादी बनावट और सुरुचिपूर्ण समानुपात की यह मीनार अत्यधिक प्रभावोत्पादक वास्तुकृति है। इस मीनार का घंटाघर और प्रहरी बुर्ज — दोनों की तरह उपयोग किया जाता था — इसकी ऊपरी दीर्घा से सतर्क प्रहरी यह सुनिश्चित करने के लिए सदैव निगरानी करते रहते थे कि कोई दुश्मन राजधानी के निकट न आने पाये।

मास्को का सत वसीली का गिरजा (१५५५-१५६१)

मास्को (कोलोमेन्स्कोये) का स्वर्गारोहण गिरजा, १५३२

इवान बोलोत्निकोव के नेतृत्व मे कृषक युद्ध

सत्रहवी शताब्दी के प्रारभ मे किसानो के इतने बलवे हुए कि जितने रूस मे पहले कभी नही हुए थे। एक बलवा दबता कि दूसरा फूट पडता था और इसीलिए ये वर्ष इतिहास मे विपत्तियो के वर्ष कहलाते है। इन बलवो म से सबसे महत्वपूर्ण वह कृषक विद्रोह है, जिसका नेता इवान बोलोत्निकाव (मृत्यु १६०८) था।

इवान बोलोत्निकोव राजा तेल्यातेव्स्की का एक भूदास था। जवानी मे वह अपने मालिक के यहा से फरार हो गया था, जिसके बाद उसे तातारो ने कैद करके तुर्को को बेच दिया। वर्षो गुलाम मल्लाह की तरह कमरतोड मशक्कत करने के बाद वह तुर्की से भाग निकला और वेनिस पहुच गया।

वेनिस मे रहते समय बोलोत्निकोव ने सुना कि रूस मे बडे पैमाने पर किसान विद्रोह फूट पडे है। जन असतोष तो इवान चतुर्थ के बेटे फ्योदोर (१५८४-१५९८) के शासनकाल मे ही शुरू हो गया था। फिर बोरीस गोदुनोव के जमाने म भी जिसे सतानहीन फ्योदोर के बाद जार चुना गया था, बगावत होती रही। बोरीस गोदुनोव के शासनकाल (१५९८ १६०५) मे रूस मे भयानक अकाल पडा, जो तीन साल बना रहा। लोग पेडो की छाल और कुत्ते बिल्ली खाने को मजबूर हो गये। बडी सख्या म किसान अपने मालिको से भाग खडे हुए और इसका एक तात्कालिक नतीजा यह निकला कि फरार किसानो के बडे-बडे गिरोह बन गये, जो द्वोर्यानिनो और व्यापारियो पर हमले करने लगे। इस बीच राजसिहासन के कई मिथ्या दावेदार भी प्रकट हो गये थे। ऐसा ही एक मिथ्या दावेदार पोलिश अभिजातो का आश्रित ग्रिगोरी ओत्रेप्येव नामक भूतपूर्व मठवासी था जिसने यह घोषित किया कि वह इवान प्रचड का पुत्र दमीत्री है। पोलिश सामतो ने द्मीत्री को रूस का जार घोषित कर दिया। इधर देश भर म जन विप्लव अधिकाधिक व्यापक और प्रायिक होते जा रहे थे।

इवान बोलोत्निकोव भूदास प्रथा का खुला विरोधी था और वह आम लोगो के हितो का समर्थन करता था। वह एक बुद्धिमान, साहसी और चतुर आदमी था जिसे जीवन का प्रचुर अनुभव था और जो युद्ध-कला म प्रवीण था। जर्मनी और पोलैंड होता हुआ वह अत म रूस वापस पहुच गया और १६०६ म कृषक विद्रोहियो का नेता बन गया। उत्पीडित किसान उसके गिर्द गोलबद होने लगे।

बोलोत्निकोव ने देश म सभी जगह उद्घोषणाए भेजकर किसानो को भूस्वामियो के खिलाफ हथियार उठाने के लिए ललकारा बोयारो और भूस्वामियो को छोड दो उनके मकानो को लूटो उनकी सपत्ति पर कब्जा कर लो। जार के बोयरो – फौजी जागीरदारो – म रहना तो उन्हे जेलो म बद कर दो।

बोलोत्निकोव के अनुयायियो म एक और किसान नता निर्धन कज्ज़ाको का पक्षधर इलेइका मूरोमेत्स भी था। अन्य उत्पीडित जातियो ने भी रूसी उदाहरण का अनुकरण किया – वोल्गा की घाटी मे मोर्द्विना न भी विद्रोह कर दिया, उराल की तराइयो म बश्कीरो मे और अस्त्राखान क्षेत्र म कल्मीको मे भी असतोष व्याप्त था। विद्रोह की प्रेरक शक्ति किसान भूदास थे जो भूदासत्व का अत और सामती उत्पीडन का खात्मा करना चाहते थे। अत बोलोत्निकोव न किसानो को सामती दासता से आज़ाद घोषित कर दिया और यही विद्रोह का मुख्य उद्देश्य बन गया।

बोलोत्निकोव की सेना ने मास्का की तरफ कूच किया और नगर के पास ही डेरा डाल दिया। नया ज़ार वसीली शूइस्की (१५५२-१६१२) अपनी सेना साथ लेकर उसस लडन के लिए निकला।

मास्को के दरवाजे पर ही बोलोत्निकोव की सेना म गद्दारी हुई। रियाज़ान के कुछ द्वोयानिन जो अभी तक उसका समर्थन करते आये थ वसीली शूइस्की की तरफ चले गये। इवान बोलोत्निकोव को पीछे हटकर तूला चले जाना पडा। शूइस्की न जून १६०७ मे तूला का घेर लिया। अक्तूबर आते-आते तूला मे अकाल पड गया लेकिन बोलोत्निकोव के समर्थक डटे रहे। इस पर ज़ार ने आदेश दिया कि नगर म हाकर बहनेवाली ऊपा नदी पर बाध बना दिया जाये। इससे नदी मे बाढ आ गयी और उसका पानी शहर म घुसने लगा। इस स्थिति मे नगर ने अत मे अक्तूबर म आत्मसमर्पण कर दिया। बोलोत्निकोव की आखे निकाल ली गयी और इसक बाद उसे डुबो दिया गया। विद्रोह को पाशविक निर्ममता क साथ कुचल दिया गया।

सत्रहवीं सदी के आरभ मे रूस पर स्वीडिश तथा पोलिश अभिजातो के आक्रमण

देश म कृषक युद्ध अविराम चलता रहा। विद्रोही किसाना का सना क बल पर दबान मे असमर्थ होने पर ज़ार वसीली शूइस्की न स्वीडन के बादशाह की सहायता लेने का निश्चय किया। १६०९ क वसत म चमचमात जिरह बख्तर पहने विदेशी सनाआ न नोवगोरोद म प्रवश किया। य स्वीडन क बादशाह द्वारा भेजी गयी सनाए थी जिनम कुल मिलाकर १५ ००० स्वीडिश जमन, अग्रज़ और स्काट भाडे के सैनिक थ। उन्हाने कुछ ही समय क भीतर सपूण नोवगोरोद प्रात को अपन अधिकार म ले लिया।

उस समय स्वीडन के प्रति पोलेंड का रवैया शत्रुतापूर्ण था। जैस ही स्वीडिश सनाआ ने रूसी सीमात का पार किया वैस ही पोलिश सनाआ का भी रूस के भीतर घुसन का आदश द दिया गया क्योकि पोलिश अभिजात

इस लूट म अपना हिस्सा पान क अवसर को नही गवाना चाहत थ। पान रूस मे दूर तक घुस आय और उन्हान मास्को तथा स्मालन्स्क क बीच क्लूशाना ग्राम के निकट शूइस्की की सनाओ को बुरी तरह पराजित किया।

जुलाई १६१० म मास्को क बोयारा न शूइस्की का गद्दी म उतार दिया और उस मठवासी बनन क लिए विवश कर दिया। अब सत्ता पर अधिकार के लिए उनम आपस म झगडा होन लगा। अत म उन्होंने एक विदेशी राजपुत्र–पोलैड क बादशाह सीगिसमुद तृतीय (१५८७ १६३२) क पद्रहवर्षीय पुत्र व्लादीस्लाव को रूस का जार चुनन का निश्चय किया।

इसी बीच पोलिश सनाओ न मास्को की तरफ बढना भी शुरू कर दिया था। कुछ समय सत्ता सात बोयारो क हाथो म रही, जिनका शासन पूर्णत निष्फल सिद्ध हुआ। उन्होंने स्वर्गवास (डोर्मीशन) क गिरजाघर म व्लादीस्लाव के प्रति निष्ठा की शपथ ली और नगर क द्वार पोलिश सामतो के लिए खोल दिय। १६१० क शरद म पोलिश सनाओ न मास्को का कब्जा मे ले लिया और इसके बाद उनके सैन्य नता ही देश क नय शासक बन गये।

यह सभवत रूस के दुर्भाग्य का चरम था। देश की राजधानी–मास्को–विदेशी विजेताओ क हाथो म थी। पोलिश सामता न क्रेमलिन म मजबूती के साथ डेरा जमा लिया उन्हान सभी जगह अपन प्रहरी दल नियुक्त कर दिये और नगर द्वारो की चाबियो को अपन कब्जे म ले लिया। उन्होंने आसपास के गावो के किसानो क मास्को म प्रवश को निषिद्ध कर दिया और रात्रिकालीन कर्फ्यू लगा दिया। पोलिश सैनिक आसपास के गावो पर धावा मारकर अनाज और पशुओ को छीन लेते थे और किसानो पर जुल्म करते थे। पोलिश सामतो ने जारो के खजान से बहुत सी मूल्यवान चीजो को चुरा लिया और वे अपने तथा अपन अनुचरो के लिए बडी बडी जागीरो का भी हथियाने लगे। पोलिश बादशाह सीगिसमुद ने स्मोलेन्स्क तथा रूस के पश्चिमी सीमात के कई और नगरो पर कब्जा कर लिया। इधर नोवगोरोद स्वीडन के अधिकार मे पहले स ही था।

मीनिन तथा पोजार्स्की के नेतृत्व मे जनता द्वारा प्रतिरोध

विदेशी आक्रमणकारी रूसी राज्य के टुकडे टुकडे कर रहे थ। समय रहते देश का उद्धार करने के लिए कुछ करना जरूरी था। सिर्फ देशव्यापी जन आदोलन ही इस दुर्दशा का अत कर सकता था। जनसाधारण ने समय की पुकार को सुना। उत्तरी रूस के नगरो म जन प्रतिरोध आदोलन फूट पडा और जल्दी ही वोल्गातटीन नीजनी नोवगोरोद नगर इस आदोलन का केंद्र बन गया। इस आदोलन का सगठनकर्ता नीजनी नोवगोरोद की नगर परिषद

का प्रधान कोज्मा मीनिन (देहात १६१६) था। पोलिश आक्रमणकारियो को देश के बाहर खदेडने के लिए एक बडी सेना की जरूरत थी और इस सेना के रख-रखाव के लिए बहुत धन अपेक्षित था। मीनिन ने जनता को प्रबोधित किया। उसने कहा, हम कोई भी कसर नही छोडगे – घरो को वेच देगे बीवी-बच्चो से मजदूरी करवायेगे पर सैनिको को वेतन देन के लिए पैसा इकट्ठा करके रहेगे"। देश के हर भाग से लोगो ने मीनिन को धन मूल्यवान चीजे और खाने-पाने की चीजे लाकर दी। लोगो ने अपनी अतिम कौडी अतिम चीजो को भी दे दिया। कई नगरो ने मीनिन क आह्वान के जवाब मे मशस्त्र टुकडिया भेजी और इस तरह जल्दी ही एक विशाल जन सेना का सयोजन हो गया।

अनुभवी सेनानायक राजा द्मीत्री पोजार्स्की (लगभग १५७८ १६४२) को इस सेना का सेनापति चुना गया। इस मुक्ति अभियान की प्रशासनिक तथा आर्थिक व्यवस्था मीनिन के हाथो मे थी। १६१२ मे रूसी सेनाओ ने यारोस्लाव्ल की ओर कूच किया जहा कई और शहरो की टुकडिया भी उनक साथ आ मिली।

लेकिन जल्दी ही मीनिन ओर पोजार्स्की के पास चिताजनक खबरे पहुचन लगी – मास्को मे डेरा जमाये पोलो की सहायता के लिए हेतमन (सेनानायक) खोदकेविच की कमान मे हथियारो और रसद से अच्छी तरह लैस कई पोलिश टुकडिया चल पडी थी। यह खबर पाते ही मीनिन और पोजार्स्की न अपनी सेना के साथ यथासभव तेजी से मास्को की तरफ बढना शुरू कर दिया।

उस समय मास्को के पास कई किसान तथा कज्जाक टुकडिया भी डेरा डाल हुए थी क्योकि अब भी अनेक कृपक विद्रोह हो ही रहे थे। आरभ म ये किसान पोजार्स्की के सैनिको के साथ कोई भी सबध रखने के इच्छुक नही थे – उनम से कुछ मास्को स और दूर चले गये लेकिन शप किसान अत मे विदशी आक्रमणकारियो के विरुद्ध सामान्य सघर्प म उतर आय। उनकी यह कुमुक निर्णायक सिद्ध हुई। खोदकेविच को हराकर पीछे धकेल दिया गया और मास्को मे जमे हुए पोलो को कोई सहायता प्राप्त न हा पायी। मीनिन और पोजार्स्की की सना न मास्को घर लिया। नवबर के अत म पोला का पूरी तरह हरा और नगर से भगा दिया गया। रूस पर उनके धावे का इस प्रकार लज्जाजनक अत हुआ। रूसी जनता क सयुक्त प्रयासा न उन्ह पूरी तरह स पराजित कर दिया।

ग्यारहवां अध्याय

सोलहवीं-सत्रहवीं सदियों के दौरान दक्षिणी तथा पूर्वी एशिया

भारत

सोलहवी तथा सत्रहवी शताब्दियो म भारतीय प्रायद्वीप पर जिन राज्या का उदय हुआ उनमे सबसे प्रमुख उत्तर भारत मे महान मुगलो का मुस्लिम साम्राज्य और दक्षिण मे विजयनगर का हिंदू साम्राज्य थे। इनम से प्रत्यक साम्राज्य म कई अलग-अलग रियासते थी और प्रत्येक का अपना राजनीतिक कद्र था। लेकिन अपन जातीय तथा धार्मिक गठन म असमानता के बावजूद य रियासत सामान्य आर्थिक तथा सामाजिक ढाचे द्वारा आपस म जुडी हुई थी।

इन दोनो साम्राज्या के आथिक विकास का रास्ता अलग अलग था। दक्षिण म व्यापारिक नगरो न खूब उन्नति की थी। पुरान समुदाय धीरे धीरे विघटित हो गये थे और उनके स्थान पर बेशुमार सामती जागीरे पैदा हो गयी थी जिनके स्वामी अपनी जमीन के टुकडे कमरतोड लगान पर किसानो को काश्त करन के लिए दिया करते थे। इन छोटे भूस्वामियो की सपत्ति को सैनिक सेवा की एवज मे राज्य द्वारा जो सर्वोच्च भूस्वामी था दिये जानवाले पारिश्रमिक का एक रूप माना जाता था। भूमि के समग्र राजकीय स्वामित्व मे एकमात्र अपवाद मदिरो की बडी जागीर और ब्राह्मणो की छोटी तथा मध्यम आकार की जागीर थी। सुविकसित प्रशासनतत्र और मजबूत राज्य सत्ता के होते हुए भी सार्विक निजी भूस्वामित्व के अभाव और राजाओ के विशेषाधिकारो के बन रहने का विजयनगर साम्राज्य के इतिहास के सपूर्ण क्रम को निर्धारित करना था। सोलहवी शताब्दी के अत तक साम्राज्य के क्रमिक विघटन का दौर शुरू हो चुका था।

उत्तरी भारत म विकास का क्रम बिलकुल दूसरी ही तरह का रहा। यहा युद्ध के सदा बन रहनवाले खतरे और विशाल सिचाई प्रणालियो के रखरखाव की जरूरत न मजबूत कद्रीय शासन के सुदृढीकरण म योग दिया।
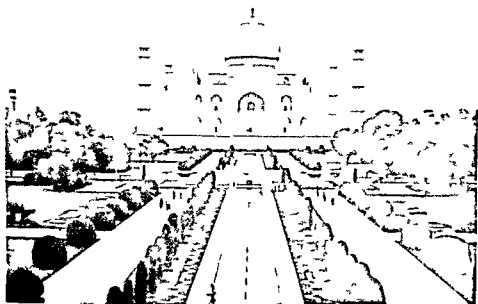
ताजमहल, आगरा

मजबूत केंद्रीय शासन नगरों के लिए भी महत्वपूर्ण था क्योंकि वे अपने निर्वाह के लिए आतरिक व्यापार पर निर्भर करते थे। उत्तर में ही मध्ययुगीन भारत के सबसे बडे, सबसे उन्नत और केंद्रीकृत राज्य – महान मुगल साम्राज्य – को पैदा होना था। इस साम्राज्य के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनेवाला कारक पुर्तगाली जलदस्युओं द्वारा समुद्र पर अपना प्रभुत्व स्थापित किये जाने के बाद नये स्थलीय व्यापार मार्गों का कायम किया जाना था। एक ऐसे देश में, जहां की आबादी का भारी बहुलांश हिंदू धर्मावलंबी था और जहां हिंदू शासकों की संख्या मुस्लिम शासकों से कहीं अधिक थी, मुस्लिम शासन का सुदृढीकरण करने की आवश्यकता भी इतना ही महत्वपूर्ण कारक था।

मुग़ल साम्राज्य

इन सभी बातों की बदौलत काबुल का शासक और प्रतिभाशाली सेनानायक ज़हीरुद्दीन बाबर एक केंद्रीकृत साम्राज्य की स्थापना के अपने प्रयासों में सफल रहा। बाबर ने उत्तरी भारत में हिंदू तथा मुसलमान

राजाओ के प्रतिरोध को कुचल डाला और १५२६ मे मुगल साम्राज्य की नीव रखी।

लेकिन बाबर अपने जीवनकाल मे सुदृढ राज्यतत्र और सुचारु आर्थिक शोषण प्रणाली की स्थापना न कर सका। यह कार्य शेरशाह सूरी (शासनकाल-१५३९ १५४५) ने किया जिसने कुछ समय के लिए मुगल साम्राज्य का तख्ता पलट दिया था जिसे बाबर का पुत्र हुमायू शेरशाह की मृत्यु के बाद ही फिर से स्थापित कर पाया। शेरशाह द्वारा कायम की गयी व्यवस्था के अतर्गत कृषि कार्य मे लगे सभी लोग राज्य की प्रत्यक्ष मातहतगी मे आ गये—हर किसान को राज्य को बधा हुआ लगान देना होता था। शेरशाह के शासनकाल मे बहुत से आतरिक महसूलो को खत्म कर दिया गया, मुद्रा प्रणाली को सुधारा गया महत्वपूर्ण सडको का निर्माण किया गया और एक जटिल कद्रीकृत प्रशासनतत्र की स्थापना की गयी। सम्राट की सेवा करनेवाले जागीरदारो को राजकीय अधीक्षण के अतर्गत लाया गया और हिदुओ तथा मुसलमानो मे सामाजिक विभेदो के कम होने के कारण उनकी कतारो मे मेल भी बढता गया।

जागीरदार वर्ग के सुदृढीकरण और सुनिर्धारित प्रशासनिक व्यवस्था की स्थापना के नतीजे के तौर पर मुगलो के लिए यह सभव हो गया कि वे सारे भारत का एकीकरण करने के प्रयास का समारभ कर सके। इसके लिए आवश्यक ऐतिहासिक तथा सास्कृतिक एकता पहले से ही विद्यमान थी और भाषा तथा आर्थिक विकास के भेदो का महत्व पहले की बनिस्बत अब कही कम हो चुका था। अकबर का शासन (शासनकाल—१५५६-१६०५) सारे ही उत्तरी भारत और दक्षिणी भारत के उत्तरी अर्धांश पर फैला हुआ था।

इन विजयो के परिणामस्वरूप सामतो का एक मिश्रित वर्ग पैदा हुआ, जिसमे विजेता और विजित हिदू और मुसलमान—दोनो ही जातियो के प्रतिनिधि थे। कद्रीय सत्ता के सुदृढीकरण की ओर लक्षित नीति को धार्मिक अतरो के बावजूद इस वर्ग के छोटे तथा मझोले दर्जे के प्रतिनिधियो का व्यापक समर्थन प्राप्त हुआ—उनमे से मुगल शासन के सबसे निष्ठावान समर्थक राजपूत थे जो हिदू थे। उत्तर भारतीय नगरो के व्यापारी भी इस एकीकरण के पक्ष मे थे।

एकीकरण ने आर्थिक प्रगति मे काफी योगदान किया। नियत लगान के प्रचलन के फलस्वरूप कृषि के विकास मे और इसी प्रकार शहरी तथा देहाती दस्तकारियो के विकास मे भी निश्चित उन्नति हुई। गावो मे ग्राम समुदायो का लगभग पूरी तरह से विलोपन हो गया—देश भर मे उनके स्थान पर दो नये समूह पैदा हो गये—एक धनी अल्पसख्यक वर्ग और एक भूमिहीन किसान वर्ग जो लगान पर मिली जमीन को काश्त करता

जबरदस्त आतरिक सघर्ष के इस जमाने म सामती शासन ने ९ सुधार क्रियान्वित किये, जिन्होंने किसी हद तक विरोधी आदोलनो का ।। सघर्ष का रास्ता पकडने से रोका। इन सुधारो न शोपण के अधिक (तरीको भूस्वामित्व के सामती स्वरूपो के सुदृढीकरण और केंद्रीकृत राज्य तत्र को सुनिश्चित किया। देश भर म नियत वैयक्तिक लगान लागू । गया जिसकी अदायगी नकद की जाती थी। आरभ मे इसने किसानो जिंदगी को आसान बनाया लेकिन राज्य ने हाल ही मे जिस विराट कराधान तत्र का निर्माण किया था, उसन और भी भारी करो का लगाया जाना सभव बना दिया और यह देखते हुए कि इन करो को नकद अदा करना होता था इसके परिणामस्वरूप शीघ्र ही कृपक समुदाय का सामूहिक ... करण हो गया। अपनी बारी मे अतत इसने मुगल साम्राज्य की शक्ति पर ही कुठाराघात किया क्योकि राज्य के लिए जो जमीन का स्वामी था अब दरिद्रता की जकड मे आये किसानो से करो के बहुत बडे भाग का वसूल कर पाना असभव हो गया।

सोलहवी सदी के उत्तरार्ध मे राजकीय सेवा करनेवाले सामतो को किसानो के जिनसे केंद्रीय सरकार के सरकारी मालगुजार लगान वसूला करते थे प्रत्यक्ष शोषण के अपने कई अधिकारो से वचित कर दिया गया। तत्कालीन मुगल भारत की सशर्त भूस्वामित्व प्रणाली मे इस प्रकार की जागीरो का अतत निजी सपत्ति बन पाना लगभग असभव था। इस प्रणाली ने सामतो म घोर असतोष पैदा किया लेकिन उन्होने तब तक खुले विद्रोह के रास्ते को नही अपनाया जब तक कि राज्य ने उन्हे जमीन से प्राप्त मालगुजारी की वतनो स प्रतिस्थापना करने की कोशिश नही की। इस कदम को, जो भारत के आर्थिक विकास की उस अवस्था म सर्वथा अनुपयुक्त था, वापस ले लिया गया लेकिन सशर्त भूस्वामित्व बना रहा। इसीके साथ-साथ हिंदुओ और मुसलमानो को समान अधिकार प्रदान कर दिये गये और एक सार्वजनीन धर्म का प्रचलन करने की भी असफल कोशिश की गयी। इन सभी बातो से सामतो की एकता ही बढी जिससे किसानो की हालत और भी ज्यादा बिगडी।

अपनी बारी म इन अवस्थाओ ने राज्यतत्र और सेना – दोनो ही को कमजोर किया। यूरोपीय शक्तियो के साथ सबधो म यह कमजोरी स्पष्टता से प्रतिबिंबित होती थी। पुर्तगाली व्यापारियो ने देश के कई तटवर्ती नगरो म मजबूत अड्डे प्राप्त करने म सफलता प्राप्त कर ली और अग्रेज डच तथा फ्रासीसी व्यापारी कपनियो ने भी देश के विभिन्न भागो म अनेक दुर्गबद्ध व्यापारिक कोठिया स्थापित कर ली।

तीक्षत स्तभ, च्यू फू (शातुग प्रात, चीन), १६ वीं सदी

सोलहवीं-सत्रहवीं सदियो का चीन

मिंग राजवश के शासन म चीन का विकास धीमी गति से हुआ।

सोलहवी सदी के आरभ म किसाना को जमीन दिये जान की उस प्रणाली का विघटन शुरू हो गया, जिसका उदय राजकीय भूस्वामित्व की स्थापना के समय ही हुआ था। सरकारी नौकरी करनेवाले नये जमीदारो, शक्तिशाली सामतो और स्वय सम्राटो ने भी नयी-नयी जागीर कायम की और अपने कब्जे म कृषियोग्य जमीन को बढाने के लिए किसानो को अपनी जोतो से बेदखल करके भगा दिया, जिन्ह उन्होने बाद म कमरतोड शर्तो पर जमीन को काश्त करने के लिए अपनी सेवा म ले लिया। जमीन की भूख ने किसानो को असामी काश्तकार बनने को मजबूर कर दिया, जिन्ह जमीदारो को लगान और राज्य को कर अदा करने होते थे। किसानो को अपने कब्जे म स्थित उस जमीन के लिए भी कर देने होते थे, जो अभी तक बडे जमीदारो की जागीरो के बाहर थी। छोटी और मझोली हैसियत के जमीदारो को भी कर अदा करने होते थे। इन करो का काफी हिस्सा नकद अदा करना होता था जिसस सूदखोरी ने ग्रामीण जीवन म गहरी जडे जम ली। लेकिन इन सभी प्रक्रियाओ ने सोलहवी सदी के आरभ म ही बड़े पैमाने पर फैलना शुरू किया और मिंग काल के पहले १५० वर्षो म देश के आतरिक मामले अपेक्षाकृत शात रहे। विद्रोह अधिकाशत अल्पसंख्यक गैर-हान जातियो म ही हुआ करते थे, जो विशेषकर क्रूर दमन और उत्पीड़न का शिकार थी।

देहातो म पण्य द्रव्य सबधो के विकास और महाजनो (सूदखोरो) की बढती शक्ति के साथ साथ कृषक कुटीर उद्योगो, शहरी और ग्रामीण शिल्प सघो और राजकीय उद्योग तथा विनिर्माणशालाओ की भी वृद्धि हुई। इस काल मे बारूदी हथियारो का बनना शुरू हुआ और सबसे पहले समाचार पत्रो का प्रकाशन शुरू हुआ। चीनी जहाजियो ने दूरस्थ विदेशो की पहली यात्रा करना शुरू किया। सोलहवी सदी मे यूरोपीय लोग भी चीन पहुचे और यूरोपीय संस्कृति वहा पैर जमाने लगी।

सोलहवी और सत्रहवी सदियो के मिंग शासको की विदेश नीति प्रति-रक्षात्मक थी और कई बातो म वह सुग शासको की विदेश नीति की याद दिलाती थी। इस काल मे मगोलो ने उत्तर से बारबार हमले किये, पूर्व से जापानियो ने आक्रमण किये और सत्रहवी शताब्दी के आरभ म मचूरियो ने उत्तर पूर्व से चीन पर धावे करने शुरू किये।

जल्दी ही परिस्थिति अत्यधिक खतरनाक हो गयी, लेकिन शासक वर्ग के विभिन्न समूहो के प्रतिनिधियो की कलह ने किसी भी तरह के सं

उपायो का अपनाया जाना असभव बना दिया। बढते हुए शोषण के खिलाफ किसानो का तेज होता प्रतिरोध इस परिस्थिति को और भी ज्यादा पेचीदा बनानेवाला एक अन्य कारक था।

सरकारी नौकरशाही की निचली और मझोली सीढियो पर काम करनेवाले अधिकारियो ने शक्तिशाली भूस्वामियो और ख्वाजासराओ के गैरजिम्मेदार दरबारी गुटो के खिलाफ बगावत का झडा खडा कर दिया। लेकिन उनके (तुग लिन दल तथा अन्य दलो के) विद्रोह करने के १५६७, १६२० और १६२८ के प्रयासो का अत असफलता मे ही हुआ। उस समय कोई बडे पैमाने के जन विद्रोह नही हुए और इसके परिणामस्वरूप सुधार की आवश्यकता ने भी अपने को सख्ती से अनुभूत नही करवाया। इसके अलावा स्वय सुधार चाहनेवालो ने जनसाधारण का समर्थन प्राप्त करने का प्रयास नही किया क्योंकि वे अपनी आशाओ को सम्राट की सदेच्छा पर टिकाना अधिक श्रेयस्कर समझते थे। यह सही है कि कुछ सम्राटो ने छोटे तथा मझोले दर्जे के भूस्वामियो द्वारा प्रस्तावित विभिन्न सुधारो को क्रियान्वित करने की कोशिश की, लेकिन ये कोशिशे निष्फल ही रही, यद्यपि प्रचड आतरिक सघर्ष और कृपक असतोष की बढती हुई ल्हर ने सत्रहवी शताब्दी के चौथे दशक मे ही सुधारो को अपरिहार्य बना दिया था।

चीन मे कृषक युद्ध

१६२८ मे, एक और सुधार चाहनेवाले सम्राट के जमीदारो की शक्ति को सीमित करन के प्रयास मे असफल होने के कुछ ही बाद अलग थलग किसान विद्रोह बडे पैमाने के कृषक युद्ध का रूप लेने लगे। विभिन्न कृषक गिरोहो का आपस मे मिलकर एक होना इसलिए और भी सुगम हो गया था कि उस समय सरकारी सेनाओ का एक बडा हिस्सा उत्तरी सीमात पर मचूरी हमलो को रोकन म लगा हुआ था। १६३६ तक यह विद्रोह इतना व्यापक बन गया था कि सम्राट के अमले के भूस्वामियो को कृषक समस्या के बारे मे अपनी नीति को ही बदलना पडा। जहा सभव था वहा बलवो को निर्दयतापूवक कुचल देने के बावजूद उन्हे कई रिआयते देने के लिए भी विवश होना पडा। लेकिन १६३९ म विद्रोह पहले से भी ज्यादा ज़ोर के साथ भडक उठा। ली त्जू च्येग के नेतृत्व मे बागियो ने शाही सेना को परास्त कर दिया और राजधानी पर कब्जा करके ली त्जू-च्येग को सम्राट घोषित कर दिया।

पूववर्ती कृपक विप्लवो के विपरीत १६३९-१६४४ के विद्रोह क फलस्वरूप सैनिक तथा असैनिक, दोनो ही मामलो के लिए एक केद्रीकृत प्रशासन व्यवस्था की स्थापना की गयी और कृपक शासन ने देश के अर्थतत्र का नियमन

करने के प्रयास किये। बागियो ने जल्दी ही ह्वाग हो नदी की घाटी के निचले तथा मध्यवर्ती भागो को नियत्रण मे ले लिया। लेकिन यांग्त्सी के दक्षिण मे आबादी ने विद्रोह म अधिक भाग नही लिया (और न कोई शाही सेना और सामतो के अनुचरो का ही गढ था)। बडे की सारी आशाए वू साग हुइ की सेना पर टिकी हुई थी, जो उस उत्तरी सीमात पर मचूरी आक्रमणो का सामना कर रही थी।

अपने ही बल पर निर्भर न रहते हुए चीनी सामतो न वू साग नेतृत्व मे अपने विशेषाधिकारो को बचाये रखने की खातिर देश के के साथ विश्वासघात किया और नये कृषक शासन को नष्ट करने के मचूरियो के साथ सहबध स्थापित कर लिया। वू साग हुइ और मचू की सयुक्त सेनाए विद्रोहियो को राजधानी और उसके आसपास के इ से निकाल भगाने मे सफल हो गयी। राजधानी मे प्रवेश करने के बाद रियो ने अपने नेता को चीन का सम्राट घोषित कर दिया। यांग्त्सी नदी दक्षिण मे चीनी सामतो ने मिगवश के एक अन्य सदस्य को सम्राट घो कर दिया। कृषक विद्रोहियो ने अपने सघर्ष को जारी रखा, लेकिन उ शक्ति अब उतार पर आ चुकी थी। ली त्जू च्येग और उसके अनुगा के कई शिकस्ते खाने के बाद कृषक राज्य का राजकीय प्रशासनतंत्र सैन्यबल ध्वस्त हो गया और अस्थिरमति नगरवासियो तथा छोटे भूस्वा ने विद्रोहियो का साथ छोड दिया। १६४५ मे ली त्जू च्येग मारा गय उसकी मृत्यु सामती प्रतिक्रिया और उत्पीडक मचूरी शासन के युग के समा की द्योतक थी।

सोलहवीं सत्रहवीं सदियो का दक्षिण-पूर्वी एशिया

सोलहवी शताब्दी के आरभ तक इस क्षेत्र की अधिकाश बडी जातिया इडोनेशिया, वियतनामियो ख्मेरो बर्मिया, थाइयो और लाओसिया- राज्य लगभग आज जैसे प्रदेशो पर ही कायम हो चुके थे। फिलिपी द्वीपो और मलाया मे अभी निश्चित केंद्र के साथ किसी राज्य क उदय नही हुआ था और छोटे छोटे रजवाडो के बीच लगातार लडाई झगडे ही चलते रहते थे।

दक्षिण-पूर्वी एशिया के अधिकाश राज्य उन्नत सामती स्वरूप के थे। उन सभी मे जमीन पर राजकीय स्वामित्व था, सामती नौकरशाही विद्यमान थी और भूस्वामी वर्ग का उदय हो रहा था। सुसस्थापित समुदायो और उनकी महानुगामी सस्थाओ – जिनमे सिचाई प्रणालिया सबसे महत्वपूर्ण थी – का अब भी बने रहना बडे केद्रीकृत राज्यो का अभाव और किसी गह

प्रभावी सास्कृतिक, आर्थिक तथा सैनिक कद्र का न होना इन सभी राज्या क विशिष्ट लक्षण थे।

इन सामती राज्यो को अपन चरित्र क अनुसार तीन श्रेणिया मे विभाजित किया जा सकता है। पहली श्रेणी म वियतनाम और इडोनेशिया जैस उन्नत सामती राज्य आते थे, जिनम सीमित क्षत्र म सुविकसित कृषि न देहाता म जनाधिक्य और सामती शोषण के जटिल रूपो को जन्म दिया। इन राज्यो क राजाओ क सैनिक अभियानो का परिणाम क्षेत्रीय विस्तार नयी जमीनो को आशिक रूप मे आबाद करना और प्राय विजित जनो का आत्मसात्करण हुआ करता था।

दूसरी श्रेणी म क्वोज (कपूचिया या कबोडिया) और स्याम (थाईलैड) जैसे इतन ही सुगठित सामती राज्य आते थे, जहा अकृष्ट भूमि क विराट विस्तार थे और इसलिए बधुआ किसान सपत्ति के मूल्यवान स्रोत थे। इन देशो म लडाइया प्राय जमीन क बजाय किसानो के लिए लडी जाती थी, जिन्हे लाखो की सख्या म पकडकर ले जाया जाता था। इन राज्यो मे सामती जागीरो के प्रसार ने राजकीय भूस्वामित्व को पहली श्रेणी के राज्यो की अपक्षा कम कमजोर कर दिया था।

तीसरी श्रेणी म बर्मा का आवा राज्य लाओस का लान जाग राज्य और फिलीपीन, मलक्का प्रायद्वीप और पश्चिमी मलाया की सल्तनते आती थी। इनम से अधिकाश म प्रशासन अब भी कबायली नेताओ के वशज सामतो के हाथा मे ही था, कृषि म सामती स्वरूप खास उन्नत नही थे और आबादी का काफी बडा भाग अब भी मुख्यत कबायली रिवाजो क मुताबिक ही रहता था।

दाइवियत राज्य

वियतनाम का दाइवियत राज्य और इडोनेशिया का मज्जापहित राज्य आर्थिक दृष्टि से सर्वाधिक विकसित राज्यो म थे। दाइवियत न तेरहवी शताब्दी मे तीन मगोल आक्रमणो को विफल किया था। चौदहवी शती क अत और पद्रहवी शती के आरभ म प्रवर्तित सुधारो न दाइवियत मे भूमि के राजकीय स्वामित्व और नौकरशाही के निचले और मझोले सस्तरो की भूमिका को दृढतापूर्वक स्थापित कर दिया था। पद्रहवी शती का मुख्य लक्षण केंद्रीकृत वियतनामी राज्य मे तीव्र आर्थिक तथा सास्कृतिक विकास और दक्षिण तथा पश्चिम मे काफी प्रादेशिक प्रसार था। सोलहवी सदी म सामुदायिक कृषि का विघटन शुरू हो गया और उसका स्थान सैन्य नेताओ की छोटी और मध्य माकार जागीरे लेने लगी। सोलहवी शती के अत और सत्रहवी क पूवार्ध म केंद्रीय सत्ता और अपनी सेवा के लिए सशर्त भूसपत्ति प्राप्त नौकरशाही

की सत्ता मे शैन शैन कमजोरी आने लगी। सत्रहवी शताब्दी म दाईविएत मे दो केद्रो – एक उत्तर मे और एक दक्षिण मे – का उदय हा गया। लबे सघर्ष के बाद देश दो खासे केद्रीकृत राज्यो म विभाजित हा गया, जो त राजवश की नाममात्र की सत्ता के अतर्गत पूरी तरह से स्वतत्र थे।

मज्जापहित साम्राज्य

इडोनेशिया के इतिहास का सिलसिला बिलकुल दूसरी ही तरह का रहा। वहा जो राज्य पैदा हुआ वह जावा द्वीप के इर्द गिर्द कद्रित था। यह राज्य तेरहवी शताब्दी के अत तक बढकर मज्जापहित साम्राज्य (१२६३ से सोलहवी शती के लगभग तीसरे दशक तक) मे परिणत हो गया।

जावा के इर्द-गिर्द एक ऐसे राज्य के, जिसमे इडोनेशिया का अधिकाश शामिल था निर्माण मे विभिन्न इडोनेशियाई द्वीपो के बीच व्यापारिक तथा सास्कृतिक सबधो के तीव्र विकास के साथ-साथ यह तथ्य भी सहायक रहा कि जावा कई अन्य द्वीपो के लिए चावल का स्रोत वन गया था, जो स्वय मुख्यत निर्यात के लिए ही फसले पैदा किया करते थे। जावा ने पहले तो साम्राज्य के विभिन्न भागो मे राजनीतिक तथा राजवशीय सबधो की स्थापना द्वारा और बाद मे द्वीपसमूह के भीतर अन्य सभी राज्यो को सफल सैनिक अभियानो द्वारा वश मे करके अपने सयुक्त साम्राज्य को बनाये रखा।

इस घटनाक्रम के दौरान गज मद नामक एक प्रतिभाशाली राजनेता १३२८ से १३६४ तक मज्जापहित का वास्तविक शासक बना रहा। कई लवे युद्धो के बाद वह जावा के सामतो के हितानुकूल एकीकरण की नीति को क्रियान्वित करने मे सफल हो गया। उसने पश्चिमी जावा, सुमात्रा द्वीप के कुछ तटवर्ती भागा मलक्का प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग, वक तथा मलवई द्वीपो क्लीमतान के उत्तरी तथा दक्षिणी तटो, बादा द्वीपो और मलूकू द्वीप तथा अन्य टापुओ को जीत लिया। इन सभी इलाको के सामती नता मज्जापहित साम्राज्य के अधीनस्थ सामत बन गये। कृपि के सामती स्वरूपा के उदय के परिणामस्वरूप जमीन का समुदायी, देवस्व (मदिरो की), प्रजा और निजी (ज्यादा शक्तिशाली सामतो के मामले म) जमीना म सुस्पष्ट विभाजन हा गया। सामता मे जल्दी ही शक्तिशाली भूस्वामियो का एक समूह पैदा हो गया, जो राजदरबार म महत्त्वपूर्ण पदो पर थे और जा आम तौर पर शासक के सबधी हात थ। दूसरी ओर भूस्वामिया का एक अन्य बडा समूह भी था जिन्होने अपनी सपत्ति राज्य की सेवा की एवज म पायी थी। विशाल केद्रीकृत राज्यतत्र का प्रयाजन भूसपत्ति के वितरण पर सख्त नियत्रण का सुनिश्चित करना था जो राज्य की आय का मुख्य स्रात था।

अदालतो और पुलिस जैसे निग्रह या बलप्रयोग के साधना का सुव्यवस्थित सगठन किया गया था और उनके अपने विस्तृत नियम तथा विधि विधान थे।

चौदहवी शताब्दी युद्धो और सुधारो की शताब्दी थी। यह मध्ययुगीन इडोनेशियाई सस्कृति के चरम मुकुलन की शताब्दी थी। महान महाकाव्य 'नेगरकार्तगम' इसी काल मे रचा गया था। इस युग मे कई अन्य श्रेष्ठ कृतियो की रचना भी हुई और भव्य मदिरो का निर्माण हुआ। इस समय तक भारतीय सस्कृति का प्रभाव कमज़ोर होने लगा था यद्यपि तत्कालीन विधि विधान मे जातिप्रथा के अवशेषो को फिर भी देखा जा सकता था।

पद्रहवी शताब्दी के मध्य मे मलक्का प्रायद्वीप के तटवर्ती और सुमात्रा के मुस्लिम राज्य अधिक शक्तिशाली और ज्यादा खुदमुख्तार हो गये और मज्जापहित के वैदेशिक व्यापार के लिए खतरा बन गये। पद्रहवी सदी के अत तक मज्जापहित साम्राज्य अपने सभी अधीनस्थ टापुओ और जावा के उत्तरी भाग को गवा चुका था। सोलहवी शताब्दी के दूसरे दशक मे भूतपूर्व साम्राज्य के बचे-खुचे हिस्से उत्तरी जावा की व्यापारी रियासतो के सहवध के हाथो मे पहुच चुके थे। जल्दी ही इन राज्यो मे तब फिर नयी लडाइया शुरू हो गयी, जब मतरम सल्तनत ने एक नया केद्रीकृत राज्य स्थापित करने का प्रयास शुरू किया। लेकिन यूरोपीयो के आगमन के परिणामस्वरूप ये प्रयास रुक गये और बाद मे पूर्णत निष्फल हो गये।

पुर्तगाली विजये

१५११ म मलक्का पुर्तगालियो द्वारा जीत लिया गया जिन्होंने ससार के इस भाग मे व्यापार मार्गो पर नियत्रण स्थापित करने के लिए अरब और इडोनेशियाई व्यापारियो के साथ टक्कर लेना शुरू कर दिया था। इस प्रश्न के अतिम रूप मे निर्णीत किये जाने के बहुत पहले ही पुर्तगाली मलूकू द्वीपो म, जो मसालो के मुख्य स्रोत थे, और इडोनेशिया म अन्य कई जगहो म अपना अड्डा जमाने म सफलता प्राप्त कर चुके थ। समुद्री मार्गो पर पुर्तगाली नियत्रण क फलस्वरूप स्थानीय व्यापार को क्षति पहुची और अपने व्यापारिक नुकसान की कमर पूरी करने के प्रयास म स्थानीय भूस्वामियो द्वारा किसानो का शोषण और प्रखर हो गया। इसने इडोनेशियाई राज्यो की शक्ति को कमज़ोर किया लेकिन फिर भी उनम म अधिकाश न अपनी आजादी को बनाये रखा।

डचो की विजये

१६०३ म डच व्यापारिया और नीदरलैड ईस्ट इडिया कपनी के सैनिको के आगमन के बाद इडोनेशिया की स्थिति और भी बदल गयी। मलूकू द्वीपो को कब्जे म लेने और स्थानीय राजाओ को अपने अधीन करने के बाद कपनी ने सारे इडोनेशिया म अपने किलो का जाल कायम कर दिया और धीरे धीरे अधिकाधिक इलाको को अपने कब्जे म ले लिया। इस कपनी की सफलता इन द्वीपो के प्राकृतिक साधनो की बेलगाम लूट और स्थानीय आबादी के निर्मम शोषण पर आधारित थी। डच व्यापारियो ने अपने प्रमुख अड्डे जावा के उत्तर-पश्चिमी तट पर स्थापित किये, जहा उन्होने बटाविया (वर्तमान जकार्ता) नगर बसाया। इस इलाके मे डच व्यापार खूब फूला फला और कपनी धीरे धीरे अपने अधिकृत क्षेत्र का प्रसार करती गयी। लेकिन सत्रहवी शताब्दी के मध्य तक डच जावा के भी निर्विवाद्य स्वामी नही बन पाये थे, जहा शक्तिशाली मतरम और बतम सल्तनत उनकी प्रतिद्वद्वी थी।

सोलहवीं तथा सत्रहवीं सदी के पूर्वार्ध का जापान

मगोल आक्रमण के परिणामस्वरूप जापान के जीवन म अनेक उल्लेखनीय परिवर्तन आये। केंद्रीकृत शोगनशाही का अत हो गया, जो अपने समर्थन के लिए समुराइयो पर निर्भर करती थी। दाइम्यो, अर्थात प्रमुख सामतो की बडी बडी जागीरो का प्राधान्य स्थापित हो गया। इनमे से प्रत्येक बडे भूस्वामी के अधीन कई-कई समुराई थे। चौदहवी शताब्दी के अत म शोगनो पर दक्षिण पश्चिम के राजाओ की विजय के बाद, जब सत्ता शोगनो से छिनकर अशीकागा वश के हाथो मे चली गयी, तो इस नयी प्रणाली को राजनीतिक वैधता प्राप्त हो गयी।

अशीकागा के शासनकाल मे बडी जागीरो की सख्या धीरे धीरे कम होती गयी और समुराइ, जो अब शक्तिशाली सामतो के अधीन थे, पहले की तरह ऐक्यबद्ध वर्ग नही रहे। पद्रहवी सदी मे समुराइयो की बेदखली तो सार्विक कृषि सकट का मात्र एक पहलू था जिसका मूल कारण था जमीन की कमी किसानो का प्रखर शोषण और अलग अलग राजाओ मे लडाई झगडे। लेकिन इसीके साथ साथ शहरी दस्तकारियो तथा व्यापार का प्रसार हो रहा था कराधान का नियत्रण प्रमुख व्यापारियो के हाथो म दे दिया गया था जिनका शराब के उत्पादन पर भी एकाधिकार था। भूस्वामी अपने आपको अधिकाधिक सूदखोरो और व्यापारियो के शिकजो म पाते जा रहे थे। यद्यपि सरकार ऋणो को अक्सर मसूख करती रहती थी फिर भी जापानी सामतो

न सूदखोरो, व्यापारियो और नगरवासियो के विरुद्ध कोई सख्त कदम नही उठाये। व्यापार की खूब उन्नति हुई और जल्दी ही व्यापारी तथा शिल्पकार कुछेक विशेषाधिकारो का उपभोग करने लगे – जापान सुदूर-पूर्व म एकमात्र देश था जहा ऐसा हो रहा था। उत्तम हस्तकृतिया और ताबा अयस्क जापान की मुख्य निर्यात सामग्रियो म थे। कई बदर स्वशासी थे और उनके अपने नगर रक्षक दल थे। सोना चादी तथा ताम्र अयस्क के निर्यात से प्राप्त भारी मुनाफो ने भूस्वामियो को, जो कृषि की सीमित सभावनाओ से सुपरिचित थे नगरवासियो को तग करने के स्थान पर स्वय खनन परियोजनाओ का आरभ करने की प्रेरणा दी।

इधर कृषि मे लाभ सिर्फ किसानो की कीमत पर ही सभव था जिन्हे घोर शोषण का शिकार होना पडता था – उन्हे अपनी फसल का आधा हिस्सा अपने जमीदारो को दे देना होता था और वे सदा महाजनो और सूदखोरो की दया पर रहते थे। पद्रहवी और सोलहवी सदियो मे किसान विद्रोह अक्सर ही होते रहते थे और बागी किसानो की कतारो मे शहरी दस्तकार और भूमिहीन समुराई भी प्राय शामिल हो जाया करते थे। इससे कृषक विद्रोहो का सगठन श्रेष्ठतर हो जाता था – उनका नेतृत्व आम तौर पर विशिष्ट धार्मिक सप्रदायो या निर्धन नगरवासियो के गुटो के हाथ म होता था। इसीके साथ साथ सामतो के बीच अक्सर चलती रहनेवाली परस्परघाती लडाइया के कारण जापान सोलहवी शती के मध्य तक कई अलग अलग राजो मे टूट चुका था। इन छोटी-छोटी लडाइयो के मूल मे जो मुख्य कारण थे उनमे एक जमीन के पुनर्वितरण की आवश्यकता थी क्योकि विद्यमान भूव्यवस्था अब सामाजिक तथा आर्थिक विकास के वास्तविक स्तर के अनुरूप नही रह गयी थी। सोलहवी शताब्दी जापान के इतिहास मे अविराम आतरिक युद्धो का और उनके साथ साथ कोरिया म प्रादेशिक विस्तार करने के प्रयासो का भी काल था। यूरोपीयो ने जापानियो को आग्नेयास्त्रो – बारूदी हथियारो – से और बाद मे उनके उत्पादन के रहस्यो से भी अवगत करवाया। नतीजे के तौर पर कुछ ही समय के भीतर सैनिक कार्रवाइया मे निर्णायक भूमिका अश्वारोही सामतो के बजाय कृषको से बनी पैदल सेना को प्राप्त हो गयी जिसे अब तेजी के साथ पेशेवर आधार पर सगठित किया जाने लगा।

यूरोप के साथ सपर्क का एक और परिणाम कैथोलिक मत का प्रसार भी था जिसने जापानी जनता की एकता को कमजोर किया। पहले भी यह एकता कोई बहुत मजबूत नही थी और सशस्त्र किसान दस्तो की बढती सख्या – विशेषकर दक्षिण म – यही दशा रही थी कि मजबूत केद्रीय सत्ता के बिना सामत तथा समुराई अन्य वर्गो पर अपने प्रभुत्व को नही कायम रख पायगे। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि उन्होने राज्यसत्ता

का केंद्रीकरण और जापान की एकता का सुदृढ़ीकरण करने का प्रयास किया।

नये केंद्रीकृत जापान का नाभिक देश का मध्यवर्ती प्रदेश था और एकता के लिए प्रयत्नशील मुख्य शक्तियां ओदा नोबूनागा के नेतृत्व में भूस्वामी वर्ग की निचली और मझोली श्रेणियां थीं। १५६८ से लेकर १५८२ तक चलनेवाले प्रखर संघर्ष में नोबूनागा ने मुख्य नगरों के व्यापारियों को अपने पक्ष में लाकर और कृषक विद्रोहों को कुचलकर देश के उत्तरी अर्धांश में एक केंद्रीकृत राज्य स्थापित करने में सफलता प्राप्त कर ली। ओदा नोबूनागा के कार्य को १५८३ से १५९८ की अवधि में हिदेयोशी ने जारी रखा। उसने कोरिया को जीतने के लिए एक अभियान शुरू किया, जो असफल रहा। लेकिन देश में कृषक विद्रोहों का दमन करने में उसे कहीं अधिक सफलता मिली। हिदेयोशी ने जापानी किसानों को निरस्त्र करके और उन्हें भूदास बनाकर ज़मीन की समस्या को हल करने की कोशिश की।

किसानों की श्रम उत्पादिता में वृद्धि के परिणामस्वरूप भूस्वामी अब उनसे उपज के आधे भाग के स्थान पर दो तिहाई हिस्से की मांग करने लगे और नया केंद्रीकृत शासन किसानों को निरस्त्र करने और उन्हें अपनी-अपनी जोतों के साथ बांधने में समर्थ हो गया। किसान अपने सामंतों को लगान देते थे और इस लगान को सामंत या शोगन के चाकरों की निगरानी में वसूल किया जाता था। आंतरिक स्थिति में स्थिरता आने से घरेलू मंडियों के प्रसार में सहायता मिली।

तोकूगावा शोगनशाही की स्थापना

ज़मीन से आबद्ध किसानों से युक्त सामंती व्यवस्था की स्थापना की प्रक्रिया को तोकूगावा वंश के शोगनों ने पूरा किया, जिसने १६०३ में सत्ता प्राप्त की थी। यह व्यवस्था केंद्रीकरण और सार्विक, रूढ़िवादी अनुशासन पर आधारित थी। यह तोकूगावा वंश ही था कि जिसने कृषक विद्रोहों को अंतिम रूप में कुचला (इनमें सबसे बड़ा १६३७ में शीमाबारा में होनेवाला विद्रोह था) ईसाई धर्म पर प्रतिबंध लगाया, विदेशों के साथ राजनीतिक तथा व्यापारिक संबंधों के लिए सीमाएं निर्धारित कीं और दक्षिण में सामंतों तथा तटवर्ती नगरों की स्वतंत्र शक्तियों को परिसीमित किया। विदेश व्यापार राजकीय एकाधिकार बन गया, सभी सामाजिक श्रेणियों (समुराई, किसानों, दस्तकारों और व्यापारियों) के कर्तव्यों तथा दायित्वों का विस्तारपूर्वक निरूपण किया गया और भूमि पर राज्य के सर्वोच्च स्वामित्व का प्रचलन किया गया (लेकिन राजद्रोह के दंडस्वरूप ज़मीनों की ज़ब्ती के मामलों के सिवा इसे कदाचित ही प्रयोग में लाया जाता था)। दाइम्यो (बड़े सामंतों)

को अपन अधीनस्थ लोगो को दड देने, सशस्त्र अनुचर रखने और कर सग्रहण का अधिकार था, किंतु वे शोगन के कानूनो के अधीन थे और उन्ह अपने पडोसियो के साथ लडाइया करने की अनुमति नही थी। सत्रह बडे नगरो को शोगन के प्रति प्रत्यक्ष उत्तरदायी बना दिया गया और उन्ह सामतो के क्षेत्राधिकार से अलग कर दिया गया। इन कठोर नियमो ने किसानो की तुलना मे व्यापारियो और दस्तकारो पर कही कम असर डाला, क्योकि शोगनशाही व्यापार तथा दस्तकारियो की प्रगति को अवरुद्ध करने के बजाय उन्हे प्रोत्साहन ही प्रदान करना चाहती थी।

स्थानीय लडाइयो के अत और किसानो के सर्वव्यापी नियत्रण को सुनिश्चित करने के लिए मजबूत राजकीय तत्र की स्थापना ने भूस्वामियो के लिए किसानो को अतिम बूद तक निचोडना अर्थात आर्थिक विकास की उस अवस्था मे जितना हो सकता था, उनसे उतना वसूल करना सभव बना दिया। बाहरी दुनिया से देश का पृथक्करण इस शोषण मे सहायक था, जिसका मतलब यह था कि नगरो ने अपना सारा ज़ोर स्वदेशी मडी पर ही लगाना शुरू कर दिया, जो स्वय कृषि उत्पादन की उन्नति मे सहायक सिद्ध हुआ। उत्पादन के नये साधनो और प्राविधिक सुधारो का प्रचलन हुआ और यूरोप से लायी फसलो सहित नयी फसलो के साथ प्रयोग किये गये। पण्य-द्रव्य सबध ग्राम्य जीवन मे गहराई तक प्रवेश कर गये और नैसर्गिक अर्थव्यवस्था का युग जल्दी ही अतीत के गर्भ म समा गया। केद्रीकृत और स्थानीय विनिर्माणशालाए जगह-जगह पैदा हो गयी। लेकिन फिर भी समूचे तौर पर सत्रहवी सदी के जापान का आर्थिक विकास एक ऐसी सामती व्यवस्था के ढाचे के भीतर ही हुआ, जिसके सुदढीकरण के लिए तत्कालीन सरकार कोई भी कसर नही छोडती थी।

आधुनिक काल

पहला अध्याय

इगलैंड की बूर्जुआ क्राति। सत्रहवीं-अठारहवीं सदियो के यूरोप मे सामती निरकुशता

सामती उत्पादन सबधो म पूजीवादी व्यवस्था के तत्वो का उदय होने के साथ साथ पूजीपतियो के वर्ग के नाते बूर्जुआज़ी – बूर्जुआ वर्ग – की सपदा और प्रभाव मे भी वृद्धि होती गयी। जिन देशो मे पूजीवाद का विशेषकर तेज़ी के साथ विकास हुआ था, उनमे बूर्जुआ वर्ग की अब उस सरक्षण और सहायता स तुष्टि न हो पाती थी, जो सामती युग के निरकुश राजतत्र उसे पहले प्रदान किया करते थे। बूर्जुआ वर्ग सत्ता की आकाक्षा करने लगा, ताकि राज्य के निग्रह या बलप्रयोग के समूचे तत्र का पूजीवाद के हितो का साधन करने के वास्ते उपयोग कर सके और सामतो को जिन्हे पूजीपति अकर्मण्य और परजीवी मानते थे, उस सत्ता से वचित किया जा सके जिसका व निरकुश राजतत्रवाले देशो मे शासक वर्ग के सदस्य होने की हैसियत से उपभोग किया करते थे। जैसा कि इस पुस्तक के पहले भाग मे बताया जा चुका है, सत्ता प्राप्त करने के प्रयत्न तो सोलहवी शताब्दी म भी किये गये थे। धर्मसुधार आदोलन और जर्मनी मे कृपक युद्ध तत्वत इसी प्रकार के प्रयास थे। स्पेनी हुकूमत के खिलाफ़ नीदरलैंड की बगावत सबसे पहली सफल बूर्जुआ क्राति थी। इन दोनो ही मामलो मे निर्णायक प्रश्न था सत्ता का सामती भूस्वामियो से बूर्जुआ वर्ग को हस्तातरण और इसीके साथ-साथ भूतपूर्व सामतवादी समाज पर एक नयी सामाजिक व्यवस्था – पूजीवादी व्यवस्था – की विजय, अर्थात एक सामाजिक व्यवस्था से दूसरी अधिक प्रगतिशील सामाजिक व्यवस्था मे क्रातिकारी सक्रमण।

इस प्रसग मे यूरोप के और वस्तुत सारे ही ससार के इतिहास मे क्रा क्राति विशेषकर बहुत महत्व रखती है, जो सत्रहवी शताब्दी के मध्य मे इगलैड मे हुई थी। बूर्जुआ वर्ग की और अभिजात वर्ग के उसीके समान

हित रखनेवाले अशको की शक्ति मे वृद्धि और इसीके साथ-साथ कृषि तथा उद्योग मे सामती स्वरूपो के अतिम अवशेषो के उन्मूलन के परिणामस्वरूप सत्रहवी-अठारहवी सदियो मे इगलैड एक अग्रणी और प्रमुख विश्व शक्ति बन चुका था। उसके पास बेहद बडी सख्या मे औपनिवेशिक प्रदेश थे, जिनका अग्रेज पूजीपतियो व्यापारियो और उद्यमकर्ताओ के हितो मे, और अठारहवी सदी के आगमन के साथ अग्रेज कारखाना-स्वामियो के हितो मे शोषण किया जा रहा था। एक विश्वव्यापी परिघटना का रूप ग्रहण करने के पूर्व पूजीवादी समाज का इगलैड मे ही सर्वप्रथम उदय हुआ था। इसलिए इगलैड की बूर्जुआ क्राति का विश्व इतिहास के सपूर्ण क्रम पर बहुत ही महत्वपूर्ण प्रभाव पडा है और सोवियत मार्क्सवादी इतिहासज्ञ इसी घटना को आधुनिक इतिहास अर्थात पूजीवादी समाज के इतिहास के प्रारभ का द्योतक मानते है।

इगलैड की बूर्जुआ क्राति की पृष्ठभूमि

अग्रेज बूर्जुआ वर्ग जैसे-जैसे अधिक शक्तिशाली होता गया, वैसे-वैसे वह बादशाह की निरकुश सत्ता से अपने असतोष को और भी प्रखर रूपो मे व्यक्त करने लगा। इधर बादशाह और उसके वफादार समर्थक यह नहीं अनुभव कर पाये कि पूजीवादी अर्थव्यवस्था के सफल विकास और बूर्जुआ वर्ग के उदय के आगे सामतवाद का अत निश्चित था।

नये स्टूअर्ट राजवश के पहले बादशाहो – जेम्स प्रथम (१६०३-१६२५) और चार्ल्स प्रथम (१६२५-१६४९) ने पार्लियामेंट (ससद) के दबाव के बावजूद निरकुश शासको के नाते अपनी असीमित सत्ता को बनाये रखने का प्रयास किया।

इन बादशाहो की वित्तीय नीति का पार्लियामेट ने खासकर कडा प्रतिरोध किया। चौदहवी शताब्दी मे पारित एक कानून के अनुसार नये कर सिर्फ पार्लियामेंट की सहमति से ही लगाये जा सकते थे और पार्लियामेंट ने एकाधिक अवसरो पर नये करो का अनुमोदन करने से इन्कार किया। जेम्स प्रथम के पुत्र चार्ल्स प्रथम के शासनकाल मे ताज और पार्लियामेंट के बीच टकराव अपने चरम पर पहुच गया। १६२८ मे पार्लियामेंट ने बादशाह को एक अधिकार याचिका (पिटीशन आफ राइट) पेश की। मगर बादशाह ने उसके उत्तर मे अगले साल पार्लियामेट को भग कर दिया और फिर ग्यारह साल उसे समाहूत नही किया। उस समय चार्ल्स का परामर्शदाता स्ट्रैफोर्ड का अर्ल टामस वैटवर्थ था जिसने पार्लिया[illegible] करने और अपने शाही परमाधिकारो का उपयो[illegible] शुरू करने की सलाह दी। ऐसा सभव हो भी [illegible] की

यह पार्लियामट अपकीर्ति अधिनियम (एक्ट आफ अटडर) स्ट्रैफोड क अर्ल की भत्सना करन म सफल हो गयी और उस न्याय लिए प्राणदड दिया गया। कुछ ही समय बाद निरकुशता क एक और कार – महाधर्माध्यक्ष (आर्कबिशप) लार्ड का भी यह हश्र होना था। पार्लि मट न परमाधिकार न्यायालयो और बादशाह क जहाज कर लगान के अधि को खत्म कर दिया। उसन कराधान क नियत्रण क अपन अधिकार का से स्थापित किया और नवबर १६४१ म महान विरोध प्रस्ताव (रिमोस्ट्रैस) पारित कर दिया जिसम बादशाह क अवैध कृत्यो का सूचा किया गया था और यह माग की गयी थी कि राज्य म सभी महत्वपूर्ण पर ऐस ही लोग आसीन होन चाहिए कि "जिन पर भविष्य म पार्लिया विश्वास कर सके ।

इस पर नाराज होकर बादशाह स्वय पार्लियामट म पहुचा और उ विरोध पक्ष के नताओ की गिरफ्तारी का हुक्म दिया, लकिन व पहल भागकर सिटी (लदन का वह भाग जहा प्रमुख व्यापारिक सस्थान अ बैक अवस्थित थ और जिनक स्वामी पूजीपति विरोध पक्ष के कट्टर समर्थ थे) मे जा छिप थे। शहर मे बलवा मच गया। विरोध पक्ष के नताओ बचाव करने के लिए जहाज घाटो स जहाजियो के बडे-बडे दल आ गये जनवरी १६४२ मे बादशाह लदन से उत्तर पश्चिम चला गया और अ वफादार सहायको को इकट्ठा करन लगा। अगस्त म उसन पार्लियामट खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी।

क्राति का आरभ

आर्थिक दृष्टि से अनुन्नत उत्तर-पश्चिमी इलाको के सामती भूस्वा बादशाह के पक्ष मे आ गये। देश के अधिक विकसित दक्षिण पूर्वी प्रदेश और लदन ने बूर्जुआज़ी और उसीके समान हित रखनेवाले अभिजात व के एक भाग ने पार्लियामेंट का समर्थन किया। महान विद्रोह के बिलकु आरभ से ही नौसेना पार्लियामेंट के पक्ष मे थी और यह क्रातिकारी इगलै का यूरोपीय महाद्वीप के निरकुश राजतत्रो के हस्तक्षेप से बचाव करने सहायक सिद्ध हुआ। आग्ल चर्च न बादशाह का समर्थन किया, जब कि प्यूरिटन (प्रोटेस्टेट) लोग पार्लियामेंट के कट्टर समर्थक थे। यही नही उस काल के विभिन्न दलो के नाम भी मत की विभिन्न धाराओं के नामो से ही निकले

पार्लियामेंट म बूर्जुओ की पार्टी प्रेस्बीटेरियनो की पार्टी जा। की परिषद्

शासित सयुक्त काल्विनपथी चर्च की पक्षधर थी। छोटे सामतो और अल्प पन्न बूर्जुआजी के पक्षधर इडीपडट (स्वतत्र) कहलात थे और प्रत्येक चर्च के नुगामिया की धार्मिक स्वतत्रता का पक्ष लते थे।

युद्ध के शुरू होने के समय बादशाह का पलडा भारी था। उसके पक्ष लडनवाल भूस्वामी पेशेवर सैनिक थे और उनका रिसाला अनुशासनबद्ध या अनुभवप्राप्त था। इसके विपरीत पालियामट द्वारा जुटायी गयी सनाए सगठित नही थी और उनके पास हथियार भी कम और खराब थे। इसके लावा पार्लियामटरी सेना क सनानायक अधिकाशत बडे सामतो क वग थे, जो लगातार यही सोचते रहते थे कि बादशाह के साथ जल्दी ही मझौता हो जायेगा और इसलिए बिना किसी खास उत्साह क लडाई चला हे थे। पालियामट म बहुमत रखनवाले प्रस्बीटरियनो को भी इसी तरह समझौते की आशा थी।

पार्लियामट की ढुलमुल नीति और उसकी सेना की असफलताओ ने ग्रेज समाज के आमूल परिवर्तनवादी अशकों म असतोष पैदा किया। जल्दी उन्होंने आपस म एकता स्थापित कर ली और इडीपडटो का समर्थन रन लग। इडीपेडेटो का नेता ओलिवर क्रामवल (१५९९ १६५८) नामक ामान्य हैसियत का जमीदार था। क्रामवेल ने एक अश्वारोही सेना खडी , जिसमे काल्विनपथ के कट्टर और जोशीले अनुयाइया – इडीपेडटो – क ाथ-साथ किसान, दस्तकार और निम्न बूर्जुआजी के विभिन्न प्रतिनिधि ी थे। क्रामवेल की अश्वारोही सेना म जो लौह अनुशासन था (उसके निक आयरनसाइड, अर्थात लौहपुरुष कहलाते थ) उसकी बदौलत उसने ुलाई, १६४४ म बादशाह की सेना पर मार्स्टन मूर म पहली विजय प्राप्त र ली। इसक बाद क्रामवेल को पार्लियामेट ने सेना को समूचे तौर पर ुधारने की अनुमति दे दी और उसकी न्यू माडेल आर्मी – नवादर्श सेना – ने १६४५ म नसबी की लडाई मे बादशाह की सेना पर निर्णायक प्रहार किया। इस लडाई म बडी सख्या म युद्धबदी बनाये गये, राजतत्रवादियो का सारा तोपखाना और उनके दूसरे हथियारो का काफी बडा हिस्सा और बादशाह का सारा राजनयिक पत्रव्यवहार पार्लियामेटरी सेना के कब्जे मे आ गया। इस पत्रव्यवहार से पता चला कि बादशाह जहा पार्लियामट के साथ युद्धविराम के लिए वार्ता चला रहा था वहा साथ ही-साथ वह यूरोपीय सरकारो से त्रव्यवहार करके सहायता भी माग रहा था और अपने मित्रो को लिखे त्रो म उसने बताया था कि अगर विजय प्राप्त हो गयी, तो वह विद्रोहियो को किस तरह के निर्मम दड देगा। इन पत्रों को प्रकाशित कर दिया गया और उन्होंने सभी मे सख्त नाराजगी पैदा की। इसके परिणामस्वरूप बादशाह की प्रतिष्ठा को गभीर हानि पहुची।

नेसबी की लड़ाई के बाद चार्ल्स की हार हुई और मात खानी पड़ी। मार्च १६४६ तक अधिकांश राजतंत्रवादी गढ़ों का पतन हो चुका था और मई तथा बादशाह भागकर स्काटलैंड जा चुके थे। लेकिन स्काटों ने, जिन्हें अंग्रेज सेना द्वारा शाही सेना को दी गयी सहायता के लिए चार लाख पौंड मिले थे, बादशाह को जनवरी १६४७ में अंग्रेजों के हवाले कर दिया।

युद्ध चल ही रहा था कि पार्लियामेंट ने सामंती प्रथाओं के उन्मूलन की ओर लक्षित कई सुधार लागू कर दिये थे। शाही और चर्च की जमीन के कुछ भाग को और बादशाह के समर्थकों की जमीनों को जब्त करके बेच दिया गया। १६४६ में मनसबी जागीरों के उन्मूलन के भी बड़े दूरगामी परिणाम निकले। इन जागीरों से संबधित सभी दायित्वों को खत्म कर दिया गया और सामंतों की जमीन अब भद्रजनों–सभ्रांतों (जैंट्री) –की संपत्ति बन गयी। लेकिन जहां भद्रजनों की संपत्ति को सामंती दायित्वों के सभी अवशेषों से मुक्त कर दिया गया, वहां किसानों की जमीन पुरानी शर्तों के ही अधीन बनी रही–किसानों को अब भी भांति भांति के कर और श्रम सेवाएं अर्पित करनी होती थी और इस प्रकार उन्हें क्रांति से कुछ भी नही हासिल हुआ। महान विद्रोह असल में ग्राम्य भद्रजन के साथ सहबंध से जुड़े हुए बूर्जुआ वर्ग का राजतंत्र, बड़े सामंतों और संस्थापित चर्च के खिलाफ संघर्ष ही था।

दूसरा गृहयुद्ध

बादशाह के बंदी रूप में सेना के सुपुर्द कर दिये जाने के बाद पार्लियामेंट में प्रेस्बीटेरियनों ने सोचा कि क्रांति पूरी हो गयी है और वे बादशाह के साथ सुलह की बातचीत करने के लिए तैयार हो गये। लेकिन आम जनता का क्रांतिकारी ओज किसी भी प्रकार शांत नही हुआ था, जिसे पांच वर्ष के युद्ध से कुछ भी नही प्राप्त हुआ था। सेना के सामान्य सैनिकों ने लड़ाई जारी रखना ही स्वीकार किया और लेवलर्स (समतावादी) नामक एक नया दल अस्तित्व में आ गया, जिसका नेता जान लिल्बर्न (१६१८–१६५७) था। इस दल ने सार्विक मताधिकार, राजतंत्र के उन्मूलन और भूस्वामियों की बाड़बंद जमीनों के किसानों को लौटाये जाने की मांग की। राजनीतिक सत्ता जल्दी ही सेना के हाथों में आ गयी और पार्लियामेंट ने युद्ध के समाप्त हो जाने के बहाने सेना को भंग करने का निश्चय किया। सेना को भंग करने की आज्ञप्ति ने उसमें नाराजी पैदा कर दी और सेना की रेजीमेंटों ने अपने प्रतिनिधि–एजिटेटर (आंदोलक)–चुनने शुरू कर दिये, जिन्होंने ग्रांडों (इंडीपेंडटों के सैनिक नेता अथवा अफसर आम सैनिकों में ग्रांड कहलाते थे) से निश्चयात्मक कदम उठाने की मांग की। सैनिकों को वश में रखने

क्रामवेल दीर्घकालीन पार्लियामेंट को भंग कर रहा है

के लिए क्रामवेल ने सेना महापरिषद (जनरल आर्मी काउंसिल) की स्थापना कर दी, जिसने सभी सैनिकों को अफसरों की निगरानी में रख दिया। कुछ ही बाद सेना ने लंदन पर कब्जा कर लिया और सारा देश वस्तुतः उसीके नियंत्रण में आ गया।

लेकिन अब सेना में वर्ग संघर्ष फूट पड़ा। ग्रांडों (अफसरों) और समतावादियों में यह विवाद शुरू हो गया कि राज्य का भावी राजनीतिक ढांचा किस प्रकार का हो। अफसर सार्विक मताधिकार से डरते थे और कहते थे कि इससे गरीब लोग सत्ता पर अधिकार और निजी संपत्ति का खात्मा कर सकते हैं।

इन विरोधी हितों के नतीजे के तौर पर जल्दी ही समतावादियों और आम सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। क्रामवेल ने विद्रोह को कुचल दिया और सेना परिषद को भंग करके सिर्फ अफसरों की परिषद को ही बना रहने दिया।

सेना में इस संघर्ष का लाभ उठाते हुए अब प्रतिक्रांतिकारी तत्वों ने प्रमुखता प्राप्त कर ली। पार्लियामेंट में प्रेस्बीटेरियनों का राजतंत्रवादियों से समझौता हो गया और बादशाह कैद से भागकर स्काट सामंतों की शरण में पहुंचने में सफल हो गया, जिन्होंने बीस हजार सैनिकों की सेना जुटाकर क्रामवेल की सेना से लड़ने के लिए इंगलैंड पर चढ़ाई कर दी।

स्थिति की गभीरता को समझकर ग्राडा और समतावादियो ने अत म फिर मन कर लिया और क्रामवल की सना स्काटो का पराजित करन म सफल हो गयी। बादशाह को गिरफ्तार कर लिया गया और उसक आदश म हुए सार रक्तपात और उसक द्वारा ईश्वर क काय तथा अग्रज जनता को पहुची क्षति क लिए उस पर मुकदमा चलाया गया। सना न प्रस्बीटेरियनो को पालियामट स निकाल दिया और उसम बच गए इडीपडटो न बादशाह को धार राजद्रोह क लिए प्राणदड दिया। ३० जनवरी, १६४९ को बादशाह का सिर काट दिया गया और इगलैड सम्राट या लाड सभा (हाउस आफ लाडस) रहित गणराज्य घोषित कर दिया गया।

१६५३ म क्रामवल न लबी पार्लियामट क शष भाग को भी भग कर दिया और १६५८ म उस गणराज्य का लार्ड प्रोटेक्टर (परम सरक्षक) घोषित कर दिया गया और इस प्रकार वह इगलैड का एकमात्र शासक बन गया। क्रामवल न समतावादी और राजतत्रवादी, दोनो ही विरोधी पक्षो को बेरहमी क साथ कुचला। उसन आयरलैड और स्काटलैड म विद्रोह को दबा दिया और इन दशो को सदा सदा क लिए इगलैड का अग घोषित कर दिया (१६५८)। क्रामवल न विदश नीति क क्षत्र म भी अनक सफलताए प्राप्त की। इगलैड क मुख्य व्यापारिक प्रतिद्वद्वी हालैड को बुरी तरह पराजित करके और उसे नौपरिवहन अधिनियम स्वीकार करन क लिए मजबूर करके, जो १६५१ म तैयार किया गया था और जिसक अनुसार इगलैड मे बाहर जानेवाला सामान देश के तटो पर सिर्फ अग्रेजी जहाजो म या सबद्ध सामान का उत्पादन करनेवाले दश के जहाजो म ही लाया जा सकता था, उसन डच व्यापार को विनाशक चोट पहुचायी। क्रामवल न स्पन से जमाइका द्वीप, जो उस समय दास व्यापार का कद्र था, और स्पेनी नीदरलैड मे डकर्क को छीन लिया।

क्रामवेल का १६५८ मे देहात हुआ जब वह अपनी सत्ता के चरम पर था। लेकिन बूर्जुआ वर्ग ने जो देश का नया शासक वर्ग था, क्राति की नयी लहर और उसम जनसाधारण के शामिल होने की आशका से घबराकर चार्ल्स द्वितीय (१६६०-१६८५) और उसके बाद जेम्स द्वितीय (१६८५-१६८८) क रूप म राजतत्र की पुन स्थापना कर दी। जब इन अतिम स्टूअर्ट राजाओ ने अपन पूर्ववर्तियो की नीति को फिर से प्रचलित करने की कोशिश की तो बूर्जुआजी ने गौरवमय क्राति (ग्लोरियस रिवोल्यूशन) सपन्न करके इस राजवश को ही सदा के लिए भगा दिया। गौरवमय क्राति वह रक्तहीन क्राति थी जिसके द्वारा स्टूअर्टो के निकट सबधी ओरेज के प्रिस विलियम और उसकी पत्नी मरी को सिहासन पर बैठने के लिए आमत्रित किया गया था। यह घटना ससद की अतिम विजय की परिचायक थी, जो स्टूअर्ट निर

कुशता की बनिस्वत देश मे विद्यमान वर्ग हितो के सतुलन को अधिक सही तौर पर प्रतिबिंबित करती थी।

इगलैड की क्राति न सामतवाद के अतिम अवशेषो को मिटा दिया और उसके परिणामस्वरूप वहा एक नये प्रकार के राजतत्र का उदय हुआ जिसकी शक्तिया पार्लियामट द्वारा सीमित थी। ससदीय प्रणाली का सार था ससदीय चुनावो मे मतो का बहुलाश प्राप्त करनेवाली पार्टी द्वारा देश का शासित किया जाना। मत्री बहुसख्यक पार्टी के नताओ मे से नियुक्त किये जाते थे और सरकार ससद के प्रति उत्तरदायी थी। इसका यह अर्थ था कि अगर सरकार को पार्लियामेट का समर्थन न प्राप्त हो तो उसे सत्ता त्यागनी पडती थी। लेकिन पार्लियामेट मे शासक दल जनता के वास्तविक हितो का प्रतिनिधित्व नही करते थे, क्योकि आबादी के एक बहुत ही छोटे से हिस्से – ऊचे कुलो या पयाप्त आर्थिक साधनसपन्न लोगो – को ही मताधिकार प्राप्त था।

एक छोटे से देश से, जिसकी आबादी पद्रहवी शताब्दी म ३५-४० लाख से अधिक नही थी और जिसका न आयरलैड पर प्रभुत्व था न स्काटलैड पर ही, इगलैड अब एक प्रमुख यूरोपीय शक्ति बन गया था, जिसका सिर्फ समस्त ब्रिटिश द्वीपसमूह पर ही नही बल्कि उत्तरी अमरीका के विराट प्रदेशो और पूरे भारत पर भी शासन था।

सोलहवी सदी मे इगलैड ने स्पेन पर, सत्रहवी सदी मे डचो पर और अठारहवी शताब्दी म फ्रास पर विजये प्राप्त की। इगलैड की शक्ति मे यह वृद्धि देश के पूजीवादी विकास का एक प्रत्यक्ष परिणाम था।

इगलैड की क्राति पहली बूर्जुआ क्राति थी जिसके परिणामो ने अपने को देश की सीमाओ के बाहर भी दूर दूर तक अनुभूत करवाया और जिसे इतिहास का एक मोडबिंदु सिद्ध होना था। लेकिन शेष यूरोप म पूजीवादी अर्थव्यवस्था और बूर्जुआ शासन का प्रसार होने मे अभी बहुत देर लगनेवाली थी।

फ्रास का निरकुशतत्र

फ्रास मे, जहा पूजीवादी तत्वो का आविर्भाव पद्रहवी शताब्दी मे ही हो चुका था और सोलहवी सदी मे विनिर्माणशालाए भी पैदा होने लगी थी बूर्जुआ क्राति डेढ सौ साल बाद कही १७८९ मे जाकर ही हो पायी। इगलैड की क्राति फ्रास म निरकुश राजतत्र के चरमोत्कर्ष के समय अर्थात लुई चौदहवे के शासनकाल म हुई थी जिसे उसके सभी चाटुकार "सूर्यसम सम्राट कहा करते थे।

लुई चौदहवा १६४३ मे राजसिहासन पर आसीन हुआ जब वह केवल पाच वर्ष का ही था। उसने शासन की बागडोर १६६१ म अपने हाथो

म ल ली और आधी मदी म अधिक (१६६१-१७१५) अबाध राज किया। युवा सम्राट कहा करता था मै स्वय अपना मत्री हू," और वस्तुत वह सर्वसत्तावान शासक था जिसकी इच्छा ही उसकी सारी प्रजा की, उसके सारे राज्य की नियति को निर्धारित किया करती थी।

बहुत लबे समय तक इस विख्यात कथन को लुई चौदहवे का ही माना जाता रहा था कि मै ही राज्य हू," और यद्यपि आज इस कथन का तथ्य की अपेक्षा जनश्रुति ही अधिक माना जाता है, फिर भी इसका भाव फ्रास की तत्कालीन अवस्था पर बहुत ही अच्छी तरह से प्रकाश डालता है। बादशाह और उसके अतरग दरबारियो के हाथो म इतनी सत्ता थी और वे इतने ऐशो आराम मे रहते थे कि उनके लिए इस विशाल राज्य का आरभ और अत शाही दरबार के शानदार कक्षो और भवनो तक ही सीमित था।

लुई चौदहवे का लबा राज्यकाल 'महान युग" या 'महान लुई का युग' कहलाता था। उसके शासनकाल म वर्साई म एक नये राजमहल का निर्माण किया गया जिसकी भव्यता वैभव और ठाठ के आगे यूरोप के अन्य सभी राजमहल फीके पड गये थे। दरबार के कई सामतो ने बादशाह का अनुकरण किया और उन्होने अपने लिए शानदार अट्टालिकाओ और गढियो का निर्माण करवाया। लुई चौदहवे के शासनकाल म फ्रास ने स्पेन, हालैड इगलैड स्वीडन और आस्ट्रिया के खिलाफ अविराम युद्ध किये जिनमे फ्रासीसी सेनाओ ने कई शानदार जीते हासिल की और फ्रासीसी सेनानायको ने बडी ख्याति अर्जित की। फ्रास सारी दुनिया को यूरोप का सबसे शक्तिशाली राज्य लगता था।

लेकिन जैसे-जैसे इस 'महान युग" के वर्ष और दशक बीतते गये, वैसे वैसे सामान्य लोग, किसान और दस्तकार (सक्षेप मे वे लोग जिनके श्रम के फल सामतो पादरीवर्ग सेना, दरबार और स्वय बादशाह के पेट को भरते और तन को ढकते थे) अधिकाधिक अनुभव करते गये कि उनकी जिदगी लगातार बदतर होती जा रही है देश कगाल होता चला जा रहा है और हर दिन के साथ उन पर नये नये भार आते जा रहे है। राज्य के विभिन्न भागो म जन विद्रोह फूट पडे और उन्हे बडी कठिनाई के साथ ही कुचला जा सका। ये विद्रोह ही लुई महान के प्रति फ्रासीसी जनता के वास्तविक दृष्टिकोण के परिचायक थे। जब १७१५ म बादशाह की मृत्यु हुई, तो इस डर से कि कही कोई बडा विद्रोह न फूट पडे उसकी अत्येष्टि भी छिपाकर ही करनी पडी थी।

लुई पद्रहवे (१७१५ १७७४) के शासनकाल म इस सामतवादी निरकुश समाज की हालत और भी ज्यादा सगीन हो गयी। शासक अभिजात वर्ग और विशेषकर उसके उच्च सोपानो—बादशाह और उसके दरबारियो ने

अपने नाचरग, शिकार और खेल तमाशो की मसरूफियत मे युद्धक्लात देश की वहाली को, इस बात को कि उनका अधाधुध खर्च राजकोष की सामर्थ्य के वहुत वाहर था भूखेहाल किमानो की तकलीफो और वूर्जुआ वर्ग की वढती वेदारी को अनदखा किया। राजदरवार और छोटे-वेडे अभिजातो की फिजूलखर्ची खेल-तमाशो और रागरग की कोई सीमा ही न थी। भविष्य क बारे म कोई मोचता भी न था। कहा जाता है कि स्वय लुई पद्रहव ने कहा था "हमारे बाद चाहे कयामत ही आ जाय!" बादशाह उसके दरवारी और अधिकाश अभिजात इसी मानवद्वेपी सिद्धात के अनुसार रहत थे और यही मानत थ कि उनक लिए तो इस स्वर्णयुग का अत कभी होगा नही।

इस परजीवी अभिजात वर्ग की आय का एकमात्र स्रोत था कृपक समुदाय का शोपण और वूर्जुआजी पर लगाये कर। पर सर्वग्राही लूट न कृपक समुदाय को दरिद्र वना दिया था और फ्रासीसी कृपि म मार्विक सकट पैदा कर दिया था। अठारहवी शताब्दी मे कृपक समुदाय के मामती शोपण को तीव्र करन के लिए अपनाये गये आत्यतिक उपायो का मतलब सिर्फ एक ही था – वह यह कि अभिजात लोग स्वय उसी डाल को काट रहे थे कि जिस पर वे वैठे हुए थ।

व्यापक असतोप का ज्वार चढता ही गया। किसान जिस तरह रह रहे थ उस तरह रहने के व अनिच्छुक ही नही थे बल्कि उस तरह रहना सभव भी नही था। पूरी एक सदी के दौरान विशेपकर उसक मध्य और उत्तरार्ध मे प्रवल कृपक विद्रोहो न फ्रासीसी राजतत्र के ढाचे का हिला दिया था। शहरो मे दारिद्र्यग्रस्त मेहनतकश भी कई बार सडको पर निकल आये थे और उन्होन अन्नागारो और गोदामो पर हमले किये थे। वूर्जुआ वग जो इस समय तक मवसे शिक्षित और आथिक दृष्टि से सबसे शक्तिशाली वर्ग वन चुका था, अव न तो अपन अधिकारो के अभाव को ही और न राजदरवार तथा अभिजातो की मनमानी को और बरदाश्त करन के लिए तैयार था। सभी शोपित तथा अधिकारहीन वर्ग सपूर्ण तृतीय जनवर्ग (साधारण लोग) विशेपाधिकारसपन्न अल्पसख्या का विरोध करन के लिए एक हो गये।

प्रबोध युग

वूर्जुआ वर्ग और जनसाधारण म व्याप्त असतोप को अठारहवी सदी के प्रवोध युग की दाशनिक, राजनीतिक और अर्थशास्त्रीय कृतियो तथा ललित साहित्य म सजीव अभिव्यक्ति मिली। यह युग फ्रासीसी सस्कृति का वास्तविक स्वर्णयुग था।

प्रबोध युग के लेखक किसी एक ही विचारधारात्मक रुझान के प्रतिनिधि नही थे बल्कि उनमे आपस मे बहुत-बहुत भिन्नता थी। उनमे से सबसे पहलो मे एक जान मल्ये (१६६४-१७२६) नामक साधारण देहाती पादरी था जो अपनी जिंदगी भर अज्ञात ही रहा। उसकी मृत्यु के कई साल बाद जाकर ही उसकी पाडुलिपि (जिसे उसके "इच्छापत्र" के रूप मे प्रकाशित किया गया था) का छिप छिप हाथ दर हाथ सचरण शुरू हो पाया था। इस कृति मे उसने भौतिकवादी विचार व्यक्त किये थे और चर्च तथा सामती उत्पीडन की आलोचना की थी।

मेल्ये के विपरीत पुरानी पीढी के प्रबोधको – मोतस्क्यू (१६८६-१७५५) और वोल्तेयर (१६९४-१७७८) – ने अपने जीवनकाल मे ही बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। मोतस्क्यू ने अपनी राजनीतिक तथा दार्शनिक कृतियो – 'फारसी पत्र और विधिसार" मे स्वेच्छाचार और निरकुश शासन की प्रखर तथा गहन आलोचना की। उसने स्वेच्छाचारी फ्रास के अन्यायो के मुकाबले मे स्वतत्रता मुख्यतया राजनीतिक स्वतत्रता के आदर्श पेश किये। मोतेस्क्यू को उचित ही बूर्जुआ उदारतावाद का जनक माना जाता है।

अति तीव्र और विलक्षण बुद्धि के धनी वोल्तेयर ने त्रासदियो, काव्यो, ऐतिहासिक कृतियो दार्शनिक उपन्यासो, व्यग्य कविताओ, राजनीतिक निबधो और लेखो की रचना की। वह चर्च का निर्भीक और कट्टर दुश्मन था और पादरी वाद विरोध का समर्थक था। वह सामती समाज की नैतिकता और जडसूत्रो की और निरकुशता मे अतर्निहित अव्यवस्था तथा बुराई की खिल्ली उडाता था। किंतु सुधार के अपने रचनात्मक कार्यक्रम मे और इसी तरह आम लोगो के प्रति अपने रवैये मे वोल्तेयर सयमित और नरमपथी था। फिर भी प्रबोध मे उसकी भूमिका बहुत बडी थी – उसके राजनीतिक विचारो के कारण इतनी नही जितनी कि अन्वेषण सशय और मुक्तचितन की उस भावना के कारण जिससे उसने नयी पीढी को प्रेरित किया और उन्हे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप मे क्रातिकारी सघर्ष का रास्ता दिखाया।

डाक्टर दे ला मेत्री (१७०९-१७५१), जिसकी पुस्तक "मानव मशीन' ने अपने समय मे जबरदस्त सनसनी मचा दी थी, देनी दिदेरो (१७१३ १७८४), जो सुप्रसिद्ध बहुखडी विश्वकोश" तथा अनेक अन्य दार्शनिक व राजनीतिक कृतियो का मुख्य सपादक और प्रणेता था, हल्वेतियस (१७१५ १७७१), जिसने अपनी पुस्तक "बुद्धि के बारे मे' मे धार्मिक विश्वास और चर्च तथा स्वेच्छाचार की आलोचना की और द'होलबाख (१७२३ १७८९) जो सुख्यात प्रकृति की व्यवस्था" का लेखक था, आदि प्रबोध आदोलन के कुछ प्रमुख दार्शनिक थे। इन लोगो के भौतिकवाद मे अभी काफी असगतिया थी और वह अभी बिलकुल यात्रिक स्वरूप का ही था। तथापि उन्होने

रूढिवाद और अज्ञान के विरुद्ध सघर्ष करके, सस्थापित धर्म और मध्ययुगीन सिद्धातो की अवज्ञा करते हुए नये प्रगतिशील विचारो का प्रचार करके उस काल के सास्कृतिक विकास मे महत्वपूर्ण और सकारात्मक भूमिका अदा की।

प्रकृतितत्रवादियो (फ़िजियोक्रैट्स) के नाम से प्रसिद्धि पानेवाले अर्थशास्त्रियो केने, त्यूर्गो और द्यूपो दे नेमूर ने आर्थिक क्षेत्र मे उपक्रम और उद्यम की अबाध स्वतत्रता का, अर्थात बूर्जुआज़ी के हितो के साथ मेल खानेवाले विचारो का पक्षपोषण किया।

इन लेखको और प्रबोधको के ही साथ साथ जिनकी रचनाए उस समय के युवा और क्रातिकारी बूर्जुआ वर्ग की विचारधारा को अत्यत स्पष्टतापूर्वक प्रतिबिबित करती थी, कई अन्य लेखक और विचारक भी थे, जिनकी कृतियो ने जनसाधारण की आशाओ-आकाक्षाओ और सपनो को मुखरित किया। आत्मशिक्षित लेखक जा जाक रूसो (१७१२ १७७८) ने नयी पीढी पर बहुत ही प्रबल प्रभाव डाला, लेकिन फिर भी उसे अपनी सारी ज़िदगी बेघर, फटेहाल घुमक्कड की तरह ही गुज़ारनी पडी। अतर्विरोधो से परिपूर्ण होने के बावजूद रूसो के उपन्यासो कविताओ और दार्शनिक तथा राजनीतिक कृतियो ने अपने समकालीनो पर क्रातिकारी प्रभाव डाला। उनकी बुनियाद मे दो मुख्य विचार थे, जिन्होने उन्हे अत्यत प्रबल आकर्षक शक्ति बना दिया – समानता का विचार जो रूसो के नज़रिये मे राजनीतिक ही नही, बल्कि सामाजिक क्षेत्र से भी सबध रखता था, और जनसत्ता का विचार। उसके सपनो का आदर्श गणराज्य जिसमे समता का साम्राज्य है – निर्धनता तथा धनाढ्यता दोनो से समान रूप से अपरिचित छोटे उत्पादको एव सपत्तिधारियो का समतावादी गणराज्य निस्सदेह अयथार्थ था, किंतु वह उस कृषक समुदाय की चिरसचित आकाक्षाओ को प्रतिबिबित करता था जिसकी ज़मीनो को सामतो ने उससे छीन लिया था वह मेहनतकशो के एक दूसरे ही तथा कही अधिक न्यायपूर्ण समाज के सपनो को व्यक्त करता था, जिसका स्वय उन्हे भी अभी अस्पष्ट अनुमान ही था।

तत्कालीन समाज के निम्नतम सस्तरा की अस्पष्ट सामाजिक आकाक्षाओ को मोरेल्ली, जो 'प्रकृति का विधान का लेखक था और पादरी माब्ली जो कई राजनीतिक कृतियो का रचयिता था जैसे यूटोपियाई कम्युनिस्टो की कृतियो मे भी अभिव्यक्ति मिली। माब्ली और मोरेल्ली दोनो ने निजी सपत्ति पर आधारित सपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की कटु आलोचना की। लेकिन यह आदर्श "नैसर्गिक" कम्युनिस्ट व्यवस्था – मानवजाति का स्वर्णयुग – उनकी निगाह मे प्रबोध की प्रगति से अभिन्न रूप मे जुडी हुई थी।

अभिव्यक्ति मे इस विभिन्नता के बावजूद प्रबोध आदोलन के प्रवर्तको मे एक स्पष्ट समानता थी और वह थी निरकुशता के युग के कालातीत हो

चुके सामतवादी समाज की सभी सामाजिक सस्थाओ, मतो और विधानो की निर्मम आलोचना करने का साहसपूर्ण दृढ सकल्प। इस वैचारिक प्रहार को जनसाधारण के सीधे क्रातिकारी आक्रमण का पूर्वगामी होना था।

प्रबोध आन्दोलन ने अठारहवी सदी मे फ्रास मे बहुत ही स्पष्ट और सशक्त भूमिका अदा की। लेकिन वह विशुद्ध फ्रासीसी परिघटना ही नही था – वह यूरोप भर मे फैल चुका था और जर्मनी, रूस, इटली और स्पेन, सक्षेप मे वे सभी देश जिनमे प्रगति के रास्ते मे आड़े आनेवाली सामती निरकुशता के विरुद्ध सघर्ष चल रहा था उसकी परिधि मे आ गये थे।

पूर्वी यूरोप के राजतन्त्र

जहा फ्रास मे पूजीवादी विकास कम से कम हो तो रहा था – चाहे इगलैंड की तुलना मे कही धीमी गति से ही सही, वहा पूर्वी यूरोप मे उत्पादन के सामती स्वरूप और सामती राज्य अब भी गहरी जड जमाये हुए थे और फ्रासीसी क्राति के समय भी क्रातिकारी विचार वहा कोई बहुत प्रभाव नही डाल पाये थे। यूरोप के प्रगतिशील देशो मे होनेवाले पूजीवादी विकास ने यहा – इगलैंड के विपरीत – सामती प्रतिक्रिया की लहर को ही जन्म दिया। यूरोपीय महाद्वीप के उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पूर्व मे दो बडे राज्य – प्रशा और आस्ट्रिया – पैदा हो गये जिनकी अर्थव्यवस्थाए ज़मीन से आबद्ध किसानो की श्रम सेवा पर आश्रित अभिजातीय कृषि उद्यम पर आधारित थी। इन अवस्थाओ मे यहा सामती शोषण के प्राचीनतम स्वरूपो का प्रत्यावर्तन हुआ जिसका कारण यह था कि ऐल्ब नदी के पूर्व मे स्थित यूरोपीय देश पश्चिमी यूरोप की मडियो के लिए कृषिजन्य उत्पादो के स्रोत बन गये थे, जहा पूजीवाद ने इस समय तक जड जमाना शुरू कर दिया था। प्रशियाई पोलिश और आस्ट्रियाई ज़मीदारो ने किसानो की अनिवार्य श्रम सेवाओ का उपयोग करते हुए और उन्हे उनकी सभी व्यक्तिगत स्वतत्रताओ से वचित करते हुए अपनी जमीदारियो के साथ सदा सदा के लिए आबद्ध करके किसानो को उनकी पुरानी जोतो से बाहर खदेड दिया और उनकी जमीनो को अपनी निजी काश्त मे ले लिया। ये जमीदार अपनी उपज को यूरोप की मडियो मे थोक बेच बेचकर अमीर हो गये थे और इस तरह उन्होने समाज के विशेषाधिकारसपन्न अशको की हैसियत से अपनी स्थिति को मजबूत कर लिया था। प्रशा और आस्ट्रिया पूर्वी यूरोप मे सामतवाद तथा प्रतिक्रिया के गढ थे और लगातार आक्रामक युद्ध करते रहते थे। इसके लिए वे अपनी सेनाओ को लगातार बढाते रहते थे, जो अभिजातवर्ग के सदस्यो (प्रशा मे युकरो – धनी जमीदारो) की कमान मे होती थी जिनका पालन-पोषण पूर्वी यूरोप के जनगण के

खिलाफ सदियो स चली आ रही लडाइयो के वातावरण म हुआ था। इन जनगण म मे कुछ को उन्हाने दवाने और घुटन टेकने के लिए विवश करने म सफलता प्राप्त कर ली थी। छोट छोटे जर्मन रजवाडो की कीमत पर अपन क्षेत्रो का प्रसार करत हुए प्रशियाई और आस्ट्रियाई हिता म जल्दी ही टकराव हो गया, क्योकि दोनो ही जर्मनी को अपन-अपने नायकत्व म एकीकृत करन क लिए प्रयत्नशील थे। इसम दोना म से किसी को भी कामयावी नही मिली और न ही उन्नीसवी शताब्दी तक इस दिशा म कोई और प्रयत्न किय भी गय।

लेकिन इस प्रसग म पोलेड का इतिहास एक विशेष स्थिति रखता है। प्रशा की ही भाति यहा भी किसानो की वेगार पर आधारित कृषि की उन्नति हुई थी और जिन थोडे स नगरो न औद्योगिक कद्रो के रूप मे विकास किया भी था, उनका कोई खास महत्व नही था। इसक अलावा नगरवासी भी अपने आर्थिक क्रियाकलाप मे विद्यमान कृषि प्रणाली पर ही निर्भर करते थे और राजनीतिक तथा आर्थिक, दानो ही कारणो से पोलिश सामतो तथा प्रतिक्रियावादी सामती व्यवस्था का समर्थन करते थ। पोलिश सामतो की अवनापूण राजनीतिक स्वतत्रता का मतलव यही था कि पोलैड औपचारिक रूप म ही राजतत्र था, जब कि व्यवहार म प्रत्येक वडी जागीर का वस्तुत स्वतत्र अस्तित्व था और दश राजतत्र की बनिस्वत गणराज्य जैसा अधिक था। राज्य क सभी मामलो का निर्णय सेयमो (सामता क प्रतिनिधियो द्वारा निवाचित परिपदा) मे हुआ करता था जब कि सभी पोलिश सामतो को सेयमो के निर्णयो को अस्वीकार करन का और विद्यमान व्यवस्था के विरुद्ध सशस्त्र वल का उपयोग तक करने का अधिकार प्राप्त था। इन अवस्थाओ म राज्य अपनी एकता को कायम रखन की आशा नही कर सकता था और अठारहवी शताब्दी के अत मे उसका अस्तित्व समाप्त भी हो गया — उसे आस्ट्रिया, प्रशा और रूस ने आपस मे वाट लिया।

दूसरा अध्याय

रूस का निरकुशतत्र

सत्रहवीं शताब्दी की रूसी अर्थव्यवस्था। आतरिक व्यापार का विकास

सत्रहवी सदी का रूस सामतवादी राज्य ही था। लेकिन फिर भी उसकी अर्थव्यवस्था मे कुछ नये लक्षण प्रकट होने लगे थे – नयी ज़मीनो को काश्त मे लाया जा रहा था, दोन के इलाके मे दक्षिणी स्तेपियो को धीरे धीरे आवाद किया जा रहा था रूसी किसान वश्कीरिया की स्तेपियो म प्रवेश कर रहे थे और उत्तर के किसान उराल के पार साइबेरिया म भी कृषि करने लग थे। जैसे-जैसे मध्यवर्ती प्रातो म भूदासत्व का बोझ बढता गया, वैसे वैसे सीमातवर्ती प्रदेशो की तरफ किसानो के प्रव्रजन मे भी तेजी आती गयी।

इसी के साथ साथ नगर तथा औद्योगिक प्रदेश भी विकास कर रहे थे। उत्तर मे नमक के खनन को बढाया जा रहा था और इसके लिए कभी कभी खानो मे हज़ारो मजदूरो को काम पर लगाया जाता था। दस्तकारो की सख्या भी तेज़ी से बढी और इसी के अनुरूप व्यापार का भी प्रसार हुआ। दस्तकारो ने अब मात्र आदेश पर ही नही वल्कि बाज़ार मे बिक्री के लिए भी चीज़े बनाना शुरू कर दिया।

इस काल मे रूस के आर्थिक विकास का एक अतीव महत्वपूर्ण लक्षण अपेक्षाकृत बडे औद्योगिक उद्यमो – विनिर्माणशालाओ – का प्रकट होना था। ये विनिर्माणशालाए अब मात्र कार्यशालाए नही रही थी वे खासे बडे उद्यम बन गयी थी जिनमे बडी सख्या मे मजदूर हस्तचालित मशीनो का उपयोग करते थे और श्रम का विभाजन हो गया था। इसका यह मतलब था कि काम अधिक तेजी से होता था और उसकी उत्पादिता भी अधिक थी।

रूसी विनिर्माणशालाओ मे प्राचीनतम मास्को का ताप ढलाईखाना था जिस पद्रहवी सदी के अत म स्थापित किया गया था। देश म लोहा ढलाईखाने और लोहा तथा ताबा गलाने के कारखाने खोले गये। तूला और

कलूगा के पास देश के पहले लोहा कारखानो का निर्माण किया गया। यह सही है कि इस तरह की विनिर्माणशालाओ की सख्या बहुत कम ही थी, लेकिन फिर भी वे देश के औद्योगिक विकास मे नयी प्रवृत्तियो की परिचायक थी।

लेकिन समूचे तौर पर देश की अर्थव्यवस्था अब भी नैसर्गिक स्वरूप की ही थी–सभी महत्वपूर्ण सामान बाज़ार मे नही खरीदे जाते थे, बल्कि अलग-अलग जागीरो पर बनाये जाते थे। लेकिन फिर भी एक नया लक्षण प्रकट हो रहा था और यह था खरीद विक्री मे लगे लोगो की लगातार बढती हुई सख्या। किसान लोग अपनी बनायी चीज़ो को इसलिए बेचा करते थे कि अपनी खेतीबाडी के लिए आवश्यक बीज औज़ार, आदि की पूर्ति करने के वास्ते और अपने मालिको को लगान-कर देने के लिए पैसा प्राप्त कर सके। इधर दस्तकार, जिनकी सख्या लगातार बढती जा रही थी बाज़ार मे अपने बनाये सामान को बेचने और कृषिजन्य चीज़ो को खरीदने के लिए आया करते थे। उजरत पर काम करनेवाले मजदूर भी अपने कमाये धन से खाने-पीने का सामान, कपडे और जूते वगैरह खरीदने के लिए बाजार आया करते थे।

सत्रहवी शताब्दी मे व्यापार प्रगति करने लगा। वह अधिकाधिक लाभदायी होता गया। भूस्वामी जिस रूप लगान से प्राप्त फालतू उपज को स्थानीय मडियो मे बेच देते थे। सरदियो के आरभ मे सडके जैसे ही जाने जाने के लायक होती थी, भूस्वामियो के मकानो से अनाज लिनन, चरबी और खालो से लदी *हिमगाडिया शहरो और वहा की मडियो की तरफ रवाना* होने लगती थी। व्यापार नगरो मे ही सकेंद्रित था। मास्को अर्खागेल्स्क नीजनी नोवगोरोद, वोलोग्दा–ये सब प्रमुख व्यापार केंद्र थे। आस्त्राखान का कैवियर (साधित मत्स्याड), नमक और लवणित मछली नोवगोरोद यारोस्लाव्ल तथा कोस्त्रोमा की किरमिच और लिनन काज़ान का चमडा और चरबी, वोलोग्दा का मक्खन और लकडी के काम की चीजे और साइबेरिया के समूर सारे देश के नगरो मे बेचे जाते थे और दूसरे देशो को निर्यात भी होता था। अनाज का सभी जगह व्यापार होता था। नोवगोरोद मे बढिया कारबार के दिनो मे तो कभी कभी दिन भर मे हज़ार गाडी अनाज तक बिक जाया करता था।

ये व्यापारिक सबध देश का एक आर्थिक इकाई के रूप मे सुदृढीकरण करने मे सहायक हुए। धीरे धीरे एक देशव्यापी मडी पैदा हो गयी।

इस काल मे विदेशो से व्यापार की भी बहुत उन्नति हुई। इगलैड स्वीडन तथा हालैड के लिए रूस पूर्व का–फारस का और हिंदुस्तान की दौलत का–दरवाज़ा था। निर्यात व्यापार का मुख्य बदर अर्खागेल्स्क था। स्कैडीनेविया तथा पूर्व के बीच का व्यापार मार्ग वोलोग्दा तक उत्तरी द्विना तथा अन्य नदियो पर होकर और उसके बाद स्थलमार्ग से वोल्गा तक और

दूसरा अध्याय

रूस का निरकुशतत्र

सत्रहवीं शताब्दी की रूसी अर्थव्यवस्था। आतरिक व्यापार का विकास

सत्रहवी सदी का रूस सामतवादी राज्य ही था। लेकिन फिर भी उसकी अर्थव्यवस्था मे कुछ नये लक्षण प्रकट होने लगे थे – नयी जमीनो को काश्त मे लाया जा रहा था, दोन के इलाके मे दक्षिणी स्तेपियो को धीरे धीरे आबाद किया जा रहा था रूसी किसान वश्कीरिया की स्तेपिया म प्रवश कर रहे थे और उत्तर के किसान उराल के पार साइबेरिया मे भी कृषि करने लगे थे। जैसे जैसे मध्यवर्ती प्रातो मे भूदासत्व का बोझ बढता गया वैसे वैसे सीमातवर्ती प्रदेशो की तरफ किसानो के प्रव्रजन म भी तेजी आती गयी।

इसी के साथ-साथ नगर तथा औद्योगिक प्रदेश भी विकास कर रहे थे। उत्तर मे नमक के खनन को बढाया जा रहा था और इसके लिए कभी कभी खानो म हजारो मजदूरो को काम पर लगाया जाता था। दस्तकारो की सख्या भी तेजी से बढी और इसी के अनुरूप व्यापार का भी प्रसार हुआ। दस्तकारो ने अब मात्र आदेश पर ही नही, बल्कि बाजार मे बिक्री के लिए भी चीजे बनाना शुरू कर दिया।

इस काल मे रूस के आर्थिक विकास का एक अतीव महत्वपूर्ण लक्षण अपेक्षाकृत बडे औद्योगिक उद्यमो – विनिर्माणशालाओ – का प्रकट होना था। ये विनिर्माणशालाए अब मात्र कार्यशालाए नही रही थी, वे खासे बडे उद्यम बन गयी थी जिनमे बडी सख्या मे मजदूर हस्तचालित मशीनो का उपयोग करते थे और श्रम का विभाजन हो गया था। इसका यह मतलब था कि काम अधिक तेजी से होता था और उसकी उत्पादिता भी अधिक थी।

रूसी विनिर्माणशालाओ मे प्राचीनतम मास्को का तोप ढलाईखाना था जिसे पद्रहवी सदी के अत मे स्थापित किया गया था। देश म लोहा ढलाईखान और लोहा तथा ताबा गलाने के कारखाने खोल गये। तूला और

कलूगा क पास देश क पहले लोहा कारखानो का निर्माण किया गया। यह सही है कि इस तरह की विनिर्माणशालाओ की सख्या वहुत कम ही थी, लकिन फिर भी व दश के औद्यागिक विकास मे नयी प्रवृत्तियो की परिचायक थी।

लेकिन समूचे तौर पर देश की अर्थव्यवस्था अब भी नैसर्गिक स्वरूप की ही थी – सभी महत्वपूर्ण सामान वाजार म नही खरीदे जाते थे वल्कि अलग अलग जागीरो पर बनाये जाते थ। लेकिन फिर भी एक नया लक्षण प्रकट हो रहा था और यह था खरीद बिक्री म लगे लोगो की लगातार वढती हुई सख्या। किसान लोग अपनी बनायी चीजो को इसलिए वेचा करते थे कि अपनी खेतीवाडी के लिए आवश्यक बीज, औजार, आदि की पूर्ति करने के वास्ते और अपन मालिको को लगान कर देन के लिए पैसा प्राप्त कर सके। इधर दस्तकार, जिनकी सख्या लगातार वढती जा रही थी बाजार म अपने बनाय सामान को वचन और कृपिजन्य चीजो को खरीदने के लिए आया करत थे। उजरत पर काम करनेवाले मजदूर भी अपने कमाये धन स खाने पीने का सामान, कपड और जूत वगैरह खरीदन के लिए वाजार आया करते थ।

सत्रहवी शताब्दी मे व्यापार प्रगति करने लगा। वह अधिकाधिक लाभदायी होता गया। भूस्वामी जिस रूप लगान से प्राप्त फालतू उपज को स्थानीय मडियो मे वेच दते थे। सरदियो के आरभ म सडके जैसे ही आन जाने के लायक होती थी, भूस्वामियो के मकानो से अनाज लिनन चरबी और खालो स लदी हिमगाडिया शहरो और वहा की मडियो की तरफ रवाना होने लगती थी। व्यापार नगरो मे ही सकेद्रित था। मास्को अर्खागेल्स्क नीजनी नोवगोरोद, वोलोग्दा – ये सब प्रमुख व्यापार केद्र थे। आस्त्राखान का कैवियर (साधित मत्स्याड), नमक और लवणित मछली नोवगोरोद यारोस्लाव्ल तथा कोस्त्रोमा की किरमिच और लिनन, काज़ान का चमडा और चरबी, वोलोग्दा का मक्खन और लकडी के काम की चीजे और साइबेरिया के समूर सारे देश के नगरो मे बेचे जाते थे और दूसरे देशो को निर्यात भी होता था। अनाज का सभी जगह व्यापार होता था। नोवगोरोद मे बढिया कारबार के दिनो मे तो कभी कभी दिन भर मे हज़ार गाडी अनाज तक विक जाया करता था।

य व्यापारिक सवध देश का एक आर्थिक इकाई के रूप मे सुदढीकरण करने मे सहायक हुए। धीरे धीरे एक देशव्यापी मडी पैदा हो गयी।

इस काल म विदेशो से व्यापार की भी बहुत उन्नति हुई। इगलैड स्वीडन तथा हालैड के लिए रूस पूर्व का – फारस का और हिदुस्तान की दौलत का – दरवाज़ा था। निर्यात व्यापार का मुख्य बदर अर्खागेल्स्क था। स्कैडीनविया तथा पूर्व के बीच का व्यापार मार्ग वोलोग्दा तक उत्तरी द्विना तथा अन्य नदियो पर होकर और उसके बाद स्थलमार्ग से वोल्गा तक और

वहा से फिर आस्त्राखान के जरिये था। पूर्व से रेशम बेशकीमती कपडे, मसाले रंग मूल्यवान मृद्भाड जेवर जवाहरात और कालीन लाये जाते थे। रूस भी कितनी ही चीजों का निर्यात किया करता था, जैसे समूर, चमडा मोम शहद पोटाश और राल और कपडे, जेवर जवाहरात, बदूको, तोपो पिस्तौलो शराबो और शक्कर का आयात किया करता था। रूसी मडी मे बिकनेवाली अधिकाश चीजे अब भी वे ही थी, जो अलग अलग जागीरो पर तैयार की जाती थी और जो जमीदारो को किसानो से या तो जिस रूप कर (ओब्रोक) या श्रम सेवा – बेगार (बार्श्चिना) – के जरिये प्राप्त होती थी।

किसानो के श्रम का ज्यादा से ज्यादा लाभ उठाने के लिए भूस्वामियो ने भूदासो के उत्पीडन को और भी तेज कर दिया। इसमे वे जार के समर्थन पर भरोसा कर सकते थे और जार ने आज्ञप्तिया जारी करके किसानो को अपने मालिको की जमीनो से बाध दिया और उनकी सेवा के लिए विवश कर दिया। जार अलेक्सेई द्वारा १६४६ मे प्रवर्तित नयी विधि सहिता – उलोजेनिये – ने इस बधन को चिरस्थायी कर दिया और किसानो के लिए अपने मालिको की जागीरो को छोडकर जाना सदा सदा के लिए निषिद्ध कर दिया। बोयारो और द्वोर्यानिनो (सभ्रातो) को जागीरो के गुमाश्ते इसकी पक्की व्यवस्था करते थे कि किसानो पर लगान बकाया न रहे और वे ठीक से काम करे। लापरवाही, भूलचूक और अपराधो की सजा लाठी, डडे और कोडे से पिटाई कालकोठरियो मे कैद ओर जबरदस्ती भूखा रखा जाना थी।

निरकुश राजतत्र का उदय

सत्रहवी सदी के आरभ मे कृषक युद्ध को कुचलने के बाद द्वोर्यानिनो ने देश मे निरकुश राजतत्र की स्थापना की। इस सामाजिक सामती ढाचे ने उनके हितो के अनुकूल नीतियो का क्रियान्वयन सुनिश्चित बनाया। १६१३ मे रूसी सिहासन पर बैठने के लिए रोमानोव राजवश को चुना गया, जिसने रूस पर १६१७ की फरवरी क्राति तक राज किया।

पोलिश आक्रमणकारियो के भगाये जाने के बाद १६१३ मे रूस के सभी नगरो से बोयारो पादरियो भूस्वामियो और व्यापारियो के प्रतिनिधि नये जार का चुनाव करने के लिए मास्को मे जमा हुए और जेम्स्की सोबोर (प्रादेशिक सभा) का सयोजन किया गया। निस्सदेह यह कहना अनावश्यक है कि किसानो का इन कार्रवाइयो मे कोई भी भाग नही था। मिखाईल रोमानोव को जार चुना गया क्योकि बोयारो के इस पालित का इस विशेष घडी मे

द्वोयानिनो, व्यापारियो और कज्जाकों ने भी उपयुक्त उम्मीदवार माना था। द्वोयानिनो को आशा थी कि सिंहासन पर एक किशोर अनुभवहीन और कम समझदार सोलहवर्षीय ज़ार का आसीन करके वे राजकीय मामलों में अपने प्रभाव को और भी बढ़ा सकेंगे।

मिखाईल का पिता प्राधिधर्माध्यक्ष (पटिआर्क) फिलारेत उस समय पोलों का कैदी था। वह रूस के सभी पादरियों का प्रधान था (इवान प्रचंड के पुत्र फ्योदोर इवानोविच के शासनकाल में रूस का अपना अलग प्राधिधर्माध्यक्ष होने लगा था)। लेकिन जल्दी ही फिलारेत मास्को लौट आया और अपने बेटे मिखाईल के साथ राज करने लगा और इस तरह रूस के राजकीय मामलों में प्रधान भूमिका उसी की हो गयी।

देश में किसान विद्रोहों के जहां-तहां फूट पड़ने का सिलसिला अब भी बना हुआ था। मिखाईल और फिलारेत ने इन कृषक विद्रोहों को भड़कानेवालों को निर्मम दंड दिये।

पुनर्गठित रूसी राज्य को अपनी प्रादेशिक अखंडता की बहाली में अत्यधिक प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। स्वीडन उस समय भी नोवगोरोद प्रांत के उन इलाकों का स्वामी था जिन्हें उसने विपत्ति काल में दबोच लिया था। स्मोलेंस्क तथा रूसी राज्य के पश्चिमी भाग पर पोलैंड का कब्ज़ा था।

स्वीडन के विरुद्ध युद्ध के परिणामस्वरूप १६१७ में नोवगोरोद फिर रूसी राज्य का अंग बन गया, लेकिन फिनलैंड की खाड़ी का दक्षिणी भाग अब भी स्वीडन के कब्ज़े में ही रहा। फलस्वरूप रूस को समुद्र का निर्गमद्वार फिर भी नहीं मिल पाया।

उक्रइना का रूस के साथ सम्मिलन

पोलिश आक्रमणकारियों का अंत में लगभग उन सभी इलाकों से खदेड़ दिया गया, जिन पर उन्होंने कब्ज़ा कर लिया था। यद्यपि स्मोलेंस्क अब भी पोलों के हाथों में ही रहा, फिर भी रूसी राज्य ने अपने पुराने आकार को लगभग पूरी तरह से पुनः प्राप्त कर लिया था। सत्रहवीं सदी के मध्य में रूस और उक्रइना का सम्मिलन इस काल की एक अत्यधिक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। उक्रइना और बेलारूस प्राचीन रूसी राज्य के अंग थे और उक्रइनी जनतंत्र की वर्तमान राजधानी कीयेव रूसी राज्य के सबसे प्राचीन नगरों में एक था।

तेरहवीं शताब्दी में उक्रइना के काफ़ी बड़े भाग पर मंगोल-तातारों का अधिकार हो गया और उक्रइना के शेष भाग तथा बेलारूस का लिथुआनी सामंतों ने हथिया लिया। आगे चलकर लिथुआनिया ने पोलैंड के साथ

सहबध बनाया और एक पोल-लिथुआनी राज्य की स्थापना हुई। उक्रइना और बलोरूस उसके अधीनस्थ प्रात बन गये और पोलिश, बेलोरूसी तथा लिथुआनी किसानो को पोलिश व लिथुआनी सामतो के एक ही प्रकार के शोषण तथा उत्पीडन का शिकार होना पडा।

उक्रइनी गावो म अनेक ऐसे किसानो को देखा जा सकता था, जिनके नाक-कान काट दिये गये थे या जिनके माथा पर लोहे को गरमाकर सूलिया के निशान दाग दिये गये थे। पोलिश कानून सामतो को अपने किसाना पर इस प्रकार के अत्याचार करने की और उन्हे जान से मार देने तक की भी इजाजत देता था।

पोलिश सामतो द्वारा अपनी अधीनस्थ जातियो का उत्पीडन भी इसी प्रकार अत्यत कठोर था। कैथोलिक मतावलबी पोलिश सामत बेलोरूसी और उक्रइनी किसानो की, जो प्राच्य सनातनी चर्च (ओर्थोडोक्स चर्च) को मानते थे भाषा रीति-रिवाजो और धार्मिक विश्वासो का तिरस्कार और अवमानना करते थे। धार्मिक उत्पीडन और दमन का जोर था और इन इलाको के रहनेवालो को जबरदस्ती कैथोलिक बनाने के प्रयास भी किये गये थे।

निस्सदेह उक्रइनी और बेलोरूसी किसानो ने अपनी इस स्थिति को कभी स्वीकार नही किया। सोलहवी सदी और सत्रहवी सदी के पूर्वार्ध मे पोलिश जमीदारो और प्रशासनाधिकारियो के विरुद्ध कई जगह विद्रोह फूट पडे। द्नीपर क्षिप्रिकाओ (नदी के तेज बहाववाले हिस्सो) के आसपास रहनेवाले जापोरोज्ये के कज्जाको ने पोलिश सामतो के विरुद्ध सघर्ष मे बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। यह कज्जाक समुदाय पोलिश सामतो के अत्याचारा से भागकर आनेवाले उक्रइनी तथा बेलोरूसी किसानो से बना था। उसम बोयारा, द्वोयानिनो तथा जार और राजकीय अधिकारियो के जुल्मो से बचकर भागकर आनेवाले रूसी किसान भी थे।

सत्रहवी शताब्दी के पाचवे-छठे दशको मे सारे उक्रइना और बेलोरूस मे पोलैड के खिलाफ एक व्यापक जनविद्रोह फूट पडा। जापोरोज्ये के कज्जाको और निर्धन नगरवासियो न विद्रोही किसानो की सहायता की।

कृषक सेना का नेता बोगदान ख्मेल्नीत्स्की था। १६४८ के वसत मे युद्ध सही मानी मे शुरू हो गया। किसानो ने पोलिश सामतो और स्थानीय उक्रइनी जमीदारो से निबटना शुरू कर दिया। दूर दूर से किसानो के जत्थे आकर ख्मेल्नीत्स्की की फौज मे शामिल होने लगे और जल्दी ही बगावत सारे उक्रइना और बेलोरूस मे फैल गयी।

रूसी जनता ने उक्रइनियो और बेलोरूसियो की पोलिश शासको के खिलाफ सघर्ष म सहायता की। दोन क्षेत्र के कज्जाको रूसी किसानो और

नगरवासियो के दस्तो ने इस सघर्ष मे भाग लिया। रूसी सरकार अरसे से खाद्य सामग्री और हथियार मुहैया करके विद्रोही उक्रइना की सहायता करती आयी थी।

ख्मेल्नीत्स्की ने रूसी ज़ार अलेक्सेई से अनुरोध किया कि वह उक्रइना को रूसी राज्य का अग बना ले। मास्को मे इस प्रश्न पर लबी और विस्तृत मत्रणा हुई। रूसी इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि इस अनुरोध को स्वीकार करने का मतलब उक्रइनी भूमि पर पोलैंड से लडना होगा, लेकिन इस सम्मिलन के ज़बरदस्त महत्व को भी समझा जाता था और अत मे इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया। बोयार वसीली बुतुर्लीन को ज़ार के दूत की हैसियत से उक्रइना भेजा गया और सम्मिलन की अतिम व्यवस्था करने के लिए पेरेयास्लाव नगर मे उक्रइनी रादा (महापरिषद) का समायोजन किया गया।

रादा मे भाग लेने के लिए बडी सख्या मे सबद्ध लोग – कज़्ज़ाक और उनके स्तरशिना (मुखिया जो युद्धकाल मे सेनापति भी होते थे) और उक्रइना के कई नगरो तथा ग्रामो के प्रतिनिधि – एकत्र हुए। रादा की सारी कार्रवाई बडी उत्तेजना के वातावरण मे चली और उसकी शुरूआत बोगदान ख्मेल्नीत्स्की के जोशीले भाषण के साथ हुई जिसमे उसने उक्रइनी जन के कष्टो की ओर ध्यान आकर्षित किया। उसने उनके रक्तरजित कठोर सघर्ष की ओर और इस बात की तरफ सबका ध्यान खीचा कि उक्रइना अब अकेला नही रह सकता और उसे स्वेच्छा से रूस के साथ मिल जाना चाहिए। एकत्रित लोगो ने सर्वसम्मति से उसके प्रस्ताव का समर्थन किया। इस प्रकार १६५४ की पेरेयास्लाव रादा ने यह निर्णय किया कि उक्रइना और रूस को सयुक्त हो जाना चाहिए और सदा सदा के लिए एक हो जाना चाहिए।

रूस और उक्रइना के एकीकरण के लिए जनता के सघर्ष के परिणामस्वरूप उक्रइना रूसी राज्य का अग बन गया। इस घटना को रूसी राज्य के उत्तरवर्ती इतिहास मे दोनो ही जातियो के लिए अत्यधिक महत्व की सिद्ध होना था।

इस तरह उक्रइनी जनता को पोलिश सामतो के राजनीतिक तथा धार्मिक उत्पीडन से मुक्ति मिल गयी। पोलिश भूस्वामियो के मनमाने कानूनो का बोलबाला खत्म हो गया। अपनी अतर्निहित क्रूरता के बावजूद रूसी भूदास प्रणाली पोलिश व्यवस्था के विपरीत ज़मीदारो को यह अनुमति नही देती थी कि वे अपने किसानो को प्राणदड दे सके। इस कारण पोलिश भूस्वामियो के खदेड बाहर किये जाने के बाद उक्रइना मे भूदासो का उत्पीडन अपेक्षाकृत कुछ कम हो गया।

रूस के साथ एकीकरण के परिणामस्वरूप उक्रइना की समूचे तौर पर उन्नति और रूसी तथा उक्रइनी जनो मे आर्थिक राजनीतिक एव

सांस्कृतिक संबंधों का संवर्धन हुआ। अब इन दोनों के लिए देश में अपने साझे उत्पीड़कों और विदेशी शत्रुओं के खिलाफ संघर्ष करना सुगम हो गया।

रूस और उक्रइना के एकीकरण के तुरंत बाद रूस और पोलैंड में लड़ाई छिड़ गयी, जो तेरह साल चली। १६६७ में संपन्न अंद्रुसोव की संधि से रूसी राज्य को पोलैंड द्वारा सत्रहवीं सदी के आरंभ में दक्षिण-पश्चिमी रूस में छीने गये प्रदेश वापस मिल गये और उक्रइना का द्नीपर के पूर्ववाला भाग और कीयेव नगर (जो उसके पश्चिमी तट पर था) प्राप्त हो गये। द्नीपर के पश्चिम का उक्रइनी इलाका पोलैंड के हाथों में ही रहा।

स्तेपान राज़िन का विद्रोह

सत्रहवीं शताब्दी विराट जन-विद्रोहों की सदी थी। इन विद्रोहों में सबसे महत्वपूर्ण वह था, जिसका नेता स्तेपान राज़िन नामक दोन क्षेत्रीय कज़्ज़ाक था। इस विद्रोह का आरंभ दोन के इलाके में हुआ था, जहां बहुत समय से भूदासत्व और गरीबी से बचने के लिए किसान भागकर आते और बसते रहे थे। यहां खुशहाल कज़्ज़ाक भी थे, पर बहुलांश निर्धनों का ही था, जिनके पास लगभग ज़रा भी संपत्ति न थी। गरीब कज़्ज़ाकों का नेता स्तेपान राज़िन था, जो एक अनुभवी आदमी था। वह दुनिया का काफी कुछ देख चुका था और रूस के विराट विस्तारों को भी पैदल पार कर चुका था और इस कारण भूदासों के कष्टों से और भूस्वामियों तथा ज़ारशाही अधिकारियों के प्रति उनकी सख्त नफरत और शिकायतों से सुपरिचित था।

विद्रोह की शुरूआत १६६७ में वोल्गा नदी पर एक अभियान के साथ हुई, जिसमें राज़िन और उसके साथी व्यापारी और ज़ारशाही जहाज़ों पर हमला करके उनके माल पर कब्ज़ा कर लेते थे, ज़ारशाही अफसरों को मौत के घाट उतार देते थे और जहाज़ियों में से ज़्यादातर को अपने साथ शामिल होने के लिए राज़ी कर लिया करते थे। जहाज़ों से लूटे हथियार और बारूद भी उनके लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुए।

उराल नदी (जो उस समय याइक नदी कहलाती थी) के किनारे सरदियां काटने के बाद राज़िन और उसके सैनिक कास्पियन सागर जा पहुंचे, जहां उन्होंने मूल्यवान मालों से लदे फारसी जहाज़ों के काफिलों को लूटा। भारी मात्रा में रेशम, मूल्यवान वस्तुओं तथा अन्य अनेक कीमती पूर्वी मालों को लूटने के बाद राज़िन और उसके अनुगामी आस्त्राख़ान लौट आये। इसी बीच राज़िन द्वारा फारसी जहाज़ों के लूटे जाने की खबर दूर-दूर तक फैल चुकी थी।

१६६९ मे राज़िन और उसके अनुगामी दोन के इलाके में लौट आये और नये अभियान की तैयारी करने लगे। सबसे पहले उन्होने स्तेपी से मास्को जानेवाली सडक को अपने अधिकार मे ले लिया राजमार्गों पर मज़बूत किलेबद चौकिया कायम की और ज़ारशाही जासूसो को ठिकाने लगाना शुरू किया। वे जहा भी जाते थे, वही स्थानीय किसान हथियार उठाकर अपने मुकामी नेताओं के नीचे गोलबद हो जाते थे और फिर एकसाथ राज़िन के साथ आ मिलते थे। इस तरह उसकी सेना लगातार बढती और शक्तिशाली होती गयी।

मई, १६७० तक विद्रोह और अधिक राजनीतिक स्वरूप ग्रहण कर चुका था। राज़िन के सैनिक अब सिर्फ लूट के माल के लोभी ही नही रह गये थे, वरन वे भूस्वामियो और ज़ारशाही अधिकारियो के लिए एक गभीर खतरे का प्रतिनिधित्व करने लगे थे।

राज़िन के दस्तो ने त्सारीत्सिन (वर्तमान वोल्गोग्राद) और तत्पश्चात आस्त्राखान पर अधिकार कर लिया। जो भी नगर राज़िन के सामने आत्म समर्पण कर देते थे उनमे ज़ारशाही प्रशासनाधिकारियों को मार डाला जाता था या फिर बाहर खदेड दिया जाता था और उनके अभिलेखागारो तथा उनमे सुरक्षित दस्तावजो, किसानो पर भूस्वामियो के अधिकारो की पुष्टि करनेवाले अधिपत्रो को जला डाला जाता था।

इसके बाद राज़िन और उसके अनुगामियो ने वोल्गा की राह जाकर सरातोव और समारा (वर्तमान कूइबिशेव) को सर कर लिया। आसपास के गावो के किसानो ने अपने मालिको के खिलाफ हथियार उठा लिये और उनके झुड के झुड राज़िन की सेना मे शामिल होने लगे। शाही और मठो की ज़मीनो पर रहनेवाले किसानो और वोल्गातटीन जातिया – मार्न्वा चुवाश तथा मारी – ने भी बगावत कर दी जिनका ज़ारशाही अधिकारी निर्मम उत्पीडन करते थे। कुछ ही समय के भीतर विद्रोह पूरे नीजनी नावगोरोद प्रदेश मे और पेजा तथा तबोव तक भी फैल गया। किसानो ने बोयारो और द्वोर्यानिनो की जागीरो को उजाड दिया और मालिको को मार डाला। राज़िन के अनुगामियो ने देश भर मे उद्घोषणाए भेजकर जनता का हथियार उठाने के लिए आह्वान किया। विद्रोह के दौरान अनेक महत्वपूर्ण नये किसान नेता सामने आये, जैसे अतामान (कज़्ज़ाक मुखिया) नचाई और चिरोक नामक किसान। कृषक नेताओ मे अल्योना नाम की एक स्त्री भी थी जिसके नीचे सात हज़ार किसान थे और जो निर्भयतापूर्वक लडती थी। ज़ार के अधिकारी उससे इस कदर दहशत खाते थे कि वे उसे चुडैल मानते थे।

बागी किसानो की दृष्टि मे उनका मुख्य लक्ष्य मुकामी मालिको से बदला लेना ही था। वे समझते थे कि उनकी हवेलिया को नष्ट करके वे

भूदासत्व का सदा-सदा के लिए खात्मा कर रहे हे। लेकिन तथ्य यह था कि किसानो का मुख्य शत्रु समूचे तौर पर भूदासप्रथा ही थी, जिसका प्रमुख अवलंब जार था, जो स्वय सबसे बडा भूस्वामी था। किसान यह नही समझते थे कि उनका मुख्य शत्रु निरकुशतत्र था और अब भी इस भ्राति मे थे कि भूस्वामियो का समर्थन करनेवाले जार की जगह पर अच्छा जार बिठाया जा सकता है जो किसानो की जरूरतो को समझेगा। किंतु ऐसा कभी नही हो सकता था – जार सदा भूस्वामियो के हितो का रक्षक ही हो सकता था।

देश के विभिन्न भागो म लगातार कृषक विद्रोहो का ताता बधा रहा, किंतु उनम क्रातिकारी कार्रवाई की कोई सर्वग्राही योजना नही थी और सगठन का भी अभाव था। किसानो को युद्ध का अनुभव नही था और उनके पास हथियारो की कमी थी। वे हसियो, कुल्हाडो और लाठियो मे लडते थे, जो ज़ार की तोपो के सामने बेकार ही थे।

जार ने अनुभवी सेनानायको की कमान मे एक विशाल सेना राज़िन के खिलाफ भेजी। वीरतापूर्ण प्रतिरोध के बावजूद विद्रोह को कुचल दिया गया। विद्रोहियो से कैसा क्रूर और अमानुषिक बदला लिया गया, इसकी मिसाल अर्जामास नगर मे देखी जा सकती थी, जो शब्दश फासी की टिकठियो स भरा पडा था और हर टिकठी पर चालीस-चालीस पचास-पचास लाश लटकी हुई थी। तीन महीन क भीतर इस शहर मे ग्यारह हजार लोगो को फासी पर लटकाया गया था।

विद्रोह के नता स्तेपान राज़िन का अत भी बडा लोमहर्षक था। आरभ म राज़िन दोन कज्जाको के इलाको मे जाकर छिप गया था, लेकिन बाद म कुछ अमीर कज्जाको ने उसे पकडकर जारशाही अधिकारियो के हवाले कर दिया। उसे मास्को लाया गया और भयानक यत्रणाए दी गयी। जून, १६७१ म स्तेपान राज़िन के जीवन का लाल चौक म बीभत्स अत हुआ – उसे जीत जी टुकडो टुकडो म काट दिया गया।

यद्यपि इस काल क कृषक विद्रोह भूदासत्व का अत करने मे असफल रह फिर भी उन्होने इस प्रणाली को कमजोर करने और उसके जीवनकाल को कम करन म अवश्य योग दिया।

रूसी साम्राज्य का निर्माण

पश्चिमी यूरोप के इगलैड जैसे प्रगतिशील देशो की तुलना म रूस सत्रहवी सदी म एक पिछडा हुआ देश था। तातार-मगोलो के आक्रमण के परिणामस्वरूप रूस क विकास का सख्त धक्का लगा था। देश को दो सदी स अधिक तातारो क निर्मम जूए के नीचे पड रहना पडा था। आक्रमणकारियो

पीटर महान

के खदेड बाहर किये जान के बाद शहरो और गावो का पुनर्निर्माण करना और स्थानीय शिल्पा का पुनरुत्थान करना जरूरी था। अन्य सामती राज्या की ही भाति देश का असख्य छोटे-छोटे रजवाडो म विभाजन रूस क लिए एक विकट समस्या थी। लेकिन रूस का एकीकरण उसके विराट आकार के कारण, जो कई यूरोपीय राज्यो के सयुक्त आकार के बराबर था विशेषकर दुष्कर कार्य था। रूस के पास न कोई सुविधाजनक बदरगाह था और न ही विकसित उद्योग। न उसके पास कोई सुसगठित सेना या नामना ही थी जिसके कारण उसे प्राय विदेशी आक्रमणकारियो के हमलो का शिकार होना पडता था, जो उसकी अर्थव्यवस्था को और भी कमज़ोर कर दत थ।

रूस के लिए यह अत्यधिक महत्वपूर्ण था कि वह अपन इस पिछडपन पर काबू पाये जब कि पश्चिमी यूरोप के देश इतनी तज़ी के साथ प्रगति कर रहे थे। ऐसा न होता तो य देश उस अपन अधीन कर लत और उसकी उन्नति म और भी बाधा डालते।

रूस मे अभी पूजीवाद के उदित होन का समय नही आया था — रूस अब भी एक केद्रीकृत सामती राज्य ही था जिसकी अर्थव्यवस्था भूदास

कृषि पर आधारित थी। लेकिन फिर भी उसने इस पिछडेपन के विरुद्ध सख्त सघर्ष करना शुरू किया और प्रशासन तथा अर्थव्यवस्था म महत्वपूर्ण और निश्चयात्मक कदम उठाये।

कालातीत राजकीय तत्र का पुनर्गठन करना और सास्कृतिक उन्नति तथा औद्योगिक विकास का सवर्धन करना प्राथमिक महत्व का कार्य था। पश्चिमी यूरोप के साथ सुविधाजनक व्यापार मार्गो का निर्माण करन और दृढ सास्कृतिक सूत्रो की स्थापना करने के लिए रूस को समुद्र तक पहुचन के रास्तो की जरूरत थी। अपने शक्तिशाली पडोसियो से अपनी रक्षा करन के वास्ते उसके लिए नियमित सेना तथा नौसना का निर्माण करना आवश्यक था। ये कदम पीटर महान के शासनकाल (१६८२-१७२५) मे उठाये गये।

पीटर के शासनकाल मे रूस चाहे अपन पिछडेपन का पूरी तरह से दूर नही कर पाया फिर भी उसन रूसी तथा साम्राज्य की अन्य जातिया क प्रयासो की बदौलत उल्लेखनीय उन्नति अवश्य की। इस कार्य मे प्रतिभाशाली और चतुर नये जार और उसके पार्षदो ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

रूसी राज्य को अरसे से सामुद्रिक तटरेखा की आवश्यकता थी। श्वत सागर जो रूस से लगा हुआ था साल मे छ सात महीने जमा हुआ और इस कारण जहाजरानी के अयोग्य रहता था और किसी भी सूरत म वह मुख्य समुद्र मार्गो से बहुत दूर था। बाल्टिक सागर का तट उस समय स्वीडा के हाथो मे था और काले सागर पर तुर्की का निर्बाध प्रभुत्व था। पीटर के अधीन रूस ने बाल्टिक क्षेत्र मे प्रभुता की स्थापना क लिए लबे और विकट सघर्ष का समारभ किया।

बाल्टिक सागर के तटवर्ती प्रदेशो का कुछ भाग, उदाहरण के लिए, फिनलैड की खाडी का तट पुरान जमाने म नोवगोरोद क राजाओ के अधीन था। पीटर के सिहासन पर बैठने से पाच सदी पहले नोवगोरोद के जहाजी जर्मन व्यापारिक जहाजो से कातलिन (वर्तमान क्रोनश्तादत) द्वीप पर जाकर मिला करते थे और फिर उनका नेवा नदी और लादोगा झील मे सचालन करते हुए वोल्खोव क रास्ते नोवगोरोद लाया करते थे। तेरहवी शताब्दी म नेवा क तट पर स्वीडो क विरुद्ध भयकर युद्ध मे राजा अलेक्साद्र नेव्स्की न समुद्रतट के इसी भाग म नोवगोरोद के इलाको की रक्षा की थी।

पीटर महान न स्वीडन के खिलाफ पालैड और डेनमार्क के साथ सहबध स्थापित किया और १७०० के पतझड म स्वीडन के साथ लडाई शुरू हो गयी। उत्तरी युद्ध के नाम स विख्यात यह लडाई इक्कीस साल चली। आरभ मे स्वीडा का पलडा भारी रहा, क्योकि उनकी तैयारिया ज्यादा अच्छी थी। रूसी सनाओ न नवबर १७०० म जब सरदिया शुरू हो चुकी थी, नार्वा

दुर्ग के निकट स्वीडो का सामना किया। इस पहली मुठभेड मे स्वीडो की विजय हुई जिन्हे हथियारो और साजसामान मे श्रेष्ठता प्राप्त थी।

नार्वा की पराजय रूसी सेना और पीटर महान – दोनो ही के लिए महत्वपूर्ण पाठ सिद्ध हुई। नयी और अधिक दक्ष सेना खडी करने के लिए गहन प्रयास शुरू हुआ और नये सैनिको को भरती तथा प्रशिक्षित किया गया। तैयारियो के दौरान जब यह बात सामने आयी कि हथियारो के लिए धातु की कमी है, तो पीटर न तोप ढालने के लिए गिरजाघरो के घटो को भी पिघलाने का आदेश दे दिया। इस तरह ३०० नयी तोप हासिल की गयी। १७०२ के पतझड मे पीटर ने नेवा के लादोगा झील से उदगमस्थल पर स्थित मजबूत स्वीडिश दुर्ग को सर करन मे सफलता प्राप्त कर ली। पहले इसी स्थल पर प्राचीन नोवगोरोद राज का ओरेशेक नगर हुआ करता था। नेवा के ज़रिये समुद्र का प्रवश माग प्रदान करनवाले इस दुर्ग को पीटर ने श्लीस्सेलबुर्ग ('कुजी नगर') नाम दिया।

इन सैनिक सफलताओ के परिणामस्वरूप रूस को फिनलैड की खाडी के तट पर नियत्रण प्राप्त हो गया। मई, १७०३ मे नेवा नदी के उत्तरी तट के निकट जायाची टापू पर पेत्रोपाव्लोव्स्की (पीटर पाल) दुर्ग की नीव डाली गयी। अपने बनाये रेखाक्नो के अनुसार निर्मित इस दुर्ग के निकट ही पीटर न १७०३ म नेवा के दलदली किनारो पर अपनी नयी राजधानी की नीव डाली। इस शहर को पीटर्सबुर्ग अथवा सट पीटर्सबर्ग नाम दिया गया। अब यह सोवियत राज्य के सस्थापक लेनिन के नाम पर लेनिनग्राद कहलाता है।

नयी राजधानी के निमाण के लिए हजारो भूदासो क श्रम की ज़रूरत पडी। घोर शीत और अमानवीय अवस्थाओ के बावजूद नयी राजधानी धीरे धीरे खडी हाती गयी। बहुत से मजदूरो को घुटन घुटने पानी म खड होकर काम करना पडता था और अस्थिर दलदली मिट्टी म नीव रखते हुए प्रकृति स कठोर सग्राम करना होता था। लेकिन इस नगर को जिसन अपने निर्माण मे असख्य भूदासो और मजदूरो के प्राणो की बलि ली आगे चलकर रूस के भविष्य के लिए अत्यधिक महत्व का सिद्ध होना था। देश को अब एक तटवर्ती राजधानी और एक बडे व्यापारिक बदरगाह की प्राप्ति हो गयी – 'यूरोप की खिडकी' उसके लिए खुल गयी।

१७०७ मे उत्तरी युद्ध का मुख्य स्थल उक्रइना बन गया। जून १७०६ म रूसियो न पोल्तावा के निकट स्वीडो पर निर्णायक विजय प्राप्त की।

उत्तरी युद्ध १७२१ तक चलता रहा। उसक अत म नीस्ताद शाति-सधि क अतगत रूस को सट पीटसबर्ग के आसपास फिनलैड की खाडी क सार तट और करलिया क कुछ भाग क साथ-साथ लाटविया और एस्तानिया

भी प्राप्त हुए। इसका यह मतलब था कि रूस को दो और सुविधाजनक बाल्टिकतटीन बदरगाह – रीगा तथा रेवेल (वर्तमान तालिन) – मिल गये। वह एक प्रतिष्ठित बाल्टिक शक्ति बन गया और इस प्रकार उसने अपना एक अति चिरपोषित लक्ष्य प्राप्त कर लिया।

नीश्ताद शाति सधि के उपलक्ष्य म पीटर ने अपनी नयी राजधानी मे भव्य समारोहो का आयोजन किया। उसी साल – १७२१ मे ही – उसन सपूर्ण रूस के सम्राट की उपाधि भी धारण की। रूसी राज्य को अब साम्राज्य के नाम से विज्ञात होना था जो एक महाशक्ति के रूप म उसके उदय का प्रतीक था। पीटर के पार्षदो न उस समय कहा था ' अस्तित्वहीन रहने के बाद हमने अस्तित्वमान होना शुरू कर दिया है और अब हम विश्व राजनीतिक समुदाय म सम्मिलित हो गये है। "

पीटर महान के सुधार

पीटर के शासनकाल म बहुत सारे सामाजिक तथा राजकीय सुधार किये गये। इन्हे प्रतिक्रियावादी बोयारो और धर्माधिकारियो के विरुद्ध कठोर सघर्ष चलाकर ही लागू किया जा सका था और इन्होने आगे चलकर देश की प्रगति मे बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

पीटर के पहले रूस मे कभी भी नियमित सेना नही रही थी। सेना सिर्फ युद्धकाल म ही जुटायी जाती थी। पीटर न नियमित सेना की स्थापना की और उसके समुचित प्रशिक्षण की व्यवस्था की। भरती की प्रणाली का भी पुनर्गठन किया गया। सामान्य सैनिक किसानो और शहरी आबादी, दानो म से ही भरती किये जाते थे। हर बीस कृषक परिवारो से एक सैनिक (रगरूट) लिया जाता था। अभिजात वर्ग के सभी पुरुषो के लिए सैन्य सेवा अनिवार्य थी। सेना मे एकरूप वरदी का भी प्रचलन हुआ – पीटर के रक्षकदल के सैनिक (गार्ड) गहरे हरे रग के कुरते और तिकोन टोप पहनते थ और सगीनदार बदूका से लैस होते थे।

पीटर ने नौसेना का निर्माण उत्तरी युद्ध के छिडने के बहुत पहले उसी समय शुरू कर दिया था जब वह आजोव सागर मे एक अभियान भेजने की योजना बना रहा था। उत्तरी युद्ध के आरभ मे, जब रूस बाल्टिक तट के कुछ भाग पर नियत्रण स्थापित कर चुका था एक नये बाल्टिक बेडे का निर्माण किया गया। रूसी जहाजो के पहले स्क्वाड्रन का जलावतरण १७०३ म किया गया था – उसम छ फ्रिगेट (तीन मस्तूलवाले जगी जहाज) थे। पीटर के शासनकाल के अत के समय बाल्टिक बेडे म ४८ बडे युद्धपोत और ८०० गलीपोत तथा छोटे जहाज और २८ ००० नौसैनिक थे।

पीटर रूस को विश्वों नीतियों म यथासभव अधिक स अधिक स्वतत्र और आत्मनिर्भर बनान और अपनी आवश्यकता की हर चीज का स्वदश म अपनी ही क्षमता पर निर्भर रहत हुए उत्पादन शुरू करन क लिए कृतसंकल्प था।

अनातोल क्षत्र म तूला क निकट और उराल म नय विशाल लाह क कारखान खड किय गय। तूला क आयुधनिमाण कारखान म हर साल हजारा बदूका और पिस्तौलो का उत्पादन किया जाता था। जहाजी बड की आवश्यकताओ की पूर्ति करन क लिए किरमिच तथा रस्सिया बनान की विनिर्माणशालाओ की स्थापना की गयी।

पीटर क आदश स हजारा किसानो को इन विनिर्माणशालाओ म भूदास मजदूरा की तरह काम करन क लिए भजा गया। विभिन्न प्रतिष्ठाना की श्रमशक्ति की आवश्यकताओ का तुष्ट करन क लिए पूर क पूर गावा का विनियुक्त कर दिया गया था। कही कही ता य प्रतिष्ठान इन गावा स ८०० ९०० किलोमीटर की दूरी पर थ और उनम काम की परिस्थितिया अत्यत कठोर थी। कुशल मजदूरा की कमी थी इसलिए पीटर न मजदूर प्रशिक्षित करन क लिए विदशा स बुलाइ कपडा तथा सूत उद्योगा क कुशल कारीगर बुलाय। ऊनी कपडा उद्योग क लिए अब बढिया महीन ऊन का उत्पादन शुरू करना अपरिहाय हा गया था। अत बढिया ऊनवाली माइलशियाई भेड आयात की गयी और वस्त्र विनिर्माणशालाओ की स्थापना की गयी।

पीटर क शासनकाल क पहल मास्का क जार क दरबार म एक बायार्स्काया दूमा (बायार परिषद) हुआ करती थी। यह एक बडी सभा थी जो जार क आदशा पर विभिन्न राजकीय मामला पर विचार विमर्श करती थी। सत्रहवी शताब्दी तक यह सस्था स्पष्टत कालातीत हा चुकी थी – दकियानूस बायारा क लिए लगातार जटिल हात जात राजकीय मामलो को निबटा पाना अधिकाधिक कठिन हाता जा रहा था। पीटर न १७११ म बायास्काया दूमा क स्थान पर नौ सदस्या की सीनट (अभिपद) की स्थापना की जिसके सदस्या का मनोनयन स्वय जार करता था। सीनट क सदस्यो को महत्वपूर्ण राजकीय मामल सौप जात थ।

रूस म अब तक जो कद्रीय प्रशासनिक निकाय थे वे प्रिकाज या विभाग कहलात थे और उनकी सख्या पचास के लगभग थी। वे जब-तब जैस जैस आवश्यक्ता होती गयी, वैसे वैसे पैदा होते गये थे। वे कुसगठित थे और अक्सर एक दूसरे के काम म अडचने डाला करते थे। पीटर ने प्रिकाजो को भी खत्म कर दिया और उनकी जगह कालेजियमो अर्थात अधिशासी मडल नामक कद्रीय प्रशासनिक सस्थाओ की स्थापना की। अपने समय के लिहाज से काले जियम प्रणाली अतुलनीय रूप मे अधिक कार्यकुशल और सबल तथा कारगर थी।

पीटर ने मास्को मे एक नौवायन विद्यालय की स्थापना की, जिसमे रूस मे पहली बार गणित का अध्यापन शुरू किया गया। बाद मे इस विद्यालय को सेंट पीटर्सबर्ग स्थानांतरित कर नौसेना अकादमी मे परिणत कर दिया गया। प्रांतो मे लिखना पढना सिखाने, गणित, इजीनियरी, नौशिक्षा, लेखा तथा चिकित्सा विद्यालयो के साथ साथ विशेष अकगणित शिक्षालय खोले गये। इन सभी शिक्षा संस्थाओ का स्वरूप स्पष्टत व्यावहारिक था।

पीटर ने देश मे एक विज्ञान अकादमी की स्थापना किये जाने के बारे मे भी निर्देश दिये थे (१७२४) जिन्हे उसकी मृत्यु के बाद पूरा किया गया। पीटर के शासनकाल मे ही सर्वप्रथम रूसी समाचारपत्र का प्रकाशन शुरू हुआ और पहला सार्वजनिक थियेटर खोला गया।

पीटर महान द्वारा प्रवर्तित सुधारो का बोयारो ने कडा विरोध किया, जो पारंपरिक जीवन प्रणाली के कट्टर समर्थक थे। पीटर ने उनके विरुद्ध जिन उपायो का उपयोग किया उनमे एक दैनदिन वेशभूषा का बलात यूरोपीयकरण भी था। उसने अपने दरबारियो को लबे रूसी चोगे पहनना बद करने और छोटे यूरोपीय वस्त्र पहनने तथा दाढिया साफ करने का हुक्म दिया। मास्को के निकट प्रेओब्राजेस्कोये ग्राम मे एक स्वागत समारोह के दौरान पीटर ने स्वय बोयारो की दाढिया और उनकी पारपरिक पोशाको के लबे पल्लो को काटा। विभिन्न सभ्रातो के निवासो पर इसी प्रयोजन से अभिजातो के अनिवार्य मिलन समारोह आयोजित किये जाते थे। किंतु यूरोपीयकरण की इस मुहिम ने केवल उच्चतर सस्तरो को ही प्रभावित किया और समूचे तौर पर समाज पर बहुत कम ही छाप डाली।

देश मे यूरोपीय पचाग का भी प्रवर्तन किया गया। इससे पहले प्रचलित प्राचीन रूसी पचाग मे वर्षगणना उस वर्ष से होती थी, जब इजील के अनुसार पृथ्वी की सृष्टि हुई थी। पीटर के शासनकाल मे, १७०० मे शेष सारे यूरोप मे प्रयुक्त ईसवी सवत पर आधारित पचाग को अगीकार कर लिया गया।

यद्यपि पीटर के सुधार रूस के पिछडेपन को पूरी तरह से दूर नही कर पाये फिर भी उन्होने उसे काफी कम अवश्य किया। रूस ने आगे की तरफ कई महत्वपूर्ण डग भरे चाहे वह अब भी सामती भूदासस्वामी समाज ही बना रहा। उसके शासनकाल मे जो कुछ किया गया वह कोई कम न था। रूस अब एक साम्राज्य और उदीयमान समुद्री शक्ति बन गया था जिसका बाल्टिक तट पर मजबूत नियत्रण था। उसके पास अब शक्तिशाली सेना और नौसेना थी। उसके उद्योग तथा व्यापार ने बहुत प्रसार कर लिया था। राजकीय तत्र कही अधिक दक्षता के साथ काम करने लगा था और शिक्षा के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण प्रगति हुई थी। पश्चिमी यूरोप के देशो ने अब

इस शक्तिशाली नय रूसी साम्राज्य की तरफ ध्यान देना शुरू कर दिया था और व उसा साथ घनिष्ठतर सबध स्थापित करन की आकाक्षा करन लग थ।

य सफलताए साम्राज्य क जनसाधारण न अपन अपार प्रयासो से प्राप्त की थी और उनक लिए अक्सर अपनी जान भी दी थी। दसिया हजार लाग उत्तरी युद्ध क दौरान नावा दुग और पाल्तावा के युद्धस्थला म मार गय थे। उन्होंने नियमित सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त किया था वारोनज म और नवा तट पर दिन रात कमरतोड महनत करक नय वेड क लिए जहाज बनाये थे और भूख, बीमारी सीलन और अन्य खतरनाक अवस्थाओ म काम करके भी हजारा की सख्या म प्राण गवाकर थी पीटर की नयी राजधानी का निर्माण किया था। य रूस क आम लाग ही थ कि जिन्होंने पीटर के लिए दसिया नय कारखान खालना सभव बनाया लकडी की छिपटियो की मशाला की रोशनी म खाना म अयस्क का खनन किया और उस भट्ठियो मे पिघलाकर धातु म बदला। पीटर क साम्राज्य का निर्माण उनस कमरतोड करो के रूप मे वसूले धन म और उत्पीडित जनसाधारण के शोषण के आधार पर हुआ था। रूसी साम्राज्य क सुदृढीकरण स सबस अधिक लाभ द्वोर्यानिनो और व्यापारिया तथा उद्यमिया का ही हुआ।

भूदास अर्थव्यवस्था के विघटन की शुरूआत

रूस की सामती अर्थव्यवस्था देश की प्रगति म अब अधिकाधिक बाधक बनती जा रही थी, जैसा कि दूसरे यूरोपीय देशा मे अपन समय मे हुआ था। पुरान ढाच क भीतर धीरे-धीरे नयो – पूजीवादी – व्यवस्था के आर्थिक सबधो न रूप ग्रहण करना शुरू कर दिया था।

ये नय आर्थिक सबध सबस पहले उद्योग के क्षेत्र म उत्पन्न हुए। नयी और बडी-बडी विनिर्माणशालाए पैदा होन लगी। य निजी – द्वोर्यानिनो की – और राजकीय – दोनो प्रकार की थी। इन विनिर्माणशालाओ म अधिकाशत बेगार किसान ही काम करत थे। व्यापारियो तथा धनी किसानो ने भी अपन उद्यम खडे करना शुरू कर दिया था जिनमे स्वेच्छा से काम करनेवाले मजदूर नौकरी करते थे। इस प्रकार उद्योग के क्षेत्र म अनिवार्य भूदास श्रम पर आधारित पुरान स्वरूपा के साथ-साथ नय पूजीवादी स्वरूप भी पैदा हो गये। यह भूदास अर्थव्यवस्था म कमजोरी आने के सबसे पहले सकेतो म एक था।

अठारहवी सदी क मध्य तक रूस म कुल कोई ६५० औद्योगिक उद्यम स्थापित हो चुके थे जिनम ८०,००० से अधिक मजदूर काम करते थे। उस समय तक १०६ धमन भट्ठिया काम करने लगी थी और व हर साल

लगभग १ ६० ००० टन ढलवा लोहा तैयार कर रही थी। कुछ समय तो रूसी धातु उद्योग का उत्पादन इगलैड के धातु उद्योग से भी अधिक था।

इसी के साथ साथ रूस मे नगरो की भी तेजी से वृद्धि हुई। शिल्प तथा उद्योग नगरो मे ही केंद्रित थे। जैस जैस नगरो की आबादी बढी, उसी के साथ-साथ उनकी कृषिजन्य पदार्थो की आवश्यकता भी लगातार बढती चली गयी। सिर्फ मास्को शहर की आबादी ही अठारहवी शताब्दी के अत तक २ ०० ००० के निकट पहुचने लग गयी थी।

सामत भूस्वामी कृषिजन्य पदार्थो के व्यापार का लगातार बढाते गये जिससे उन्हे खूब कमायी होती थी। अधिक से अधिक उपज बच सकने के लिए वे अपने भूदासो का और भी सख्ती से उत्पीडन करने लगे, ताकि उनसे यथासभव अधिक पैदावार करवा सकें। धीरे धीरे नैसर्गिक (मुद्राहीन) अर्थव्यवस्था का ध्वस हो गया और उसका स्थान देशव्यापी मडी ने ग्रहण कर लिया और आतरिक सीमाशुल्क रोधो का अत हो गया। यह नयी परिघटना भूदासप्रथा के साथ मेल नही खाती थी और उसने भी इस प्रथा को काफी हद तक कमजोर किया।

१७६२ मे शाही सरकार ने 'अभिजातो के नाम अनुग्रहपत्र' जारी करके द्वोर्यानिनो को अनिवार्य सैनिक और राजकीय सेवा से मुक्त कर दिया। बहुत सारे द्वोर्यानिन अपनी जागीरो मे लौट आये। अपने मालिको के मौके पर ही मौजूद रहने के कारण किसानो की जिदगी और भी दूभर हो गयी और अवज्ञा के लिए दड भी कही ज्यादा सख्त हो गये।

किसानो के लिए इस तरह के उत्पीडन को और अधिक सहन कर पाना असभव था। वे नये तरीके की जिदगी जीना चाहते थे, जिसमे उनके ऊपर कोई जागीरदार न हो, वे अपनी स्वतत्र खेती कर सके और उनके पास अपनी जमीन हो। वे मुक्ति के आकाक्षी थे। अठारहवी शताब्दी के अत मे भूदासप्रथा के विघटित होने की प्रक्रिया के शुरू हो जाने की अवस्थाओ मे, ये आकाक्षाए कृषक समुदाय मे अधिकाधिक व्यापक होती गयी और उन्हे विद्रोह के लिए प्रेरित करने लगी।

उराल प्रदेश और वोल्गा के निचले और मध्य इलाको मे तो पहले ही बहुत समय से असतोष व्याप्त था। विद्रोहाग्नि को भडकाने के लिए बस एक चिनगारी की ही जरूरत थी।

येमेल्यान पुगाचोव के नेतृत्व मे कृषक युद्ध

उराल प्रदेश मे याइक नदी के निकट परिस्थिति विशेषकर तनावपूर्ण थी। यह वही जगह थी जहा सौ साल पहले स्तेपान राजिन ने अपने वीरतापूर्ण

कारनामा स ख्याति अर्जित की थी। इस इलाक के किसाना और कज्जाको म एक अजीब अफवाह फैलन लगी कि ज़ार पीटर तृतीय जिसकी उसकी पत्नी यकातरीना (कैथरीन) द्वितीय (१७६२ १७६६) क आदश से हत्या कर दी गयी थी असल म ज़िदा है और उराल म ही कही या वोल्गा के पास छिपा हुआ है। वह जल्दी ही अपन को प्रकट कर दगा और किसानो की उत्पीडक साम्राज्ञी येकातेरीना स लडाई करगा।

जिस आदमी न अपन-आपको पीटर तृतीय घोपित किया वह यमेल्यान पुगाचोव था जो दोनतटीन ज़ीमोवइस्कायी ग्राम का एक निर्धन कज्ज़ाक था। वह ज़ार की सना का भगोडा सैनिक था दश म कई जगह देख चुका था और जनता की दुर्दशा को अच्छी तरह जानता था।

पुगाचोव के विद्रोह का प्रारभ १७७३ म हुआ। भूदासत्व की अवस्थाओ से असतुष्ट किसान और कज्ज़ाक उसक चहु ओर गोलवद होने लगे। अपनी उद्घोपणाओ और जनता क नाम अपीलो म पुगाचाव न सभी किसानो को मालिको स आज़ाद करन उन्ह उनके शप जीवन क लिए स्वतन्त्रता प्रदान करने ज़मीन देन और सार जगलो तथा नदिया को उनक सुपुर्द कर दने का वचन दिया। उसन उनको द्वोर्यानिनो के और ज़ार की सेवा करनेवाल सभी लोगो के विरुद्ध विद्रोह कर दन के लिए आह्वान किया। उसने किसाना को 'बरवाद करनेवाल' द्वोर्यानिनो को पकड लेन जान से मार देने और फासी पर लटका देने" का हुक्म दिया।

पुगाचोव की सेना न जल्दी ही कई ज़ारशाही दुर्गो पर अधिकार कर लिया और उराल प्रदेश के मुख्य नगर ओरेनवुर्ग को घर लिया। उसकी फौजा ने समारा तथा क्रास्नोउफीम्स्क को सर कर लिया और चेल्याबिन्स्क को घेरे प ले लिया। पुगाचाव ओरेनवुर्ग को जीतने मे नाकाम हुआ और पीछे टकर बाश्कीरिया चला गया।

बागी भूदासो के झुड के झुड आकर पुगाचोव की सेना मे शामिल होने लगे। उराल प्रदेश और वोल्गा घाटी मे निवास करनेवाली बाश्कीर तातार, काल्मीक, कज़ाख चुवाश, मारी मोर्दवा आदि जातिया भी जो विशेपकर कठोर उत्पीडन का शिकार थी विद्रोह म शामिल हो गयी। पुगाचोव के घोपणापत्र सिर्फ रूसी ही नही वल्कि तातार बाश्कीर तथा अन्य भापाओ मे भी लिखे जाते थे। इन विद्रोही जातियो क नेताओ न इस विद्रोह मे बहुत महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय भूमिका अदा की थी। उदाहरण के लिए, बाश्कीरो के युवा नता सलावत युलायेव ने जो कवि भी था विद्रोही सेना के लिए गीत लिखे थे।

भूदास मजदूर पुगाचोव की सेना के महत्वपूर्ण अग थे। उस समय तक उराल मे बहुत से कारखाने कायम हो चुके थे। इन कारखानो मे लोहे और

ताव के कारखाना का ही प्राधान्य था, जिनमे तोप और गोले बनाये जाते थे। इन तोपो को बनानेवाले उनके उपयोग मे भी दक्ष सिद्ध हुए। ओरेनबुर्ग के घेरे मे पुगाचोव के सैनिको ने निशाने पर गोले मारने मे ऐसा नैपुण्य दिखाया कि जारशाही जनरलो को अचरज मे आकर कहना पडा, 'हम मुजिको (किसानो) से इसकी कभी अपेक्षा नहीं कर सकते थे'।

बाश्कीरिया मे जाकर छिपने के कुछ ही समय बाद पुगाचोव ने और भी अधिक शक्तिशाली और खतरनाक सेना के साथ जारशाही फौज का सामना किया। उसने कामा नदी को पार करने के बाद इजेव्स्क और वोत्किन्स्क के कारखानो पर कब्जा कर लिया जिससे काजान का रास्ता खुल गया। पुगाचोव ने जो खुद बढिया तोपची था स्वय काजान के घेरे का नेतृत्व किया। काजान को सर कर लिया गया। द्वोयानिनो की सपत्ति विद्रोही सेना के सैनिको मे बाट दी गयी। किंतु पुगाचोव की सफलता अल्पकालिक ही सिद्ध हुई, क्योंकि पूर्ववर्ती कृषक विद्रोहो की ही भाति उसका विद्रोह भी पूर्णत स्वतस्फूर्त था। उसमे सगठन का अभाव था और इस कारण उसका असफलता मे अत होना अनिवार्य था।

काजान तजने के बाद पुगाचोव दक्षिण की तरफ हट गया। इस कृषक युद्ध की निर्णायक लडाई सरेप्ता मे हुई। यद्यपि विद्रोही सेना ने वीरतापूर्वक मुकाबला किया पर वह जारशाही सेना के आगे टिक न सकी। बाद मे धनी कज्जाको ने विश्वासघात करके पुगाचोव को जारशाही जनरलो के हवाले कर दिया। १७७५ मे मास्को के बोलोत्नाया चौक मे उसका वध कर दिया गया। केवल द्वोयानिनो के प्रतिनिधियो को ही इस दृश्य को देखने की अनुमति दी गयी थी।

इस प्रकार पुगाचोव के कृषक विद्रोह का अत हुआ। यद्यपि उसे निर्ममतापूर्वक कुचल दिया गया फिर भी उसका बहुत भारी महत्व था क्योंकि उसने रूसी सभ्रात वर्ग को दिखाया कि अन्याय पर आधारित भूदासप्रथा के खिलाफ जनसाधारण मे जबरदस्त विरोध पैदा हो रहा है। ये कृषक विद्रोह भूदासप्रथा को और कमजोर बनाते थे और उसके अवसान की तिथि को और करीब लाते थे।

अठारहवी सदी के उत्तरार्ध की रूसी विदेश नीति

अठारहवा शती के उत्तरार्ध मे भी रूसी साम्राज्य के सत्तासूत्र द्वोयानिनो के हाथो मे बने रहे। इस वर्ग के और सख्या मे लगातार बढते व्यापारियो के हित साम्राज्य के और अधिक क्षेत्रीय प्रसार का तकाजा कर रहे थे। भूदासप्रथा का विघटन शुरू हो चुका था और द्वोयानिन हर सभव तरीके से इस प्रक्रिया को रोकने और पुरानी व्यवस्था को बरकरार रखने का प्रयास

कर रहे थे। उनका ख्याल था कि नये इलाकों को हासिल करने से इसमें सहायता मिलेगी। इस प्रसग मे काला सागर तट विशेष आकर्षण रखता था।

१७६८ मे क्रीमिया के खान ने जो तुर्की के सुल्तान के अधीन था रूस के दक्षिणी भाग पर आक्रमण किया। इससे रूसी तुर्की युद्ध आरंभ हो गया। रूसियो ने अपने श्रेष्ठ सेनानायकों रुम्यात्सेव तथा सुवारोव की कमान मे कई बडी विजय प्राप्त की। १७७४ मे कुचूक-कैनार्जी की सधि के साथ इस युद्ध का अत हो गया। सधि की शर्ते रूसियो के अत्यत अनुकूल थी और इसके फलस्वरूप उन्हे काले सागर के उत्तरी तट पर दृढ नियत्रण प्राप्त हो गया और पूर्वी तट पर भी पैर जमाने की जगह मिल गयी। १७८३ मे क्रीमिया के खान ने जिसकी स्वतत्रता अब नाममात्र की ही रह गयी थी सत्ता पर अपने अधिकार को त्याग दिया और क्रीमिया रूस का अग बन गया। इस प्रकार रूस को काले सागर का एक पहुच मार्ग प्राप्त हो गया और इस क्षेत्र मे उसकी ताकत बढ गयी।

१६५४ मे उक्रइना और रूस का सम्मिलन हो जाने के बाद भी उक्रइना का दनीपर के पश्चिमवाला भाग और बलोरूस पोलैंड के अग ही बने रहे थे। इस समय पोलिश अर्थव्यवस्था बहुत ही कमजोर थी और किसानो को विशेषकर कठोर उत्पीडन का शिकार होना पड रहा था। सामती शोषण नगरो के विकास को भी अवरुद्ध कर रहा था। इन सभी लक्षणो से यह बात समझी जा सकती है कि पोलैंड क्यो अपने शक्तिशाली पडोसियो मे टक्कर नही ले पाया। अठारहवी सदी के अत मे रूस आस्ट्रिया और प्रशा ने पोलैंड का आपस मे बटवारा कर लिया और स्वाधीन राज्य के रूप मे उसका अस्तित्व समाप्त हो गया। पोलिश जनता के लिए यह एक महाविपदा थी। पोलैंड के विभाजन के साथ उक्रइना का पश्चिमी भाग और बलोरूस भी रूस को मिल गये।

अठारहवीं सदी मे रूस का सास्कृतिक उत्थान।

लोमोनोसोव

अठारहवी शताब्दी रूसी संस्कृति के लिए स्वर्णयुग के समान थी। इस युग मे अनेक सुख्यात और महान सस्कृतिकर्मी प्रकाश मे आये। इन हस्तियो मे शीर्षस्थ स्थान मिखाईल लोमोनोसोव (१७११-१७६५) को प्राप्त है जो एक साधारण किसान परिवार मे पैदा हुए थे।

लोमोनोसोव बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे – वह एक असाधारण रसायनज्ञ तथा भौतिकविज्ञानी, खगोलज्ञ भूविज्ञानी भूगोलज्ञ भाषाविद इतिहासज्ञ कवि चित्रकार और इजीनियर थे। उन्होंने रूस की पहली रासायनिक प्रयोगशाला स्थापित की और द्रव्य की अक्षयता के नियम की खोज की।

उनके वैज्ञानिक कार्य म सिद्धात का सदा व्यवहार स घनिष्ठ सबध रहता था। उन्होने खनिज स्रोतो क दाहन और नय खनिज निक्षेपा क खाजे जान के लिए जबरदस्त कार्य किया।

लोमोनोसाव न ज्ञान क विविध क्षेत्रा म अनक खोज की। खगोल म उनके काय क फलस्वरूप इस खोज का पथ प्रशस्त हुआ कि शुक्र का अपना वायुमडल है। लोमोनोसोव ने अनक अत्यत महत्वपूर्ण पाठ्यपुस्तक भी लिखी उदाहरण क लिए धात्विकी की पहली रूसी पाठ्यपुस्तक और सर्वप्रथम रूसी व्याकरण।

लोमोनोसाव न रूस म शिक्षा क प्रसार क लिए बहुत कुछ किया। उन्हाने रूस क पहले विश्वविद्यालय की स्थापना म भी बहुत महत्वपूर्ण याग दिया। यह मास्को विश्वविद्यालय था जो १७५५ म खुला था। विश्वविद्यालय क साथ दो विद्यालय भी सबद्ध थे जिनम एक द्वोर्यानिनो क बच्चा क लिए था और दूसरा समाज की अन्य स्वतत्र श्रेणियो जैसे व्यापारियो, क बच्चो क लिए। लकिन भूदासो के लिए विश्वविद्यालय और विद्यालय, सभी के दरवाजे बद थे। हालाकि लोमोनोसोव सभी सामाजिक वर्गो के लिए विश्वविद्यालय मे प्रवेश पाने के समान अधिकारा क प्रबल समर्थक थे, लेकिन ज़ारशाही सरकार के अनम्य कायदे-कानूनो के कारण ऐसा हो पाना असभव सिद्ध हुआ।

मास्को विश्वविद्यालय मे तीन सकाय थे—दर्शन, विधि और आयु विज्ञान। अन्य विश्वविद्यालयो के विपरीत उसमे कोई धर्मशास्त्र सकाय न था। मास्को विश्वविद्यालय कुछ ही समय के भीतर रूसी विज्ञान और सस्कृति का एक प्रमुख केद्र बन गया।

भूदासत्व के विरुद्ध सघर्ष का पहला क्रातिकारी आह्वान

अठारहवी सदी के अत मे रूसी साम्राज्य अपनी शक्ति के चरम पर पहुचता और तेजी से उन्नति करता ही प्रतीत होता था। अब वह उत्तर मे श्वेत तथा बाल्टिक सागरो से लेकर दक्षिण म काले सागर तक फैला हुआ था। उसके पास अब सुसगठित प्रशासनतत्र था। उसक पास सना और नौसना थी जिन्होन हाल के युद्धो म काफी यश का अर्जन किया था। साम्राज्ञी येकातेरीना द्वितीय जिसने तीस वर्ष से अधिक राज किया, वास्तव म द्वोर्यानिनो की साम्राज्ञी और भूस्वामी वर्गो क हितो की कट्टर रक्षक ही थी—उसके शासनकाल म भूदासो का शोषण लगातार और प्रखर हाता चला गया और अभिजाता के विशेषाधिकार अधिकाधिक गहरी जड जमाते गये।

पुगाचोव विद्रोह के कुचले जाने के कुछ ही बाद साम्राज्ञी न अभिजाता क नाम अनुग्रहपत्र प्रकाशित किया (१७८५) जिसम अभिजात वर्ग के सभी

अधिकारो को परिपुष्ट और व्यवस्थित किया गया था। इस अधिपत्र ने यह निर्धारित किया कि द्वोयानिन एक विशिष्ट श्रेणी के कुलीन लोग है, जिन्ह जगम सपत्ति की भाति दूसरे लोगा (किसानो) को रखन का भी विशपाधिकार प्राप्त है। उन पर मुकदमा सिर्फ अभिजात न्यायालय म ही चल सकता है।

द्वोर्यानिन अपनी जागीरा म अपन का बिलकुल जार जैसा ही समभते थे और अपन किसानो के साथ मन मरजी क मुताबिक व्यवहार करते थे, उन्ह खरीदते और बेचते थे उपहार मे देते थ और जूए मे हारते-जीतते थे।

लेकिन सामती रूस की इस महत्ता और तडक-भडक को इतिहास के आगामी दौर ने अदर ही अदर खोखला कर दिया था। भूदासत्व देश के औद्योगिक विकास म, नय कारखाना क खोले जान और नयी मशीना क प्रवश म बाधक बना। वह उजरती श्रम प्रणाली के विकास और सास्कृतिक प्रगति म भी आडे आया। भूदासो को शिक्षा प्राप्त करन का अधिकार नही था। न जान कितन ही प्रतिभाशाली आविष्कारका को वैसे ही विस्मृति के गर्भ म समा जाना पडा।

इगलैड और फ्रास म इस समय तक बूर्जुआ क्रातिया हो चुकी थी। वहा उजरती श्रम और एक नय ही वग – सर्वहारा वर्ग (प्रोलीटरियेट) – के उदय के साथ-साथ पूजीवाद न तजी के साथ विकास करना शुरू कर दिया था। इन उन्नत देशा म निरकुशता की जड उखाडी जा चुकी थी लेकिन रूस म अब भी स्वेच्छाचार मजबूती स जमा हुआ था और सारे कानून भूदासस्वामी अभिजात वर्ग के हिता का सवर्धन करने की ओर ही लक्षित थे।

लेकिन इसी के साथ साथ देश म एक ऐसी प्रच्छन्न शक्ति भी विद्यमान थी जो भूदासत्व द्वारा लगायी रुकावट क बावजूद तेजी से बढती रही थी। रूस के श्रेष्ठतम और सबस प्रगतिशील बेट-बटियो मे भूदासत्व और स्वेच्छाचार का खात्मा करने की आवश्यकता की चेतना लगातार बढती जा रही थी।

१७६० मे साम्राज्ञी येकातेरीना को एक नयी पुस्तक दिखायी गयी जिसका नाम मामूली था 'पीटर्सबर्ग स मास्को की एक यात्रा । आवरण पर लेखक का नाम नही छपा था। इस पुस्तक से साम्राज्ञी को मालूम हुआ कि क्रातिकारी विरोध क्या होता है। लेखक ने भूदासत्व की बुराइया और बेइसाफियो का बडा सजीव, सशक्त और भावप्रवण विवरण प्रस्तुत किया था। उसने भूस्वामियो को 'भकोसू जानवर और कभी तृप्त न होनेवाली जोक कहा था। उसने किसानो क खून और पसीने की बदौलत मालामाल हो जानवाले भूस्वामी का इन शब्दो म वणन किया था – बर्बर! तू नागरिक कहलान का भी अधिकारी नही है। तेरा धन लूट का फल है। इस आदमी को चोर कहो इसके खेती के औजारो का नष्ट कर दो इसके खलिहानो और अन्नागारो को जला डालो और राख को उन खेतो पर फक दो जहा यह आदमी यत्रणाए दिया करता था।'

लेखक ने भूदासत्व के पूर्ण उन्मूलन का और किसानों की मुक्ति का आह्वान किया था – यह किसानों के अपने मालिकों के खिलाफ बगावत करने के अधिकार का स्वीकार करना था। वह पुस्तक स्वेच्छाचार के भी खिलाफ थी और उसके लेखक के विचार स्पष्टतः गणतंत्रवादी थे। उसकी मान्यता थी कि सत्ता जनता के हाथों में रहनी चाहिए और वह ज़ार को ऐसा 'अधम' मानता था, 'जिससे अधिक क्रूर और कोई नहीं है।' संक्षेप में यह गुमनाम लेखक स्वेच्छाचार का उन्मूलन करने की माग कर रहा था।

इस पुस्तक को पढ़ने के बाद साम्राज्ञी ने कहा कि यह पुस्तक तो स्वयं बगावत है और उसका लेखक पुगाचोव से भी ज्यादा खतरनाक है। उसने उस आदमी को गिरफ्तार कर लिये जाने की आज्ञा दी, जो इस पुस्तक को बेच रहा था। बाद में यंत्रणा दिये जाने पर उसने पुस्तक के लेखक का नाम भी प्रकट कर दिया। पुस्तक का लेखक अलेक्सान्द्र रदीश्चेव था। वह १७४९ में एक अभिजात परिवार में पैदा हुआ था और उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए विदेश भेजा गया था। रूस लौटने के बाद उसने सेंट पीटर्सबर्ग के सीमाशुल्क कार्यालय में उपनिदेशक की हैसियत से काम किया था।

रदीश्चेव को कैद करके उसपर मुकद्मा चलाया गया और मृत्युदंड दिया गया। लेकिन साम्राज्ञी इस दंड को कार्यरूप देने से डर गयी। वह यूरोप के बड़े विचारकों में परिचित थी और अपने आपको बहुत प्रबुद्ध शासक की तरह पेश करती थी। अगर प्राणदंड दे दिया गया, तो यूरोप में लोग उसके बारे में क्या कहेंगे? अत में रदीश्चेव को प्राणदंड देने के बजाय साम्राज्ञी ने उसे दस साल के लिए पूर्वी साइबेरिया में निवासित करके सुदूर इलीम दुर्ग भेज दिया।

रदीश्चेव ने निवासन में छ भयंकर वर्ष काटे। इधर सेंट पीटर्सबर्ग में उसके मित्रों ने उसके मामले को उठाया और अत में उसे सज़ा के पूरा होने के पहले रिहा करवाने में कामयाबी हासिल कर ली। सेंट पीटर्सबर्ग लौटने के बाद रदीश्चेव एक आयोग में काम करने लगा, जो नये कानूनों का मसविदा तैयार कर रहा था। लेकिन उस के द्वारा तैयार किया गया मसविदा इतना आमूल परिवर्तनवादी था कि आयोग के प्रमुखों ने उसे दुबारा साइबेरिया निर्वासन की धमकी दी। पहले से ही बीमार और जर्जर रदीश्चेव आगे बरदाश्त न कर सका और सितंबर, १८०२ में उसने जहर खाकर आत्महत्या कर ली।

अलेक्सांदर रदीश्चेव रूस में स्वेच्छाचार और भूदासत्व के खिलाफ आवाज उठानेवाला पहला व्यक्ति था। उसने अपनी आलोचना को व्यवस्था के इक्के-दुक्के पहलुओं तक ही सीमित नहीं रखा जैसा कि उस समय अन्य प्रगतिशील लोग आम तौर पर किया करते थे बल्कि राष्ट्रव्यापी विप्लव द्वारा सारी ही प्रणाली के पूर्ण उन्मूलन का आह्वान किया।

तीसरा अध्याय

सत्रहवी-अठारहवी सदियो का इगलैड। उत्तरी अमरीका का स्वाधीनता सग्राम

अठारहवीं सदी के इगलैंड का आर्थक तथा सामाजिक विकास

इगलैड की बूर्जुआ क्राति का एक तात्कालिक परिणाम देश का तीव्र आर्थिक विकास था। यद्यपि सामतवाद का अभी पूर्णत उन्मूलन नही हो पाया था और देश मे उसक कुछेक अवशेष विभिन्न रूपा म अब भी विद्यमान थ फिर भी क्राति के बाद सर्वतोमुखी पूजीवादी विकास की व्यापक सभावनाए पैदा हो गयी थी। कुछ ही समय के भीतर उद्योग न जबरदस्त प्रगति की। ऊनी और सूती विनिर्माणशालाओ का कोयला खनन और लोहा उद्योग का बडी तेजी के साथ विकास हुआ।

औद्योगिक प्रसार विशेषकर ऊनी उद्योग के प्रसार क साथ साथ किसाना की सामूहिक पैमाने पर बेदखलिया हुई। ऊन की बढती माग न भूस्वामियो को इसके लिए प्रेरित किया कि वे किसानो को उन जमीनो म बदखल कर द, जिन्हे उनके पुरखे सदिया से काश्त करते आये थ और कृपियोग्य जमीन को चरागाहो म बदल दे। इस प्रकार किसानो को अपन सर्वस्व से वचित कर दिया गया और जबरदस्ती उजरती मजदूरा म परिणत कर दिया गया जिनक सामन अपनी मेहनत बेचने के अलावा और कोई चारा न था।

लेकिन इस प्रक्रिया को, जो कगाल किसाना के लिए इतनी अनर्थकारी थी, समूचे तौर पर सारे ही देश के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण आर्थिक परिणाम पैदा करने थे। इसके परिणामस्वरूप शहरो म अब सस्ती श्रम शक्ति क प्रचुर – बल्कि जरूरत से ज्यादा ही – स्रोत उपलब्ध हो गये क्योकि देहातो स किसाना की लहर आकर नगरो को भरने लगी थी। वे लाग जो अभी कल ही तक जमीन पर काम करते थे और अपन खेता मे अपना तथा अपन परिवारा का पालन पोषण कर सकते थे, अब जरूरत की सभी चीजे खरीदन क लिए मजबूर हो गये थे। उनकी अत्यल्प आय धान कपडे आदि म ही पूरी तरह

म खर्च हो जाती थी। इसका यह मतलब था कि शहरी आबादी की बढती के ही साथ साथ आतरिक मडी का भी प्रसार होने लगा था।

सत्रहवीं-अठारहवीं सदियो मे इगलैड की औपनिवेशिक विजये

इन सभी बातो ने तीव्र और अभूतपूर्व औद्योगिक प्रसार के लिए अनुकूल अवस्थाए उत्पन्न कर दी। लेकिन औद्योगिक प्रसार के लिए जबरदस्त पूजी निवेशन भी आवश्यक था। अग्रेज बूर्जुआ वर्ग – व्यापारी और कारखानदार – इस निवेश के साधन भला कहा से जुटाते? सोलहवी सत्रहवी सदिया जैसा बढता हुआ व्यापार इन नयी परिस्थितिया म आय का पर्याप्त स्रोत नही बन सकता था। अत उपनिवेशा की लूट ही अग्रेज शासक वर्ग के लिए सपत्ति प्राप्त करने का मुख्य साधन बना।

मुख्य समुद्री मार्गो के निकट अपनी अनुकूल द्वीपीय स्थिति की बदौलत और अपने शक्तिशाली बेडे की सहायता से इगलैड औपनिवेशिक प्रसार म अपने अनेक प्रतिद्वद्विया म बहुत आगे निकल आया। १६०७ मे उत्तरी अमरीकी तट पर अग्रजो ने अपने पहले उपनिवेश – वर्जीनिया – की स्थापना की। इसीके साथ उनका नयी दुनिया म इलाका का जीतने का सिलसिला शुरू हो गया। कुछ ही समय के भीतर आज के सयुक्त राज्य अमरीका के प्रदेश पर उनके तेरह उपनिवेशा की स्थापना हो चुकी थी। स्पेनी उत्तराधिकार के युद्ध (१७०१ १७१४) तथा सप्तवर्षीय युद्ध (१७५६-१७६३) के परिणामस्वरूप कनाडा और भारत म भी फ्रास के विस्तृत अधिकृत प्रदेश अग्रेजा के हाथो म आ गये। भारत म बगाल तथा मद्रास प्रात और बनारस हैदराबाद अवध तथा कई अन्य राज्य अग्रेजी उपनिवेश बन गये।

इस तरह दबोचे गये इलाको को अग्रेज उपनिवेशक बेरहमी के साथ लूटते थे। वे देशज आबादी पर कमरतोड कर लगाते थे और अपना माल उन्हे बेहद ऊची – वास्तविक मूल्य से कई गुना ज्यादा – कीमतो पर बेचते थे। अपने पीछे मौत कगाली और बरबादी फैलाकर वे अपने जहाजा को सोना चादी और मूल्यवान रत्नो से लादकर स्वदेश लौटते थे।

औद्योगिक क्राति

पूजी के विराट स्रोत अपने हाथो मे सकेद्रित कर लेने किसाना को उनकी जमीना से खदेड देने और इस प्रकार सस्ती श्रमशक्ति के पर्याप्त साधन पैदा कर लेने के बाद अग्रेज बूर्जुआ वर्ग के लिए अब अपने औद्योगिक उद्यमो

का प्रसार करना सभव हो गया। बढती हुई घरेलू और विदेशी मडी की माग इसका एक और प्ररक सिद्ध हुई।

विनिर्माणशालाओ म उत्पादन क उच्च स्तर और श्रम क उन्नत विभाजन न प्रौद्योगिकीय क्राति की अनिवाय पूर्वावस्थाए – हस्त श्रम की यान्त्रिक श्रम द्वारा प्रतिस्थापना – उत्पन्न की। पहली मशीन – यान्त्रिक चरख (स्पिनिग जैसी) और फिर यान्त्रिक करघ – अठारहवी सदी म कपडा उद्योग म प्रकट हुई, जिसके लिए भारत और अमरीका मे पर्याप्त कच्ची सामग्री – कपास – का प्रदाय प्रत्याभूत था और विदेशी प्रतिद्वद्वियो के साथ होड बहुत बडी प्ररणा थी। मशीनो क प्रचलन न आग की तरफ एक जबरदस्त छलाग लगाना सभव बना दिया क्योकि कुशल स कुशल दस्तकार भी मशीन के साथ प्रतियोगिता नही कर सकता था। कुदरती तौर पर कपडा उद्योग की इस तीव्र प्रगति ने अन्य उद्योगो को बहुत पीछे छोड दिया और उनक लिए भी अब बिना किसी विलब क मशीनो का प्रचलन करना आवश्यक हो गया। प्राविधिक आविष्कारो न कोयला खनन और लोहा उद्योग सहित सभी मुख्य उद्योगो मे उत्पादन का रूपातरण और धीर धीर परिष्कार करन म सहायता दी। १७८४ म ग्रीनाक निवासी इजीनियर जम्स वाट न वाष्प इजन का आविष्कार किया, जिसक विविध रूपो का शीघ्र ही कई अलग अलग उद्योगो म उपयोग होन लगा। यान्त्रिक उत्पादन के त्वरण तथा परिष्करण म इस आविष्कार का जबरदस्त महत्व था और उसन परिवहन म प्रौद्योगिकीय क्राति का पथ प्रशस्त किया। १८०७ मे राबर्ट फुल्टन द्वारा आविष्कृत पहले वाष्प जलयान ने अमरीका म हडसन नदी म पहली यात्रा की – चाह बहुत मथर गति स ही सही। १८१४ म जार्ज स्टीफसन न पहला लोकोमोटिव इजन डिजाइन किया और कुछ ही वष के बाद पहली रल का निमाण हुआ जो आगामी औद्योगिक प्रगति म अत्यधिक महत्व की एक और घटना थी। अठारहवी सदी म इगलैड मे होनवाली इस औद्योगिक क्राति को शेष सारे ससार म आर्थिक विकास के क्रम पर जबरदस्त प्रभाव डालना था। उन्नीसवी सदी के दौरान यूरोप तथा उत्तरी अमरीका के लगभग सभी देशो को इसी प्रकार की औद्योगिक क्राति से गुजरना था यद्यपि उसम स्थानीय अवस्थाओ के अनुसार अनेक अतर भी होते थे जिसम स कुछ बहुत महत्वपूण थ। लेकिन हम यहा ब्रिटेन म इस क्राति के तात्कालिक परिणामो की ही चर्चा करेगे।

अठारहवी शताब्दी के अत और उन्नीसवी के प्रारभ तक ब्रिटन यूरोप की सर्वप्रमुख औद्योगिक तथा वाणिज्यिक शक्ति बन चुका था। इगलैड ससार की सबसे बडी औद्योगिक शक्ति और साथ ही ऐसा एकमात्र देश बन गया था, जिसमे शहरी आबादी देहाती आबादी मे ज्यादा थी। इस समय तक इगलैड मे लदन के अलावा अन्य बडे औद्योगिक नगर भी पैदा हो चुक थ

जैस बर्मिंघम मैनचेस्टर और न्यूकासल। अपन समय क लिहाज स इन नगरा की आबादी बहुत अधिक थी। कृपक समुदाय जिसका कुछ ही समय पहल तक आबादी म बहुमाश था अब लगभग विलुप्त हो चुका था और नगरा की आबादी म विलीन हो चुका था।

अलबत्ता शहरी आबादी किसी भी प्रकार एकरूप नहीं थी। नगरवासिया का भारी बहुलाश कारखाना मजदूरा का था। औद्योगिक मजदूरा क वर्ग–सर्वहारा–का उदभव औद्योगिक क्राति का एक सबस निर्णायक परिणाम था। सर्वहारा जन क पास उन हाथा क सिवा और कुछ न था, जिनस व काम करत थ। गरीबी न उन्ह अत्यत भयानक अवस्थाआ म कारखाना म काम करन का मजबूर कर दिया था। औद्योगिक क्राति की आरभिक मजिला म जब मजदूरा का अपन हिता क लिए सघर्ष करन का कोई अनुभव अभी प्राप्त नही हो पाया था और अपार फालतू श्रमशक्ति उपलब्ध थी, पूजीपति मजदूरो का बेहद निष्ठुर शोषण किया करत थ। कार्य दिवस अक्सर १६ १८ घटे का होता था और स्त्री तथा बाल श्रम का भी व्यापक उपयोग किया जाता था जो और भी ज्यादा सस्ता था। इस अमर्यादित शोषण न मजदूरा के शारीरिक और आत्मिक पतन का खतरा पैदा कर दिया।

अतत मजदूर इन असहनीय परिस्थितिया को बदलन के लिए सघर्ष करने पर मजबूर हुए। आरभ म उनक पास अनुभव नही था और उनका क्रोध अधा था इसलिए अज्ञान से यह मानकर कि मशीन ही उनके सारे कष्टो और क्लेशो की जड है व मशीनो को ही तोड दिया करते थे। लेकिन जल्दी ही व यह महसूस करन लग गये कि इसके लिए जिम्मेदार मशीन नही, बल्कि उनके मालिक पूजीपति है जो मजदूर वर्ग के श्रम पर ही जीते है और उसके श्रम क फलो से ही मालामाल होते है।

जल्दी ही शहरी इमारतो की बनावट म विपर्यास सुस्पष्ट सामाजिक विपर्यासो का बडी सजीवता क साथ प्रतिबिबन करन लगे–कगाल मजदूर गदी और अधियाली बस्तिया म टूटे-फूटे मकानो और तलघरी कोठरियो म रहा करत थे जबकि दूसरी बस्तियो म लब चौडे, खुले उद्याना क बीच धनवानो के आलीशान महल थे।

इस प्रकार औद्योगिक क्राति के बाद इगलैड दो हिस्सा मे विभाजित हो गया एक दूसरे से सर्वथा विपरीत दो शिविरो मे बट गया। इनमे से एक शोषको की औद्योगिक बूर्जुआजी उपनिवेशको और वशागत अभिजातो की दुनिया थी। यह ऐयाशी और पैसे की दुनिया थी जो मजदूरो के और उपनिवेशो म अधीन जातियो के लहू को चूसती थी। दूसरी दुनिया शोषिता की औद्योगिक मजदूरा मामूली क्लर्को दस्तकारो और उपनिवेशो के महनतकश जना की दुनिया थी। यह अन्याय और अभावा की निर्धनता की

दुनिया थी। यह अटल और अनिवार्य था कि अपन अस्तित्व के लिए अपन वच्चा के भविष्य क लिए और सारी मानवजाति क भविष्य की खातिर श्रमिको की यह दुनिया सर्वहारा के नेतृत्व म पूजी की दुनिया के विरुद्ध अनम्य सघर्ष चलाये।

ब्रिटेन के उत्तरी अमरीकी उपनिवेशो मे सघर्ष का आरभ

अग्रेज शासक वर्ग स्वय अपन सर्वहारा का और औपनिवेशिक जनगण का जिस तरह निर्मम और निर्दय शोपण किया करता था उसने अनिवार्यत उनम प्रतिराध की भावना पैदा की। जैसा कि हम आगे चलकर देखेग उन्नीमवी सदी म और विशेपकर बीसवी सदी म सर्वहारा के मुक्ति सघर्ष और उपनिवशो क जनगण के स्वतत्रता सग्राम ने नयी बुलदियो को हासिल किया और शोपका तथा शोपितो क बीच शक्ति सतुलन म मूलभूत परिवर्तन पैदा किय। लकिन अठारहवी शताब्दी मे भी जव ब्रिटिश पूजीवाद लगातार वल पकडता जा ही रहा था ब्रिटेन को एक वडी हार खानी पडी थी और उस अपन उपनिवशो म पहले क्रातिकारी विद्रोह के सामने पीछे हटन पर मजवूर हाना पडा था।

१६०७ क वाद स जव उत्तरी अमरीका म पहले ब्रिटिश उपनिवश की स्थापना की गयी थी ब्रिटेन के उपनिवेशा म कई परिवर्तन आ चुके थे। उपनिवेशो की आवादी म तेजी से वृद्धि हो रही थी। इगलैड म बूर्जुआ क्राति क समय कई राजतत्रवादी अमरीका म वसन के लिए आ गये थे। फिर राजतत्र की पुन स्थापना के वाद क्रामवेल क अनुगामी भी आने लग थे जो स्वदेश म नयी व्यवस्था मे उत्पीडन के शिकार वन थे। इनके अलावा निर्धनता के चगुल से भागनवाले किसानो, फरार वदियो और मुहिमवाजो का ता ताता लगा ही हुआ था। अत उपनिवेशो की आवादी की सामाजिक सरचना अत्यधिक पचमेल थी लकिन कुल मिलाकर य लोग मजवूत और सहन शक्तिवाले थे, जो मुसीबतो और दुर्भाग्यो स घवराते नही थे।

उत्तरी अमरीका क अछूते तट जिन पर जाकर यूरापीय आवाद हुए थे किसी भी तरह अनवस हुए नही थे और देशज इडियन लोग इन अनाहूत नवागतुको स वेहद सतर्क रहत थे। आरभिक मुठभेडो और झडपा क वाद जल्दी ही कठोर सघर्ष शुरू हो गया जिसम यूरोपीयो का पलडा भारी रहना अनिवार्य ही था, क्योकि इडियनो के भाले और वाण वदूको और तोपो क सामने कुछ भी नही थे। इन परिस्थितिया म उपनिवशको और देशज निवासिया क वीच सघर्ष का जल्दी ही इडियना के विनाश अभियान म परिणत हा जाना स्वाभाविक ही था।

यूरोपीयो ने इंडियनो को बहतरीन तटवर्ती इलाकों से खदेड कर धीरे धीरे पश्चिम की तरफ प्रसार करना शुरू किया। इसके बाद डेढ सदी से अधिक समय तक तीव्र प्रादेशिक विस्तार का यह सिलसिला चलता चला गया। अठारहवी शताब्दी के अंत तक नयी दुनिया मे तेरह ब्रिटिश उपनिवेश कायम किये जा चुके थे जिनकी जनसंख्या पद्रह लाख से अधिक थी।

उपनिवेशो पर ब्रिटिश सम्राट द्वारा नियुक्त गवर्नर शासन करते थे। ब्रिटिश सरकार को सुदूर अमरीका मे रहनेवाले उपनिवेशको की कोई खास चिंता नही थी न उन्हे बहुत अधिकार ही प्राप्त थे। सरकार के लिए उपनिवेश सर्वोपरि रूप मे शाही तिजोरियो को भरने का साधन ही थे। लोगो की आवश्यकताओ और हितो की तनिक भी परवाह किये बिना उन पर भारी कर लगाये जाते थे और जरा-जरा से बहाने पर तरह-तरह की मागे की जाती थी।

ब्रिटिश सरकार की स्वार्थपरायण नीति, औपनिवेशिक गवर्नरो तथा उनके अधिकारियो का स्वेच्छाचारी शासन और उपनिवेशो मे लगातार अधिक संख्या मे ब्रिटिश सेनाओ का रखा जाना – इन सब के खिलाफ उपनिवेशो मे जबर्दस्त असतोष व्याप्त था। १७६३ मे सम्राट जार्ज तृतीय ने उपनिवेशको का ऐलेगेनी पर्वतो के और पश्चिम मे बढना निषिद्ध कर दिया। १७६५ मे ब्रिटिश संसद ने सभी व्यापारिक सौदो, दस्तावेजो, अखबारो, सार्वजनिक सूचनाओ और विज्ञापनो आदि पर एक नया मुद्राक शुल्क लगा दिया।

अमरीकी उपनिवेशो की आबादी किसी भी प्रकार एकरूप नही थी। उसके विभिन्न अंशक कृषि उद्योग व्यापार, आदि मे लगे हुए थे और अन्य सभी स्थानो की भांति यहा भी अमीरो और गरीबो के हितो मे टकराव था। लेकिन वर्गगत तथा अन्य विरोधो के बावजूद आठवे दशक मे आबादी का भारी बहुलाश मनमाने शासन और ब्रिटिश अधिकारियो द्वारा थोपे गये नियत्रणो के विरुद्ध समान रूप से रुष्ट था।

स्वतत्रता संग्राम का समारंभ

मार्च १७७० मे बोस्टन मे स्थानीय निवासियो ने ब्रिटिश अधिकारियो के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह किया, जिसके दौरान कई लोग मारे गये। इससे औपनिवेशिक आबादी मे सख्त नाराजगी पैदा हो गयी। अगले साल ब्रिटिश सेनाओ ने उत्तरी कैरोलाइना मे नागरिक आबादी पर फिर गोली चलायी। ब्रिटिश सरकार ने उपनिवेशो मे असतोष को सख्ती से कुचल देने का निश्चय कर लिया था। लेकिन इस नीति का नतीजा उलटा ही निकला। १७७४ मे औपनिवेशिक आबादी ने अपनी स्वतत्रता के लिए लडने के वास्ते पहली अमरीकी सेना जुटायी। सरकारी सेनाओ और उपनिवेशको मे पहली लडाई १९ अप्रैल,

१७७८ का लेक्सिंगटन ग्राम के पास हुई। सिर्फ बंदूकों से लैस छोटे छोटे दस्तो ने भी सुसज्जित सरकारी सेनाओ का सफलतापूर्वक सामना किया क्योकि वे अधिक गतिशील थे और पहल उन्ही के हाथो मे थी। ब्रिटिश सेना को बहुत क्षति पहुची और उसे बिलकुल बेतरतीबी के साथ पीछे हटना पडा।

इस प्रकार अमरीकी स्वतत्रता सग्राम की शुरूआत हुई। यह मुक्ति का न्याय्य युद्ध था जिसमे उपनिवेशिको ने अपने वैध अधिकारो के लिए सघर्ष किया था। यह लडाई ब्रिटिश राजतत्र द्वारा किये जानेवाले उत्पीडन के विरुद्ध अमरीकी जनता की क्राति थी जिसने उसे स्वतत्रता और स्वाधीनता प्रदान की।

स्वाधीनता की उद्घोषणा

मई, १७७५ मे फिलाडेल्फिया मे द्वितीय महाद्वीपीय काग्रेस शुरू हुई, जिसमे उन सभी उपनिवेशो के प्रतिनिधि मौजूद थे कि जिन्होने ब्रिटिश सरकार के खिलाफ हथियार उठाये थे। काग्रेस ने एक प्रस्ताव स्वीकार करके ब्रिटेन के साथ सबध विच्छेद करने का और एक अमरीकी सेना की स्थापना करने का जिसमे विद्यमान दस्तो को शामिल किया जाना था निश्चय किया। जार्ज वाशिंगटन (१७३२ १७९९) को मुख्य सेनापति नियुक्त किया गया। दुष्कर बाधाओ और कठिनाइयो के बावजूद उसने अपने को उस कार्यभार के उपयुक्त सिद्ध किया जो उसे सौपा गया था और विजयातक सघर्ष करके विद्रोही उपनिवेशो से ब्रिटिश शासन को अतत सदा-सदा के लिए मिटा दिया।

४ जुलाई, १७७६ को काग्रेस ने सुख्यात स्वाधीनता की उद्घोषणा को स्वीकार किया। अपने इस साहसी क्रातिकारी कार्य से विद्रोही उपनिवेशो ने अपने को एक स्वाधीन और स्वतत्र राज्य – सयुक्त राज्य अमरीका – घोषित कर दिया। ४ जुलाई अमरीकी जनता का राष्ट्रीय पर्व बन गया और आज भी है। स्वाधीनता की उद्घोषणा का लेखक अमरीकी क्राति का महान लोकतत्रवादी नेता टामस जेफरसन (१७४३-१८२६) था। जेफरसन पर रूसो का बहुत प्रभाव पडा था, जिससे उसने मनुष्य की समानता तथा जनता की प्रभुता के बारे मे अपने विचार ग्रहण किये थे। ये लोकतत्रीय विचार ही स्वाधीनता की उद्घोषणा के आधार थे और इसी कारण उसमे पहले दासप्रथा के उन्मूलन के बारे मे भी एक मुद्दे का समावेश किया गया था। लेकिन धनी बागान मालिको और दासस्वामियो ने, जिन्हे काग्रेस मे सशक्त प्रतिनिधित्व प्राप्त था इस मुद्दे का जोरदार विरोध किया और अत मे उसे उद्घोषणा के अतिम पाठ से निकलवाने मे सफलता प्राप्त कर ली। इस प्रकार इस नवोदित स्वतत्र राज्य मे जिसने अभी हाल ही मे अपनी आजादी को हासिल किया था गुलामी बनी रही। लेकिन समूचे तौर पर उस जमाने के लिहाज

से जब सारे संसार में अपनी अनम्य सामाजिक असमता, राजनीतिक अन्याय और पिछडेपन के साथ सामतवाद का आधिपत्य था, स्वाधीनता की उद्घोषणा, जिसने मनुष्य के स्वतंत्रता के अधिकार की उद्घोषणा की, एक बहुत ही प्रगतिशील दस्तावेज़ थी।

युद्ध का क्रम

लेकिन स्वतंत्र सयुक्त राज्य अमरीका की उद्घोषणा किये जाने का यह अर्थ नही था कि ऐसा राज्य वस्तुत अस्तित्व में आ चुका था। इसके लिए लबे समय तक इगलैंड के विरुद्ध भीषण युद्ध चला। आरभ में अवस्थाएं अंग्रेज सेनाओं के अनुकूल थी क्योंकि उन्होंने अपने विशाल बेडे की सहायता से अमरीकी तट की नाकाबदी कर दी थी और भाडे के सैनिकों की बडी सेना खडी कर ली थी। अंग्रेज़ सेनाओं ने विद्रोहियों को (अमरीकी देशभक्तों को वे विद्रोही ही कहते थे) कई करारी मात दी। लेकिन अमरीकी लोग एक न्याय्य तथा नेक हेतु के लिए लड रहे थे और इसने उन्हें अतिरिक्त शक्ति प्रदान की। अन्य देशो के कई प्रगतिशील लोग (जिनमें सेंट-साइमन, जो बाद में एक प्रमुख यूटोपियाई समाजवादी बना और पोलिश मुक्ति आदोलन का नेता कोस्त्यूश्को भी थे) अटलाटिक पार करके "स्वातंत्र्य कुमारों" (अमरीकी सैनिक इसी नाम से प्रसिद्ध थे) की कतारों में शामिल होने के लिए आ गये। नवस्थापित सयुक्त राज्य अमरीका ने यूरोपीय शक्तियों के आपसी भेदों का बडी कुशलता से अपने हित में उपयोग किया और १७७८ में फ्रास तथा स्पेन को अपने पक्ष मे कर लिया जिन्होंने ब्रिटेन के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

वर्षों लबे कठोर सघर्ष के बाद अमरीकियों ने अंग्रेजों को पराजित करने में सफलता प्राप्त कर ली। १९ अक्तूबर १७८१ को वाशिंगटन की सेना ने अंग्रेजों को यार्कटाउन मे हथियार डालने के लिए विवश कर दिया। इस विजय ने युद्ध की नियति को निर्धारित कर दिया। ३ सितबर १७८३ को युद्धरत राज्यो ने वर्साई मे शाति सधि पर हस्ताक्षर किये, जिसके अनुसार सयुक्त राज्य अमरीका को एक स्वतंत्र प्रभुसत्तासपन्न राज्य की हैसियत से मान्यता प्रदान की गयी। इस प्रकार अमरीकी जनता के साहसपूर्ण क्रातिकारी स्वाधीनता सघर्ष का अत हुआ।

१७८७ का सविधान तथा १७९१ का अधिकारपत्र

स्वाधीनता युद्ध के दौरान देश के भौतिक तथा जनशक्ति साधनों को भारी हानि पहुची थी। युद्ध के कारण करो को बढाना पडा था और मुद्रा का गभीर अवमूल्यन हुआ था जिससे सबसे ज्यादा चोट गरीबों पर ही पडी।

जार्ज वाशिंगटन,

अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए इतनी वीरता के साथ लडनेवाले कितने ही गरीबो के पास अब अपने ऋण चुकाने के लिए भी पर्याप्त साधन न थे और इसलिए उन्हे जेल जाना पडा। १७८६ के पतझड मे मेसाच्यूसेट्स म डेनियल शेस के नेतृत्व मे गरीबो का बलवा फूट पडा। बागियो की माग थी कि कर्जदारो को रिहा किया जाये और गरीबो को मुफ्त जमीन वितरित की जाये। ससदीय कार्रवाइयो म धनी बागान-मालिको और कारखानदारा की ही चलती थी और उन्होंने बागियो क खिलाफ फौजे भेज दी। फरवरी, १७८७ मे विद्रोह को कुचल दिया गया।

मई १७८७ मे फिलाडेल्फिया म सावैधानिक समागम का समारभ हुआ और सितबर तक उसने नये सविधान का मसविदा भी तैयार करके पेश कर दिया। १७८७ के सविधान ने यह निर्धारित किया कि सयुक्त राज्य अमरीका एक सघीय राज्य है। वह एक गणराज्य है, जिसमे सर्वोच्च विधानाग काग्रेस है और सर्वोच्च कार्यकारी सत्ता राष्ट्रपति मे निहित है। सविधान ने दासप्रथा का उन्मूलन नही किया था और जनता को बहुत ही कम अधिकार प्रदान किये थे। फिर भी, उस काल के अन्य सविधानो की तुलना म वह निश्चित रूप से प्रगतिशील सविधान था।

१७८९ मे पहली काग्रेस का निर्वाचन हुआ और जार्ज वाशिगटन वो सयुक्त राज्य का सर्वप्रथम राष्ट्रपति चुना गया। जनमत के दबाव से काग्रेस ने १७९१ मे सविधान मे दस सशोधन स्वीकार किये, जो इतिहास म अधिकारपत्र या बिल आफ राइट्स के नाम से विज्ञात है। इन परिवर्तनो ने जनता को भाषण, सभा तथा प्रेस की स्वतन्त्रता, व्यक्तित्व की अनुल्लघनीयता तथा अन्य अधिकारो की प्रत्याभूति दी। "अधिकारपत्र" ने दासप्रथा का उन्मूलन तो नही किया किंतु उसने नवोदित गणराज्य मे बूर्जुआ लोकतत्र के आधारभूत सिद्धातो का प्रवर्तन अवश्य कर दिया। उस ज़माने के लिहाज से यह भी एक महान उपलब्धि थी।

चौथा अध्याय

सत्रहवीं-अठारहवीं सदियों का एशिया

सत्रहवीं-अठारहवीं सदियों में लैटिन अमरीका, एशिया तथा अफ्रीका के जनगण का इतिहास यूरोपीय शक्तियों की औपनिवेशिक नीति से बहुत प्रभावित हुआ।

स्पेन तथा पुर्तगाल की औपनिवेशिक नीति

स्पेन ने ब्राज़ील के सिवा, जो पुर्तगाली शासन में आ गया था, संपूर्ण मध्य अमरीका तथा सारे दक्षिणी अमरीका को अपना उपनिवेश बना लिया। फिलिपीन द्वीपों पर भी स्पेन का ही स्वामित्व था, जिन्हें उसने सत्रहवीं शताब्दी के आरंभ में जीता था। प्रतिरोध की न्यूनतम अभिव्यक्ति पर भी बेरहमी के साथ कत्लेआम, खानों में बेगार और स्पेनियों तथा उनके वंशजों – क्रिओलों – की जागीरों पर कृषिदासत्व – इंडियनों की, अर्थात जो ज़िन्दा बच पाये थे, उन इंडियनों की यही नियति थी। अफ्रीका से लाये गये नीग्रो गुलामों का ज़मींदारों और प्रशासनाधिकारियों के घरों में नौकरों की तरह और उन इलाकों में सस्ती श्रमशक्ति के स्रोत के रूप में उपयोग किया जाता था, जहां इंडियन आबादी का पूरी तरह से सफ़ाया किया जा चुका था। स्पेन ने यह सुनिश्चित कर लिया था कि उपनिवेशों के कृषि उद्यम स्वामी देश के किसी भी उत्पादन-क्षेत्र के साथ प्रतिद्वंद्विता न कर पायें। उपनिवेशों के लिए अन्य देशों के साथ व्यापार वर्जित था और अलग-अलग स्पेनी उपनिवेशों में भी वह सख़्ती से निर्धारित सीमाओं के भीतर ही हो सकता था।

साल में सिर्फ़ दो ही जहाज़ फिलिपीन द्वीपों से मेक्सिको के आकापूल्को बंदरगाह जाया करते थे। इन जहाज़ों पर एक निर्धारित मूल्य से अधिक का

माल नही होता था। ये जहाज मेक्सिको स चादी लेकर आया करते थे, जिससे फिलिपीन मे रहनेवाले स्पेनी अधिकारियो को वेतन दिये जाते थे और चीन से मनीला आयात किये गये सामानो का भुगतान किया जाता था। फिलिपीन द्वीप न सिर्फ यूरोपीय राज्यो के साथ ही किसी भी प्रकार का सपर्क नही कर सकते थे बल्कि उनके लिए तो स्पेन के साथ व्यापार भी निषिद्ध था।

सभी स्पेनी उपनिवेशो मे प्रशासनाधिकारी, सेनाधिकारी और अन्यत नानासख्य धार्मिक सप्रदायो के भिक्षु – सभी स्पेन मे जन्मे हुए ही थे। कई स्पेनी उपनिवेशो मे इसी इरादे से आते थे कि स्थानीय आबादी की लूट और शोषण से शीघ्रातिशीघ्र मालामाल हो जाये और फिर इस तरह हासिल दौलत के बल पर चैन से जीने के लिए स्पेन वापस चले जाये। स्पेनी कोकिस्तादोरो तथा प्रारभिक आबादकारो के वशज – क्रिओल – जल्दी ही शक्तिशाली परजीवी भूस्वामी बन गये, जिनका वर्णसकर दस्तकारो और व्यापारियो सहित सारी स्थानीय आबादी पर पूरा नियत्रण था। लेकिन क्रिओलो को भी उपनिवेशो के प्रशासन म कुछ भी कर पाने का कोई अधिकार न था (पूरे स्पेनी शासन के दौरान कुल १६० वाइसरायो म स सिर्फ ४ और ६०२ कैप्टन जनरलो मे से सिर्फ १४ ही क्रिओल थे) और उनके आर्थिक तथा राजनीतिक अधिकार भी सीमित ही थे।

क्रिओल आबादी म उपनिवेशस्वामी देश के प्रति विरोध पैदा होने लगा। अठारहवी सदी तक धीरे-धीरे एक क्रिओल बुद्धिजीवी वर्ग का भी उदय हो चुका था और वह खासा बडा आकार ग्रहण कर चुका था। यह वर्ग क्रिओल आबादी के विशेषाधिकारप्राप्त हिस्से के हितो को व्यक्त करता था जो अपने अधिकारो के बढाये जाने अपने पर लगाये नियत्रणो के हटाये जाने और देश की आर्थिक तथा कराधान नीति म परिवर्तन किये जाने की माग कर रहा था। लेकिन इस विरोध आदोलन ने जनसाधारण का समर्थन पाने की कोशिश नही की। औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध आम लोगो का सघर्ष विशुद्धत स्वतस्फूर्त था और उनके अक्सर होते रहनेवाले विद्रोहो को घोर क्रूरता के साथ कुचल दिया जाता था। स्पेनी उत्तराधिकार युद्ध के बाद जब स्पेन की हैसियत दूसरे दरजे की शक्ति की ही रह गयी, तो उसके लिए अपने उपनिवेशो के बलात् पृथक्करण को और उनके व्यापार पर अपने पुराने एकाधिकार को बरकरार रख पाना कही अधिक कठिन हो गया।

अन्य यूरोपीय देशो द्वारा अवैध व्यापार का पैमाना लगातार बढता गया क्योकि उसमे स्थानीय व्यापारियो को बहुत मुनाफा होता था। इसके कारण स्पेन को अपने उपनिवेशो से प्राप्त राजस्व म कमी आयी। स्पेनी सम्राट चार्ल्स तृतीय (१७५९ १७८८) ने उपनिवेशो के साथ विद्यमान व्यापार का विस्तार का प्रयास किया और स्पेनी व्यापारियो को देश के सभी बदरगाहो

सायोगिक बात नही कि इस नयी औपनिवेशिक नीति म पहले कदम नीद
ने उठाये थे जो बूर्जुआ न्राति द्वारा देश को निरकुश स्पेनी शासन से
किये जाने क बाद एक स्वतत्र राज्य की हैसियत से उदित हुआ था। १
इडिया कपनी के निर्माण के फलस्वरूप अभिदत्त पूजीवाली पहली बडी सी
देयता (लिमिटेड) कपनी का उदय हुआ, जिसे पूर्व क साथ व्यापार
का एकाधिकार प्रदान किया गया। आगे चलकर इस डच कपनी ने
प्रकार की अन्य कपनियो और विशेषकर इगलैड की ईस्ट इडिया कपनी
लिए जिसकी स्थापना मूलत १६०० मे की गयी थी, नमूने का काम कि

सत्रहवी शताब्दी मे नीदरलैड पूजीवादी देश का एक क्लासिकी उदाह
पेश करता था और कुछ ही समय क भीतर अग्रेजा के साथ कधे स व
मिलाकर स्पेनी तथा पुर्तगाली औपनिवेशिक प्रभुत्व के विरुद्ध सयुक्त अभि
चलाकर डचो ने पुर्तगाली प्रभुत्व का अत कर दिया (१५८१ म पुर्त
स्पेनी सम्राट के शासन के अतर्गत स्पेन मे मिला लिया गया था)। डचो
कई भूतपूर्व पुर्तगाली उपनिवेशो पर कब्जा कर लिया, जैसे अफ्रीका के दक्षि
छोर पर केप उपनिवेश, फारस की खाडी मे पुर्तगाली चौकिया और १६
म मलक्का।

इन डच विजयो म मसाले के टापुओ (मलूकू द्वीपो) का स्था
अत्यधिक महत्वपूर्ण था जहा डचो ने स्थानीय आबादी की पुर्तगालियो
नफरत का और स्थानीय रजवाडो की आपसी दुश्मनी का बडी चतुरतापूर्व
लाभ उठाया। लेकिन अग्रेजो के साथ सयुक्त कार्रवाइयो न ब्रिटिश तथा ड
कपनियो म प्रचड वैमनस्य को कम नही किया था। १६२३ मे अबायना
अग्रेजो क नरसहार के बाद ब्रिटिश कपनी को मसालो के व्यापार स औ
आग चलकर इडोनेशिया के अधिकाश भागो से हाथ धो लेना पडा।

सत्रहवी सदी म सुदूर पूव म पैदा होनेवाले डच औपनिवशिक साम्राज्य
का कद्र जावा था। डच कपनी न छोटे स तटवर्ती राज्य जकार्ता म कुछ
इलाक पर कब्जा कर लिया जहा पुरानी राजधानी के खडहरा पर बटाविया
नामक नयी औपनिवशिक राजधानी का निमाण किया गया। यह कदम डच
व्यापारिक कपनी क विधिवत औपनिवशिक सगठन म रूपातरण के समारभ
का परिचायक था। इसका तक डचा का जावा म उस समय विद्यमान बड
राज्या क साथ समझौते करन पड। इन कमजार और पिछड हुए स्था
नी आबादी का हिसा और निर्मम दमन का शिकार बनान क साथ-साथ
डचा न स्थानीय रजवाडा म लडाई झगड भडकान के लिए जटिल षडयत्र भी रच।

सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दियो का इडोनेशिया

सत्रहवी सदी मे जावा मे सबसे शक्तिशाली राज्य मतारम था। शक्तिशाली मज्जापहित साम्राज्य का तटवर्ती प्रदेशो क अधीनस्थ रजवाडो के, जिनके शासको न इस्लाम को अगीकार कर लिया था सयुक्त हमले के फलस्वरूप पतन होने के बाद से जावा म कई राज्य पैदा हो गये थे जिनमे आपस म लगातार कटु सघर्ष चलते रहत थे। इनम से अधिकाश राज्य आगे चलकर मतारम के अधीन सयुक्त हो गये। मतारम राज्य जावा क उपजाऊ और घनी आबादीवाले मध्यवर्ती तथा पूर्वी भागो पर फैला हुआ था जो मध्य-युगीन उन्नत सस्कृतिवाले तथा समृद्ध जावा के भी हृद्प्रदेश थे। सत्रहवी शताब्दी म मतारम क सुलतान ने सुसुहुनन (सववशकर) की पदवी धारण की और अपनी शक्ति को बढाता चला गया।

सत्रहवी शताब्दी तक पश्चिमी जावा मे बतम नामक एक और खासा शक्तिशाली राज्य भी पैदा हो चुका था। उत्तरी सुमात्रा म अतजेह सल्तनत की ही भाति बतम के उत्कर्ष का कारण भी मुख्य समुद्री मार्गो मे आये परिवर्तन ही थे। पुर्तगालियो क रास्ते म न आन और उनकी कमरतोड वसूलियो स बचन के लिए इस समय भारत और पश्चिम क व्यापारियो ने सुमात्रा के पश्चिमी तट और सुदा जलसयोजी होते हुए जानवाले नय समुद्री मार्ग का उपयोग करना शुरू कर दिया था।

सुमात्रा, कलीमतान तथा अन्य द्वीपो के तटवर्ती प्रदेशा म सत्ता बहुत से सामती रजवाडो के हाथा मे थी। इन द्वीपो क भीतरी हिस्सा म कबायली समाज का धीरे धीरे विघटन हो रहा था और वग समाज का उदय हो रहा था। डच ईस्ट इडिया कपनी द्वारा कायम की गयी औपनिवशिक शासन प्रणाली का मुख्य कार्यभार यह था कि वह मूल्यवान मसाला तथा इडानशिया की दूसरी पैदावारो के निर्यात क एकाधिकार को बरकरार रखे। डचा न मुख्यत युद्धरत रजवाडो मे से कई पर मैत्री और सहायता की सधिया थोपकर और विभिन्न स्थानीय शासको की जनविद्रोहो के खिलाफ सन्यि सहायता करके या उत्तराधिकार युद्धो म हस्तक्षेप करक भी इन इलाको पर दृढ नियत्रण स्थापित कर लिया। सत्रहवी अठारहवी सदियो म इन्ही तरीको न डचा का पहले स्थानीय शासका पर व्यापार तथा अफीम का एकाधिकार प्राप्त करन से सबधित सधिया थोपन और फिर अधिकाश मतारम तथा बतम का कपनी के अधिकार म स्थित क्षत्र म मिला लेन म समथ बनाया। अठारहवी सदी क मध्य मे मतारम म उत्तराधिकार क प्रश्न को लकर छिड युद्ध म डच हस्तक्षेप क परिणामस्वरूप इस शक्तिशाली राज्य का अतत दो छोट अधीनस्थ राज्यो – सुराकाता और जोगजकाता – म विभाजन हो गया। य दोनो राज्य

जो पूणत डच नियन्रण म थे डच शासन की सपूण अवधि म अस्तित्वमान वन रहे।

जो इलाके डच अधिकृत प्रदेश बन गये थे उनमे कपनी ने आरंभ मे परोक्ष प्रशासन के तरीके का उपयोग किया। उसने भूतपूर्व सामतो के प्रशासन म दखल नही दिया जो अब सामान्य जागीरदारो से कुछ ही अधिक रह गये थे और डच सेवा मे अधिकारी बन गये थे, जिनका काम डचो को कृषि मालो की पूर्ति का प्रबंध करना था। अठारहवी सदी से उन्होने स्थानीय किसानो से एक नयी फसल -- काफी -- उगवाना भी शुरू कर दिया।

जावा के बाहर पूर्वी द्वीपसमूहो के रजवाडो से लडाइया विद्यमान व्यापार एकाधिकार की रक्षा मे और इस क्षेत्र मे यूरोपीय प्रतिद्वद्विया के प्रवेश को रोकने के लिए लडी गयी थी। अपने क्षेत्रीय प्रसार और ताजीरी अभियानो को जारी रखने के लिए अत मे डचो ने जातीय तथा धार्मिक विभेदो का अपने हितो मे उपयोग करते हुए स्थानीय सैनिको से निर्मित सेना को खडा करना शुरू किया। अपना व्यापार एकाधिकार कायम रखने की डच कपनी की मुहिम मे मसाले के टापू विशेषकर भीषण सग्राम के स्थल बने। लौग और जायफल के निर्यात पर अधिक कारगर नियन्रण सुनिश्चित करने के लिए डच इन चीजो को सिर्फ दो ही द्वीपो -- अबोयना और बादा -- पर ही पैदा होने देते थे। दूसरी जगहो पर मसालो के खेतो को नष्ट कर दिया जाता था और इसके परिणामस्वरूप स्थानीय आबादी को भुखमरी के शिकजे मे पड जाना पडा जो बहुत लबे समय से अपनी जीविका के लिए इन्ही फसलो पर निर्भर करती आयी थी। निषिद्ध कृषि को रोकने और यह सुनिश्चित करने के लिए कि यूरोप मे मसालो के मूल्य पहले की तरह ही ऊचे बने रहे, डच मसालो की फसलो को जान बूझकर नष्ट कर दिया करते थे और इसके नतीजे के तौर पर हताशाग्रस्त और भुखमरी की शिकार स्थानीय आबादी अक्सर बलवे करती रहती थी। बादा द्वीप के निवासियो के खिलाफ ताजीरी अभियानो का अत उनके लगभग पूर्ण विनाश के साथ हुआ। जो थोडे से लोग जान बचाकर सूखे पहाडो पर भागकर चले गये, वे जल्दी ही भूख से मर गये। इस द्वीप पर डचो ने दास श्रम के आधार पर अपने बागान कायम करने की कोशिश की। डच बागान मालिको को निकटवर्ती द्वीपो पर जाकर दासो को पकड लाने की अनुमति मिल गयी और इसके परिणामस्वरूप दास व्यापार शीघ्र ही एक फूलता-फलता व्यवसाय और इस तरह लाभदायी निर्यात का एक और स्रोत बन गया। सुलावसी (सलीबीज) के युद्धनेता पडोसी शासको के साथ स्थानीय लडाइयो मे पकडे कैदी और अपने कबीले के लोग भी कपनी को दे दिया करते थे। जावा को निर्यात किये गये इन दासो को इसके बाद दूसरी जगहो पर कही ऊचे दाम बेच दिया जाता था।

लेकिन अठारहवी सदी के आते आते डच ईस्ट इडिया कपनी अपने व्यापार एकाधिकार की रक्षा कर पाने की स्थिति मे नही रह गयी थी और उसे इगलैड को कई बडी रिआयते देनी पडी। निपिद्ध व्यापार के जरिये ब्रिटिश ईस्ट इडिया कपनी ने धीरे-धीरे इडोनेशिया म पाव टिकाने की जगह प्राप्त कर ली और शीघ्र ही डच कपनी के कल्पनातीत मुनाफ घाटे मे परिणत हो गये। नये अश (शेयर) जारी करके डच सरकार से जिसके प्रमुख स्टाडहोल्डर तथा अन्य शीर्षस्थ हलको का कपनी के कारबार म निहित स्वार्थ था ऋण लेकर कुछ समय तक इस घाटे को छिपाने की कोशिश की गयी। मगर स्वय डच अधिकारियो द्वारा किया जानेवाला अवैध निपिद्ध व्यापार भी डच व्यापार एकाधिकार को नुकसान पहुचा रहा था। इसे रोकने के लिए बहुत से कदम उठाये गये पर उनम से कोई भी कारगर सिद्ध न हो सका। ब्रिटेन ने जो इस समय तक अपने आर्थिक विकास म हालैड से आगे निकल चुका था लगातार व्यापार युद्ध चलाकर डच हितो को कई गभीर चोट पहुचायी। १७८०-१७८४ के युद्ध के परिणामस्वरूप डच कई औपनिवेशिक प्रदेशो से वचित हो गये और ब्रिटिश जहाजो को इडोनेशियाई समुद्रो मे अबाध आवागमन का अधिकार मिल गया। इस समय तक ब्रिटेन भारत मे भी कई बडी सफलताए प्राप्त कर चुका था और मध्य पूर्व तथा चीन के साथ अपने व्यापारिक सबधो का सुदृढीकरण कर चुका था।

भारत मे डचो ने वहा कार्यरत ब्रिटिश तथा फ्रासीसी कपनियो के साथ प्रतिद्वद्विता का प्रयास भी नही किया। उन्होने अपनी कोशिशे अपने उन तटवर्ती व्यापारिक अड्डो पर अधिकार बनाये रखने तक ही सीमित रखी जो इडोनेशिया तथा सुदूरपूर्व को भारतीय मालो के निर्यात के लिए बहुत महत्वपूर्ण थे।

भारत मे पैठने की अपनी कोशिशो म ब्रिटेन और फ्रास ने डचो के समान नीतियो का ही अनुगमन किया (स्थानीय शासको की आपसी शत्रुता का लाभ उठाना स्थानीय सिपाहियो को भरती करके सेना बनाना सैनिक सहायता सधियाँ करना, परोक्ष रूप से शासन करना और व्यापारिक कपनियो को क्षेत्रीय शक्तिया यानी औपनिवेशिक प्रसार का साधन बनाने के लिए नये इलाके हासिल करना और फिर शनै शनै स्थानीय राज्यो की कीमत पर इन इलाको का विस्तार करना।

महान मुग़ल साम्राज्य का पतन

सत्रहवी शताब्दी के प्रथमार्ध म महान मुगल साम्राज्य की आर्थिक शक्ति अभी चढाव पर ही थी। मुगलो की सत्ता के अतर्गत अधिकाश भारत म

एकीकरण और स्थानीय शासकों के बीच लड़ाई झगड़ा के कम होने से कृषि तथा दस्तकारियों के विकास और वैदेशिक तथा आंतरिक व्यापार की वृद्धि के लिए अनुकूल अवस्थाएं पैदा हो गयी थीं। देश के विभिन्न प्रदेशों ने पहली बार विशेष फसलों में विशिष्टता प्राप्त करना शुरू किया। जिंस रूप लगान के स्थान पर नकद लगान के लगाये जाने से पण्य द्रव्य संबंध बढ़े, आंतरिक विनिमय में वृद्धि हुई, पहली निजी विनिमाणशालाओं का जन्म हुआ और इस तरह ग्राम समुदायों की नैसर्गिक अर्थव्यवस्था में भी परिवर्तन आये। अलबत्ता शक्ति के बल पर विभिन्न जातियों के एकीकरण पर आधारित सामंती साम्राज्य के ढांचे के भीतर पूंजीवादी तत्वों के उदय का एक धीमी और टेढ़ी मेढ़ी प्रक्रिया सिद्ध होना अनिवार्य ही था। भारतीय समाज की कई विशेषताएं – जैसे स्वावलंबी ग्राम समुदाय, जातिप्रथा, विदेशी विजेताओं के बारबार आक्रमण – पूंजीवादी विकास को रोकती थीं। मुगल साम्राज्य के सीमाओं के विस्तार के साथ साथ मुख्य उत्पादकों – किसानों – का शोषण भी अधिक तेज होता चला गया।

मुगलों द्वारा चलायी गयी सैनिक अधिपतियों और सामंतों की प्रणाली (मनसबदारी) के परिणामस्वरूप स्थानीय सूबेदारों की हैसियत से शाही सेवा करनेवाले शक्तिशाली सामंतों के एक नये ही सामाजिक समूह का उदय हुआ, जो आगे चलकर व्यवहार में अर्धस्वतंत्र शासक बन गये।

सामंती उत्पीडन के नतीजे के तौर पर मुगल शासन के विरुद्ध प्राय स्वतःस्फूर्त जन विद्रोह होते रहते थे, जिनमें से बहुत से धार्मिक तथा सांप्रदायिक स्वरूप के होते थे। जातीय अथवा राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों ने भी कई बार मुगल शासन के खिलाफ बगावतें कीं।

सत्रहवीं शताब्दी में पंजाब में सिख आंदोलन ने जोर पकड़ लिया, जो सोलहवीं सदी में एक छोटे से धार्मिक आंदोलन की तरह शुरू हुआ था। यह जातिप्रथा और मुस्लिम शासकों के सामंती शोषण का घोर विरोध करता था। बड़ी संख्या में किसान इस आंदोलन के अनुयायी हो गये और समुदाय पर आधारित सामाजिक स्वरूपों के आदर्शीकरण ने सिखों के गुरु गोविंदसिंह (१६७५ १७०८) को "सच्ची बादशाहत" स्थापित करने के लिए, जिसमें सारी जमीन सिख समुदाय – खालसा – की ही होनी थी, सामंती शासन के विरुद्ध संघर्ष को तेज करने के लिए प्रेरित किया। मुगल साम्राज्य के खिलाफ यह विद्रोह, जिसका गुरु गोविंदसिंह की मृत्यु के बाद बंदा बैरागी ने नेतृत्व किया था, सारे पंजाब में फैल गया। मुगल साम्राज्य की सेना बड़ी मुश्किल से इस आंदोलन को दबाने में कामयाब हो सकी – और वह भी बहुत कम समय के लिए ही। आगे चलकर जब मुगल राज्य की केंद्रीय सत्ता बहुत कमजोर हो गयी, तो सिखों के सैनिक नेताओं (सरदारों) ने इस स्थिति

का लाभ उठाया और १७६५ मे पजाब को खालसा के अधीन स्वतत्र घोपित कर दिया। लेकिन पजाब के सुदृढ स्वतत्र राज्य बन जाने के बाद इन सरदारो न अफगान और मुगल अमीरो की जमीनो पर कब्जा करना शुरू कर दिया और स्वय शक्तिशाली भूस्वामी बन बैठे।

मराठो का विद्रोह

मराठा विद्रोह शक्तिशाली भूस्वामियो के विरुद्ध जन विद्रोह होने के ही साथ-साथ छोटे मराठा भूस्वामियो द्वारा अपन-आपको मुगलो और उनक अधीनस्थ शासको के जूए से मुक्त करने का प्रयास भी था। उनके इस स्वातन्त्र्य सग्राम का नतृत्व शिवाजी भोसला ने किया, जो एक अत्यत प्रतिभाशाली सनानायक था। उसन जनता को अपने लक्ष्य से प्ररित करके गोलबद किया और उसे आत्मविश्वास से परिपूर्ण कर दिया। शिवाजी ने मुख्यत किसानो को भरती करके एक युद्धक्षम नियमित सेना का निर्माण किया जो अपनी जातीय समरूपता और लक्ष्यो की समानता के कारण अत्यत ऐक्यवद्ध थी। १६७४ तक अधिकाश मराठा इलाको को विदशी शासन से मुक्त कर लिया गया और शिवाजी न अपन को महाराष्ट का स्वतत्र शासक घापित कर दिया। मुगलो के निकाल बाहर किये जाने के बाद लगान कोई एक तिहाई कम कर दिया गया।

लेकिन इसके बाद मराठा भूस्वामियो ने मुगलो की बडी बडी जागीरो को दबोचना शुरू कर दिया और व अधिक शक्ति प्राप्त करन के आकाक्षी हो गये। शिवाजी की मृत्यु के बाद हुए लडाई झगडो के कारण मुगलो को मराठो के विरुद्ध कुछ अस्थायी सफलताए पान म सहायता मिली। उन्होन शिवाजी के पुत्र तथा उत्तराधिकारी सभाजी को कैद करक मार डाला और उसके अल्पायु पौत्र को पकडकर मुगल साम्राज्य की राजधानी भेज दिया गया।

अठारहवी शताब्दी के आरभ म महाराष्ट फिर स्वतत्र राज्य बन गया। या ता नाम के लिए सत्ता शिवाजी के वशजो के हाथो म थी पर व्यवहार म शासन पेशवा (प्रधान मत्री) और उसके वशज करते थे। पुणे को जहा पशवाओ का पैतृक निवास था मराठा राज्य की नयी राजधानी बना दिया गया। अधिक शक्तिशाली सामतो की तुष्टि के लिए मराठा किसानो का शोपण ही काफी नही था, अत उन्होने महाराष्ट्र क बाहर भी बडे-बडे नय इलाको को दबोच लिया। मुगल राज्य जो अब बेहद शक्तिहीन हो गया था, इस स्थिति म नही था कि मराठा के विजय अभियानो का रोक सक और शीघ्र ही सिधु घाटी स लेकर बगाल की खाडी तक का विस्तृत प्रदेश उनक नियत्रण म आ गया। इस प्रदेश पर महाराष्ट क अलावा चार और

मराठा राज्यो की स्थापना की गयी। ये राज्य मिलकर मराठा राज्यमंडल का निर्माण करते थे और इसका प्रधान पेशवा था।

मुगल सम्राट औरंगजेब (१६५८-१७०७) की मृत्यु के बाद, जिसके शासनकाल में अधिकांश भारत मुगलों के अधिकार में आ गया था और चाहे अस्थायी तौर ही क्यों न सही, मराठों तथा सिखों के विद्रोहों का कुचल दिया गया था, साम्राज्य का विघटन आरंभ हो गया। उसके पुत्रों में सिंहासन के लिए आपस में जो संघर्ष चला, वह क्रमावश समरूप आबादीवाले विभिन्न प्रदेशों के साम्राज्य से अलग हो जाने और अलग-अलग स्थानीय सूबेदारों तथा शक्तिशाली सामंतों के स्वाधीन शासकों में परिणत हो जाने में सहायक सिद्ध हुआ। सिर्फ यही नहीं कि अनेक स्वतंत्र मराठा राज्य पैदा हो गये और पंजाब ने अपने को आज़ाद घोषित कर दिया, बल्कि भूतपूर्व साम्राज्य की राजधानी दिल्ली के एकदम पास ही जाटों का स्वतंत्र राज्य भी पैदा हो गया। दक्षिण में हैदराबाद, मैसूर तथा कर्णाटक स्वतंत्र राज्य बन गये। बंगाल में मुगल शासन चाहे नाम का अब भी बना रहा, पर व्यवहार में उस पर हुकूमत बंगाल के नवाबों की थी।

१७३८ में फारस के नादिरशाह ने देश पर आक्रमण किया और मुगल राजधानी को जीतकर लूटा पाटा, पर वह भारत को अपने अधीन नहीं कर पाया। इसके बाद भारत पर अफगानों का हमला हुआ, जिन्होंने अहमदशाह अब्दाली के अधीन अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया था। इन आक्रमणों ने मुगल साम्राज्य पर अंतिम प्रहार किये। अफगानों ने पंजाब, कश्मीर तथा सिंध के पूर्वी तट पर काफी इलाके को अपने अधीन कर लिया और दिल्ली भी उनके कब्ज़े में आ गयी।

मराठों ने, जो ध्वस्त साम्राज्य के भीतर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के आकांक्षी थे, अफगान विजेताओं को भगाने की कोशिश की। दिल्ली को जीतने के बाद वे अफगानों को सिंध के उस पार धकेलने में सफल हो गये। लेकिन मुस्लिम सुल्तानों तथा जागीरदारों और हिंदू मराठों के आपसी संघर्ष से फायदा उठाकर और अपनी नयी सेना की सहायता से अंत में अहमदशाह ने ही विजय प्राप्त की, यद्यपि नादिरशाह की भांति वह भी भारतीय इलाकों पर दृढ़ नियंत्रण नहीं हासिल कर सका। पंजाब में उसने जो अधिकांश इलाका जीता था, वह सिखों का था। युद्धों के इस लंबे सिलसिले से कमजोर हुए मराठे मुगलों के स्थान पर नये राजवंश की स्थापना तो नहीं कर पाये, लेकिन वे अब भी एक ऐसी दुर्जेय शक्ति थे, जो अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने में पूर्णतः समर्थ थी।

मुगल साम्राज्य का पतन इस बहुराष्ट्रीय सामंती साम्राज्य के गहरे आंतरिक संकट का परिणाम था। इसके परिणामस्वरूप जो स्वतंत्र रियासतें

पैदा हुए। उनमें से कुछ—जैसे बंगाल, हैदराबाद और महाराष्ट्र—राष्ट्रीय राज्यों के निर्माण का और इस प्रकार पूंजीवादी आर्थिक तथा सामाजिक स्वरूपों का स्वतंत्र रूप से आधार प्रदान कर सकती थी। लेकिन यूरोपीय विजेताओं के युग के समारम्भ ने इन संभावनाओं को सहसा ही ध्वस्त कर दिया।

आंग्ल फ्रांसीसी प्रतिद्वंद्विता। पहली क्षेत्रीय विजयें

यूरोपीय व्यापारियों के लगातार बढ़ते प्रवेश ने मुगल साम्राज्य के अंतिम पतन के पहले ही उसके भीतर आंतरिक घटनाक्रम को प्रभावित करना शुरू कर दिया था। यूरोपीय व्यापारिक कंपनियों ने गंगा के मुहाने में और मलाबार तथा कारोमंडल तटों पर बहुत सी व्यापारिक चौकियों और दुर्गों की स्थापना कर ली थी। इंडोनेशिया में असफल रहने के बाद अंग्रेजों ने सत्रहवीं शताब्दी के पहले तीन दशकों में अपना ध्यान भारत और मध्य पूर्व की तरफ मोड़ा। कालबर्ट के उपक्रम पर संस्थापित फ्रांसीसी ईस्ट इंडिया कंपनी ने निरंकुश राजतंत्र के समर्थन से मद्रास के दक्षिण में पांडिचेरी के मुख्य अड्डे के आसपास कई व्यापारिक चौकियां कायम की। अंग्रेज व्यापारियों के मुख्य केंद्र मद्रास और सूरत और कलकत्ता के निकट थे। १६६८ में चार्ल्स द्वितीय द्वारा बंबई का टापू, जो उसे पुर्तगाली राजकुमारी कैथरीन से शादी करने पर दहेज में मिला था, कंपनी को दे दिए जाने के बाद पश्चिमी तट पर ब्रिटिश कंपनी के प्रशासनिक केंद्र को सूरत से वहीं स्थानांतरित कर दिया गया, क्योंकि बंबई अधिक सुविधाजनक बंदरगाह भी था। मुगल सम्राटों से फरमान प्राप्त करके डेनमार्क तथा नार्वे ने भी अपनी व्यापारिक चौकियां कायम कर ली थीं। मुगल शासक इनकी स्थापना की अनुमति इसलिए दे दिया करते थे, क्योंकि विदेश व्यापार के विकास में स्वयं उनका भी निहित स्वार्थ था।

अठारहवीं शताब्दी के मध्य में, जब केंद्रीय सत्ता कमजोर हो चुकी थी और पार्थक्यवादी प्रवृत्तियां बढ़ रही थीं और शक्तिशाली सामंतों की प्रतिद्वंद्विता अपनी पराकाष्ठा पर थी, यूरोपीय कंपनियों ने परिस्थिति का पूरा पूरा फायदा उठाया और हिंदुस्तानी इलाकों को हथियाना शुरू कर दिया। प्रादेशिक प्रसार की इस दौड़ में मुख्य प्रतिद्वंद्वी अंग्रेजी और फ्रांसीसी कंपनियां थीं। आरंभ में फ्रांसीसियों ने काफी सफलताएं प्राप्त कीं। फ्रांसीसी व्यापार केंद्र के चतुर गवर्नर डूप्ले ने ही डचों द्वारा निकाली तरकीबों को सबसे पहले उपयोग में लाना शुरू किया था। उसने संघर्षरत विभिन्न सामंतों के अधिकारों की रक्षा करने और उन्हें सहायता प्रदान करने के बहाने देशज सैनिकों की सेना खड़ी

की और यह सुनिश्चित करने के बाद कि इन सैनिको के रखरखाव का खर्च स्थानीय भारतीय शासक देगे उन्हे भारतीय प्रदेश मे महत्वपूर्ण स्थानो पर तैनात करना शुरू कर दिया। इन तथाकथित सैनिक सहायता सधियो की बदौलत अठारहवी शताब्दी के पाचवे दशक तक फ्रासीसी हैदराबाद और कर्णाटक के बड़े बड़े राज्यो को अपने नियत्रण मे ला चुके थे, जिसने भारत मे ब्रिटिश अड्डो – और विशेषकर मद्रास – के लिए गभीर खतरा पेश कर दिया था। इस स्थिति के परिणामस्वरूप भारत औपनिवेशिक प्रभुता के लिए आग्ल फ्रासीसी सघर्ष का अखाडा बन गया। आस्ट्रियाई उत्तराधिकार युद्ध (१७४० १७४८) के दौरान ब्रिटिश कपनी ने अपने बूर्जुआ वर्ग की सहायता से जो अपनी स्थिति को खूब सुदृढ कर चुका था, फ्रासीसियो पर श्रेष्ठता प्राप्त कर ली थी लेकिन इन दोनो शक्तियो के बीच प्रतिद्वद्विता का अतिम निर्णय सप्तवर्षीय युद्ध (१७५६-१७६३) के दौरान ही हुआ। इस युद्ध का निर्णायक चरण अग्रेजो द्वारा बगाल का जीता और अधीन बनाया जाना था। प्रचुर प्राकृतिक साधनो और घनी आबादीवाले इस प्रात पर सारे ही यूरोपीय उपनिवेशको की आखे लगी हुई थी। ब्रिटिश कपनी की बगाल मे पद्रह बडी चौकिया थी जिनमे से सबसे मुख्य व्यापारिक चौकी कलकत्ता मे थी, जहा १५० गोदाम थे। भारतीय मालो और शिल्पोत्पादो की स्थानीय हितो के अत्यत प्रतिकूल दामो पर खसोट के परिणामस्वरूप बगाल की अर्थव्यवस्था जल्दी ही बहुत कमजोर हो गयी। नवाब सिराजुद्दौला ने, जो १७५६ मे सिहासन पर बैठा था बगाल की स्वतत्रता का सुदृढीकरण करने और अग्रेजी प्रभुत्व के खतरे का अत करने का प्रयास किया। लडाई शुरू करने और कलकत्ता को कब्जे मे लेने के बाद नवाब ने आग्ल फ्रासीसी प्रतिद्वद्विता का लाभ उठाने और फ्रासीसियो से मदद पाने की कोशिश की। मद्रास से प्रभावशाली औपनिवेशिक सेनानायक राबर्ट क्लाइव, जो युद्ध कौशल के साथ साथ राजनयिक षड्यत्रो तथा घूसखोरी के फन मे भी माहिर था की कमान मे भेजी अग्रेजी सेनाओ ने नवाब की सेनाओ को पीछे धकेलकर कलकत्ता को फिर सर कर लिया।

बगाल की लूट

लेकिन नवाब की सेनाओ ने डटकर मुकाबला किया। क्लाइव ने नवाब के मुख्य सेनानायको मे से एक मीर जाफर के साथ गुप्त सधि कर ली जिससे मीर जाफर नवाब की गद्दी के बदले क्लाइव की सहायता करने को तैयार हो गया। प्लासी की लडाई (१७५७) मे अग्रेजो के ९०० ब्रिटिश और २ ००० देशी सिपाहियो ने अपने बेहतर हथियारो तथा सेना के सगठन और

नवाब के साथ मीर जाफर के विश्वासघात की बदौलत नवाब की ६० ००० आदमियो की फौज को मुकम्मिल शिकस्त दी। सिराजुद्दौला को कैद कर लिया गया और बाद मे उसकी हत्या कर दी गयी। बंगाल की राजधानी मुर्शिदाबाद की अधाधुध लूट से ब्रिटिश ईस्ट इडिया कपनी को ३७० लाख पौड की अथाह सपत्ति प्राप्त हुई जिसमे मे २१० लाख पौड तो सिर्फ क्लाइव और सेना के दूसरे अफसरो तथा कपनी के अधिकारियो की जेबो मे ही गये।

मीर जाफर को तख्त पर बैठा दिया गया, जिसका यह मतलब था कि ब्रिटिश कपनी को अब पूरी छूट मिल गयी। उसका भारतीय कच्चे मालो सूत और कपडो का व्यापार तेज़ी के साथ बढने लगा। कपनी अपनी मरजी के मुताबिक नवाबो को गद्दी से उतार दिया करती थी और हर मौके पर सिंहासन के नये अभ्यर्थी से भारी रिश्वते लिया करती थी। नवाब मीर कासिम के कपनी तथा उसके गुमाश्तो द्वारा चुगी दिये बिना किये जानेवाले अवैध व्यापार को रोकने के प्रयास के परिणामस्वरूप खुला झगडा पैदा हो गया। मीर कासिम ने अवध के नवाब और मुगल सम्राट शाह आलम द्वितीय की सहायता से हथियारो के बल पर उपनिवेशको की सरगरमियो पर लगाम लगाने का फैसला किया। लेकिन सयुक्त भारतीय सेनाओ की पराजय हुई और मुगल बादशाह को कैदी बना लिया गया जिसे १७६५ मे कपनी को और बातो के अलावा मालगुजारी वसूल करने और बगाल मे सेना रखने का अधिकार प्रदान करना पडा। कपनी ने बगाल मे दुहरे शासन की पद्धति का व्यापक उपयोग किया। मालगुजारी इकट्ठा करने का काम जमीदारो या मालगुज़ारो के सुपुर्द किया गया जो कपनी के लिए बेशुमार धन इकट्ठा किया करते थे जिससे वह अपना सैनिक तथा प्रशासनिक खर्च पूरा कर सकती थी और हिंदुस्तानी मालो को बहुत ही कम कीमतो पर खरीद सकती थी जिन्हे वह यूरोप मे अपार लाभ उठाकर बेचा करती थी। दस साल की अवधि मे कपनी ने इस व्यापार के जरिये २७० लाख पौड मुनाफा कमाया।

बगाल की लूट और वहा की आबादी के शोषण ने देश को घोर दैन्य की दशा मे डाल दिया। ज़मीदार बेरहमी से किसानो से लगान वसूल किया करते थे। नतीजे के तौर पर बहुतेरे किसान बरबाद हो गये और उन्हे अपनी जमीनो से खदेड बाहर कर दिया गया।

स्थानीय दस्तकारो को भी बरबादी का शिकार होना पडा जिन्हे अपनी बनायी चीज़ो को बहुत ही कम दामो पर कपनी के गुमाश्तो को बेचना पडता था। कपनी के व्यापार के इजारे ने स्थानीय व्यापारियो के क्षेत्र मे दखल देकर जल्दी ही उनके लिए भी जीविका अर्जन करते रहना असभव बना दिया, यद्यपि विदेशियो के आगमन की प्रारम्भिक अवस्था मे उनकी मौजूदगी मे व्यापारियो को अतिरिक्त मुनाफे होने लगे थे। १७७१ मे बगाल

म भयकर अकाल पडा जिसने वहा की लगभग एक तिहाई आबादी को लील लिया लेकिन उस साल तो कपनी ने और भी ज्यादा मुनाफा कमाया। हिदुस्तान की लूट इगलैड मे पूजी के आद्य सचय म एक महत्वपूर्ण कारक सिद्ध हुई और इस प्रकार उसने देश की औद्योगिक क्राति के क्रम को त्वरित किया।

अठारहवी सदी के नवे दशक के अत तक इगलैड म वस्त्र उद्योग की उन्नति के परिणाम अपने को बगाल मे अनुभूत करवाने लगे थे। कपनी ने भारत म कपडे के क्रय को कम कर दिया जिससे हजारो जुलाहे तबाह हो गये। जल्दी ही भारतीय सूत का आयात भी घटा दिया गया। हताशा के मारे दस्तकार गावो को लौटने लगे। वे गुजर के लिए जमीन को किसी भी शर्त पर कितने ही कमरतोड लगान पर काश्त करने के लिए तैयार थे। इसने सामती शोषण के प्रखर होने मे और भी अधिक योग दिया। बगाल के अकाल, कपनी द्वारा ब्रिटिश सरकार को ४ लाख पौड की निर्धारित वार्षिक राशि अदा न करना और कपनी के साथ असबद्ध अग्रेज वाणिज्यिक तथा औद्योगिक बूर्जुआजी का उसके विशेषाधिकारो के विरुद्ध सघर्ष – इन सभी ने विभिन्न मानाओ मे ब्रिटिश ससद के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप मे योग दिया। १७७४ के नियामक अधिनियम (रेग्यूलेटिग एक्ट) ने एक गवर्नर-जनरल के नियुक्त किये जाने की व्यवस्था की जिसके प्रति मद्रास और बबई के गवर्नर उत्तरदायी थे। गवर्नर-जनरल और उसकी परिषद के सदस्य ब्रिटिश ससद द्वारा नियुक्त किये जाते थे।

इस प्रकार कपनी व्यापारिक सगठन के नाते अपने एकाधिकार और अपने अधिकृत क्षेत्रो के बने रहने पर भी अब किसी हद तक ससदीय अधीक्षण के अतर्गत आ गयी। गवर्नर-जनरल नियुक्त होनेवाला पहला व्यक्ति वारेन हेस्टिंग्स था। उसके सुधारो ने बगाल की आबादी के बोझ को कम नही किया। प्रशासनाधिकारियो और कपनी के कर्मचारियो की सट्टाखोरी और अवैध मुनाफाखोरी के लिए अब भी काफी गुजाइश बनी रही।

मैसूर तथा मराठा राज्यमडल से युद्ध

दक्षिण म कपनी ने सैनिक सहायता सधियो के जरिये कर्णाटक को निचोड लेने म और फिर उसका अपने अन्य अधिकृत प्रदेशो म लगभग समामेलन करने म सफलता प्राप्त कर ली। उसने कुछ मराठा रियासतो को भी हथियाने की कोशिश की लेकिन इस दिशा म पहले सैनिक प्रयास को पूर्णत विफल कर दिया गया। कपनी का मैसूर राज्य अपनी प्रसारवादी योजनाओ के लिए

खतरा लग रहा था, जो सुलतान हैदरअली के शासनकाल म आर्थिक तथा राजनीतिक लिहाज़ से कही अधिक शक्तिशाली हो गया था। मैसूर कपनी को न सिर्फ रिआयत देन का ही अनिच्छुक था, वल्कि यह भी सोचता था कि मराठो के साथ सहवध वनाकर और फ्रासीसियो की सहायता से वह अग्रेजो को भारत से भगान म भी सफलता प्राप्त कर सकता है।

एक फ्रासीसी नौसैनिक वेडा मैसूर क तट के पास पहुच गया। इधर ब्रिटिश कपनी इगलैड से सहायता पर निर्भर नही कर सकती थी क्योकि उस समय वह अमरीकी स्वतत्रता सग्राम म उलझा हुआ था जिसम फ्रास स्पेन और नीदरलैड विद्रोहियो की मदद कर रहे थे। अपन स्वार्थसाधन क लिए एक वार फिर सामती अतर्विरोधो को भडकाकर कपनी एक सवसे वड मराठा राज्य ग्वालियर का दिल्ली के पास कुछ इलाका देने का वचन देकर अपन पक्ष म लान म सफल हो गयी और इसके वाद उसन १७८२ म मराठा राज्यमडल क साथ सधि कर ली। मैसूर ने हैदरअली के वेटे टीपू क नतृत्व म, जो उसके वाद गद्दी पर बैठा था और जिसे अग्रेज़ो से सख्त नफरत थी अग्रेजो के खिलाफ अपन सघर्ष को जारी रखा। १७८३ म सयुक्त राज्य अमरीका, फ्रास और स्पेन के साथ युद्ध जैसे ही समाप्त हुआ और फ्रासीसी वेडे को वापस वुला लिया गया कि अग्रेज़ो क लिए मैसूर के साथ निपटना सभव हो गया। मैसूर अभी तक अक्षत ही था और टीपू द्वारा किये गय सुधारो न जिन्होने शोषण के सामती स्वरूपो पर अकुश लगाया था रियासत को अधिक सुसहत वना दिया था। टीपू न अभी अग्रेजो को देश क वाहर निकाल देने की आशा को तजा नही था और उसन दूसरे राज्यो का इस प्रयास म सहायता देन के लिए तैयार करने की कोशिश की। टीपू न इस आशा मे क्रातिकारी फ्रास का समर्थन पाना चाहा कि अग्रेजी और फ्रासीसी स्वार्थो का टकराव उसके लिए सहायक सिद्ध होगा। इधर ईस्ट इडिया कपनी न जो इस वीच मैसूर को शेष भारत से काट देने म सफल हो गयी थी अपन अधीनस्थ हैदरावाद राज्य की सेवाओ का उपयोग करते हुए अन्य भारतीय राज्यो को यह वताया कि मैसूर का सुदृढीकरण उनके लिए खतरनाक होगा और मैसूर के पराजित होने पर उसके हिस्से उन्ह देन का वचन दिया। मैसूर के प्रतिरोध को कुचलन के लिए कपनी को दो महगी लडाइया लडनी पडी जिसके वाद १७६० म वह ईस्ट इडिया कपनी मराठा और हैदरावाद की सयुक्त सेनाओ क निर्मम प्रहारो का शिकार हो गया। दो साल की लगातार लडाई क वाद टीपू पर एक सधि थोपी गयी जिसके अनुसार उसे अपनी आधी रियासत को त्यागना पडा। लेकिन फिर भी मैसूर का जितना हिस्सा भी वच रहा वह अव भी स्वतत्र ही था और टीपू तथा उसक प्रजाजन इस स्वतत्रता की रक्षा करन क लिए कृतसकल्प थे।

फ्रासीसी क्राति के बाद, जब एशिया मे प्रभुता के लिए आग्ल फ्रासीसी प्रतिद्वद्विता कही अधिक सगीन हो गयी, तो अग्रेजो को पूर्वी हैदराबाद, मैसूर तथा मराठा राज्यो मे बढते फ्रासीसी प्रभाव से बहुत घबराहट हुई। टीपू ने क्रातिकारी फ्रास के साथ मैत्री स्थापित करने का प्रयास किया और अग्रेजो ने मैसूर पर एक बार फिर और इस बार भी हैदराबाद की सहायता से ही हमला करने के लिए इसी प्रयास को बहाना बना लिया। इस असमान सघर्ष मे मैसूर की निर्णायक पराजय हुई। राजधानी श्रीरगपट्टम के प्राचीरो के सामने वीरतापूर्वक लडता हुआ टीपू खेत रहा और शहर को बाद मे आक्रमणकारियो ने लूट लिया, जिन्होने राज्य के एक और बडे हिस्से को भी दबोच लिया। मैसूर के सिहासन पर पुराने—हैदरअली से पहलेवाले—राजवश के एक अशक्त ६ वर्षीय बालक को बैठा दिया गया।

यद्यपि भारत का काफी भाग अब भी आजाद ही बना रहा, फिर भी अठारहवी शताब्दी के अत तक ब्रिटेन देश के सभी महत्वपूर्ण इलाको को अपने अधिकार मे ले चुका था और अपने सभी सभाव्य यूरोपीय प्रतिद्वद्वियो को देश के बाहर भगा चुका था। यह विराट उपमहाद्वीप एक ब्रिटिश उपनिवेश बन गया था।

सत्रहवीं-अठारहवीं सदियो का चीन

१६४४ मे मचूरी सामतो ने पेकिंग पर अधिकार करके मचूरिया के राजा को चीन का सम्राट घोषित कर नये मचू अथवा चिंग राजवश (१६४४-१९११) की स्थापना कर दी थी। इस घटना के परिणामस्वरूप युद्धो के एक लबे सिलसिले की शुरुआत हुई जो १६८३ तक चलते रहे। दक्षिणी सामतो ने एक बार फिर याग्त्सी से दक्षिण के प्रातो को अपने प्रतिरोध का गढ बनाया मगर १६४७ तक उन्हे कुचल दिया गया। अब प्रतिरोध आदोलन के केद्रक किसान और याग्त्सी नदी के दक्षिण तथा सीक्याग घाटी मे रहनेवाले गैरचीनी जन बने। सबसे कारगर प्रतिरोध दक्षिण-पश्चिमी प्रदेशो मे रहनेवालो ने पेश किया था जो मिग वश [illegible] मे इतना नही लड रहे थे जितना कि [illegible] [illegible] शासन के विरुद्ध अपनी स्वतत्रता के [illegible] पूर्व [illegible] सघर्ष चला, जहा चीनी किसानो ने त[illegible] [illegible] द्वीप के रहनेवालो के साथ कधे से क[illegible] [illegible] सामू[illegible] के सामूहिक विद्रो[illegible] [illegible]
मचूरिया के नि[illegible]
अत्र मध्य तथा द[illegible]

मचूरियो ने मिंग काल से आ रहे सामाजिक ढाचे म कोई परिवर्तन नही किये न उन्होंने हान भूस्वामियो को अपनी आय के साधनो या विशेषाधिकारो से ही वंचित किया। मिंग युग की समाप्ति के समय कृषक समुदाय के स्तरीकरण की जो प्रक्रिया शुरू हुई थी उसके फलस्वरूप छोटे तथा मझोले भूस्वामियो के एक वर्ग का उदय हुआ जो सत्रहवी शताब्दी के अत तथा अठारहवी शताब्दी के आरभ तक एक सुस्पष्ट सामाजिक समूह का निर्माण कर चुका था, जिसकी छोटी तथा मझोली जागीरे निजी सपत्ति थी। पुराना प्रशासनतत्र अक्षत बना रहा और इसी प्रकार परीक्षाओ की वह जटिल प्रणाली भी बनी रही, जो पदोन्नति के लिए आवश्यक थी और यह सुनिश्चित करती थी कि सभी राजकीय पद शक्तिशाली भूस्वामियो के क्षेत्राधिकार मे ही बने रहे। निजी ज़मीनो का काफी हिस्सा अब वशागत मचूरी अभिजातो, सेनानायको और बौद्ध मठो के हाथो म आ गया था। किसाना के एक हिस्से की भी अपनी निजी जमीन थी लेकिन शेष के पास – और उनकी सख्या बहुत बडी थी – ज़मीन या तो थी ही नही और अगर थी भी, तो इतनी नही कि उनके और उनके परिवारो के निर्वाह के लिए काफी हो। यद्यपि औपचारिक रूप मे वे स्वतत्र असामी काश्तकार बन रहे पर व्यवहार मे ऋणो और विभिन्न अन्य दायित्वो के जरिये ज़मीन के साथ आबद्ध थे। इनके अलावा भूदासो का वर्ग भी था जो सरकारी ज़मीनो की काश्त करता था (इन जमीनो की आय शाही परिवार राजदरबार और अगरक्षको के रखरखाव पर खर्च की जाती थी) लेकिन ये ज़मीन देश के कृष्ट क्षेत्र का अत्यत नगण्य भाग ही थी।

किसाना के शोषण मे महाजनो या साहूकारो की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण थी। उनकी वजह से चीनी कृषि के विकास म बडी बाधा पडी। गावो म पण्य द्रव्य सबधो के उदय ने विद्यमान ग्रामोद्योगो की व्यापकता और ग्रामीण क्षेत्रो मे नैसर्गिक अर्थव्यवस्था के प्रभाव के कारण पूजीवादी उत्पादन सबधो को तो जन्म नही दिया पर बडे पैमाने पर साहूकारी के प्रसार का पथ अवश्य प्रशस्त किया। नगरो म भी पूजीवादी उत्पादन सबधो का विकास धीरे ही हुआ। चिंग राजतत्र ने गावो म तो बस कठोर अनुशासन ही लागू किया, किन्तु नगरो मे व्यापारियो और शहरी दस्तकारो के कारबार पर काफी पाबदिया लगा दी, क्योकि वे मचूरी शासन के सख्त विरोधी थे। अत्यत कठोर पाबदिया लगाने के अलावा (जो स्वय ही शहरी विकास म अवनति लाने के लिए काफी नही थी जैसा कि तोकूगावाकालीन जापान के इतिहास से भी प्रकट होता है) मचूरी सामतो ने उनकी आर्थिक तथा राजनीतिक स्वतत्रता को भी बहुत सीमित कर दिया और इस प्रकार खनन तथा अन्य उद्योगो के विकास को अवरुद्ध किया। यद्यपि उत्साही सम्राट काग शी

(१६६२ १७२२) के शासनकाल मे व्याप्त राजनीतिक स्थिरता के
शिल्पो और व्यापार मे कुछ उन्नति हुई (उदाहरणार्थ, कपडा तथा
मिट्टी उद्योग) फिर भी इस प्रकार की सारी उन्नति सतत अवरोधा,
करो अनिवार्य प्रदायो और राजकीय उद्योग की प्रतिद्वद्विता के बावजू
हासिल की जा सकी थी। श्रेणी सगठना को राज्यतत्र मे समामेलित कर
गया था और जल्दी ही वे सिर्फ वित्तीय तथा निरीक्षणात्मक कृत्या के निव
बनकर रह गये।

व्यापार की हालत तो और भी ज्यादा खराब थी, क्योकि उसमे
हुए करो के अलावा अब राजकीय व्यापारिक सगठना और एकाधिक
(वैदेशिक व्यापार के एकाधिकार सहित) और आतरिक महसूलो, अ
ने और भी बाधाए खडी कर दी थी।

इन अवस्थाओ म साहूकारी का शहरी जिदगी और वाणिज्य म
व्यापक प्रसार हुआ। साहूकारो ओर मालगुजारो के कामो न आर्थिक विक
को अवरुद्ध करन म भी योग दिया। कितन ही नगर, जहा मचूरी तथा ची
सामतो के निवास और मचूरी सेनाओ की छावनिया थी मात्र सैनिक त
प्रशासनिक केद्र बनकर रह गये। कठोर सरकारी नियत्रण के लगाये जान
दस्तकारिया और व्यापार से जीविका अर्जन करनवाले नगरवासी अब महत्वही
हो गय। इस नियत्रण का मुख्य कारण यही हो सकता था कि इन काय
को करनवाले अधिकाश लोग चीनी ही थे जिन्हे सत्रहवी अठारहवी शताब्दिय
म मचू राजवश के शासन के अतगत दूसरे दरजे के नागरिक माना जाता
करता था। मचू सम्राटो न अपनी सत्ता के समर्थन का मुख्य आधार बनान
के लिए अल्पसख्य मचूरी आबादी को एक अलग ही सैनिक प्रशासक जाति
म परिणत करन का प्रयास किया। उन्होने मचूरिया को साम्राज्य का सबसे
विशेषाधिकारसपन्न भाग बना दिया जिसमे चीनिया को प्रवेश करन का
अधिकार भी नही था। मचूरिया और चीनिया के बीच सपर्क बढने म ज्याद
म ज्यादा बाधाए खडी की जाती थी और साथ ही चीनिया के आत्मसात्करण
के भरपूर प्रयास भी किय जात थ। लेकिन इस नीति की असफलता आरभ
म ही सुनिश्चित थी क्योकि चीनी मचूरिया की अपेक्षा सख्या म कही अधिक
थे और सास्कृतिक दृष्टि म अधिक उन्नत थ। इस नीति न देश की आर्थिक
उन्नति को अवरुद्ध किया।

समस्त प्रशासन व्यवस्था चिंग सम्राट मचूरी अभिजात वर्ग तथा
सेना के जिा की ओर ही लक्षित थी। सत्रहवी शताब्दी के अत और अठारहवी
के आरभ म चिंग शासन का मुख्य आधारस्तभ मचूरी सेना – तथाकथित अष्ट
ध्वज – थी जिसकी छावनिया साम्राज्य के सभी मुख्य नगरो म और
सीमाओ पर थी। इस सेना के अफसरो और सैनिको को सरकारी जमीन के

टुकडे दिय जाते थे जो असक्राम्य थे। इससे चीनिया और मचरियो म आथिक भेद और बढ गये, क्योकि मचूरियो का अपनी ज़मीनो पर मशर्त स्वामित्व होता था, जबकि चीनियो का निजी स्वामित्व। ऐसी स्थिति म दानो ममूहो क त्रमिक सम्मिलन (कृषि के क्षेत्र म) की प्रत्रिया न असत्राम्य अथवा "ध्वज" भूमियो के धीरे धीर चीनी सामतो और शक्तिशाली भूस्वामिया के हाथो मे अतरण मे अपने को अभिव्यक्त किया। इधर अधिकाधिक सख्या म चीनियो और मगोलो को मचूरी सेना मे भरती किया जा रहा था। अष्ट ध्वजा" के अतिरिक्त चीनी सैनिको से निमित प्रातीय हरित ध्वजाए भी अस्तित्व म आयी, यद्यपि वे अनुशासनहीन और अक्षम थी।

अपन मुख्य समर्थन के लिए मचूरी सेना पर निर्भर करत हुए जो इस बात के बावजूद उस समय एकमात्र कारगर सेना थी कि उसके हिता की अधिकाश चीनी आबादी के हितो क साथ कोई सामान्यता न थी मचू शासको न पुराने चीनी राज्यतत्र को बहाल किया। उन्होन सभी उच्च पद अतिविशिष्ट मचूरी अल्पसख्या क लिए आरक्षित कर दिये, जिसस चीनियो की उन्नति की कोई गुजाइश नही रह गयी। इस सारी व्यवस्था का प्रमुख स्वय सम्राट था जो असीमित सत्ता का उपभोग करता था। उसक नीचे एक राज्य परिषद और एक राज्य सचिवालय (जिसमे अधिकाशत मचूरी ही काम करते थे) तथा छ विभाग (उपचार कृत्यो वित्त पदा सामाजिक काय, न्याय तथा सैनिक मामलो के) थे। राजकीय नियत्रण का केंद्रीय निकाय दूसरे आधार पर काम करता था। प्रातो म सम्राट का प्रतिनिधित्व सूबेदार और विभिन्न मत्रालयो के निरीक्षक करत थे।

औपचारिक रूप मे केन्द्रीकृत होने पर भी यह व्यवस्था व्यवहार म देश के भीतर सचार साधनो के अभाव के कारण जल्दी ही विकद्रित हो गयी। प्रातीय सूबेदार स्वतत्र छोटे राजाओ की तरह शासन करते थे और प्रशासनाधिकारी मुख्यत तरह-तरह से पैसा ऐठने मे ही लग रहत थे। सभी प्रशासनाधिकारी अभिजात वर्ग की कतारो से भरती किय जाते थ और प्रशासनतत्र मे पदोन्नति एक जटिल परीक्षा प्रणाली पर आधारित थी।

अठारहवी शताब्दी का वैचारिक वातावरण और प्रशासनाधिकारियो द्वारा प्राप्त प्रशिक्षण कनफूशियस मत से अधिकाधिक प्रभावित होता चला गया। इस मत का प्रभाव ऐसे समय आम तौर पर बढता था कि जब सामती नौकरशाही का पलडा भारी होता था और जब जनसाधारण को राज्य क व्यापक शोषण का शिकार होना पडता था। चू सी के सुधारो क बाद अगीकृत स्वरूप म कनफूशियस मत को अधिकृत राजकीय विचारधारा बना दिया गया। अपन से श्रेष्ठो की आज्ञा क विनयपूवक पालन का सर्वोच्च नैतिक सिद्धात के रूप मे प्रचार करनवाला यह मत एक बार फिर चीन क सामती

शासको को सर्वाधिक स्वीकार्य सिद्ध हुआ। समाज की अपरिवर्तनीयता तथा आज्ञाकारिता की वाछनीयता की कनफूशियसपथी धारणाए उस काल के अधिकृत साहित्य, शिक्षा प्रणाली और राजकीय नीतिया म व्याप्त हैं। उस समय की सभी विरोधी प्रवृत्तिया चाहे प्रत्यक्षत अथवा परोक्षत कनफूशियस पथ की आलोचना करती थी। साहित्य और विद्या के क्षेत्र मे प्रचड सघर्ष चला जिसम मचूरियो और उनके समर्थको को सैनिक सघर्ष के मुकाबले कही बाद म जाकर ही कामयाबी मिल सकी, लेकिन फिर भी व कभी पूर्णत सफल नही हो सके। उस काल के सभी प्रगतिशील विचारको ने अपने दार्शनिक विचारो के अत्यधिक वैभिन्य के बावजूद मचूरियो द्वारा चीनियो के उत्पीडन का और जनसाधारण के आर्थिक तथा राजनीतिक उत्पीडन का विरोध किया। इसके कारण उनके शुद्धत दार्शनिक विचार भी मध्ययुगीन चीनी दर्शन मे प्रगतिशील विचारो की क्रमिक उन्नति के परिचायक होने के नाते दिलचस्पी की चीज है।

काग शी के शासनकाल मे चिग साम्राज्य और उसके सामाजिक आर्थिक तथा सास्कृतिक स्वरूपो के सुदृढीकरण की प्रक्रिया अपने चरम पर पहुची। कराधान प्रणाली के सुधारे जाने और कई अवैध वसूलियो के अस्थायी तौर पर रोके जाने तथा आतरिक लडाइयो के धीरे धीरे कम होने के परिणामस्वरूप किसी हद तक आर्थिक बहाली हुई और कृषि उत्पादन में वृद्धि होने के साथ-साथ आतरिक व्यापार तथा शहरी दस्तकारियो की भी उन्नति हुई। यद्यपि ये प्रक्रियाए कठोर नियमपालन और घोर शोषण की पृष्ठभूमि मे हुई फिर भी सत्रहवी सदी के अत तक देश की स्थिति म सुस्पष्ट सुधार नजर आने लगा। इसके साथ साथ आर्थिक स्थिति मे सुधार आया राजकोष की परिपूर्ति हुई नगरो का प्रसार हुआ और सास्कृतिक उन्नति हुई।

सत्रहवी शताब्दी के उत्तरार्ध मे यूरोप के साथ अधिक सपर्क स्थापित हुए और कई यूरोपीय आविष्कारो को अपनाया गया विशेषकर शस्त्रास्त्र और जहाजरानी क क्षेत्र मे, जो चीन मे मचूरी सत्ता के सुदृढीकरण के लिए महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए। मचूरी अभिजातो के अपने को चीनी सस्कृति से अवगत करवाने के व्यापक आदोलन मे भी इसी लक्ष्य का अनुगमन किया गया था जो काग शी के शासनकाल मे सरकारी नीति का अग बन गया था। चीन के विजेताओ द्वारा की गयी सास्कृतिक प्रगति (चीनियो के साथ उनके घुलने मिलन के निषेध के बावजूद) का उद्देश्य मचूरिया द्वारा चीनी सस्कृति के अगीकरण को रोकना ही नही बल्कि सम्राट की राय म यह सुनिश्चित करना भी था कि राज्यतत्र क उच्चतर सोपानो म शिक्षित चीनी अधिकारियो को रखा जाय। मचूरिया की प्रभावी स्थिति, जिसे काग शी एक बौद्धिक आधार प्रदान करना चाहता था अदालता म उनकी विशेषाधिकारसपन्न

स्थिति की वजह स और भी पुष्ट हो जाती थी, जहा बिलकुल एक मे अपराधो के लिए भी चीनी अपराधियो को ज्यादा सख्त सजाए दी जाती थी। इस आदोलन के साथ साथ चीनियो के 'मचूरीकरण' की नीति का भी अनुसरण किया जाता था। उदाहरण के लिए और बातो के साथ-साथ चीनियो को भी मचूरियो की ही तरह लबी चोटिया रखनी पडती थी।

बढी हुई राजनीतिक तथा आर्थिक स्थिरता ने विदेश व्यापार की वृद्धि तथा विदेशी सपर्को के प्रसार को बढावा दिया और अपनी बारी मे इसने अब चिग साम्राज्य के सम्मुख उन्मुक्त आक्रामक विदश नीति का अनुगमन करने के अवसरो का पथ प्रशस्त किया। विदेश व्यापार मार्ग कैंटन के जरिये दक्षिण और मगोलिया के जरिय उत्तर – दोनो ही तरफ जाते थे। दक्षिण म अरब, भारतीय और पश्चिमी यूरोपीय व्यापारियो क साथ व्यापार होता था और उत्तर मे रूसी व्यापारियो तथा रूमी राज्यो के साथ। रूस काच कपडे और समूर का निर्यात करता था और चीनी चाय, गन्ने की शकर चीनी मिट्टी के सामान, आदि का आयात करता था। व्यापार काफिलो क जरिये किया जाता था, क्योकि चीन मे कोई स्थायी रूसी प्रतिनिधि नही था। इसके विपरीत दक्षिण मे पुर्तगाली (मकाओ मे) अग्रेज (कैटन म) फ्रासीसी (निग्पो मे) और डच पहले ही मजबूती से पाव जमा चुक थे। सभी तरह के नियत्रणो की अवहेलना करते हुए ये व्यापारी पादरियो की मिलीभगत से भी चीनियो के साथ व्यापार किया करते थे। राज्य के आतरिक मामला मे पश्चिमी यूरपीया के हस्तक्षेप को रोकन क प्रयास म सरकार न कानून बना कर उनका सरकारी व्यापार एकाधिकार का उपभोग करनेवाली को हाग कपनी के प्रतिनिधिया के अलावा और किसी के साथ व्यापार करना निषिद्ध कर दिया।

शाही सरकार की इस नीति ने राजनयिक तथा सास्कृतिक सपर्को के प्रसार मे बाधा डाली और सामान्य राजनयिक सबधो को असभव बना दिया। डच, पुर्तगाली तथा अन्य दूत मडलो को चीन स खाली हाथ लौटना पडा। अलगाव की इस नीति न रूसी चीनी सबधो को भी बहुत हानि पहुचायी यद्यपि कुल मिलाकर इन महादेशो के बीच सबध कुछ और तरह स ही विकसित हुए। राजनयिक सबध स्थापित करने म असफल रहन क बाद पश्चिमी यूरोपीय शक्तिया ने कुछ समय के लिए चीनी सम्राटो के साथ मल करन क अपन प्रयासो को बद कर दिया। बोइकोव तथा पेर्फील्यव के नतृत्व म भज रूसी दूतमडल (१६५४-१६५६ तथा १६५८) भी खाली हाथ ही लौट। तथापि स्पफारी क दूतमडल (१६७५ १६७७) न जिसकी यात्रा का अत सम्राट स भेट के साथ हुआ था इस बात क बावजूद कि वह काइ खास समझौता सपन्न न कर पाया किसी हद तक इस दिशा म भावी विकास का पथ अवश्य

प्रशस्त किया, क्योकि दोनो ही पक्षो ने सबधो को सामान्य करने मे अपनी दिलचस्पी प्रकट की।

इस समय तक दक्षिणी तथा पूर्वी साइबेरिया की स्थानीय आबादी रूस के प्रभुत्व को स्वीकार कर चुकी थी। मगर सत्रहवी शताब्दी के उत्तरार्ध से चिंग राजवश की आक्रामक आकाक्षाए इस इलाके के लिए, खासकर मचूरिया से लगे भागो के लिए खतरा बनने लग गयी। १६८४ मे तोपखाने और पश्चिमी यूरोपीय विशेषज्ञो के साथ मचूरी सेनाओ के एक बडे दस्ते ने साम्राज्य के उत्तरी सीमात को पार करके आमूर नदी के तट पर रूसी बस्तिया के केंद्र अल्बाजिन के कज्जाक किले को घेर लिया। छोटी सी दुर्गरक्षक सेना ने बार बार के हमलो को विफल कर दिया और एक बार, जब नगर सचमुच नष्ट हो गया, तो नगरवासियो ने कुछ ही समय के भीतर उसका पुनर्निर्माण कर लिया। १६८६ मे मचूरी सेनाओ ने शहर के चहु ओर परकोटा खडा कर दिया लेकिन वे फिर भी उसे कब्जे मे न ले सकी। ये झडप चल ही रही थी कि एक और रूसी दूतमडल – इस बार गोलोवीन के नेतृत्व मे – व्यापार वार्ता का अगला सिलसिला शुरू करने के लिए मचुओ द्वारा रास्ते मे खडे किये सारे अवरोधो के बावजूद चीन पहुचा। अल्बाजिन मे अपने चुने हुए सैन्यदलो की असफलता ने सम्राट को उत्तरी पडोसी के प्रस्तावो के प्रति अधिक यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाने और गोलोवीन के साथ वार्ता के लिए अपने प्रतिनिधि भेजने को विवश कर दिया। ये वार्ताए बहुत ही तनावभरे वातावरण मे हुई क्योकि सम्राट ने इस बीच वार्तास्थल – नेरचिन्स्क – के समीप १५,००० सैनिक जमा कर लिये थे। फिर भी २७ अगस्त १६८६ को रूस और चीन के बीच नेरचिन्स्क की सधि पर हस्ताक्षर हो ही गये, जिसमे दोनो देशो के व्यापारिक सबधो को ही नही बल्कि प्रादेशिक प्रश्नो और सीमात के दोनो ओर के झगडो के साथ व्यवहार की बातो को भी लिया गया था। इस रूसी चीनी सधि ने दोनो शक्तियो के बीच सबधो के सामान्यीकरण को सभव बना दिया।

रूस ने इस समझौते को स्वीकार कर लिया, क्योकि उसके लिए अपने निकटवर्ती पडोसी के साथ सामान्य सबध अपरिहार्य थे। रूस के साथ व्यापारिक तथा राजनयिक सबध स्थापित करने की आवश्यकता को चिंग सम्राटो ने बाद के वर्षो मे भी स्वीकार किया – चीन को पश्चिमी यूरोप के सपर्क से यथासभव अलग रखने के साथ साथ मास्को से व्यापार, वार्ताओ और राजदूतो का विनिमय चलता रहा। दो और सधिया पर हस्ताक्षर किये गये (१७२७ मे बूरीन्स्क और १७२८ मे क्याख्ता मे) जिनमे कई स्थानो पर सीमात विवादो का स्पष्टीकरण किया गया जिन्हे नेरचिन्स्क की सधि मे नहीं लिया गया था और व्यापार के तरीके तथा राजनयिक विनिमय के नियमो का निर्धारित

किया गया। इसी समय पेकिंग मे पहला – यद्यपि अर्धसरकारी ही – स्थायी रूसी प्रतिनिधिमडल भी पहुचा। यह एक धार्मिक मिशन था जो साथ ही राजनयिक तथा व्यापारिक कृत्यो का भी निष्पादन करता था। इस मिशन के कर्मियो न चीन के अध्ययन म और रूसी-चीनी सबधो के विकास म महत्वपूर्ण योगदान किया। भौगोलिक सामीप्य और परस्पर लाभ के सिद्धात के आधार पर दोनो देशो के बीच व्यापार अठारहवी शताब्दी के मध्य तक प्रसार करता रहा।

अपनी प्रसारवादी आकाक्षाओ को पूरा करन के लिए मचूरी तथा चीनी सामतो न अपना ध्यान अब पश्चिम की तरफ मोडा। १६६१ म खाल्खा कवीला के मगोली राजाओ न चीनी प्रभुता को स्वीकार कर लिया। १७१५ मे मचूरी सेनाओ ने ओइरात-जुगार खानशाही (वर्तमान सिक्याग प्रात मे) पर हमला किया। इससे एक कटु सघर्ष का आरभ हुआ जिसे अठारहवी सदी के छठे दशक तक चलना था। उसके दौरान चिंग सेनाओ ने जुगारो को तिब्बत से भी निकाल दिया और उसे अपने नियत्रण मे ले लिया जिसके बाद तिब्बती राजधानी ल्हासा मे एक चीनी गैरिजन तैनात कर दी गयी। ये लडाइया विजय अभियानो की एक पूरी श्रृखला के आरभ की द्योतक थी। लेकिन जहा काग शी के शासनकाल मे सत्रहवी शती के अत तथा अठारहवी शती के आरम्भ के युद्धा ने सामती साम्राज्य का तलोच्छेदन नही किया वहा सम्राट युग चग (१७२३-१७३५) और विशेषकर चिएन लुग (१७३६ १७९६) के अधीन उनके सिलसिले ने निर्माण परियोजनाओ तथा दरबारी औपचारिकताओ पर निरथक अपव्यय विदेशी व्यापार मे कमी और सामाजिक प्रतिक्रियावाद म वृद्धि के साथ मिलकर आतरिक अतर्विरोधा को विषम बनाया और काफी असतोष पैदा किया। चिंग राज्य के सैनिक सामती तत्र म कमजोरी के पहल चिह्न अठारहवी सदी के आरभ मे ही प्रकट होने लग गये थ। अपन शासनकाल के प्रारभिक वर्षो मे युग चेग ने उन रेहन रखी जमीनो को जिन पर पहले मचूरी ' अष्ट ध्वज " सेना के अफसरा और सैनिका का स्वामित्व था खरीदकर फिर मचूरी अफसरो और सैनिको को उनकी सेवा के एवज म दे दिया था। यह किसी हद तक सेना को सुदृढ करने म सहायक हुआ क्योकि सैनिक परिषद को प्रदत्त अधिकारो की वृद्धि ने राजकीय प्रशासनतत्र मे सैनिक नताओ की स्थिति को मजबूत बना दिया था। उस समय केद्रीकरण बढान के अभियान के परिणामस्वरूप यूरोपीय जेसुइट पादरियो को देश से निकाल दिया गया और यूरापीय व्यापारियो की गतिविधियो पर पाबदिया लगा दी गयी। युग चग की नीति का उसके उत्तराधिकारी चिएन लुग ने अनुसरण किया जिसके शासनकाल म प्रसारवादी विदेश नीति पहले से भी अधिक सुस्पष्ट थी और प्रतिक्रिया की जड और भी गहरी हुइ। अपनी बारी म इसन चीनी किसाना

मे असतोप पैदा किया, जिन्हे इन युद्धो के भार को सहना पडता था और उन गैरचीनी लोगो म, जिन्हे हाल ही म साम्राज्य मे मिला लिया गया था और उन लोगो म प्रतिरोध जगाया, जिनकी पारपरिक स्वायत्तता को ही मिटा दिया गया था। मचूरिया के आत्मसात्करण अभियानो के साथ-साथ करो के बाझ म भी वृद्धि हुई।

चिएन लुग के शासनकाल मे आइरात-जुगार खानशाही के खिलाफ़ लडाइया और भी भीपणतापूर्वक चलायी गयी। खुले तौर पर सहार युद्ध मे प्रवृत्त चिग सेनाए १७५७ तक जुगारिया को जीतन म सफल हो गयी, जिसके फलस्वरूप आवादी के एक वहुत वडे हिस्से न भागकर मध्य एशिया मे शरण ले ली। इसके वाद साम्राज्य के मध्यवर्ती प्रदेशो से चीनियो और मचूरियो को लाकर सिक्याग मे वसाया गया ताकि केद्रीय सरकार के प्रति शत्रुभाव रखनेवाली विदेशी जाति क इलाके पर चिग नियत्रण को मजबूत किया जा सक। जुगारिया की विजय के दस वर्ष वाद बर्मा के आवा राज्य पर आक्रमण किया गया (१७६६ म और फिर १७६६-१७७० मे), किंतु इस अभियान का अत चिग सेनाओ की पराजय क साथ हुआ और इसी प्रकार बाद म वियतनाम क विरुद्ध अभियान (१७८८ १७६०) भी असफल रहा। अठारहवी शताब्दी क उत्तरार्ध तक चिग साम्राज्य की सैनिक शक्ति म गभीर कमजोरी आ चुकी थी। खानावदोश खानशाहियो पर पूर्ण विजय प्राप्त करने म चालीस साल लग गये और हिदचीन के विकसित सामती राज्यो के साथ युद्ध म साम्राज्य को द्रुत पराजयो का सामना करना पडा। अत म चिएन लुग ने अपन दुर्बल पडोसी नेपाल पर हमला करने का निश्चय किया (१७६२), जो उस समय तिव्वत क साथ लडाई म उलझा हुआ था। इस छोटे से पर्वतीय राज्य क कड़े प्रतिरोध को कुचल दिया गया और नपाल चीन का परिरक्षित राज्य वन गया।

चिएन लुग के महग युद्धो ने साम्राज्य के सीमातो को वढाकर उसम निजन वजर और पहाडी इलाको को शामिल कर लिया जिससे चीन की अथव्यवस्था को कोई अधिक लाभ नही हुआ। शानदार महलो के निर्माण न भी राजकोप का काफी भाग खा लिया। किसानो न जिन्हे सरकारी वसूलियो और फौजी भरतियो न निचोडकर रख दिया था और गैरचीनी जातियो न (जो साम्राज्य क आधे स अधिक भाग पर रहती थी) जिन्हे चिग सम्राटो क पूर्ववतियो क जमाने स भी अधिक भारी करो और कठोर आत्मसात्करण अभियानो का शिकार होना पडता था अपने को अत्यधिक कठिन स्थिति म पाया। नैर्धन्यग्रस्त किसान अपनी छोटी छोटी जमीन बडे और छोटे जमीदारो को बेचने क लिए विवश हो गये जिन्होन जल्दी ही इन जमीन क ४० ६० प्रतिशत भाग को कब्जे म ले लिया। अपन मालिको की जमीनो म रध असामी काश्तकार अक्सर लगान की स्थिति म नही

होत थे और कृषि मे उत्पादिता गिरती ही जा रही थी। करदाताओ के मुख्य ममूह के इस बढते हुए दैन्य को कम करने के राज्य क एक प्रयास (१७८६ म इस आशय की आज्ञप्ति निकाली गयी थी कि कगालीग्रस्त किसाना से खरीदी हुई जमीन वापस कर दी जाये) से स्थिति म कोई सुधार नही आया। भूस्वामियो और साहूकारो ने गैरचीनी आबादीवाले इलाका मे भी निर्धन किसानो की ज़मीनो को खरीदना शुरू कर दिया जहा खासकर निष्ठुर तरीके अपनाये गये। स्थानीय सामतो और कुछ जगहा पर कबायली कुल नताओ तक के स्थान पर केंद्रीय सरकार के मचूरी अधिकारी नियुक्त कर दिये गये, जो स्थानीय लागा को बडी हिकारत क साथ देखते थ और उनके रीति रिवाज और परम्पराओ को समझने की जरा भी काशिश नही करत थे।

नगरो म और शहरी व्यापारियो तथा दस्तकारा की हालत इतनी गभीर नही थी। अपनी सना, प्रशासनतत्र और एकीकृत कानूनी व्यवस्था क साथ इस विराट साम्राज्य न जल्दी ही एक स्थिर घरलू मडी उपलब्ध कर दी थी। नगरो मे व्यापार और उद्योग का प्रसार हुआ और शहर बढे। १७५७ म मकाओ के सिवा सारे साम्राज्य मे यूरोपीयो के साथ मुक्त व्यापार पर जो प्रतिबध लगाया गया, उसका मतलब यह था कि स्वदशी मडी पूणत चीनी व्यापारियो के ही हाथो म आ गयी, हालाकि इस प्रतिबध के फलस्वरूप विदेशी व्यापार मे काफी कमी भी आयी। सामती राज्यतत्र क कठार नियत्रण द्वारा उत्पन्न अवरोधो के बावजूद उजरती श्रम का उपयोग करनवाले निजी विनिमाता भी धीरे-धीरे पैदा होने लगे व्यापार का प्रसार हुआ और पण्य द्रव्य सबध ग्रामीण उत्पादन के सभी क्षेत्रो मे व्याप्त हो गये और नवविजित प्रदशो के साथ-साथ गैरचीनी आबादीवाले उन इलाका म भी फैल गये जहा सामूहिक आत्मसात्करण की नीति चीनी व्यापार और सूदखोरी की वृद्धि क लिए काफी अवसर प्रदान करती थी। नगरो मे पूजीवादी उत्पादन प्रणाली क तत्व पैदा होन लगे किंतु सामती राज्य अभी किसी भी प्रकार कमजोर नही हुआ था और सपूर्ण चीनी समाज म अब भी सामती सबधो का ही प्राधान्य था।

सत्रहवी शताब्दी म व्याप्त जटिल तथा अतर्विरोधी अवस्थाआ म चीनी कला तथा सस्कृति न एक निश्चित गूढता और आडबरपूर्णता का प्रदर्शन किया जो मचूरी शासक गुट के जिसने चीनी सांस्कृतिक परपराआ म कोई नया यागदान नही किया था, अपन को अलग ही रखन और शासक वर्ग की हैसियत स अपनी विशिष्ट सस्कृति को महत्व प्रदान करन के प्रयासो का प्रतिबिबित करती थी। अठारहवी शताब्दी मे चीन म विज्ञान क क्षत्र म मुख्यतया सकलन कार्य ही किया गया। इस काल क साहित्य की सबस बडी विशेषता कहानिया और भूतप्रेत तथा चमत्कार कथाए थीं। शैलीगत परिष्करण

म असतोष पैदा किया जिन्हे इन युद्धो के भार को सहना पडता था और उन गैरचीनी लोगो मे जिन्हे हाल ही मे साम्राज्य मे मिला लिया गया था और उन लोगो मे प्रतिरोध जगाया, जिनकी पारपरिक स्वायत्तता को ही मिटा दिया गया था। मचूरिया के आत्मसात्करण अभियानो के साथ-साथ करो के बोझ मे भी वृद्धि हुई।

चिएन लुग के शासनकाल मे आइरात-जुगार खानशाही के खिलाफ लडाइया और भी भीषणतापूर्वक चलायी गयी। मुख्य तौर पर सहार युद्ध मे प्रवृत्त चिंग सेनाए १७५७ तक जुगारिया को जीतने मे सफल हो गयी जिसके फलस्वरूप आबादी के एक बहुत बडे हिस्से ने भागकर मध्य एशिया मे शरण ले ली। इसके बाद साम्राज्य के मध्यवर्ती प्रदेशो से चीनियो और मचूरियो को लाकर सिक्याग मे बसाया गया ताकि केद्रीय सरकार के प्रति शत्रुभाव रखनेवाली विदेशी जाति के इलाके पर चिंग नियत्रण को मजबूत किया जा सके। जुगारिया की विजय के दस वर्ष बाद बर्मा के आवा राज्य पर आक्रमण किया गया (१७६६ मे और फिर १७६६-१७७० मे) किंतु इस अभियान का अत चिंग सेनाओ की पराजय के साथ हुआ और इसी प्रकार बाद मे वियतनाम के विरुद्ध अभियान (१७८८-१७९०) भी असफल रहा। अठारहवी शताब्दी के उत्तरार्ध तक चिंग साम्राज्य की सैनिक शक्ति मे गभीर कमजोरी आ चुकी थी। खानाबदोश खानशाहियो पर पूर्ण विजय प्राप्त करने मे चालीस साल लग गये और हिदचीन के विकसित सामती राज्यो के साथ युद्ध मे साम्राज्य को द्रुत पराजयो का सामना करना पडा। अत मे चिएन लुग ने अपने दुर्बल पडोसी नेपाल पर हमला करने का निश्चय किया (१७९२), जो उस समय तिब्बत के साथ लडाई मे उलझा हुआ था। इस छोटे से पर्वतीय राज्य के कडे प्रतिरोध को कुचल दिया गया और नेपाल चीन का परिरक्षित राज्य बन गया।

चिएन लुग के महगे युद्धो ने साम्राज्य के सीमातो को बढाकर उसमे निर्जन बजर और पहाडी इलाको को शामिल कर लिया, जिससे चीन की अर्थव्यवस्था को कोई अधिक लाभ नही हुआ। शानदार महलो के निर्माण ने भी राजकोष का काफी भाग खा लिया। किसानो ने जिन्हे सरकारी वसूलियो और फौजी भरतियो ने निचोडकर रख दिया था और गैरचीनी जातियो ने (जो साम्राज्य के आधे से अधिक भाग पर रहती थी) जिन्हे चिंग सम्राटो के पूर्ववर्तियो के जमाने से भी अधिक भारी करो और कठोर आत्मसात्करण अभियानो का शिकार होना पडता था, अपने को अत्यधिक कठिन स्थिति मे पाया। नैर्धन्यग्रस्त किसान अपनी छोटी छोटी जमीन बडे और छोटे जमीदारो को बेचने के लिए विवश हो गये जिन्होने जल्दी ही कुल जमीन के ५०-६० प्रतिशत भाग को कब्जे मे ले लिया। अपने मालिको की जमीनो से बधे असामी काश्तकार अक्सर लगान देने की स्थिति मे नही

होते थ और कृपि म उत्पादिता गिरती ही जा रही थी। करदाताओ के मुख्य समूह के इस बढते हुए दैन्य को क्म करन के राज्य के एक प्रयास (१७८६ म इस आशय की आज्ञप्ति निकाली गयी थी कि कगालीग्रस्त किसाना से खरीदी हुई जमीन वापस कर दी जाये) से स्थिति म कोई सुधार नही आया। भूस्वामियो और साहूकारा न गैरचीनी आबादीवाले इलाको म भी निर्धन किसानो की जमीनो को खरीदना शुरू कर दिया, जहा खासकर निष्ठुर तरीके अपनाये गय। स्थानीय सामतो और कुछ जगहो पर क्बायली कुल-नताओ तक के स्थान पर केद्रीय सरकार के मचूरी अधिकारी नियुक्त कर दिये गये जो स्थानीय लोगो को बडी हिकारत क साथ दखत थ और उनके रीति रिवाज और परम्पराओ का समझने की जरा भी कोशिश नही करते थे।

नगरो म और शहरी व्यापारियो तथा दस्तकारो की हालत इतनी गभीर नही थी। अपनी सना, प्रशासनतत्र और एकीकृत कानूनी व्यवस्था के साथ इस विराट साम्राज्य ने जल्दी ही एक स्थिर घरलू मडी उपलब्ध कर दी थी। नगरो म व्यापार और उद्योग का प्रसार हुआ और शहर बढे। १७५७ म मकाओ के सिवा सारे साम्राज्य म यूरोपीयो के साथ मुक्त व्यापार पर जो प्रतिबध लगाया गया उसका मतलब यह था कि स्वदशी मडी पूणत चीनी व्यापारियो के ही हाथो म आ गयी हालाकि इस प्रतिबध के फलस्वरूप विदशी व्यापार मे काफी कमी भी आयी। सामती राज्यतत्र के कठोर नियत्रण द्वारा उत्पन्न अवरोधो के बावजूद उजरती श्रम का उपयोग करनवाले निजी विनिर्माता भी धीरे धीरे पैदा होने लग व्यापार का प्रसार हुआ और पण्य द्रव्य सबध ग्रामीण उत्पादन के सभी क्षेत्रो मे व्याप्त हो गये और नवविजित प्रदेशो के साथ साथ गैरचीनी आबादीवाले उन इलाको म भी फैल गय जहा सामूहिक आत्मसात्करण की नीति चीनी व्यापार और सूदखोरी की वृद्धि क लिए काफी अवसर प्रदान करती थी। नगरो म पूजीवादी उत्पादन प्रणाली क तत्व पैदा होने लगे किंतु सामती राज्य अभी किसी भी प्रकार कमजोर नही हुआ था और सपूर्ण चीनी समाज मे अब भी सामती सबधो का ही प्राधान्य था।

सत्रहवी शताब्दी म व्याप्त जटिल तथा अतर्विरोधी अवस्थाओ मे चीनी कला तथा सस्कृति न एक निश्चित गूढता और आडबरपूणता का प्रदर्शन किया जो मचूरी शासक गुट के जिसने चीनी सास्कृतिक परपराओ म कोई नया योगदान नही किया था अपन को अलग ही रखन और शासक वर्ग की हैसियत से अपनी विशिष्ट सस्कृति को महत्व प्रदान करन के प्रयासा का प्रतिबिंबित करती थी। अठारहवी शताब्दी मे चीन म विज्ञान क क्षेत्र म मुख्यतया सकलन कार्य ही किया गया। इस काल क साहित्य की सबसे बडी विशेषता कहानिया और भूतप्रेत तथा चमत्कार कथाए थी। शैलीगत परिष्करण

म ताइवान म और आठव तथा नव दशका म 'श्वत कमल' क नतृत्व म शातुग तथा हानान प्राता म। श्वत कमल समाज न १७६६ म देश क कद्रीय तथा पश्चिमी प्रदशा म, जहा मचूरिया और सामती भूस्वामिया क प्रति विरोध विशषकर प्रबल था जनविद्रोह भडकाया। विद्रोह को कुचलन क मचूरी सना क प्रयास असफल रह और अत म छाट तथा मझोल चीनी भूस्वामिया की सनाए ही १८०५ म जाकर बागिया को कुचल सकी। लेकिन १८१३ म ही 'श्वत कमल' समाज की एक और शाखा न फिर जनविद्रोह भडका दिया। साथ ही साम्राज्य क दक्षिणी भाग क तटवर्ती प्रदेशा मे छापामार आदोलन भी शुरू हो गया।

अठारहवी सदी क अत और उन्नीसवी क आरभ म चीन का एक प्रचड कृषि सकट स गुजरना पडा, जो गैरचीनी जातिया के विद्रोहा और कृषक गुप्त समाजा क सघष क कारण और भी सगीन हो गया था। इस स्थिति न कद्रीय सत्ता को कमजोर किया और अलग-अलग प्राता के शासक लगभग स्वतत्र हो गय। अठारहवी सदी क उत्तरार्ध म कई बडी लडाइया छिडी गयी और उन सभी का अत पराजय म हुआ। इन हालता म पश्चिमी यूरापीय शक्तियो क राजनयिक तथा वाणिज्यिक कार्यकलाप का काफी प्रसार हुआ और चीनी मडी म यूरोपीय तथा अमरीकी माला का रास्ता खालन क लिए अधिक दृढ प्रयास किय जान लग। इन शक्तिया म सबसे सक्रिय इगलैड था जो उस समय तक यूरोप म सबसे उन्नत औद्योगिक तथा व्यापारिक राष्ट्र बन चुका था। लकिन उसक विशष दूतमडल (१७९२ १७९३ और १८१६) कोई सफलता न प्राप्त कर पाये। इधर चीन मे अग्रेजी और अमरीकी व्यापार, और विशषकर अफीम क व्यापार का प्रसार भी चीनी प्रभुसत्ता की कीमत पर इन शक्तिया की स्थिति के सुदढीकरण को अनिवार्य बना रहा था। उपनिवशवादिया की भूख लगातार बढती चली जा रही थी। उसकी तुष्टि क लिए पहल चीन म पैर जमाना जरूरी था लेकिन चिग शासक उन्ह एसा करन से राकन के लिए हर सभव प्रयास कर रहे थे।

उस्मान साम्राज्य मे सकट

सत्रहवी शताब्दी के आरभ तक उस्मान साम्राज्य एक दुर्जय शक्ति था और उसन यूरोप तथा मध्यपूर्व म राज्य विस्तार की अपनी आक्रामक नीति छाडी नही थी। लेकिन इसक बाद पहल १६६४ म आस्ट्रियाइयो और हगरियाइया क हाथा और फिर आस्ट्रिया रूस, वेनिस तथा पोलैड के यूरोपीय सहवध के हाथो पराजय न साम्राज्य को कार्लोविटज़ तथा कुस्तुतुनिया की सधियो द्वारा उसे उसके काफी अधीनस्थ प्रदेशो से वचित कर दिया। अठारहवी

सदी म उस्मान साम्राज्य न रक्षात्मक दावपेच अपनाये, फिर भी वह अधिकाधिक प्रादेशिक तथा आर्थिक रिआयते देन के लिए मजबूर होता गया।

उस्मान साम्राज्य की सैनिक शक्ति म यह ह्रास उसकी फौजी जागीरदारी प्रणाली और जानिसार प्रणाली (जैनिजरी) म सकट और विघटन के साथ जुडी हुई थी। जागीरदार धीरे धीरे शक्तिशाली भूस्वामी बन गय थे और उनकी अपन रिसाला का लेकर शाही युद्धो म भाग लन की दिलचस्पी खत्म हा रही थी। पण्य द्रव्य सबधो का प्रसार, विदशी व्यापारियो क साथ जो सुलतान क दरबार और सामती पदानुक्रम की ऊपरी श्रेणियो क लिए ससार क सभी भागो स लाकर वैभव विलास का सामान मुहैया किया करत थे व्यापार का विकास, य सभी किसानो और दस्तकारो की महनत के फलो की बिक्री के फलस्वरूप ही सभव हो पाय थे। अपनी बारी मे इसक कारण किसानो का शोषण तज हुआ और वसूलियो तथा करो का बोझ बढा। परिणामस्वरूप जल्दी ही कृषि का ह्रास होने लगा। साम्राज्य की अधीनस्थ जातियो की हालत विशेषकर खराब थी, क्योकि व पूर्णत तुर्क सामतो और प्रशासनाधिकारियो की दया पर ही निर्भर थी। उन्ह अपन कौमी सामतो के साथ साथ तुर्क सामतो की भी सनको और वसूलियो का भी शिकार बनना पडता था। बाल्कन देशो की ईसाई आबादी का धार्मिक और राष्ट्रीय अल्पसख्यको के रूप म उत्पीडन किया जाता था और उन्ह आर्थिक शोषण क सामती स्वरूपो का शिकार भी होना पडता था।

बिचौलियो के जरिये पूर्व पश्चिम व्यापार ने साम्राज्य क बडे तटवर्ती नगरो म एक प्रभावशाली कांप्रेडोर (दलाल) बूर्जुआ वर्ग को जन्म दे दिया था जिसमे अधिकाशत यूनानी और अर्मीनी थे। बदरगाहो म भी विनिर्माणशालाए पैदा हो गयी थी। लकिन सुलतान का पूर्णत मनमाना और निरकुश शासन जिसम न तो उच्चतम राज्याधिकारियो के लिए और न ही उदीयमान बूर्जुआज़ी के लिए कोई सुरक्षा थी, और उसक साथ साथ कृषक जनसाधारण का दरिद्रीकरण पूजीवादी आर्थिक स्वरूपो के सुदढीकरण म बाधक था।

अठारहवी शताब्दी मे यूरोपीय राज्यो ने अपने पुराने कैपिटयूलशनो को यानी विदेशो के साथ व्यापार म अभिरुचिशील सुलतानो स विशेष समझौतो के अतगत प्राप्त विशेषाधिकारो तथा रिआयतो को अपन अपरदशीय अधिकारो और व्यापारिक प्रसार की स्थायी प्रत्याभूतियो म परिणत करन म सफलता प्राप्त कर ली। जल्दी ही यूरोपीय माल स्थानीय दस्तकारो की आजीविका और तुर्क विनिर्माणशालाओ क अस्तित्व के लिए खतरा बन गय। काप्रडोरो का जो व्यापारिक बिचौलियो क नाते अपना मुनाफा बटोरा करत थ विदशी पूजी की घुसपैठ म निहित स्वार्थ था। जानिसारी भी छोटे व्यापा

रिया और दस्तकारो के साथ प्रतियोगिता करने लगे। ये पशेवर पैदल सैनिक पहले सिर्फ ईसाइयो के खिराज मे लिये बेटे ही हुआ करते थे जिन्हे मुसलमान बना लिया जाता था और फिर बचपन से ही इस तरह शिक्षित किया जाता था कि व धर्माध और सुलतान के वफादार बन। उन्हे शादी करन या घरबार बसाने की आज्ञा नही थी और व कठोर सैनिक अनुशासन के अनुसार रहा करते थे। उन्हे ऊचे वेतन दिये जाते थ और वे करो स पूरी तरह से मुक्त थ। लेकिन सत्रहवी-अठारहवी सदियो तक जानिसारियो की अपनी सैनिक भूमिका मे दिलचस्पी खत्म हो गयी। उनम स बहुतो न अपन घरबार बसा लिये और व्यापार तथा शिल्पो म लग गये पर पहल की तरह अब भी व कोई कर नही अदा करते थे। इस विशेष सामाजिक सवर्ग की वृद्धि काफी हद तक उसकी दूसरी पीढी के पैदा होन के कारण हुई थी। जल्दी ही जानिसारी अधिकारपत्र बेचना एक आम रिवाज बन गया। इधर जानिसार वाहिनी धीरे-धीरे अपन सैनिक बाकेपन और दबदबे को खो बैठी थी और लगभग शाही अंगरक्षक दल जैसी ही बनकर रह गयी थी जिसमे बड रईसो और स्वय सुलतान के लिए ही एक खतरा पैदा हो गया था। जानिसारियो की बगावते रोजमर्रा की आम बाते बन गयी थी जो अप्रिय सेनानायको को बरखास्त किय जाने की माग उठाया करत थे और अकसर इन मागो को स्वीकार भी करवा लिया करते थे।

सामती शोषण की वृद्धि और बढते हुए करो न जो सामती अर्थव्यवस्था को कमजोर कर रह थे, जिसकी तुर्की म विद्यमान विशिष्ट अवस्थाओ क कारण पूजीवादी स्वरूपो द्वारा प्रतिस्थापना नही की जा सकती थी जनसाधारण म विरोध आदोलन पैदा कर दिया। १७३० म राजधानी म शहरियो का विद्रोह फूट पडा। इस विद्रोह का नता पत्रोन खलील नामक भूतपूर्व नौसैनिक था और अधिकारियो को उसे कुचलन म कई सप्ताह लग गय। साथ ही प्राय स्वतस्फूर्त किसान विद्रोह भी होन लग। इधर अधीनस्थ जातियो विशेषकर बाल्कन प्रायद्वीप की जातियो म राष्ट्रीय मुक्ति सघर्ष क पहल बीज भी फूटन लग गय थ। य सामतविरोधी तथा मुक्ति आदोलन मुस्लिम धर्मतत्र क उच्च सोपान के विरुद्ध भी लक्षित थ जो न केवल सुलतान और उसक अमीर उमरा क शासन को धार्मिक अनुज्ञा ही प्रदान करता था बल्कि साम्राज्य क एक बड भूस्वामी समूह का भी प्रतिनिधित्व करता था जिसके पास किसी भी प्रकार क करो म सर्वथा मुक्त बडी-बडी जागीर और रियासतें थी। इन कारको न इस सघर्ष म एक धार्मिक-साम्प्रदायिक तत्व भी प्रविष्ट करा दिया था।

केंद्रीय सत्ता क आर्थिक तथा राजनीतिक ह्रास न अधिक शक्तिशाली सामतो और स्थानीय शासको की पार्थक्यवादी आकाक्षाओ का रास्ता खोल

कर दिया जिससे साम्राज्य के पतन की प्रक्रिया और भी तेज हो गयी। साम्राज्य जितना ही कमजोर होता गया, यूरोपीय शक्तियों के लिए अपनी आर्थिक घुसपैठ को बढ़ाना और विभिन्न उस्मानी प्रदेशों को हथियाना उतना ही ज्यादा आसान होता चला गया।

अठारहवीं शताब्दी के रूसी-तुर्की युद्धों, और विशेषकर १७६८ १७७४ के युद्ध के परिणामस्वरूप रूस को काले सागर तक पहुंचने का रास्ता मिल गया जिससे तुर्की द्वारा अधिकृत तटवर्ती प्रदेशों ने उसे बहुत लंबे समय से वंचित कर रखा था। कुचूक काइनार्जी की संधि ने द्नीपर तथा बूग नदियों के बीच के इलाके रूस को लौटा दिये और क्रीमिया को एक स्वाधीन राज्य बना दिया जिसे आगे चलकर रूस को अपने में मिला लेना था। रूसी व्यापारिक जहाजों को काले सागर में जहाजरानी करने और बास्फोरस में होकर आने-जाने की आजादी प्रदान कर दी गयी। इधर रूस के जारों ने भूस्वामी वर्ग और व्यापारी वर्ग के दृढ समर्थन से दूर-दूर तक विजयों के और बोस्फोरस तथा कुस्तुनतुनिया पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के सपने देखना शुरू कर दिया था। इन आकांक्षाओं का अन्य यूरोपीय शक्तियों, मुख्यत इंगलैंड तथा फ्रांस के हितों के साथ टकराव होनेवाला था, जो खुद भी संपूर्ण बहुराष्ट्रीय उस्मानी साम्राज्य को अपने अधीन करने के सपने देख रहे थे और उसके विभिन्न भागों में घुसपैठ के लिए आपस में झगड भी रहे थे। उस्मानी साम्राज्य के भीतर यूरोपीय शक्तियों के परस्पर विरोधी स्वार्थों और प्रतिद्वंद्विता ने और एशिया तथा अफ्रीका में प्रसार की दीर्घकालिक योजनाओं के प्रसंग में उसके सामरिक महत्व ने समस्याओं का एक जटिल सिलसिला पैदा कर दिया, जो इतिहास में पूर्वी प्रश्न के नाम से प्रसिद्ध है।

सामंती सोपानिकी के अधिक दूरदर्शी प्रतिनिधियों ने सैनिक तथा प्रशासनिक सुधारों द्वारा साम्राज्य का सुदृढीकरण करने का प्रयास किया। लेकिन सुलतान सलीम तृतीय (१७८९ १८०७) और प्रतिभाशाली प्रशासक तथा सेनानायक बैरकदर पाशा द्वारा प्रवर्तित इस प्रकार के आरिजी सुधार पूर्णत निष्प्रभाव सिद्ध हुए।

लेकिन विनिर्माणशालाओं निर्माण कार्य और व्यापार में इस तरह के गतिरोध तो पहले भी आये थे, इसलिए इसका क्या कारण था कि १७८८-१७८९ में देश भर में असतोष की आग फैल गयी थी और लगातार आमूल परिवर्तन की आवश्यकता बल्कि अनिवार्यता, की बात ही चल रही थी?

न तो उद्योग तथा व्यापार की सकटमय स्थिति और न १७८८ का दुष्काल ही फ्रास में इस समय पैदा होनेवाले क्रातिकारी सकट के मुख्य कारण थे। उन्होंने तो बस उस सकट के लिए पलीते का काम ही किया, जो बहुत नव समय से भभकता आ रहा था। इस क्रातिकारी परिस्थिति के बुनियादी कारणों की जड कही ज्यादा गहरी थी।

विद्यमान व्यवस्था के प्रति राष्ट्रव्यापी असतोष को जन्म देनेवाला सबसे महत्वपूर्ण कारक यह था कि उस समय अभिभावी सामती निरकुशतावादी सामाजिक स्वरूप देश के विकास की आर्थिक सामाजिक तथा राजनीतिक अवस्था के अनुरूप नहीं रह गये थे।

फ्रास की आबादी का लगभग ९९ प्रतिशत तथाकथित तीसरे जनवर्ग (इस्टेट) में आता था जबकि अभिजात वर्ग और पादरी पुरोहित वर्ग से निर्मित विशेषाधिकारप्राप्त वर्गों में शेष १ प्रतिशत। फिर भी सारे देश में इन नगण्यसख्यक विशेषाधिकारप्राप्त वर्गों का ही बोलबाला था। ये लोग किसी भी प्रकार का कोई उत्पादक श्रम नहीं करते थे, किसानों के शोषण पर जीते थे राजकोष से अपनी जेबों को भरा करते थे और बादशाहत के समर्थन के मुख्य स्रोत थे।

तीसरा जनवर्ग कोई समाग या समजातीय वर्ग नहीं था। उसमें राजनीतिक सत्ता के आकाक्षी और आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली बूर्जुआ वर्ग के साथ साथ आबादी के विपुल बहुलाश का सरचक कृषक समुदाय भी था जो सामती शोषण का निढाल दास था और अतहीन वसूलियों से त्रस्त था, जिनसे भूस्वामियों, पादरियों और राजा की जेब भरती थी। इनके अलावा शहरी गरीब – सभी अधिकारों से वचित और दयनीय जिदगी जीनेवाले दारिद्रयग्रस्त मजदूर और कारीगर – भी थे। इन सभी वर्गों के हित और लक्ष्य सभी बातों में एकरूप नहीं थे फिर भी उनमें एक समानता थी, जिसने विशेषाधिकारसपन्न वर्गों के विरोध में इन विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधियों को गोलबद करने का काम किया, और वह थी उनका राजनीतिक अधिकारों से पूर्णत वचित होना और विद्यमान व्यवस्था को बदलने की उनकी आकाक्षा। न तो बूर्जुआ वर्ग न कृषक समुदाय और न ही शहरी सर्वहारा निरकुश सम्राटों के शासन को और सामती सामाजिक स्वरूपों को बरदाश्त करते रहने के लिए तैयार था। विद्यमान सामाजिक ढाचा उनके वर्ग हितों और देश के विकास के साथ मेल नहीं खाता था।

तीसर जनवर्ग क सदस्यो को चाह इसका अहसास रहा हो या न रहा हो, उनक देश क ऐतिहासिक विकास का अगला चरण अब पास आ ही गया था और यह चरण था सामतवाद से पूजीवाद मे सक्रमण जो उस जमाने मे समाज के अधिक प्रगतिशील स्वरूप का प्रतिनिधित्व करता था। अतिम विश्लेषण म उस समय के सभी प्रखर वर्ग अतर्विरोध इस सक्रमण की तरफ ही ले जा रह थे। ये अतर्विरोध इतने गहन थ और विद्यमान सामाजिक ढाचे के ऐसे अपरिहार्य अग थे कि अधिकारी जन-असतोष के चढते ज्वार का अत करना तो क्या उसे रोक भी नही सकते थे। फलस्वरूप फ्रास म क्राति एक ऐतिहासिक अनिवार्यता बन गयी थी।

स्टेट्स-जनरल का समाह्वान

जहा शहरो और देहातो के जनसाधारण इस बात को साफ कर रहे थे कि वे अब तक जिस तरह रहते आये ह, उस तरह और आगे न रह सकते है और न रहने के लिए तैयार ही है देश के कर्णधार – बादशाह और विशेषाधिकारसपन्न वर्ग – भी यह दिखा रहे थ कि व देश पर उस तरह शासन नही कर सकते जिस तरह अब तक करते आये थे।

राजदरबार और पहले दोनो जनवर्गों के अत्यधिक अपव्यय के कारण राजकोष की खस्ता हालत ने सगीन आर्थिक सकट पैदा कर दिया था। बादशाह क पास अब अपनी तात्कालिक आवश्यकताओ को पूरा करने के भी आर्थिक साधन नही थे। स्थिति को सुधारने के कई असफल प्रयासो के बाद बादशाह को स्टेट्स-जनरल – तीनो जनवर्गो क प्रतिनिधियो की सभा – का समाह्वान करने के लिए मजबूर होना पडा जिसे फ्रास मे १७५ साल से नही समाहूत किया गया था।

१७८९ के वसत मे देश के कई इलाको मे बढते जन असतोष और व्यापक सामाजिक अशाति की पृष्ठभूमि म ५ मई को वर्साई म स्टेटस जनरल का उद्घाटन हुआ। बादशाह लुई सोलहवे और उसके अनुचरो को यह आशा थी कि स्टेटस-जनरल की सहायता स वे जनता के विश्वास को फिर से प्राप्त कर लेगे अव्यवस्था को दबा सकेग और राजकोष को भरने के लिए आवश्यक धन प्राप्त कर सकेगे। उधर तीसरा जनवर्ग स्टेटस जनरल म बिलकुल भिन्न चीजो की आशा कर रहा था। उसे उसके समाह्वान म देश म भारी राजनीतिक परिवर्तनो की सभावना दिखायी दे रही थी।

पहले ही दिन से स्टेट्स-जनरल म अधिवेशन की कार्रवाइया और मतदान प्रक्रिया के बारे म तीसरे जनवर्ग और विशेषाधिकारप्राप्त वर्गो म टकराव शुरू हो गया। १७ जून को तीसर जनवर्ग क प्रतिनिधिया न अपन

आपको राष्ट्रीय सभा (नेशनल असेंबली) घोषित कर दिया और अन्य जनवर्गो के प्रतिनिधियो को उसमे शामिल होने के लिए आमन्त्रित किया। इस महत्वपूर्ण निर्णय के बाद राष्ट्रीय सभा फ्रासीसी जनता का सर्वोच्च प्रतिनिधिक तथा विधायी अंग बन गयी। लेकिन बादशाह ने, जिसे अभिजातो का समर्थन प्राप्त था, इस निर्णय को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। २० जून को उसने उस महल के दरवाज़ो पर ताले डलवा दिये, जिसमे सभा की बैठक हो रही थी। लेकिन राष्ट्रीय सभा के डेपुटी सम्राट के आदेशो को मानने के लिए तैयार नही थे। उन्हे एक लगभग खाली बडा सा कमरा मिल गया जिसे पहले टेनिस कोर्ट की तरह इस्तेमाल मे लाया जाता था और उन्होने आम लोगो की भीडो के जय-जयकार से प्रोत्साहित होकर उसमे अपनी बैठक शुरू कर दी।

२० जून को टेनिस कोर्ट मे इस स्मरणीय सभा मे राष्ट्रीय सभा के डेपुटियो ने सत्यनिष्ठतापूर्वक शपथ ली कि वे जब तक संविधान तैयार नही कर लेगे और उसकी पुष्टि नही कर लेगे, तब तक अधिवेशन को भंग नही करेगे और न किसी भी कारण अपने काम को ही रोकेगे।

बस्तील पर धावा क्राति का आरंभ

६ जुलाई को राष्ट्रीय सभा ने अपने को संविधान सभा घोषित कर दिया और इस प्रकार एक नयी सामाजिक व्यवस्था का प्रवर्तन करने और उसके सावैधानिक आधार को तैयार करने के अपने कर्तव्य की घोषणा कर दी। बादशाह को राष्ट्रीय सभा के इस निर्णय को स्वीकार करना पडा, जिसे वास्तव मे मंजूर करने की उसकी कोई मंशा न थी। बादशाह की वफ़ादार फौजो ने वर्साई और पेरिस मे इकट्ठा होना शुरू कर दिया। जनता और डेपुटियो ने बादशाह और उसके समर्थको की कार्रवाइयो को सदेह और घबराहट के साथ देखा और उन्हे वाजिब तौर पर राष्ट्रीय सभा के लिए खतरा माना। जब १२ जुलाई को यह सूचना दी गयी कि बादशाह ने नेकर को, जिसे सरकार मे सुधार का एकमात्र पैरोकार माना जाता था, बरखास्त कर दिया है और यह भी पता लगा कि पेरिस मे सैन्यदलो को इकट्ठा किया जा रहा है तो लोगो ने इस खबर को प्रतिक्रातिकारी शक्तियो द्वारा आक्रमण शुरू करने के निश्चय का सबूत ही समझा।

जल्दी ही शहर के रास्ते और चौक लोगो की भीडो से भर गये। जगह जगह शाही फौजो से टक्कर होने लगी और उनमे चली गोलियो ने जनरोष को और भी भडकाया। पेरिस के निवासी अपने आप ही मैदान मे उतर आये।
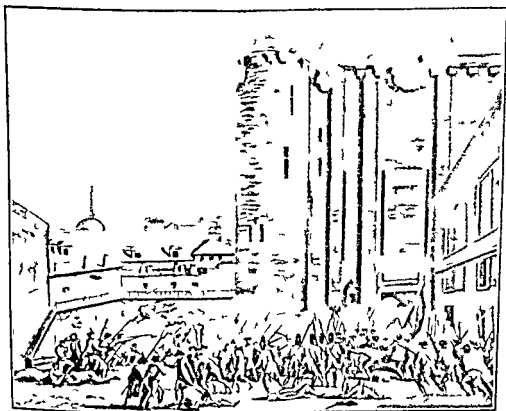
बस्तील पर धावा

१३ जुलाई की सुवह ही खतरे का बिगुल वज उठा और परिस के गरीब कुल्हाडो, पिस्तौलो और पत्थरा से लैस होकर सडको पर निकल आय। बढते बागियो क रेलो के सामन फौजो को एक क बाद दूसरे इलाक से पीछे हटना पडा और विद्राही सेना की सख्या लगातार बढती ही चली गयी। लोगा न जल्दी ही हथियारो की दूकानो और फौजी शस्त्रागारो पर कब्जा कर लिया और हजारो बदूके लूट ली।

१४ जुलाई की सुबह तक राजधानी का ज्यादातर हिस्सा बागिया के हाथा म आ चुका था लेकिन किलेवद वस्तील बदीगृह के आठो बुर्ज अब भी नगर के ऊपर निर्विकार खडे हुए थे। लोगो का एक क्रातिकारी आज न जकड रखा था, जिससे उन्होने इस अभेद्य दुर्ग पर धावा बोल दिया। दुर्ग की खाइयो, उठाऊ पुलो, रक्षक सना और तोपो का दखत बस्तील का सर करना असभव प्रतीत होता था। लेकिन क्राति पर उतर जनसाधारण क लिए कुछ भी असभव नही था। उनक पक्ष म आय तोपचिया न गोलाबारी

की और एक उठाऊ पुल की जजीरो को तोड दिया। लोग जल्दी ही भीतर जा घुस। दुर्ग का नायक मारा गया और उसके सैनिको न हथियार डाल दिये। बस्तील का पतन हो गया।

१४ जुलाई के दिन बस्तील की विजय विद्रोही जनता की एक ज़बरदस्त जीत थी। यह महान तिथि फ्रासीसी क्राति के आरभ की द्योतक थी। उस दिन से निर्णायक क्रातिकारी शक्ति, आम जनता, ने अपन भूतपूर्व स्वामियो के साथ युद्ध करना शुरू किया और आनेवाले महीनो म जनता की भूमिका न ही विजय को सभव बनाया।

बादशाह को जनरोप की इस प्रचड लहर क आगे झुकना पडा और क्राति की विजय को औपचारिक मान्यता देने क लिए १७ जुलाई का वह सविधान सभा के सदस्यो के साथ पेरिस आया। पेरिस की घटनाओ के बाद सार फ्रास के नगरो मे क्रातिकारी विप्लव फूट पड। देश भर म सरकारी अधिकारियो को उनके पुरान पदो से हटा दिया गया और नयी नगर परिषदे चुनी गयी। एक नयी क्रातिकारी सेना खडी हो गयी, जिसे राष्टीय गार्ड का नाम दिया गया।

किसानो ने भी हथियार उठा लिये। बस्तील के धावे की खबर सुनन के बाद उन्होन अपने घृणित मालिको की हवेलियो म जबरदस्ती घुसकर उन्ह नष्ट करना शुरू कर दिया। कुछ स्थानो पर किसाना ने अपने मालिका के चरागाहो और जगलो पर कब्ज़ा कर लिया और उन्ह आपस मे बाट लिया। कर देने और पारपरिक खिदमत से इन्कार करने के वाकये अक्सर होन लगे। मालिको के शोषण और उत्पीडन के खिलाफ किसानो के बलव और दगे पूरे फ्रास मे फैल गय।

मानव अधिकारो की घोषणा

क्राति की प्रारभिक विजये इसीलिए इतनी उल्लेखनीय थी और निरकुश राजतत्र के खिलाफ पहले निर्णायक प्रहार इसीलिए इतनी कारगरता से किय जा सके थे कि सपूर्ण तीसरा जनवर्ग – अर्थात् जनसाधारण और उसका नतृत्व करनवाला बूर्जुआ वर्ग दानो – इस मजिल म एक्यबद्ध था और उसके लक्ष्य समान ही थे। बूर्जुआ वर्ग सामती निरकुशता के निग्रह के लिए कृतसकल्प युवा और प्रगतिशील तत्व था। वह अभी जनता स डरता नही था और उसक साथ कधे से कधा मिलाकर आगे चल रहा था।

यह एकता और सार राष्ट्र को अपनी गिरफ्त म ले लेनवाली क्रातिकारी ओज की प्रचड लहर मानव अधिकारा की घोषणा म प्रतिबिबित हुई थी, जिस सविधान सभा न २६ अगस्त, १७८९ को स्वीकार किया था। इस

महत्वपूर्ण दस्तावेज म क्राति द्वारा प्रवर्तित नयी सामाजिक व्यवस्था क मूल सिद्धात निर्धारित किय थ।

इस घोषणा म १७ अनुच्छेद थ। पहल अनुच्छेद म कहा गया था लोग स्वतत्र और समान अधिकारो क हकदार पैदा होत ह और जिन्दगी भर एसा ही रहत है। एक एसे युग म कि जिसम दुनिया भर क अधिकाश देशो म सामती निरकुशता का ही एकछत्र राज्य था और जो लोग अभिजात वर्ग अथवा पादरी वर्ग क सदस्य नही थ, व हर प्रकार क अधिकारो स वचित थ और जिसम भूदासत्व और गुलामी आम रिवाज थ आज़ादी और समान अधिकारो की यह घोषणा असाधारणत क्रातिकारी प्रतीत, होती थी।

मानव अधिकारो की घोषणा न वैयक्तिक स्वतत्रता भाषण और अतरात्मा की स्वतत्रता व्यक्तित्व की अनघ्यता और उत्पीडन क सभी रूपो क प्रतिरोध की आवश्यकता जैस पवित्र और जन्मसिद्ध अधिकारो की भी घोषणा की। निजी सपत्ति क अधिकार को भी एक पवित्र तथा अनुल्लघनीय अधिकार घोषित किया गया जो सिर्फ यही नही दिखाता था कि बूर्जुआ वर्गीय तथा किसान सपत्ति को भूस्वामियो क अतिक्रमणो स बचाया जा रहा है (और इसीमे इसका प्रगतिशील पहलू सन्निहित था) बल्कि इस अधिकार को सदा सदा क लिए स्थायी बनान क प्रयास को भी प्रमाणित करता था। यह इस घोषणा की बूर्जुआ सीमाओ को दिखलाता था क्योकि इसका यह मतलब था कि उसक द्वारा उदघोषित समानता इसलिए शुद्धत औपचारिक है कि वह सपत्ति पर आधारित असमानता को स्थायी बनाती है।

फिर भी मानव अधिकारो की घोषणा समूच तौर पर अत्यधिक क्रातिकारी महत्व की दस्तावेज थी। इसक पृष्ठो स लिय गय स्वाधीनता समानता और बधुत्व' क विख्यात नार को आग चलकर ससार भर म गूजकर सामती प्रतिक्रियावाद और स्वच्छाचार क अवसान का उदघोष करना था।

बडे बूर्जुआजी का सत्ता मे आना

विजय क फलो का उपभोग सार तीसर जनवर्ग को या सार ही बूर्जुआ वर्ग तक को भी नही करना था। सत्ता जल्दी ही लगभग पूरी तरह से बडे बूर्जुआजी – या जैसा कि उसे नाम मिला बूर्जुआ अभिजातवर्ग – के हाथो म आ गयी। कुछ समय के भीतर सविधान सभा म परिस तथा प्रातीय नगर परिषदो म और राष्ट्रीय गार्ड म बूर्जुआजी क सबस धनी और आर्थिक दष्टि से सबस शक्तिशाली अशक की आवाज ही सबसे निर्णायक बन गयी।

जान पोल मरात

काउंट ओनोरे द मिराबो प्रतिभाशाली ससदीय वक्ता और ऐसा राजनीतिक नेता था कि जो अपने लक्ष्यों को हासिल करने के लिए किसी भी हद तक जा सकता था। अपने भाषणो मे वह निरंकुशतावादी राज्य की ममातक आलोचना किया करता था। आरंभिक दिनो मे वह संविधान सभा मे सबसे प्रभुत्वशाली राजनीतिक नेताओ मे एक था यद्यपि बाद मे राजदरबार के साथ गुप्त सौदेबाजी मे लग गया। मार्कीज द ला फायेत जो एक धनी सामंत था और जिसने अमरीकी स्वाधीनता संग्राम मे बडा नाम कमाया था, राष्ट्रीय गार्ड का नायक बन बैठा जिसमे अधिकांशत बूर्जुआ तत्व ही थे। उसमे जो कोई भी शामिल होना चाहते थे उन्हे महगी वरदी से लैस होकर आना पडता था, जो गरीबो के बूते के बिलकुल बाहर की बात थी।

बडे बूर्जुआ वर्ग की सत्ता को सुदृढ करने के लिए इस सामाजिक समूह के प्रतिनिधियो ने १७८९ के अंत मे संविधान सभा मे निर्वाचन अर्हता के बारे मे ऐसे कानून पेश किये कि जिससे देश के नागरिक असमान अधिकारो से युक्त दो समूहो मे बंट गये। जिन नागरिको (निस्सदेह केवल पुरुषो) को मत देने और चुने जाने का अधिकार था वे सक्रिय नागरिक कहलाते थे जिनके पास वांछित सापत्तिक अर्हताए थी और जिन्हे विभेदक पैमाने पर प्रत्यक्ष कर देने होते थे। जिन नागरिको के पास वांछित सापत्तिक अर्हताए नही थी वे न मत दे सकते थे और न निर्वाचित ही हो सकते थे और वे 'निष्क्रिय नागरिक" कहलाते थे। २६० लाख की कुल आबादी मे सिर्फ कोई ४३ लाख अर्थात् छठे हिस्से ने ही राजनीतिक अधिकार प्राप्त किये। क्राति के दौरान ख्याति अर्जित करनेवाले एक राजनीतिक पत्रकार जान पाल मरात ने अपने अखबार 'जनमित्र' मे लिखा था कि इन कानूनो ने एक नया अभिजातवर्ग, संपत्ति पर आधारित अभिजातवर्ग पैदा कर दिया है।

बडे बूर्जुआ वर्ग ने अपने-आपको शेष तीसरे जनवर्ग से अलग कर लिया और जल्दी ही अपनी वास्तविक सत्ता को वैधानिक रूप भी प्रदान कर दिया।

लेकिन इस बात को ध्यान मे रखना चाहिए कि बडे बूर्जुआ वर्ग के बोलबाले के बावजूद जो फ्रास को सिर्फ बूर्जुआ ढग से रूपातरित करने मे ही दिलचस्पी रखता था, संविधान सभा ने कई बडा प्रगतिशील महत्व रखनेवाले कानून भी मजूर किये। मिसाल के लिए १७८९-१७९० के दौरान फ्रास के प्रशासनिक तत्र का पुनर्गठन किया गया – मध्ययुगीन प्रशासनिक इकाइयो (प्रातो जनरलिटियो बलाजो आदि) के स्थान पर कमोबेश बराबर आकार के ८३ डिपार्टमेट (विभाग) बना दिये गये। संविधान सभा ने तीन जनवर्गो मे समाज के पुराने विभाजन का अंत कर दिया और सभी अभिजात पदवियो और उपाधियो का खत्म कर दिया। २ नवबर १७८९ की एक आज्ञप्ति द्वारा संविधान सभा ने सारी चर्च संपत्ति और जमीन राष्ट्र

व सुपुर्द कर दी। जब्त की गयी वह भूमिया जिन्हे "राष्ट्रीय संपत्ति" कहा जाता था बेच दी गयी। चर्च का उसके पहलेवाले विभिन्न कार्यों (जैसे जन्म विवाह मृत्यु आदि का पंजीकरण) से भी वंचित कर दिया गया और वे राज्य को दे दिये गये। कई और कानून जारी किये गये जिन्होंने उन सभी नियंत्रणो को मिटा दिया जो वाणिज्यिक तथा औद्योगिक उपक्रम मे बाधा डालते थे।

संविधान सभा द्वारा प्रवर्तित बूर्जुआ कानून भूतपूर्व तीसरे जनवर्ग के निर्माण करनेवाले सभी वर्गो के हितो के अनुरूप थे, जिनमे निस्सन्देह बूर्जुआ वर्ग भी था जो उनकी मुख्य प्रेरक शक्ति रहा था। लेकिन समाज के इस अंश के लिए इन कानूनो का प्रवर्तन बूर्जुआ क्रांति के कार्यभारो की पूर्ति का परिचायक था। सत्ता मे आने और उन सभी क्रांतिकारी परिवर्तनो को क्रियान्वित करने के बाद, जो उसके अपने विशिष्ट हितो के संवर्धन के लिए आवश्यक थे बडा बूर्जुआ वर्ग जल्दी ही किसी भी आगामी क्रांतिकारी परिवर्तन का विरोध करनेवाली रूढिवादी शक्ति मे बदल गया।

इसके विपरीत आम लोग और बूर्जुआजी के लोकतंत्रीय अंश इन उपायो को मात्र प्रारंभ ही समझते थे। क्रांति की भावी प्रगति उनके लिए प्रत्यक्ष सरोकार की बात थी। किसान जो आबादी का विपुल बहुलांश थे, यह माग कर रहे थे कि सारे सामंती दस्तूरो और खिदमती मजदूरी का अंत किया जाय और उन्हे जमीन दी जाय। ४ से ११ अगस्त १७८९ के हफ्ते मे संविधान सभा ने भूदासत्व का उन्मूलन कर दिया लेकिन यह सुधार कागजी ही था क्योकि व्यवहार मे इसने सामंतो के कुछ विशेषाधिकारो का ही अंत किया। केंद्रीय समस्या – समूचे तौर पर कृषि व्यवस्था की समस्या – अब भी अनसुलझी ही रही थी।

१७९० मे कृषक अशांति की एक और लहर आयी। किसानो ने अपने मालिको को पुरानी वसूलिया और कर देने से इन्कार कर दिया – कई डिपार्टमेंटो मे तो खुली बगावत तक हो गयी।

शहरी गरीब भी संतुष्ट नही हो पाये थे क्योकि वे अब भी सभी अधिकारो से वंचित थे और अब उन्हे पहले से भी ज्यादा भयानक विपन्नता को झेलना पड रहा था। अभिजातो का काफी बडा हिस्सा देश से चला गया था, जिससे विलास वस्तुओ के आदेश मिलना लगभग बंद हो गये थे और इस प्रकार स्थानीय व्यापार मे गभीर मंदी आ गयी थी। इसके अलावा पेरिस तथा अन्य नगरो मे गंभीर अन्नाभाव था।

५ ६ अक्तूबर १७८९ को पेरिस के गरीबो और विशेषकर श्रमजीवी स्त्रियो तथा दस्तकारो और छोटे व्यापारियो की पत्नियो ने वर्साई पर जलूस ले जाकर रोटी की क़िल्लत और उसकी बेहद भारी कीमत के खिलाफ प्रदर्शन

किया। उन्होने महल को घर लिया और स्त्रिया साम्राज्ञी मरी अत्वानत के निवास तक मे जा घुमी। भीड को शात करन के लिए लुई सोलहवा दो बार बालकनी पर निकला। लोगा की माग पर बादशाह और फिर सविधान सभा भी वर्साई से पेरिस चल गये।

जनता की कारवाई स घबराकर सविधान सभा ने २१ अक्तूबर, १७८६ को एक कानून बनाकर जन प्रदर्शनो को रोकन क लिए सना का उपयोग करन की अनुमति दे दी। बाद म, १४ जून १७६१ को उसने ले शेपलिये का कानून स्वीकार करके मजदूर सघो के निर्माण और हडतालो को वर्जित कर दिया। लेकिन इन कठोर उपाया और दमन के बावजूद बडा बूर्जुआ वग, जा अब सविधान सभा पर हावी था जन असतोष के चढते ज्वार को नही रोक पाया।

जनता के हितो के दो पक्षधरा – सविधान सभा क डपुटी मेक्सीमिलियन रोबसपियर (१७५८-१७६४) और जनमित्र समाचारपत्र क सपादक जान-पोल मरात (१७४३-१७६३) न सविधान सभा मे बडे बूर्जुआ वर्ग की पार्टी की नीति की स्वार्थी जनविरोधी प्रकृति का साहसपूर्वक परदाफाश किया और उसक क्राति के लिए घातक परिणामा की तरफ इशारा किया।

इन साहसी क्रातिकारियो की आशकाए निराधार नही थी। प्रति-क्रातिकारी दल जो राजदरबार से गुप्त सपर्क रख रहा था अपनी हार को मानन के लिए किसी भी तरह तैयार नही था। मरी अत्वानत उत्प्रवासियो के जरिये विभिन्न यूरोपीय शासको क साथ पत्रव्यवहार कर रही थी और उनसे फ्रास के विरुद्ध सशस्त्र हस्तक्षप करन का अनुरोध कर रही थी।

वारेन का सकट

जून, १७६१ मे बादशाह और रानी ने विदेश भाग जान और क्राति के शत्रुआ से जा मिलन का प्रयास किया। मामूली नौकरो के कपडे पहनकर व पेरिस से भागन मे सफल हो गये। लेकिन सीमातवर्ती कसबे वारेन क निकट उन्ह पहचान लिया गया और उनकी गाडी का रोक लिया गया और इसके बाद जनता क पहरे मे उन्ह पेरिस वापस ले आया गया।

क्राति क शत्रुआ से जा मिलने क लिए बादशाह के कपटपूर्ण पलायन न लोगा क दिमागा को हिला दिया। अभी तक क्राति क प्रति गहन निष्ठा के बावजूद अधिकाश फ्रासीसी बादशाह की सदाशयता म विश्वास रखते थे सीधे-सादे लोग समझते थे कि बादशाह अच्छा आदमी है और सभी बाता का दोष उसके मन्त्रिया पर ही है। वारन की घटना के बाद अधिकाधिक लोग गणतत्र के विचार का समर्थन करन लगे।

लेकिन सविधान सभा का रूढिवादी बहुमत बादशाह के बचाव म खडा हो गया। उसकी गद्दारी का निर्विवाद्य प्रमाण होने पर भी सविधान सभा ने घटना का यह मिथ्या विवरण प्रस्तुत किया कि उसे अपहृत कर लिया गया था और उस उसके सारे अधिकार लौटा दिये। इस फैसले न परिस क लोकतन्त्रीय हलका म जबरदस्त नाराजगी पैदा की। कई राजनीतिक क्लबो या मडलियो मे (जो उस समय आधुनिक पार्टियो के निकटतम तुल्यवर्ती थे) गणतत्र के लिए गभीर आदोलन शुरू हो गया।

१७ जुलाई को शाप दे मार्स (मार्स का मैदान) मे राजतत्र के विरुद्ध एक विराट शातिपूर्ण प्रदर्शन हुआ। सविधान सभा ने आदेश दिया कि ला फायत की कमान मे राष्ट्रीय गार्ड के दस्ते घटनास्थल पर भेजे जाय और भीड को तितर बितर कर दिया जाये। उन्होन वहा गोली चलायी जिससे कई लाग मारे गये और घायल हुए। यह हत्याकाड तीसरे जनवर्ग की कतारा म खुली फूट का द्योतक था। बडा बूर्जुआ वर्ग हाथा म हथियार लकर जनता के खिलाफ मैदान मे उतर आया। सविधान सभा म रूढिवादी तत्व अब खुल्लम खुल्ला प्रतिक्रातिकारी कार्रवाइया करने लग गये।

शाप दे मार्स के हत्याकाड के ठीक पहले १६ जुलाई को, सबसे प्रभावशाली राजनीतिक क्लब – जैकोबिन क्लब – मे फूट पड गयी। उसका दक्षिणी पक्ष ला फायेत के इर्दगिर्द गोलबद हो गया और बडे बूर्जुआजी के अन्य नेताओ न क्लब से बहिर्गमन करके एक नया अनन्य क्लब – फएआ क्लब – स्थापित कर लिया जिसका सदस्यता शुल्क बहुत अधिक था।

जैकोबिनो का नेतृत्व अब उन लोगो के हाथो म आ गया, जो क्राति को उसकी तर्कसगत परिणति पर ले जाना चाहते थे। इन लोगो के अगुआ रोबसपियेर और ब्रिस्सो थे। १३ सितबर को बादशाह ने सविधान सभा द्वारा तैयार किये सविधान पर हस्ताक्षर कर दिये, जिसम सावैधानिक राजतत्र का प्रावधान था और लोकतन्त्रविरोधी निर्वाचन अर्हताए विहित की गयी थी। ३० सितबर को सविधान सभा को भग कर दिया गया।

राजतत्र का तख्ता उलटा जाना

१ अक्तूबर १७९१ को पेरिस म एक नयी विधान सभा का अधिवेशन शुरू हुआ। इस विधान सभा का केवल सक्रिय नागरिको अर्थात् सभ्रात लोगो न ही चुना था। इस विधान सभा म फएआपथियो का बोलबाला था यद्यपि यह हालत देश की हवा म जरा भी मेल नही खाती थी।

२० अप्रैल १७९२ को फ्रास न आस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। यूरोप क सम्राटा न इस युद्ध की बहुत पहले ही तैयारी कर ली थी

जो फ्रास म नाति को हथियारा के जोर स कुचलने की सोच रहे थे। लुई सोलहवा और उसके दरबारी भी छिप छिपे इस लडाई की तैयारी कर रहे थे, जिनका ख्याल था कि विदेशी हस्तक्षेप लडखडाते फ्रासीसी राजतन को सहारा द देगा। यही कारण था कि रावसपियेर मरात और उनके समर्थकों ने फ्रास को इस युद्ध म उलझाने का विरोध किया और कहा कि दूसर देशो म प्रतिनाति से निबटने के पहले अपने देश म प्रतिनाति को कुचलना अत्यधिक महत्व रखता है।

इसके विपरीत ब्रिस्सो और उसके समथका ने जो पहले ब्रिस्सोपथी और फिर जिरोदी कहलाये (जिराद डिपार्टमेट स चुने प्रतिनिधिया म ब्रिस्सो के कई समर्थक थ) युद्ध के तुरत घोषित किय जान का समथन किया। इससे रावसपियेर क समर्थकों और जिरोदिया म टकराव पैदा हो गया जो लगातार अधिक सगीन होता चला गया।

१७९२ क माच म बादशाह न जिरोदिया से मत्रिपद ले लेने के लिए कहा। औपचारिक रूप मे सरकार सभाल लेन के बाद जिरादियो न द्रुत और आसान विजयो की आशा म युद्ध को निकट लान के लिए अपनी नयी सत्ता का पूरा प्रयोग किया। लेकिन जैसा कि रोबसपियेर और मरात का पूवानुमान था, युद्ध का आरभ फ्रासीसी पराजय क साथ हुआ। बादशाह न जिरादी मत्रिया को बरखास्त कर दिया और सत्ता फिर फएआपथियो के हाथो म पहुच गयी।

जिन लोगा के हाथो म सेना की कमान थी — ला फायत तथा अन्य जनरल — व नातिकारी सनाआ द्वारा कोई विजय पा सकन के विचार के भी सख्त खिलाफ थे। साम्राज्ञी मेरी अत्वानेत ने फ्रासीसी सना की योजनाओ क बारे म वियेना को गुप्त सदश भेजने क तरीके निकाल लिय। इसन आस्ट्रिया और प्रशा (जो इस समय तक युद्ध म शामिल हो चुका था) की सनाओ के लिए आसानी स हर जगह सफलता प्राप्त करना और पराजित तथा हतोत्साह फ्रासीसी सेना पीछा करना मभव बना दिया।

इस नाजुक घडी मे फ्रासीसी जनता अपनी नातिकारी मातृभूमि की रक्षा के लिए उठ खडी हुई। रोबसपियर मरात और दातो (१७५९ १७९४) जो इस समय तक अपन देशवासियो मे काफी प्रभाव अर्जित कर चुका था न कहा कि जब युद्ध शुरू ही हो गया है तो उस नातिकारी ढग स चलाना बहुत महत्वपूर्ण है। जैकोबिनी ही अब जन आदोलन की मुख्य सगठन शक्ति थे। उन्होने सही तौर पर ही इगित किया कि मोरचे पर तब तक कोई सफलता प्राप्त करना असभव है कि जब तक चदावल म स्थिति का काबू म न लाया जाय और देश म गद्दारी को पूरी तरह स खत्म न कर दिया जाय।

हजारा स्वयसवक सेना को सुदढ करन क लिए खडी की जानवाली बटालियना म भरती हो गये। जनमत क दबाव म ११ जून का विधान सभा

ने एक आज्ञप्ति स्वीकार करके देश म आपात स्थिति की घोषणा कर दी। सभी सक्षम लोगो के लिए भरती होना अनिवार्य बना दिया गया। इस आज्ञप्ति का हार्दिक अनुमोदन हुआ क्योकि जनता हस्तक्षेपकारियो का रास्ता रोकने के लिए आतुर थी। इसी समय सुख्यात युद्धगान 'मार्सेलिज' की रचना हुई, जो तुरत ही अत्यत लोकप्रिय हो गया और जिसे गाते हुए स्वयसेवक दस्ते शत्रु स लोहा लेन जाते थे।

जनता के इस क्रातिकारी ओज की पृष्ठभूमि म विधान सभा और सरकार की इस जनोत्साह का सही रास्ता देने और गद्दारी को कुचलने की अक्षमता और भी ज्यादा साफ हो गयी। सारी साजिशो और आपराधिक दुरभिसधियो का स्रोत राजदरबार ही था और जनसाधारण का सहज बोध उन्ह सीधे गद्दारी के मूलस्थल पर ही ले गया। जुलाई मे लुई सोलहवे का तख्ता उलटने की माग पेरिस और प्रातो म लगातार ज्यादा जोरदार होती चली गयी। ९ अगस्त की रात मे पेरिस मे एक बार फिर घटो की आवाज़ गूज उठी और उसके बीच बीच म तोपो की आवाज़ भी मिल उठी। अगले दिन अलस सवेर ही पेरिसवासियो के सशस्त्र दस्तो न त्यूलेरिये राजप्रसाद पर हल्ला बोल दिया। प्रासादरक्षको ने उन पर गोलिया चलायी, लेकिन कुछ ही देर की घमासान लडाई के बाद लोगो ने उनके प्रतिरोध को कुचल दिया और महल म घुस गये।

१० अगस्त १७९२ के जन विप्लव ने सहस्रवर्षीय फ्रासीसी राजतत्र का उलट दिया। लुई सोलहवे को सिहासनच्युत करके तापिल दुर्ग मे कैद कर दिया गया और उसके मन्त्रियो को बरखास्त कर दिया गया। एक नयी सरकार – अस्थायी कार्यकारी परिषद – की स्थापना की गयी, जिसम अधिकाश जिरोदी ही थे। 'सक्रिय' और 'निष्क्रिय" नागरिको के भेद को मिटा दिया गया और राष्ट्रीय कन्वेशन (सम्मेलन) के लिए नये चुनावो की घोषणा की गयी, जिनमे सभी वयस्क पुरुषो को मतदान का अधिकार था।

जैकोबिनो और जिरोदियो का सघर्ष

१० अगस्त १७९२ के जन विप्लव न क्राति की एक नयी और उन्नत मजिल का समारभ किया। लेकिन विप्लव का तात्कालिक परिणाम सत्ता का जिरोन्दियो को हस्तातरण था। फएआपथियो का सरकार और विधान सभा – दोनो स हटना पडा और जिरोदियो को जगह देनी पडी, जिन्होन नेतृत्व अपने हाथो म ले लिया।

जिरोदी और उनके नेता – ब्रिस्सो, रोलो, वर्न्यो तथा अन्य – सर्वप्रथम और सर्वोपरि रूप म प्राता के वाणिज्यिक औद्योगिक तथा भूस्वामी बूर्जुआजी का प्रतिनिधित्व करते थ। आरभ म इस दल म सामती निरकुशता का डटकर

विरोध किया था। लेकिन सफल जन विप्लव के परिणामस्वरूप जिसमे उन्होंने वास्तव मे कोई भाग नही लिया था सत्ता मे आने के बाद उन्होने यह रवैया अपनाया कि क्राति के मुख्य कार्यभारो को क्रियान्वित किया जा चुका है और कुछ ही समय के भीतर वे स्वय एक रूढिवादी शक्ति बन गये।

इधर जैकोबिन या मातान्यार भी कोई एक्यबद्ध दल नही थे। जैकोबिन लोकतत्रीय (मझोले या छोटे) बूर्जुआजी किसानो और शहरी गरीबो दूसरे शब्दो मे, आबादी के लगभग उन सभी अशको का ब्लाक थे जिनकी मुख्य मागे अभी तक पूरी नही हुई थी। यद्यपि इस ब्लाक के सरचक विभिन्न वर्गो या वर्ग समूहो के सभी लक्ष्य समान नही थे, फिर भी वे क्राति की रक्षा करने और अपनी मागो के पूर्णत तुष्ट हो जाने तक क्राति को आगे ले जाने के दृढ निश्चय से आपस मे एक्यबद्ध थे।

इसके विपरीत जिरादी अब तक प्राप्त परिणामो से पूर्णत सतुष्ट थे और क्राति के ज्वार को रोकना चाहते थे। जिरोदियो और जेकोबिनो के लक्ष्यो मे यही गहन वैभिन्य था।

कन्वेशन ने अपना काय २१ सितबर १७९२ को शुरू किया। उसका उदघाटन एक ही दिन पहले वाल्मी की लडाई मे प्रशियाई सेना की पराजय और उसके पीछे हटने से उत्पन्न हर्षोल्लास के वातावरण मे हुआ था। यह क्रातिकारी फ्राम की यूरोपीय शक्तियो के प्रतिक्रातिकारी गठबधन पर पहली विजय थी। कन्वेशन के डेपुटी इस पहली जीत से उत्साह मे आये हुए थे। तुमुल हर्षनाद और करतलध्वनि के बीच कन्वेशन ने राजतत्र का उन्मूलन करने आज्ञप्ति का स्वीकार किया और २१ सितबर गणतत्र युग या नवयुग – स्वतत्रता के चौथे वर्ष, गणतत्र के पहले वर्ष – का पहला दिन घोषित कर दिया गया। वाल्मी की विजय से जनित हर्षोल्लास की फिजा मे गणराज्य की स्थापना का देश भर मे उत्साहपूर्वक स्वागत किया गया।

लेकिन हर्षोल्लास के इन दिनो के कुछ ही बाद जिरोदियो और जैकोबिनो मे सघर्ष फिर शुरू हो गया। राजा की नियति का भी निर्णय किया ही जाना था। जैकोबिन उसे मृत्युदड दिये जाने की माग कर रहे थे जब कि जिरोदी कम सख्त सजा देने के पक्ष मे थे क्योकि वे इस बात को अच्छी तरह समझते थे कि राजा का वध क्राति के और अधिक आगे बढने के पथ को प्रशस्त कर देगा। राजा को मुकदमे के लिए कन्वेशन के सामने पेश किया गया। मुकदमे की कार्रवाई जनवरी १७९३ तक खिचती चली गयी और जल्दी ही जैकोबिनो और जिरोदियो मे सघर्ष के अखाडे मे ही परिणत होकर रह गयी। राजा को बचाने के जिरोदियो के सारे प्रयासो के बावजूद उसे देशद्रोह का दोषी पाया गया और मृत्युदड दिया गया। २१ जनवरी १७९३ को लुई सोलहवे का गिलोटिन से सिर उडा दिया गया।

इधर युद्ध चलता रहा और उसम अधिकाधिक यूरोपीय राष्ट्र सम्मिलित होते गय। १७९३ मे इगलेड, स्पेन और हालेड तथा कई जर्मन और इतालवी राज्य प्रतिक्रातिकारी सहबध मे शामिल हो गय। येकातरीना (कैथरीन) द्वितीय के अधीन रूसी साम्राज्य भी फ्रासविरोधी सहबध का समर्थक था और इस प्रकार क्रातिकारी फ्रास ने अपने को लगभग सार यूरोप का सामना करते पाया।

वाल्मी की विजय क बाद फ्रासीसी सेनाओ ने प्रत्याक्रमण शुरू किया। जल्दी ही हस्तक्षेपकारियो को फ्रासीसी भूमि क बाहर खदड दिया गया और इसके बाद फ्रासीसी सेनाओ ने बेल्जियम म बढना शुरू कर दिया। लेकिन माच १७९३ म जनरल द्यूमूरीये ने जिसका जिरोदियो के साथ सपर्क था, देश के साथ गद्दारी की और शत्रु के पक्ष मे चला गया। इसके बाद फ्रासीसी सेनाए पीछे हटने लगी और १७९३ के वसत तक फ्रासीसी सेनाओ की स्थिति फिर बहुत खराब हो गयी। हस्तक्षेपकारियो की सेनाओ ने एक बार फिर फ्रास म प्रवेश कर दिया।

३१ मई से २ जून, १७९३ का विद्रोह

लबे और भयानक युद्ध और जान-माल की अपार हानि, फ्रास के पूर्ण अलगाव और देश की अर्थव्यवस्था के विघटन के फलस्वरूप गभीर अन्नाभाव हो गया। खाद्य पदार्थो के मूल्य बेहद बढ गये और नगरो म रोटी की सख्त किल्लत हो गयी जिसकी मार सबसे अधिक शहरो और देहातो के गरीबो पर ही पडी। भूख और बढती गरीबी न उन्ह निर्णायक कदमो की माग करने क लिए प्रेरित किया – उन्होने अधिकतम" (अर्थात सरकार द्वारा निर्धारित अधिकतम मूल्य सीमा) के प्रचलन और सट्टेबाजी क बद किये जान की माग की। शहरी गरीबो की आवाज़ को जाक रू और वार्ले जैसे आदोलनकर्ताओ न व्यक्त किया जिन्ह जिरोदी सा-क्यूलोत" (दीवान) कहा करत थे।

गावो के किसान जिन्ह अभी तक तरह-तरह के सामती करो और दायित्वो स मुक्त नही किया गया था अपन असतोष को जाहिर कर रह थे।

जिरोदियो न अपन आपको जनता की आवश्यकताओ आकाक्षाओ से अलग रखा। व जनसाधारण स कट गय थ और अपनी सकीर्ण गुटबदियो म बद हो गय थ। उनकी सारी शक्ति मात्र जैकोबिनो के साथ सघर्ष म ही लगी हुई थी जिसम उन्होन न जनसाधारण की मुसीबतो की ओर कोई ध्यान दिया और न मारचे पर स्थिति की तरफ ही।

जैकोबिनो न सा-क्यूलोतो क साथ मिलकर जिरोदियो क विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह सगठित किया। ३१ मई स लेकर २ जून १७९३ तक पेरिस एक

मैक्सीमिलियन रोबेसपियेर
जैकोबिनी क्रांतिकारी लोकतन्त्रीय अधिनायकत्व

बार फिर जन विप्लव की गिरफ्त में रहा। लोगों ने २९ जिरोन्दी डेपुटियों को कन्वेन्शन से निकाल दिया और उन्हें सरकारी पदों से बरखास्त कर दिया। सत्ता आखिर जेकोबिनों के हाथों में आ गयी।

जेकोबिन क्रांति की एक नाजुक घड़ी में सत्ता में आये थे। विशाल और सुसज्जित फ्रांसीसी सेनाओं को पांच शक्तियों की सेनाएं पछाड़ रही थीं। उधर देश के पश्चिम में प्रतिक्रांतिकारी राजतन्त्रवादी विद्रोह जो आरम्भ में वांदा में शुरू हुआ था तेजी से फैल रहा था। दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम

म घरेलू नजरबदी से निकल भागे जिरोदियो न एक प्रतिक्रातिकारी विद्रोह का सगठन करना शुरू कर दिया था। एक के बाद एक व डिपार्टमट पेरिस के खिलाफ बगावत का झडा खडा करते जा रहे थे, जहा जिरादिया का प्रभुत्व था। जून के मध्य तक ८३ मे से ६० डिपार्टमट विद्रोह की लपट म आ चुके थे। कन्वेशन किसी तरह बस क्षुधाक्रात पेरिस और शत्रु सनाओ से घिरे उसक बिलकुल आसपास के इलाके को ही अपने हाथो म बचाये हुए था। शत्रु सेनाए लगातार राजधानी के निकट आती जा रही थी। लगता था कि गणराज्य का पतन सन्निकट ही है।

लेकिन साघातिक खतरे की इस घडी म जैकोबिनो न ऐसे अदम्य साहस और ओज का प्रदर्शन किया कि जिसमे समझौते या पराजय की गुजाइश ही नही थी। ३१ मई से २ जून १७९३ के विप्लव के समय लिखी अपनी टिप्पणियो मे रोबसपियेर न क्राति के कार्यभारा का इन शब्दा मे खाका पेश किया था – एक्यबद्ध सकल्प आवश्यक है आतरिक खतरा बूर्जुआजी से है, बूर्जुआजी को परास्त करने के लिए जनता को ऐक्यबद्ध करना चाहिए जनता और कन्वशन को एक होकर काम करना चाहिए, और कन्वेशन का जनता के साथ एक बन जाना चाहिए "

कृषि समस्या का हल

अत्यल्प समय के भीतर जैकोबिनो न क्राति की बच रही समस्याओ म सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या को हल कर दिया। किसाना की मुख्य मागा को ३ जून और १० तथा १७ जुलाई के कानूनो द्वारा तुष्ट कर दिया गया। देश म भागकर जानवाले सामतो की जमीनो को जब्त करके छोटे छोटे खडो म विभाजित कर दिया गया और दसवर्षीय उधार के आधार पर बच दिया गया। शामिलात जमीना का किसानो म इस तरह बाट दिया गया कि जिसम प्रत्यक नागरिक को समान भाग मिल। सार सामती अधिकारा को सदा सदा के लिए खत्म कर दिया गया और किसानो को आगे से सामता क लिए मिहनती महनत करन क दायित्व स मुक्त कर दिया गया। क्रातिकारी सरकार जा चार साल म भी नही कर पायी थी वह सब जैकाबिना न दो सप्ताह की अवधि के भीतर ही पूरा कर दिया।

कृषक समुदाय की बुनियादी मागा को पूरा करने के इस साहसिक कदम क फलस्वरूप जो कृषि म सामती स्वरूपा क पूर्ण उन्मूलन के समान था जैकाबिनी कन्वशन न लाखा किसाना का समर्थन प्राप्त कर लिया। जहा पहले किसान इस दुविधा म रहत थ कि जिरादिया का समर्थन कर या जैकाबिना का अब व समूच तौर पर जैकाबिनी गणराज्य के पक्ष म आ

गये। गणतात्रिक सेना म भरती होनेवाले किमान जब अपने का मात्र त्राति के विचारो ही नही बल्कि स्वय अपने हितो का भी रक्षक समझने लग गये।

१७९३ का सविधान

तीन मप्ताह के भीतर जैकाबिना न नये सविधान का प्रारूप तैयार करके उमकी सपुष्टि भी कर दी। १७९३ का सविधान फ्रास का अब तक का सवाधिक लोकतात्रिक सविधान था। उसका प्रत्यक अनुच्छेद जनता की विजय मे अडिग विश्वास से ओतप्रोत था।

लेकिन इस अत्यधिक लोकतात्रिक सविधान को अगीकार करन क बावजूद कन्वशन अभी इस स्थिति म नही था कि उमका त्रियान्वयन शुरू कर सके। मोरचे पर जहा इस समय युद्ध की नियति का निर्धारण किया जा रहा था सगीन स्थिति गहयुद्ध का चढता ज्वार, जिसन देश को दो परस्पर विरोधी शिविरो म विभाजित कर दिया था, हत्याए और षडयत्र—ये सभी बाते तकाजा कर रही थी कि शासन क अब तक प्रयुक्त तरीका स सवथा भिन्न तरीका को उपयोग मे लाया जाये।

इस बारे म जैकोविनो और उनके नेताआ के पास कोई सुस्पष्ट सिद्धात और योजनाए नही थी। उन्होने यह सोचा तक नही था कि ऐमी परिस्थिति भी पैदा हो सकती है लेकिन स्वय घटनाओ क त्रम न ही उन्ह एक नया रास्ता अपनान के लिए मजबूर कर दिया।

क्रातिकारी लोकतत्रीय अधिनायकत्व की स्थापना

१३ जुलाई को मरात की हत्या कर दी गयी। उस शार्लोत कोर्दे नामक तरुणी ने छुरा भोका था जो यह गर्हित अपराध करन क लिए जिरान्दियो क उकसाव म आकर प्रार्थी के वप म उसके घर म घुस आयी थी। जनता का यह निडर मित्र, जिसने त्राति के हेतु की हमशा अलमबरदारी की थी और जा गरीबा का पैरोकार और समर्थक था जनमाधारण म बहुत ही लोकप्रिय था और उसकी मृत्यु ने सभी पेरिसवासिया का सकते म डाल दिया। तीन दिन बाद लियोन नगर मे शालिए नाम क एक स्थानीय जैकाबिन नता का कत्ल कर दिया गया। स्पष्ट था कि जिरोदी प्रतित्रातिकारिया न आतकवाद क रास्त पर चलना शुरू कर दिया है।

जैकाबिनो मरकार क लिए इम प्रतित्रातिकारी आतक का त्रातिकारी आतक द्वारा उत्तर दना आवश्यक हो गया। कुछ ममय पहले जाव सुरक्षा समिति को, जिस कन्वशन न अप्रैल १७९३ म स्थापित किया था निश्चि

व्यक्तियो को गिरफ्तार कर लेने का अधिकार दे दिया गया था। अब इस अधिकरण ने अपनी सक्रियता बढा ली। उसके न्यायाधीशो ने भूतपूर्व साम्राज्ञी मेरी अत्वानेत पर मुकदमा चलाया और गिलोटिन द्वारा मौत की सजा दी। गणतत्र के शत्रुओ की सपत्ति को जब्ती के तहत कर दिया गया।

४ ५ सितबर १७९३ को पेरिस के गरीबो ने कन्वशन के सामने यह माग पेश की कि प्रतिक्रातिकारी तत्वो का दमन और दृढतापूर्वक किया जाये और खाद्य पदार्थो के लिए निश्चित (अधिकतम) दाम लागू किये जाय। जैकोबिनो ने जनसाधारण की आवाज को सुना और दमन बढा दिया। लगभग सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों के लिए निश्चित मूल्य लागू कर दिये गये, लेकिन साथ ही मजदूरो की अधिकतम मजदूरी भी लागू कर दी गयी। यह अतिम निर्णय जैकोबिनो की नीति के अन्तर्विरोध का परिचायक था।

२३ अगस्त को कन्वशन ने एक आज्ञप्ति स्वीकार की थी जिसने लगभग सारे ही राष्ट्र को लामबद कर दिया था। बहुत ही थोडे समय के भीतर जनव्यापी भरती करके दस लाख सैनिको की सेना खडी कर दी गयी थी। इस विशाल सेना को अब हथियारो और गोला बारूद से सज्जित करना जरूरी था। सेना का और क्षुधाग्रस्त नगरो का भी पेट भरना आवश्यक था और प्रतिक्रातिकारी विद्रोहो का दमन करना और षडयत्रो को कुचलना जरूरी था। और इन सबके ऊपर प्रतिक्रातिकारी गठबधन की विराट सेनाओ को पीछे हटाने और फिर पूरी तरह से परास्त करने का दुष्कर कार्य भी अभी बाकी ही था।

इन दु साध्य लक्ष्यो की सिद्धि के लिए मजबूत केद्रीकृत क्रातिकारी सरकार की जरूरत थी। लेकिन स्वय इतना ही काफी नही था – यह भी जरूरी था कि इस सरकार को जनता का अविराम समर्थन प्राप्त हो वह जनता की इच्छा को व्यक्त करे और वह जनता के उपक्रम तथा जनसाधारण की सृजनात्मक क्रातिकारी सक्रियता का समय रहते उपयोग कर सके।

घटनाओ के वास्तविक क्रम ने जैकोबिनो को वे रास्ते दिखाये जो इन कार्यभारो की पूर्ति के लिए आवश्यक थे। इनमे अस्थायी तौर पर व्यापक जनतात्रिक सावैधानिक शासन का निलबन और विद्यमान परिस्थिति के अनुरूप क्रातिकारी लोकतत्रीय अधिनायकत्व के रूपो की खोज शामिल थे।

क्रातिकारी सरकार

स्वय क्रातिकारी सघर्ष के तर्क ने ही कन्वशन को सर्वोच्च विधायी तथा कार्यकारी अग बना दिया जिससे सरकार के नाना कृत्य एक ही निकाय मे सयुक्त हो गये। कन्वशन के कमिश्नरो को जिन्हे प्रातो मे और सेना मे

काम करने के लिए भेजा गया था व्यापक अधिकार प्रदान किये गये। अब लोक सुरक्षा समिति क्रांतिकारी सरकार बन गयी। गणराज्य के प्रशासनिक जीवन के सभी पहलू – प्रतिरक्षा के प्रश्नों से लेकर खाद्य पदार्थ और सप्लाई से संबद्ध व्यावहारिक निर्णयों तक – इस समिति के ही प्रत्यक्ष अधीक्षण में थे। लोक सुरक्षा समिति के नेता निर्भीक क्रांतिकारी और महान राजनेता मैक्सीमिलियन रोबेसपियर, जो लोगों में शुद्ध या अविक्रेय कहलाता था, जनता का उत्कट पक्षधर सा जूस्त, जो क्रांति के फूट पड़ने के समय सिर्फ बाईस साल का था, और चतुर राजनीतिज्ञ जार्ज कूतों थे। प्रतिरक्षा के प्रश्न प्रसिद्ध गणितज्ञ और कुशल संगठनकर्ता लाज़ार कार्नो के सुपुर्द थे। राज्य के सभी अंग लोक सुरक्षा समिति के प्रति उत्तरदायी थे और उसके सभी आदेशों का बिला उज्र पालन करना अनिवार्य था।

क्रांतिकारी समितियां और जैकोबिन क्लब

क्रांतिकारी सरकार की शक्ति का मुख्य स्रोत इतना सत्ता के दृढ़ केंद्रीकरण में नहीं था, जितना कि जनता द्वारा प्रदत्त ठोस समर्थन में। कन्वेंशन से लेकर नीचे तक जैकोबिनी अधिनायकत्व के सभी मुख्य अंग जनता के साथ सतत संपर्क बनाये रखते थे। लोक सुरक्षा समिति तथा कन्वेंशन को देश भर में स्थापित की गयी नानासंख्य स्थानीय क्रांतिकारी समितियों का समर्थन भी प्राप्त था। इन समितियों में प्रत्येक ग्रामीण कम्यून अथवा शहरी ज़िले के राजनीतिक दृष्टि से सर्वाधिक सचेत नागरिकों में से चुने १२ सदस्य होते थे। इन समितियों ने सरकारी ढांचे और क्रांतिकारी नीतियों के निरूपण में जनसाधारण की व्यापक सहभागिता को संभव बना दिया था। जैकोबिन क्लब भी, जिसकी देश भर में सैकड़ों शाखाएं फैली हुई थीं, गणराज्य के राजनीतिक जीवन में बहुत बड़ी भूमिका अदा करता था। कन्वेंशन में विचारार्थ प्रस्तुत और उसके द्वारा अमल में लाये जानेवाले राजनीतिक कदमों पर भी पहले प्रांतों में क्लब की बैठकों में प्रारंभिक विचार किया जाता था। इन बैठकों में सभी सदस्य बराबर होते थे – उनमें न कोई मंत्री होता था, न कोई कमिस्सार और न कोई जनरल।

मोर्चे पर पासे का पलटना

जैकोबिनी सरकार के नेतृत्व में जनसाधारण के अथक प्रयासों ने पहले सुफल १७९३ की सरदियों में दिये। इस समय तक देश में प्रतिक्रांतिकारी उपद्रवों का अंत किया जा चुका था। प्रतिक्रांतिकारी गठबंधन की सेनाओं का सामना अब गणतंत्र की १४ सेनाएं कर रही थीं, जिन्होंने पतझड़ के

आते जाते शत्रु की प्रगति को रोक दिया था। इसके कुछ ही बाद लगातार कई विजय प्राप्त करके उन्होंने एक बड़ा प्रत्याक्रमण शुरू कर दिया। नये, साधारण परिवारों में जन्मे कमांडरों ने अपने आपको उत्कृष्ट सेनानायक सिद्ध किया। भूतपूर्व सार्जेंट लाज़ार गोश ने, जिसे २५ साल की उम्र में ही एक पूरी सेना का सेनापति बना दिया गया था, अपने सैनिकों में विजय का अदम्य संकल्प फूंक दिया था। १७९४ के वसंत तक गणराज्य के सैनिक हस्तक्षेपकारियों को फ्रांस के सीमांतों के उस पार धकेल चुके थे और युद्ध की सरगरमी का क्षेत्र अब शत्रु प्रदेश पर चला गया था।

जैकोबिनी अधिनायकत्व का संकट

अत्यल्प अवधि के भीतर ही जैकोबिनी अधिनायकत्व ने क्रांति के सभी मुख्य लक्ष्यों को सिद्ध कर लिया – उसने सामंती सामाजिक स्वरूपों को मिटा दिया, देश के भीतर प्रतिक्रांति को कुचल दिया और विदेशी हस्तक्षेपकारियों की सेनाओं को गणतंत्र के सीमांतों के उस पार धकेल दिया। जैकोबिन यह सब इसलिए कर पाये कि इस संघर्ष में जनता उनके पीछे ऐक्यबद्ध थी और इसलिए कि अपनी नीतियों से उन्होंने शहरी गरीबों और जनसाधारण के हितों का साधन किया था।

जब तक विदेशी हस्तक्षेपकारियों द्वारा क्रांतिपूर्व व्यवस्था की पुनःस्थापना का वास्तविक खतरा बना हुआ था तब तक बूर्जुआ वर्ग और शहरी तथा देहाती आबादी के संपत्तिवान संस्तर सभी जैकोबिनी अधिनायकत्व के कठोर नियंत्रणों निश्चित मूल्यों सट्टेबाजी के लिए सजाओं और सारी वसूलियों को बरदाश्त करने के लिए तैयार थे।

लेकिन जैसे ही खतरा सिर से गुजरा और जैकोबिनी सेनाओं ने शत्रु को २६ जून १७९४ के दिन फ्लयूस की लड़ाई में पराजित किया कि बूर्जुआजी ने जैकोबिनी शासन की सख्ती से बचने के उपाय और साधन ढूंढना शुरू कर दिया। जल्दी ही समृद्ध और संभ्रांत किसानों तक ने भी ऐसा ही किया और वे भी दक्षिणपंथी बन गये। क्रांति ने किसानों को सामंती शोषण से मुक्त किया था और उन्हें जमीन दी थी लेकिन जैकोबिनी शासन के लगाये नियंत्रणों ने देहात के संपत्तिवान संस्तरों के लिए अपने नवप्राप्त लाभों का पूरा उपयोग कर पाना असंभव बना दिया था। इसने उन्हें जैकोबिनी अधिनायकत्व का विरोधी बना दिया जिसका अभी कल ही तक वे अविभक्त और जोरदार समर्थन किया करते थे।

इसी बीच जैकोबिनी सरकार को समाज के निर्धनतम अंशों – शहरी और देहाती गरीबों – के दृढ़ समर्थन का भरोसा भी नहीं रह गया था। इन

समूहो के प्रति उसकी नीति अतविरोधी रही थी। जहा निश्चित मूल्य पूरी तरह से उनके हितो से मेल खाते थे वहा मजदूरी की निश्चित सीमाओ अनिवार्य श्रम तथा अन्य विभिन्न कदमो ने उनमे कुछ विरोध भी पैदा किया था।

इस बात को पूरी तरह समझे बिना कि वे किस रास्ते पर चल रहे है जेकोबिन असल मे बूर्जुआजी के हितो का ही सवर्धन कर रहे थे। तत्कालीन ऐतिहासिक अवस्थाए अभी किसी अन्य उच्चतर सामाजिक ढाचे मे सक्रमण के लिए परिपक्व नही हो पायी थी। इसका यह मतलब था कि रोबसपियर और सा जूस्त सरीखे जेकोबिन नताओ के एसा समाज प्राप्त करने के सभी प्रयासो का असफल होना नियत था कि जो लोगो का सुख और न्याय प्रदान कर सके – उनके वीरतापूर्ण सघर्प के फलो का उपभोग सिर्फ बूर्जुआ वर्ग को ही करना था।

जैकोबिनो का आपसी सघर्ष

इन सभी कारको ने जेकोबिनी अधिनायकत्व मे सकट का पथ प्रशस्त कर दिया।

यह सकट सबसे पहले जेकोबिनी ब्लाक की कतारो मे ही व्यक्त हुआ। उनके बीच भीतरी सघर्ष चल पडा। आरम्भ मे तो सभी जैकोबिन सविधानवादियो से पीछा छुडाने के लिए एक हो गये। इसके बाद खुद उनकी कतारो मे ही गभीर विवाद पैदा हो गये। रोबसपियर की क्रातिकारी सरकार पर दक्षिणपक्ष से दातो और उसके समर्थको ने और वामपक्ष की ओर से पत्रकार एबेर ने जिसके पेरिस कम्यून मे और कोर्देल्यरी क्लब मे बहुत अनुगामी थे, हमला किया।

रोबसपियर के नेतृत्व मे क्रातिकारी सरकार ने इन दोनो ही दलो का सफाया कर दिया। मार्च मे क्रातिकारी प्राधिकरण ने एबेरपथियो को गिलोटिन से मौत की सजा दी और अप्रैल मे दातो और उसके समर्थको का भी यही हश्र हुआ। कुछ समय तक ऐसा लगने लगा कि जेकोबिनो के सभी दुश्मनो को नष्ट कर दिया गया है।

६ थर्मीदोर का प्रतिक्रातिकारी तख्ता पलट

लेकिन अभी दो तीन महीने ही गुजरे थे कि जेकोबिनी ब्लाक की कतारो के भीतर ही क्रातिकारी सरकार के खिलाफ एक और आदोलन पैदा हो गया। इस बार यह खुला विरोध नही वरन एक षड्यत्र था जिसे निरकुश गोपनीय

रखा गया था। इस दांतोपथिया एबरपथियो और रावसपियेर के अन्य शत्रुओं ने रचा था। षड्यन्त्रकारियो ने कन्वशन मे 'मारे' (दलदल) के डपुटियो को अपने पक्ष म करने म सफलता प्राप्त कर ली थी और उनके समर्थक लोक सुरक्षा समिति मे भी मौजूद थे।

९ थर्मीदोर (२७ जुलाई – थर्मीदार क्रातिकारी पचाग का ग्यारहवा महीना था) १७९४ को षडयन्त्रकारी सा-जूस्त और रोबसपियर के भाषणो म बाधा डालने और उनकी गिरफ्तारी का फैसला करवाने मे कामयाब हो गये। कन्वशन म रोबसपियेर के अंतिम शब्द थे – 'गणराज्य मर गया है डाकुओ का राज शुरू हो गया है'।

लेकिन पेरिस के आम लोग जैकोबिन नेताओ के समर्थन मे खड़े हो गये क्योकि वे इस बात को अच्छी तरह से महसूस करते थे कि रोबसपियर और उसके मित्रो को बचाने के लिए लडकर वे क्राति की ही रक्षा कर रहे है। रोबसपियर सा-जूस्त और कूतो को जेल से छुडा लिया गया और कम्यून के मुख्यालय – ओतल दे वील – ले जाया गया।

लेकिन अब वक्त निकल चुका था। षडयन्त्रकारियो ने कन्वशन के नाम पर सभी प्रतिक्रातिकारी बूर्जुआ तत्वो को अपनी सहायता के लिए जुटा लिया और कम्यून के खिलाफ फौजो को भेज दिया। तीन बजे सुबह प्रतिक्रातिकारी सेनाओ का एक दस्ता ओतल द वील म बलपूर्वक घुसने म सफल हो गया। अगली सुबह १० थर्मीदोर को रोबसपियर, सा जूस्त, कूतो तथा उनके निकटतम समर्थको को मुकदमा चलाये बिना ग्रेव चौक म गिलाटिन से वध कर दिया गया।

यह प्रतिक्रातिकारी तख्ता पलट जैकोबिनी अधिनायकत्व के अंत का द्योतक था। रोबसपियर की मृत्यु के बाद से बूर्जुआ प्रतिक्रिया की विजय का आरंभ हो गया।

छठा अध्याय

नेपोलियनकालीन यूरोप

फ्रास मे प्रतिक्राति का आरभ

९ थर्मीदोर १७९४ को क्रातिकारी सरकार का तख्ता पलट फ्रास मे बूर्जुआ प्रतिक्राति के आरभ का द्योतक था। यद्यपि रोबसपियर की हत्या के बाद भी कुछ समय तक कन्वेशन के डपुटी क्राति के प्रति निष्ठावान बने रहने का दिखावा करते रहे पर उन्होने इस मुखौटे को जल्दी ही उतार फेका और अपने असली रूप मे सामने आ गये।

सडको पर अब 'सुनहरे किशोरो' के गिरोहो का राज हो गया। कन्वेशन और सरकार मे तथाकथित दक्षिणपथी थर्मीदोरियो का बोलबाला था। ये क्राति के जमाने मे पैदा हुए बूर्जुआजी के एक नये सट्टाखोर अशक के प्रतिनिधि थे। उनके आग्रह पर निश्चित मूल्यो को तिलाजलि दे दी गयी और वाणिज्य के क्षेत्र की पूर्ण स्वतत्रता फिर से स्थापित कर दी गयी। नतीजे के तौर पर सभी खाद्य पदार्थो के दाम एकदम चढ गये और सट्टाखोरी अभूतपूर्व रूप मे बढ गयी। आम लोग भूखे पेट रहने लगे पर व्यापारी और सट्टेबाज बेतहाशा मुनाफे कमाने लगे।

१७९४ के नवबर मे "सुनहरे किशोर" गिरोहो ने पेरिस मे जैकोबिन क्लब नष्ट कर दिया और इस दुष्कृत्य के साथ प्रतिक्रातिकारी आतक की लहर आ गयी – जिरोदियो और फएआपथियो तथा अन्य प्रतिक्रातिकारी गुटो ने जैकोबिनो से भरपूर बदला लेना शुरू कर दिया।

जैकोबिनी अधिनायकत्व की मुख्य सामाजिक तथा जनतात्रिक उपलब्धियो को समाप्त कर दिया गया। १७९५ मे एक नया सविधान तैयार किया गया जिसके द्वारा सार्विक मताधिकार का अत कर दिया गया और सापत्तिक आधार पर निर्वाचन अर्हताओ को फिर प्रचलित कर दिया गया।

१७९५ के अंत में नये संविधान के अनुसार सत्ता डायरेक्टरी या निदेशकमंडल (पांच डायरेक्टरों या निदेशकों से बनी कार्यपालिका) और द्विसदनी विधानमंडल – वयोवृद्ध परिषद और पांच सौ की परिषद – के हाथों में दे दी गयी। डायरेक्टरी में और दोनों सदनों में भी नये लाभी, सट्टाखोर बूर्जुआजी का ही बोलबाला था। इस शासक गुट को शहरी गरीबों से सख्त नफरत थी जिनसे वह बहुत डरता था। उसकी जनविरोधी प्रतिक्रियावादी नीतियों की जड़ में उसका यही भय था। लेकिन यह नया बूर्जुआ वर्ग, जिसने भूतपूर्व भूस्वामी अभिजातों की संपदा को हथिया लिया था, पुरानी व्यवस्था की पुनःस्थापना भी नहीं होने दे सकता था। डायरेक्टरी सरकार राजतंत्रविरोधी थी और उसने राजतंत्रवादियों के सत्ता को फिर से छीनने के सभी प्रयासों को निर्ममता से कुचला। इसका यह मतलब था कि इस सरकार की नीति में किसी भी प्रकार का समन्वय नहीं था – वह वाम और दक्षिण के दो चरमों के बीच लगातार झूलती रहती थी। उसकी यह ढुलमुल नीति 'झूमाझूमी की नीति' के नाम से मशहूर हुई।

१७९६ में डायरेक्टरी ने एक सुनियोजित षड्यंत्र का रहस्योद्घाटन किया। यह "समानों का षड्यंत्र" कहलाता है, जिसका नेता ग्राक्स बाबेफ (१७६०-१७९७) था। बाबेफ वह पहला कम्युनिस्ट क्रांतिकारी था, जिसने अल्पसंख्या के अधिनायकत्व के जरिये निजी स्वामित्व को समाप्त करने की कल्पना की थी। लेकिन उसका यह कम्युनिज्म आदिम, समतावादी कम्युनिज्म था और वह सर्वहारा की ऐतिहासिक भूमिका को नहीं समझ पाया था। बाबेफ को प्राणदंड दे दिया गया और उसीके साथ-साथ "समानों का षडयंत्र" भी ध्वस्त हो गया।

यह षड्यंत्र कुचला ही गया था कि डायरेक्टरी के सिर पर एक दक्षिणपंथी खतरा आ खड़ा हुआ। १७९७ में एक राजतंत्रवादी सत्ता-परिवर्तन का खतरा पैदा हो गया था और डायरेक्टरी को एक बार फिर अपने को बचाने के लिए बल का प्रयोग करना पड़ा। दायें-बायें की इस लगातार झूमाझूमी के कारण जल्दी ही डायरेक्टरी का प्रभाव क्षीण हो गया और उसके लिए सत्ता के अवशेषों को अपने कमजोर हाथों में बनाये रख पाना भी अब बहुत मुश्किल था।

१८ ब्रूमेर का सत्ता पलट

१८ ब्रूमेर सन ८ (९ नवंबर, १७९९) की सुबह वयोवृद्ध परिषद ने इस बहाने कि एक नये जैकोबिनी षड्यंत्र का खतरा है नेपोलियन को

सगस्त्र सनाओ का सनापति नियुक्त कर दिया। भावविह्वल स्वर म नपालियन न प्रतिना की कि इस परिस्थिति म जब गणराज्य पर एक भयानक खतरा मडरा रहा है और एक भयकर षडयन्त्र का पता लगाया गया है वह—वानापात—'स्वाधीनता समानता और जन प्रतिनिधित्व क पुनीत सिद्धाता पर आधारित गणतन्त्र की रक्षा करगा। यह एक सुविवचित और अच्छी तरह स तैयार किय हुए राजनीतिक सत्ता परिवर्तन का समारभ था। अगल दिन की शाम तक सत्ता परिवर्तन पूरा हो गया। डायरक्टरी और उसक निकाया का अत्यधिक 'विधिसगत' ढग स उखाड फक दिया गया और उसक स्थान पर एक नयी व्यवस्था—कासुनेट या कोसुलशाही—की स्थापना कर दी गयी।

लेकिन चाह पूर ब्रूमर जनरल वानापार्त अपन सक्षिप्त और किसी हद तक वमिर पैर भाषणा म हर किसी का यह विश्वास दिलान म लगा रहा कि वह जन प्रतिनिधित्व क पुनीत सिद्धाता" की रक्षा करन के लिए कृतसकल्प है इस नवीनतम सत्ता परिवतन का वास्तविक प्रयोजन इन पुनीत सिद्धाता का तिलाजलि दना और उसका अपना अबाध अधिनायकत्व स्थापित करना ही था।

कोसुलेट

औपचारिक रूप म डायरक्टरी क बाद म फ्रास मे ज्यादा कुछ नही बदला। वोनापार्त न अपन सहकासुलो को कहा कि व सक्षिप्त अस्पष्ट शब्दो' म लिखा कर। ब्रूमर क सत्ता परिवर्तन के बाद स्वीकृत सविधान जो सन ८ का सविधान कहलाता है नपोलियन क इस नुस्ख के अनुसार ही तैयार किया गया था। वह अत्यत सक्षिप्त और बेहद अस्पष्ट था। फ्रास पूववत गणराज्य ही बना रहा। कन्वेशन द्वारा जारी किये गये क्रातिकारी पचाग तथा स्वाधीनता समानता बधुत्व क क्रातिकारी नारो और स्वाधीनता तथा समानता की प्रतीकात्मक आकृतियो को भी रहन दिया गया

लेकिन कायकारी सत्ता डायरक्टरी से तीन कोसुला के हाथो म चली गयी और दोनो विधायी सदनो का स्थान चार निकाया—सीनट राज्य परिषद ट्रिब्यूनट तथा विधानाग—न ले लिया। उनक सदस्य चुने नही जाते थे बल्कि सरकार द्वारा नियुक्त किय जात थ। सख्या म अधिक होन पर भी इन चारो सस्थाओ ने कोई खास काम नही किया क्योकि उनके कार्यक्षत्र बहुत परस्परव्यापी थे और उनकी सत्ता वास्तविक नही दिखावटी ही अधिक थी।
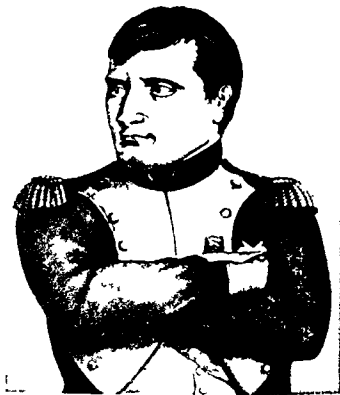
नेपोलियन बोनापार्त

गणराज्य मे वास्तविक सत्ता अब एक ही व्यक्ति के हाथो म थी और वह था प्रथम कासुल जनरल बोनापार्त (१७६९ १८२१)। नवबर १७९९ म जब उसन अपना सत्ता परिवर्तन किया था तब तक उसकी प्रतिष्ठा स्थापित नही हो पायी थी और उसक पास देश के नतृत्व की आकाक्षा करन का कोई ठास आधार न था। बेशक वह एक श्रेष्ठ सेनानायक के नाते मशहूर था लेकिन उस समय देश म कितने ही बढिया सेनानायक – मोरो जूर्दा मसेन आदि – थे। इसके अलावा इस आशय की अफवाह भी फैली हुई थी कि बोनापार्त अपनी मिस्री सेना को बिना किसी सरकारी अनुमति के एकदम निराशाजनक स्थिति म छोडकर चला आया है।

बोनापार्त यह सब जानता था और इसीलिए आरभ म वह अपन भाषणो म अपनी भूमिका को पृष्ठभूमि म रखते हुए गणराज्य और क्राति के पुनीत

सिद्धातो को प्रमुखता प्रदान करता रहा। लेकिन साथ ही वह बिलकुल चुपचाप और गुप्त रूप म गणराज्य और उन्ही सिद्धातो का जिनकी वह इतनी बात किया करता था काम तमाम करन के लिए हर प्रयास कर रहा था। उमन नाति द्वारा स्थापित ससदीय प्रणाली तथा स्थानीय स्वशासन का अत कर दिया और उनके स्थान पर दढ दशव्यापी केंद्रीकृत शासन की स्थापना की। कामुलेट क अधीन स्थित गृहमत्रालय और सर्वशक्तिशाली पुलिस जिसन राष्ट्र क जीवन के सभी क्षेत्रो – राजनीतिक आत्मिक और वैयक्तिक – म प्रवश कर लिया था सबस महत्वपूर्ण राजकीय निकाय बन गये। पुलिस व्यवस्था जोज़ेफ फूगे क हाथो म दे दी गयी जो नाति के पहले पादरी था कन्वेशन मे आतकवादी बन गया था और डायरक्टरी क समय थर्मीदोरी था। वह बेहद धूर्त तिकडमी और धोखेबाज था और गुप्त पडयत्र रचन म माहिर था। उसन अपन नय स्वामी को अपनी योग्यताओ स जल्दी ही परिचित करवा दिया। राजतत्रवादियो द्वारा १८०० म नेपालियन बोनापार्त के विरुद्ध रचे गये पडयत्र को फूशे ने तुरत – और प्रथम कासुल क प्रत्यक्ष प्रोत्साहन स ही – जैकोबिनो का काम घोपित कर दिया। इसन उस जैकोबिनो के और राजतत्रवादियो क भी खिलाफ सक्षेप म उन सभी क खिलाफ जो ज्यादा ही आजादी दिखात थे कार्रवाई करन का अच्छा बहाना द दिया। बहाना मिलते ही योजना को उसकी तर्कसगत परिणति तक ल जाया गया – प्रेस की स्वतत्रता खत्म कर दी गयी और दसियो अखबारो को बद कर दिया गया। जो तरह अखबार प्रकाशित भी होते रह उन सभी को पूरी तरह स सरकार के मुखपत्रो म परिणत कर दिया गया।

१८०० का अभियान और दूसरे सहबध का अत

लेकिन प्रथम कोसुल की सत्ता क सुदृढीकरण के लिए अकेले पुलिस उपाय ही काफी नही थे। नेपोलियन इस बात को समझता था। उस सैनिक सफलता की और अपन दश के सीमाता के भी बाहर प्रसिद्धि की जरूरत थी। इसलिए उसन फ्रासीसी सेना की कमान स्वय अपन हाथ म लेकर उत्तरी इटली पर चढाई की, जहा प्रमुख आस्ट्रियाई फौजे तैनात थी। फ्रासीसी सेना न सबसे कठिन और अप्रत्याशित रास्ता पकडा – उसन एल्पस पर्वतो का ऊचे ग्राड सेंट बर्नार्ड दर्रे से पार किया। जून क आरभ म वह शत्रु सना क पिछवाडे जा पहुची। १४ जून को मरगो नामक ग्राम क पास भयानक लडाई के बाद, जिसम बहुत समय तक हार जीत का फैसला नही हो पा रहा था नपोलियन न आस्ट्रियाई सेना को करारी मात दी – युद्ध म बच रह शत्रु दहशत म आकर जान बचाकर भाग गय।

फ्रासीसी सेना के आस्ट्रियाई अभियान का निर्णय इसी युद्ध से हो गया था। जनरल मारो के नेतृत्व मे होहेनलिंडन मे फ्रासीसी सेना की एक और विजय के बाद आस्ट्रियाई सुलह करने के लिए पहले से भी अधिक आतुर हो गये। ९ फरवरी १८०१ को हस्ताक्षरित ल्यूनवील की सधि के अतर्गत, जिसकी शर्ते विजेता ने ही निर्धारित की थी, फ्रास ने बेल्जियम तथा राइन के पश्चिमी तट पर स्थित समस्त जर्मन प्रदेश का अधिग्रहन कर लिया और आस्ट्रिया का सभी तथाकथित "अनुजात या दुहिता गणराज्यो"–हेलवीशियन गणराज्य (स्विटजरलैंड) बटावियाई गणराज्य (हालैड), लिगूरियाई गणराज्य (जेनोआ प्रदेश) और सिसल्पाइन (लबार्डिया)–का, जो व्यवहार मे पूर्णत फ्रास के अधीन थे, मान्यता प्रदान करनी पडी और प्यमात फ्रासीसी सेना के अधिकार मे आ गया।

अठारहवी सदी के अत और उन्नीसवी सदी के आरभ का इगलैड

ल्यूनवील की सधि ने फ्रास को पश्चिमी युरोप मे सर्वप्रमुख शक्ति बना दिया। लेकिन अभी इगलैड–फ्रास का पारपरिक शत्रु–बाकी था, जो बहुत लबे समय से यूरोप और औपनिवेशिक विश्व मे फ्रासीसी प्रभुत्व को चुनौती देता आया था। लगभग दस साल से इगलैड फ्रास से लडता चला आया था। इस काल मे नवीनतम यात्रिक आविष्कारो के प्रचलन के सवेग से उसके उद्योगो ने जबरदस्त प्रगति की थी, उसका नौसैनिक बेडा काफी बढ गया था और बड़े बूर्जुआ वर्ग ने युद्धो से बहुत मुनाफा कमाया था। लेकिन कुल मिलाकर यह भारी सैनिक व्यय देश की अर्थव्यवस्था के लिए हानिकर रहा था–दाम और खासकर खाद्य पदार्थो के दाम बहुत तेजी से बढ गये थे। जनसाधारण की निर्वाह अवस्थाए उत्तरोत्तर दुसह होती जा रही थी। १७९५ मे कई शहरो मे खाद्य पदार्थो की कीमतो के सवाल पर दगे हो गये। गरीबो के मुहल्लो की दीवारो पर लोगो को रोटी और शाति दो, नही तो बादशाह का सिर उडा दो जैसे नारे भी दिखायी देने लगे। १७९७ मे इगलिश चैनल और उत्तर सागर मे अग्रेजी जगी जहाजो के जहाजियो ने बगावत कर दी। कही कही तो जहाजियो ने कप्तानो और अफसरो को चेतावनी देने के लिए मस्तूलो पर फासी के फदे लटका दिये थे। १७९८ मे आयरलैड मे विद्रोह फूट पडा।

उस समय अग्रेजी सरकार का प्रधान कनिष्ठ विलियम पिट (१७५९-१८०६) था जो रिआयतो, मगर ज्यादातर दमन के जरिये इन बलवो को कुचलने मे सफल रहा था। वह फ्रास पर विजय प्राप्त करने पर जोर देता था। लेकिन सुवारोव की जबरदस्त विजयो के परिणामस्वरूप रूस और फ्रास मे सुलह

हो जान जो इगलैड क लिए एक भारी झटका था और आस्ट्रिया के भी युद्ध स वाहर आ जान पर वह समझ गया कि फ्रास पर विजय पान की आशा नही की जा सकती। जनता शाति की माग कर रही थी। पिट न इस्तीफा द दिया। मार्च १८०२ म इगलैड और फ्रास क बीच अम्य मे पारस्परिक रिआयतो क आधार पर सधि पर हस्ताक्षर हो गय। दस साल के लबे युद्धो के वाद, जिनम उसे अपार जन धन की हानि झलनी पडी थी फ्रास को पहली वार शाति सुलभ हो पायी। कुछ शत्रुओ का उसन पराजित कर दिया था और शेप को उसके साथ सम्मानपूर्ण सधि करनी पडी थी। सभी देश अव उसे यूरोप म सवसे प्रवल सैन्य शक्ति मानने लग गये थे।

नेपोलियन का सम्राट बनना

अपनी विजयो क बल पर फ्रास न अभूतपूर्व प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी और वह यूरोप की सर्वोच्च शक्ति के नाते अपनी कीर्ति के लगभग चरम पर पहुच गया था। फ्रास की सभी मफलताए चूकि देश के प्रथम कासुल के यशस्वी नाम के साथ ही जुडी हुई थी इसलिए बोनापार्त ने निश्चय किया कि उसके लिए अपनी वास्तविक आकाक्षाओ की सिद्धि करन का ममय आ गया है। उसके लिए अव गणतत्रीय हेतु क प्रति निष्ठावान सैनिक की अपनी पुरानी भूमिका को बनाय रखना जरूरी नही रह गया था। १८०२ मे बोनापार्त को आजीवन कोसुल बना दिया गया और १८०४ म उसे फ्रासीसियो का सम्राट" उदघोपित कर दिया गया। नपोलियन पोप द्वारा राज्याभिपेक करवाना चाहता था, जैसे एक हजार साल पहले शार्लमान का हुआ था। किंतु दोनो राज्याभिपको म यह अतर था कि जहा शार्लमान इसके लिए पोप क पास गया था वहा नेपोलियन ने अब पवित्र पिता को स्वय परिस आने क लिए मजबूर किया और सिहासनारोहण समारोह म उसन शाही ताज को पोप के हाथो से छीन लिया और स्वय अपन सिर पर धर लिया।

बूर्जुआ साम्राज्य

गणराज्य का स्थान अव साम्राज्य ने ले लिया था। त्यूलरिय राजप्रासाद म अव नये सम्राट का दरवार था और नपोलिय न ठान लिया था कि भव्यता और शान शौकत मे उसका दरवार यूराप म मवस ऊपर रहना चाहिए। एक नया ही शाही अभिजातवर्ग पैदा हो गया। तन मन स वानापार्त क वफादार भूतपूर्व क्लर्क, साईस और छोटे व्यापारी सामती पदा और खितावा स विभूपित हा गय। नये साम्राज्य का राज्यचिह्न था काले मखमल पर मुनहरी मधुमक्खिया।

अब एक नया ही राजतन्त्र अस्तित्व म आ गया था – शक्तिशाली, एश्वर्य और वैभव की वाहरी चमक से दमकता राजतन्त्र। लेकिन यह काई सामती राजतन्त्र नही था – यह बूर्जुआ राजतन्त्र था। यह सम्राट नपालियन प्रथम के अधीन बूर्जुआ साम्राज्य था।

नोपोलियन न क्राति की सभी लाकतन्त्रीय उपलब्धिया का खत्म कर दिया। गणराज्य के अवसान क साथ अनक नवप्राप्त लोकतन्त्रीय स्वतन्त्रताओ का भी हनन हो गया। लोकतन्त्रवादियो का निर्मम उत्पीडन होन लगा। दश म सम्राट का एकव्यक्ति अधिनायकत्व स्थापित हो गया। लेकिन स्वय यह अधिनायकत्व नपोलियन की सभी नीतिया की ही भाति सुस्पष्ट सिद्धाता पर आधारित था और सुनिश्चित लक्ष्यो का अनुगमन करता था। वानापार्त न न केवल क्राति द्वारा बूर्जुआजी क हितो म हुए सपत्ति क पुनवितरण का कायम ही रखा वल्कि उसन बूर्जुआ उपलब्धिया क सुदृढीकरण और सरक्षण के लिए भी सभी कुछ किया। उसकी सभी नीतिया उसक सारे सामाजिक तथा नागरिक कानूना न बूर्जुआजी और भूस्वामी किसान समुदाय क हिता का सवर्धन किया।

वशगत उत्तराधिकार के स्वार्थो न नय सम्राट के लिए नयी सैनिक विजय करना आवश्यक वना दिया था। साम्राज्य के राजसिहासन को कीर्ति के प्रभामडल स विभूपित करना जरूरी था। पश्चिमी यूरोप पर अपना प्रभुत्व जमान के आकाक्षी फ्रासीसी बूर्जुआ वर्ग के हित भी इसी का तकाजा कर रहे थे। लेकिन उधर न इगलैड जिसे यूरोप की प्रमुख आर्थिक तथा औद्योगिक शक्ति माना जाता था और जिसका पश्चिमी दुनिया म अग्रणी होन का दावा था और न यूरोप क पुराने सामती राजतन्त्र ही इस नये, बूर्जुआ साम्राज्य की प्रमुखता को स्वीकार करन क लिए तैयार थे। १८०१ और १८०२ की शाति सधियो को दीर्घकालिक युद्धविरामो की अपेक्षा दम लने की मुहलतो जैसा ही ज्यादा समझा जाता था। इसी वीच दोनो ही पक्ष युद्ध की तैयारिया करने मे लगे हुए थ।

तीसरा सहबध

१८०५ के शरद तक यूरोप फिर बडे पैमान की लडाई मे उलझ चुका था। अंग्रेज़ राजनयज्ञो क उपक्रम स एक नय और शक्तिशाली फ्रासविरोधी सहबध की स्थापना हो गयी थी। इसम इगलैड रूस और आस्ट्रिया शामिल थे और प्रशा भी फ्रास पर हमला करने के लिए तैयार था। घटनाक्रम वडी तेजी के साथ चला। २० अक्तूबर का नपालियन ने आस्ट्रियाई सेना को ऊल्म म हथियार रखन क लिए विवश कर दिया और १३ नववर को फ्रासीसी

सेनाओ ने वियना मे विजय प्रवेश किया। किंतु इन दोनो विजयो के कुछ ही पूर्व, २१ अक्तूबर को अंग्रेजी जलसेना न एडमिरल नल्सन की कमान म ट्रैफलगर की लडाई मे फ्रासीसी स्पेनी बेडे का लगभग पूरी तरह से सफाया कर दिया था। नपोलियन को ब्रिटेन पर आक्रमण करने की अपनी योजनाओ को त्यागना पडा। ट्रैफलगर न ऊल्म की कसर पूरी कर दी और शक्ति सतुलन को फिर बहाल कर दिया।

२ दिसम्बर, १८०५ का दानो पक्षो की मुख्य सेनाओ का इस युद्ध की निर्णायक लडाई म आमना-सामना हुआ। औस्टरलिटज़ की लडाई म जो तीन सम्राटो की लडाई" के नाम स मशहूर हुई नपोलियन ने आस्टियाई और रूसी सेनाओ को बुरी तरह पराजित किया। रूस क जार अलेक्सादर और आस्टिया के सम्राट फ्रासिस को घोर अफरा-तफरी म रणक्षेत्र से भागना पडा।

कुछ ही दिन बाद आस्ट्रिया ने फ्रास के आगे घुटने टेक दिये। २६ दिसबर को उसने प्रेसबुग की सधि की अपमानजनक शर्तो को स्वीकार कर लिया। इसके परिणामस्वरूप 'जर्मन जाति के पवित्र रोमन साम्राज्य का अत हो गया और आस्टिया को अपने प्रदेश का काफी बडा भाग प्रसारमान फ्रासीसी साम्राज्य को दे देना पडा जिससे फ्रास की राजनीतिक प्रतिष्ठा और भी अधिक बढ गयी।

चौथा सहबध

लेकिन रूस और इगलैंड अभी मैदान मे ही थे। १८०६ म प्रशा सैक्सनी और स्वीडन भी उनके साथ शरीक हो गये और इस प्रकार फ्रास के विरुद्ध चौथा सहबध अस्तित्व म आया।

अक्खड और आत्मश्लाघी प्रशियाई सैन्याधिकारी वर्ग न जिसने जर्मन साम्राज्य और सेना को लौह अनुशासन और विवधन म जकड रखा था फ्रेडरिक महान के युग की देखादेखी 'क्रातिकारी यीगूद्राही पर तडित गति से विजय पाने की डींग हाकी थी। लेकिन लडाई शुरू ही हुई थी कि घटनाओ न बिलकुल ही दूसरा रुख ले लिया।

८ अक्तूबर १८०६ को फ्रासीसी सेना न नपोलियन की कमान म नया अभियान शुरू किया। छ दिन के भीतर येना (जेना) और औएरस्टाल्ट (आरस्टट) नगरो के पास हुई दो लगभग एककालिक लडाइयो म प्रशियाई सेना के मुख्य भाग का लगभग सफाया हो गया। इसके बाद प्रशियाइयो न दहशत म आकर एक के बाद दूसरे शहर को छोडते हुए पीछे हटना शुरू कर दिया। अतिम प्रशियाई दुर्ग माग्देबुर्ग न जिसमे ज़बरदस्त तोपखाना और २२ ००० सैनिक थे बिना लडे ही फ्रासीसी अग्रिम सेना के सेनानायक मारान

नई के सामने जिसे अपने एकमात्र भारी हथियारों—कुछ हलकी तोपों—से कुछ गोले चलाने का समय भी मुश्किल से ही मिल पाया था, आत्मसमर्पण कर दिया। लडाई शुरू होने के एक महीने के भीतर ही प्रशा खत्म हो चुका था। जैसा कि महान जर्मन कवि हाइने ने कहा था, "नेपोलियन की बस एक ही फूक से प्रशा हवा में उड गया।"

लेकिन रूस लडता रहा। ७-८ फरवरी, १८०७ को फ्रासीसियो और रूसियो के बीच प्रसिद्ध एयलाऊ में भयकर लडाई हुई। अपार जनक्षति के बावजूद इसमे किसी भी पक्ष की हार-जीत का फैसला न हो पाया। लेकिन १४ जून को फ्रीडलैंड में हुई दूसरी बडी लडाई में नेपोलियन ने एक और महती विजय प्राप्त की।

टिल्सिट की सधि

दोनो ही पक्ष अब लडाई बद करने के इच्छुक थे। नेपोलियन और अलेक्सादर टिल्सिट में मिले और ७ जुलाई, १८०७ को उन्होने फ्रास और रूस के बीच शाति और मैत्री की सधि पर हस्ताक्षर किये। रूस ने पश्चिम यूरोप में नेपोलियन की सभी विजयो और उसके द्वारा क्रियान्वित सुधारो को मान्यता दे दी। अपनी बारी मे नेपोलियन ने मध्य पूर्व में रूसी दावो को अपना दृढ समर्थन प्रदान करने का वादा किया। इस प्रकार रूस इगलैड के विरुद्ध फ्रास का मित्रराष्ट्र बन गया और यूरोपीय व्यवस्था (काटिनटल सिस्टम) में शामिल हो गया, जो वस्तुत १८०६-१८०७ में नेपोलियन द्वारा की गयी ब्रिटिश द्वीपसमूह की नाकाबदी ही थी। नेपोलियन इस तरह इगलैड के सामने भुखमरी या आत्मसमर्पण का विकल्प रखकर उसे घुटने टेकने के लिए मजबूर करना चाहता था। लेकिन जैसा कि आनेवाले वर्षों ने दिखाया, उसकी यह आशा निराधार सिद्ध हुई।

१८०९ मे नेपोलियनी फ्रास को पाचवे सहबध से युद्ध में उतरना पडा, जिसका सयोजन इगलैड ने ही किया था। महाद्वीप पर फ्रास का मुख्य शत्रु अब भी आस्ट्रिया ही था, लेकिन उसकी सेनाओ को दो-तीन महीने के भीतर ही ध्वस्त कर दिया गया और अक्तूबर, १८०९ मे आस्ट्रियाई सरकार को फ्रास द्वारा अधिकृत वियेना मे अत्यत दुसह और अपमानजनक सधि करनी पडी।

नेपोलियनी फ्रास की विजयो के कारण

१८०९ मे फ्रास अपनी कीर्ति और शक्ति के शिखर पर था। बेल्जियम, हालैड, उत्तरी तथा मध्य इटली, इलीरिया और डलमेशिया अब फ्रासीसी

साम्राज्य के अग थे। उत्तरी तथा मध्य इटली म नेपोलियन ने एक इतालवी राज्य की स्थापना की जहा उसका सौतेला वेटा यूजेन वोहार्ने उसके प्रतिशासक की हैसियत से राज करता था। शेष सपूर्ण पश्चिमी तथा मध्य यूरोप के राज्य फ्रास के अधीनस्थ राज्य बन चुक थे। स्पेन के सिहासन पर नेपोलियन के भाई जोजेफ को आसीन कर दिया गया था। नेपोलियन ने अपन साले मार्शल म्यूरात को नेपल्स का राजा बना दिया। नेपोलियन स्वय राइनबुद अर्थात राइनी महासघ का जिसमे अधिकाश पश्चिमी जर्मन राज्य सम्मिलित थे प्रधान बन गया। भूलपूर्व प्रशियाई प्रदेश के विभिन्न भागो से निर्मित वेस्टफालिया राज्य नेपोलियन क छोटे भाई जेरोम को द दिया गया। नेपोलियन द्वारा परास्त आस्ट्रिया, प्रशा तथा सैक्सनी अब उसके मित्रराष्ट्र वन गये। रूस ने उसके साथ दोस्ताना सबध बनाये रखा। १८०६ तक नेपोलियनी फ्रास व्यवहारत सपूर्ण यूरोप पर प्राधान्य स्थापित कर चुका था।

फ्रासीसी सेना की इस आश्चर्यजनक सफलता और चमत्कारी विजयो तथा उसके तीव्र उत्कर्ष के मूल मे क्या था? नेपोलियन की प्रतिभा के बारे म आम तौर पर बहुत कुछ कहा जाता है और उसे लगभग "अतिमानव' ही सिद्ध कर दिया जाता है। निस्सदेह, बोनापार्त विरल प्रतिभा का सेनानायक और राजनेता था यद्यपि उसमे स्वाभाविकतया किसी भी प्रकार की अतिमानवता नही थी। नवजात बूर्जुआजी न अपनी सत्ता के उषाकाल मे अपने हितो क कितने ही विलक्षण पक्षपोषको को जन्म दिया था। नेपोलियन मे सिर्फ काम करने की विरल क्षमता ही नही थी वह अत्यत साहसी सकल्पवान और अनम्य इच्छा शक्तिवाला आदमी भी था। इस ठिगने दुवले से आदमी म जिसे युवावस्था मे बेहोशी क दौरे आया करते थे दूसरो पर अपना प्रभाव जमाने की विरल प्रतिभा थी। जब नेपोलियन को २७ साल की उम्र मे ही इतालवी अभियान की कमान दी गयी थी और जनरल ओजरो न जिसकी पदोन्नति मे उसने पिछाड दिया था इस पर एतराज करना किया था तो बोनापार्त ने ठडे स्वर मे कहा था जनरल हो सकता है कि आप कद म मुझसे पूरे एक हाथ ऊचे हो लेकिन अगर आप मेरी नियुक्ति पर एतराज करते रहे, तो मैं पलभर मे इस अतर को मिटा दूगा। अधिनायक बन जाने के बाद नेपोलियन की निष्ठुरता अपने आसपासवालो क निए तिरस्कार की भावना और उसकी अदम्य महत्वाकाक्षा स्पष्टत प्रकट हो गयी। लेकिन अत्यधिक प्रतिभाशाली नता होन के कारण नेपोलियन अपन को सदा योग्य और प्रतिभाशाली सहायको से घिरा हुआ रखता था। दावू नई म्यूरात, मसेन, वर्त्ये लान तथा उसके अन्य मार्शल सभी अप्रतिम सेनानायक थे। नेपोलियन क विना भी उनम से हर कोई अपन युग का उत्कृष्ट

नई के सामने जिसे अपने एकमात्र भारी हथियारों – कुछ हलकी तोपों – से कुछ गोले चलाने का समय भी मुश्किल से ही मिल पाया था, आत्मसमर्पण कर दिया। लडाई शुरू होने के एक महीने के भीतर ही प्रशा खत्म हो चुका था। जैसा कि महान जर्मन कवि हाइने ने कहा था, 'नेपोलियन की बस एक ही फूंक से प्रशा हवा में उड गया।"

लेकिन रूस लडता रहा। ७ ८ फरवरी, १८०७ को फ्रांसीसियों और रूसियों के बीच प्रसिद्ध एयलाऊ में भयंकर लडाई हुई। अपार जनक्षति के बावजूद इसमें किसी भी पक्ष की हार-जीत का फैसला न हो पाया। लेकिन १४ जून को फ्रीडलैंड में हुई दूसरी बडी लडाई में नेपोलियन ने एक और महती विजय प्राप्त की।

टिल्सिट की संधि

दोनों ही पक्ष अब लडाई बंद करने के इच्छुक थे। नेपोलियन और अलेक्सांदर टिल्सिट में मिले और ७ जुलाई १८०७ को उन्होंने फ्रांस और रूस के बीच शांति और मैत्री की संधि पर हस्ताक्षर किये। रूस ने पश्चिम यूरोप मे नेपोलियन की सभी विजयों और उसके द्वारा नियान्वित सुधारों को मान्यता दे दी। अपनी बारी में नेपोलियन ने मध्य पूर्व में रूसी दावों को अपना दृढ समर्थन प्रदान करने का वादा किया। इस प्रकार रूस इंगलैंड के विरुद्ध फ्रांस का मित्रराष्ट्र बन गया और यूरोपीय व्यवस्था (कांटिनेंटल सिस्टम) में शामिल हो गया जो वस्तुतः १८०६-१८०७ मे नेपोलियन द्वारा की गयी ब्रिटिश द्वीपसमूह की नाकाबंदी ही थी। नेपोलियन इस तरह इंगलैंड के सामने भुखमरी या आत्मसमर्पण का विकल्प रखकर उसे घुटने टेकने के लिए मजबूर करना चाहता था। लेकिन जैसा कि आनेवाले वर्षों ने दिखाया उसकी यह आशा निराधार सिद्ध हुई।

१८०९ में नेपोलियनी फ्रांस को पांचवें सहबंध से युद्ध मे उतरना पडा, जिसका संयोजन इंगलैंड ने ही किया था। महाद्वीप पर फ्रांस का मुख्य शत्रु अब भी आस्ट्रिया ही था, लेकिन उसकी सेनाओं को दो तीन महीने के भीतर ही ध्वस्त कर दिया गया और अक्तूबर, १८०९ मे आस्ट्रियाई सरकार को फ्रांस द्वारा अधिकृत वियेना में अत्यंत दुःसह और अपमानजनक संधि करनी पडी।

नेपोलियनी फ्रांस की विजयों के कारण

१८०९ में फ्रांस अपनी कीर्ति और शक्ति के शिखर पर था। बेल्जियम हालैंड उत्तरी तथा मध्य इटली इलीरिया और डलमेशिया अब फ्रांसीसी

राज्य के अंग थे। उत्तरी तथा मध्य इटली में नेपोलियन ने एक इतालवी य की स्थापना की जहां उसका सौतेला बेटा यूजेन बोहार्ने उसके प्रतिशासक हैसियत से राज करता था। शेष संपूर्ण पश्चिमी तथा मध्य यूरोप के य फ्रांस के अधीनस्थ राज्य बन चुके थे। स्पेन के सिंहासन पर नेपोलियन भाई जोज़ेफ़ को आसीन कर दिया गया था। नेपोलियन ने अपने साले र्शल म्यूरात को नेपल्स का राजा बना दिया। नेपोलियन स्वयं राइनबुंद र्गत राइनी महासंघ का जिसमें अधिकांश पश्चिमी जर्मन राज्य सम्मिलित थे प्रधान बन गया। भूतपूर्व प्रशियाई प्रदेश के विभिन्न भागों निर्मित वेस्टफ़ालिया राज्य नेपोलियन के छोटे भाई जरोम को दे दिया गया। नेपोलियन द्वारा परास्त आस्ट्रिया प्रशा तथा सैक्सनी अब उसके मित्रराष्ट्र बन गये। रूस ने उसके साथ दोस्ताना संबंध बनाये रखा। १८०६ तक नेपोलियनी फ्रांस व्यवहारतः संपूर्ण यूरोप पर प्राधान्य स्थापित र चुका था।

फ्रांसीसी सेना की इस आश्चर्यजनक सफलता और चमत्कारी विजयों था उसके तीव्र उत्कर्ष के मूल में क्या था? नेपोलियन की प्रतिभा के बारे आम तौर पर बहुत कुछ कहा जाता है और उसे लगभग "अतिमानव" ही सिद्ध कर दिया जाता है। निस्संदेह बोनापार्त विरल प्रतिभा का सेनानायक और राजनेता था, यद्यपि उसमें स्वाभाविकतया किसी भी प्रकार की अतिमानवता नहीं थी। नवजात बूर्जुआज़ी ने अपनी सत्ता के उभार में अपने हितों के कितने ही विलक्षण पक्षपोषकों को जन्म दिया था। नेपोलियन में सिर्फ़ काम करने की विरल क्षमता ही नहीं थी वह अत्यंत साहसी, महत्त्वाकांक्षी और अनम्य इच्छा शक्तिवाला आदमी भी था। इस ठिगने, दुबले से आदमी में जिसे युवावस्था में बेहोशी के दौरे आया करते थे दूसरों पर अपना प्रभाव जमाने की विरल प्रतिभा थी। जब नेपोलियन को २७ साल की उम्र में ही इतालवी अभियान की कमान दी गयी थी और जनरल आजेरो ने जिसको पदोन्नति में उसने पिछाड दिया था, इस पर एतराज़ करना किया था, तो बोनापार्त ने ठंडे स्वर में कहा था, "जनरल, हो सकता है कि आप कद में मुझसे पूरे एक हाथ ऊंचे हों लेकिन अगर आप मेरी नियुक्ति पर एतराज़ करते रहे, तो मैं पलभर में इस अंतर को मिटा दूंगा।" अधिनायक बन जाने के बाद नेपोलियन की निष्ठुरता, अपने आसपासवालों के लिए तिरस्कार की भावना और उसकी अदम्य महत्त्वाकांक्षा स्पष्ट प्रकट हो गयी। लेकिन अत्यधिक प्रतिभाशाली नेता होने के कारण नेपोलियन अपने को सदा योग्य और प्रतिभाशाली सहायकों से घिरा हुआ रखता था। नेई, म्यूरात, मसेन, वर्थ्ये नाना... सभी ... सेनानायक थे। नेपोलियन के बिना भी ... अपने यु...

सेनानायक बन सकता था। नपोलियन के पास नागरिक सेवाओ म काम करनेवाले भी बड़े अत्यंत योग्य सहायक थे।

किंतु यह असंदिग्ध है कि नपोलियन और उसके निकटवर्ती सहायकों के वैयक्तिक गुण ही अपने शत्रुओं पर फ्रास की विजयों की अभूतपूर्व लहर का कारण नही हो सकते। अत्यल्प समय म पाच विराट यूरोपीय सहबंधो का क्रमावश अकेले सामना करने और उन सभी को पराजित करने म फ्रास की इतनी शानदार सफलताओ का कारण यही तथ्य है कि बूर्जुआ फ्रास निरंकुशतावादी यूरोप की सामती व्यवस्थाओ की तुलना म अधिक उन्नत समाज का प्रतिनिधित्व करता था।

नपोलियन के अधिनहनवादी और लुटेरे लक्ष्यो के बावजूद यूरोप के सामती निरंकुश राज्यो के विरुद्ध उसके युद्ध—कम से कम कुछ समय के लिए—एक स्पष्टत प्रगतिशील घटना के परिचायक थे। जहा कही भी फ्रासीसी सेनाए जाती थी वे पुराने सामती रिवाजो को मिटा देती थी और उनके स्थान पर अधिक प्रगतिशील बूर्जुआ सामती स्वरूपो की स्थापना करती थी। उदाहरण के लिए जब नपोलियन ने पवित्र रोमन साम्राज्य को ध्वस्त किया और दसियो बल्कि सैकडो छोटे छोटे जर्मन राज्यो को जो सामती विशिष्टतावाद और अलगाव की विरासत थे, यूरोप के नक्शे से मिटाया तो उसने जर्मन जनगण की उन्नति म एक महत्वपूर्ण योगदान किया था।

नेपोलियनी साम्राज्य मे आतरिक अतर्विरोधो का बढना

नपोलियन की विजय योजनाए जितनी ही अधिक दूरगामी और महत्वाकाक्षी होती गयी और साम्राज्य के सीमात जितने ही अधिक फैलते गये साम्राज्य के अधीनस्थ प्रदेशो मे फ्रासीसी शासन का जूआ उतना ही ज्यादा असह्य बनता और नपोलियन की नीति के प्रगतिशील तत्व भी उतनी ही तेजी से विलुप्त होते गये। जो प्रतिक्रियावादी अधिनहनवादी तत्व उसकी योजनाओ म बिलकुल आरभ मे ही विद्यमान रहा था वही अब उसकी नीति का मुख्य लक्षण और आगे चलकर एकमात्र लक्ष्य बनकर रह गया।

नपोलियनी युद्धो का बुनियादी लक्ष्य था यूरोप म फ्रास की सैनिक, राजनीतिक वाणिज्यिक और औद्योगिक प्रधानता की स्थापना। नपोलियन ने विजित प्रदेशो को लूट खसोटकर नि शेष कर दिया। उसने उन्हे दास बनाकर अपने औद्योगिक कच्चे मालो, धन तथा अन्य सपदाओ से पूर्णत हीन कर दिया। नपोलियन का प्रभुत्व जल्दी ही यूरोप की अनेक जातियो की राष्ट्रीय अखडता के लिए खतरा बन गया। धीरे-धीरे अधीनस्थ प्रदेशो म राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन पैदा होने लगे। आरभ म ये आदोलन कमजोर और

गुप्त र लेकिन तमाम र गाव र रही अधिक गाहगिर हात गय और आग चलकर उनान साम्राज्य र पतन म बहुत महत्वपूर्ण याग दिया।

स्पेन म जन सघप

१८०७ १८०८ म फ्रासीसी सनाआ न स्पन रा अधिकार म न लिया और नपालियन र भाई जानफ रा स्पना राजसिंहासन पर बैठा दिया गया। लेकिन स्पनी जनता विदेशी अधिकार रा स्वीकार करन र लिए तैयार नहीं थी और उसन आक्रमणकारियो र विरुद्ध विद्राह कर दिया। फ्रासीसिया न मद्रिड म बगावत रा कुचल दिया पर छापामार कारवाइया का व नही रोक सक। जुलाई १८०८ म जनरल दूपा र २०००० सैनिका रा जगनन म छापामारा र सामन हथियार डालन पड। यह समाचार सुन नपालियन न क्राध म आकर हुक्म दिया कि जनरल दूपा रा फोजी अदालत र सामन पश किया जाय। लेकिन फ्रासीसी सना र इस आत्मसमपण रा सार स्पन पर जबरदस्त प्रभाव पडा। नपालियन न एर शक्तिशाली कुमुक स्पन भजी। सारागासा रा घरा और उस पर धावा जहा स्पनिया न हर सडक और हर घर र लिए और अतिम दम तक लोहा लिया और जहा लडाई क बाद सडका पर ४० ००० लाश बिखरी पडी थी भावी विजताआ की अधीनता का स्वीकार करन की बनिस्बत जान द दन र स्पनिया क सकल्प का द्यातक था।

लेकिन सारागासा म पराजय स्पनी प्रतिराध क अन्त की किसी भी प्रकार सूचक नही थी। स्पनी छापामारा र वीरतापूर्ण सघप न यूरोप क अन्य जनगण र सामन प्रेरणादायी उदाहरण पश किया। इटली म फ्रासीसी विजताआ क विरुद्ध मुक्ति सग्राम रा सगठन करन क लिए कार्बोनारी नामक गुप्त सस्था स्थापित हा गयी। प्रशा म भी जो इस समय नपालियन का पददलित अधीन प्रदश था राष्ट्रीय मुक्ति आदालन न विभिन्न रूप ग्रहण कर लिय। विख्यात जमन दाशनिक फीख्त न अपन प्रसिद्ध जर्मन राष्ट्र का सबाधन म लागा रा अपन दश की मुक्ति हतु सघप करन क लिए आह्वान किया। कानिग्सबग म छात्रा और सैयाधिकारियो न तुगन्दबुद अथवा सदाचार सघ नामक गुप्त दशभक्त समाज की स्थापना की। आस्ट्रियाइ तीराल म किसाना न छापामार सघप शुरू कर दिया जिस फ्रासीसी बडी मुश्किल स ही कुचल सक।

१८१२

अपनी विजया और शक्ति क जा अदर स अधिकाधिक खाखली हाती जा रही थी मद म नपालियन न इन अनिष्टसूचक लक्षणा पर काई ध्यान नही दिया। अब तक वह आदश दश का आदी स्वच्छाचारी सम्राट बन चुका

था और उसके लिए अपने शासन के विरुद्ध साम्राज्य के अधीनस्थ जनगण में पैदा होनेवाले राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलना का सही मूल्यांकन करना तो क्या समझ पाना भी संभव नहीं रह गया था। इस गहराते संकट के बावजूद वह १८१२ में रूस के विरुद्ध अपने अनावश्यक और अविवेचित युद्ध में उतरा।

नेपोलियन का रूस पर हमला। प्रतिरोध आंदोलन का जनव्यापी स्वरूप

२४ जून १८१२ की रात को नेपोलियन की सेनाओं ने युद्ध की घोषणा किये बिना विश्वासघात करके नीमन नदी को पार किया और रूस पर आक्रमण कर दिया।

युद्ध के आरम्भ में फ्रांस की महावाहिनी को रूसी सेना पर संख्यागत श्रेष्ठता प्राप्त थी और नेपोलियन एक के बाद दूसरे नगर को सर करते हुए तेज़ी के साथ बढ़ता चला गया। बार्कले द तोली की कमान में पहली रूसी सेना और बग्रातिओन की कमान में दूसरी सेना ने स्मोलेन्स्क के पास मिलकर आक्रमणकारियों का सामना किया। नेपोलियन ने सोचा था कि यह अभियान की निर्णायक लड़ाई होगी और वह शत्रु की मुख्य शक्ति को ध्वस्त कर देगा। लेकिन उसकी योजना भंग हो गयी क्योंकि रूसी सेना ध्वस्त नहीं हुई – जलते स्मोलेन्स्क से पीछे हटते हुए भी उसने अपनी मुख्य शक्ति को अक्षत रखा। नेपोलियन ने निर्णायक लड़ाई करने रूसी सेना को नष्ट करने और इस प्रकार युद्ध का शीघ्रातिशीघ्र अंत करने की आकांक्षा में उसका तेज़ी के साथ पीछा किया।

रूसी प्रतिरोध अधिकाधिक जनव्यापी स्वरूप ग्रहण करता गया। वह सबसे अधिक रूसी सैनिकों के मनोबल में व्यक्त हुआ, जो विदेशी विजेताओं को अपने इलाकों से खदेड़ बाहर करने को अपना ऐसा पुनीत कर्त्तव्य मानने लग गये थे कि उसके लिए जान की बाजी भी लगायी जा सकती थी। रूसी साम्राज्य की विभिन्न जातियों – उक्रइनी, बेलारूसी, बाश्कीर तथा कई अन्य – के लोग इस वीरतापूर्ण संघर्ष में रूसियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़े। आम लोगों ने सेना को सक्रिय सहायता प्रदान की। अधिकृत इलाकों में किसानों ने शत्रु के साथ व्यापार करने और उसे अत्यावश्यक खाद्य पदार्थ देने से इंकार कर दिया। वे भेदियों और दुश्मन के एजेंटों को पकड़ लेते थे, दुश्मन के पास आने पर अपने झोंपड़ों में आग लगाकर गांवों को खाली कर जाते थे और अपने जानवरों को साथ लेकर जंगलों में छिप जाया करते थे। किसानों ने कई छापामार दस्ते भी बना लिये थे, जिनमें से एक सबसे मशहूर दस्ता वह था जिसका नेता गेरासिम कूरिन नाम का किसान था

और जिमम पाच हजार छापामार थ। उसका कायक्षेत्र मास्को क पास था। एसा ही एक और मशहूर दस्ता स्मालेन्स्क क पास सक्रिय था जिसकी नता वसिलीसा कोजिना थी।

स्मोलेन्स्क क निकट रूसी सनाओ क आपस म मिल जान क बाद जार अलेक्सादर प्रथम न मिखाईल कुतूज़ोव को जो एक प्रसिद्ध सनानायक और सुवोराव का शिष्य था अपनी समस्त सशस्त्र सेना का मुख्य सनापति नियुक्त कर दिया। जार स्वय कुतूजोव को कोई बहुत पसद नही करता था किन्तु राष्ट्र समूचे तौर पर उसकी नियुक्ति क पक्ष म था और सकट की इस घडी म ज़ार राष्ट्र की आवाज सुनन क लिए तैयार था। लोगो न कुतूजोव की नियुक्ति का समाचार बहुत हर्ष क साथ सुना और वह सैनिको का मनोबल बढान म भी बहुत सहायक सिद्ध हुई।

नपोलियन तजी स मास्को की तरफ बढता चला गया। कुतूजोव ने उसस टक्कर लन के लिए जगह का चुनाव मोजाइस्क स कुछ दूर बोरोदिनो गाव क पास किया था। बार्क्ले द तोली की कमान म रूसी सना के दाहिने पहलू न कोलोचा नदी के ऊच तट पर मोरचा सभाल लिया। सेना क बाय पहलू को बग्रातिओन की कमान म सेम्योनोव्स्काया ग्राम के निकटवर्ती खुल मैदान म तैनात किया गया जहा तोपखान क लिए मिट्टी की धुस्सबदी खडी की गयी थी।

७ सितबर १८१२ (पुरान पचाग क अनुसार २६ अगस्त) का पौ फटन क साथ लडाई शुरू हो गयी। फ्रासीसी सना क १ ३० ००० सैनिका के सामने रूसी सना क १ २० ००० जवान मैदान म थ। नपोलियन न पहल अपनी टुकडियो को रूसी सना क बाय पार्श्व पर हमला करन क लिए भेजा जहा तापखान की धुस्सबदी थी। उसन यह सही ही हिसाब लगाया था कि वह रूसी मोरच का सबस कमज़ोर स्थल है। घमासान लडाई क बाद फ्रासीसी धुस्सबदी को कब्जे म लेन म कामयाब हो गय। बग्रातिओन इस लडाई म साघातिक रूप से घायल हुआ। लेकिन रूसी सैनिक दीवाद की तरह जम रहे और फ्रासीसी उन पर पार न पा सक। इस पर नपोलियन न रूसी मोरचाबदी क केद्रीय भाग पर हमला किया और काफी मुश्किल स अत म उस टीले का सर कर लिया जिस पर रायेव्स्की का तापखाना तैनात था। लकिन यहा भी रूसी अपनी जगहो पर जम रह और फ्रासीसी रूसी मारच का नही भेद पाये। शाम ढलन के साथ लडाई बद हो गयी। इस दिन की लडाई म फ्रासीसियो क ५८ ००० सैनिक मार गय थ और ४७ श्रेष्ठतम सनानायक काम आये थ।

आरभ म कुतूज़ोव का इरादा अगले दिन हमला का फिर शुरू करन का था लकिन उसकी सना क पास ज्यादा गोला बारूद नही रह गया था

इसलिए उसने पीछे हटने का आदेश दे दिया। वह जानता था कि उसके लिए अपनी सेना को अक्षत रखना ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण था – अगर सेना बची रहती तो वह लड़ाई को जारी रख सकता था लेकिन अगर अगले दिन की लड़ाई रूसी सेना के संहार के साथ खत्म होती, तो रूस युद्ध में पूर्ण पराजय निश्चित थी। मास्को के निकट फिली ग्राम में सैनिक परिषद की बैठक हुई जिसमें यह निर्णय किया गया कि मास्को को बिना लड़ाई लड़े दुश्मन के हाथों में चले जाने दिया जाय। नेपोलियन ने बाद में बोरोदिनो की लड़ाई के बारे में लिखा था मैंने जितनी भी लड़ाइयां लड़ी हैं, मास्को के पासवाली लड़ाई उनमें सबसे भयंकर थी। फ्रांसीसियों ने उसमें अपने को विजय प्राप्त करने के योग्य सिद्ध किया तो रूसियों ने उसमें अविजय कहलाने का अधिकार प्राप्त किया।

१४ सितंबर को अलस सवेरे पहले रूसी दस्तों ने मास्को को त्यागना शुरू कर दिया। सेना के शहर को छोड़कर जाने की खबर दावानल की भांति सारे नगर में फैल गयी और इससे एक अप्रत्याशित बात हुई – शहर की आबाल-वृद्ध नारी की सारी आबादी ने दुश्मन के अधिकार में वहां रहते रहने के बजाय नगर को स्वेच्छापूर्वक छोड़कर चले जाने का फैसला कर लिया।

शत्रु ने मास्को में प्रवेश किया ही था कि इस विशाल नगर के विभिन्न भागों से आग की लपटें उठने लगीं और तेजी से फैलती चली गयीं। मास्को के इस विराट अग्निकांड ने फ्रांसीसियों के लिए बहुत मुश्किल पैदा कर दी – उसने उनकी खाद्य सामग्री के बहुत बड़े भाग को नष्ट कर दिया और उन्हें ठहरने की जगहों से भी वंचित कर दिया।

रूसी सेना का प्रत्याक्रमण

मास्को का शत्रु के हवाले करना सारी ही रूसी जनता की भांति कुतूज़ोव के लिए भी बेहद पीड़ादायी था। लेकिन सेना का संहार करवाना तो और भी ज्यादा खतरनाक होता क्योंकि तब तो नेपोलियन की विजय असंदिग्ध और अवश्यंभावी हो जाती। जरूरत इस बात की थी कि लड़ाइयों में बेशुमार जानें गवाने के बाद सेना अपनी शक्ति को फिर से संचित कर सके नयी कुमुक पाये उसे प्रशिक्षित करे और शत्रु को देश के बाहर निकालने के लिए नयी योजना तैयार कर सके। रूसी सेना ने कुतूज़ोव के नेतृत्व में शीघ्र ही अपने को इस महाकार्य के उपयुक्त सिद्ध कर दिखाया।

नेपोलियन की भावी योजनाओं का पूर्वानुमान कर सकने में कुतूज़ोव ने विलक्षण प्रतिभा का प्रदर्शन किया। नेपोलियन को चक्कर में डालने के लिए

एक अप्रत्याशित रास्ते पर चल पड़ा और इस प्रकार उसने अपनी सेना को अक्षत रखा। नेपोलियन तो रूसी सेना से सपर्क तक खो बैठा और कुछ समय तो उसे यह भी नहीं मालूम रहा कि वह है कहा।

कुतूज़ोव के आदेश पर चलते हुए छापामारो ने फ्रासीसियो पर अचानक हमले करके फ्रासीसियो की कैद से लेकर और लूट के काफी भाग को वापस छीनकर सेना की सहायता की। अक्तूबर १८१२ में हुई तरुतिना की लड़ाई का अत रूसियो की विजय से हुआ। इसके बाद मालोयारोस्लावेत्स की लड़ाई ने नेपोलियन को दिखा दिया कि रूसी सेनाओ ने कितना नवबल प्राप्त कर लिया है।

अनेक लड़ाइयो और अपार जनहानि से निढाल फ्रासीसी महावाहिनी पीछे हटते हुए किसी तरह नवबर के मध्य में बेरजीना नदी के किनारे पहुची। नदी को पार करते समय जो भयकर लड़ाई चली उसमें फ्रासीसी सेना को और कई हजार सैनिक गवाने पड़े।

दिसबर के आरभ में नेपोलियन अपनी बची खुची सेना को उसके हाल पर छोड़कर चोरी से सुरक्षित स्थान भाग गया। मामूली सी घोड़ागाड़ी में बैठकर और अपने चेहरे को पहचान में न आने देने के लिए मोटे समूरी कालर की आड़ में छिपाकर वह पेरिस पहुचा और नयी सेना जुटाने में लग गया। नेपोलियन के रूसी अभियान का और विश्व विजय के उसके सपनों का ऐसा शर्मनाक अत हुआ।

१८१२ का देशभक्तिपूर्ण युद्ध एक न्याय्य जनयुद्ध था जिसने रूस को एक विदेशी विजेता के कपटपूर्ण आक्रमण से बचाया और रूसी जनता को दास बनाने की उसकी आकाक्षा को ध्वस्त किया।

नेपोलियनी साम्राज्य का पतन

रूस के विरुद्ध १८१२ के युद्ध में पराजय नेपोलियन के साम्राज्य के पतन के प्रारभ की द्योतक थी। फ्रास लौटने पर नेपोलियन ने हथियार धारण करने योग्य सभी लोगो को लामबद करके एक नयी सेना जुटायी और उसे लेकर रूसी सेनाओ का सामना करने के लिए चल दिया जो उस समय तक जर्मनी में पहुच चुकी थी। लेकिन इस बार नेपोलियन की टक्कर अकेले रूसियो से ही नही, बल्कि सारे यूरोप से थी। फ्रासीसी पराधीनता की चक्की में पिसते यूरोप के लोग रूस में महावाहिनी की घोर पराजय का समाचार सुनते ही अपनी स्वाधीनता के लिए लड़ने के निमित्त उठ खड़े हुए। फ्रास के कल तक के मित्र देश – प्रशा आस्ट्रिया सैक्सनी तथा अन्य – भी अब नये फ्रासविरोधी सहबध में शामिल हो गये। शक्तिशाली मित्र सेनाए पश्चिम की ओर बढने

फिली मे युद्ध परिषद की बैठक

नगी और लाइपजिग क युद्ध म जो तीन दिन (अक्तूबर १६ १८, १८१३) चला और इतिहास म राष्ट्रो क युद्ध के नाम स विख्यात हुआ मित्रराष्ट्रा न नपोलियन का करारी हार दी और उस पीछ हटन क लिए मजबूर कर दिया। इस समय तक नपोलियन का साम्राज्य ध्वस्त होन लग चुका था और १८१४ तक तो स्वय फ्रासीसी भूमि ही युद्ध का मैदान बन गयी। नपोलियन न १८१४ के अभियान म विस्मयजनक कायशक्ति और साहसपूर्ण नतृत्व का प्रदर्शन किया लेकिन अपनी कई छोटी मोटी विजयो के बावजूद अब युद्ध क समस्त प्रवाह को पलट पाना उसक बूत के बाहर था।

३१ माच १८१४ को सफद घोडे पर सवार रूस क जार अलक्सादर क नतृत्व म मित्र सनाओ न पेरिस म विजय प्रवेश किया। परिसवासी स्तब्ध और अवाक रह गय। नपोलियन न अत म इस बात का कायल होन पर कि उसके मार्शल अब यह नही मानत कि विजय सभव है फोतनब्लो प्रासाद म सिहासनत्याग क प्रपत्र पर हस्ताक्षर कर दिय। उस आजीवन निर्वासित करक एल्बा टापू भज दिया गया।

मित्र सम्राटो न तय किया कि फ्रासीसी राजसिहासन बूर्बो राजवश को लौटा दिया जाना चाहिए। लुई सोलहव के भाई प्रावस क काऊट को जो पिछले २५ साल स निवासन म रह रहा था मित्र सनाओ के सम्मान पहर म परिस लाया गया और फ्रास का सम्राट लुई अठारहवा घोषित कर दिया गया।

सातवा अध्याय

यूरोप मे सामती-राजतत्रवादी प्रतिक्रिया का दौरदौरा। उन्नीसवीं सदी के तीसरे-चौथे दशको के क्रातिकारी मुक्ति आदोलन

वियेना की काग्रेस

नेपोलियन प्रथम के शक्तिशाली साम्राज्य का ध्वस किये जाने के बाद यूरोप की नियति का निर्धारण आम लोगो ने नहीं, जो अपनी स्वतत्रता के लिए लडे थे, बल्कि राजाओ और मत्रियो के द्वारा हुआ। अक्तूबर १८१४ मे यूरोपीय शक्तियो की काग्रेस का वियेना मे उद्घाटन हुआ, जिसमे तुर्की के सिवा सभी यूरोपीय राज्यो के २१६ प्रतिनिधियो ने भाग लिया। विश्व इतिहास मे यह पहली काग्रेस थी कि जिसमे इतने सारे प्रतिनिधि शामिल हुए थे। लेकिन इतने पर भी उनमे एक भी गणतत्रवादी नहीं था। इस काग्रेस मे जनता के एक भी प्रतिनिधि की आवाज सुनने को नहीं मिली – वियेना मे तो बस राजा और उनके प्रतिनिधि ही एकत्र हुए थे, जिन्होने जनता के हितो का निर्णय जनता के विरुद्ध किया।

वियेना काग्रेस मे निर्णायक भूमिका रूसी ज़ार अलेक्सान्द्र, आस्ट्रिया के चासलर मेटर्नीख (१७७३-१८५९), इगलैंड के प्रधानमत्री लार्ड कासलरे और क्रमश फ्रास तथा प्रशा के विदेशमत्री तैलीरा और प्रिस हार्डेनबर्ग ने अदा की थी। काग्रेस के पूर्णाधिवेशनो मे महत्व की किसी भी बात का निर्णय न किया जा सका। काग्रेस कुल मिलाकर कोई साल भर चली, लेकिन अधिकाश समय ठाठदार स्वागत समारोहो, बाल नृत्योत्सवो और अन्य प्रकार के आमोद प्रमोद मे ही बीता। सिर्फ नाचो के दौरो के बीच मे गुप्त घुसफुस वार्ताए चली, जिन्होने करोडो लोगो की नियति का निर्धारण किया।

काग्रेस मे भाग लेनेवालो के बहुमत को एक्यबद्ध और उसके निर्णयो को प्रभावित करनेवाला मुख्य सिद्धात था वैधतावाद, अर्थात सत्ताच्युत भूतपूर्व राजाओ के "वैध" अधिकारो की पुन स्थापना। वैधतावाद के इस सिद्धात ने प्रतिक्रिया की शक्तियो को एक वैचारिक शस्त्र से लैस कर दिया, जिसका

उन्होंने उन मुख्य राजनीतिक तथा क्षेत्रीय परिवर्तनों के निराकरण का औचित्य ठहराने के लिए उपयोग किया जो क्रांति तथा नेपोलियनी युद्धों के परिणामस्वरूप चलन में आ गये थे।

वियेना कांग्रेस ने यूरोप के जनगण के हितों का उल्लंघन करते हुए और उनकी मांगों की पूर्णत उपेक्षा करते हुए यूरोप के नक्शे को फिर से खींचा। बेल्जियम को नीदरलैंड राज्य का और नार्वे को स्वीडन राज्य का अंग बना दिया गया। पोलैंड को एक बार फिर रूस, प्रशा और आस्ट्रिया ने आपस में बांट लिया। प्रशा ने सैक्सनी तथा कई अन्य जर्मन राज्यों की कीमत पर क्षेत्रार्जन किया। आस्ट्रिया ने अपना खोया तो सभी कुछ वापस पा ही लिया और उसके अलावा उसे लंबार्डी तथा वेनिस भी मिल गये। इटली को, जिसे मेटरनीक तिरस्कारपूर्वक एक "भौगोलिक अवधारणा" कहा करता था, कई छोटे-छोटे राज्यों में विभाजित कर दिया गया और उनमें गद्दियों पर प्राचीन राजवंशों के सदस्यों को बैठा दिया गया। इसी प्रकार कांग्रेस ने ब्रिटेन को अफ़्रीका के दक्षिणी छोर के केप प्रांत, सीलोन (श्रीलंका) तथा माल्टा द्वीपों और उसके हथियाये अन्य औपनिवेशिक प्रदेशों का वैध शासक स्वीकार कर लिया।

फ्रांस, स्पेन तथा नेपल्स राज्य में घृणित बूर्बों राजवंश के शासन की पुनःस्थापना कर दी गयी और अन्य राज्यों में भी उन राजवंशों को वापस ले आया गया, जिन्हें भागकर विदेशों में शरण लेनी पड़ी थी। वैधतावाद के सिद्धांत ने अब प्रतिक्रिया की शक्तियों के लिए मुक्त हस्त सुनिश्चित कर दिया और अब से महाशक्तियों द्वारा इलाकों के हथियाये जाने को पूर्णत वैध व्यवहार माना जाने लगा।

सौ दिन

१८१५ के मार्च में एक स्तब्धकारी समाचार ने वियेना में एक बाल नृत्योत्सव के रागरंग को यकायक ही भंग कर दिया। कानोंकान यह खबर सबको मिल गयी कि नेपोलियन ऐल्बा से भागकर पहली मार्च को फ्रांस के तट पर उतर गया है और अब पेरिस की तरफ़ बढ रहा है। फ्रांसीसी जनता को लुई अठारहवें से, जिसे विदेशी संगीनों के सहारे सिंहासन पर बैठाया गया था, और उसके साथ लौटकर वापस आनेवाले प्रवासी अभिजातों से इतनी ज़्यादा नफ़रत थी कि नेपोलियन ने एक भी गोली चलाये बिना तीन सप्ताह के भीतर सारे फ्रांस पर नियंत्रण स्थापित कर लिया और विजयोल्लास के साथ पेरिस में प्रवेश किया।

इस समाचार ने सारे यूरोप को खुदबुदाहट की हालत में डाल दिया। कहा तो यह जाता है कि जब नेपोलियन के फ्रांस के दक्षिण में जान की खाड़ी में उतरने की खबर पूर्वी प्रशा तक पहुंची, तो प्रशियाई भूस्वामियों ने ताबड़तोड़

वाटरलू की लड़ाई

अपने सदूकों को भरना शुरू कर दिया और साद्रवरिया में जाकर शरण लेने की सोचने लग गये। वियना में इस समाचार ने सारे ही विवादों को एकदम खत्म कर दिया और आठ शक्तियों ने एक घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करके नेपोलियन के कार्य को अवैध कहते हुए उसकी निंदा की। एक ही महीने के भीतर वही एक और फ्रांसविरोधी गठबंधन तैयार हो गया और संयुक्त यूरोप की सेनाओं ने नेपोलियन का सामना करने के लिए कूच कर दिया।

इस शक्तिशाली गठबंधन के जवाब में नेपोलियन के पास सिर्फ एक संभावना थी और वह थी जन समर्थन पर निर्भर करना और यूरोपीय राजवंशों के विरुद्ध क्रांतिकारी युद्ध चला देना। फ्रांसीसी जनता इस हेतु के निमित्त अपनी सारी किस्मत की बाजी लगा देने के लिए तैयार थी। लेकिन स्वयं नेपोलियन ही जनता और क्रांतिकारी युद्ध से डरता था। उसने कहा, मुझे किसानों का राजा बनने की कोई ख्वाहिश नहीं है। क्रांतिकारी युद्ध को अस्वीकार करके नेपोलियन ने गठबंधन की सेनाओं की संख्यागत श्रेष्ठता पर पार पाने के अपने अंतिम और एकमात्र अवसर को गंवा दिया। नेपोलियन को १८ जून १८१५ को वाटरलू की लड़ाई में सदा सदा के लिए कुचल दिया गया। २२ जून को उसने एक और सिंहासनत्याग प्रपत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। उसका यह दूसरा शासनकाल सौ दिन ही चल पाया जिसके बाद उसे निर्वासित करके सुदूर सेंट हेलेना द्वीप भेज दिया गया जहां १८२१ में उसका देहांत हो गया।

पवित्र सहबंध और यूरोपीय प्रतिक्रिया

१८१५ के सितंबर मास में रूस के जार अलेक्सांदर प्रथम, आस्ट्रिया के सम्राट फ्रांसिस प्रथम और प्रशा के बादशाह फ्रेडरिक विल्हेल्म तृतीय ने एक दस्तावेज पर दस्तखत करके पवित्र सहबंध की आधारशिला रखी जिसमें आगे चलकर अधिकांश यूरोपीय राजतंत्र भी शामिल हो गये। यह पवित्र सहबंध क्रांतिकारी तथा राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलनों को दबाये रखने के लक्ष्य से आपस में एकबद्ध यूरोपीय राजाओं का संश्रय था। यह अब तक कभी भी पैदा हुई सभी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में सर्वाधिक प्रतिक्रियावादी गठबंधन था और इसका सिर्फ एक ही लक्ष्य था और वह था क्रांतिकारी राजद्रोह जहां कहीं भी सिर उठाये उसे रोकना, कुचलना और उसका पूर्णतः उन्मूलन करना।

पवित्र सहबंध को यूरोपीय प्रतिक्रिया की सभी शक्तियों का समर्थन प्राप्त था और उसने उन्हें मुक्तचिंतन की भावना के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए प्रोत्साहित किया। क्रांतिकारी अपधर्म का मूलोच्छेदन करने के

इस अभियान में ईसाई चर्च और विशेषकर अपने सर्वव्यापी शिक्षा से युक्त कैथोलिक चर्च व शक्तिशाली जेसुइट पंथ, पुलिस, जासूसी तथा मुखबिरी और गुमनाम पत्र आदि सभी का उपयोग किया गया।

सामंती अभिजातवर्ग की प्रतिक्रियावादी नीतियों का उद्देश्य इतिहास की धारा को पलटना था। वह क्रांति के बाद जो कुछ भी हुआ था, उसे जड़ से मिटा देना और समाज में उसी व्यवस्था की पुनःस्थापना करना चाहता था जो बस्तील पर धावे के पहले विद्यमान थी। प्रतिक्रियावादी विचारधारा के निरूपकों ने प्रबोधन काल के साहित्य की खिल्ली उड़ायी और उसकी टक्कर पर सर्वमोचक आस्था को स्थापित करने का यत्न किया, जो निरंकुश सत्ता की आज्ञाकारिता का प्रचार करती थी। गैब्रिएल बोनाल्द ने अपनी कृतियों में पुरानी श्रेणी व्यवस्था और चर्च की सत्ता को पुनःस्थापित करने की आवश्यकता को सिद्ध करने का प्रयास किया। ल्यूडविग हालेर ने निरंकुश सम्राटों की सत्ता के निर्विवाद आज्ञापालन पर ज़ोर दिया, जोज़ेफ द मेस्तर ने इन्क्वीज़िशन को समाज का आधार बताते हुए उसका गुणगान किया, प्रकृति विज्ञानों की निंदा की और आम लोगों में ज्ञान के प्रसार पर पाबंदी लगाने का सुझाव दिया।

लेकिन इन प्रतिक्रियावादियों की गतिविधियां शब्दों तक ही सीमित नहीं थीं। बूर्बो वंशियों ने जिनके बारे में यह सही ही माना जाता था कि अपने पच्चीस साल के निर्वासन में उन्होंने न कुछ सीखा और न ही कुछ भूला क्रांतिकारी आंदोलन और नेपोलियनी युग के प्रमुख व्यक्तियों के विरुद्ध तीव्र दमनचक्र चला दिया। इस तरह के कई व्यक्तियों को तो बिना मुकदमा चलाये ही सीधे प्राणदंड दे दिया गया और असाधारण अधिकरणों ने दस हजार से अधिक लोगों को कठोर दंड दिये। १८२५ में शार्ल (चार्ल्स) दशम के शासनकाल (१८२४-१८३०) में एक कानून जारी किया गया जिसने यह विहित किया कि भूतपूर्व उत्प्रवासियों को क्रांतिकारी सरकार द्वारा उनसे जब्त की गयी ज़मीनों के मुआवज़े के तौर पर १०० करोड़ फ्रैंक तक दिये जा सकते हैं। उसी साल एक और कानून द्वारा चर्च के विरुद्ध कार्यों या अपवित्रीकरण के लिए सख्त सज़ाएं विहित की गयीं – दाहिना हाथ काटे जाने से लेकर मौत तक। स्पेन में फर्दीनांद सप्तम (१८१४-१८३३) ने १८१२ के संविधान को मंसूख कर दिया और दमनात्मक स्वेच्छाचारी शासन फिर शुरू कर दिया। स्पेन फिर सामंती अभिजातों और कैथोलिक महंतों के हाथों में पहुंच गया और जेसुइट इन्क्वीज़िशनों का नग्न दौर फिर शुरू हो गया। इतालवी राज्यों में भी ऐसी ही बात हुई। इंगलैंड तक में जो पवित्र महासंघ में सम्मिलित भी नहीं हुआ था और जो यूरोप में सबसे प्रगतिशील देश के नाम से जाना जाता था प्रबल प्रतिक्रिया का निज़ाम आ गया।

अगस्त १८१६ में पुलिस ने मैनचेस्टर में सेंट पीटर्स मैदान में निहत्थे मजदूरों की भीड़ पर गोली चलायी। पंद्रह लोग मारे गये और ६०० घायल हुए। असहाय मजदूरों के खिलाफ इस अमानुषिक कार्रवाई का व्यंग्य में "पीटरलू संहार" का नाम दिया गया। संसद ने तुरंत छः अधिनियम पास कर दिये जिन्होंने सभाओं की स्वतंत्रता का समाप्त कर दिया और प्रेस की स्वतंत्रता पर सख्त पाबंदियां लगा दीं। जनसाधारण इन कानूनों को "छः मुहरबंदी अधिनियम" कहा करते थे।

प्रतिक्रिया की शक्तियों के विरुद्ध वैचारिक तथा राजनीतिक संघर्ष

सामंती तथा धार्मिक प्रतिक्रिया की मनमानियों ने सभी प्रबुद्ध व्यक्तियों को विक्षुब्ध कर दिया। महान अंग्रेज कवि जार्ज बायरन (१७८८-१८२४) ने अपनी विशिष्ट कृतियों "चाइल्ड हैरल्ड", "डान जुआन" तथा "कांस्ययुग" में इंगलैंड पर हावी प्रतिक्रिया की पाखंडी और कपटी दुनिया की प्रखर और कटु आलोचना की। उसने पूरे औचित्य के साथ अपने बारे में लिखा था "और मैं कम से कम शब्दों से संघर्ष करूंगा... हर राष्ट्र में हर स्वेच्छाचार से।" एक अन्य उत्कृष्ट अंग्रेज कवि, शैली (१७९२-१८२२) ने भी खुलकर सत्ताधीशों का विरोध किया। विख्यात फ्रांसीसी लेखक स्तेंदाल (असली नाम बेयल १७८३-१८४२) ने अपने उपन्यास "सुर्ख और स्याह" तथा "पार्मा का मठ" में प्रतिक्रिया और धार्मिक उत्पीड़न की सर्वशक्तिमान काली शक्तियों का अत्यंत सजीव चित्रण किया। महान स्पेनी चित्रकार फ्रांसिस्को गोया (१७४६-१८२८), जिसने अपना सारा जीवन इन्क्वीजिशन और रूढ़िवाद के विकरालू विश्व को चित्रित करने में ही लगाया था, स्पेनी जनता के प्रति अपने दायित्व को सदा ध्यान में रखता था। नागरिक उत्तरदायित्व तथा स्वातन्त्र्यप्रेम की उदात्त विषयवस्तुओं ने ही महान जर्मन संगीतकार लुडविग फान बीथोवन (१७७०-१८२७) को भी अनुप्रेरित किया था।

महान कलाकार और लेखक तूलिका, स्वर और शब्द में जिसे अभिव्यक्ति प्रदान कर रहे थे, उसे चाहे इतने प्रखर और संगत रूपों में न सही, प्राय यूरोप के लाखों, बल्कि करोड़ों आम लोगों द्वारा भी महसूस किया जा रहा था, जो अभी कुछ ही समय पहले तक इनकलाबी खुमार और मुक्ति संग्राम की मदभरी हवा में सांस लेते आये थे और जिन्हें अब बर्बर पुलिस दमन और धार्मिक उत्पीड़न का शिकार होना पड़ रहा था। यूरोप के जनगण अतीत के घृणित स्वरूपों के इस अनियंत्रित प्रत्यावर्तन के साथ समझौता करने के लिए तैयार नहीं थे।

उन्नीसवीं शती के तीसरे दशक की क्रांतिया

नोरिन प्रतिक्रिया की यह लहर चाहे कितनी भी भीषण क्यो न रही हो उसमें इतिहास की गति को पलट पाने की शक्ति नही थी। जिन गहनगामी प्रक्रियाओ ने यूरोपीय और अमरीकी समाज के ढाचे को ही बदल दिया था उनके कारण बूर्जुआ सामाजिक स्वरूपो को जो अपने पूववर्ती सामती स्वरूपो से अधिक प्रगतिशील थे तेजी से सुदृढीकरण हुआ और दुनिया के लोगो में अधिक स्पष्ट वग तथा राष्ट्र चेतना पैदा हुई। इस सामती धार्मिक प्रतिक्रिया के भीषण प्रतिरोधा ने महज इस नयी चेतना को सुनिश्चित रूप देने का ही काम किया। इस परिस्थिति ने उन्नीसवी शताब्दी के तीसरे तथा चौथे दशको मे अनेक क्रातिया और क्रातिकारी आदोलनो का जन्म दिया। उन्होने जो परिणाम प्राप्त किये उनमे काफी विभिन्नता थी और उनमे से कितनो ही को तो कुचल भी दिया गया किंतु फिर भी उन सभी ने अपनी स्वतत्रता के लिए रणक्षेत्र मे उतरनेवाले जनगण की भावी नियति को प्रभावित किया।

१८२०-१८२३ की स्पेनी क्राति

जनवरी १८२० मे कैडीज नगर के निकट रफाएल रीएगा इ नून्येस (१७८५ १८२३) की कमान मे एक स्पेनी रेजिमेंट ने बगावत कर दी। कर्नल रीएगो स्पेनी जनता की स्वतत्रता का साहसी समर्थक था और उसने दूसरे फौजी अफसरो के साथ मिलकर विद्रोह की चुपचाप तैयारी की थी। दूसरी रेजिमेंटो मे भी बहुत से समानमना अफसर थे और कैडीज मे शुरू हुआ यह विद्रोह शीघ्र ही सारे देश मे फैल गया। अफसरो की सबसे मुख्य माग यह थी कि १८१२ के कैडीज सविधान को पुन प्रचलित किया जाये। फर्दीनाद सप्तम को यह रिआयत देने के लिए मजबूर होना पडा। जुलाई, १८२० मे मेड्रिड मे कोर्तेस (विधान सभा) का समाह्वान किया गया और रीएगो को उसका अध्यक्ष चुना गया। इसके बाद कोर्तेस ने इन्क्वीज़िशन का अत करने और १८१२ के सविधान मे उल्लिखित स्वतत्रताओ को बहाल करने का काम शुरू कर दिया।

यह सब निस्सदेह अच्छा था मगर यही काफी नही था। स्पेन कृषिप्रधान देश था और अपने मालिको द्वारा जमीन से वचित किये गये और घोर दरिद्रता मे रहनेवाले किसान स्वाभाविकतया सबसे पहले कृषि समस्या के हल किये जाने की ही अपेक्षा करते थे। लेकिन सैनिक अफसर अधिकाशत उदार अभिजात या बूर्जुआ थे और वे भूस्वामित्व की समस्या को हाथ लगाना नापसद करते थे। अपनी आशाओ के ध्वस्त हो जाने के

वाग्ण किसान उत्साहपूर्वक क्राति का समर्थन करने के अनिच्छुक थे और यह क्राति के आगामी विकास के लिए घातक सिद्ध हुआ। १८२२ के शरद मे पवित्र सहबंध ने वेराना की काग्रेस मे एक प्रस्ताव स्वीकार करके स्पेनी क्राति का हस्तियाग के जार मे कुचल देने का फैसला किया। बूर्बो फ्रास को इस ताजीरी अभियान का जिम्मा लेना था।

१८२३ के वसत मे फ्रासीसी हस्तक्षेपकारी सेनाए स्पेनी प्रतिक्रियावादी शक्तियो के साथ स्पेन मे घुस आयी और मैड्रिड पर अधिकार कर लिया। शरद तक उनके लक्ष्य की सिद्धि हो चुकी थी – क्राति को कुचल दिया गया था। ७ नवबर को रीएगो को प्राणदड दे दिया गया और वह वीरो की मौत मरा। स्पेनी सगीतकार हुएर्ता द्वारा निर्मित प्रसिद्ध 'रीएगो मार्च' स्पेनी क्रातिकारियो की कई पीढ़ियो का युद्धगान बन गया और १९३१ मे उसे स्पेनी गणराज्य का राष्ट्रगीत बना दिया गया। यद्यपि १८२०-१८२३ की क्राति को कुचल दिया गया था, फिर भी उसने शेष समस्त ससार मे व्यापक सामाजिक राजनीतिक आदोलन पैदा कर दिया। बायरन, पुश्किन और फ्रासीसी लोकतत्रवादी कवि बेराजे ने स्पेनी क्राति के स्तुतिगीत गाये और पवित्र सहबध की कठोर भर्त्सना की, जिसने अपने हाथ अब निर्दोषो के रक्त मे सान लिये थे।

१८२०-१८२१ की इतालवी क्रातिया

जिस समय स्पेनी क्राति हुई थी, लगभग उसी समय इटली के नगरो मे भी क्रातिकारी सरगरमियो की लहर दौड गयी थी। इन बलवो को कार्बोनारी नामक गुप्त समाज ने सगठित किया था, जिसने इस समय तक देश भर मे कठोर अनुशासनबद्ध गुप्त सस्थाओ का जाल बिछा दिया था। कार्बोनारी मे ऐसे साहसी और सकल्पवान लोग ही शामिल होते थे कि जो अपने देशवासियो की खातिर अपने प्राणो की भी परवाह नही करते थे। उनमे से अधिकाश बूर्जुआ, बुद्धिजीवी समुदाय अथवा उदार अभिजातवर्ग के सदस्य थे। स्पेनी क्रातिकारियो की ही भाति जनसाधारण से पार्थक्य और कृषि समस्या तथा भूस्वामित्व के बुनियादी महत्व को न समझ पाना कार्बोनारियो की सबसे बडी कमजोरी थी।

जुलाई, १८२० मे नेपल्स के निकट तैनात एक रेजिमेट ने विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह मे जल्दी ही जनरल पेपे की सेनाए भी शामिल हो गयी, जो स्वय कार्बोनारी का सदस्य था। कई और रेजिमेटो ने भी पेपे का अनुकरण किया। बादशाह फर्दीनाद चतुर्थ ने जल्दी जल्दी एक सविधान को स्वीकृति प्रदान कर दी और प्रण किया कि वह उसके सिद्धातो के अनुसार शासन करेगा। इसीके साथ साथ उसने तुरत पवित्र सहबध से सहायता का अनुरोध किया।

पवित्र गठबंधन की कांग्रेस १८२० के अंत और १८२१ के आरम्भ में हुई थी और इटली में क्रांतिकारी आन्दोलनों को कुचलने के सवाल पर ही विचार में थी। नेपल्स राज्य में क्रांति को कुचलने का कार्यभार आस्ट्रिया को सौंप दिया गया।

जब आस्ट्रियाई फौजों ने अभियान ने मार्च १८२१ में इटली पर हमला किया तो पियमांत राज्य में भी क्रांति फूट पड़ी। यहां भी क्रांतिकारी आन्दोलन का नेतृत्व सेनाधिकारियों और उदार अभिजातवर्ग के सदस्यों के हाथों में ही था। आन्दोलन का लक्ष्य संविधान प्राप्त करना था। न यहां और न ही नेपल्स में क्रांतिकारी नेता जनसाधारण को हाथों में हथियार उठाकर मैदान में उतरने का आह्वान करने के लिए तैयार थे। वे अपने सीमित साधनों से आस्ट्रियाई हस्तक्षेपकारियों का कारगर प्रतिरोध न कर सके। मार्च में नेपल्स और अप्रैल में पियमांत में भी क्रांतिकारी आन्दोलनों को कुचल दिया गया। इसके बाद क्रांतिकारी आन्दोलन में भाग लेनेवाले सभी लोगों की हत्याओं और दमन का दौर आया।

स्पेनी और इतालवी दोनों ही क्रांतियों को पवित्र गठबंधन की सेनाओं के सशस्त्र हस्तक्षेप से कुचल दिया गया। इस प्रकार यह गठबंधन यूरोपीय जनगण के लिए जल्लाद सिद्ध हुआ था। किन्तु क्रांतियों की पराजय के कारण ये भी थे कि वे उच्च और बूर्जुआ तबकों की ही थीं और उनके नेता जनसाधारण का समर्थन नहीं पा सके या पाना नहीं चाहते थे।

यूनानी राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन

यूनानी जनगण, जो बड़ी सदियों से तुर्कों के अधीन थे, अपने उत्पीड़कों के खिलाफ उठ खड़े हुए। मार्च १८२१ में एक विद्रोह फूट पड़ा, जो तेजी से फैलता गया और जनवरी १८२२ में एपिडारस में राष्ट्रीय सभा को समाह्वान किया गया, जिसने यूनान को स्वतंत्र घोषित कर दिया। लेकिन यह तो संघर्ष का प्रारंभ मात्र था। तुर्कों ने अमानुषिक बर्बरता से जवाबी हमला किया। किओस द्वीप की सारी – एक लाख से अधिक – आबादी को या तो मौत के घाट उतार दिया गया या गुलामों की तरह बेच दिया गया। सुख्यात फ्रांसीसी चित्रकार देलाक्रुआ ने इस पाशविक हत्याकांड को अपने एक चित्र में अमर कर दिया है। इसके बाद तुर्क सेना के बड़े-बड़े दस्तों को विद्रोहियों का दमन करने के लिए भेजा गया।

यूनानी अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता के लिए जी जान से लड़े। छापामार दस्तों ने तुर्क उत्पीड़कों को करारी चोट पहुंचायी। यूनानी राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन की शक्ति का मूल यह था कि वह एक जन आंदोलन था, जिसमें

सारी ही जनता भाग ले रही थी। आम लोगो की कतारो मे से कितने ही श्रेष्ठ नेता उभरकर सामने आये जिनमे मव्रीयानिस निस्सदेह सबसे बढकर था। जनरल कालोकात्रोनिस एक और कुशल सेनानायक था जिसे व्यापक जन समर्थन भी प्राप्त था।

यूनानी जनगण के वीरतापूर्ण सघर्ष ने सभी जगहो के प्रगतिशील हलको का समर्थन और सहानुभूति प्राप्त की। बायरन यूनान की आजादी के लिए लडता हुआ शहीद हुआ और पुश्किन तथा शेली दोनो ही यूनानियो की वीरता से उत्प्रेरित हुए थे। लेकिन इस बात के बावजूद कि यूनानी भी सहधर्मी ईसाई ही थे, पवित्र सहबध उन्हे उच्छृखल बागी ही मानता रहा था।

१८२५ मे इब्राहीम पाशा की कमान मे एक शक्तिशाली मिस्री सेना यूनानियो के खिलाफ भेजी गयी। खुद अपने बूते परिस्थिति का सामना न कर पाने पर सुलतान की सरकार ने मेटरनीक की सलाह से अपने अधीनस्थ राज्य मिस्र से यूनानी विद्रोहियो को कुचलने मे सहायता मागी थी। मिस्री सेना रास्ते मे पडनेवाली हर चीज को बरबाद करते हुए धीरे धीरे आगे बढने लगी।

लेकिन यूनानी देशभक्त मौत को आत्मसमर्पण से श्रेयस्कर समझते हुए बहादुरी के साथ लडते ही रहे। लडाई अधिकाधिक भयकर होती चली गयी। मध्य-पूर्व के प्रसग मे यूरोपीय शक्तियो मे पैदा हुए अतर्विरोधी स्वार्थो और यूनान मे प्रभुत्व के क्षेत्रो के बारे मे प्रतिद्वद्विता के कारण उन्हे यूनान के प्रश्न मे हस्तक्षेप करना पडा। २० अक्तूबर १८२७ को ब्रिटिश फ्रासीसी और रूसी जगी जहाजो के सयुक्त बेडे ने नवारिनो के जलयुद्ध मे मिस्री और तुर्क बेडो को पूर्णत ध्वस्त कर दिया। तुर्की और रूस मे १८२८ मे शुरू हुए युद्ध ने तुर्को को अपनी फौजो के बडे हिस्से को यूनान के बाहर रखने के लिए मजबूर कर दिया और अतत यूनानी जनता अपनी स्वतत्रता के न्याय्य युद्ध से विजयी होकर निकली। १८३० मे यूनान को एक स्वतत्र प्रभुतासपन्न राज्य के रूप मे मान्यता प्रदान कर दी गयी।

स्पेन के अमरीकी उपनिवेशो का मुक्ति सग्राम

अटलाटिक महासागर के उस पार भी क्रातिकारी राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन सफलताए प्राप्त कर रहा था। मध्य तथा दक्षिण अमरीका के निवासी दो सदी से अधिक से स्पेनी और पुर्तगाली विजेताओ के क्रूर शोषण का शिकार थे जो लैटिन अमरीका की उपजाऊ जमीन और अकूत प्राकृतिक साधनो को लूटते आ रहे थे। मगर अठारहवी सदी के अत से और विशेषकर उत्तरी अमरीकी स्वाधीनता सग्राम तथा फ्रासीसी क्राति के बाद से स्पेनी उपनिवेशो

म मुक्ति आदोलन गहरी जड जमाने लग गया। फ्रासीसियो द्वारा स्पेन म बूर्बोनो का तख्ता उलट जाने ने उपनिवेशो के विरुद्ध खुला सघर्ष शुरू करने के लिए अनुकूल अवस्थाए पैदा कर दी।

मुक्ति सग्राम का पहला दौर

१८१० और १८१५ के बीच स्पेन के अमरीकी उपनिवेशो म स्वाधीनता सग्रामो का पहला दौर चला। क्रेओल (यूरोपीय मूल के स्थानीय निवासी), मेस्तीजो (मिश्रित रक्त के स्थानीय निवासी) और इडियन अपनी जन्मभूमियो की स्वतत्रता के लिए लडने के वास्ते एकजुट हो गये।

११ अप्रैल १८१० को फ्रासिस्को द मिरादा (१७५६-१८१६) जिसने फ्रासीसी क्राति म भाग लिया था के नेतृत्व म एक क्रातिकारी हुता (जुटा) ने कराकास नगर म विद्रोह का सगठन किया, जो शीघ्र ही सारे वेनेजुएला में फैल गया। इस विद्रोह के बाद पूरे महाद्वीप म क्रातिकारी विप्लवो का सिलसिला शुरू हो गया। मई मास म एक हुता ने ब्यूनस आयर्स म ला प्लाटा के सयुक्त प्राता (बाद म अर्जेटीना के नाम से विख्यात) की अस्थायी सरकार का गठन किया। ला प्लाटा के मुक्ति आदोलन का नेतृत्व मरीआनो मोरेनो और बाद म होसे द सान मार्तिन (१७७८-१८५०) तथा बेलग्रानो ने किया था। इसके बाद स्वतत्रता सग्राम ला प्लाटा से उरुग्वे और पराग्वे म भी फैल गया और उन्होने भी अपने को स्वतत्र घोषित कर दिया। सितबर १८१० म मीग्वेल हीदाल्गो नामक देहाती पादरी के नेतृत्व म मेक्सिको म स्वाधीनता आदोलन छिड गया।

स्पेनी उपनिवेशको के विरुद्ध सघर्ष अत्यधिक भयकर था – कभी एक पक्ष का पलडा भारी होता था तो कभी दूसरे का। मुक्ति सग्राम के दौरान मिरादा और हीदाल्गो स्पेनी जल्लादो के हाथो मारे गये। लोकप्रिय वीर सिमोन बोलीवर (१७८३-१८३०) ने वेनेजुएला की स्वाधीनता के सघर्ष म अक्षय ख्याति अर्जित की। लेकिन स्पेन की गद्दी पर फर्दीनाद सप्तम के फिर से बैठाये जाने के बाद उपनिवेशको को वहा से काफी कुमुक मिल गयी और उनके लिए प्रत्याक्रमण करना सभव हो गया। १८१५ मे ला प्लाटा के अलावा क्राति के शेष सभी केद्रो को कुचल दिया गया।

मुक्ति सग्राम का दूसरा दौर। बोलीवर के अभियान

नवबर १८१६ म हाइटी द्वीप से अपने समर्थको की एक टुकडी के साथ लौटने के बाद सिमोन बोलीवर ने ओरीनाको के डेल्टा म अगोस्तूरा नगर को मुक्त किया और वहा से वह वेनेजुएला को मुक्त करने के अपने विख्यात

सीमोन बोलीवार

अभियान पर निकला। बोलीवर ने दासता के उन्मूलन की घोषणा की और १८१७ मे ऐलान किया कि उसकी सेना मे शामिल होनेवाले सभी ल्यानेरोस (किसानो) को लडाई के बाद जमीन दी जायेगी। इन प्रगतिशील कदमो की बदौलत बोलीवर की सेना मे बहुत बडी सख्या मे स्वयसेवक भरती हो गये। दक्षिण अमरीकी मुक्ति सेना की सहायता के लिए यूरोप की विभिन्न जातियो के भी ८००० से अधिक स्वयसेवक आये। बोलीवर ने अपनी सेना को अनुशासनबद्ध और कारगर लडाकू सेना मे परिणत कर दिया था जिससे स्पेनी उपनिवेशको को स्वतत्रता की खातिर अपने प्राण उत्सर्ग करने को तत्पर निष्ठावान सैनिको की अपराजेय सेना का सामना करना पडा।

१८१९ मे अगोस्तूरा की काग्रेस ने विशाल कोलबिया गणराज्य की

राजधानी
अटलांटिक महासागर
कैरीबियाई सागर
मेक्सिको की खाड़ी
उपनिवेश

उद्घोषणा की जिसमे वनजुएला और न्यू ग्रनादा सम्मिलित थे। यशस्वी बोलीवर को इस नये गणराज्य का राष्ट्रपति चुना गया। लेकिन अभी भी देश के काफी बड़े भाग को स्पेनियों से जीता जाना बाकी था। बोलीवर की सेना ने हिमाच्छादित एंडीज पर्वतमाला को पार करते हुए अपने वीरतापूर्ण अभियान का समारंभ किया। अनगिनत मुसीबतों से भरी इस खतरनाक यात्रा के दौरान कितने ही वीर सेनानी काम आये। १८२२ में बोलीवर ने क्वीतो (एक्वाडोर) को मुक्त किया और उसे भी विशाल कोलंबिया गणराज्य में शामिल कर लिया गया।

ला प्लाटा, चिली तथा पेरू की मुक्ति

इसी समय स्पेनी उपनिवेशकों पर दक्षिण की तरफ से भी हमले शुरू किये जाने लगे थे। ६ जुलाई, १८१६ को तुकुमान की कांग्रेस में ला प्लाटा के संयुक्त प्रांतों की स्वतंत्रता की उद्घोषणा की गयी। मुक्ति योद्धाओं की एक और सेना ने भी – इस बार एक अन्य प्रतिभाशाली सेनानायक और मुक्ति आंदोलन के नेता होसे दे सान मार्तिन के नेतृत्व में – स्पेनियों के विरुद्ध अपने सफल संघर्ष के दौरान एंडीज़ को पार करने के वीरतापूर्ण कारनामे की पुनरावृत्ति की। चिली में बरनार्दो ओ'हिगिंस के नेतृत्व में स्थानीय स्वातंत्र्यसंग्रामी भी उनके साथ जाकर मिल गये। चकाबूको तथा माइपू की लड़ाइयों (फरवरी, १८१७ और अप्रैल, १८१८) में सान मार्तिन की सेनाओं ने स्पेनियों को शिकस्त दी। इन विजयों के बाद ही चिली की स्वतंत्रता की उद्घोषणा कर दी गयी।

लेकिन पेरू में स्पेनी शासन का दुर्ग अब भी अक्षत खड़ा हुआ था और १८२१ में उसी पर अपनी सेनाओं के साथ सान मार्तिन और बोलीवर ने हमला किया। पेरू मे स्पेनियों के विरुद्ध युद्ध कई साल चलता रहा, लेकिन अंत में सिमोन बोलीवर ने स्पेनी उपनिवेशकों के अनम्य प्रतिरोध को कुचलने में सफलता प्राप्त कर ही ली। ६ अगस्त, १८२४ को स्पेनियों को जुनीन की लड़ाई मे निर्णायक मात खानी पड़ी और यही उनके प्रतिरोध का मांडविंदु सिद्ध हुआ। १८२५ मे ऊपरी पेरू को मुक्त कर लिया गया और मुक्ति सेनाओं के सेनापति के सम्मान मे उसे बोलीविया नाम दिया गया। जनवरी १८२६ मे कल्याओ नगर में अंतिम स्पेनी गैरिजन ने भी हथियार रख दिये।

इस प्रकार आखिर दक्षिण अमरीका में स्पेनी उपनिवेशकों के शासन का अंत हो गया। इसी काल (१८२१-१८२४) मे मेक्सिको और मध्य अमरीका ने भी अपनी स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। पुर्तगालियों के खिलाफ स्वाधीनता संग्राम (१८१७-१८२२) की विजयांतक परिणति के साथ ब्राज़ील भी स्वतंत्र हो गया।

लैटिन अमरीकी मक्ति सग्रामो का ऐतिहासिक महत्व

पद्रह वर्ष से अधिक चलनवाल इस वीरतापूण मुक्ति सग्राम के परिणामस्वरूप सिर्फ क्यूबा और पोर्टो रीको के सिवा सारा लैटिन अमरीका स्पनी तथा पुर्तगाली शासन के जूए से स्वतत्र हो गया। इस विजय का सबसे मुख्य कारण यह था कि जनसाधारण अपन घृणित उत्पीडको के विरुद्ध न्याय्य सघप म एक्यवद्ध हो गय थे। लेटिन अमरीका की क्राति की इस विजय का बहुत भारी अतर्राष्ट्रीय महत्व था। उसन नयी दुनिया म कई नये स्वतत्र गणराज्यो की स्थापना को सभव बनाया और इस प्रकार पवित्र सहबध के नतृत्व म अतर्राष्ट्रीय प्रतिक्रिया की शक्तियो को गभीर क्षति पहुचायी। लैटिन अमरीकी क्रातियो की विजय न दो विराट औपनिवेशिक साम्राज्या – स्पेनी तथा पुर्तगाली साम्राज्यो – पर साघातिक प्रहार किया और अपन उत्पीडको के विरुद्ध औपनिवेशिक जनगण के सग्राम म एक नये महत्वपूर्ण चरण का समारम्भ किया।

आठवा अध्याय

यूरोप और अमरीका मे पूजीवाद का विकास। मजदूर आदोलन की वृद्धि और वैज्ञानिक कम्युनिज्म का उदय

पश्चिमी यूरोप तथा सयुक्त राज्य अमरीका मे पूजीवाद का विकास

यूरोप म सामती प्रतिक्रिया के उदीयमान सामाजिक शक्तियो का गला घोटन और सामती निरकुशता को सदा सदा क लिए जमा दन के निराशामत्त प्रयास निष्फल सिद्ध हुए। न तो पवित्र सहबध न यूरोप क पुन स्थापित राजतत्र और न ही रूसी साम्राज्य का सर्वशक्तिमान शासक जार निकोलाई प्रथम – इनम से कोई भी इस स्थिति म नही था कि पूजीवादी विकास की गहन प्रक्रियाओ का अवरुद्ध कर सके, जो लगातार तेज होती जा रही थी।

अठारहवी शती के उत्तरार्ध मे इगलैड म शुरू होनेवाली औद्योगिक क्राति उन्नीसवी सदी क आरभ म शेष यूरोप – फ्रास जर्मन तथा इतालवी राज्यो आस्ट्रिया और रूस – म तेजी से फैल गयी थी और अटलाटिक क उस पार के नये गणराज्य – सयुक्त राज्य अमरीका – म भी बडे बडे डग भर रही थी। मशीन हर कही हस्तश्रम का स्थान लेती जा रही थी। वस्त्र तथा धातु उद्योगो मे और नये इजनो क निर्माण म नये आविष्कारो और सुधारो ने और इजीनियरी उद्योग (दूसरी मशीनो को बनानेवाली मशीनो का बनाया जाना) के उदय न उत्पादन प्रक्रियाओ को बहुत त्वरित कर दिया था। परिवहन के क्षेत्र म प्रौद्योगिक क्राति न भी जो उन्नीसवी सदी म शुरू हुई थी उद्योग की सभी शाखाओ पर जबरदस्त प्रभाव डाला था।

१८१४ मे मजदूर परिवार म जन्मे स्वशिक्षित अग्रेज इजीनियर जार्ज स्टीफेसन न अपना पहला वाष्प इजन बनाया। वह ६ किलोमीटर प्रति घटा की रफ्तार से चलता था और पद्रह साल बाद भी जब उसमे कई सुधार कर दिये गये थे वाष्प इजनो और घोडो की दौडो का आयोजन करना एक आम रिवाज था। लेकिन बडे से बायलर और महाकाय चिमनीवाले इस भौडे और डरावनी शक्ल के यत्र का भविष्य बहुत ही उज्ज्वल था। १८२६ म

मैचेस्टर और लिवरपूल के बीच पैंसठ किलोमीटर लंबे रास्ते पर पहली गड्डी भापचालित रेल ने चलना शुरू किया। १८३१ में संयुक्त राज्य अमरीका, १८३२ में फ्रांस और १८३७ में रूस में भी रेलमार्गों का निर्माण शुरू हो गया। १८४० तक ससार के रेलमार्गों की कुल लंबाई लगभग ६ हजार किलोमीटर हो चुकी थी और अगले कुछ दशकों के भीतर उसकी बहुत ही जबर्दस्त गति में वृद्धि हुई – १८५० तक ४० हजार किलोमीटर, १८६० तक ११० हजार किलोमीटर और १८७० तक २१० हजार किलोमीटर।

रेल परिवहन का यह विस्मयजनक प्रसार अपार महत्व रखता था। उसने आतरिक तथा विदेशी व्यापार को बढ़ावा दिया, धातु और ईंधन की माग में बहुत वृद्धि की जिससे इन उद्योगों के विकास को बढ़ावा मिला, और अततः कई देशों के औद्योगीकरण को त्वरित किया।

लगभग उसी समय धूमपोत – वाष्पचालित जहाज – का आविष्कार हुआ जिसने परिवहन के क्षेत्र में एक और क्राति कर दी। सबसे पहला धूमपोत क्लेरमाट था जिसे १८०७ में राबर्ट फुल्टन ने बनाया था। उसने अपनी पहली यात्रा हडसन नदी में ८ किलोमीटर प्रति घंटा की रफ्तार से की थी। लेकिन धूमपोतों को लबी यात्राए करने में समर्थ बनाने के लिए और परिष्कृत किया गया और ज्यादा शक्तिशाली बनाया गया। अटलाटिक महासागर को पार करनेवाला पहला धूमपोत 'सैवना' था जिसने १८१९ में संयुक्त राज्य अमरीका से लिवरपूल का रास्ता २७ दिन में तय किया। बीस साल बाद १८३८ में 'ग्रेट वैस्टर्न' ने यह यात्रा मात्र १४ ही दिन में की। आगे चलकर तो धूमपोत अटलाटिक को इससे भी आधे समय में ही पार करने लग गये।

प्रविधि के और विशेषकर धूमपोतों के और विकास के साथ वे विराट जल विस्तार, जो पहले सचार में सबसे अधिक बाधक हुआ करते थे, धीरे धीरे उसमें सहायक बन गये।

औद्योगिक क्राति के सामाजिक परिणाम

उन्नीसवीं शताब्दी में पूजीवाद के तीव्र विकास से यूरोप और संयुक्त राज्य अमरीका में विशाल औद्योगिक नगर पैदा होने लगे। मजदूरों का भारी संख्या में नगरों में सकेंद्रण होने लगा, जहा बडे बडे कल-कारखाने थे। इगलैंड में, जहा औद्योगीकरण विशेषकर तीव्र रहा था और अधिकांशत उन्नीसवीं सदी के प्रथमार्ध तक पूरा हो चुका था, उसके साथ आनेवाले परिवर्तनों को सबसे अधिक स्पष्टता और सटीकता के साथ देखा जा सकता था। यहा

दो मुख्य वग – औद्योगिक वूजुआ और औद्योगिक सवहारा – उभरकर सामन आ गय थ और शेष वर्गो – कृपक अभिजात तथा निम्न बूर्जुआ – की भूमिका जल्दी ही गौण हो गयी । जल्दी ही बूर्जुआ और सवहारा वर्ग उन दूसरे देशो म भी मुख्य सामाजिक वर्गो क रूप म सामन आ गय जहा पूजीवाद रूप लन लगा था जैस फ्रास जमनी और सयुक्त राज्य अमरीका। लेकिन इन देशा म किसान अब भी सख्या म औद्योगिक सवहाराओ स अधिक थे और वहा सत्ता प्राक्‌-पूजीवादी वर्ग समूहो – अभिजातो और भूस्वामियो – के हाथो म ही बनी रही।

उन्नीसवीं शती के चौथे दशक की बूर्जुआ क्रातिया और सुधार

उन्नीसवी सदी म पूजीवाद क तीव्र विकास ने बूर्जुआज़ी की सपदा और शक्ति मे और वृद्धि की। बूर्जुआ वग जिसक पास अपार पूजी और भौतिक साधन थे, अधिकाश यूरोपीय राजतत्रो म अपनी आपेक्षिक अधिकारहीनता को अब और

पेरिस – २८ जुलाई, १८३० को सडक पर खडी की गयी बैरिकेड

अधिक बरदाश्त करन के लिए तैयार नहीं था। वह अब निर्णायक राजनीतिक भूमिका की या कम स कम राज्य प्रशासन म सहभागिता की आकांक्षा करन लगा था।

बेशक बूर्जुआ वग अभी बहुत सतर्कता स चल रहा था। श्रमिक वर्ग का निर्मम शोषण करन और मजदूरो को अपर्याप्त मजदूरी देकर भारी मुनाफ कमाने के बावजूद उसे अब मेहनतकशो म डर लगन लगा था। दूसरी ओर वह राजतंत्र और अभिजातों को मेहनतकशो स कम खतरनाक भी समझन लगा था क्योंकि जहा राजतंत्र क साथ तो वह हमेशा किसी न किसी समझौत पर पहुच सकता था वहा मजदूरो क साथ, जिनका वह घोर शोषण करता था किसी भी तरह का समझौता कर पाने की उसक पास कोई संभावना नही थी – शोषको और शोषितो क इन दोनो वर्गो की शत्रुता असाम्य थी उनके परस्परविरोधी वग हितो में सामंजस्य पूर्णत असंभव था।

यही कारण था कि राजकीय सत्ता को प्राप्त करन को प्रयत्नशील होते हुए भी बूर्जुआ वर्ग इस समय क्राति से बचन की कोशिश कर रहा था और इसके बजाय जनता की सहभागिता क बिना ऊपर स किये गये सुधारो पर ही जोर दे रहा था।

लेकिन बूर्जुआजी को खुली क्राति स बचन के अपन प्रयासो म हमेशा ही सफलता नही मिल पायी जैसा कि जुलाई १८३० म फ्रास म घटी घटनाओ से

फ्रास की जुलाई क्राति (१८३०)

सिद्ध होता है। शार्ल (चार्ल्स) दशम न जिसन बताया जाता है कि कहा था कि इंगलैड के बादशाहो की तरह राज करने की बनिस्बत मैं लकडी काटनेवाला बनना बेहतर समझूगा, सारे विरोध की पूरी तरह से अवहेलना करते हुए पुराने ज़माने की असीमित निरंकुशता को बहाल करन पर अपना सारा जोर लगा दिया था। इसक लिए उसने कई प्रतिक्रियावादी कानून जारी किये जिन्होने जनता में सख्त नाराजगी पैदा कर दी। बूर्जुआ वर्ग क्राति का इच्छुक नही था लेकिन आम लोग सडको पर निकल आये और बैरीकेड-मोरचे – खडे करन लग गये। बादशाह यह समझकर कि स्थिति उसके वश के बाहर है, इंगलैड भाग गया – वही देश जिस पर अभी कुछ पहले ही उसने तीखी फब्तियां कसी थीं।

लेकिन पुरानी व्यवस्था को उखाडकर फेका ही गया था कि बैरीकेडो पर तीन दिन की लडाई के दौरान छिप पडे रहन क बाद बूर्जुआ राजनीतिज्ञ खुल म आ गय और उन्होन जल्दी स सत्ता को अपन हाथो मे ले लिया। इसक पहले कि लोग यह समझ सक कि देश म हो क्या रहा है, उन पर एक

नया निज़ाम लाद दिया गया था – यह भी राजतंत्र ही था लेकिन अब राजा नया और नय राजवश का था – आर्लेआ का लुई फिलिप।

यह नया बादशाह जिसको आम लागा म बेरीकेडो का बादशाह और अमीरो क हलको म "शाही बूर्जुआ" कहा जाता था एक भूतपूर्व ड्यूक और शाल दाम का निकट सबधी था। उसे फ्रास भर म सबस धनवान और सबस कजूस माना जाता था और उसकी सपदा वर्णनातीत थी। लेकिन इसके बावजूद गद्दी पर बैठने क बाद लुई फिलिप न उस पुरानी प्रथा का तज दिया जिसक अनुसार बादशाह अपनी निजी सपत्ति का बादशाह और राज्य म परिणय क प्रतीकस्वरूप शाही कोषागार म रख दिया करता था, और फौरन ही यह सुनिश्चित करने म लग गया कि उसकी दौलत सुरक्षित रह जिसक लिए उसन कुछ हिस्से का अपन बटा म बाट दिया और शष का बैंको म रख दिया। उसकी य प्रवृत्तिया बूर्जुआज़ी को बहुत पसद आयी। जुलाई की बादशाहत (लुई फिलिप का राज्य इसी नाम स प्रसिद्ध हुआ) बूर्जुआ राजतंत्र था। किंतु इस राजतंत्र म प्रभुत्व सपूर्ण बूर्जुआजी का नहीं इस वग क औद्योगिक अग्रक तक का भी नही, बल्कि वित्तीय अभिजातवर्ग – वित्तपतियो, बैंकपतियो और थलीशाहो, अपार धनवानो – का था। यह वह समय था कि जिसम पैस की ही तूती बालती थी सोना ही सब कुछ था। महान फ्रासीसी लेखक आनोरे द बालजाक (१७९९ १८५०) न अपन प्रसिद्ध उपन्यास मानव विडम्बना' म इस समाज के जीवन और आचार विचार का जिसम हर चीज़ धन की सत्ता के नीचे थी बहुत ही बढिया चित्रण किया है।

इगलैड का १८३२ का सुधार विधेयक

इगलैड के शासक वर्गों ने, जो राजनीतिक जोड-तोड म बहुत प्रवीण थे सुनिश्चित कर लिया था कि उनके देश म किसी भी तरह की क्राति न होन पाय। उन्नीसवी सदी के तीसरे दशक क अत म और खासकर फ्रास की १८३० की क्राति क बाद इगलैड के शासक दल ह्विग पार्टी ने, जो बड भूस्वामियो का प्रतिनिधित्व करती थी समझ लिया कि कुछ रिआयते तो दनी ही हागी। १८३२ म एक ससदीय सुधार विधयक लाया गया। इसे सारी अग्रज जनता के लिए एक बडा वरदान बताया गया था लेकिन असल में इसने बस औद्योगिक बूर्जुआज़ी को ससदीय कार्य मे सीधा भाग लने का अवसर ही प्रदान किया। इस सुधार म सिर्फ बर्जुआजी और उसके दृष्टिकोण की समर्थक ह्विग पार्टी को ही लाभ हुआ। मजदूर वग को इससे कुछ भी नही हासिल हुआ जिसन इस सुधार के लिए सघर्ष किया था।

पूजीवाद के तीव्र विकास और राजनीतिक मामलो म वूर्जुआजी की वढती भूमिका ने औपनिवशिक प्रसार की एक नयी लहर का जन्म दिया। वूर्जुआजी को कच्च माल क नय सस्त स्रोतो और नयी मडियो की जरूरत थी। इस लिहाज से औपनिवशिक युद्धो को अत्यत लाभदायी समभा जाता था।

सर्वाधिक विकसित पूजीवादी देशो न, जिनम ब्रिटन सवस आगे था, एक नया प्रसार अभियान शुरू कर दिया। वमा स लडाई क वाद १८२६ म अग्रेजो न आसाम को छीन लिया। १८३६ म उन्होन अदन को दवचे लिया। चौथे दशक म अफगानिस्तान और भारत क कई भागो म लडाइया चली-१८४३ मे सिध और १८४६ मे कश्मीर को तथा पजाव के काफी वडे भाग को जीत लिया गया। १८३६ से १८४२ तक ब्रिटन कुख्यात अफीम युद्ध म लगा रहा जिसक दौरान उसने चीन म मजवूत आधार वना लिया। हागकाग को हथिया लिया गया और चीन को अफीम का आयात करन, जिसस ब्रिटिश व्यापारियो को अपार लाभ होता था और असमान व्यापारिक समभौता करने के लिए विवश कर दिया गया। १८४० मे ब्रिटेन ने न्यूजीलैड का अधिग्रहन कर लिया और १८४२-१८४३ मे वोर्नियो के सरावाक प्रदेश और दक्षिण अफ्रीका के नेटाल इलाके का समामेलन कर लिया। १८३० म फ्रास न अल्जीरिया को अधिकृत करने का अभियान शुरू किया और इसके वाद वह चीन के विरुद्ध लूट खसोट के औपनिवशिक युद्धो म सम्मिलित हो गया। १८४६ मे सयुक्त राज्य अमरीका ने अपने लगभग असहाय पडोसी दश मेक्सिको क खिलाफ लडाई भडकायी और उसे अपने न्यू मेक्सिको तथा कैलीफोर्निया क विशाल प्रदेशो से वचित कर दिया। इस समय तक उपनिवशवाद पूजीवाद का स्थायी सगी वन चुका था।

मजदूर वर्ग की स्थिति

जिस समय वूर्जुआ वर्ग लूट खसोट क औपनिवेशिक युद्धा स और मेहनतकश वर्ग क खूख्वार शापण से कल्पनातीत धन दौलत प्राप्त कर रहा था और मुनाफ वटोर रहा था उस समय—पूजीवाद की उस प्रारभिक अवस्था म—मजदूर वर्ग की स्थिति अत्यधिक कठिनाइयो से परिपूण था। उस समय तक मजदूर वर्ग की कतार काफी वढ चुकी थी, लकिन उस अभी तक राजनीतिक सघर्ष का कोई अनुभव नही था और वह अब भी असगठित

ही थे तथा उसे अपनी स्थिति और ऐतिहासिक भूमिका की बहुत ही कम चेतना थी। तत्कालीन उद्यमपति, जो मजदूरो की असहायता और सस्ते श्रम के आधिक्य का फायदा उठाते थे, अपने यहा काम करनेवालो से कम से कम समय के भीतर अधिक से अधिक निचोड लेने की कोशिश किया करते थे। शोषण अविश्वसनीय सीमाओ तक पहुचा हुआ था। मजदूरो को सोलह से अठारह घटे तक रोज काम करना होता था और स्त्री तथा बाल श्रम का व्यापक उपयोग किया जाता था। कमरतोड मशक्कत, अमानवीय आवास परिस्थितिया, सतत अल्पपोषण और गरीबी – इन सभी ने उस समय के मजदूरो के लिए भौतिक तथा आत्मिक विनाश का खतरा पैदा कर दिया था।

स्वतत्र मजदूर आदोलन का आरभ

आत्मपरिरक्षण के सहजबोध ने मजदूरो को अपने मालिको के खिलाफ सघर्ष शुरू करने के लिए विवश किया। लेकिन उन्नीसवी सदी के मजदूरो की पहली पीढियो के पास वह अनुभव नही था जो उनकी उत्तरवर्ती पीढियो को आगे चलकर प्राप्त होना था। उन्हे अभी तक इस बात की चेतना नही थी कि उन्हे जिस अनिष्ट का सामना करना पड रहा है उसका स्रोत क्या है और उनकी तकलीफो और मुसीबतो का उत्तरदायी कौन है। पहले वे इस भ्राति मे थे कि मशीनो के प्रचलन से आने से ही उनकी अवस्था इतनी असहनीय हो गयी है। वर्ग सघर्ष की पहली स्वतःस्फूर्त अभिव्यक्तियो ने मशीनो के तोड-फोडे और नष्ट किये जाने का रूप लिया। उन्नीसवी सदी के पहले दो दशको मे इगलैड मे लडी आदोलन—जिसे यह नाम इसलिए मिला था कि उसे नैड लड नामक युवा अप्रेटिस मजदूर ने शुरू किया था—पैदा हो गया, जिसके अनुगामी मशीनो को नष्ट कर दिया करते थे। लेकिन मजदूर जल्दी ही समझ गये कि मशीन उनकी तकलीफो का स्रोत नही है और उनको नष्ट कर देने से उनकी जिदगी कोई बेहतर नही हो जायगी।

लियो के १८३१ और १८३४ के बलवे

फ्रास मे भी मजदूरो की स्थिति वैसी ही असहनीय थी जैसी कि इगलैड मे। १८३१ मे रेशम उद्योग के केंद्र लिओ मे अपनी भयकर गरीबी से बेहाल होकर स्थानीय बुनकरो ने बलवा कर दिया और शहर को अपने कब्जे मे

ले लिया। उन्होंने काली पताकाएं लेकर जलूस निकाला, जिन पर लिखा हुआ था 'हम जीने और काम के अधिकार के वास्ते लडते लडते मर जाने को तैयार है!' यह नारा यह बताने के लिए काफी है कि उस समय तक मजदूरों की मांगें कितनी मामूली और सीमित थी। इस बलवे को सरकारी सेनाओं द्वारा निर्ममतापूर्वक कुचल दिया गया।

१८३४ में लियों के बुनकरों ने फिर सडकों पर आकर बलवा कर दिया। लेकिन इस बार वे अधिक संगठित थे और उनकी मांगों में काम की बेहतर अवस्थाओं के साथ साथ गणराज्य की स्थापना की मांग भी शामिल थी। इस बलवे को भी कुचल दिया गया।

चार्टिस्ट आंदोलन

इंगलैंड में बहुत से मजदूरों ने संसदीय सुधारों की मांग करनेवाले बूर्जुआ लोकतंत्रवादियों का समर्थन किया था। लेकिन जब १८३२ में सुधार विधेयक स्वीकार हो गया और उनके रहन-सहन तथा काम की अवस्थाओं में कोई सुधार नहीं आया, बल्कि वे समय के साथ ज्यादा ही खराब होती चली गयी, तो मजदूरों में फिर गहरी निराशा व्याप्त हो गयी।

मजदूरों का बूर्जुआ वर्ग पर से विश्वास उठ गया, जिसने उन्हें धोखा दिया था, लेकिन फिर भी पार्लियामेंट पर उनका विश्वास बना रहा। १८३६-१८३७ में पहले लंदन और फिर अन्य नगरों में भी सार्विक मताधिकार के लिए आंदोलन शुरू हुआ। मजदूर सोचते थे कि सार्विक मताधिकार लागू होने से उन्हें पार्लियामेंट में बहुमत प्राप्त हो जायेगा और सारी स्थिति बदल जायगी। किंतु इस प्रकार की आशाएं भ्रांतिमय थीं। फिर भी ब्रिटिश मजदूर, जिन्हें तब तक राजनीति का अधिक अनुभव नहीं था, इन भ्रांतियों में विश्वास करते थे और उनकी सबसे बडी चिंता यही थी कि पार्लियामेंट को सार्विक मताधिकार का कानून स्वीकार करने के लिए किस प्रकार मजबूर किया जाय। १८३७ में मजदूरों के नेताओं ने एक घोषणापत्र – चार्टर – तैयार किया, जिसमें वे मुख्य मांगें थीं, जिन्हें पार्लियामेंट के आगे पेश किया जाना था। इसके बाद उन्होंने इस चार्टर पर हस्ताक्षर इकट्ठे करना शुरू किया। तीन बार – १८३९, १८४२ और १८४८ में – यह चार्टर पार्लियामेंट को दिया गया और हर बार उसमें पहले से भी अधिक हस्ताक्षर थे। पहली बार १२ लाख हस्ताक्षर एकत्र किये गये थे, दूसरी बार ३३ लाख और तीसरी बार लगभग ५० लाख। जिन कागजों पर हस्ताक्षर किये गये थे, वे इतने बडे और भारी थे कि उदाहरण के लिए, १८४२ में उन्हें एक बहुत ही बडी

संसद की ओर चार्टिस्टों का कूच

पटी म रखकर पार्लियामट म ले जाया गया था जिसे उठाने के लिए बीस से अधिक लागा की जरूरत पडी थी।

हस्ताक्षर सग्रहण और उसमे सन्निहित राजनीतिक तथा सामाजि[illegible] प्रश्नो पर चलनेवाली बहस क परिणामस्वरूप मजदूर आदोलन [illegible] म एक अभूतपूर्व उत्कर्ष आया। मजदूर लोग शाम के वक्त [illegible] म जमा होकर राजनीतिक भाषण सुनते थे और स्थिति पर [illegible]। रात क समय ब्रिटिश नगरो की शात सडको पर चार्टिस्टो [illegible] निकला करते थे। मजदूरो ने पहली बार अनुभव किया [illegible] और सगठित रूप म कुछ करते है तो उनकी [illegible] बन जाती है। १८४० म तो एक सयुक्त चार्टिस्ट पार्टी – [illegible] मजदूर पार्टी – की स्थापना करने का प्रयास भी किया गया था।

जैसे जैसे चार्टिस्ट आदोलन बढता और [illegible] प्राप्त करता गया वैसे वैसे मजदूर भी [illegible] और [illegible] से शिक्षा लेते हुए अपने आसपास की [illegible] और अपनी बहुत सी भ्रांतिया स मुक्त [illegible]

मागा के साथ साथ सामाजिक माग – या जैसा कि उस समय कहा जाता था "छुरी और काटे की समस्याए" – भी शामिल हो चुकी थी। ऐसा भी आशाए प्रकट की गयी थी कि वाछित लक्ष्यो को आम हडताल के जरिये हासिल किया जा सकता है। चार्टिस्ट आदोलन के नेता श्रमिक वर्ग के याय और समर्पित पैरोकार ओ ब्रायन, फीयरगस ओकानर, जी० ज० हार्नी और अर्नेस्ट जोन्स थे। लेकिन ये श्रेष्ठ मजदूर नेता भी अपने अनुगामियो को सही रास्ते पर न ले जा सके। चार्टिस्ट अभी मजदूर वर्ग की भूमिका और सगठनबद्धता की आवश्यकता की स्पष्ट समझ पर नहीं पहुच पाये थे।

चार्टिस्ट आदोलन, जो १८४८ के वसत मे अपने चरम पर पहुच गया था अपने व्यापक प्रभाव का पूरा उपयोग करने मे असमर्थ सिद्ध हुआ और जल्दी ही उतार पर आने लगा। लेकिन इसके बावजूद यह इतिहास मे सर्वहारा का सर्वप्रथम व्यापक राजनीतिक आदोलन था और वह एक प्रेरणादायी उदाहरण बन गया। चार्टिस्ट आदोलन के बाद मजदूर वर्ग के मुक्ति-सघर्ष ने एक नयी और अधिक उन्नत मजिल मे प्रवेश किया।

यूटोपियाई समाजवाद

प्रबोधन काल और फ्रासीसी क्राति के युग के लेखको ने 'स्वर्णयुग के उदय की विवेक स्वतत्रता और न्याय के शासन की प्रत्याशा दर्शायी थी। किंतु व्यवहार मे सामती उत्पीडन का स्थान निर्मम पूजीवादी शोषण और धन के अबाध राज ने ले लिया था। लुभावनी प्रत्याशाओ और भयावह यथार्थ के बीच इस भारी अतर ने उस काल के अनेक प्रगतिशील चितको को सोचने का काफी मसाला दिया।

पूजीवादी विकास की उस प्रारभिक मजिल मे भी कई ऐसे प्रबुद्ध मनीषी थे जिन्होने पूजीवादी व्यवस्था की बुराइयो को समझ लिया था और एक नयी बेहतर और अधिक न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के आगमन की घोषणा की थी। इन लोगो को आगे चलकर यूटोपियाई या कल्पनालोकी समाजवादी कहा गया।

इन महान चितको मे सर्वप्रमुख स्थान सेट साइमन (१७६० १८२५), फूरिये (१७७२-१८३७) और राबर्ट ओवेन (१७७१-१८५८) का प्राप्त है। सेट साइमन अभिजात वश मे जन्मा था और उसने उसीके अनुरूप शिक्षा भी पायी थी। फ्रासीसी क्राति के समय पहले वह व्यापार मे लगा रहा और बाद मे सामान गिरवी रखने की एक दूकान मे मुशी बन गया। इस तरह

कार्ल मार्क्स, १८६७

मांगों के साथ-साथ सामाजिक मांगें – जैसा कि उस समय कहा जाता था 'छुरी और कांटे की समस्या' – भी शामिल हो चुकी थीं। ऐसी भी आशा प्रकट की गयी थी कि वांछित लक्ष्यों को आम हड़ताल के जरिये हासिल किया जा सकता है। चार्टिस्ट आंदोलन के नेता श्रमिक वर्ग के यानी और समर्पित पैरोकार ओ'ब्रायन, फीयरगस ओ'कोनर, जी० ज० हार्नी और अर्नेस्ट जोन्स थे। लेकिन ये श्रेष्ठ मजदूर नेता भी अपने अनुयायियों को सही रास्ते पर न ले जा सके। चार्टिस्ट अभी मजदूर वर्ग की भूमिका और संगठनबद्धता की आवश्यकता की स्पष्ट समझ पर नहीं पहुंच पाये थे।

चार्टिस्ट आंदोलन, जो १८४८ के वसंत में अपने चरम पर पहुंच गया था, अपने व्यापक प्रभाव का पूरा उपयोग करने में असमर्थ सिद्ध हुआ और जल्दी ही उतार पर आने लगा। लेकिन इसके बावजूद यह इतिहास में सर्वहारा का सर्वप्रथम व्यापक राजनीतिक आंदोलन था और वह एक प्रेरणादायी उदाहरण बन गया। चार्टिस्ट आंदोलन के बाद मजदूर वर्ग के मुक्ति-संघर्ष ने एक नयी और अधिक उन्नत मंजिल में प्रवेश किया।

यूटोपियाई समाजवाद

प्रबोधन काल और फ्रांसीसी क्रांति के युग के लेखकों ने 'स्वर्णयुग के उदय' की, विवेक, स्वतंत्रता और न्याय के शासन की प्रत्याशा दर्शायी थी। किंतु व्यवहार में सामंती उत्पीडन का स्थान निर्मम पूंजीवादी शोषण और धन के अबाध राज ने ले लिया था। लुभावनी प्रत्याशाओं और भयावह यथार्थ के बीच इस भारी अंतर ने उस काल के अनेक प्रगतिशील चिंतकों को सोचने का काफी मसाला दिया।

पूंजीवादी विकास की उस प्रारंभिक मंजिल में भी कई ऐसे प्रबुद्ध मनीषी थे, जिन्होंने पूंजीवादी व्यवस्था की बुराइयों को समझ लिया था और एक नयी, बेहतर और अधिक न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के आगमन की घोषणा की थी। इन लोगों को आगे चलकर यूटोपियाई या कल्पनालोकी समाजवादी कहा गया।

इन महान चिंतकों में सर्वप्रमुख स्थान संत साइमन (१७६०-१८२५), फूरियें (१७७२-१८३७) और रॉबर्ट ओवेन (१७७१-१८५८) को प्राप्त है। संत साइमन अभिजात वंश में जन्मा था और उसने उसीके अनुरूप शिक्षा भी पायी थी। फ्रांसीसी क्रांति के समय पहले वह व्यापार में लगा रहा और बाद में सामान गिरवी रखने की एक दूकान में मुंशी बन गया। इस तरह

कार्ल मार्क्स, १८६७

उसे समाज के सभी अशकों की रिहायशी और कामकाजी हालतो का अनुभव पाने और नयी व्यवस्था की सभी विभीषिकाओ को निकट से देखने का अवसर मिला था। सट-साइमन, फूरिये और ओवेन न, जो सभी उन्नत पूजीवादी देशो मे रहते थ, पूजीवादी विश्व की कठोर और उचित आलोचना की और भविष्य क न्यायपूर्ण समाज की अपनी अवधारणा का निरूपण किया। उनकी कृतियो का सर्वाधिक महत्व इस बात मे है कि उन्होन जनसाधारण को अपने आपको पूजीवादी दासता की वेडियो से मुक्त करने के लिए ललकारा। लेकिन वे वेहतर समाज का निर्माण करन क सही रास्तो का नही देख पाये। उन्होने जो कुछ भी सुझाया, वह सब भोलेपन से भरा हुआ और अव्यावहारिक था। उन्हे तो इस बात का भी अहसास नही था कि कौनसा वग कौनसी सामाजिक शक्ति ससार का रूपातरण उत्पीडन का अत और मानवजाति का शोषण तथा उसके साथ चलनवाली बुराइया से निजात दिला सकन की स्थिति म है।

क्लासिकी जर्मन दर्शन

जमन राज्यो मे जहा आथिक विकास मथर गति स हो रहा था और वर्ग विरोधो ने खुले क्रातिकारी सघर्ष को अभी तक जन्म नहीं दिया था गहन सामाजिक प्रक्रियाओ और सामाजिक असतोष क चढते सैलाव न अपन को सर्वप्रथम और सर्वोपरि रूप म साहित्य तथा दर्शन म व्यक्त किया। अठारहवी सदी के अत और उन्नीसवी के आरभ मे जर्मन साहित्य का जा उत्कर्ष हुआ वह सबसे वढकर दो महान लेखको – गटे (१७४९-१८३२) तथा शिलर (१७५९-१८०५) – क नामो के साथ जुडा हुआ है। उस काल के जमन दार्शनिको मे सबसे प्रमुख शेलिग (१७७५ १८५४) और हेगेल (१७७० १८३१) थे। स्वय भाववादी (आइडियलिस्ट) वन रहन पर भी हेगल न दार्शनिक चितन म द्वद्वात्मक पद्धति का उपयोग किया और अपन युग क बौद्धिक जीवन पर अगाध प्रभाव डाला।

कार्ल मार्क्स तथा फ्रेडरिक एगेल्स। वैज्ञानिक कम्युनिज्म का उदय

मजदूर आदोलन क काफी अनुभव प्राप्त कर लन और मजदूर वग क अधिक सगठित हो जाने क वाद ही एक एस वस्तुत वैज्ञानिक सिद्धान्त का उदय हो सका कि जो सर्वहारा की एतिहासिक भूमिका क साथ सगत

सिद्ध हो सके। इस सिद्धात ने सामाजिक विकास के नियमो का उद्घाटन किया और उच्चतम सामाजिक व्यवस्था – कम्युनिज्म – मे सक्रमण के रास्ते दिखाये। इस सिद्धात के सृजक मजदूर वर्ग के महान नेता कार्ल मार्क्स तथा फ्रेडरिक एगल्स थे।

कार्ल मार्क्स एक वकील का बेटा था और उसने ५ मई १८१८ को त्रियेर नामक जर्मन नगर मे जन्म लिया था। विद्यार्थी जीवन मे ही मार्क्स ने अदभुत प्रतिभा का प्रदर्शन करना शुरू किया। वह चाहता तो बडा होकर किसी विश्वविद्यालय मे प्रोफेसर का पद पाकर सम्मान, ख्याति और धन का अर्जन कर सकता था मगर उसने इस रास्ते को नही चुना – आरंभ से ही उसने अपने-आपको तन मन से क्रातिकारी सघर्ष को समर्पित कर दिया और अपने महान मस्तिष्क को सामाजिक विकास के नियमो के अध्ययन की ओर मोड दिया। पचीस साल की उम्र मे उसे जर्मनी को छोडना पडा और वह पहले परिस और ब्रसेल्स मे रहा और अत मे लदन मे जा बसा। फ्रेडरिक एगेल्स (१८२०-१८९५) के साथ उसकी मित्रता का आरभ १८४४ मे हुआ। एगेल्स एक कारखाना मालिक का बेटा था जिसने अपने पिता की इच्छाओ का पालन करने और अपनी शक्ति पैसा कमाने मे लगाने के बजाय अपने को मार्क्स की भाति ही क्रातिकारी सघर्ष के प्रति समर्पित कर दिया था।

मार्क्स और एगल्स ने समाजविज्ञान पर अपने पूर्ववर्तियो की लिखी अनेक कृतियो का अध्ययन किया और उनका आलोचनात्मक विश्लेषण किया। उन्होने क्रातिकारी आदोलन के इतिहास और समाजवाद के सिद्धात का भी अध्ययन किया जिसमे उन्होने फ्रासीसी क्राति जर्मन क्लासिकी दर्शन और ब्रिटिश राजनीतिक अर्थशास्त्र की ओर विशेष ध्यान दिया। समाजविज्ञान की पुरानी उपलब्धियो का आलोचनात्मक विश्लेषण करके तथा सर्वहारा के क्रातिकारी सघर्ष को प्राप्त अनुभव के आधार पर मार्क्स और एगल्स ने गुणात्मक रूप से एक सर्वथा नवीन सिद्धात – वैज्ञानिक समाजवाद के सिद्धात – का प्रतिपादन और सर्वहारा सघर्ष की कार्यनीति का निरूपण किया। उनके पूर्ववर्ती प्रगतिशील बूर्जुआ विद्वान सामाजिक विकास मे वर्ग सघर्ष को पहले ही प्रकाश मे ला चुके थे लेकिन यह मार्क्स और एगेल्स ही थे कि जिन्होने इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या और पूजीवादी समाज मे अतर्निहित आर्थिक नियमो का उदघाटन करके पहल पहल इस तथ्य को समझा और प्रमाणित किया कि जिस वर्ग को ससार को रूपातरित करना है और जो स्वार्थपूर्ण तथा अहपरक लक्ष्यो मे मुक्त एकमात्र वस्तुत क्रातिकारी वर्ग है वह सर्वहारा ही है। सर्वहारा के पास खोने को अपनी जजीरो के सिवा और कुछ नही है उन्होने कहा। सर्वाधिक क्रातिकारी वर्ग होने के नाते सर्वहारा द्वारा

सभी उत्पीडितो और शोषितो का, सारे मेहनतकश अवाम का नेता और पैरोकार बन जाना और पूजीवादी व्यवस्था को नष्ट करने के संघर्ष मे उनका नेतृत्व किया जाना अपरिहार्य और अनिवार्य ही था।

मार्क्सवाद ने दिखाया कि सर्वहारा ही वह अकेला वर्ग है जो सत्ता पर अधिकार कर लेने के बाद उस सत्ता का केवल अपने वर्ग हितो की सिद्धि के लिए नही अपितु सारी मानवजाति के समूचे तौर पर सारे समाज के हितो की सिद्धि के लिए उपयोग करेगा। बूर्जुआजी का तख्ता उलटने के बाद मजदूर वर्ग अपने अधिनायकत्व सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना करेगा जो वर्गहीन समाज – कम्युनिज्म – मे सक्रमण के दौर का काम देगा। मार्क्स तथा एगेल्स द्वारा वैज्ञानिक आधार पर निरूपित यह नया सामाजिक सिद्धात मानवजाति के लिए अपार महत्व रखता था। किंतु वह एक प्रबल शक्ति केवल तभी बन सकता था कि जब वह जनसाधारण के दिलोदिमाग पर छा जाये।

कम्युनिस्ट लीग

मार्क्स और एगेल्स के पहले मजदूर आदोलन और समाजवाद का विकास अलग-अलग रास्तो से हो रहा था। १८४७ मे मार्क्स और एगेल्स के सक्रिय सहयोग से पहले अतर्राष्ट्रीय सर्वहारा सगठन – कम्युनिस्ट लीग – की स्थापना की गयी। एक यूटोपियाई समाजवादी सगठन के उस समय बहुप्रचलित नारे सारे आदमी – भाई भाई! के स्थान पर अब एक नया नारा बुलन्द किया गया – दुनिया के मज़दूरो एक हो! पहली दृष्टि मे यह लग सकता है कि यूटोपियाई समाजवादियो का नारा ज्यादा व्यापक और मानवतावादी था लेकिन क्या कारखाना मालिको का मज़दूरो का भाई माना जा सकता था? क्या जमीदारो का किसानो का, या उपनिवेशको का उत्पीडित अफ्रीकियो या लैटिन अमरीकियो का भाई माना जा सकता था? सारे आदमी – भाई-भाई! का नारा एक ऐसा नारा था कि जो वास्तविक स्थिति पर मुलम्मासाज़ी करता था खतरनाक भ्रातियां पैदा करता था। कम्युनिस्ट लीग द्वारा स्वीकृत नये नारे ने निस्सन्दिग्ध रूप से यह दिखा दिया कि भविष्य के कार्यभारो का समाधान विश्वव्यापी पैमाने पर एकताबद्ध सर्वहारा वर्ग के साथ अविभाज्य रूप मे जुडा हुआ है।

१८४७ मे लदन मे हुई कम्युनिस्ट लीग की दूसरी काग्रेस मे मार्क्स और एगेल्स को लीग का कार्यक्रम तैयार करने का काम सौंपा गया। अगले वर्ष के आरभ मे कम्युनिस्ट घोषणापत्र छपकर आया। इस छोटी सी पुस्तिका के कलेवर के भीतर मार्क्स और एगेल्स ने वैज्ञानिक कम्युनिज्म के बुनियादी

सिद्धांतो की रूपरेखा प्रस्तुत की थी। इस पुस्तिका का भविष्य बहुत ही उज्ज्वल था – अपने प्रथम प्रकाशन के बाद से बीते सौ से कुछ ही अधिक वर्षों के भीतर इसके सौ से अधिक संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं और विश्व की लगभग प्रत्येक भाषा में इसका अनुवाद किया जा चुका है। लेकिन उस सुदूर समय में भी जब वह सबसे पहले छपा था 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' ने जबरदस्त प्रभाव डाला था। कम्युनिस्ट घोषणापत्र के प्रकाशन का यह मतलब था कि अब से मजदूर आंदोलन और समाजवाद दो अलग-अलग धाराएं नहीं रह गये थे – वे आपस में एकीभूत हो गये थे और इस प्रकार एक अपराजेय शक्ति बन गये थे।

नवां अध्याय

१८४८-१८४६ की क्रांतिकारी उथल-पुथल

१८३० की क्रांति ने पवित्र सहबंध की प्रभुता पर पहला गंभीर प्रहार किया था किंतु वह उसकी शक्ति को निर्णायक चोट नहीं पहुंचा पायी थी। पवित्र सहबंध के मुख्य आधार ज़ार निकोलाइ प्रथम का रूसी साम्राज्य मेटरनीक का आस्ट्रिया और प्रशा राज्य थे। स्वयं फ्रांस भी जहां १८३० की क्रांति हुई थी जल्दी ही यूरोपीय प्रतिक्रिया का एक और दुर्ग बन गया था। बादशाह लुई फिलिप ने अपनी प्रजा के दिमाग से जुलाई की बादशाहत के क्रांतिकारी उदगम की सारी यादों को मिटा देने की कोशिश की। उन्नीसवीं सदी के चौथे दशक में कई जन विद्रोहों के सख्ती के साथ कुचल दिये जाने के बाद देश में सामाजिक तथा राजनीतिक अनुदारता और पुलिस शासन का दौर आ गया। फ्रांस आस्ट्रिया का, जो पवित्र सहबंध के मुख्याधारों में एक था, घनिष्ठ मित्र बन गया।

यूरोप की १८४८ की क्रांतियां

लेकिन यूरोपीय प्रतिक्रिया की संयुक्त शक्तियां भी क्रांति का मुकाबला उतनी सफलता के साथ नहीं कर सकीं कि जितनी लुइ फिलिप के प्रधान मंत्री गीज़ो ने आशा की थी। दमन के कारण लंबे समय से दबी पड़ी सामाजिक मुक्ति की शक्तियां मज़बूत और लगातार बलवती होती जा रही थीं। १८४८ में ज्वालामुखी फूट पड़ा। सारा यूरोप क्रांतिकारी उथल-पुथल की जकड़ में आ गया और पवित्र सहबंध असुधार्य रूप से ध्वस्त हो गया।

क्रांति का पहला विस्फोट सिसली में हुआ। जन आंदोलन के अपने निर्मम दमन के लिए कुख्यात घृणित बूर्बो बादशाह फर्दीनांद द्वितीय अपने नरसंहार

मिहायल ने गिरने के डर से तुरंत कई रियायतें देने के लिए तैयार हो गया- सारे प्रतिक्रियावादी मंत्रियों को बरखास्त कर दिया गया और संविधान का वचन दिया गया।

२२-२४ फरवरी को फ्रांस में क्रांति फूट पड़ी। एक मामूली सी घटना ही इसके लिए काफी साबित हुई कि हजारों मजदूर सड़कों पर निकल आये। बैरिकेड खड़े कर दिये गये और एक-एक इलाका करके सारा शहर बागियों के हाथों में आ गया। घमंडी गीजो को, जिसने विद्रोह के आरंभ में प्याले में तूफान की संज्ञा दी थी, औरत के वेश में क्रांतिकारी पेरिस से भागकर जाना पड़ा। अगले ही दिन एक सादी घोड़ागाड़ी में लुई फिलिप ने भी उसका अनुकरण किया। शाही महल में घुस जाने के बाद बागी बादशाह के शाही सिंहासन को नगर की पत्थर पटी सड़कों पर घसीटते हुए बस्तील ले गये जहां उसे विजय की हर्षोल्लासपूर्ण फिजा में जला दिया गया।

१३ मार्च को वियना में बैरिकेड खड़े हो गये और अब मेटरनिख के भागने की बारी थी। बुडापेस्ट और प्राग ने भी वियना के उदाहरण का अनुकरण किया और कुछ ही समय के भीतर सारा बहुराष्ट्रीय आस्ट्रियाई साम्राज्य क्रांतिकारी खुमार में खुदबुदाने लगा। १८ मार्च को बर्लिन में भी जन विद्रोह की विजय हो गयी। इसके पहले कई पश्चिमी जर्मन राज्यों में विजयी क्रांतियां हो चुकी थीं। इटली के राज्यों में भी क्रांति की एक प्रबल लहर फैल गयी। लबार्डी में बागी इतालवियों ने आस्ट्रियाई अधिशासी सेनाओं को पराजय दी और जन विद्रोह में मार्शल रादेत्स्की की सेना को हार खानी पड़ी। आस्ट्रियाइयों को वेनिस राज्य के बाहर खदेड़ दिया गया, जिसके बाद उसे स्वतंत्र गणराज्य घोषित कर दिया गया। इंगलैंड में इस समय चार्टिस्ट आंदोलन फिर अपने चरम पर था। स्पेन, स्विटजरलैंड और बेल्जियम में भी क्रांतिकारी आंदोलन फैल गया और पोलों ने अपने देश के विभाजन के खिलाफ बगावत कर दी। यह क्रांतिकारी ज्वार सारे यूरोप में फैल गया और अटलांटिक तट से लेकर जार निकोलाई के साम्राज्य की सीमाओं तक घृणित राजनीतिक व्यवस्थाओं, सम्राटों और मंत्रियों को अपने साथ बहा ले गया।

विख्यात रूसी क्रांतिकारी लेखक अलेक्सान्द्र हर्जेन ने २० अप्रैल १८४८ को लिखा था : "यह अद्भुत समय है। अखबार उठाते हुए मेरे हाथ कंपकंपाने लगते हैं – हर दिन कोई न कोई अप्रत्याशित बात होती रहती है, तड़ित का नया गर्जन सुन पड़ता है : या तो मानवजाति का नया उज्ज्वल पुनर्जन्म होनेवाला है या कयामत का दिन आ रहा है। लोगों के दिलों में नयी ताकत आ गयी है, पुरानी आशाएं फिर जाग उठी हैं और एक ऐसा साहस फिर हावी हो गया है कि जो सभी कुछ कर सकता है।"

फ्रास की फरवरी क्राति

आरभ म सभी कुछ इस प्रकार की हर्षदायी आशाओ क अनुरूप ही हुआ। पेरिस म क्राति के प्रारभ म वास्तविक सत्ता विप्लवी श्रमिक वग के हाथा म थी जिसन राजतत्र का तख्ता पलटने म निर्णायक भूमिका अदा की थी। मजदूर अभी भी हथियारबद थे और राजधानी की सडको क स्वामी थे। सर्वहारा की माग पर और बूर्जुआ राजनीतिज्ञो की इच्छाओ क विपरीत २८ फरवरी के दिन फ्रास का गणराज्य घोषित कर दिया गया। इस प्रकार १८४८ की फरवरी क्राति ने दूसरे ही दिन वह हासिल कर लिया जिस प्राप्त करन मे १७८९ की क्राति को कोई तीन साल लग गये थे। देश क तिरगे झडे पर एक सुर्ख रोजेट लगा दिया गया—यह सर्वहारा को दी गयी एक और रिआयत का परिचायक था, जो लोगो को इस बात की याद दिलान क लिए लाल झडे की माग कर रहा था कि दूसर गणराज्य को "सामाजिक न्याय का लोकतत्रीय गणराज्य" होना होगा।

फ्रासीसी सर्वहारा की कमज़ोरी का मूल यह था कि प्रबल क्रातिकारी जोश के बावजूद न वह अच्छी तरह सगठित था और न ही उस अपन कार्यभारो तथा लक्ष्यो का बोध था। फ्रासीसी सर्वहाराओ क पास न सिर्फ अपनी पार्टी ही नही थी, जो उनके सघर्ष को सगठन और दिशा प्रदान कर पाती बल्कि ट्रेड यूनियन भी नही थी। उस समय बहुतरे राजनीतिक क्लब पैदा हो गय थे लेकिन व एक दूसर से अलग-थलग और आपस म झगडत रहत थ। न ही सर्वहारा क पास कोई वास्तविक नेता थे। अधिकाश मजदूर यूटोपियाई समाजवादी लुई ब्ला का आख मीचकर अनुकरण करत थ जो सोचता था कि बातचीत क जरिये और समझा बुझाकर बूर्जुआ सरकार स सामाजिक सुधार करवाये जा सकते है।

बूर्जुआ राजनीतिक नताओ न जो क्राति क आरभ म भय स त्रस्त हो गये थ और जिन्होने पाखडपूर्वक मजदूरो को अपनी प्रभुत्वपूर्ण भावनाओ का दिलासा दिया था मजदूरो क भोलेपन और सगठनहीनता का पूरा पूरा लाभ उठाया। क्राति क आरभ म बूर्जुआ राजनीतिज्ञो क हाथ म कोई वास्त विक सत्ता नही थी और उन्ह षड्यत्रो और कुटिल जोड-तोड का सहारा लेना पडा था। व एक अस्थायी सरकार स्थापित करवान म सफल हो गय थ जिसका नता लूपा द लामार्तीन नामक ऐसा आदमी था जिस पर लोगो को विश्वास था। वह १७८९ की क्राति म भाग ले चुका था और गण तत्रवादी आदोलन का पुराना कार्यकर्ता था। लेकिन वह अब ८० साल का हो चुका था। वह अधाधुध और कमजोर था और सरकार की नीति पर कुछ भी वास्तविक प्रभाव डालन म असमर्थ था। इस सरकार का वित्त मत्री

और मुख्य प्रवक्ता प्रसिद्ध कवि अलफोस लामार्तीन था, जो अपन समय के सर्वोत्तम वक्ताओ म एक था और जिस अपनी वक्तृता स क्रातिकारी ज्वार का रोकन का काम सौपा गया था। अस्थायी सरकार म मजदूरा का भी एक प्रतिनिधि चुना गया था और वह था लुई ब्ला। उसे सामाजिक सुधारा की जाच करन के लिए स्थापित सरकारी आयाग का, जिसका कार्यालय आलीशान लक्सेमबर्ग प्रासाद मे था और इसलिए जो लक्सेमबग आयाग भी कहलाया प्रधानत्व दे दिया गया अलबत्ता इस आयोग का कोई धन या ठाम अधिकार नही प्रदान किये गये थे।

मजदूरो को यह देखकर अस्थायी सरकार म विश्वास हो गया कि उनके लुई ब्ला को मत्री बना दिया गया है और अपनी पहल की मागो पर जोर दने क बजाय व धैर्यपूर्वक इस प्रतीक्षा मे बैठ गये कि लुई ब्ला अपन सहयोगियो के साथ समझौत पर पहुच जायेगा और उनकी अवस्था से सुधार करवा लेगा। लेकिन इस सरकार मे वास्तविक सत्ता बूर्जुआजी के मक्कार प्रतिनिधियो के हाथो मे थी जिन्होन अपनी प्रारभिक दहशत मे सभलने क साथ लोगो की आखो के सामन धूपो द ल एर लामार्तीन और लुई ब्ला जैसे लोकप्रिय लोगो को प्रमुखता प्रदान करके और अपन असली इरादो को छिपाकर सर्वहारा के खिलाफ प्रत्याक्रमण शुरू कर दिया।

बूर्जुआजी और उसके राजनीतिक पक्षपोषको का सर्वप्रमुख लक्ष्य जिसे बडी चालाकी स छिपाकर रखा गया था यह था कि श्रमिक वर्ग को अपन वश म लाया जाये और उसे अपनी नवार्जित सत्ता से वचित किया जाय। समस्या यह थी कि लोकतत्रीय क्राति की अवस्थाओ म सर्वहारा को कैम दबाकर रखा जाय? बूर्जुआ राजनीतिज्ञो न समझ लिया कि इसका सबस अच्छा तरीका यह है कि सर्वहारा को उसके सभाव्य मित्रो स अलग कर दिया जाय।

क्राति का लुई फिलिप की जुलाई की बादशाहत से विरासत म खाली खजाना और कर्जा का दुसह बोझ मिला था। क्राति क बाद शक्तिशाली वित्तपतियो न सरकार का अपनी कठिनाइयो को हल करन म समर्थ बनान क लिए उस सहयोग दन म इन्कार कर दिया। इस वित्तीय समस्या को आसानी म हल किया जा सकता था बशर्ते कि राजकीय ऋणो से लाभान्वित होन वालो – बैंकपतियो और धनी उद्योगपतियो – को पैसा दन क लिए मजबूर कर दिया जाता। लेकिन अस्थायी सरकार न बूर्जुआजी की इच्छानुसार दूसरा ही रास्ता चुना और उसन ४५ सतीम का कर लगा दिया। इसका मतलब था कर क तौर पर दिय जानवाल प्रति फ्रैंक म ४५ सतीम की वृद्धि। नये कर का मुख्य भार कृषक समुदाय और शहरी निम्न बूर्जुआजी पर पडा। ये दोनो सामाजिक समूह क्राति म सुधारो की आशा कर रहे थ पर उनके

बजाय उन पर करो का बोझ बढा और उनकी रहन सहन की हालत और भी ज्यादा मुश्किल हो गयी।

बूर्जुआ राजनीतिज्ञो और बूर्जुआ समाचारपत्रो ने लोगो के सामने इस वर्धित कराधान को सर्वहारा की लगातार बढती मागो के कारण अनिवार्य बन कदम के रूप मे पेश किया। परिस मे बेरोजगारो की भारी सख्या को देखते हुए तथाकथित राष्ट्रीय कार्यशालाए स्थापित की गयी थी जिनमे मजदूरो को दो फ्रैंक रोज की मजदूरी पर बेलदारो, आदि की हैसियत से काम पर रखा जाता था। बूर्जुआ राजनीतिज्ञो ने आरोप लगाया कि इन कार्यशालाओ पर और लक्समबर्ग आयोग के अधिवेशनो पर बहुत अधिक पैसा खर्च करना पड रहा है और इस तरह मजदूरो के कारण ही करो को बढाना आवश्यक हुआ है। बूर्जुआजी ने किसानो और शहरी निम्न बूर्जुआजी को सर्वहारा के विरुद्ध भडकाने के लिए इस तरह के हथकडो का उपयोग किया।

फ्रासीसी सर्वहारा के सच्चे समर्थको ने, उदाहरण के लिए कट्टर क्रातिकारी लुई ओग्यूस्त ब्लाकी (१८०५ १८८१) ने जो सभी बूर्जुआ शासनो का प्रखर आलोचक था अस्थायी सरकार की इस भडकाव की नीति का विरोध किया। लेकिन ब्लाकी कुछ भी नही कर पाया क्योकि मजदूरो का बहुमत अब भी लुई ब्ला का ही अनुकरण कर रहा था जो अस्थायी सरकार का सदस्य था और मजदूरो के बीच अब भी बनी अपनी प्रतिष्ठा के आधार पर सरकार की नीतियो को इस तरह पेश कर सकता था कि जिससे वे मजदूरो को स्वीकार्य लगने लगती थी।

यही नही जब १७ मार्च को क्रातिकारी क्लबो ने अस्थायी सरकार की नयी नीतियो के विरोध मे एक प्रदर्शन का आयोजन किया तो लुई ब्ला ने ओतेल दे वील की बालकनी पर आकर मजदूरो से अपील की कि वे अस्थायी सरकार मे विश्वास को बनाये रखे। सर्वहारा पर उसका प्रभाव इतना जबरदस्त था कि यह प्रदर्शन शातिपूर्वक बिखर गया।

जून का विद्रोह

इस प्रकार बूर्जुआजी ने लुई ब्ला की लोकप्रियता और वर्गगत शाति की उसकी नीति का अपने लक्ष्यो की सिद्धि के लिए उपयोग करते हुए सर्वहारा और कृषक समुदाय मे फूट पैदा करने मे सफलता प्राप्त कर ली। इसका अप्रैल १८४८ मे हुए सविधान सभा के चुनावो पर असर पडा जो प्रथम गणराज्य के बाद से सार्विक मताधिकार के आधार पर होनेवाले पहले चुनाव थे। इन चुनावो मे सर्वहारा के उम्मीदवारो को करारी हार खानी पडी। किसानो ने जो मतदाताओ के बहुलाश थे बूर्जुआजी के पिट्ठुओ को मत
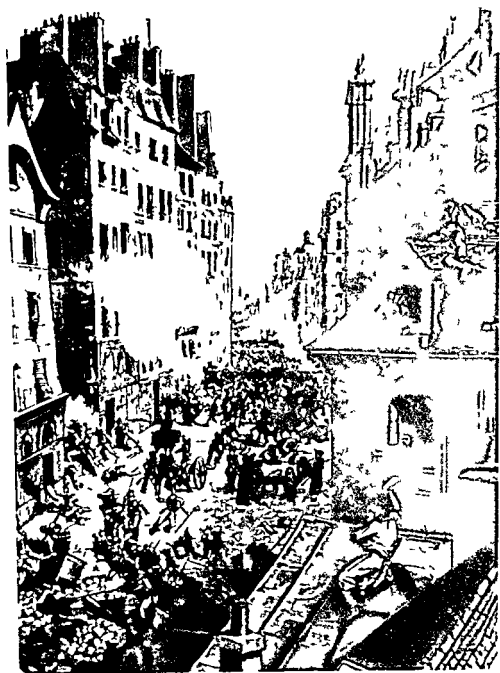
जून विद्रोह के समय पेरिस के उपनगर मे सडको पर लडाई

वर्ग शत्रु पर भीषण आक्रमण किया और इसमें बूर्जुआ राजनीतिज्ञों द्वारा गुमराह किये गये किसानों और निम्न बूर्जुआजी ने उसकी सहायता की। श्रमिकों ने इन स्वाभाविक सहायकों ने, जिन्हें इस लड़ाई में उनका साथ देना चाहिए थी, उन्हीं पर भयंकरता के साथ प्रहार किया।

जनरल कवेन्याक को, जिसने फ्रांसीसी विजेताओं के विरुद्ध संघर्षरत अल्जीरिया के निवासियों का निर्मम दमन करके बूर्जुआजी का विश्वास प्राप्त कर लिया था, असाधारण अधिकार प्रदान कर दिये गये। उपनिवेशों की जनता का यह दमनकर्ता श्रमिक वर्ग के प्रति भी उतना ही निष्ठुर सिद्ध हुआ। उसने जिस असीम निर्दयता से श्रमिकों के विद्रोह का दमन किया, उसने उस समय के सभी प्रगतिशील व्यक्तियों में सख्त नाराजी पैदा कर दी थी। अलेक्सांदर हर्ज़ेन ने लिखा था, "इन भयानक दिनों में हत्या का ही राज था। जिस आदमी के हाथ सर्वहारा के खून से सने नहीं होते थे, वह बूर्जुआ मड़ूकों की निगाहों में संदेह का पात्र होता था।"

जनरल कवेन्याक के जल्लादों द्वारा तोपों की गोलाबारी से आखिरी बैरिकेडों के ढहा दिये जाने के बाद पेरिस की सड़कों पर पांच सौ मजदूरों की लाशें पड़ी हुई थीं। लेकिन बूर्जुआजी के गुस्से के सैलाब को तो अपनी असली विनाशलीला विद्रोह के कुचले जाने के बाद ही दिखानी थी – धनवानों की सत्ता फिर से स्थापित हो जाने के बाद ग्यारह हजार मजदूरों को, यानी लड़ाई में जितने लोग मारे गये थे, उससे बाईस गुना लोगों को गोलियों से उड़ा दिया गया।

लुई बोनापार्त का राष्ट्रपति बनना

मजदूर वर्ग लोकतंत्र और सामाजिक प्रगति का सब से निष्ठावान रक्षक था और १८४८ के जून विद्रोह में उसकी पराजय ने प्रतिक्रिया की नयी लहर का पथ प्रशस्त कर दिया।

यह बात जल्दी ही, दिसम्बर १८४८ में हुए गणराज्य के राष्ट्रपति के चुनाव में प्रकट हो गयी। राष्ट्रपति पद के बहुत से अभ्यर्थियों में राजकुमार लुई नेपोलियन बोनापार्त भी था। सम्राट नेपोलियन प्रथम का यह भतीजा बहुत ही दुस्साहसी था और अपने को जिस भी पर्यावरण में पाता था, उसी उसी में किस्मत आजमाने की कोशिश करने लगता था। इटली के गुप्त क्रान्तिकारी संगठनों में शामिल होकर उसने राजनीतिक सत्ता परिवर्तन के बेवकूफीभरे प्रयासों में भाग लिया था और परिणामस्वरूप उसे जेल में रहना पड़ा था। लंदन में गुंडा-लफंगों के बीच रहकर वह आवारागर्द जिंदगी का भी भरपूर मजा ले चुका था। क्रांति के बाद जब वह महत्त्वाकांक्षाभरी योजनाएं और धन

की हविस लिये फ्रास वापस आया ता उमन अपन वोनापार्त नाम को ही दाव पर लगान की ठान ली थी। देश म काई भी इस राजनीतिक स्वार्थजीवी के बारे म कुछ भी नही जानता था और न गभीरता से उमके बारे म कुछ साचता ही था। लेकिन उसके सभी समकालीन यह देखकर चक्ति हा गय कि सवस अधिक मत इस राजनीतिक दृष्टि स नगण्य व्यक्ति ने महान चाचा क तुच्छ भतीज" न ही प्राप्त किय।

लुई वानापार्त का बूर्जुआ फ्रास का शासक चुन लिया गया। उसने या सैनिक विजयो और दृढ शाही शासन से जुडे उसके यशस्वी वोनापार्त नाम ने बडे बूर्जुआ वर्ग सपन्न कृपका और घोर अधराष्टवादी प्रचार से अभिभूत शहरी निम्न बूर्जुआजी का समर्थन प्राप्त कर लिया था।

२ दिसम्बर, १८५१ का सत्ता परिवर्तन

लुई वानापार्त का दूसरे गणराज्य के राष्ट्रपति पद पर चुना जाना स्वय ही गणराज्य क पतन का सूचक था। लुई बोनापार्त न राष्ट्राध्यक्ष के नात अपन का प्राप्त प्रत्येक अवसर का गणराज्य को समाप्त करन के लिए पूरा-पूरा उपयोग किया। २ दिसम्बर, १८५१ को उसने सेना की सहायता से तख्तापलट करके निरकुश सत्ता हस्तगत कर ली। पेरिस म और प्राती म गणतत्रवादिया के छोट छोट समूहो न प्रतिरोध करने की कोशिश की लेकिन इन प्रयासो को शीघ्र ही कुचल दिया गया। लोकतत्र का मुख्य रक्षक सर्वहारा जून हत्याकाड के बाद हथियार उठान की स्थिति म नही था और इस प्रकार गणराज्य की रक्षा करनवाला काई भी नही था। साल ही भर वाद, दिसम्बर १८५२ म गणराज्य को औपचारिक रूप म भी समाप्त कर दिया गया। फ्रास मे एक बार फिर राजतत्रीय शासन की स्थापना हो गयी और लुई वोनापार्त ने अपने को द्वितीय साम्राज्य का सम्राट नेपोलियन तृतीय घोपित कर दिया।

इस प्रकार दूसरे गणराज्य का जिसका फरवरी १८४८ म इतने उत्साह के साथ स्वागत किया गया था और जिमे लगभग निर्विरोध समर्थन प्राप्त था मात्र चार ही साल के भीतर अवसान हो गया और उसका स्थान प्रतिक्रियावादी रणाकाक्षी वोनापार्ती साम्राज्य न ले लिया।

१७८९ की पहली फ्रासीसी क्राति क विपरीत जो लगातार अधिक बल प्राप्त करती चली गयी थी १८४८ की क्राति का पराभव बिलकुल आरभ से ही सुनिश्चित था। इसका कारण यह था कि फ्रासीमी बूर्जुआ वर्ग जिस मज़दूर वर्ग से नफरत हो गयी थी और उसस डर था इस समय तक एक प्रतिक्रातिकारी शक्ति वन चुका था। जून विद्रोह म अपनी शक्ति और

दृढता का प्रदर्शन कर लेने के बावजूद सर्वहारा वर्ग के पास अब भी मेहनतकशो के बहुलाश को एक्यबद्ध करने और उसे अपने नेतृत्व में आगे ले जाने के लिए वाछित अनुभव का अभाव था।

जर्मनी मे क्राति

जर्मनी में भी क्राति का आरभ १८४८ के वसत में ही हो गया था। किन्तु फ्रास के विपरीत जहा अब तीसरी क्राति हो रही थी अपने इतिहास में जर्मनी का क्राति से यह पहला साक्षात्कार था और इसलिए उसे उन बहुत सी समस्याओ का पहली बार ही सामना करना पड रहा था जिन्हे फ्रास में अठारहवी शताब्दी के अत में ही हल कर लिया गया था।

जर्मन क्राति का सबसे महत्वपूर्ण और तात्कालिक कार्यभार था देश का एकीकरण और एक जर्मन राष्ट्रीय राज्य की स्थापना। जहा इगलैड और फ्रास बहुत पहले ही राष्ट्रीय राज्य बन गये थे वहा जर्मनी अब भी एक अमूर्त धारणा से अधिक कुछ न था। कुल मिलाकर बडे-छोटे अडतीस जर्मन राज्य थे जिनके अपने अपने अलग-अलग राजा थे और जो आपस में झगडे रहते थे। सबसे शक्तिशाली राज्य प्रशा बवारिया सैक्सनी वूर्टेमबर्ग और हैनोवर थे। छोटे बडे हर राज्य मे राजा और अभिजात अपने मध्ययुगीन विशेषाधिकारो से बेतरह चिपके हुए थे। सबमे सामती रिवाजो, अनम्य रूढिया और लौह अनुशासन का राज था। प्रशासनिक तथा आर्थिक अनैक्य ने जर्मनी के आर्थिक विकास मे गभीर बाधाए खडी कर रखी थी। यद्यपि जर्मनी में भी मशीनो का प्रचलन हो चुका था और पहले रेलमार्ग बनाये जा चुके थे फिर भी आर्थिक विकास मे वह इगलैड और फ्रास से बहुत पिछडा हुआ था। सयुक्त केंद्रीय सत्ता का अभाव सामतवाद के अवशेषो का सबसे प्रत्यक्ष सूचक था। सामती शासन के विरुद्ध अभियान विशेषकर देहातो के लाखो किसानो की प्रगति में बाधक सामती प्रथाओ का मूलोच्छेदन और उन्मूलन जर्मन क्राति का दूसरा महत्वपूर्ण कार्यभार था और वह पहले कार्यभार से अविछिन्न रूप में जुडा हुआ था।

उन्नीसवी शती के चौथे और पाचवे दशको के साहित्य और विशेषकर महान जर्मन कवि हाइने (१७९७ १८५६) तथा 'युगज दायचलद' (तरुण जर्मनी) के नाम से विख्यात प्रगतिशील कवियो, उपन्यासकारो और नाटककारो के एक समूह की कृतियो ने छोटे छोटे रजवाडो के दभी और प्रतिक्रियावादी राजतत्रो की वीभत्स तथा घिनौनी प्रवृत्तियो और सकीर्णमना प्रशाई दर्प का साहसपूर्वक परदाफाश किया और खिल्ली उडायी। उनकी साहसिक राजनीतिक कविताओ ने अपने देशवासियो की सामाजिक चेतना को जगाने में महत्वपूर्ण योगदान किया।

क्रातिकारी विप्लव सबसे पहले पश्चिमी राज्यो म फूट। बादेन वूर्टेमवर्ग ववारिया और हमी दर्मश्ताद्त म १८४८ के मार्च के आरभ म राजनीतिक सुधारो की माग करने के लिए सडको पर सभाओ और जलूसो का सिलसिला शुरू हो गया। मार्च के इन दिनो के मुख्य नारे जर्मन एकता और आजादी" थे। बादेन म लोकतत्रवादियो के एक छोटे से दल ने गणराज्य की स्थापना की माग भी पेश की लेकिन इस माग को ज्यादा समर्थन नही प्राप्त हो सका।

क्रातिकारी सरगरमी का यह ज्वार इतना शक्तिशाली था कि पश्चिमी राज्यो के शासको ने समझ लिया कि तुरत कुछ राजनीतिक रिआयत देने के अलावा और कोई चारा नही है। वूर्टेमवर्ग के बादशाह विल्हेल्म प्रथम ने जल्दी जल्दी प्रेस की स्वतत्रता की घोषणा कर दी अपने पुराने मत्रियो को बरखास्त कर दिया और उनके स्थान पर स्थानीय बूर्जुआ उदारवादियो के नेताओ को नियुक्त कर दिया। ववारिया म जहा जन प्रदर्शन विशेषकर बड पैमाने पर हुए बादशाह ल्यूदविग ने अपने बेटे के लिए गद्दी छोड देना ही श्रेयस्कर समझा। बादेन म राजधानी कार्ल्सरूहे म विदेश मत्रालय का भवन जला दिये जाने के बाद ड्यूक लियोपोल्ड ने तुरत सबसे घृणित प्रतिक्रियावादी मत्रियो को बरखास्त करके उनकी जगह स्थानीय उदारवादियो को नियुक्त कर दिया।

जल्दी ही प्रशा का राजनीतिक वातावरण भी तनावपूर्ण हो गया। यहा बर्लिन के मजदूर सबसे सक्रिय राजनीतिक शक्ति थे। क्राति शुरू होने के पहले से ही उनके जुझारूपन ने जर्मन बूर्जुआजी म आतक पैदा कर दिया था। दहशत म आकर जर्मन पूजीपति इस निष्कर्ष पर पहुच गये थे कि देश म एक ऐसा तूफान आनेवाला है कि जिसके सामने फ्रासीसी आधी हवा के हल्के झोके जैसी प्रतीत होगी। नि सदेह यह अतिरजना थी लेकिन यह घबराहट जर्मन बूर्जुआजी की दोमुखी अतर्विरोधी स्थिति को प्रकट करती थी। जर्मन बर्गर (निम्न बूर्जुआ) जो राजनीतिक अधिकारो से वचित थे और प्रशाई युकरो (जुकर) द्वारा तिरस्कार की नजरो से देखे जाते थे स्वाभाविक रूप म देश मे मुख्य राजनीतिक शक्ति बन जाने के आकाक्षी थे। लेकिन चाहे वे राजतत्र और अभिजात वर्ग से घृणा करते और डरते थे मजदूरो से वे और भी अधिक नफरत करते और डर खाते थ। क्रातिकारी उफान के इन दिनो मे बर्गरो के ढुलमुलपन, पाखड और कमजोरी की जड इसी म थी।

प्रशियाई सम्राट फ्रेडरिक विल्हेल्म चतुर्थ और विशेषकर युवराज विल्हेल्म की बूर्जुआजी को किसी भी तरह की कोई रिआयत देने की इच्छा नही थी। वे अपनी वफादार सेनाओ के जिन्हे धीरे धीरे बर्लिन म बडी सख्या मे एकत्र कर लिया गया था समर्थन पर और रूस के जार निकोलाइ

प्रथम की सहायता पर निर्भर कर रहे थे जिसमें उन्होंने मार्च के आरंभ में ही जर्मनी में सेनाएं भेजने का अनुरोध कर दिया था। इस बीच फ्रेडरिक विल्हेल्म नरम गरम के अस्पष्ट वादे करता हुआ ज्यादा से ज्यादा मुहलत प्राप्त करने की कोशिश कर रहा था।

बर्लिन की १८ १९ मार्च की बगावत

लेकिन आखिर अपनी प्रजा की राजनीतिक मांगों का विरोध करते रहने में सन्निहित खतरे को महसूस करके १७ मार्च की रात को फ्रेडरिक विल्हेल्म ने घोषणा कर दी कि वह प्रजा को संविधान प्रदान करेगा। उसने कई अन्य उदार सुधारों का भी वादा किया। १८ मार्च की सुबह मजदूरों, कारीगरों और वर्गों की बडी-बडी भीड अपनी पहली विजय की खुशियां मनाने के लिए सडको पर निकल आयी। लेकिन शाही महल की दीवारों के पास इस शांतिपूर्ण प्रदर्शन पर सरकारी फौजों ने गोलियों की वर्षा की और जरा ही देर में सडकें मृतों और आहतों से भर गयीं।

इस निष्ठुर प्रतिहिंसा ने भयंकर नाराजी पैदा कर दी। देखते ही देखते जगह जगह बैरीकेड खडे हो गये, जिन पर अधिकांशत बर्लिन के मजदूर जम गये थे। जल्दी जल्दी बुलायी गयी कुमुकों के बावजूद सडकों पर हुई भीषण लडाई में सरकारी सेनाओं को पराजित होना पडा। किसी उदारवादी राजनीतिज्ञ ने १८ मार्च की शाम को बादशाह से कहा था कि उसके सिर पर से ताज गिरनेवाला है। प्रशियाई बादशाह इस समय अत्यधिक असमंजस में था और उसने महसूस किया कि वह अब कोरे पाशविक बल पर ही और निर्भर नहीं कर सकता। १९ मार्च की सुबह उसने मेरे प्यारे बर्लिन वासियों के नाम अपील निकाली। उसमें उसने सेनाओं को राजधानी से तुरंत हटा लेने का वादा किया और उसी दिन इस आशय के आदेश भी जारी कर दिये। अगले दिन जब सडकों पर हुई लडाइयों में मारे गये लोगों की सार्वजनिक अंत्येष्टि क्रिया हुई तो बादशाह को अपनी ही सेना के शिकारों को अंतिम श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए स्वयं आना पडा।

बूर्जुआजी का विश्वासघात

प्रशियाई राजतंत्र के साथ १८ १९ मार्च की अपनी पहली ही मुठभेड में जनता ने विजय प्राप्त कर ली थी किंतु इस विजय को जनता की पहली और अंतिम विजय सिद्ध होना था।

१८-१९ मार्च को बर्लिन के श्रमिकों के शौर्यपूर्ण संग्राम से दहशत में

फ्रेडरिक एंगेल्स, १८७२

जाकर जमन बूर्जुआ वेहद चौकन्न हो गये थ। बादशाह द्वारा हाल ही मे नियुक्त किये गये बैकपति कपहाउज़न तथा उद्योगपति हासमान और अन्य मत्रियो को सबसे पहले और सबसे बढकर बादशाह का विश्वास प्राप्त करन की ही चिता थी। उन्होन इसक लिए बादशाह और अभिजात वर्ग के साथ समझौता करन की पूरी-पूरी कोशिश की, ताकि श्रमिको व क्रातिकारी जोश को काबू म रखने के लिए मिलजुलकर प्रयास किया जा सके। लगभग सपूर्ण जर्मन बूर्जुआजी न ऐसा ही किया, जो जनता से डरता था और जिसने उसके साथ विश्वासघात किया। भूमिहीन और गरीब किसानो की आशाये भी भग हो गयी जिन्होने यह आशा की थी कि क्राति उन्हे निष्ठुर सामती शोषण से मुक्ति दिला देगी और मुफ्त जमीन प्रदान करा देगी। मई, १८४८ म बर्लिन म प्रशा की राष्ट्रीय सभा ने किसानो द्वारा पेश की गयी इन उचित मागो को अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार बूर्जुआजी ने सिर्फ मजदूरो ही नही बल्कि किसानो क साथ भी विश्वासघात किया। शीघ्र ही बूर्जुआ नताओ न बादशाह स यह अनुरोध भी किया कि सेनाओ को राजधानी फिर ल आया जाये और बादशाह न इस अनुरोध का सहर्ष स्वीकार कर लिया।

१८४८ की क्राति के दौरान कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एगेल्स की सरगरमिया

जमन सर्वहारा म अभी राजतत्र अभिजात वर्ग और बूर्जुआ वर्ग की सम्मिलित शक्तियो का सफल प्रतिरोध कर सकने के लिए वाछित अनुभव शक्ति और सगठन का अभाव था।

वैज्ञानिक कम्युनिजम के महान प्रणता कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एगेल्स जर्मनी म क्राति फूटत ही तुरत अपनी जन्मभूमि वापस पहुच गय। सर्वहारा के इन दोना अलमबरदारा म से कोई भी ऐसा बैठकबाज क्रातिकारी नही था कि जो राजनीतिक घटनाचक्र की तूफानी बौछारो स शातिमय अलगाव म शरण ल ल। इसके विपरीत, वे दोनो सदा क्रातिकारी हलचल की सबसे अगली कतारो म ही रहत थे। जर्मनी म उन्हाने कोलोन को अपना सदर मुकाम बनाया, जो एक महत्वपूर्ण औद्योगिक केद्र था।

उनक सामन इस समय यह समस्या थी कि व्यापकतम लोगो तक अपनी आवाज कैसे पहुचायी जाये और प्रगतिशील क्रातिकारी शक्तियो का क्योकर सगठित किया जाये। मार्क्स न कोलोन म नोय राइनिशे त्साइतुग नामक समाचारपत्र का प्रकाशन शुरू किया जो क्रातिकारी लोकतत्र का बहुत ही प्रभावी जुझारू मुखपत्र सिद्ध हुआ। मार्क्स और एगेल्स न जर्मन जनता के लिए आदोलन का सुस्पष्ट कार्यक्रम तैयार किया जिसम सभी

सामंती जर्मन सरकारों का तख्ता पलटने, समस्त जर्मन प्रदेशों में सामंती समाज का उन्मूलन करने और संयुक्त जनतंत्रीय जर्मन गणराज्य स्थापित करने का आह्वान किया गया था। यह कार्यक्रम संघर्ष की आला मंजिल-समाजवाद के लिए संघर्ष-की महत्वपूर्ण पूर्वापेक्षा था। मार्क्स तथा एंगेल्स द्वारा साथ मिलकर 'राइनिशे त्साइटुंग' के पृष्ठों में निरूपित इस साहसी, जुझारू और दूरदर्शितापूर्ण कार्यक्रम के अमल में समर्थकों का आरोपित किया। लेकिन जर्मन मजदूर आन्दोलन की उस विशिष्ट अवस्था में यह अखबार देश की समस्त प्रगतिशील शक्तियों को एकजुट करने में असफल रहा। इसके अलावा यह अखबार साल भर से भी कम ही चल पाया था। देश में प्रतिक्रांतिकारी शक्तियों का पलड़ा भारी हो चुका था और मई, १८४९ में 'नाये राइनिशे त्साइटुंग' का अंतिम अंक प्रकाश में आया। एंगेल्स ने बाद में लिखा था "हमें अपना किला छोड़ना पड़ा लेकिन हम पीछे हटे तो अपने हथियारों और सामान के साथ, बाजे गाजे के साथ और लहराते झंडे के साथ-लाल रंग में छपे अंतिम लाल अंक के झंडे के साथ हटे।'

प्रतिक्रांति का प्रहार

मई १८४८ में ही जर्मन एकीकरण के प्रश्न पर विचार विमर्श करने के लिए माइन-तट फ्रैंकफर्ट में अखिल जर्मन संविधान सभा का समाहूत किया जा चुका था। कई लोकतंत्रवादियों को इस सभा से बहुत अपेक्षाएं थीं क्योंकि उसके सदस्य सार्विक मताधिकार के आधार पर चुने गये थे और वह जर्मन जनता के हितों का आधिकारिक मंच बन सकती थी। फ्रैंकफर्ट संसद के अधिकांश सदस्य बूर्जुआ उदारवादी प्रोफेसर और वकील थे। उन्होंने वक्तृता में एक दूसरे से टक्कर लेते हुए अमूर्त विषयों पर लंबे लंबे धुआंधार भाषण दिये लेकिन राजनीतिक कार्य और व्यावहारिक समस्याओं के हल में अपने को बिलकुल अयोग्य सिद्ध किया। पेरिस के सर्वहारा के जून विद्रोह के बाद सारे जर्मन बूर्जुआजी की ही भांति फ्रैंकफर्ट संसद के सदस्य भी श्रमिक वर्ग से डर और नफरत की लहर में बह गये और एकदम दक्षिणपंथी हो गये थे। देश भर में चढ़ते प्रतिक्रांति के ज्वार की तरफ से अपनी आंखें को मींचे हुए वे लंबे बेमतलब भाषण झाड़ने में और अखिल जर्मन संविधान के मूला धारों के निरूपण में ही लगे रहे।

इसी बीच प्रशा में प्रतिक्रांतिकारी शक्तियों ने युंकरों के नेतृत्व में नया प्रत्याक्रमण शुरू कर दिया था। बूर्जुआ राजनीतिज्ञों की असली काम कर पाने की पूर्ण अक्षमता का कायल होकर प्रशा के बादशाह ने ६ नवंबर, १८४८ को एक आज्ञप्ति जारी करके प्रशाई संविधान सभा के बर्लिन से हावेल-तट

ब्रेडनबर्ग नामक छोटे से प्रांतीय कसबे में स्थानांतरित किये जाने सभी मन्त्रियो के बरखास्त किये जाने और उनके स्थान पर अपने समर्थको को नियुक्त करने के आदेश दे दिये। यह संविधान सभा को भंग किये जाने के बराबर था और दिसंबर में इसकी आधिकारिक रूप से पुष्टि भी कर दी गयी।

फ्रैंकफर्टी गपाउम्यान ' के भाषणबाज़ जो यह नही देख सके कि क्या हुआ है, अंतहीन भाषण झाड़ने में ही लगे रहे। अंत में वे जिस निर्णय पर पहुंचे वह था जर्मन शासको में सबसे ज्यादा प्रतिक्रियावादी शासक होहेनज़ोलर्न राजवंश के फ्रेडरिक विल्हेल्म को जर्मन सम्राट का मुकुट भेंट करना। लेकिन फ्रेडरिक विल्हेल्म ने कूड़े से निकाले ' इस ताज को स्वीकार करने की अनुकंपा नही की। इतना ही नही प्रशियाई बादशाह ने तो फ्रैंकफर्ट संसद द्वारा तैयार किये संविधान को स्वीकार करने से भी इन्कार कर दिया और दूसरे जर्मन शासको ने तुरंत उसका अनुकरण किया। इसके विरोध में ड्रेजडेन तथा पश्चिमी राज्यो में क्रांतिकारी लोकतन्त्रवादियो ने मई, १८४९ मे जन विप्लव संगठित किया। एंगेल्स ने भी इस सशस्त्र विद्रोह में जनसाधारण के साथ कंधे से कंधा भिड़ाकर भाग लिया। लेकिन विप्लवियो के वीरतापूर्ण प्रतिरोध के बावजूद यह आंदोलन कुल मिलाकर बहुत ही कमज़ोर और असंगठित था और इसलिए शत्रु के भारी बाहुल्य के सामने उसकी पराजय अनिवार्य थी। पेलेटीन (फ्फाल्त्स) तथा बादेन में प्रशियाई सेना के हस्तक्षेप ने पराजय को और भी द्रुत कर दिया और साथ ही यह भी प्रत्यक्ष कर दिया कि फ्रैंकफर्ट संसद की नियति का निर्धारण हो चुका है। उसमे निरर्थक विवादो और विरोधपत्र जिनकी तरफ कोई नाम को भी ध्यान नही देता था तैयार करने का सिलसिला जून १८४९ तक चलता रहा, जब उसे भंग कर दिया गया। यह घटना जर्मनी में प्रतिक्रांति की पूर्ण विजय की द्योतक थी।

आस्ट्रियाई साम्राज्य मे क्रांति तथा प्रतिक्रांति

बहुराष्ट्रीय आस्ट्रियाई साम्राज्य में क्रांति को फ्रांस और जर्मनी से भिन्न समस्याओ का हल करना था। इस साम्राज्य मे क्रांतिकारियो के सामने सिर्फ सामंती निरंकुशतावादी व्यवस्था को उखाड़ फेंकने का ही नही बल्कि विभिन्न अधीनीकृत जातियो को राष्ट्रीय उत्पीडन से मुक्त करने का भी कार्यभार था। हंगेरियाई चेक स्लोवाक रूमानियाई उक्रइनी पोल क्राएशियाई और सर्ब – ये सभी हाप्सबर्गो के जूए में थे। ये सभी जन राष्ट्रीय स्वाधीनता और स्वतन्त्रता के आकांक्षी थे। यही कारण था कि जैसे ही १३ मार्च १८४८ के दिन वियना में जन विद्रोह फूटा और घृणित तानाशाह मेटर्नीख को

छोडकर भागा वैसे ही साम्राज्य के अधीनस्थ जनगण म क्रातिकारी सरगर मियो का प्रचड तूफान आ गया। १८ माच को हगरी म क्राति फूट पड़ी। हगरियाई क्रातिकारी लोकतत्रवादियो की कतारा म प्रख्यात कवि शान्दार पेलफी (१८२३-१८४६) और मिहाली ताचीच (१७६६-१८८८) जैसे अत्यत प्रतिभाशाली नेता भी थे। लगभग एक ही साथ प्राग तथा अन्य चक नगरो म पारकार्पेथिया के उत्तइना मे, क्रोएशिया तथा अन्य दक्षिणी स्लाव राज्यो म क्रातिकारी विप्लव फूट पडे।

आस्ट्रियाई साम्राज्य मे क्राति का प्रवाह किसी भी प्रकार एकरूप नही था बल्कि यह कहना सही होगा कि इस क्रातिकारी प्रवाह म कई अलग-अलग – आस्ट्रियाई चेक हगेरियाई, आदि आदि – क्रातिया सम्मिलित थी। हाप्सबग शासन के विरुद्ध इस विद्रोह का दुर्भाग्य उसम एकता का अभाव था। सिर्फ इतना ही नही कि अलग-अलग जातिया सामान्य शत्रु क विरुद्ध सघर्ष म एकजुट होकर नही लड सकी, बल्कि उन्हाने एक दूसर की सफलता के मार्ग मे अवरोध तक पैदा किये। बूर्जुआ वर्ग और अभिजात वर्ग के उदार वादी अशको ने यहा भी एक बार फिर कायरता और अनिश्चय का प्रदर्शन किया मजदूर और किसान जनसाधारण की सहायता हासिल करन के स्थान पर उन्होन उनकी न्यायोचित मागो की उपेक्षा की और हाप्सबर्गो तथा आस्ट्रियाई अभिजाता के साथ समझौते पर पहुचना चाहा।

हगेरियाई क्राति और उसकी पराजय

१२ से १७ जून, १८४८ के दौरान प्राग की जनता का शौर्यमय विद्रोह फील्ड मार्शल प्रिस विनदिशग्रात्स की सेना द्वारा कुचल दिया गया। अक्तूबर क अत और नवबर क आरभ मे इस घृणित सेनानायक ने वियेना के लोकतत्र वाली विद्रोह का भी अभूतपूर्व निर्दयता के साथ कुचल डाला। हगरी सबसे देर तक प्रतिरोध करता रहा। १४ अप्रैल १८४६ को हगेरियाई राष्ट्रीय सभा ने हाप्सबर्ग राजवश को सिहासनच्युत करके हगरी की स्वतत्रता की उदघोषणा कर दी। स्वतत्र हगरी न प्रतिभाशाली देशभक्त लायोश कोशुत के नेतृत्व म अपन भूतपूर्व उत्पीडको के विरुद्ध क्रातिकारी युद्ध शुरू कर दिया। आस्ट्रियाई सम्राट फ्राज जोजफ ने इस डर से कि वह हगरियाई क्राति को अपन ही बूते पर न दबा पायेगा, रूस के जार निकोलाई प्रथम से सहायता मागी। जारशाही सेनाओ के हस्तक्षेप ने हगरियाई क्राति की शीघ्र पराजय को सभव बना दिया। अलेक्सादर हर्जेन और निकोलाई चेर्निशेव्स्की जैसे रूसी क्रातिकारी लोकतत्रवादियो न जार के कार्य के विरुद्ध तीव्र रोष प्रकट किया किंतु व स्थिति को बदलन म लाचार थे। अगस्त

१८४९ में हंगरियाई क्रांति को अंतिम रूप में पराजित कर दिया गया।

इटली के क्रांतिकारी विद्रोहों और बेल्जियम, स्पेन तथा स्विट्जरलैंड जैसे अन्य यूरोपीय देशों के आंदोलनों का इससे पहले ही कुचला जा चुका था।

इस तरह सारे ही यूरोप में प्रतिक्रांति को पूर्ण विजय प्राप्त हो गयी। लेकिन चाहे १८४८ की क्रांतियों का अंत पराजय में हुआ, फिर भी वे विस्मृति के गर्भ में नहीं समा गयीं – उन्होंने यूरोप के आगामी घटनाचक्र पर बहुत भारी प्रभाव डाला। उनका महत्व सिर्फ इसी बात में नहीं है कि उनके दौरान कई रियायतें हासिल की गयी थीं, जैसे आस्ट्रियाई साम्राज्य में भूदासत्व का उन्मूलन और राष्ट्रीय उत्पीड़न में कुछ कमी और जर्मनी में कुछ बूर्जुआ उदारवादी सुधारों का क्रियान्वयन, आदि आदि। इन क्रांतियों ने यूरोपीय सर्वहारा को राजनीतिक संघर्ष का अमूल्य अनुभव प्रदान किया। अपने लक्ष्यों की सिद्धि न कर पाने पर भी क्रांतियों ने यह दिखलाया कि सर्वहारा के एक बड़े और प्रभावशाली सामाजिक वर्ग के रूप में उदित हो जाने के बाद अब बूर्जुआ वर्ग क्रांतिकारी वर्ग नहीं रह गया है और प्रतिक्रांतिकारी शक्ति में परिणत हो गया है। इन क्रांतियों ने यह भी दिखलाया कि सामंती शोषण से मुक्ति और लोकतंत्रीय स्वतंत्रताओं को जनता सिर्फ अपने बूते पर और मजदूर वर्ग के नेतृत्व में संघर्ष करके ही प्राप्त कर सकती है और इसलिए इस लक्ष्य की सिद्धि के वास्ते मजदूर वर्ग और किसान समुदाय तथा अन्य मेहनतकश अवामों का सहबंध नितांत आवश्यक है। १८४८-१८४९ की क्रांतियों और उनके बाद आनेवाली प्रतिक्रांतिकारी प्रतिक्रिया की लहर ने यह भी दर्शाया कि राष्ट्रीय तथा जातीय वैमनस्य क्रांतिकारी आंदोलन के लिए घातक है और अलग-अलग कौमों के लोगों की एकता और एकजुटता सामान्य शत्रु के विरुद्ध संघर्ष में सफलता प्राप्त करने की एक अनिवार्य शर्त है।

दसवा अध्याय

उन्नीसवी शताब्दी का रूस (सातवे दशक तक)

पूजीवाद का विकास। भूदासत्व पर आधारित सामती अर्थव्यवस्था का विघटन

उन्नीसवी शती के आरभ मे रूस मे वे शक्तिया सामने आने लग गयी थी, जिन्हे अतत सामती सामाजिक स्वरूपो और भूदासत्व का पूर्ण विखडन करवाना था। प्रारभिक पूजीवाद के विकास के साथ यह प्रक्रिया भी कुछ समय पहले ही शुरू हो चुकी थी, लेकिन पुरानी व्यवस्था का कालातीत और देश की प्रगति मे बाधक स्वरूप अब आकर ही स्पष्ट हो पाया था। इस समय तक रूसी उद्योग स्थिर गति से विकास करने लग गया था, लगातार अधिक सख्या मे नये कल-कारखाने खुलते जा रहे थे और उन्हे चलाने के लिए उजरती मजदूरो की ज़रूरत थी। लेकिन किसान अभी जमीन के साथ ही बधे हुए थे उन्हे अपने भूस्वामियो की सपत्ति माना जाता था और यह स्थिति मजदूर वर्ग की वृद्धि को रोके हुए थी, जो जायमान उद्योग के लिए अत्यावश्यक था। व्यापार का तेज़ी से विकास हो रहा था और आतरिक मडी बढ रही थी लेकिन मेहनतकश जनसाधारण का भारी बहुलाश अब भी दासता के बधनो मे ही था और आजादी से व्यापार के काम मे नही लग सकता था जिसका यह मतलब था कि भूदासत्व आर्थिक विकास के इस क्षेत्र मे भी बाधक था। एक नया – बूर्जुआ – वर्ग जन्म ले रहा था, लेकिन उसके विकास को भी सामती समाज के सामाजिक सबध और कानून अवरुद्ध कर रहे थे। कभी कभी तो ऐसी मज़ेदार बाते भी देखने मे आती थी कि ऐसे धनवान भूदास व्यापारियो और भूदास कारखानेदारो को जिनके पास विशाल पूजी थी और जो हजारो मज़दूरो को उजरत पर रखते थे, अब भी किसी न किसी भूस्वामी के भूदास समझा जाता था जिसे उन्हे बेचने और उनकी सपत्ति को छीन लेने का अधिकार था क्योकि उनकी सारी सपत्ति भूस्वामी की सपत्ति ही मानी जाती थी। इस समय तक कृषि मे भी पूजीवादी सबधो

का उदय हो चुका था जिनके लिए आवश्यक था कि जमीन के स्वामी स्वतंत्र किसान हो। भूदासो के स्वतःस्फूर्त विद्रोह अधिकाधिक प्रायिकता से होने लगे। १८१२ के देशभक्तिपूर्ण युद्ध के बाद तो इन विद्रोहो मे विशेषकर तेजी आ गयी। नेपोलियन पर विजय के बाद किसानो ने विरोध प्रकट किया और सिपाही कहने लगे कि "हमने मातृभूमि को अत्याचारी से मुक्ति दिलायी लेकिन अब हमारे ही मालिक हम पर अत्याचार कर रहे है। सारे पश्चिमी यूरोप को अपनी जकड मे लेनेवाला रिआया और राजाओ का संघर्ष अब रूस तक भी आ गया। १८१८ १८२० मे दोन क्षेत्र मे एक व्यापक किसान विद्रोह फूट पडा। ज़ारशाही सेना मे भी गहरा असंतोष व्याप्त था।

१८१२ के युद्ध के बाद ज़ार अलेक्सादर प्रथम का अतरंग मित्र अदूरदर्शी और उजड्ड अरक्चेयेव साम्राज्य मे सबसे प्रभावशाली व्यक्ति बन बैठा था। इस क्षुद्र अत्याचारी को सारे रूस का सितमगर कहा जाता था। सेना मे कोडे लगाने की प्रथा का बोलबाला हो गया क्योकि अरक्चेयेव ने सिपाहियो की स्वतन्त्रताप्रियता को कोडे मार-मारकर निकाल देने का हुक्म दे दिया था। नोवगारोद और खारकोव के पास कई गावो मे फौजी कानून – मार्शल ला – लगा दिया गया किसानो को अपनी खेतीबारी और सैनिक सेवा के कामो को साथ साथ ही करना होता था खेतो पर सारा काम वरदी पहनकर और कठोर फौजी कवायद के रूप मे करना होता था और मामूली से मामूली चूक या अवज्ञा की सजा कोडे थी। किसानो की पत्निया भी अगर बेवक्त चूल्हा जलाती या रात को देर तक घर मे रोशनी किये रहती तो सजा पा सकती थी। किसानो को अपनी कुछ जमीनो से वंचित कर दिया गया और उपज को बेचने से वर्जित कर दिया गया। इस प्रकार के अनुशासन मे डाले गये गाव 'फौजी बस्तिया' कहलाते थे। सक्षेप मे शत्रु पर विजय के बाद जनता का जीवन बेहतर नही बदतर ही हो गया – रूस मे अब भी सामती प्रतिक्रिया का अबाध शासन था।

पहले गुप्त समाज

इस पृष्ठभूमि मे रूस मे पहले गुप्त क्रातिकारी समाज और संगठन पैदा हुए। अपने विद्रोह के महीने – दिसबर १८२५ – के नाम पर ये पहले रूसी क्रातिकारी दिसबरी कहलाये। दिसबरी अधिकाशत सभ्रात भूस्वामी परिवारो के सैनिक अफसर थे, जो नेपोलियन के विरुद्ध युद्ध मे भाग ले चुके थे जिसने उनकी राजनीतिक चेतना को जागृत कर दिया था। यद्यपि वे स्वय सभ्रात भूस्वामी परिवारो के थे पर उनकी अतरात्मा और मर्यादा उन्हे भूदासत्व का समर्थन नही करने देती थी जिसे वे अपने देश की सबसे

बडी बुराई समझते थे। उन्हे इसका अहसास था कि रूस का सबसे महत्व कार्यभार भूदासत्व का उन्मूलन करना और स्वच्छाचारी शासन का करना था। दिसबरी उत्कट देशभक्त थे और व एक नयी ही व्यवस्था सपने देखते थ। उनकी योजना अपने साथ सहानुभूति रखनेवाली सेनाओ सहायता से सशस्त्र विद्रोह सगठित करने, स्वच्छाचारी शासन का तख्ता प देने भूदासत्व का उन्मूलन करने और आबादी के सभी सस्तरो के साथ मिल एक ऐसा क्रातिकारी सविधान स्वीकार करने की थी कि जो देश मे व्यवस्था को ले आता। इस क्रातिकारी सविधान के प्रारूप निकीता मुराव्य के नेतृत्व मे उत्तरी समाज और पावेल पेस्तेल के नेतृत्व म दक्षिणी समाज तैयार किये थे।

यदि ये प्रारूपिक सविधान अमल मे लाये गय होते, तो जबरदस्त प्रगति के परिचायक होते – उन्होने अभिजात वर्ग के बोलबाले पर, भूदास और स्वेच्छाचारी शासन पर मरणातक प्रहार किया होता और रूस म ता पूजीवादी विकास को सभव बना दिया होता।

गुप्त समाजो के सदस्यो की सख्या लगातार बढती गयी, जिनम रूस सभ्रात श्रेणी के अनेक प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित सदस्य थे। ऐसे एक समाज म शामिल होने के बाद कवि कोद्राती रिलेयेव ने एक अन्य सदस्य कवि अलक्सान्द्र बेस्तूजेव के साथ जनता के लिए प्रेरणादायी क्रातिकारी गीतो की रचना की थी। रिलयेव के विचार स्पष्टत गणतत्रवादी थे।

इन क्रातिकारियो ने दिसबर, १८२५ म जारशाही शासन के विरुद्ध सर्वप्रथम क्रातिकारी विद्रोह म अपनी मातृभूमि के क्रातिकारी रूपातरण के नाम पर हाथो म हथियार उठाये थे। दिसबरियो को आगे चलकर आजादी के पहले अलमबरदार कहा गया।

नवबर १८२५ म जार अलेक्सादर प्रथम की अचानक मृत्यु हो गयी और नये जार के गद्दी पर बैठने तक वातावरण बडा सगीन रहा। जार की कोई सतान न थी अत उसके बाद उसके भाई कास्तातीन को गद्दी पर बैठना था। लेकिन वह पहले ही छिपे तौर पर अपना सिहासनाधिकार त्याग चुका था और इसका मतलब था कि अगला जार उसका भाई निष्ठुर तानाशाह निकोलाई होता जो सेना म अत्यत अप्रिय था। लेकिन कास्तातीन का निर्णय समय रहते जाहिर नहीं किया गया था इसलिए सेना और आबादी ने उसके प्रति निष्ठा की शपथ ले ली थी जिसके लगभग फौरन बाद उनसे एक और जार – निकोलाई के प्रति – निष्ठा शपथ लेने के लिए कहा गया। जनता और सेना म कुछ समय से असतोष व्याप्त था ही, लेकिन दो भिन्न निष्ठा शपथ लेने के बाद परिस्थिति और भी ज्यादा तनावपूर्ण हो गयी।

गुप्त समाज के सदस्यो ने निकोलाई प्रथम के प्रति निष्ठा शपथ लेने

लिए निर्धारित दिन–१४ दिसबर को अपनी रजिमटो म विद्रोह सगठित न और विद्रोही टुकडियो को सीनट चौक ले जाने का निश्चय किया के सीनट को नये ज़ार के प्रति निष्ठा शपथ लने स रोका जा सके। उन्होने ी जनता के नाम एक क्रातिकारी घोषणापत्र तैयार किया जिसम भूदासत्व उन्मूलन और मौजूदा सरकार के विघटन का एलान किया गया था। षणापत्र म सविधान सभा समाहूत किये जाने का भी आह्वान था ताकि निश्चय किया जा सके कि रूस गणराज्य बने या सीमित सावैधानिक जतत्र, और फिर नये सविधान का अगीकरण और नयी सरकार का चुनाव या जा सके। उसम रूसी जनता को यह भी बताया गया था कि देश म ाषण तथा प्रेस की और धार्मिक स्वतत्रताए लागू की जायेगी और सैनिक वा की अवधि कम कर दी जायगी। सट पीटर्सबर्ग म विद्रोह के साथ ही क्षिण म भी एक और सशस्त्र विद्रोह करने की योजना थी किंतु वह कभी मली सूरत नही ले सका।

कोई तीन हज़ार विप्लवी सैनिक दिसबरी अफ्सरो के नेतत्व म सीनट ौक म आ गये। चौक मे भारी भीड भी जमा हो गयी जिसे इस क्रातिकारी वरोध प्रदर्शन से हमदर्दी थी। लेकिन दिसबरिया को जनसाधारण का समर्थन ते हिचक हो रही थी। व अपने घोषणापत्र का उदघोषित नही कर पाये ौर विद्रोह की प्रगति योजनानुसार नही हो पायी। पिछली शाम को दिसब रयो ने अपने म से एक अधिनायक–समाज का पुराना सदस्य प्रिस त्रुबे स्कोय–चुना था। लेकिन वह चौक मे नही पहुचा और इस तरह उसने अपने ाथियो को कठिनाई की घडी मे अकेले छोड दिया और अपने सामान्य हेतु े साथ गद्दारी की। बहुत देर तक बेकार इतजार करने के बाद दिसबरिया े प्रिस ओबोलेस्की को नेता चुन लिया।

लेकिन अब तक बहुत देर हो चुकी थी। निकोलाई प्रथम ने पहल अपने हाथ म ले ली थी और शाम होते-होते नये ज़ार ने अपनी वफादार सेनाओ को भीड पर गोली चलाने का आदेश दे दिया और विद्रोह को जल्दी ही कुचल डाला गया।

दिसबरिया का विद्रोह विफल हुआ लेकिन यह रूस के इतिहास का एक निर्णायक मोड था। उसके साथ रूसी क्रातिकारी आदोलन की वास्तविक शुरुआत मानी जा सकती है। उनकी इस क्राति पताका को क्रातिकारियो की उत्तरवर्ती पीढियो ने ग्रहण किया और भूदासत्व तथा स्वेच्छाचार के विरुद्ध सघर्ष को जारी रखा।

उन्नीसवी सदी के मध्य तक रूसी सामती समाज के भीतर का पहल कभी की अपेक्षा अधिक प्रत्यक्ष हो गया था। विकासमान पू सामाजिक सबधो और कालातीत सामती समाज के बीच अतविरोध अ धिक प्रखर हो रहे थे। चौथे दशक से छोटे पैमान की विनिमाण का स्थान कल कारखान लेने लग गये थे और मशीन धीरे धीरे शा श्रम को हटाती जा रही थी। मशीनो का प्रचलन अपढ किसानो की व अधिक योग्य उजरती मजदूरो की पयाप्त आपूर्ति की अपेक्षा करता पूजीवाद क विकास क साथ एक नया वर्ग – सवहारा – पैदा हो गया। १ म सट पीटर्सबग और जारस्कोये सेलो के बीच रूस का पहला रेलमार्ग और १८५१ मे सट पीटर्सबर्ग तथा मास्को के बीच भी रल चलन ल वढत हुए नगरो की आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए कृषि उपज बढान जरूरत थी और इसम भी आदिम भूदास कृषि बाधक थी। इस काल कृषि म यत्रो का उपयोग नही के बराबर ही था, क्योकि भूस्वामिया लिए कृषि मशीनो की जगह सस्ते शारीरिक श्रम का प्रयोग करना अ लाभदायी था।

सामतवादविरोधी जन विद्रोह। क्रातिकारियो की नयी पीढी

१८३० के आरभ म सार रूस म "हैज के दगा" की लहर दौड गय अफवाह थी कि जारशाही अधिकारियो और भूस्वामिया न कूआ म ज़ डालकर महामारी का जानबूझकर प्रकोप करवाया है। दगा का वास्तवि कारण भूदासत्व म घृणा थी। कुछ बागी किसानो न जन अशाति क कार की यह स्पष्ट परिभाषा दी "गधे ही जहर और हैज़े की बात करत है हम तो अगर जरूरत है तो है इन सूअरो – जमीदारो – स निजात पा की। बाद म उक्रइना म भी बड पैमान क कृषक विद्रोह फैल, खासक छठ दशक म। जारशाही अधिकारिया न किसानो क नता उस्तीम कर्मेल्यू को कई बार पकडा पर वह हर बार उन्ह चामा दकर फरार हो जाता थ और फिर स किसानो का नतृत्व करन लगता था। अधिकारिया को इन इतर बलवो को कुचलन क लिए अक्सर फौज भजनी पडती थी और कभी कभी तो तापखान का भी प्रयोग करना पडता था। लकिन इन बलवो क फूटन म सामजस्य तथा सुस्पष्ट लक्ष्यो का अभाव था और इसलिए व इतन शक्तिशाली सिद्ध नही हुए कि भूदासत्व को समाप्त कर सक।

दिसवरी विद्राह क वाद रुसी त्रातिकारी आदालन समाप्त नही हो गया – उसन जल्दी ही नववल प्राप्त कर लिया और नय महत्वपूण लोग – जनसाधारण के कराडा उत्पीडित और कगाल किसानो क हिता को वुलद करनवान त्रातिकारी लोकतत्रवादी – मामन आ गय। इम काल क उत्कट जनहितैपिया म अलेक्मादर हर्जेन (१८१२-१८७०) निकोलाई ओगार्योव (१८१३ १८७७) और उनक मित्र विस्मारिजान व्रलीन्स्की (१८११ १८४८) क नामो का अवश्य उल्लेख किया जाना चाहिए। य सव भूदामत्व तथा स्वच्छा चारी शासन क घोर विरोधी थे और अपन आदर्शो की खातिर लडने को तैयार थ। अपन पूर्ववर्ती त्रातिकारिया क विपरीत इन्होने जनसाधारण को अपना मुख्य आधार वनान का प्रयास किया। इन विचारा क प्रसार म ओजस्वी प्रवक्ता, प्रगतिशील युवाजन क उपास्य और राज्नाचीत्सी (आमूलवादी मध्यवर्गीय त्रातिकारियो) के अग्रगामी व्रलीन्स्की न विशेपकर बहुत महत्वपूण भूमिका का निवहन किया।

हर्जेन ओगार्योव और वलीन्स्की न सिफ भूदासत्व के उन्मूलन और स्वच्छाचारी शामन के उलटे जाने क लिए ही प्रयत्नशील थे बल्कि ममाजवादी भी थ। उन्हान उस युग की कल्पना भी की कि जव मनुष्य मनुष्य का शापण नही करगा और इस प्रकार के शोपण को जन्म देनवाला समाज अतीत क गर्भ म समा चुका होगा। लकिन वे अभी तक इन लक्ष्यो की प्राप्ति क लिए अपनाय जानवाल वैज्ञानिक तरीको स अनभिज्ञ थे और इस तरह व यूटो पियाई ममाजवादी ही वन रह।

वारवार गिरफ्तारियो ओर निवासना स हर्जेन हताश नही हुआ और उत्प्रवास करक रूस स पश्चिमी यूरोप चला गया जहा उसने ज़ारशाही के विरुद्ध अपन सघष को जारी रखा। जल्दी ही उसका मित्र ओगार्योव भी उसके पास आ पहुचा। हर्जेन ने रूसी साम्राज्य क सीमाता क वाहर पहल स्वाधीन रूसी प्रस की स्थापना की, जिसन भूदामत्व और स्वच्छाचारी शासन पर साहमपूवक हमला किया, उनकी अतर्निहित वुराइयो का परदाफाश किया और रूस का पिछडेपन तथा अज्ञान की वडिया म जकडनेवाली मरणशील सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ सघर्ष करन क लिए जनता का ललकारा।

उन्नीसवीं शती प्रथमार्ध की सास्कृतिक उपलब्धिया

रूसी जनता की आतरिक शक्ति अपार थी। भूदासत्व क दुमह जूए और जारशाही तथा मालिको द्वारा किसानो क भीषण शापण क बावजूद सामाजिक अन्याय क विरुद्ध सघष की इस पृष्ठभूमि म एक विलक्षण प्रगतिशील

भूदासत्व का सकट

उन्नीसवी सदी के मध्य तक रूमी सामती समाज के भीतर का सकट पहल कभी की अपेक्षा अधिक प्रत्यक्ष हो गया था। विकासमान पूजीवादी मामाजिक सबधो और कालातीत सामती समाज के बीच अतर्विरोध अधिकाधिक प्रखर हो रहे थे। चौथे दशक से छोट पैमान की विनिर्माणशालाओ का स्थान कल कारखाने लेन लग गये थे और मशीन धीरे धीरे शारीरिक श्रम को हटाती जा रही थी। मशीना का प्रचलन अपढ किसानो की बनिस्बत अधिक योग्य उजरती मजदूरो की पर्याप्त आपूर्ति की अपेक्षा करता था। पूजीवाद के विकास के साथ एक नया वर्ग – सर्वहारा – पैदा हो गया। १८३७ म सट पीटर्सबग और जारस्काय सलो के बीच रूम का पहला रलमार्ग खुला और १८५१ म सट पीटर्सबग तथा मास्को के बीच भी रल चलन लगी। बढत हुए नगरा की आवश्यकताओ की पूति के लिए कृपि उपज बढान की जरूरत थी और इसमे भी आदिम भूदाम कृपि बाधक थी। इस काल तक कृपि मे यत्रो का उपयाग नही के बराबर ही था क्योकि भूस्वामियो के लिए कृपि मशीनो की जगह सस्ते शारीरिक श्रम का प्रयोग करना अधिक लाभदायी था।

सामतवादविरोधी जन विद्रोह। क्रातिकारियो की नयी पीढी

१८३० के आरभ मे मारे रूस मे हैजे के दगो की लहर दौड गयी। अफवाह थी कि जारशाही अधिकारियो और भूस्वामियो न कूआ म जहर डालकर महामारी का जानबूझकर प्रकोप करवाया है। दगो का वास्तविक कारण भूदासत्व से घृणा थी। कुछ बागी किसानो ने जन अशाति के कारण की यह स्पष्ट परिभाषा दी गधे ही जहर और हेज़ की बात करत है, हम ता अगर जरूरत है ता है इन सूअरा – जमीदारा – से निजात पान की। बाद म उक्रइना म भी बड पैमान क कृपक विद्राह फैले, खासकर छठे दशक म। जारशाही अधिकारिया न किसाना के नता उस्तीम कर्मेल्यूक का कई बार पकडा, पर वह हर बार उन्ह झासा देकर फरार हो जाता था और फिर स किसानो का नतृत्व करन लगता था। अधिकारिया का इन कृपक बलवो का कुचलन के लिए अकसर फौज भेजनी पडती थी और कभी कभी ता तोपखान का भी प्रयोग करना पडता था। लेकिन इन बलवा के फूटन म सामजस्य तथा सुस्पष्ट लक्ष्या का अभाव था और इसलिए व इतन शक्तिशाली सिद्ध नही हुए कि भूदासत्व को समाप्त कर सक।

दिसंबरी विद्रोह के बाद रूसी क्रांतिकारी आंदोलन समाप्त नहीं हो गया – उसने जल्दी ही नवबल प्राप्त कर लिया और नये महत्वपूर्ण लोग – जनसाधारण के करोड़ों उत्पीड़ित और कंगाल किसानों के हितों को बुलंद करनेवाले क्रांतिकारी लोकतंत्रवादी – सामने आ गये। इस काल के उत्कट जनहितैषियों में अलेक्सांदर हर्जेन (१८१२-१८७०), निकोलाई ओगार्योव (१८१३-१८७७) और उनके मित्र विस्सारिओन बेलीन्स्की (१८११-१८४८) के नामों का अवश्य उल्लेख किया जाना चाहिए। ये सब भूदासत्व तथा स्वेच्छाचारी शासन के घोर विरोधी थे और अपने आदर्शों की खातिर लड़ने को तैयार थे। अपने पूर्ववर्ती क्रांतिकारियों के विपरीत इन्होंने जनसाधारण को अपना मुख्य आधार बनाने का प्रयास किया। इन विचारों के प्रसार में ओजस्वी प्रवक्ता, प्रगतिशील युवाजन के उपास्य और राज्नोचीत्सी (आमूलवादी मध्यवर्गीय क्रांतिकारियों) के अग्रगामी बेलीन्स्की ने विशेषकर बहुत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया।

हर्जेन, ओगार्योव और बेलीन्स्की न सिर्फ भूदासत्व के उन्मूलन और स्वेच्छाचारी शासन के उलट जाने के लिए ही प्रयत्नशील थे, बल्कि समाजवादी भी थे। उन्होंने उस युग की कल्पना भी की कि जब मनुष्य मनुष्य का शोषण नहीं करेगा और इस प्रकार के शोषण को जन्म देनेवाला समाज अतीत के गर्भ में समा चुका होगा। लेकिन वे अभी तक इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अपनाये जानेवाले वैज्ञानिक तरीकों से अनभिज्ञ थे और इस तरह वे यूटोपियाई समाजवादी ही बने रहे।

बारबार गिरफ्तारियों और निवासनों से हर्जेन हताश नहीं हुआ और उत्प्रवास करके रूस से पश्चिमी यूरोप चला गया, जहां उसने ज़ारशाही के विरुद्ध अपने संघर्ष को जारी रखा। जल्दी ही उसका मित्र ओगार्योव भी उसके पास आ पहुंचा। हर्जेन ने रूसी साम्राज्य की सीमाओं के बाहर पहले स्वाधीन रूसी प्रेस की स्थापना की, जिसने भूदासत्व और स्वेच्छाचारी शासन पर साहसपूर्वक हमला किया, उनकी अंतर्निहित बुराइयों का पर्दाफ़ाश किया और रूस को पिछड़ेपन तथा अज्ञान की बेड़ियों में जकड़नेवाली मरणशील सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ़ संघर्ष करने के लिए जनता को ललकारा।

उन्नीसवीं शती प्रथमार्ध की सांस्कृतिक उपलब्धियां

रूसी जनता की आंतरिक शक्ति अपार थी। *भूदासत्व के दुःसह जुए और ज़ारशाही तथा मालिकों द्वारा किसानों के भीषण शोषण के बावजूद* सामाजिक अन्याय के विरुद्ध संघर्ष की इस पृष्ठभूमि में एक विलक्षण प्रगतिशील

सस्कृति न विकास किया था। इस अन्याय और उत्पीडन का सामना करते हुए कितने ही रूसी लेखको, सगीतज्ञो तथा कलाकारो न अप्रतिम कृतिया का सजन किया। इसके साथ ही साथ लोक कला परपराओ का भी मुकुलन हुआ।

पुश्किन और लर्मोतोव जैसे विश्वख्यातिप्राप्त कवियो, गोगोल और तुर्गेनेव जैसे महान कथाकारो न अपनी कृतियो म रूसी जीवन के सजीव चित्रो का अमरत्व प्रदान किया। पुश्किन के 'यव्गेनी ओनेगिन' लेर्मोतोव क 'हमारे युग का नायक' गोगोल के 'मृत आत्माए' और तुर्गेनेव के 'शिकारी के शब्दचित्र' म भूदासत्व की अनुपयुक्तता कालातीत सामाजिक व्यवस्था और सत्य तथा सामाजिक न्याय की तलाश जैसे विषयो को मनोहारी मनोवैज्ञानिक चित्रण के साथ पेश किया गया है। उस काल के साहित्य न अपन पाठको म सजीव अनुक्रिया उत्पन्न की, उनकी सामाजिक चेतना को बढाया और उन्हे सामाजिक न्याय के लिए सघर्ष करन के वास्ते उद्वेलित तथा अनुप्राणित किया।

इसी काल मे महान सगीतकार मिखाईल ग्लीका के कृतित्व म रूसी सगीत का भी मुकुलन हुआ। पावेल फेदातोव के विलक्षण चित्रो म भूदासत्व पर कटु प्रहार प्रत्यक्ष है। अपने विशाल कनवास 'लोगो के सामने ईसा' म अलेक्सादर इवानोव न अग्रभूमि म आम लोगो का अत्यत सजीव यथार्थवादी ढग से प्रस्तुत किया।

विज्ञान के क्षेत्र म भी महत्वपूर्ण प्रगति की गयी। महान गणितज्ञ निकोलाई लोबाचेव्स्की ने यूक्लिडी ज्यामिति की एक पद्धति की स्थापना की, जो गणित के इतिहास मे एक महत्वपूर्ण मार्गचिह्न है। महान रसायनज्ञ निकोलाइ ज़िनीन ऐनिलीन रजको का सश्लेषण करनेवाला प्रथम वैज्ञानिक था और उसकी इस उपलब्धि न उद्योग की एक पूरी नयी शाखा की स्थापना की। निकोलाई पिरोगोव जिसन रोगाणुरोधिता और सवेदनाहरण के विषय म महत्वपूर्ण प्रयोग किये युद्धक्षेत्रीय शल्यविज्ञान के सस्थापको म एक था।

इस काल की रूसी सस्कृति मानवतावाद और मनुष्यजाति क सभी सदस्यो क लिए प्रेम तथा आदर स ओतप्रोत है और नयी, न्यायपूर्ण व्यवस्था क नाम पर कालातीत और सामाजिक प्रगति को रोकनेवाली हर चीज के खिलाफ सघर्ष क साहसपूर्ण आह्वान से परिपूर्ण है।

१८५३-१८५६ का क्रीमियाई युद्ध

रूसी समाज क अतर्विरोध तब और भी ज्यादा सगीन हो गये कि जब एक ओर रूस तथा दूसरी ओर ब्रिटेन और फ्रास क बीच लबे समय से सुलगता युद्ध आखिर १८५३ म फूट ही पडा।

जार और उसकी सरकार न यह अनुभव करके कि उनकी स्थिति इतनी मजबूत नही रह गयी है बास्फोरस और दरा दानियल पर अपन नियत्रण को सुदृढ करन और रूसी जहाजा का काले सागर से भूमध्य सागर म अबाध आवागमन सुनिश्चित करन के लिए तुर्क साम्राज्य की कमजोरी का लाभ उठान का निश्चय किया। इससे भूस्वामियो की आय बढ जाती दक्षिणी प्रातो मे कृषि का विकास होता और भूदासत्व का अतिम ध्वस टल जाता। लकिन इगलैड और फ्रास जैस शक्तिशाली और अधिक प्रगतिशील पूजीवादी राज्य इसके लिए तैयार नही थ कि चुपचाप बैठे रह और रूस को मध्यपूर्व म अपनी जकड को मजबूत करते दखते रह। उन्ह क्रीमिया और काकेशिया जैस समृद्ध इलाके हथियान म भी कोइ परहज नही था। युद्ध के क्रम न स्थलसेना तथा जलसेना दोना ही के मामले मे रूस के पिछडेपन को साबित किया। रूसी जलसेना में बादबानी जहाज ही थ, जबकि ब्रिटिश तथा फ्रासीसी जलसेनाए कभी की धूमपोतो को अपना चुकी थी। उनके हथियार और तोपे भी रूसी सेना के हथियारो और तोपो से श्रेष्ठ थे। खराब सचार साधनो के कारण रूसी सेनाए अपने प्रदाय केद्रो से लगभग पूरी तरह स कट गयी थी – हथियारो और खाद्य सामग्री दानो का प्रदाय अत्यत अपर्याप्त था और उसम प्राय बहुत देर लग जाया करती थी।

इन सभी कठिनाइयो के बावजूद शत्रु रूसी सैनिको की वीरता और सेनानायको की प्रतिभा स चकित हो गये। रूसी बेडे न युद्ध के बिलकुल आरभ म ही एडमिरल नखीमोव की कमान म सिनोप की लड़ाई म शानदार विजय प्राप्त की। मित्र-राष्ट्रो न सत पीटर्सबर्ग के पहुच मार्गो बाल्टिक तट और कमचात्का को सर करन के असफल प्रयासो के बाद अपनी सारी शक्तिया को क्रीमियाई प्रायद्वीप पर ही सकद्रित कर दिया। मित्र सेनाओ न सेवास्तोपोल की तरफ बढना शुरू किया, लकिन उनकी बदरगाह को हल्ले म सर करने की कोशिश नाकाम रही और इसलिए अत म उन्होंने उस घेर म ले लिया जो ३४९ दिन चला। रूसी सेनाए ऐडमिरल नखीमोव कार्नीलोव तथा इस्तोमिन जैसे प्रतिभाशाली सेनानायको की कमान म थी। लगभग पूरे एक साल के घेरे के बाद जिसम रक्षको को भारी हानि उठानी पडी थी नगर का पतन हो गया। यह सिर्फ काकेशिया म ही था कि दिसबरियो के मित्र निकोलाई मुरव्योव की कमान म रूसी सेनाओ न कइ महत्त्वपूर्ण विजय प्राप्त की जिनके कारण रूसिया के लिए क्रीमिया और काकेशिया पर अपनी पकड को जमाये रखना सभव हो गया। युद्ध का अत १८५६ म परिस की सधि के साथ हुआ जिसकी शर्ते रूस के लिए बेहद दुसह थी क्योकि उस काले सागर म जगी जहाज रखन के अधिकार स वचित कर दिया गया था और उस क्षेत्र म अपनी सभी तटवर्ती किलेबदियो को भी ध्वस्त करना पडा था।

क्रांतिकारी स्थिति की उत्पत्ति।
भूदासत्व का उन्मूलन

क्रीमियाइ युद्ध ने रूस की सामंती व्यवस्था की कमजोरी और अपक्षय को जाहिर कर दिया। इस युद्ध की असफलता से जनित कठिनाइयों का सम्पूर्ण भार आम जनता को ही झेलना पड़ा था, क्योंकि उसमें भारी प्राणहानि हुई थी और उसने व्यापक निर्धनता को जन्म दिया था। कठिनाइयों और अभावों से हताशाग्रस्त जनसाधारण ने सत्ताधीशों के सभी कदमों का जवाब दुर्धर्ष प्रतिरोध से दिया। शासक वर्गों के लिए यथास्थिति को बनाये रखना असम्भव हो गया न जनसाधारण ही पुराने ढंग से और रहने को तैयार थे और न मालिक ही पुराने ढंग से शासन करते रह सकते थे। इस समय तक परिवर्तन के वस्तुगत आसारों का वह संयोग पैदा हो चुका था जिसे लेनिन ने आगे चलकर क्रांतिकारी स्थिति की संज्ञा दी थी।

मार्क्स और लेनिन ने अपनी कृतियों में इस बात पर जोर दिया है कि क्रांतियां क्रांतिकारी स्थिति के विकसित होने के पहले नहीं होती, यद्यपि प्रत्येक क्रांतिकारी स्थिति क्रांति को जन्म नहीं देती। वैसे ही १८५९-१८६१ की क्रांतिकारी स्थिति में भी क्रांति नहीं पैदा हुई। क्यों? इसका मुख्य कारण यह था कि विद्रोही किसान अपने उन क्रांतिकारी प्रयासों को व्यापक स्वरूप दे पाने में असमर्थ थे जो जार की सत्ता को पलट या कम से कम सीमित कर सकते। सरकार इसे समझ गयी और समय रहते बड़ी रिआयतें देने के लिए तैयार हो गयी। कई सुधारों की घोषणा करके वह अपनी सत्ता बरकरार रखने में सफल रही।

जन विद्रोहों और क्रांतिकारी विरोधी आंदोलनों द्वारा सरकार से ऐंठे गये इन सुधारों में सबसे महत्वपूर्ण था १८६१ का कृषक सुधार जिसके द्वारा भूदासत्व का उन्मूलन कर दिया गया। देश की आर्थिक प्रगति के संपूर्ण क्रम और सामंती सामाजिक प्रणाली के संकट ने इस महत्वपूर्ण सुधार का पथ बहुत पहले ही प्रशस्त कर दिया था।

१९ फरवरी १८६१ को जार अलेक्सांदर द्वितीय (१८५५-१८८१) ने भूदासों को मुक्ति प्रदान करने के नये कानून पर और एक घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किये जिसने भूदासत्व का उन्मूलन किये जाने की उद्घोषणा की। यह सुधार भूस्वामियों के ही हित में किया गया था। किसानों को यह विश्वास था कि उन्हें जमीन निःशुल्क दे दी जायगी। लेकिन व्यवहार में सामंती बंधन से उनकी मुक्ति औपचारिक ही सिद्ध हुई और उन्हें भारी मोचन धन के बदले छोटी-छोटी जोतें ही मिलीं जिन्हें अगर उन्होंने सामान्य तरीके से

खरीदा होता तो मोचन धन की अपेक्षा कम कीमत देनी पडती। किसानो को जो जमीन मिली वह उनकी जरूरतो के लिए बिलकुल ही अपर्याप्त थी और इतनी खराब थी कि अक्सर उन्हे फौरन अपने भूतपूर्व मालिको की नौकरी करनी पडती जहा उन्हे बहुत ही तुच्छ वेतन मिलता था। इस तरह से वे जो पैसा कमाते थे वह या तो जमीदारो से भाडे पर ली गयी जमीन के किराये के रूप मे या कर्जो की अदायगी के रूप मे मालिको के जेबो मे वापस पहुच जाता था।

कृषक असतोष की लहर।
रूसी क्रातिकारियो की हलचले

कृषक असतोष की लहर पहले कभी इतने व्यापक पैमाने पर नही फैली थी जितनी कि भूदासत्व का उन्मूलन किये जाने के साल फैली थी। किसानो ने अपनी मुक्ति का जवाब बगावतो मे दिया। बारह ही महीने की अवधि के भीतर इस तरह के एक हजार से ज्यादा बलवे हुए। उनमे से बहुतो को दबाने के लिए फौजो को भेजना पडा और कुछ जगहो पर तो तोपो को भी इस्तेमाल करना पडा।

१८६१ के सुधार के बहुत पहले ही क्रातिकारी लोकतत्रवादियो ने जारशाही निजाम और भूदासत्व के खिलाफ बडे पैमाने पर प्रचार करना शुरू कर दिया था। इस आदोलन मे विदेश से हर्जेन तथा ओगार्योव द्वारा प्रकाशित क्रातिकारी अखबार 'कोलोकोल' (घटा) ने और उस काल के कुछ प्रमुख क्रातिकारी लोकतत्रवादियो – निकोलाई चेर्निशेव्स्की (१८२८ १८८९) निकोलाई दोब्रोल्यूबोव (१८३६ १८६१) और क्रातिकारी कवि निकोलाई नेक्रासोव (१८२१ १८७७) द्वारा सपादित पत्रिका 'सव्रेमेन्निक' (समकालीन) ने बहुत महत्वपूर्ण योगदान किया था। सेसर के कठोर बधनो के बावजूद इस पत्रिका ने कृषक क्राति के वास्ते निर्भीक आदोलन चलाया। 'सव्रेमेन्निक' का सपादकीय कार्यालय रूसी क्रातिकारियो का समवेतस्थल बन गया और 'कोलोकोल' निर्वासन मे रहनेवाले क्रातिकारियो का सदर मुकाम बन गया। दोनो केद्रो का आपस मे घनिष्ठ सपर्क और सहयोग था।

रूसी क्रातिकारियो ने एक नया क्रातिकारी सगठन स्थापित करने का प्रयास करना शुरू कर दिया – इस लक्ष्य को उन्होने सुधार के पहले ही प्राप्त करना चाहा था। १८६१ मे 'जेम्ल्या इ वाल्या' (जमीन और आजादी) नामक एक बडा गुप्त सगठन पैदा हो चुका था। देश मे इसका नेतृत्व चेर्निशेव्स्की

और दाम्रोल्यूबोव के हाथों में थी और हर्जेन तथा ओगार्योव को यह राजनीतिक उत्प्रवासियों का नेता मानता था।

'जेम्ल्या इ वोल्या' अनेक क्रांतिकारी मंडलियों का संघ था और रूस भर में फैली शाखाओं में इसके सैकड़ों सदस्य थे। इसका मुख्य लक्ष्य देशव्यापी कृषक विद्रोह संगठित करना था, जिसके फूट पड़ने की क्रांतिकारियों ने १८६१ के सुधारों के लागू किये जाने के साथ आशा की थी। लेकिन यह विद्रोह देशव्यापी पैमाना नहीं प्राप्त कर पाया, क्योंकि किसान बलवे बहुत ही बिखरे हुए थे और क्रांतिकारियों में साधनों और साध्य के प्रश्न पर मतभेद था। 'जेम्ल्या इ वोल्या' के सदस्यों ने अपनी आशाओं को १८६३ पर केंद्रित किया, लेकिन इस साल भी उनका प्रतीक्षित संयुक्त कृषक विद्रोह नहीं हो पाया, यद्यपि पोलैंड, लिथुआनिया और बेलारूस में व्यापक बलवे फूटे थे। इधर दोब्रोल्यूबोव की मृत्यु और चेर्निशेव्स्की, सेर्नो-सोलोव्येविच तथा कई अन्य नेताओं की गिरफ्तारी से समाज को सख्त धक्का लगा। कठोर दंडात्मक कारवाइयों के सिलसिले ने कृषक आंदोलन को हानि पहुंचायी और कमज़ोर कर दिया और १८६४ में 'जेम्ल्या इ वोल्या' – दिसंबरी विद्रोह के बाद बने सबसे बड़े क्रांतिकारी संगठन – ने अपने को स्वेच्छया भंग कर दिया। इस प्रकार उसने जारशाही अधिकारियों के मनोरथ को विफल कर दिया, जो संगठन को तोड़ देने और सैकड़ों सक्रिय क्रांतिकारियों का सफाया करने पर तुले हुए थे। लेकिन आर्थिक प्रगति, कृषक आंदोलन और क्रांतिकारी संघर्ष का दबाव इतना ज्यादा था कि जारशाही सरकार ने कई और सुधार एंठ लिये गये। ये सुधार १८६३–१८७४ के बीच लागू किये गये थे। ग्राम तथा नगर प्रशासन में स्वशासन के सिद्धांत लागू किये गये, यद्यपि उसका स्वरूप काफी हद तक भूस्वामियों के वर्ग हितों से निर्धारित होता था। निर्वाच्य जेमस्त्वो (स्थानीय, जिला तथा प्रांतीय परिषद) और नगर परिषदें स्थापित की गयीं, जिन्हें अलग-अलग प्रांतों या जिलों में सामाजिक सेवाओं (सार्वजनिक निर्माण, खाद्य-प्रदाय, पारस्परिक सहायता, सामाजिक दान, स्थानीय व्यापार तथा उद्योग का अधीक्षण, आदि) के लिए उत्तरदायी बना दिया गया। लेकिन अब भी इन परिषदों के कामकाज में सभ्रांतों का ही बोलबाला था। नगर दूमा (परिषद) के प्रचलन के साथ नगरों में भी इन्हीं सिद्धांतों पर स्वशासन शुरू किया गया। १८६४ के अदालती सुधार ने, जो इस काल के बूर्जुआ सुधारों में सबसे मूलगामी था, अभियोक्ता तथा सफाई पक्षों को वकील करने की अनुमति दी और जूरी द्वारा मामलों की सुनवाई की व्यवस्था की। लेकिन इन नयी अदालतों के ही साथ-साथ पुरानी, हर सामाजिक सवर्ग के लिए अलग से बनायी हुई अदालतें भी मौजूद थीं। इसके अलावा, अदालती सुधार साम्राज्य के सभी प्रांतों पर लागू नहीं किये गये थे। शारीरिक

को भी वर्जित कर दिया गया और ससरव्यवस्था तथा शिक्षा व्यवस्था भी सुधार किये गये।

इस प्रकार रूस की कालातीत सामती व्यवस्था और भूदासत्व जो व्यवस्था के मुख्य स्तभो म एक था के स्थान पर पूजीवादी व्यवस्था यी जो उस जमाने के लिहाज स प्रगतिशील थी और जिसने दश की प्रगति को सभव बना दिया।

ग्यारहवा अध्याय

एशिया के क्रातिकारी जन-आदोलन

औपनिवेशिक नीति के नये तरीके

उन्नीसवी सदी के उत्तरार्ध तक इगलैड की औद्योगिक क्राति तथा यूरोप के अन्य देशो और उत्तर अमरीका के औद्योगिक विकास के परिणामो ने अपने को एशिया तथा अफ्रीका मे अनुभूत करवाना शुरू कर दिया था।

आद्य सचय युग की सीधी लूट का स्थान अब शोषण के अन्य रूपो ने ने लिया – औपनिवेशिक तथा पराधीन देश पूजीवादी देशो के विकासमान उद्योगो के लिए तैयार मालो की खपत मडिया ही नही कच्चे मालो के स्रोत भी बन गये। इस समय तक विश्व मडी कायम हो जाने से सारा ससार शनै शनै पूजीवाद के शिकजो मे जकडता जा रहा था।

औपनिवेशिक शक्तिया विजित औपनिवेशिक प्रदेशो पर अपने प्रत्यक्ष नियत्रण को सुदृढ करने तथा उसका प्रसार करने के लिए प्रयासशील थी। इसके लिए उनके बीच भीषण आर्थिक तथा सैनिक सघर्ष चला, जिसके परिणामस्वरूप वे अनेक नये इलाके हथियाने मे भी सफल हो गये।

जो देश पहले ही यूरोपीय शक्तियो के औपनिवेशिक प्रदेश थे उनमे विदेशी शासको का राजनीतिक सत्ता पर एकाधिकार था जिसका वे विभिन्न तरीको से उपयोग करते थे। साम्राज्यिक देशो के औद्योगिक बूर्जुआजी ने अब अपने ही बनाये औपनिवेशिक प्रशासन के जरिये इन देशो का शोषण बढाने के लिए नये तरीको को उपयोग मे लाना शुरू कर दिया। इगलैड, जो इस समय तक वाजिब तौर पर ही सारी दुनिया का लोहारखाना होने का दावा करने लगा था और जिसके पास औपनिवेशिक शक्तिया मे सबसे शक्तिशाली बेडा था इन नये तरीको का वस्तुत व्यापक पैमाने पर प्रयोग करनेवाला पहला देश था। आस्ट्रेलिया न्यूजीलैड और दक्षिण अफ्रीका जैसे औपनिवेशिक इलाको मे जहा की जलवायु यूरोपीयो के लिए खासकर आकर्षक

थी और देशज आबादी का या तो पूरी तरह से खत्म किया जा चुका था या उपजाऊ जमीनो से बेदखल कर दिया गया था बडे पैमाने पर अधिवासन को प्रोत्साहन दिया गया। यहा विशाल अन्नोत्पादक फार्मो और भेडपालन फार्मो की स्थापना की गयी जो यूरोपीय उद्योग को ऊन का प्रदाय करते थे। कृषि मजदूरो का इन देशो मे जाकर बसना प्रेरित करने के लिए भी विभिन्न तरीके अपनाये गये ताकि वहा बसे पूजीवादी फार्मरो के पास श्रम शक्ति के पर्याप्त साधन रहे।

भारत का अधीनीकरण

ब्रिटेन ने ईस्ट इंडिया कपनी की जरिये जिसे यद्यपि १८१३ से अपने व्यापार-एकाधिकार से वचित कर दिया गया था पर औपनिवेशिक प्रशासन के निकाय के नाते जिसका महत्व अब भी बना हुआ था धीरे धीरे इस विराट उपमहाद्वीप के सपूर्ण विस्तार को अपने नियत्रण मे ले लिया।

जो थोडे से रजवाडे और रियासते अब भी स्वतत्र रह गयी थी और जिन्होने कपनी के आधिपत्य का विरोध करने की कोशिश की उन पर फौजी दबाव डाला गया। उनमे से सबसे शक्तिशाली भी कपनी का कारगर प्रतिरोध करने योग्य नही थे, जो इस समय तक भारत मे अच्छी तरह पैर जमा चुकी थी विराट प्रदेशो को अपने नियत्रण मे ले चुकी थी और आधुनिक सेना से सुसज्जित थी। भारतवासियो ने उपनिवेशवादियो के विरुद्ध अपने असमान सघर्ष को त्यागा नही था किन्तु देश मे अभी तक वाछित नेतृत्व तथा सगठन प्रदान करने की क्षमता रखनेवाला कोई वर्ग नही था।

अधिकाश राजाओ और नवाबो ने इस पर सतोष कर लिया था कि उन्हे अपनी 'स्वशासी' रियासतो मे स्थानीय आबादी का सामती शोषण करते रहने की अनुमति थी। ब्रिटिश शासित प्रदेशो मे भूस्वामी सामत जल्दी ही विदेशी शासको के सहचर और वफादार समर्थक बन गये थे।

जहा भी अग्रेजो का अपनी आजादी की रक्षा के लिए कटिबद्ध लोगो से साबिका पडा, उन्होने बल का निर्ममतापूर्वक प्रयोग किया। १८१७ मे मराठा राज्यो के खिलाफ युद्ध छेडकर कपनी ने पेशवा बाजीराव के राज्य का अधिग्रहण कर लिया जिसने उनका प्रतिरोध करने की कोशिश की थी और उसे पेंशन दे दी। ग्वालियर और नागपुर जैसे मराठा राज्यो की गद्दियो पर अग्रेज़ो के पिट्ठू बैठा दिये गये। अन्य मराठा राज्यो को जिनके प्रदेशो मे अग्रेज़ो ने काफी हिस्से काटकर ले लिये थे, लाक्षणिक 'स्वशासी' रियासतो मे परिणत कर दिया गया, जिन्हे कपनी की प्रभुता को मानना होता था और अपने दरबार मे नियुक्त ब्रिटिश रेजीडेंट के आदेशो का आज्ञाकारितापूर्वक पालन करना होता था।

पजाव म सिख अपनी स्वातन्त्र्यप्रिय परपराओ पर जमे रह और उन्होने डटकर अपनी आजादी की रक्षा की। प्रतिभाशाली राजमर्मन और सेनानायक महाराजा रणजीतसिह (१७८०-१८३६) पडोसी सरदारो को अपने अधीन करने अपने राज्य मे केंद्रीय सत्ता को सुदृढ बनाने और एक युद्धक्षम सेना खडी करने मे सफल रहा। उसने किसानो को उनके सामुदायिक अधिकारो (ग्राम स्वशासन) से वचित नही किया और न ही उन पर भारी करो का बोझ डाला और इस प्रकार उसने व्यापक जन समर्थन सुनिश्चित कर लिया। रणजीतसिह ने सिख राज्य की सीमाओ का काफी प्रसार किया (कश्मीर मुल्तान और पेशावर को सिख राज्य म मिला लिया गया था)। यह राज्य भारत मे बच रहा लगभग अकेला स्वतत्र राज्य था। मगर सिंध को पराजित करने के बाद अग्रेज इस स्थिति को बरदाश्त करने के लिए तैयार नही थे और वे अब अपने शासन का सिर्फ पजाब ही नही, पडोसी अफगानिस्तान पर भी फैलाने के आकाक्षी थे। अफगानिस्तान का मुख्य आकर्षण यह था कि उसमे मध्य एशिया मे और प्रसार का और फारस म ब्रिटिश प्रभाव के सुदृढीकरण का रास्ता खुल जाता था।

रणजीतसिह की मृत्यु के बाद कपनी ने उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर उठे विवाद और सिख सरदारो की परस्पर प्रतिद्वद्विता का लाभ उठाया। दो रक्तरजित युद्धो (१८४५-१८४६ तथा १८४८-१८४९) के बाद ब्रिटिश सेनाए सिखो को पराजित करने मे कामयाब हो गयी। इसके बाद पजाब का अधिग्रहण कर लिया गया और उसे ब्रिटिश सूबा बना दिया गया। वहा विशाल फौजी छावनिया कायम की गयी जिनमे अधिकाशत ब्रिटिश सेनाए तैनात थी। अग्रेज़ो ने उनका पक्ष लेनेवाले सरदारो के विशेषाधिकारो म दखल नही दिया। पर आरभ मे उन्हे स्थानीय कृषक समुदाय के शोषण को सीमित करना पडा और पारपरिक ग्राम समुदाय की परपराओ का ध्यान रखना पडा।

भारत मे
नयी ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति के परिणाम

सपूर्ण भारत का अधीनीकरण करने के बाद, जिसमे असम तथा बर्मा के अन्य उत्तरी सूबे भी मिला लिये गये थे (१८२४ के युद्ध के बाद) ब्रिटिश बूर्जुआजी ने व्यापक पैमाने पर औपनिवेशिक नीति के नये तरीको को लागू करना शुरू किया। कपास, पटसन और चाय के बागान लगाये गये जिनमे कुलियो से काम लिया जाता था। भारत म ब्रिटिश मालो की बिक्री और यहा से कच्चे मालो के निर्यात के लिए बेहतर सचार तथा परिवहन सुविधाओ और ज्यादा बदरगाहो की जरूरत थी। उन्नीसवी सदी के मध्य म ब्रिटिश उद्यमियो

ने कलकत्ता और बबई म पहले कपडा कारखाने खोले जिनक लिए कगाल किसान और दस्तकार सस्ते श्रम का प्रचुर स्रोत थे। भारतीय स्वामित्व म कपडा कारखाने भी खुले।

ब्रिटेन से निर्मित सामान के आयात और स्वय भारत मे उद्योगो की वृद्धि ने स्थानीय दस्तकारो की कगाली और बरबादी की गति को और तेज कर दिया। जल्दी ही ग्राम समुदायो की पृथक आर्थिक इकाइयो क रूप म अपनी पुरानी आत्मनिर्भरता जाती रही। कृषक श्रम के उद्योग मे खिचने और ब्रिटिश मालो क लिए स्थानीय मडी के प्रसार के फलस्वरूप भी जमीन के बदोबस्त मे सबधित नीति मे महत्वपूर्ण परिवर्तन आये।

लेकिन कृषक समुदाय के क्रमिक स्तरण की प्रक्रिया और सट्टाखोरो द्वारा ज़मीन की धर-दबोच ने सिर्फ बहुत ही नगण्य पमाने पर पूजीवादी आर्थिक स्वरूपो को पैदा किया। कृषि मे अब भी कमरतोड अधसामती लगान का ही प्रभुत्व बना रहा जो किसानो को गरीबी और बरबादी के गर्त म धकेलकर कगालो और ऋणदासो की सी हालत मे डालता जा रहा था। उपनिवेशवादियो द्वारा लगाये भारी भूमि सिचाइ तथा उत्पादन करो और परोक्ष करो ने किसानो की हालत को और भी बदतर कर दिया। कृषक अवाम की, विशेषकर उन इलाको म कि जहा औपनिवेशिक शोषण लबे समय से चला आ रहा था बेदारी तेज़ी स बढने लगी। विरोध सिर्फ किसानो म ही नही पैदा हो रहा था। वह अभिजात वग क कुछ अशको म और कई राजाओ म भी पैदा होने लगा था क्योंकि सारे भारत को जीत लेने क बाद अग्रेज स्वशासी रियासतो को कायम रखना फिजूल समझने लग गय थ जिनके शासक अपने किसानो और दस्तकारो से जिसम्प कर लिया करते थे अपार दौलत इक्ट्ठा करते थ शानदार महलो म रहत थ और बडे-बडे हरम रखा करते थे।

लार्ड डलहौज़ी क गवनर-जनरलत्व म जिसने शोषण क इन नय रूपो क प्रचलन पर काफी शक्ति लगायी थी कई रियासतो (जैसे अवध सतारा और झासी) का स्वशासी इकाइयो के रूप म अस्तित्व समाप्त कर दिया गया और उन्ह ब्रिटिश इलाको म बदल दिया गया। जिन इलाको म अब भी सामती अथवा अर्धसामती अथव्यवस्था का ही प्राधान्य था उनम यूरोपीय पूजी के प्रवेश का परिणाम यह हुआ कि आबादी क बहुत बड हिस्से कगाली और बरबादी के शिकार हो गय। बार-बार पडनेवाले अकालो म लाखो लोगो की जान जाती रहती थी।

मध्य पूर्व मे
यूरोपीय पूजी का प्रवेश

उन्नीसवी सदी के मध्य तक पूर्व मे जो राज्य अभी स्वाधीन थे उनमे भी यूरोपीय पूजी की बढती घुसपैठ के फलस्वरूप स्वतंत्र विदेशी व्यापार मे गिरावट आयी महनतकशो की हालत बिगडने लगी और स्थानीय दस्तकार कगाली के शिकार होने लगे। यूरोपीय शक्तियो ने असमान सधिया (कैपिच्यूलेशन) के जरिये तुर्की और ईरान मे अपनी स्थिति को सुदृढ कर लिया और अपने प्रजाजनो के लिए वाणिज्यिक तथा आर्थिक विशेषाधिकार और स्थानीय कानूनो मे निरापदता सुनिश्चित कर ली। इधर स्थानीय सामतो ने सुलतानो और शाहो के और नौकरशाही तथा मजहबी जमातो के उच्चाधिकारियो के साथ साथ मेहनतकश जनता का शोषण और तेज कर दिया।

उन्नीसवीं सदी के प्रथमार्ध का
उस्मान साम्राज्य

उस्मान साम्राज्य तथा फारस को अपने अनेक अधीनस्थ प्रदेशो से वचित होते उत्पीडित स्लाव जातियो के मुक्ति सघर्ष को अधिकाधिक प्रबल होते और शक्तिशाली सामतो तथा कबायली सरदारो मे पार्थक्यवादी प्रवृत्तिया का जोर पकडते देखकर शासक वर्गो के दूरदर्शी प्रतिनिधि विभिन्न सुधारो की तात्कालिक आवश्यकता को समझने लगे थे। लेकिन ऊपर से सुधारो को लागू करने का लक्ष्य सामती राजतत्र के सुदृढीकरण को सुनिश्चित करना ही था। उन्होने सामती आर्थिक सबधो के मूलाधारो मे किसी भी तरह का परिवर्तन नही किया। वे विदेशी शक्तियो के बढते प्रभुत्व को रोकने के लिए और साम्राज्य को सामती अर्थव्यवस्था के गहन सकट पर पार पाने मे सक्षम बनाने के लिए अपर्याप्त थे।

सुलतान सलीम तृतीय तथा प्रतिभाशाली राजमर्मज्ञ बैरक्दरपाशा द्वारा सैनिक तथा प्रशासनिक सुधार लागू करने के कई असफल प्रयासो के बाद उस्मान साम्राज्य या तो यूरोपीय शक्तियो द्वारा अधिग्रहण के परिणामस्वरूप या गैरतुर्क जातियो के मुक्ति सग्राम के फलस्वरूप धीरे धीरे अधिकाधिक अधीनस्थ प्रदेशो को गवाने लगा।

प्रमुख यूरोपीय शक्तियो ने बाल्कन प्रायद्वीप की स्लाव जातियो और यूनानियो के राष्ट्रीय मुक्ति सघर्ष का इस क्षेत्र मे अपने हितो का सवर्धन करने के लिए उपयोग किया। रूस ब्रिटेन फ्रास और आस्ट्रिया के बीच प्रभाव क्षेत्रो के लिए भयकर प्रतिद्वद्विता चल रही थी। पश्चिमी शक्तिया

म रूस क वास्फोरस की तरफ प्रसार का रोकने और सर्वो बुल्गारा तथा अन्य स्लाव जातियो म उसका प्रभाव न बढ़ने देन के बार म तो एकता थी लेकिन इस क्षेत्र म प्रभुत्व के लिए उनके बीच सख्त टकराव था। इस प्रकार मिस्र ब्रिटेन तथा फ्रास के बीच भीषण प्रतिद्वद्विता का अखाडा बन गया।

१८२०-१८४० का मिस्र

उस्मान साम्राज्य का अग बन रहने पर भी मिस्र ने मोहम्मद अली के अधीन विकास क स्वतत्र पथ पर चलना शुरू कर दिया था। मोहम्मद अली ने मिस्री जनगण क जो तुर्क शासन के विरोधी थे समर्थन क आधार पर कई प्रशास निक तथा सनिक सुधार किये। उसने औद्योगिक फसलो (और सबसे बढकर कपास) की खेती और कर्मशालाओ के निमाण का प्रोत्साहित किया और अपनी सेना को बहतर तरीके से सज्जित करने के वास्ते हथियार और जहाज निमाण कारखान बनवाये। ब्रिटेन और फ्रास ने मिस्र पर नियत्रण जमाने की कोशिश म उसकी तुर्को पर घटती निर्भरता और विदेशी शक्तियो क साथ बढ़ते मतभेदो का अधिकतम लाभ उठाने का प्रयास किया।

मोहम्मद अली की नीति न मिस्री भूस्वामियो क जिनका माल उत्पादन म निहित स्वार्थ था और जायमान बूर्जुआजी के हितो का सवर्धन किया फिर भी उसका स्वरूप प्रगतिशील था क्योकि उसने मिस्र की स्वतत्रता की ओर प्रगति म महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। लेकिन साथ ही न सिर्फ यही कि मोहम्मद अली ने उस्मान साम्राज्य की अन्य उत्पीडित जातियो का अपने मुक्ति सघर्ष म समर्थन नहीं किया बल्कि उसने अरब मुक्ति सघर्ष का कुचलने और १८२१-१८२७ क यूनानी स्वतत्रता सग्राम क समय यूनानियो के खिलाफ निष्ठुर दडात्मक कार्रवाइया करने म तुर्को की सहायता क लिए अपनी सेनाए भी भेजी। मोहम्मद अली न यह नीति इसलिए अपनायी थी कि उसे आशा थी कि इस तरह वह अपन राज्य क सीमाओ का विस्तार कर सकेगा और तुर्क सुलतानो को मिस्र की स्वाधीनता को मान्यता देन क लिए रजामद कर सकेगा।

रूस के साथ युद्ध (१८२८-१८२९) म तुर्की की पराजय और सर्वो तथा यूनानियो क मुक्ति सघर्षो न उस्मान साम्राज्य को अत्यन्त कमजोर बना डाला। अड्रियानोपोलिस की सधि न तुर्की को काकेशिया और डन्यूब के डेल्टा म अपन प्रदेशो से पूर्णत वचित कर दिया और इसक अलावा उसे सर्बिया तथा यूनान क स्वशासन को मान्यता देने और युद्ध का भारी हरजाना चुकाने क लिए विवश किया।

उस्मान सेना को अन्यियानोपालिम की सधि क कुछ ही बाद मोहम्मद अली के साथ होनेवाले युद्ध म फिर पराजित होना पडा। मिस्री फौजा न गाम फिलिस्तीन और सिलिशिया पर कब्जा कर लिया और अनातोलिया म बढना शुरू करके स्वय राजधानी का ही खतरे म डाल दिया। सुलतान न यूरोपीय शक्तियो से सहायता का अनुरोध किया, तो अकेला रूस ही तुर्की की मदद को आन को तैयार हुआ। फ्रास न इस आशा स मोहम्मद अली की सहायता की कि इससे वह अपन प्रभाव का बढा सकेगा। इधर ब्रिटेन ने इस डर से कि अगर मिस्री शासक जीत गया, तो उसस फ्रासीसी प्रभाव सुदृढ हो जायेगा, आस्ट्रिया हगेरियाई हस्तक्षेप के जरिये उसकी प्रगति को रोकन की कोशिश की। जब रूसी बेड ने बास्फोरस म प्रवश किया और रूसी सनाए इस्तबूल के पास उतरी तो पश्चिमी शक्तियो न बेहद घबराकर तुर्की और मिस्र को आपस म समझौता करन के लिए राजी कर लिया, जिसके द्वारा मोहम्मद अली न सुलतान के नाममात्र प्रभुत्व का स्वीकारकर अपनी सेनाओ को वापस बुला लिया और सुलतान इस बात पर सहमत हो गया कि शाम फिलिस्तीन तथा सिलिशिया के पश्चिमी भागो का शासन मिस्र के हाथो मे रहे। रूसी सेनाए वापस बुला ली गयी, लेकिन उन्क्यार इसक्लेसी की सधि द्वारा रूस न लडाई क फिर छिडन की अवस्था म तुर्की का सैनिक सहायता देने का वचन दिया और सुलतान युद्ध की हालत म दर्रा-दानियाल को रूसी जहाजो के अलावा सभी विदशी जहाजा के लिए बद कर देन को सहमत हो गया।

तुर्की मे सुधारो के लिए प्रयास

तुर्क अभिजात वर्ग क सबसे दूरदर्शी सदस्यो को लडखडाते हुए साम्राज्य को बचान के लिए सुधारा की सख्त जरूरत का अहसास था। सुलतान महमूद द्वितीय ने सामती सैनिक व्यवस्था को खत्म कर दिया और जानिसार टुकडियो को भग कर दिया। उसकी मौत क बाद उसक उत्तराधिकारी सुलतान अब्दुल मजीद प्रथम न एक बहुत ही नाजुक घडी मे, जब मोहम्मद अली के यह माग करन पर कि उसके द्वारा शासित सभी प्रदशा पर उसक वशागत अधिकारो को मान्यता दी जाये मिस्र के साथ लडाई फिर छिड गयी थी कई नय सुधार लागू किये जाने की घोषणा की। १८३६ की इस आज्ञप्ति का उसके विदेश मत्री मुस्तफा रशीदपाशा न तैयार किया था जिसन यूरोप म शिक्षा पायी थी। इस आज्ञप्ति द्वारा सुलतान के सभी प्रजाजना का धर्म क लिहाज के बिना जीवन सपत्ति तथा मान की सुरक्षा, न्यायोचित कराधान और कर-ठेकदारी के उन्मूलन तथा सैनिक भरती क पुनर्गठन का प्रत्या

भूत करनेवाले नये कानून को लागू करने का आश्वासन दिया गया था।

इस आज्ञप्ति के साथ शुरू होनेवाला युग तुर्की के इतिहास में तजीमात (पुनर्गठन) के दौर के नाम से विख्यात है और कोई तीन दशक चला। इस काल में प्रचलित सुधार निस्संदेह ऊपर से लागू किये गये सुधार थे जिन्होंने शासक वर्गों के हितों के लिए ज्यादा खतरा नहीं पेश किया। जीवन, संपत्ति तथा मान की सुरक्षा और गैरतुर्क जातियों के विरुद्ध भेदभाव के उन्मूलन की प्रत्याशाएं कागजी ही रहीं। अभिजात वर्ग के प्रभावी अंशों ने सुधारों का विरोध किया और जो उनका समर्थन भी करते थे, उन्हें वे इस बहुराष्ट्रीय सामंती साम्राज्य के सुदृढ़ीकरण के साधन से अधिक नहीं प्रतीत होते थे और उनकी सामंती समाज के वास्तविक ढांचे का अतिक्रमण करने की कोई मंशा न थी।

इन सीमित सुधारों ने, जिन्हें अक्सर संशोधित और फिर प्रचलित किया जाता था, उत्पीड़ित गैरतुर्क जातियों के संघर्ष को रोकने या विदेशी शक्तियों द्वारा देश के वाणिज्य तथा अर्थतंत्र में और अधिक अंतःप्रवेशन में बाधा डालने के लिए कुछ भी नहीं किया।

१८४० के लंदन सम्मेलन में पश्चिमी शक्तियां बास्फोरस को अंतर्राष्ट्रीय नियंत्रण के अधीनस्थ बनाने में सफल हो गयीं और इस प्रकार उन्क्यार इस्केलेसी की संधि का कोई महत्त्व न रह गया। विदेशी शक्तियों और उनके मालों के तीव्र अंतःप्रवेशन ने इस सामंती साम्राज्य के संकट को और ज्यादा संगीन तो बनाया, मगर इससे स्थानीय पूंजीवाद के उदय के लिए आवश्यक पूर्वावस्थाओं का किसी भी प्रकार संवर्धन नहीं हुआ।

इधर साम्राज्य में समूचे तौर पर और उसके अलग-अलग भागों में प्रभाव के लिए अपने संघर्ष में विभिन्न यूरोपीय शक्तियों में विरोध अधिकाधिक प्रखर और गहन होते जा रहे थे। इंगलैंड और फ्रांस ने १८५३-१८५६ के रूस-तुर्की युद्ध में सक्रिय भाग लिया था और एक अभियान सेना क्रीमिया भेजी थी। १८५६ की पेरिस की संधि ने रूस को उसके अनेक अधिकृत प्रदेशों से और काले सागर में नौसैनिक बेड़ा रखने तथा उसके तटों पर किलेबंदियां करने के अधिकार से वंचित कर दिया। लंदन सम्मेलन ने उस्मानी साम्राज्य की अखंडता तथा स्वतंत्रता के लिए यूरोपीय शक्तियों को उत्तरदायी घोषित किया।

लेकिन चाहे तुर्की औपचारिक रूप में क्रीमियाई युद्ध के विजेताओं में गिना जाता था, पर अपने 'मित्र राष्ट्रों' – फ्रांस तथा ब्रिटेन – पर उसकी निर्भरता, जो युद्धकाल में बढ़ गयी थी, बढ़ती ही गयी। साम्राज्य के क्रमिक क्षय तथा ह्रास ने उसके विकसित यूरोपीय शक्तियों के अर्ध-औपनिवेशिक उपांग में अनिवार्य रूपांतरण को अवश्यंभावी बना दिया।

फारस म अमीर उल निज़ाम मिर्जा तकी खान द्वारा प्रवर्तित सुधार तो और भी अधिक सीमित थ। फारसी शासक वर्ग म सुधारो का समथन करनवाल तुर्की की अपक्षा कही कमजोर थ। एक ओर केद्रीय सत्ता का सुदृढ़ीकरण और प्रशासन व्यवस्था का पुनगठन करन क प्रयास चल रह थ दूसरी ओर फारस को अपन प्रभाव क्षेत्र म लान क लिए यूरोपीय शक्तियो क बीच घोर प्रतिद्वद्विता छिडी हुई थी। सबस मुख्य प्रतिद्वद्वी रूस और ब्रिटेन थ।

विदेशी माल क बढ़त हुए प्रवेश क अलावा जिसन अथतन्त्र पर समूच तौर पर और दश क ग्रामीण क्षेत्रो की नैसर्गिक अथव्यवस्था पर विशेषकर विनाशक प्रभाव डाला सामतो और शाह क अनुचरो की किसानो की जमीनो को दबोचन की नीति क परिणामस्वरूप और बड कबीलो क खानो म बढ़त पाथक्यवादी सघर्ष क नतीज क तौर पर आतरिक अतविरोध बढ़ गय। औपनिवेशिक शक्तियो खासकर रूस और ब्रिटेन न इन कबायली झगडो म फायदा उठान की कोशिश की।

इस प्रकार यह देखा जा सकता ह कि एशिया और उत्तर अफ्रीका क सभी देशो म जनसाधारण की सतत गिरती हालत धीरे धीरे एक ऐसी स्थिति की तरफ ले जा रही थी कि जिसमे जन सघर्ष छिडना अनिवाय था। यह सघर्ष सामती शोषण क क्रूर रूपो ऊचे सामतो तथा पदाधिकारियो की असीमित सत्ता और विदेशी उपनिवेशवादियो क विरुद्ध लक्षित था। विदेशियो की सरगरमिया सामती व्यवस्था क सकट को विषम बनाने के साथ साथ कतिपय सामती प्रथाओ क सरक्षण की ओर भी निर्देशित थी और इस प्रकार व सामती समाज का पूर्ण अवसान लान के लिए आवश्यक सामाजिक प्रगति की प्रक्रिया को अवरुद्ध कर रही थीं।

इस काल म जो जन आदोलन पैदा हुए उन सभी न सशस्त्र सघर्ष का रूप लिया और उनमे आपस म काफी समानताए थी क्योकि वे सभी समस्त औपनिवेशिक तथा पराधीन देशो मे चल रहे समान घटनाक्रम से उपजे थे। लेकिन विशिष्ट स्थानीय अवस्थाओ न इस सामान्य ढाचे के भीतर विभिन्न अतर पैदा कर दिये।

जिन देशो को यूरोपीय शक्तियो के उपनिवेशो म परिणत कर दिया गया था उनमे जन सघर्ष सर्वप्रथम और सर्वोपरि रूप मे विदेशी आक्रमणकारियो क विरुद्ध लक्षित था जिन्हे जनसाधारण अपन मुख्य शोषक और अपन कष्टो तथा उत्पीडन का मुख्य स्रोत समझते थे। कभी कभी ऐसी परिस्थितियो म अभिजात वर्ग के वे कुछ अशक भी जो अभी तक उपनिवेशवादियो के सहचर और वफादार समथक नही बने थ भाग लेते पाये जाते थे।

जिन देशो ने अपनी औपचारिक स्वाधीनता को बनाये रखा था (चीन फारस तथा उस्मान साम्राज्य) उनमे जन सघर्ष अपने सत्ताधारी सामती अभिजात वर्ग के विरुद्ध निदेशित था। इन आदोलनो के, जिनकी मुख्य शक्ति किसान और शहरी निर्धन थे नेताओ ने कुछ मौको पर यूरोपीयो का भी ऐसी शक्ति के रूप मे देखा जिनकी व शोषण के सामती स्वरूपो के विरुद्ध अपने सघर्ष मे सहायता ले सकते थे।

ऐतिहासिक विकास की इस मजिल के जिसमे सामतवाद का कारगर विरोध सगठित करने मे समर्थ वर्गो का अभी उदय नही हुआ था अधिकाश जन आदोलनो की ही भाति एशिया और अफ्रीका के ये आदोलन धार्मिक या साप्रदायिक रूप लिये होते थे और कृषक समुदाय की सामाजिक तथा सपत्ति विभेदो का समकरण करने की युगो पुरानी आकाक्षाओ का और पारपरिक ग्राम समुदाय के आदर्शीकरण की प्रवृत्ति को अभिव्यक्त करते थे। यह बात चीन के ताइ पिग विद्रोह मे और फारस की बाबी बगावत दोनो मे देखी जा सकती थी।

१८५७ १८५६ का भारतीय विद्रोह

भारत मे इस समय जो एकमात्र सगठित शक्ति थी वह कपनी की सेनाओ के सिपाहियो की थी। भारतीय सिपाही और छोटे अफसर कृषक जनो तथा आबादी के अन्य अशको की, जिनके साथ उनकी काफी सामान्यताए थी ब्रिटिश-विरोधी भावनाओ को प्रतिबिबित करते थे। इसके अलावा उन्नीसवी शती के मध्य मे स्वय उनकी स्थिति पहले से कही अधिक कठिन हो गयी थी। भारत को पूरी तरह जीत लेने के बाद ब्रिटिश अधिकारियो ने भारतीय सैनिको की आवश्यकताओ और इच्छाओ की तरफ कम ध्यान देना शुरू कर दिया था और उनकी तनख्वाह और पेशन भी घटा दी गयी थी। भारतीय सिपाहियो को उनके घमडी अग्रेज अधिकारी नसली विभेद अपमान और धृष्ट व्यवहार का भी शिकार बनाते थे। इसके अलावा सिपाही अग्रेजो द्वारा अफगानिस्तान चीन तथा फारस मे चलाये जा रहे सैनिक अभियानो मे भेजे जाने से भी नाराज थे।

मेरठ के सिपाहियो की बगावत विराट पैमाने के राष्ट्रीय विद्रोह – गदर – के आरभ की द्योतक थी, जिसने अग्रेजो के खिलाफ जनता के प्रचड रोष को अभिव्यक्ति प्रदान की। १० मई १८५७ को मेरठ छावनी मे सिपाहियो के दस्तो ने स्थानीय आबादी के सक्रिय समर्थन से बगावत कर दी और उन्होने कई सिपाहियो को रिहा कर दिया जिन्हे एक दिन पहले अवज्ञा के लिए गिरफ्तार किया गया था। अपने अग्रेज अफसरो का काम तमाम करने के

बाद सिपाही रजीमेटो ने अपने देश की प्राचीन राजधानी, दिल्ली की तरफ कूच कर दिया। रास्ते में बडी संख्या में किसान भी उनके साथ आ मिले। ब्रिटिश फौजों ने मेरठ छावनी को अपने कब्जे में बनाये रखा, पर आसपास के गावो के बागी किसान काफी समय तक उन्हे घेरे रहे।

दिल्ली पहुचने के बाद बागी सेना को भारतीय टुकडियो और निवासियो की सहायता से शहर को अपने कब्जे में ले लेने और वहा तैनात छोटी सी ब्रिटिश रक्षकसेना का सफाया करने में कोई अधिक कठिनाई का सामना नही करना पडा।

महान मुगलवश के अतिम प्रतिनिधि बूढे बहादुरशाह द्वितीय को, जो अग्रेजो के पेंशनभोगी से ज्यादा हैसियत नही रखता था, सारे भारत का सम्राट उद्घोषित कर दिया गया। महान मुगल साम्राज्य की यह पुनःस्थापना सिपाहियो और जनता की आखो में विदेशी शासन के अत और अपनी स्वतत्रता की पुनर्प्राप्ति का प्रतीक थी। दिल्ली पर कब्जे के बाद देश के अनेक अन्य नगरो में भी विद्रोह फूटने लगे — वे गगा और यमुना नदियो की घाटियो के साथ पूरे उत्तरी, मध्यवर्ती और पूर्वी भारत में फैल गये, जहा स्थानीय शासको ने भी, जिन्हे अभी कुछ ही समय पहले अपनी रियासतो और विशेषाधिकारो से वचित किया गया था, लडाई में सक्रिय भाग लिया। कानपुर में अतिम मराठा पेशवा के पुत्र नानासाहब ने, जिसे गवर्नर जनरल लार्ड डलहौजी ने अपने वशागत उत्तराधिकार से वचित कर दिया था, विद्रोह की तैयारी में सक्रिय भूमिका अदा की और उसका नेतृत्व किया।

६ जुलाई को नानासाहब के सहयोग से दो सिपाही रजीमेटो ने कानपुर के शस्त्रागार और बदीगृह को कब्जे में ले लिया और कैदियो को छोड दिया। इलाके के शेष सिपाही दस्ते और निवासी तुरत उनके साथ आ मिले। किसानो और दस्तकारो के सशस्त्र दस्ते कायम कर दिये गये और नानासाहब ने मुगल सम्राट को अपना अधिपति स्वीकार करते हुए अपने को पेशवा घोषित कर दिया। महीने के अत तक कानपुर छावनी में घिरे अग्रेजो को आत्मसमर्पण करने पर मजबूर होना पडा। झासी रियासत मे भी, जिसे डलहौजी ने ब्रिटिश प्रदेश में विलय कर दिया था, सिपाहियो ने विद्रोह कर दिया और उनके एक हिस्से ने दिल्ली के रक्षको के साथ जा मिलने के लिए कूच कर दिया। अवध में, जिसे झासी जैसा ही दुर्भाग्य सहना पडा था, विलय के फौरन बाद ही विद्रोह की तैयारिया शुरू हो गयी थी। इस विद्रोह का एक सक्रिय नेता अहमदशाह था, जो एक बडा जमीदार था और जिसे अग्रेजो ने अपनी जागीर से महरूम कर दिया था।

धार्मिक उक्तियो से ओतप्रोत उसके तूफानी भाषण उपनिवेशवादियो की नीति का पर्दाफाश करते थे और आम जनता को बडी सख्या में सघर्ष

म भाग लेन के लिए प्रेरित करते थे। लखनऊ के इलाके मे किमाना ने ही सबस पहले विद्रोह किया था। इस बगावत को दबाने क लिए जो सिपाही दस्त भेजे गये थे व किसानो से जा मिले। लखनऊ म तेनात सिपाही टुकडियो न भी लगभग इसी समय विद्रोह कर दिया और नगरवासियो की सहायता स शहर को कब्जे म ले लिया। अवध के नवाब वश न जिस अग्रेजो न राज्यच्युत कर दिया था, अपनी सत्ता को फिर उद्घोषित कर दिया। लेकिन अग्रज स्थानीय अग्रेज शासक क किलेबद निवास – रेजीडसी – और उसके आसपास के इलाके म जम रहे और प्रतिरोध करते रहे।

महान विद्रोह या गदर के नाम स विख्यात इस बगावत म प्राप्त सफलताओ और दिल्ली से लेकर कलकत्ता तक कइ इलाका म औपनिवेशिक शासन की समाप्ति न ब्रिटिश अधिकारिया म दहशत पैदा कर दी। गदर क मुख्य केद्रो म उनक पास बहुत ही सीमित सेनाए थी। अग्रेज दक्षिण म अपनी स्थिति या स्थानीय अभिजातो म अपने ढेरा पिट्ठुओ की वफादारी क बार म भी बहुत आश्वस्त न थ। बर्बर पूर्वोपायो क बावजूद अग्रेजो का अपनी राजधानी कलकत्ता म भी विद्रोह के फूट पडन की आशका थी।

लेकिन गदर की कमजोरिया जल्दी ही सामन आन लग गया। केद्रीय सगठन और सुस्पष्ट लक्ष्या के अभाव न बागी सिपाहिया की कार्रवाइया की कारगरता का सभव स बहुत कम कर दिया था। विरल अपवादा को छोडकर सघष म शामिल हुए किसानो और दस्तकारो की कतारो स कोई वास्तविक नेता नही उभरकर सामने आये। उन्होन ब्रिटिश विरोधी सघर्ष म स्थानीय सामता पुजारिया और मुल्लाओ का जिनक हाथा म गदर की बागडोर आ गयी थी, आज्ञाकारितापूवक अनुसरण किया। इसक अलावा अग्रेजा का सक्रिय विरोध करनवाल सामत भी आपस म एक नही हो सक और सयुक्त सघर्ष का सगठन नही कर सक। बहुत स इलाका म उपनिवेश-वादियो और स्थानीय शासको का गठबधन भी गदर के भविष्य क लिए घातक सिद्ध हुआ क्योकि अब तक अग्रेज अपन स्वार्थो का सिद्ध करन क लिए जातीय तथा धार्मिक झगडा और भारत म एकता क अभाव स लाभ उठान का काफी अनुभव प्राप्त कर चुके थे। उदाहरण क लिए पजाब म अग्रेजा न अपन पक्ष म आनवाले सरदारा की सहायता स न सिर्फ गदर का फैलन ही नही दिया बल्कि सिख सामतो की सनाओ का दूसरी जगहा म गदर को कुचलन क लिए इस्तेमाल भी किया। दिल्ली म गदर का कुचलन और उसपर अधिकार करन के लिए पजाब स ६०,००० की सना लायी गयी।

इस सेना न प्राचीन राजधानी पर घरा डाल दिया जिसन बागी सिपाहिया और नगरवासिया क शौर्यमय प्रतिरोध को उत्तेजित चार महीने टक्कर ली। देश के अन्य भागा म सिपाही रेजीमेंटे और एक सिपाही अफसर

की कमान म वहाबी दुरन्निया दिल्ली क बागियो की मदद करन क लिए आयी। आम जनता न नगर की रक्षा म बहुत महत्वपूर्ण भाग लिया। विभिन्न रजीमटो क प्रतिनिधियो को लेकर एक क्रातिकारी परिषद की स्थापना की गयी और मुख्य सनापति चुना गया। परिषद न जनता क हितो म और घरलू शहर म व्यवस्था तथा सगठन को बनाय रखन क लिए भी कई कदम उठाये। नमक कर खत्म कर दिया गया और धनी व्यापारियो पर भारी कर लगाये गये। खान पीन क सामान की जमाखोरी क लिए सख्त सजाए निर्धारित की गयी। परिषद न माग की कि शहशाह बहादुरशाह सिपाही की हालत को सुधारन और कर सग्रहण म भ्रष्टाचार को खतम करन क लिए कदम उठाये। लेकिन एक ओर सामतो और परिषद म उनक प्रतिनिधियो तथा, दूसरी ओर आम जनता के प्रतिनिधियो म शीघ्र ही मतभेद उभर आये और नगर की एक्यबद्ध प्रतिरक्षा क लिए खतरा बन गये। इस समय तक बहुत स सामत अग्रेजो का और अधिक मुकाबला करन क इच्छुक नही रह गये थे और सितबर १८५७ म घरातोड तोपखान सहित नयी कुमुक प्राप्त करन के बाद अग्रजो क लिए शहर पर हमला करना सभव हो गया। भीषण लडाइयो के बाद आखिर नगर का पतन हो गया और अग्रेजो न पाशविक प्रतिशोधा से अपनी विजय का समारोह मनाया। दिल्ली क कितन ही निवासी बागी सेनाओ के बचे-खुचे दस्तो क पीछे पीछे अपन शहर का त्यागकर चल गये।

बहादुरशाह ने बाद मे अपन और अपन बेटो क जीवन की सुरक्षा का आश्वासन पान पर अग्रेजो के आगे आत्मसमर्पण कर दिया। लेकिन शाहजादो को कुछ ही समय बाद एक अग्रेज अफसर की आज्ञा से मार डाला गया और खुद बहादुरशाह की मौत निवासन में हुई।

पजाब से आयी सेना स दिल्ली को घेरने क बाद अग्रेजो न कलकत्ता से भजी सेना की सहायता से गगा की घाटी म विद्रोह क केद्रो का सफाया करना शुरू किया। अग्रेजो ने इलाहाबाद और बनारस को जीत लिया और इसके बाद जुलाई १८५७ मे स्थानीय आबादी क कडे प्रतिरोध क बावजूद कानपुर को भी ले लिया। नानासाहब की सेना के शेषाशो न अपन मूल दुर्गो से हटने के बाद भी लडना जारी रखा। अग्रेजो द्वारा कानपुर म नियुक्त नये शासक के सक्रिय प्रयासो के बावजूद शरद म ग्वालियर क सिपाही दस्ते और दिल्ली स यहा तक पहुचे कुछ सिपाही दस्त भी नाना स जा मिले। यद्यपि इस इलाके मे जन सघर्ष चलता रहा पर फिर भी ब्रिटिश सेनाए अवध भेज दी गयी। नवबर १८५७ म अग्रेज लखनऊ म घुस जान और वहा रेजीडेसी मे घिरी सेना तथा आश्रितो को मुक्त करन मे कामयाब हो गये। लेकिन व नगर को अपन अधिकार मे नही रख सके और वापस कानपुर लौट आये।

अग्रेज फारस में नयी कुमुक प्राप्त करने और चीन जाती सेनाओं को सिंगापुर से वापस मोड़ने के बाद ही नानासाहब पर ज्यादा कारगर दबाव डाल सके और उन्होंने मध्यभारत को अवध से काट दिया। १८५८ के वसंत तक इस इलाके में अंग्रेजों के लिए ७० ००० सेना जुटायी जा चुकी थी। मार्च में अंग्रेज़ सेनाओं ने अवध की राजधानी लखनऊ को घेर लिया।

अवध में इस समय जनसाधारण और गदर में भाग लेनेवाले अभिजातों के आपसी विरोध आंदोलन में अधिकाधिक बाधक बनते जा रहे थे। जनवरी १८५८ में तो अहमदशाह की कुछ टुकड़ियां और कुछ सामंतों की टुकड़ियों में सशस्त्र मुठभेड़ तक हुई। फलस्वरूप अतिसुसज्जित बहुसंख्य ब्रिटिश सेनाओं के खिलाफ बागियों का प्रतिरोध कमजोर हो गया। १९ मार्च को लखनऊ का पतन हो गया और दो हफ्ते तक वहां पाशविक प्रतिशोधात्मक कार्रवाइयां और लूटमार चलती रही।

लेकिन फिर भी अहमदशाह अपनी सेना के काफी बड़े हिस्से को अक्षत रखने में कामयाब रहा था। उसने अपने संघर्ष को तजा नहीं। लखनऊ के पतन के बाद लड़ाई ने अंग्रेज सेनाओं के खिलाफ छापामार कारवाइयों का रूप ले लिया। मध्यभारत में इस समय तात्या टोपे नामक प्रतिभाशाली छापामार नेता ने बहुत प्रमुखता प्राप्त कर ली थी। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने भी युद्ध में अपने अदम्य साहस से अपने सैनिकों को अनुप्राणित किया। अप्रैल १८५८ में अंग्रेजों द्वारा झांसी के जीत लिये जाने के बाद वह वहां से बच निकली और तात्या टोपे से जा मिली। बाद में वह औपनिवेशिक सेनाओं के साथ एक मुठभेड़ में लड़ते हुए मारी गयी।

छापामार कारवाइयां चलती रहीं लेकिन स्वतंत्रतासंग्रामी अब अपने को अधिकाधिक कठिन स्थिति में पा रहे थे। धीरे-धीरे अंग्रेजों के वफादार सामंत अंग्रेजों को ज्यादा सक्रिय सहायता प्रदान करने लगे और विद्रोह में भाग लेनेवाले सामंत भी अधिकाधिक तादाद में अंग्रेजों से आकर मिलने लगे। अंग्रेजों की जोड़-तोड़ ने भी इसमें और योगदान किया।

ब्रिटिश पार्लियामेंट के १८५८ के भारत अधिनियम द्वारा ईस्ट इंडिया कंपनी को विघटित कर दिया गया, भारत को सीधे ब्रिटिश ताज के अधीन कर दिया गया और राजाओं तथा अभिजातों की रियासतों की निरापदता की प्रत्याभूति प्रदान की गयी। अपनी शाही उद्घोषणा में महारानी विक्टोरिया ने देशी राजाओं के 'अधिकारों, मान और मर्यादा का पूरी ईमानदारी के साथ' आदर करने की घोषणा की।

कई भारतीय राजाओं ने जन संघर्ष को कुचलने में अंग्रेज़ों को सक्रिय सहायता प्रदान की थी। ऐसा ही एक राजा अहमदशाह को अपने पंजे में लेने में कामयाब हो गया और ५० ००० रुपये के इनाम के बदले उसे अंग्रेजों

के सुपुर्द कर दिया गया। तात्या टोपे के पकड़े जाने और अंग्रेजों के ह
किये जाने में भी इसी तरह के छलकपट का उपयोग किया गया था।

अंग्रेज अधिकारियों ने छापामार दस्तों के खिलाफ पाशविक प्रतिशोधात
कदम उठाये। लेकिन साथ ही अंग्रेजों को कृषि व्यवस्था में व्याप्त गहन
विरोधों को कम करने के लिए भी कुछ कदम उठाने पड़े। १८५९ के
अधिनियम के अनुसार जमीन का दस्तमरारी या स्थायी बंदोबस्त कि
गया जिससे जमींदारों की मनमानियों पर काफी रोक लगी। इस अधिनियम
असामी काश्तकारों के उन जोतों पर मौरूसी हक का भी स्वीकार कि
जिन्हें वे १२ साल से ज्यादा से काश्त करते रहे थे।

महान भारतीय जन विद्रोह – गदर – को अंतत पराभूत कर दिया गय
भारत में अभी तक औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष का नेतृत्व क
की क्षमता रखनेवाला कोई वर्ग नहीं था। सामंत लोग, जिनके एक हि
ने ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने का अंतिम प्रयास किया था व्यवहार
अब सभी प्रकार से अंग्रेजों के सहायक बन गये थे। उन्नीसवीं सदी के म
में हिंदुस्तान में ऐसी अवस्थाएं विद्यमान नहीं थीं कि समूचे तौर पर
भर में ऐसे संघर्ष को समन्वित किया जा सकता। फिर भी १८५७ १८५
का असफल विद्रोह पूर्णत निष्फल नहीं गया। उसने जनव्यापी संघर्ष
असीम संभावनाओं को प्रकट किया और भारतीय देशभक्तों को प्रेरणा
एक स्रोत प्रदान किया। गदर में भाग लेनेवाले कृषक जनसाधारण का अनु
जन संघर्ष की आगामी मंजिलों में अमूल्य सिद्ध हुआ।

फारस मे बाबी बगावत

उन्नीसवीं सदी के मध्य मे फारस में हुए जन विद्रोहों के कारण
वही थे जो अन्य एशियाई देशों के उन जैसे आंदोलनों के मूल में थे। एशिय
के अभी तक स्वाधीन देशों में यूरोपीय घुसपैठ सामंती व्यवस्था तलाच्छेद
करने में अधिकाधिक योग दे रही थी।

स्थानीय शासकों की मनमानियां और सामंती शोषण ने ऐसी अवस्थाओं
में जनसाधारण पर खासकर कठोर विपत्तियां ढायी कि जब पारंपरिक नैसर्गि
अर्थव्यवस्थाएं ध्वस्त हो रही थीं। यही कारण है कि चीन की ही भांति फारस
भी जन विद्रोह सर्वोपरि रूप में स्थानीय भूस्वामियों और उनके तौर तरीकों के विरुद्ध
लक्षित था। इस संघर्ष को अनिवार्यत धार्मिक संप्रदायी रूप लेना था। ऐतिहासिक
विकास की एक विशेष मंजिल में अनेक जन आंदोलनों में समान रूप से पाये जाने
वाले धार्मिक लक्षणों ने मुस्लिम देशों में विशेष प्रमुखता प्राप्त की, जहां शासकीय
राज्यधर्म ही अक्सर दीवानी और फौजदारी कानून का आधार भी होता था।

बावी वलव उन्नीसवी सदी के आरभ मे फारस के शिया मुसलमाना म पैदा हुए एक सप्रदायी आदोलन से जुडे हुए थे। इस सप्रदाय के लोगो का विश्वास था कि वारहवा इमाम हज़रत महदी शीघ्र ही प्रकट होगा और उसके साथ ईमान और इसाफ का निज़ाम आयेगा। वे मानते थे कि महदी-ए-आखिरी ज़मा के प्रकट होने के पूर्व एक पैगवर जायेगा और मसीह ए-आखिरी ज़मा की मरज़ी को ज़ाहिर करेगा, जो उस वाव (द्वार) की तरह होगी जिसके ज़रिये लोगो को इलहामी पैगाम (ईश्वरीय सदेश) प्रदान किया जायेगा।

१८४४ मे इस पथ के एक अनुयायी, सैयद मिर्ज़ा अली मोहम्मद न अपने-आपको वाव घोषित कर दिया और अपनी शिक्षा का प्रचार करना शुरू कर दिया, जो शिया शिक्षाओ का ही सिलसिला थी। उसके अनुयायी वावी कहलाये। वाव के इन उपदेशो ने कि दुनिया म ईमान और इसाफ का निज़ाम कायम होगा और उसके द्वारा धार्मिक तथा सासारिक नेताओ की परदाफाशी ने दस्तकारो, किसानो और धार्मिक पदानुक्रम के निचले सस्तरो मे वहुत जोश पैदा कर दिया। आरभ मे तो वाव को शाह तथा उसके जनुचरा को भी अपना अनुयायी बना लेन की आशा थी। लेकिन शीघ्र ही अधिकारियो ने वावियो को उत्पीडित करना शुरू कर दिया और अत मे स्वय वाव को भी गिरफ्तार करके वदीगृह मे डाल दिया। कैद मे वाव ने अपने को इमाम महदी घोषित कर दिया। उसने जपने अनुयायियो से घनिष्ठ सपर्क वनाये रखा और अपनी पुस्तक बयान मे अपनी शिक्षा को व्यवस्थावद्ध और धार्मिक तथा दार्शनिक आधार प्रदान करने की कोशिश की।

वाव का कहना था कि मनुष्य के इतिहास म प्रत्येक युग के लिए कुछ निश्चित धार्मिक विधान है जो पैगवरो की किताबो मे दिये गये है। मूसा का सुसमाचार, इजील और कुरान मे से प्रत्येक ग्रथ अपने-अपन युग के अनुरूप था। उसने कहा कि कुरान भी जब कालातीत हो चुका है और मनुष्य के लिए नया धर्म और नया धर्मग्रथ स्वीकार करने का समय आ गया है और बयान' के रूप मे वह उसके सामन यही पेश कर रहा है। वाव की शिक्षा के जनुसार ईमान और इसाफ का निज़ाम सारी दुनिया मे तो कायम होनेवाला था ही, मगर सबसे पहले उसे फारस के पाच मुख्य सूबो म कायम होना था। बाब की शिक्षाओ को न स्वीकार करनेवाले सभी लोगो और सभी विदेशियो को देश से निकाल दिया जायेगा और उनकी सपत्ति को जब्त करक बाबियो मे बाट दिया जायेगा। वाबियो की हुकूमत मे सार्विक समानता के सिद्धात का प्रचलन हागा और स्त्री-पुरुषो को समान अधिकार प्रदान किये जायेगे। यद्यपि बाव की शिक्षा जनसाधारण की सामतवाद-विरोधी आकाक्षाओ को अभिव्यक्त करती थी पर वह, सवप्रथम, स्वय बाव क अपन वर्ग— व्यापारी वर्ग—के हितो को भी व्यक्त करती थी। यह काई सायोगिक नही

था कि व्यक्ति, सपत्ति तथा निवास की अलघनीयता के वचनों के ही साथ साथ उसमे वाणिज्यिक पत्रव्यवहार को सेसर से मुक्त रखने ऋणो की अदायगी को अनिवार्य बनाने ऋणो पर सूद की मान्यता देने और वाणिज्यिक कार्य कलाप के सिलसिले मे व्यापारियो के 'बाबी सल्तनत' की सीमाओ के बाहर भी आ-जा सकने का प्रावधान था।

लेकिन बाब के नानामख्य किसान तथा दस्तकार अनुगामियो ने उसकी शिक्षा में समानता के भाव को अपने ही विचारो के अनुसार ग्रहण किया था। बाब के कई शिष्य जनता की चिरवाछित आकाक्षाओ को व्यक्त करने मे अपने शिक्षक से भी आगे चले गये। मिसाल के लिए, मुल्ला मोहम्मद अली बारफरोशी जो स्वय किसान वश का था, यह शिक्षा देता था कि बाबियो की हुकूमत मे उन सभी लोगो को जो इस समय ऊचे और महत्व के पदो पर है नीचा रुतबा दिया जायगा और जो इस वक्त नीची जगहो पर है, वे ऊचे रुतबे पायेगे और किसानो को न कर देने होगे, न बेगार ही करनी पडेगी।

१८४८ मे बदश्त नामक गाव मे हुई सभा मे, जिसमे विभिन्न इलाको के ३०० से अधिक प्रतिनिधियो ने भाग लिया था मोहम्मद अली बारफरोशी और कुर्रत उल ऐन नामक उपदेशिका के सक्रिय प्रयासो के परिणामस्वरूप बाबी आदोलन ने इन विचारो को आधिकारिक स्वीकृति प्रदान कर दी और अपने अपने इलाको मे लौटने के बाद बाबी इन विचारो का ही प्रचार करने लगे।

इसी साल शरद मे शाह मोहम्मद काचारी की मृत्यु के बाद राजगद्दी और महत्वपूर्ण सरकारी पदो को लेकर सघर्ष छिड गया। बहुत से बाबियो ने इसे अपना सशस्त्र सघर्ष शुरू करने का उपयुक्त समय समझा। मजदरा सूबे मे बारफरोश के कोई ७०० सशस्त्र बाबियो ने जिन्होने शहर से कोई २० किलोमीटर की दूरी पर शेख तबरज़ी मे डेरा डाल रखा था किलेबदी शुरू कर दी। कुछ ही समय के भीतर विभिन्न गावो और कसबो से भी दो हजार से ज्यादा किसान और दस्तकार वहा जमा हो गये। मोहम्मद अली के नेतृत्व मे उन्होने 'इन्साफ के निजाम' की नीव डालने की कोशिश की। सारी सपत्ति को सामुदायिक घोषित कर दिया गया और सभी के लिए सामुदायिकता के सिद्धातो के अनुसार काम करना और खाना पीना अनिवार्य कर दिया गया।

बाबियो को किसानो से काफी सहायता प्राप्त हुई जिन्होने उन्हे खाद्य सामग्री, ढोर और चारा मुहैया किया। बाबी निजाम के इस बीज को खत्म करने के स्थानीय अधिकारियो के प्रयास असफल रहे और राजधानी से भेजी शाह की टुकडियो को हराकर भगा दिया गया। मजदरा मे इस सफलता ने दूसरे इलाको के बाबियो को भी प्रेरित किया और कई शहरो मे सशस्त्र सघर्ष की तैयारिया की जाने लगी।

१८४६ के आरभ म सरकारी सनाओ क नये दस्तो न शख तबरजी जाकर बागियो को घर लिया और उनकी कुमुक का रास्ता काट दिया। खाद्य सामग्री और गोलाबारूद की सख्त कमी क बावजूद बाबी मई तक शाह की ७ हजार सेना का वीरतापूर्वक सामना करते रहे। मई म नगर क शेप रक्षको ने जीवनदान का आश्वासन पान पर हथियार रख दिय लेकिन उनका पाशविक निर्दयता के साथ एक-एक करके सफाया कर दिया गया।

शख तबरजी म पराजय ने दूसरे इलाको म बाबियो को सशस्त्र विद्रोह की तैयारिया करते रहन से विमुख नही किया। १८५० के आरभ म यज्द म विद्रोह फूट पडा, जिस सरकारी सेनाओ न जल्दी ही कुचल दिया। लेकिन कुछ बाबी प्रतिशोधो से बच भागे और सैयद याह्या के नेतृत्व म यज्द से दक्षिण म नेरिज पहुच गये। यहा जून, १८५० मे एक और विद्रोह फूट पडा जिसे स्थानीय किसानो का व्यापक समर्थन प्राप्त था। तोपखान से लैस स्थानीय अधिकारी नरिज को सर करन और बागियो को फिर कुचलन म सफल हो गये। लकिन बाबिया के विरुद्ध निर्मम प्रतिशोधो के जवाब म कुछ ही समय के बाद एक और, ज्यादा शक्तिशाली बगावतो की लहर शुरू हो गयी।

ज़जान (ईरानी आजरबैजान) म बाबियो न कई नये अनुगामी ही नही प्राप्त कर लिये बल्कि १८४६ मे नगर म अपना काफी प्रभाव भी जमा लिया। मई, १८५० म एक बाबी की गिरफ्तारी ही बगावत के फूट पडने के लिए काफी साबित हुई। कुछ ही समय क भीतर शहर का ज्यादातर हिस्सा बाबिया के हाथो मे आ गया। मोहम्मद अली जजानी कासिम लोहार और अब्दुल्ला नानबाई के नेतृत्व म बाबियो ने घेरे को झेलन के लिए तैयारिया करना शुरू कर दिया। शाह की सेना के पहल हमले को विफल कर दिया गया। औरतो बच्चा सहित सभी नगरवासियो ने नगर की प्रतिरक्षा म भाग लिया।

जुलाई, १८५० के आरभ मे अधिकारियो ने इस आशा से बाब को मृत्युदड दे दिया कि इससे बगावत का सारे देश मे फैलना रोका जा सकेगा। लेकिन इसस वाछित परिणाम नही प्राप्त हुए। जजान म बाबियो ने भीषण प्रतिरोध किया और उन्ह तोपखान स लैस ३०००० की सेना भजकर ही पराजित किया जा सका। विजेताओ न स्त्री-बाल वृद्ध तक के साथ किसी भी तरह की नरमी नही दिखायी।

लेकिन जजान के आत्मसमर्पण के पहल ही नरिज और आसपास के इलाको के किसानो म एक और बलवा फूट चुका था। कष्टो और शोषण से बेहाल होकर वे अपन गावो को छोडकर पहाडो म चले गय थ जहा उन्होन मोरचाबद अड्डे कायम कर लिये। किसानो ने छापामार तरीके अपनाकर सरकारी सेनाओ के हमलो का जमकर मुकाबला किया और उनस बदूक और तोप भी छीनी।

शाह की फौज आखिर म बाबियो क आश्रयस्थल को घर मे लेन और दूसरे पहाडी कबीलो की सहायता मे बाबियो को चुन चुनकर खत्म करन म सफल हो गयी। इसक बाद बहुत निर्दयतापूर्ण प्रतिशोधो का दौर आया। कैदियो को अमानवीय यत्रणाए दी गयी, जिदा जला दिया गया और तोपो स उडा दिया गया।

१८५० क अत तक अधिकारियो को बगावत क अन्य सभी केद्रो को दबा दन म सफलता मिल चुकी थी। उत्तर म इक्क-दुक्क विद्रोह १८५२ तक भी होते रहे मगर उन सभी को जल्दी ही कुचल दिया गया।

अगस्त १८५२ म शाह नासिरुद्दीन की हत्या क असफल प्रयास क परिणामस्वरूप राजधानी म २८ बाबियो को मौत क घाट उतार दिया गया, जिनपर इस आतकवादी कार्य का षड्यत्र करन का इलजाम लगाया गया था। सारे फारस म बाब की शिक्षा क अनुगामियो को उत्पीडित किया गया और मृत्युदड दिय गये। बाबी बगावतो की पराजय न यह साबित किया कि सामतवाद विरोधी आदोलन अभी दस्तकारो छोटे व्यापारियो और किसानो क अलग थलग और मुख्यत स्वत स्फूर्त विद्रोहो की अवस्था से आग नही बढ पाया था। एशिया क अन्य भागो की ही भाति यहा भी अभी तक सयुक्त सामत-विरोधी सघर्ष का नतृत्व तथा सगठन करन म समर्थ वर्गो का उदय नही हो पाया था।

सच तो यह है कि स्वय बाब की धार्मिक विचारधारा जिसम बाबी आदोलन के किसान तथा शहरी गरीब अनुगामियो न आजादी और बराबरी के विचारो का समावेश करन की कोशिश की थी, इस प्रकार की एकता को बढावा दने और देश की विभिन्न सामत विरोधी शक्तियो को एक्यबद्ध करने की क्षमता नही रखती थी। कालातर मे इस विचारधारा ने उन विचारो का त्याग दिया जो सपत्तिवान वर्गो को डराते थ और वह बहाई पथ मे परिणत होकर रह गयी। बाब के एक शिष्य बहा उल्लाह, जिसने अपन गुरु की शिक्षा को सुधारना शुरू किया, और उसके अनुगामियो -- बहाइयो -- ने बयान मे सन्निहित सामत विरोधी तथा लोकतत्रीय सिद्धातो से मुह मोड लिया। इस प्रकार बहाई पथ जनसाधारण का समर्थन प्राप्त करने मे अक्षम था और वह विदेशी पूजी के चाकर व्यापारी वर्ग द्वारा अगीकृत विचारधारा बनकर रह गया।

बाबी बगावतो ने शासक वर्गो को ही घबराहट म नही डाला बल्कि उनके प्रगतिशील अशको को सुधारो की सख्त जरूरत का कायल भी किया। अमीर-उल निजाम मिरजा तकी खा उनका प्रवक्ता बन गया। लेकिन चूकि फारस मे इस तरह के सुधारो क लिए तुर्की क मुकाबल भी कम समर्थन उपलब्ध था इसलिए अमीर-उल-निजाम के प्रयास (खानो की मनमानी क विरुद्ध सघर्ष कद्रीय सत्ता तथा सेना के सगठन को सुधारने की मुहिम

और धर्मनिरपेक्ष शिक्षा शुरू करने की कोशिश) अल्पकालिक ही सिद्ध हुए। बाबियों का कुचलने के बाद प्रतिक्रियावादी शाह नासिरुद्दीन ने अपने अमीर उल-निजाम को बरखास्त कर दिया और मौत के घाट उतरवा दिया।

फारस मे पश्चिमी शक्तियो के अत प्रवेशन ने, जिसके लिए उनमे आपस मे भीषण प्रतिद्वद्विता चल रही थी पर जिसका देश कारगर विरोध नही कर सका उसे जल्दी ही एक अर्ध औपनिवेशिक देश मे परिणत कर दिया।

ताइ पिंग विद्रोह

अधिकाधिक सगीन होते जा रहे आर्थिक सकट की पृष्ठभूमि मे सामती शोषण के प्रति असतोष चीन मे कई जन विद्रोहो के रूप मे प्रस्फुटित हुआ। यद्यपि साम्राज्य के विभिन्न भागो मे फूटते रहनेवाले किसान बलवे भी कभी कभी इतने गभीर हुआ करते थे कि केद्रीय अधिकारियो के लिए काफी परेशानी पैदा कर देते थे और उन्हे लबे और कटु सघर्ष के बाद ही दबाना सभव हो पाता था फिर भी अधिकाशत वे स्वत स्फूर्त और असगठित ही हुआ करते थे। अक्सर गुप्त समाजो तथा विभिन्न धार्मिक सप्रदायो द्वारा सगठित किये जानवाले ये बलवे अब तक लगभग पारपरिक बन चुके थे।

इन आदोलनो का प्रस्फुटन जनसाधारण की सामती उत्पीडन से मुक्ति पाने की आकाक्षा और किसानो की इस भोली-भाली आशा का व्यक्त करता था कि समानता का प्राप्त किया जा सकता है और प्राचीन ग्राम समुदायो को, जिन्हे आदर्शीकृत करके स्वर्णयुग का प्रतीक माना जाया करता था पुन स्थापित किया जा सकता है। साथ ही यह सघर्ष मचूरी चिंग राजवश के विरोध का भी रूप लेता था, जिसे लोग अपने कष्टो का मुख्य स्रोत समझते थे। एक किसान कुनबे मे जन्मे ग्रामीण अध्यापक हूग स्यू चुआन (१८१४-१८६४) की शिक्षा मे यही विचार व्यक्त हुए जिसने क्वाग-तुग (दक्षिण चीन) मे 'दिव्य शासक समाज' नामक सप्रदाय की स्थापना की थी।

इस नये सप्रदाय की शिक्षा मे जिसका हूग ने १८३७ मे प्रचार करना शुरू किया था ईसाइयत के भी कुछ तत्व थे चाहे कुछ असाधारण अर्थो मे ही सही। हूग स्यू चुआन जो ईसा का छोटा भाई होने का दावा करता था की शिक्षा के मुख्य तत्व समानता तथा पृथ्वी पर दिव्य साम्राज्य की स्थापना कुकर्म और कुकर्मियो – इस मामले मे इसका आशय सामती अधिकारियो के प्रतिनिधियो से था – के विरुद्ध सघर्ष और जनता की मुक्ति के आदर्श थे।

अफीम युद्धो के परिणामो और चीन के बलात खोले जाने तथा यूरोपीय शक्तियो द्वारा उस पर थोपी गयी असमान सधियो ने स्वय सामती

समाज को और भी कमजोर किया और जनता पर और मुसीबत ढायी। यूरापीय मालो की बाढ न स्थानीय शिल्पो को हानि पहुचायी और चीनी दस्तकारो का कगाली का शिकार बना दिया। अफीम के जायात से देश म चादी की सख्त कमी हा गयी और तावे की मुद्रा जल्दी ही वकार बन गयी। नानकिग की सधि न चीन पर युद्ध का हरजाना भरने का भारी बाझ डाल दिया था। चिग राजाओ न नये कर लगाना और उदग्रहण करना गुरू किय जिन्हाने मेहनतकशा की हालत को और भी बिगाड दिया। किसान इतन कगाल हो गये कि अपने खता को छोडने को विवश हा गय। अपन सामान को न वेच पान के कारण दस्तकार भी तबाह हो गय। यही नही व्यापारिया तथा शसी वर्ग के कुछ अशको को भी नय करो से बहुत हानि हुई। दक्षिण के बार म यह बात खासकर सही थी जहा पाच बन्दरगाह विदशी व्यापारियो क लिए खोल दिये जाने के नतीजे के तौर पर विदशी मालो का प्रवाह विशेपकर तेज हा गया था। इस कारण सिर्फ मेहनतकशा न ही हूग स्यू चुआन का अनुकरण नही किया, बल्कि व्यापारी और शसी भी उसके सप्रदाय मे शामिल हुए।

इस सप्रदाय के एक नये सदस्य, कोयला खनिक के वेटे याग स्यू चिग ने जो आगे चलकर एक प्रसिद्ध किसान नेता बना, स्थानीय सामता स लडने के लिए किसानो की फौज जुटा ली। जल्दी ही वह सप्रदाय के प्रमुख नताओ म एक हो गया और उसक दस्त विद्रोही सना का नाभिक बन गये। पाचव दशक के अत तक 'दिव्य शासक समाज' के हजारो अनुगामी क्वाग्सी प्रात के पहाडा म जमा हो गये जहा पहुच पाना सरकारी सनाओ के लिए कठिन था और जो मुख्य प्रशासनिक कद्रा से बहुत दूर थे। १८५० म उन्हान अमीरो की कीमत पर गरीबो की समानता का नारा दकर मचूरी शासका क विरुद्ध सशस्त्र सघर्ष शुरू कर दिया।

सप्रदाय क धमाध सस्थापक न, जा अपनी भावसमाधिया म धार्मिक क्रातिकारी भजन रचता था जिनम उसक आदालन क लक्ष्या और उन्ह प्राप्त करन क तरीका की रूपरखा हाती थी अपन सभी अनुगामिया से कहा कि व अपन घरो और सपत्ति का जला डाल और अपन परिवारा का साथ लकर विद्राहिया की कतारा म शामिल हा जाय।

स्थानीय अधिकारी विद्राह का कुचलन म असफल रहे। दूसर प्राता स सनाओ का भजा जाना और साम्राज्य क प्रधान मत्री का मुख्य सनापति नियुक्त किया जाना भी व्यर्थ ही रहा। ११ जनवरी १८५१ का जा हूग स्यू चुआन की वर्षगाठ का दिन था विधिविधान और धूमधामपूवक महा सौभाग्यशाली दिव्य साम्राज्य (ताई पिग त्यन-कुओ) की स्थापना की उद्घाषणा कर दी गयी। तभी स इस तजी स बढत आदालन म भाग लनवाल

सभी लोग ताइ पिंग" (सबसे सौभाग्यशाली) कहलाने लगे। सम्प्रदाय के प्रमुख हूंग स्यू चुआन ने त्यन वांग (दिव्य सम्राट) की उपाधि ग्रहण की।

सितंबर १८५१ में ताइ पिंगों ने क्वांग्सी प्रांत की राजधानी हूनान पर कब्ज़ा कर लिया। शहर में सभी बड़े-बड़े अधिकारियों को मार डाला गया और खज़ाने तथा खाद्य भंडारों को ज़ब्त करके ताइ-पिंगों की सामूहिक संपत्ति में बदल दिया गया। हूनान में, जहां ताइ पिंग सेना लगभग छः महीने काबिज़ रही "दैवी साम्राज्य" की स्थापना की दिशा में पहले कदम उठाये गये। हूंग स्यू-चुआन के तीन घनिष्ठतम सलाहकारों को वांग की उपाधि दी गयी और उन्होंने सरकार कायम की। सरकार में सबसे मुख्य भूमिका "पूर्वी वांग" यांग स्यू चिंग की थी, जो सरकार का प्रमुख और ताइ पिंग सेना का मुख्य सेनापति था जिसमें १८५१ के अंत में ५०,००० से अधिक लोग शामिल हो चुके थे।

यांग स्यू चिंग की बनायी योजना पर चलते हुए ताइ पिंग सेना ने सरकारी सेनाओं की कतारों को भेद दिया और १८५२ के वसंत में अपना उत्तरी विजय अभियान शुरू किया। इस अभियान के दौरान ताइ पिंग सेना में बाग़ी किसानों के, जो अपने स्थानीय ज़मींदारों से लड़ रहे थे, बहुत से दस्ते और जिन गांवों तथा शहरों से होकर वह गुज़री, उनके बहुत से निवासी भी शामिल हो गये।

दिसंबर में ताइ पिंग सेना यांग्त्सी नदी के किनारे पहुंच गयी। शत्रु से छीनी तोपों तथा अन्य हथियारों की सहायता से उसने जल्दी ही वूहान नाम से ज्ञात तीन नगरों (वूचांग, हांकाऊ तथा हानयांग) के अति दुर्गबद्ध समूह — यांग्त्सी पर स्थित सबसे बड़े राजनीतिक तथा आर्थिक केंद्र — पर कब्ज़ा कर लिया।

इस ज़बरदस्त विजय के बाद ताइ पिंगों की लोकप्रियता तथा प्रभाव का और भी ज़्यादा तेज़ी के साथ प्रसार हुआ और हज़ारों की तादाद में नये नये लोग आकर उसमें शामिल होने लगे। ताइ पिंग सेना के बुनियादी दस्ते में पांच लोग होते थे — चार सैनिक और उनका नायक। इस तरह के पांच दस्तों से एक पलटन और चार पलटनों से कंपनी तथा पांच कंपनियों के मिलने से रेजीमेंट बनती थी। रेजीमेंटें मिलकर कोरों और वाहिनियों का निर्माण करती थीं। सेना में कठोर अनुशासन था और सैनिक विनियम संहिता तैयार की गयी थी। विद्रोही सैनिक अपनी युद्धनीति स्वयं तय करते थे। उनकी कतारों से कई प्रतिभाशाली सेनानायक सामने आये, जिन्होंने सदियों पुरानी चीनी युद्धकला का सफल उपयोग किया।

इस सेना को जनता द्वारा प्रदत्त व्यापक समर्थन उसकी सफलताओं को सुनिश्चित करने का एक महत्वपूर्ण कारक था। ताइ पिंग अपनी सेना के पहले अपने प्रचारकों को भेजा करते थे, जो लोगों को विद्रोहियों के लक्ष्यों

स अवगत कराते थे और उनसे चिंग राजवंश का तख्ता उलटने के लिए काम करने की जमींदारो के कमरतोड शोषण का अंत करने और निष्ठुर सूदखोरों तथा सरकारी अधिकारियो का अत करने की अपील करते थे। ताइ पिंग सेना द्वारा अधिकृत प्रदेशो म पुरानी व्यवस्था का खात्मा कर दिया जाता था – सरकारी कार्यालयो को और इसी तरह ऋणो के अभिलेखो तथा करो के रजिस्टरो को भी खत्म कर दिया जाता था। अमीरो की सपत्ति और सरकारी गोदामो स छीनी गयी खाद्य सामग्रियो का सामुदायिक आधार पर बटवारा कर दिया जाता था। विलास वस्तुओ तथा मूल्यवान फर्नीचर को नष्ट कर दिया जाता था और मोतियो को पैरो तले कुचल दिया जाता था, ताकि गरीबो को अमीरो स विभेद करनेवाली हर चीज को नष्ट कर दिया जाय।

वूहान को सर करने के बाद ताइ पिंग सेना ने जिसमे अब कोई पाच लाख लोग थे यान्त्सी नदी के साथ साथ नीचे की तरफ बढना शुरू कर दिया। गोला बारूद और खाद्य सामग्री से लदा बजरो का एक विशाल बेडा नदी म सेना के साथ-साथ चलता था जिसकी सख्या रास्ते म और-और लोगो के शामिल होते जाने के कारण लगातार बढती जाती थी और जल्दी ही दस लाख के करीब हो गयी थी।

१८५३ के वसत म ताइ पिंगो ने दक्षिण चीन की प्राचीन राजधानी नानकिंग को जीत लिया। उसका नाम बदलकर ताइ चिंग (दैवी नगर) रख दिया गया और उसे ताइ पिंग राज्य की राजधानी बना दिया गया। कुछ ही समय भीतर ताइ पिंगो का दक्षिणी तथा मध्य चीन के काफी बडे भाग पर नियत्रण स्थापित हो गया। ताइ-पिंग नेताओ ने नये राज्य के ढाचे को दैवी राजवंश की भूस्वामित्व प्रणाली नाम के कानून म निरूपित किया। यह कानून विद्रोहियो के उत्पीडन तथा शोपण का उन्मूलन करने और सार्विक समानता का प्रचलन करने के सहज कल्पनालोकी सपनो को कार्यरूप म परिणत करने का प्रयास था। नये कानून ने उदघोषित किया कि 'इस धरती पर जितनी भी जमीन है उसे सभी के सामान्य श्रम से काश्त किया जायेगा इस धरती के सभी निवासियो को मिलकर हमारे दैवी पिता परमेश्वर द्वारा हमे प्रदत्त महान सुख का समान मात्रा म उपभोग करना चाहिए खेतो की काश्त साझे म होनी चाहिए भोजन साथ साथ करना चाहिए, कपडे बराबर बाटे जाने चाहिए, धन मिलकर खर्च किया जाना चाहिए, ताकि कही किसी प्रकार की असमानता न हो और सभी को पर्याप्त भोजन तथा वस्त्र मिले।' भूमि के निजी स्वामित्व का उन्मूलन कर दिया गया और सारी जमीन को प्रत्येक परिवार म खानेवालो की सख्या के हिसाब से बाटा जाता था। ताइ पिंग राज्य म स्त्रियो को भूमि सहित

सभी मामलो मे पुरुषो के समकक्ष अधिकार प्रदान किये गये। कृषक समुदाय राज्य की बुनियादी आर्थिक सैनिक तथा राजनीतिक एकक था। प्रत्येक परिवार से एक सैनिक लिया जाता था और सैनिक इकाइयो के नायको को उस इलाके पर नागरिक सत्ता भी प्राप्त होती थी जहा उनके सैनिक तैनात होते थे।

फसल के बाद प्रत्येक समुदाय को जिसमे पचीस परिवार होते थे अपने पोषण के लिए आवश्यक अनाज के अलावा शेष सारी फसल राजकीय गोदामो के सुपुर्द कर देनी होती थी। ताइ पिगो के लिए जमीन रखना या कोई निजी सपत्ति रखना कानून द्वारा वर्जित था। इन सिद्धातो को गावो के साथ-साथ शहरो मे भी अमल मे लाने की कोशिश की गयी थी। दस्तकारो को समान शिल्पो के आधार पर समूहो मे सयुक्त होकर अपनी बनायी सभी वस्तुओ को राजकीय गोदामो के सुपुर्द कर देना होता था जिसके बदले उन्हे राज्य से अपने तथा अपने परिवारो की आवश्यकतानुसार खाने पीने का सामान मिल जाता था।

लेकिन व्यवहार मे इस कानून का लागू करना बिलकुल असभव सिद्ध हुआ। ताइ पिगो के सैनिक कार्यभारो ने जमीन का बटवारा करना और बचे रह भूस्वामियो की जायदादो को जब्त कर पाना असभव बना दिया था। लेकिन असामी काश्तकारो के विपुल बहुलाश ने अपनी जोतो के लिए लगान अदा करना और उन अनिवार्य श्रम सेवाओ को अजाम देना बद कर दिया जो पहले उन्हे अपने भूतपूर्व स्वामियो के लिए करनी पडती थी।

ताइ पिग अधिकृत प्रदेशो मे शिक्षा तथा चिकित्सा के क्षेत्र मे और प्रतिक्रियावादी सामाजिक रिवाजो तथा पारिवारिक सबधो के प्रतिक्रियावादी स्वरूपो के उन्मूलन के सिलसिले मे अनेक प्रगतिशील कदम उठाये गये।

किसानो के क्रातिकारी सघर्ष ने चिंग सम्राटो की सत्ता पर कडा प्रहार किया। सरकारी सेनाए ताइ पिगो द्वारा अधिकृत प्रदेशो पर उनकी जकड को कमजोर करने मे असमर्थ रही। लेकिन उत्तर मे मचू साम्राज्य की सत्ता अक्षत बनी रही यद्यपि ताइ पिग सफलताओ के परिणामस्वरूप उत्तर तथा दक्षिण – दोनो ही जगहो मे – कई जिलो और शहरो मे पुराने गुप्त समाजो की सरगरमिया फिर शुरू हो गयी और इसके साथ साथ सशस्त्र बलवे फिर फूटने लगे और किसानो के छापामार सघर्ष का प्रसार होने लगा। त्रिक समाज ने याग्त्सी के दक्षिण मे इसी लक्ष्य से सघर्ष सगठित किया और सितबर १८५३ मे कटार समाज के नेतृत्व मे शघाई मे विद्रोह फूट पडा। यह नगर फरवरी १८५५ तक बागियो के हाथो मे रहा और उन्होने दैवी राजधानी से सपर्क स्थापित करने का भी प्रयास किया। न्यन-त्साग समाज के नेतृत्व मे सशस्त्र कृषक आदोलन ने उत्तर मे काफी व्यापक पैमाना ग्रहण

कर लिया। देश के विभिन्न भागों में अल्पसंख्यक जातियाँ भी चिंग शासकों के खिलाफ विद्रोह का झंडा लेकर मैदान में आ गयी।

अगर ये जन आंदोलन ताइ पिंग आंदोलन के साथ मिल गये होते तो उन्होंने आसानी से मंचुओं का तख्ता पलट दिया होता। लेकिन ताइ पिंगों की सकीर्णमना साम्प्रदायिकता ने उन्हें ऐसे अन्य संगठनों के साथ सहयोग नहीं करने दिया कि जो उनके मतानुगामी नहीं थे।

नानकिंग पर अधिकार जमा लेने के बाद ताइ पिंगों के लिए यही उचित होता था कि तुरंत सेनाओं को उत्तर भेजकर राजधानी पर कब्जा तथा अपने राज्य की स्थापना कर लेते। पर उन्होंने यह अवसर गवा दिया। कई और उन इलाकों में भी जिन्हें उन्होंने पहले जीत लिया था (जैसे हूनान) उनका नियंत्रण किसी भी प्रकार दृढ़ नहीं था। वास्तव में नानकिंग के बाद उनकी प्रगति लगभग रुक ही गयी। इससे सामंतों तथा भूस्वामियों को अपनी स्थिति को मजबूत करने और ताइ पिंग खतरे का सामना करने के लिए फौज जुटाने का अवसर मिल गया। केंद्रीय प्रांतों के सामंती अभिजातों द्वारा जुटायी गयी प्रतिक्रांतिकारी सेना में, जो हूनान के शक्तिशाली भूस्वामी त्सेंग कुओ फान की कमान में थी लगभग ५० ००० सैनिक थे। इस सेना को हूनानी जवान के नाम से पुकारा जाता था और उसने ताइ-पिंग सेना के विरुद्ध सरकारी सेनाओं के मुकाबले कहीं ज्यादा कारगरता के साथ संघर्ष किया।

मई १८५३ में जाकर ही ताइ-पिंग सेना की कुछ टुकडियों ने आखिर उत्तर की तरफ बढ़ना शुरू किया। मंचू सेनाओं के कड़े प्रतिरोध को कुचलने के बाद अक्तूबर तक वे त्येनत्सिन के पास जा पहुची। राजधानी के लिए खतरा पैदा हो गया। लेकिन इस लंबे कूच से क्लांत और उत्तर के कठोर जलवायु की अनभ्यस्त ताइ पिंग सेनाएं त्येनत्सिन के रास्ते में ही काफी सैनिक गवा चुकी थीं। अब तक वे अपनी रसद के मुख्य केंद्रों से भी बहुत दूर निकल चुकी थीं। उत्तर के किसानों से उन्हें प्रत्याशित सहायता भी नहीं प्राप्त हो पायी। ताइ पिंग विचारों ने जिन्होंने दक्षिण में इतने सारे लोगों को अपना अनुगामी बना लिया था उत्तर में ऐसा प्रभाव नहीं डाला। कारण यह था कि ताइ पिंग प्रचारकों की दक्षिणी बोली उत्तर में नहीं समझी जाती थी। न ताइ पिंगों ने गुप्त समाजों के नेतृत्व में लड़नेवाले विद्रोहियों को अपने साथ लेने की कोशिश ही की।

सरकारी सेनाओं ने ताइ पिंग सेनाओं पर चारों ओर से लगातार चोटें करते हुए उन्हें काफी नुक्सान पहुचाया। मई, १८५४ में नानकिंग से सहायता दस्ते भेजे गये मगर अन्य ताइ पिंग टुकडियों तक पहुचने से पहले ही शातुंग में उन्हें पराजित कर दिया गया। अपने को घेरे में पड़ा पाकर ताइ पिंग टुकडियों ने अंतिम सैनिक के जिंदा रहने तक पूरे दो साल प्राणपण से युद्ध किया।

इसीके साथ साथ ताइ पिंगो के पश्चिम की तरफ कूच करने और छोड दिये गये बड़े केंद्रों में अपनी सत्ता पुनःस्थापित करने के प्रयासों का अंत भी भारी जनहानि के साथ असफलता में ही हुआ। १८५३ और १८५६ के बीच वूहान कई बार कभी इसके, तो कभी उसके हाथों में रहा। ताइ पिंग सेना त्सेंग कुओ फान के 'हूनानी जवानों' को पीछे धकेलने में कामयाब रही लेकिन त्सेंग अपनी प्रतिक्रांतिकारी सेना के लिए लगातार नये नये सैनिक जुटाता रहा और ताइ पिंगों के वास्ते लगातार एक गंभीर खतरा बना रहा।

१८५६ में ऐसा लगने लगा कि संघर्ष में गतिरोध आ गया है—ताइ पिंग विद्रोह अब इस स्थिति में नहीं रह गया था कि चिंग राजवंश का तख्ता उलटने और सारे देश को जीतने में सफल हो सके और न राजतंत्र ही इस स्थिति में था कि ताइ पिंग राज्य का सफाया कर सके जिसकी परिधि में करोडों की आबादी के विशाल प्रदेश सम्मिलित थे। लेकिन स्वयं ताइ पिंग आंदोलन में आंतरिक अनबन और मतभेद प्रतिक्रांतिकारी शक्तियों के लिए सहायक सिद्ध हुए, जिन्हें विदेशी शक्तियों से भी सहायता मिल रही थी।

कृषक युद्ध के पहले दौर में विदेशी शक्तियां अलग बैठी यह देखती रही थीं कि किसका पलड़ा भारी रहेगा। उन्हें आशा थी कि कमजोर चिंग राजवंश उन्हें पहले की असमान संधियों के अंतर्गत दी गयी रिआयतों के अलावा नयी रिआयतें देने को बाध्य हो जायेगा। साथ ही उन्होंने सामंती स्वामियों के विरुद्ध ताइ पिंगों के विद्रोह का और उनकी इस भ्रांति का कि यूरोपीय लोग उनके 'मसीही भाई' हैं लाभ उठाते हुए दैवी साम्राज्य के साथ संपर्क बनाने तथा व्यापार शुरू करने का भी प्रयास किया।

१८५४ से ही विदेशी शक्तियों ने पीकिंग सरकार से असीमित व्यापार के अधिकार, विदेशी राजदूतों के राजधानी में प्रवेशाधिकार आदि आदि की मांग करना शुरू कर दिया था।

लेकिन क्रीमियाई युद्ध के समाप्त हो जाने के बाद ही ब्रिटेन और फ्रांस के लिए एक मामूली से बहाने का लाभ उठाकर खुला सैनिक हस्तक्षेप करना संभव हो पाया। तथाकथित दूसरे अफीम युद्ध का अंत मंचुओं की एक और गंभीर पराजय में हुआ। त्येनत्सिन संधियों के नाम से विख्यात १८५८ की संधियां जो केवल वास्तविक शत्रुओं—ब्रिटेन तथा फ्रांस—के साथ ही नहीं बल्कि संयुक्त राज्य अमरीका के साथ भी की गयी थीं जिसने युद्ध में कोई भाग नहीं लिया था, चीन के दासकरण की दिशा में एक और कदम की परिचायक थीं।

१८५८ की संधियों ने ब्रिटेन और फ्रांस को कई और बंदरगाहों में व्यापार करने का और याग्त्सी नदी में निःशुल्क आवागमन का अधिकार

प्रदान किया और उनके प्रजाजनो के लिए देश के किसी भी भाग म इच्छानुसार आ जा सकना प्रत्याभूत कर दिया। चीन सीमाशुल्का म और कमी करन तथा और हरजाना देन क लिए सहमत हो गया। ब्रिटेन और फ्रास का राजधानी म अपन राजदूत भेजन की अनुमति भी मिल गयी। आग चलकर य सारे विशेषाधिकार अन्य विदेशी शक्तियो को भी प्रदान कर दिये गये।

और भी ज्यादा रिआयत हासिल करन क प्रयास म ब्रिटेन और फ्रास न अपनी अभियान सेनाए पीकिंग की ओर भेजकर एक और झगडा शुरू कर दिया। सम्राट और उसके दरबारी डर क मारे राजधानी से भाग गये। यूरोपीय सेनाओ न बर्बरतापूर्वक सम्राट के ग्रीष्मनिवास को लूटा और उसे उसक विख्यात महलो और चीन तथा एशिया क अन्य देशो की अमूल्य कला निधियो सहित जलाकर खाक कर दिया। सम्राट क भाई राजकुमार हुग न राजधानी के द्वार शत्रु के लिए खोल दिये। २४ अक्तूबर, १८६० को पीकिंग अभिसमय पर हस्ताक्षर किये गये जिसने त्येनत्सिन बदरगाह को विदेशी व्यापार क लिए खोल दिया तथा कई और विशेषाधिकार प्रदान किये।

मनचाही रिआयतें हासिल कर लेने के बाद विदेशियो की इस समय तक ताइ-पिंग विद्रोह का दमन करने म दिलचस्पी पैदा हो गयी थी। उन्हे हाल ही म प्रदत्त व्यापारिक अधिकारो और पूरी याग्त्सी नदी मे जहाजरानी करन की अनुमति का केवल तभी उपयोग किया जा सकता था कि जब चिंग राजवश का सपूर्ण मध्य चीन पर नियत्रण हो। इस समय तक यूरोपीयो न यह भी अनुभव कर लिया था कि ताइ-पिंग नेता अपनी मातृभूमि की स्वतन्त्रता की रक्षा करने का इरादा रखते है और विदेशी शक्तियो को अनुचित रिआयत देने के लिए तैयार नही है। इसके अलावा ताइ पिगो को भी अब ऐसी कोई भ्राति नही रह गयी थी कि यूरोपीय लोग उनके "मसीही भाई" हैं।

इस प्रकार यूरोपीय शक्तियो के लिए अब ताइ पिंग विद्रोह का कुचलन म सक्रिय भाग लेना अनिवार्य हो गया। आधुनिक बदूको और तोपखाने से लैस उनकी टुकडियो न ताइ पिगो के विरुद्ध शुरू होनेवाली कार्रवाइयो म बहुत महत्वपूर्ण भाग लिया।

इसीके साथ साथ स्वय ताइ पिंग राज्य क भीतर चल रही आतरिक प्रक्रियाओ न भी विद्रोह की पूर्ण और अतिम पराजय म अपना योगदान किया।

तत्कालीन चीन म जहा अर्थव्यवस्था क पूजीवादी स्वरूप अभी अस्तित्व म नही आये थे ऐसा किसान आदोलन कि जिसके पास अपना मार्गदर्शन करन क लिए कोई प्रगतिशील वर्ग नही था बूर्जुआ व्यवस्था का सूत्रपात नही कर सकता था। ताइ पिंग कृषि सुधार तो किसानो के चिरवाछित सार्विक समृद्धि के कल्पनालोकी राज्य की स्थापना करन के लिए और भी अपर्याप्त थे। स्वय किसानो म ही सपत्ति पर आधारित असमानता पैदा हो गयी थी। जहा

ब्रिटिश और फ्रांसीसी सेनाएं पीकिंग में प्रवेश कर रही हैं। १२ अक्तूबर, १८६०

तथ व्यापारियो और उन भूस्वामियो की बात है, जो विद्रोह म मचुआ की सत्ता पलटन की आशा म सम्मिलित हुए थे व भी पूर्ण समानता की ओर लक्षित ताइ पिंग राज्य की अधिकाधिक जोर स विरोध करने लगे थे। विद्रोह के नेता तक धीरे धीरे उन समतावादी सिद्धातो से विचलित होने और सवाग नौकरशाही रवैया अपनाने लगे थे। हुग स्यू चुआन के निकटतम अनुचरो म भी वर्ग अतविरोध प्रकट होने लगे गये थे। भूस्वामी वर्ग म जन्मे वई चाग हो ने कृषक हितो के पक्षधर याग स्यू चिग के विरुद्ध पड्यत्र रचा जो भूमि विधान म सन्निहित सामत विरोधी कायक्रम का दृढतापूर्वक समथन करता था। वई चाग हो तीसरे वाग शी ता काइ को भी पड्यत्र म खीचने म कामयाब हो गया और सितबर, १८५६ म उन्होंने याग स्यू चिग के निवास पर अचानक हमला कर दिया। स्वय उस, उसके परिवारवालो को और उसके हजारो क्रातिकारी समथको को कत्ल कर दिया गया।

ताइ पिंग विद्रोह के तपे हुए योद्धाओ के विरुद्ध वई चाग हो के इस कुकृत्य ने सेना म सख्त नाराजगी पैदा कर दी। नवबर म उसे उसके पद से हटा दिया गया और प्राणदडित कर दिया गया किंतु आदोलन के क्रातिकारी नेताओ और गुटो म सघर्ष जारी ही पकडता गया। शी ता काई सेना के एक बडे हिस्से को लेकर नानकिंग से चल दिया और उसने सरकारी सेनाओ के विरुद्ध स्वतत्र अभियान शुरू कर दिया। याग स्यू चिग की मृत्यु के बाद जो ताइ पिगो का अत्यत प्रतिभाशाली तथा सकल्पवान मुख्य सेनापति था, सेना की सयुक्त कमान व्यवहारत रह ही नही गयी। अभिजातो और भूस्वामियो की प्रतिक्रातिकारी सेनाओ के हाथो पराजय अधिकाधिक प्रायिक होती गयी। १८५६ के अत तक ताइ पिगो ने वूचाग और हानयाग को तज दिया।

याग स्यू चिग की हत्या के बाद ताइ पिग नेताओ के भ्रष्टीकरण की प्रक्रिया और ज्यादा तेज हो गयी और वाग सरदारो का एक नया भूस्वामी वर्ग पैदा होने लगा। जब आरभ म ताइ पिग त्यान-कुओ राज्य की उदघोषणा किये जाने के समय स्वय हुग स्यू चुआन सहित केवल चार वाग थे, इस समय तक उनकी सख्या २०० से अधिक हो चुकी थी। वे अब लोगो के कल्याण की जरा भी चिंता नही करते थे यद्यपि उनम से कई कृषक परिवारो के ही थे। वागो ने काफी सपदा इकट्ठा कर ली और दैवी साम्राज्य की आबादी के लिए अनिवार्य श्रमसेवा तथा अधिग्रहणो को फिर लागू करना शुरू कर दिया। इस सब के परिणामस्वरूप किसानो म घोर असतोष फैलना अनिवार्य था।

लेकिन सामती व्यवस्था और उसके मूर्त रूप – मचू शासन – के विरुद्ध किसानो के सघर्ष का अत नही हो गया था। इस बीच एक और प्रतिभाशाली किसान नेता – सेनानायक ली त्सू चेग – सामने आ गया। उसके नेतृत्व की बदौलत ताइ पिग राज्य ने अपनी सफल प्रतिरक्षा की और लडाई के अंतिम

दौर म कई आक्रामक कार्रवाइया भी की। १८६० मे उसन प्रतिक्रातिकारी सेनाओ को पराजित करन और नानकिग को बचान म सफलता प्राप्त की। इसक बाद उसकी टुकडियो ने शघाई की तरफ कूच किया, लक्नि रास्त म कई शहरो को सर करने के बावजूद वह शघाई को अधिकार मे न ल सका। १८६०-१८६२ म उसकी सेनाओ न कई विजय प्राप्त की, पर अव व ताइ-पिग राज्य को बचा सकन की स्थिति मे नही रह गयी थी।

१८६२ म विदेशी शक्तियो ने ताइ-पिगो के विरुद्ध लडाई म सक्रिय भाग लेना शुरू कर दिया। उन्होने भाडे के सैनिको क 'स्वैच्छिक' दस्ता का ही नही, खुद अपनी सेनाओ का उपयोग करना सामतो की फौजो और मचू सरकार को आधुनिक हथियार गोलाबारूद और सैनिक विशेषज्ञ मुहैया करना भी शुरू कर दिया।

विदेशी शक्तियो के हस्तक्षेप ने कृषक विप्लव को कुचलन और ताइ-पिग राज्य को खत्म करन के काम को सुगम बना दिया। १८६३ और १८६४ क बीच सरकारी सनाए ताइ पिग राज्य म सबसे महत्वपूर्ण स्थलो को कब्जे म ल लन म सफल हो गयी। १८६४ के वसत म नानकिग को घेर म ले लिया गया और आसपास के देहाती इलाको से काट दिया गया। ली त्स्यू-चग क नतत्व म घिर हुए नगरवासियो ने अत्यत प्रतिकूल अवस्थाओ म अपन नगर की रक्षा की। हूग स्यू चुआन न आत्महत्या कर ली और १६ जुलाई को नानकिग की शहरपनाह को बारूद से उडा दिया गया। प्रतिक्रातिकारी फौज शहर म आ घुसी और बच रहे लोगो पर भयानक जुल्म ढान लगी। लाखो सैनिको और नगरवासियो को तलवार क घाट उतार दिया गया और ली को अमानुषिक क्रूरता के साथ मार डाला गया। बिखरी हुई ताइ पिग टुकडिया न लडाई जारी रखी। विभिन्न इलाको म किसानो के छापामार गिरोह सक्रिय रहे और चिग राजवश अगले कुछ साल उत्तर म किसान बगावतो को कुचलने म नाकाम रहा। लेकिन महान कृषक विद्रोह इस समय तक स्पष्टत पराजय के कगार पर पहुच चुका था।

लेकिन फिर भी यह सघर्ष निष्प्रभाव नही रहा — क्रातिकारी ज्वार की इस जबरदस्त लहर न दीर्घकालिक परिणाम पैदा किये। पहली बात तो यही कि उसन जनसाधारण को बादवाले विद्रोहो क लिए उपयोगी अनुभव प्रदान किया। साथ ही उच्चतम सामती सोपानिकी क प्रतिनिधि भी जिन्होने कृषक विद्रोह को कुचलन मे सक्रिय भाग लिया था अब यह महसूस करन लग गय थ कि अपनी सत्ता को कायम रखने और सहारा दन क लिए विद्यमान सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था मे कुछ परिवर्तन करना अत्यत महत्वपूर्ण है।

उन्नीसवीं सदी के मध्य म
जापान मे वग विरोधा का बढ़ना

उन्नीसवी सदी क मध्य म जापान का सामाजिक-आर्थिक ढाचा सामन्त समाज का क्लासिकी उदाहरण प्रस्तुत करता था। जापान की आबादी म ८० प्रतिशत से अधिक किसान थ, जो सिर्फ अपना खाना और कपडा ही नही पैदा कर लते थ बल्कि पर्याप्त मात्रा म आदिम कृषि उपकरण भी बना लेते थ। जमीन पर शक्तिशाली सामतो का स्वामित्व था, किसानो को जमीन क छोट छोट टुकडो पर काश्तकारी क मौरूसी अधिकार प्राप्त थ और उन्हें कई तरह की बेगार करनी होती थी और बहुत स कर अदा करने होते थे। उनकी आधी स ज्यादा फसल भू-लगान की अदायगी म ही चली जाती थी, जिसे बहुत ही जटिल तरीके से निर्धारित किया जाता था और वह मुख्यत सामतो के कर्मचारियो और कर-ठेकेदारो की मन मर्जी पर ही निर्भर करता था। अलग-अलग जमींदार अपनी इच्छा क अनुसार अलग अलग तरह की बेगार मागते थ। तोकूगावा शोगनो क सामतवश न जो सत्रहवी सदी क मध्य स देश पर शासन करता आया था प्रचलित सामाजिक आर्थिक सबधो को बनाये रखने और किसी भी भावी परिवर्तन की सभावना को निराकृत करने क प्रयास म एक जटिल नियम विनियम प्रणाली को लागू कर दिया था।

किसानो क निर्मम शोषण और प्राय दैवी आपदाओ के कारण फसल के मारे जाने के फलस्वरूप व्यापक अकाल पडा करते थे और किसान कगाल होते जा रहे थे। किसानो पर कर्जो की जकड लगातार बढती चली गयी और जल्दी ही व सूदखोरो के शिकजो म फस गये, जिन्होने भूमि के हस्तातरण पर सरकारी पाबदी के बावजूद जल्दी ही उनकी जोतो को हथिया लिया।

व्यापारी और महाजन ग्रामीण जीवन मे अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका ग्रहण करते गये और इस तरह सामती सबधो के गढो का मूलोच्छेदन करने और किसान जनता की बरबादी की प्रक्रिया को तेज करन लगे।

के सौ वर्षो मे ही २५४ स अधिक बडे विद्रोह दज किय गये ये अथात पिछली सदी स तीन गुन। शहरी निर्धना – दस्तकारो और छाटे व्यापारिया – के असतुष्ट अशका मे भी वेदारी पदा हा गयी। यद्यपि इन दोना समूहो के बीच कोई सगठित सपर्क न था, फिर भी इन दानो आदोलना के एक ही समय अस्तित्व म आन के कारण स्थापित व्यवस्था के लिए एक गभीर खतरा पैदा हो गया। नगरवासी निर्धना ने बडे व्यापारिक प्रतिष्ठानो मे व्याप्त स्वेच्छाचारी प्रवध का विरोध किया, जिसका शासक सामतो क सग चोली दामन का माथ था।

इस बात क बावजूद कि किसान विद्रोह दश के विभिन्न भागा म अलग अलग दग ही ये और सामत आम तौर पर उन्ह कुचल दिया करते थे, उनका बार-बार होना ही तोकूगावा जापान क सामाजिक-आर्थिक ढाच को गभीर क्षति पहुचने का कारण बन गया।

उन्नीसवी शताब्दी के प्रथमार्ध म किसान विद्रोहा की अभूतपूव लहर आयी। मात्र दस वर्ष (१८३३ १८४२) म ही ९९ बड विद्रोह दर्ज किय गये। यह सख्या पूरी सत्रहवी सदी के विद्रोहो के याग से भी अधिक थी। शहरी निधनो के बलव भी सख्या मे अधिक और पैमाने मे बडे होत गय। १८३७ मे ओसाका नगर के निवासियो और निकटवर्ती गावो के किसाना क सयुक्त विद्रोह ने सारे दश म उत्साहपूर्ण प्रतिक्रिया पैदा की। विद्रोहिया ने रईसो के मकानो को जला डाला, धान के गोदामो पर कब्जा कर लिया और चावल लोगो मे बाट दिया।

दश म चल रही दूरगामी आर्थिक प्रक्रियाए सामती राजनीतिक अधिरचना – तोकूगावा सैन्य सामतो की प्रमुखता मे शक्तिशाली भूस्वामी अभिजातो के अधिनायकत्व – की जडो को कमजोर कर रही थी।

जापान मे अमरीकी प्रसार

देश म व्याप्त इस परिस्थिति म ही पूजीवादी दशा न जापानी सरकार पर दबाव डालना शुरू किया।

जून १८५३ म कमाडोर परी की कमान म अत्याधुनिक तापा म लैस चार अमरीकी जगी जहाजो का बेडा जापानी तट क पास पहुचा। जापानी सरकार क एक प्रतिनिधि न माग की कि अमरीकी जहाज उरागा जलसयाजी छाडकर नागासाकी बदर चले जाय, जो विदशिया क लिए खुला हुआ था और वहा स जापानी अधिकारिया के साथ औपचारिक सबध स्थापित करे।

लेकिन परी न इस आदश की आर काई ध्यान नही दिया और कहा कि उस उसी स्थान पर सभी औपचारिकताओ क साथ अमरीकी राष्ट्रपति

उन्नीसवीं सदी के मध्य म
जापान मे वग विरोधो का बढ़ना

उन्नीसवीं सदी र मध्य म जापान रा सामाजिर-आर्थिक ढाचा सामता समाज रा क्लासिरी उदाहरण प्रस्तुत रता था। जापान की आवादी म ८० प्रतिशत स अधिक किसान थ जो सिफ अपना खाना और कपडा ही नहा पैदा कर लेत थ बल्कि पयाप्त मात्रा म आदिम कृषि उपकरण भी बना लत थ। जमीन पर शक्तिशाली सामता का स्वामित्व था, किसाना का जमीन क छोटे-छोटे टुकडा पर काश्तकारी क मौरूमी अधिकार प्राप्त थ और उन्हें कई तरह की बेगार करनी होती थी और बहुत स कर अदा करन होत थ। उनकी आधी म ज्यादा फसल भू-लगान की अदायगी म ही चली जाती थी जिसे बहुत ही जटिल तरीर स निधारित किया जाता था और वह मुख्यत सामता क कर्मचारियो और कर-ठेकदारो की मन मरजी पर ही निभर करता था। अलग अलग जमीदार अपनी इच्छा क अनुसार अलग अलग तरह की वेगार मागत थ। ताकूगावा शागना के सामतवश न, जो सत्रहवी सदी के मध्य स दश पर शासन करता आया था, प्रचलित सामाजिक-आर्थिक सबधो को बनाय रखन और किसी भी भावी परिवतन की सभावना को निराकृत करन क प्रयास म एक जटिल नियम विनियम प्रणाली को लागू कर दिया था।

किसानो क निमम शोपण और प्राय दैवी आपदाओ क कारण फसल क मारे जान क फलस्वरूप व्यापक अकाल पडा करते थे और किसान कगाल होते जा रह थ। किसानो पर कर्जो की जकड लगातार बढती चली गयी और जल्दी ही वे सूदखोरो के शिकजो म फस गये, जिन्होने भूमि के हस्ता तरण पर सरकारी पाबदी के बावजूद जल्दी ही उनकी जोतो को हथिया लिया।

व्यापारी और महाजन ग्रामीण जीवन म अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका ग्रहण करत गये और इस तरह सामती सबधो के गढो का मूलोच्छेदन करन और किसान जनता की वरबादी की प्रक्रिया को तेज करन लग।

अधिकाश किसानो की घार दरिद्रता और सामती शासको की सूदखोर व्यापारियो पर बढती निर्भरता क परिणामस्वरूप अठारहवी सदी के अत और उन्नीसवी सदी क आरभ तक अत्यधिक सगीन वर्ग अतविरोध पैदा हो चुके थे। किसान विद्रोह अधिकाधिक प्रायिकता से फूटन लगे और किसान सघर्ष का प्रतीक – लट्ठे के सिर पर लटके पुआल के गट्ठर – दश भर मे दखने म आने लगे। किसानो ने लगान की वसूली करनवालो को खदेड भगान और भूस्वामी सामतो व्यापारियो तथा कर ठेकेदारो की स्वेच्छाचारिता और निरकुशता का अत करन क लिए हथियार उठा लिये। कई दारिद्र्यग्रस्त समुराई भी इस सघर्ष मे शामिल हो गये। १७०८ और १८०३ के बीच

के सौ वर्षों म ही २५८ स अधिक बड़े विद्रोह दज किय गये थे अथात पिछली सदी स तीन गुने। शहरी निधनो – दस्तकारो और छोट व्यापारिया – के असतुष्ट अशो म भी वदारी पदा हा गयी। यद्यपि इन दानो समूहा के बीच कोई सगठित मपर्क न था, फिर भी इन दाना आदोलना क एक ही समय अस्तित्व म आन क कारण स्थापित व्यवस्था क लिए एक गभीर खतरा पैदा हो गया। नगरवासी निर्धनो न बडे व्यापारिक प्रतिष्ठाना मे व्याप्त स्वच्छाचारी प्रबध का विरोध किया जिसका शासक सामतो के मग चोली-दामन का माथ था।

इम गत क बावजूद कि किसान विद्राह दश क विभिन्न भागा म अलग थलग दग ही थ और सामत आम तौर पर उन्ह कुचल दिया करत थे, उनका बार-बार होना ही तोकूगावा जापान के सामाजिक आर्थिक ढाचे को गभीर क्षति पहुचन का कारण बन गया।

उन्नीसवी शताब्दी क प्रथमार्ध म किसान विद्रोहा की अभूतपूर्व लहर आयी। मात्र दस वप (१८३३-१८४२) म ही ९९ बडे विद्राह दर्ज किये गये। यह सख्या पूरी सत्रहवी सदी क विद्रोहो क योग से भी अधिक थी। शहरी निधनो के बलव भी सख्या म अधिक और पैमान म बडे होते गय। १८३७ म ओसाका नगर क निवासियो और निकटवर्ती गावो के किसानो के सयुक्त विद्रोह न मारे देश म उत्साहपूर्ण प्रतिक्रिया पैदा की। विद्रोहिया न रईसो के मकाना को जला डाला, धान के गोदामो पर कब्जा कर लिया और चावल लोगो मे बाट दिया।

देश म चल रही दूरगामी आथिक प्रक्रियाए सामती राजनीतिक अधिरचना – तोकूगावा सैन्य सामतो की प्रमुखता मे शक्तिशाली भूस्वामी अभिजाता क अधिनायकत्व – की जडो को कमजोर कर रही थी।

जापान मे अमरीकी प्रसार

देश मे व्याप्त इस परिस्थिति म ही पूजीवादी दशो न जापानी सरकार पर दबाव डालना शुरू किया।

जून १८५३ मे कमाडोर परी की कमान मे अत्याधुनिक तोपा स लैस चार अमरीकी जगी जहाजो का बेडा जापानी तट के पास पहुचा। जापानी सरकार के एक प्रतिनिधि न माग की कि अमरीकी जहाज उरागा जलसयोजी छोडकर नागासाकी बदर चल जाय, जो विदेशिया क लिए खुला हुआ था और वहा स जापानी अधिकारियो के साथ औपचारिक सबध स्थापित कर।

लेकिन परी न इस आदेश की ओर कोइ ध्यान नही दिया और कहा कि उसे उसी स्थान पर सभी औपचारिकताओ के साथ अमरीकी राष्ट्रपति

के मत्स्य का सम्राट के हाथो में दन को राय दिया गया है। वाता के दौरान पेरी ने यह भी कहा कि वह अपने को दिये गये कार्यभार को पूरा करने के वास्ते अपने जहाजी सैनिकों को उतारने में भी नहीं झिझकेगा।

इस प्रकार के जापानी किला की मोरचाबन्दी कोई मजबूत नहीं था उनके पास कुछ दर्जन छोटी तोपें और हर तोप के लिए १० / ५ गोले थे। विदेशियो को डराने के लिए नट्ठो की बनी नकली तोपें खड़ी कर दी गयीं। लेकिन यह चालाकी अमरीकियों के आगे चली नहीं – इन तोपों में से एक तहरा के बहाव में बह गयी और तैरने लगी। जापानी सरकार अपने तटों की प्रतिरक्षा करने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थी।

जापानी अधिकारियों की असहाय स्थिति को भांपकर अमरीका अपने जहाजों को शोगुनशाही की राजधानी की नाक के नीचे तोकियो की खाड़ी में ले गये। जापानियों के पास अमरीकी दूतों की मांगों को पूरा करने के अलावा और कोई चारा नहीं रह गया। अपनी तोपों को तट पर लक्षित करके पेरी ने ३०० अफसरों और नौसैनिकों के पहरे में अमरीकी राष्ट्रपति का संदेश जापानी अधिकारियों के हाथों में दिया। अमरीकी राष्ट्रपति ने अपने संदेश में सुझाया था कि जापानी सरकार को अपनी पार्थक्यवादी नीति का तज देना चाहिए संयुक्त राज्य अमरीका के साथ व्यापारिक करार कर लेना चाहिए और अमरीकियों को अपने पोत के लिए जापानी प्रदेश पर अड्डे स्थापित करने की अनुमति दे देनी चाहिए। पेरी ने एलान किया कि अगर ये प्रस्ताव स्वीकार नहीं किये गये, तो संयुक्त राज्य अमरीका उसके खिलाफ और भी ज्यादा शक्तिशाली बेड़ा भेजेगा। उसने अगले साल के अप्रैल या मई महीने तक जवाब दिये जाने की मांग की।

पेरी ने जापानियों को मुहलत इसलिए दी थी कि उसे जल्दी से जल्दी चीन पहुंचना था जहां ताइ पिंग विद्रोह पीकिंग में इतना कठिनाई से वसूल की हुई रियायतों के लिए खतरा बन गया था।

अमरीकियों ने प्रतिक्रियावादी चिंग शासन का समर्थन करने का निश्चय किया और बदले में उससे कई और रियायतें मांगी। सामंत विरोधी क्रांति को कुचलने के लिए और चीन में और भी अधिक प्रवेश करने के वास्ते स्थिति का लाभ उठाने की आशा में पेरी जापान से जल्दी ही चला गया।

इधर शोगुन सरकार पूरी तरह से दहशत में आयी हुई थी। पेरी के लौटने की तिथि जैसे जैसे पास आती गयी शासक हलकों में मतभेद उतने ही अधिक प्रखर होते चले गये। लेकिन जापान की सैनिक दुर्बलता इतनी प्रत्यक्ष थी कि बहुमत अमरीकी प्रस्ताव को स्वीकार करने के पक्ष में ही था।

फरवरी, १८५४ में अमरीकी बेड़ा फिर तोकियो की खाड़ी में आ पहुंचा। उसमें अब नौ जंगी जहाज और कुल दो हजार नाविक और सैनिक थे।

अमरीकी अब और भी ज्यादा उद्दंडता से पेश आये। जापानियों को डराने के लिए जहाज़ लगातार तोपों में गोले भरकर खड़े थे। पेरी ने लड़ाई शुरू करने की धमकी देते हुए यह माँग की कि जापानी उसी तरह की असमान संधि पर हस्ताक्षर करे जैसी संयुक्त राज्य अमरीका ने १८४४ में चीन के साथ की सम्पन्न थी। राजधानी को नष्ट करने को तैयार अमरीकी तोपों के डर से जापानी सरकार के पास इस तरह की संधि सम्पन्न करने के अलावा और कोई चारा न था।

इस संधि के अंतर्गत जापान को शीमोदा तथा हाकोदाते बंदर अमरीकी जहाजों के लिए खोलने, शीमोदा में अमरीकी कांसुलेट की स्थापना पर सहमत होना, अमरीकियों को जापान में ईंधन तथा खाद्य सामग्री खरीदने का अधिकार देना और किसी भी प्रकार की विदेशी मुद्रा को आंतरिक परिसंचरण के लिए स्वीकार करना पड़ा। जापान पर थोपी गयी इस संधि ने अमरीकी पूँजी के एक और देश में प्रवेश करने का पथ प्रशस्त कर दिया। पेरी के उद्दंड व्यवहार की संयुक्त राज्य अमरीका में बड़े जोश के साथ सराहना की गयी और सरकार ने उसे २०००० डालर का इनाम दिया।

संयुक्त राज्य अमरीका का अनुकरण करते हुए १८५४ में ब्रिटेन ने १८५७ में हालैंड ने, १८५८ में फ्रांस ने और बाद में कई अन्य देशों ने भी जापान पर ऐसी ही संधियाँ थोपीं। फरवरी १८५५ में जापान और रूस के बीच दो साल से चली आ रही वार्ता आखिर समाप्त हुई और पहली रूस-जापान संधि पर हस्ताक्षर हुए, जिसने रूसी जहाज़ों को शीमोदा, हाकोदाते तथा नागासाकी बंदरगाहों में प्रवेश करने का अधिकार प्रदान किया।

जापान पर थोपी गयी इन असमान संधियों ने सामंती व्यवस्था के संकट को और भी गंभीर बना दिया। देशी मंडी के विदेशी माल से पट जाने से जापानी उद्योग को भारी चोट पहुँची। इन संधियों के निष्पादन ने शोगनशाही के प्रति और भी सक्रिय विरोध पैदा किया। भूस्वामी अभिजातों, निर्धनताग्रस्त समुराइयों के कुछ अंशों, सम्राट के क्योतो में स्थित दरबारियों और विदेशी व्यापारियों की प्रतियोगिता से आतंकित पूँजीपतियों के एक हिस्से तक ने शोगनशाही की संधियों और नीति की आलोचना की। ये सभी अलग-अलग विरोधी दल शाही दरबार के गिर्द एकजुट होने लगे जो पारंपरिक रूढ़िवादी नीति का पक्षधर था।

माइजी पुनःस्थापन

शोगन सरकार विदेशी शक्तियों से निष्पादित संधियों की विभिन्न शर्तों को ईमानदारी के साथ पूरा करती रही, मगर साथ ही वह विदेशियों के साथ संघर्ष करने की गुप्त तैयारियाँ भी करती जा रही थी। सरकार

मानती थी कि इस तरीके से वह शाही दरबार की स्थिति को कमजोर कर सकेगी। शाही दरबार विदेशियों के प्रवेश और प्रभाव का घोर विरोध करके जनसाधारण का समर्थन प्राप्त करने की कोशिश कर रहा था। इस बीच कुछ अंग्रेजों की हत्या कर दी गयी और विदेशियों की कुछ इमारतों को जला डाला गया। पश्चिमी शक्तियों ने इसके जवाब में तटीय नगरों पर बमबारी करके दसियों निर्दोष व्यक्तियों की जानें ले लीं।

१८६३ में ब्रिटिश बेड़े ने सात्सूमा राज के कागोशीमा पर दंडात्मक बमबारी की। १८६४ में पुनः ब्रिटिश, फ्रांसीसी, अमरीकी तथा डच बेड़ों ने शीमानोसेकी पर गोले बरसाये। इन कार्रवाइयों और यूरोप व अमरीका की पूंजीवादी शक्तियों के अन्य दमनात्मक कदमों ने जनसाधारण के मन में विदेशियों के प्रति अभूतपूर्व घृणा भर दी। देश भर में जापानियों के एकबद्ध होने और विदेशियों को खदेड़ बाहर करने की आवाज उठने लगी। सात्सूमा और मोरी (चोश्यू) के राजाओं की सेनाओं ने विदेशियों को जापान से निकाल बाहर करने के लिए कदम न उठाये जाने पर शोगनशाही के खिलाफ विद्रोह कर देने की धमकी दे दी।

शोगनशाही ने इन विद्रोही राजाओं को कुचलने के लिए सेनाएं भेजीं, पर साथ ही अंग्रेजों और फ्रांसीसियों को अपने दूतावासों की रक्षा करने के वास्ते फौजी टुकड़ियां भेजने की अनुमति देने से भी इन्कार कर दिया। उधर आयातित मालों पर सीमाशुल्क घटाकर मात्र ५ प्रतिशत कर दिया गया था। इन सभी बातों से जापान में स्थिति और भी अधिक संगीन हो गयी थी।

साम्राज्यवादी शक्तियां के राजनयन देश के आंतरिक मामलों में सक्रिय हस्तक्षेप कर रहे थे – फ्रांस शोगनशाही की सहायता कर रहा था (उसकी सेनाओं को हथियारों का प्रदाय करके और राजाओं के विरुद्ध संघर्ष के लिए धन देकर) तो ब्रिटेन इस आशा से शोगन विरोधी शक्तियों का समर्थन कर रहा था कि भविष्य में केंद्रीय सत्ता कमजोर हो जायेगी।

इस बीच देश में कृषक संघर्ष भी तेजी से फैलने लगा था। एक के बाद एक करके सामंत विरोधी बलवे फूटते जा रहे थे। अकेले कीई प्रांत में ही १,३०,००० किसानों ने बलवों में हिस्सा लिया था। १८६६ १८६७ में सारे मध्य जापान में किसान बलवे हुए। विरोधी शक्तियां नगरों में भी बलवती होती गयीं जहां इस समय तक उदीयमान जापानी बुद्धिजीवी समुदाय यूरोपीय लोकतंत्रवादी चिंतकों के प्रगतिशील विचारों से अवगत होने लग गया था। धीरे धीरे बूर्जुआ विपक्ष भी शोगनशाही के खिलाफ संघर्ष में शामिल हो गया जो उपरोक्त कारणों के अलावा देश के यूरोपीय औद्योगिक मालों के लिए द्वार खोल दिये जाने के विरुद्ध था। इसी प्रकार कई विपन्न समुराई भी इस संघर्ष में उतर आये।

लेकिन इस संघर्ष की समाहारी शक्ति दक्षिण तथा दक्षिण-पश्चिम

जापान के सामंत कुल थे जो विदेशी शक्तियों के साथ सबसे सक्रिय व्यापार किया करते थे। उनके कुछ प्रमुख नेता युवा समुराई थे। दक्षिण पश्चिम के राजाओं (सात्सूमा चोस्यू तथा तोसा) के सहबंध को कुछ महाजन परिवारों तथा सम्राट के दरबारी अभिजातों का दृढ समर्थन प्राप्त था। अधभाड़ैत और अर्धस्वैच्छिक सैनिकों के कई दस्ते और विपन्न समुराइयों दस्तकारों किसानों तथा शहरी गरीबों से बने कई दस्ते इन राजाओं की सेनाओं में शामिल हो गये। इस सहबंध के नेतृत्व में अभिजात वर्ग के उन अंशों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की जो पिछले कुछ समय से व्यापार और उद्योग जैसे बूर्जुआ व्यवसायों में रुचि लेने लगे थे। औपचारिक रूप में विद्रोह का लक्ष्य सम्राट के अधिकारों का पुनःस्थापन करना था जिन्हें शोगनशाही ने हड़प लिया था। १८६७ में मुत्सूहीतो नामक पंद्रहवर्षीय किशोर सिंहासनस्थ था जो शोगनशाही विरोधी सहबंध के हाथों का खिलौना था।

अक्तूबर १८६७ में इस सहबंध ने शोगन केइकी से मांग की कि वह सम्राट को उसकी समस्त पुरानी सत्ता और अधिकारों का प्रत्यावर्तन करे। स्थिति की गंभीरता को समझकर शोगन इस्तीफा देने के लिए राजी हो गया और फिर ओसाका में अपने गढ में छिपकर अवश्यंभावी लड़ाई की तैयारी करने लग गया। शोगन अब भी देश का प्रमुख भूस्वामी था। उसके पास न केवल विशाल जागीर थी, बल्कि काफी बड़ी सेना भी थी जिसे फ्रांसीसियों ने प्रशिक्षित किया था। इस सेना को साथ लेकर वह उसी साल शत्रु का सामना करने के लिए निकला किंतु फूशीमी की लड़ाई में उसे मुंह की खानी पड़ी। लड़ाइयां पूरे १८६८ और १८६९ में चलती रहीं लेकिन जीत शोगनशाही विरोधी सहबंध की ही हुई।

नयी सरकार में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका सात्सूमा कुल के प्रतिनिधि – ओकूबो तथा कीदो – अदा करने लगे। उन्होंने देश का एकीकरण और शस्त्रास्त्र तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में यूरोपीयकरण करने का प्रयास किया। यह नीति किसानों के हितों को संतुष्ट नहीं कर पायी जो कृषि में सामंती स्वरूपों का उन्मूलन किये जाने और जमीन उन्हें दिये जाने की मांग कर रहे थे। शोगनशाही का तख्ता उलटे जाने से ही कृषक संघर्ष का अंत नहीं हो गया। १८६८ और १८७८ की अवधि के बीच १८५ बड़े कृषक विद्रोह हुए जिनमें से कुछ में तो ढाई लाख तक लोगों ने भाग लिया था।

बूर्जुआ वर्ग और भूस्वामी तबके किसानों पर संयुक्त आक्रमण करने के लिए और इस तरह के विप्लवों को लहू की नदियां बहाकर कुचल देने के लिए एक हो गये।

१८६७-१८६८ की घटनाएं जापान के इतिहास में माइजी पुनःस्थापन या माइजी प्रत्यावर्तन के नाम से विज्ञात हैं क्योंकि माइजी (अर्थात प्रबुद्ध शासन) सम्राट मुत्सूहीतो के शासनकाल को दिया गया अधिकृत नाम है।

बारहवा अध्याय

यूरोप तथा अमरीका के राष्ट्रीय बूर्जुआ आदोलन

१८५०-१८६० मे पूजीवाद का विकास

यद्यपि १८४८ की क्रातिया की परिणति विजय म नही हो पायी थी, फिर भी प्रतिक्राति की शक्तिया इस योग्य नही रह गयी थी कि सामाजिक प्रगति के प्रसार को रोक पाये। उन्नीसवी सदी के उत्तरार्ध म इन सामाजिक परिवतनो के मूल म यूरोप तथा अमरीका म पूजीवाद की तीव्र वृद्धि थी। यूरोप के अधिकाश देशो और सयुक्त राज्य अमरीका म इस समय तक यात्रिक उत्पादन शारीरिक श्रम को विस्थापित कर चुका था। उद्योग की सभी शाखाओ मे विराट पूजीवादी कारखाने पैदा होने लग गये थे। महत्वपूर्ण प्रौद्योगिक नवाचार इन देशो के अर्थतत्र का कायाकल्प करने लग गये थे। लकडी के स्थान पर कोयले और फिर कोयले के स्थान पर तेल के ईधन का मुख्य स्रोत बन जाने से भी औद्योगिक प्रगति म योग मिला। हेनरी बेसेमर द्वारा आविष्कृत पिघले कच्चे लोहे को इस्पात म परिणत करने की विधि और खुली भट्ठियो ने धातु उत्पादन को कही अधिक तीव्र तथा समुन्नत बना दिया था। धातुकर्म मे तीव्र प्रगति ने उत्पादन के अन्य क्षेत्रो के लिए उद्दीपक का कार्य किया। इस काल म रेलो का भी तीव्र प्रसार हुआ। ससार के रेलमार्गो की कुल लबाई, जो १८३० मे मात्र ३३२ किलोमीटर थी १८७० म २,०० ००० किलोमीटर से अधिक हो चुकी थी। भौतिकी, और विशेषकर विद्युत ऊर्जा के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण खोजो ने शीघ्र ही सचार के एक सर्वथा नवीन रूप – तार – को जन्म दे दिया।

१८५९ म चार्ल्स डार्विन की विख्यात कृति 'प्राकृतिक वरण द्वारा स्पीशीज़ का उद्भव' का प्रकाशन हुआ जिसने समस्त प्रकृतिविज्ञान के आगामी विकास पर निर्णायक प्रभाव डाला। कृपिशास्त्र म भी महत्वपूर्ण प्रगति की गयी। कृषि मे अधिक प्रगतिशील विधिया प्रचलन मे आयी।

उन्नीसवीं सदी के छठे दशक के आरभ म सभी विकसित औद्योगिक देशो म भारी औद्योगिक प्रगति दिखने म आने लगी। किंतु १८५७ मे यूरोप और अमरीका पर एक नये ही प्रकार का सकट -- अत्युत्पादन का सकट -- आ पडा। यह पहला अवसर था कि जब इतने गभीर परिमाण के सकट का अतर्राष्ट्रीय पैमाने पर सामना करना पडा था। लेकिन यह कोई अतिम अवसर नही था -- इसके बाद म इस प्रकार के आर्थिक सकट पूजीवादी विश्व मे नियमित अतरालो के बाद -- लगभग हर दस वर्ष के बाद -- आते ही रहे है।

दुनिया की निर्माणशाला

उस समय ब्रिटेन ससार का सबसे उन्नत पूजीवादी देश था। अपने विराट साम्राज्य के लोगो को निर्मम शोषण करके और उपनिवेशो से अपार सपदा हडपकर ब्रिटिश बूर्जुआजी न अपने देश का अत्यधिक तेजी के साथ उद्योगी करण कर लिया था। १८७० तक ब्रिटेन मुख्यत एक शहरी देश बन चुका था जिसकी दो-तिहाई आबादी नगरो म ही निवास करती थी। ब्रिटेन दुनिया के आधे कच्चे लोहे का उत्पादन करता था और उसके कारखाने इतना सूती माल तैयार करते थ कि जितना शेष ससार के सब कारखाने कुल मिलाकर भी नही पैदा करते थे। उद्योग के दूसरे क्षेत्रो म भी ब्रिटेन का प्रमुख स्थान प्राप्त था -- उसका विदेश व्यापार सारी दुनिया म सबसे अधिक था और उसीके पास सबसे बडा व्यापारिक बेडा भी था।

विक्टोरियाई युग म, अर्थात महारानी विक्टोरिया के शासनकाल (१८३७-१९०१) म ब्रिटेन अपनी सत्ता तथा शक्ति के चरम पर था। लेकिन यह 'आनदमय इगलैड" सपत्ति के अपने अत्यत असमान वितरण के कारण बहुतो के लिए अत्यधिक विषादमय भी था। कारखानास्वामियो बैंकपतियो जहाजी कपनियो के मालिको और जमीदारो ने इस काल म बेशुमार सपदा जमा की। देश की आतरिक तथा विदेश नीतियो न उनके हितो का सवर्धन किया और भारत, चीन तथा अफ्रीका मे अविराम औपनिवेशिक युद्धो ने उन्हे अपार मुनाफे प्रदान किये। १८५३-१८५६ म ब्रिटेन ने फ्रास तथा तुर्की के साथ मिलकर क्रीमियाई युद्ध मे रूस के विरुद्ध लडाई की। दोनो ही पक्षो के शासक वर्गो द्वारा जनता पर थोपे गये इस युद्ध मे सबसे अधिक कष्ट आम लोगो को ही झेलने पडे।

ब्रिटेन के मेहनतकशो के रहन सहन और काम करने की अवस्थाए अब भी अत्यत कठोर थी। महान अग्रेज उपन्यासकार चार्ल्स डिकन्स (१८१२ १८७०) न उदास घर, 'कठिन समय और 'नन्ही डोरिट जैसी अपनी उस समय की विख्यात कृतियो म विक्टोरियाई इगलैड के निर्दय और मक्कार

अमीरा का और सीधे सादे ईमानदार लोगों की मुसीबतों और कष्टों का बडा ही मर्मस्पर्शी और सच्चा चित्र पेश किया है।

ब्रिटिश उपनिवेशों में रहनेवाले करोडों पराधीन लोगों की तो बात ही क्या आयरलैंड में भी किसान और निर्धन लोग इंगलैंड के निर्मम शोषण के शिकार थे और न्यूज़ीलैंड के माओरियों की तरह भौतिक विनाश के कगार पर खड़े थे।

ब्रिटेन का श्रमिक वर्ग इस समय तक काफी बढ़ चुका था और अधिक संगठित भी हो गया था। अधिकाधिक मजदूरों ने मजदूर संघों या ट्रेड-यूनियनों शामिल होना शुरू कर दिया था। हड़तालों और राजनीतिक प्रदर्शनों के ज़रिये ब्रिटिश मजदूरों ने शासक वर्गों से कई रिआयतें वसूल कर ली थीं, जैसे दस घंटे का कार्य दिवस और बाल श्रम संरक्षण संबंधी कानून। यह बहुत हद तक मजदूरों के दबाव के कारण ही था कि १८६७ में दूसरा सुधार विधेयक पेश किया गया जिसने आबादी के कहीं व्यापक हिस्से को मताधिकार प्रदान किया। श्रमिक वर्ग जितना संख्या में बढ़ता और राजनीतिक रूप से अधिक सक्रिय होता गया, धूर्त पूंजीपति वर्ग उतना ही अधिक तरह-तरह की कुटिल चालों को अपनाता गया। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण मजदूर वर्ग की कतारों में फूट डालने का अभियान था। पूंजीपतियों ने औपनिवेशिक शोषण के जरिये प्राप्त अपार मुनाफों के एक हिस्से से सर्वहारा के सबसे संपन्न अंशक – कुशल मजदूरों – को खरीद लेने का निश्चय किया। इन मजदूरों को काफी ऊंचे वेतन देकर तथा उनके लिए कई और विशेषाधिकार और सुविधाएं पैदा करके बूर्जुआजी ने एक तरह का 'औद्योगिक अभिजात वर्ग' पैदा कर दिया। इस अभिजात वर्ग ने जल्दी ही अपने को सर्वहारा के व्यापक समूह से अलग कर लिया और धीरे धीरे बूर्जुआज़ी के हाथों की कठपुतली बन गया।

सर्वहारा की कतारों में फूट डालने के अपने प्रयासों द्वारा और जब-तब सामाजिक तथा श्रम विधान में कुछ लोकतांत्रिक रिआयतें देकर ब्रिटिश शासक वर्गों ने पिछली सदी के छठे सातवें दशकों में सेना व पुलिस का सहारा लिये बिना ही अपनी स्थिति का सुदृढीकरण करने में सफलता प्राप्त कर ली।

अमरीकी गृहयुद्ध

लेकिन उस समय भी कि जब इंगलैंड में पूंजीवाद काफी उन्नत हो चुका था, यूरोप तथा अमरीका के अन्य देशों में अनेक बाधाएं उसके विकास को अवरुद्ध कर रही थीं।

पूरी उन्नीसवी शताब्दी भर सयुक्त राज्य अमरीका म पूजीवाद बहुत तजी के साथ विकसित होता रहा था। इडियनो को उनकी जगहो स खदेड बाहर करते हुए आबादकारो के पश्चिम की तरफ बढते जान क साथ साथ नयी-नयी जमीनो क उपयोजन और श्रमिको की कमी (आप्रवासियो की बढती बाढ के बावजूद) न मशीनो के तीव्र और व्यापक पैमान पर प्रचलन को प्रोत्साहित किया था। फिर भी सयुक्त राज्य अमरीका म पूजीवाद क विकास की गति अनियमित ही रही। पूजीवादी उत्पादन सबध उत्तर म जहा विशाल औद्योगिक कद्र उदित हो रह थ और पश्चिम म, जो मुख्यत कृषिप्रधान था, तो तेजी से अभिभावी हो गय थे, लेकिन दक्षिण म अभी भी दास श्रम का ही उपयोग किया जा रहा था और दास श्रम का उपयोग करनवाले बागानो की सख्या वस्तुत बढ ही रही थी। सयुक्त राज्य अमरीका का दक्षिणी भाग उस समय भी दुनिया भर म दास श्रम का मुख्य कद्र था १८६० मे वहा चालीस लाख स अधिक नीग्रो गुलाम थ। नीग्रो दासो को बहिचक बचा विकलाग किया या जान स मारा जा सकता था। बरहम मालिक कोडा स पिटाइ की धमकी दकर उन्ह अपन कपास या तबाकू बागानो पर सुबह स लेकर रात तक काम करन क लिए मजबूर कर सकत थे।

इन दोनो सर्वथा भिन्न व्यवस्थाओ – उत्तर तथा पश्चिम मे पूजीवादी उजरती श्रम पर आधारित व्यवस्था और दक्षिण म दासस्वामित्व पर आधारित व्यवस्था – का देर-अबेर आपस म टकराव होना अवश्यभावी था।

समय क साथ दोनो व्यवस्थाओ म अतर्विरोध बढते गये और कभी कभी तज झगड भी पैदा होते रह। आखिर, १८६१ मे एक गरीब फार्मर क बेटे, निष्कपट लोकतत्रवादी और दासप्रथा क उत्कट विरोधी अब्राहम लिकन (१८०९ १८६५) के राष्ट्रपति चुने जाने क बाद, दक्षिण क दासस्वामियो न सघीय सरकार के विरुद्ध खुले आम विद्रोह कर दिया और ग्यारह दक्षिणी राज्यो क पृथक सघ – मडलित राज्य अमरीका (कानफेडेरेटड स्टेटस ऑफ अमरिका) – की स्थापना की जिसकी अपनी सरकार और राष्ट्रपति थे। धनी दासस्वामी बागान मालिक कर्नल जेफरसन डेविस को मडलित राज्यो का राष्ट्रपति चुना गया जो बेझिझक खुले तौर पर यह कहता था कि नीग्रो गोरे आदमी से नीचा होता है और उसके लिए गुलामी ही सामान्य अवस्था है।

१८६१ स १८६५ तक सयुक्त राज्य अमरीका भयकर गृहयुद्ध की जकड म रहा। आरभ मे मडलित राज्यो का पलडा भारी था क्योकि वे युद्धकला म अधिक प्रवीण थे। लेकिन जैसे जैसे अधिकाधिक अमरीकी लोग दक्षिण के विरुद्ध युद्ध मे शामिल होते गय और युद्ध अधिक क्रातिकारी स्वरूप ग्रहण करता गया, वैसे वैसे स्थिति बदलती गयी। युद्ध मे निर्णायक मोड

अब्राहम लिंकन

तब आया, जब अब्राहम लिंकन ने काश्त करने को तैयार सभी लोगों को जमीन दिये जाने का कानून (वासभूमि अधिनियम) और १ जनवरी १८६३ से दक्षिणी विद्रोहियों के सभी दासों के मुक्त किये जाने का कानून जारी किया। ये अत्यधिक क्रांतिकारी महत्व के कानून थे और उन्होंने उत्तरी सेना में बहुत से स्वैच्छिक सैनिकों को आकर्षित किया। इसके बाद से दक्षिणवाले लगातार हार खाते गये और १८६५ के वसंत तक उन्हें पूर्ण रूप से पराजित कर दिया गया।

गृहयुद्ध जिसने दासप्रथा का उन्मूलन किया, अमरीकी जनगण के इतिहास का एक शौर्यमय अध्याय है और एक प्रकार से दूसरी क्रांति जैसा ही है। लेकिन जनता इस शौर्यमय संघर्ष में प्राप्त विजय के सुफलों को ज्यादा

जनरल ग्राट की सेना मे नीग्रो स्वयसेवक भरती हो रहे है

दिन अपन हाथो म नही रख पायी। दक्षिणवालो के हथियार डालन के पाच दिन वाद, १४ अप्रैल, १८६५ का पराजित दामस्वामियो क एक भडैत न राष्टपति लिकन की गाली मारकर हत्या कर दी जिमन गहयुद्ध के तमाम नाजुक दौर म अमरीकी जनता का शानदार नतत्व किया था। बाद के वर्षो म वडे वूर्जुआ वग न देश के शासन पर अपना दढ नियत्रण स्थापित कर लिया। अपनी उन्नति म दासप्रथा की बाधा न रहन के वाद पूजीवाद न सयुक्त राज्य अमरीका म तीव्र प्रगति की और विकास की गति म यूराप क पुरान पूजीवादी राज्यो को भी पीछे छोड दिया।

इटली का एकीकरण

यूराप के कितन ही देशो और जनगण क लिए राष्ट्रीय एकता विदेशी आधीनता स मुक्ति और स्वतत्र राज्यत्व प्राप्त करना अभी शेप ही था। इटली म यह कायभार इम समय विशेपकर महत्वपूण हो गया था। १८४८-१८४९ की असफल क्रातियो क बाद इटली अब भी आठ अलग-अलग राज्यो म बटा हुआ था रोम म फ्रासीसी सेनाए तैनात थी और उत्तर म लबार्डी तथा वेनिस आस्ट्रिया के हाथो म थ।

देशभक्त इतालवी विदेशी उत्पीडकों को खदेड बाहर करने और इटली का एक संयुक्त स्वतंत्र राज्य के रूप में एकीकरण करने के प्रस्ताव थे। लेकिन इस लक्ष्य की सिद्धि के बारे में दो भिन्न भिन्न दृष्टिकोण थे।

उत्तर में, प्येमोंत सार्दीनिया राज्य में संभ्रात हलके – कारखानामालिक, उदार जमींदार, उच्च सरकारी अधिकारी, आदि – जो जनसाधारण से डरते और उन पर अविश्वास करते थे, इस राय के थे कि देश का एकीकरण जनसाधारण को शामिल किये बिना, राजनयिक तथा राजनीतिक जोड़तोड़ के जरिये प्येमोंती राजतंत्र का केंद्र बनाकर "ऊपर से" कराया जाना चाहिए। इस दृष्टिकोण का मुख्य प्रतिपादक प्रधान मंत्री, धनी भूस्वामी काउंट कामिलो बेंसो दी कवूर था। कवूर ने लुई नेपोलियन के फ्रांस के साथ घनिष्ठतर संबंध कायम करने और इस प्रकार उससे एकीकरण के हेतु के लिए सैनिक तथा राजनीतिक समर्थन प्राप्त करने की आशा में प्येमोंत को क्रीमियाई युद्ध (१८५३-१८५६) में उलझा दिया था। किंतु इस युद्ध में भाग लेने से इतालवी जनता के हितों का किसी भी प्रकार संवर्धन नहीं हुआ – इस अभियान का जो एकमात्र निशान बच रहा, वह सेवास्तोपोल में इतालवी कब्रिस्तान था। १८५९ में, कवूर तथा नेपोलियन तृतीय में गुप्त समझौता होने के बाद फ्रांस और सार्दीनिया ने आस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया और माजेंता (४ जून) तथा सोलफेरीनो (२४ जून) की लडाइयों में दो महत्वपूर्ण विजय प्राप्त कीं। किंतु जिस समय आस्ट्रिया आसन्न पराजय के कगार पर था, उसी समय नेपोलियन तृतीय ने अपने इतालवी मित्रों के साथ विश्वासघात करके चुपे छिपे आस्ट्रिया के साथ पहले युद्ध विराम और बाद में संधि कर ली, जिसके अंतर्गत लबार्डी प्येमोंत को दे दिया गया, वेनिस आस्ट्रिया के ही अधिकार में रहा और सवोय तथा नीस फ्रांस को दे दिये गये। इस प्रकार कवूर की चालबाजियों से कोई बहुत हासिल नहीं हो पाया।

लेकिन इटली में राजनीतिक एकीकरण के लिए एक और आंदोलन भी चल रहा था। यह युवा इटली आंदोलन (जियोवाने इतालिया) था जिसके नेता महान इतालवी देशभक्त जुइसेपी मज्जीनी (१८०५-१८७२) और जुइसेपी गैरिबाल्डी (१८०७-१८८२) थे। युवा इटली आंदोलन विदेशी सरकारों और राजनीतिक साठगांठ से कोई आशा नहीं करता था, बल्कि अपने सदस्यों की हिम्मत और उनके साहसिक क्रांतिकारी कार्य पर ही निर्भर करता था। जनसाधारण से डरने के बजाय वह उनका समर्थन प्राप्त करने का यत्न करता था। जब कवूर की 'ऊपर से क्रांति' करने की अवसरवादी योजनाएं विफल हो गयीं, तो युवा ... आंदोलन का प्रभाव देश में तेजी के साथ फैलने लगा ... सी स... । के एकीकरण के संघर्ष में मुख्य भूमिका अदा ...

१८५९ मे युवा इटली के नेतृत्व मे उत्तरी इटली के पामा मादना तथा तोस्काना (टस्कनी) रजवाडो मे और पाप के अधीन रोमान्या म फूटे जन विद्रोहो ने इनके राजाओ का तख्ता उलट दिया और वे प्येमात राज के साथ मिल गये। कुछ ही बाद दोनो सिसली राज्य म भी जन विद्रोह फूट पडा और विद्रोह को सहायता प्रदान करन क लिए गैरिबाल्डी वहा लपका।

मई, १८६० मे एक दिन दो जहाजो न सिसली क चट्टानी तटा के पास लगर डाला और तट पर लाल कुरते पहन सशस्त्र दस्ता का उतारा। ये गैरिबाल्डी के मशहूर 'एक हजार" लाल कुरतेवाला की वाहिनी थी। "वीवा ल'इतालिया! (इटली जिदाबाद) के जगी नारो के साथ व सरकारी फौजो से लोहा लेने के लिए चल दिये। स्थानीय विद्रोही किसाना के समर्थन से गैरिबाल्डी के लाल कुरतेवालो न नेपल्स के राजा की सना को करारी मात दी। इसके बाद दल के दल स्वयसेवको क भरती होन स सख्या म खासी बढी उसकी सेना ने द्रुत गति से बढते हुए और सामने आनवाली शाही रेजीमेटो का सफाया करते हुए सारे दक्षिणी इटली को पार किया और नेपल्स मे जा घुसी। कुछ ही समय के भीतर नपल्स के बूर्बो राजतत्र का खात्मा कर दिया गया। हर्षविभोर नेपल्स न गैरिबाल्डी का राष्ट्रीय वीर के रूप मे स्वागत किया। लेकिन गैरिबाल्डी और उसके साथी देश का गणतत्रीय आधार पर एकीकरण करने म असमर्थ सिद्ध हुए। १८६० के शरद म उत्तर तथा दक्षिण का प्येमोत सार्दीनिया के राजा के अधीन एकीकरण हो गया। राजा विक्तोर एम्मानुएल द्वितीय न नेपल्स म विजय प्रवेश किया जहा गैरिबाल्डी ने जनता द्वारा प्रदत्त अधिनायकत्व के अपन अधिकार को स्वेच्छया उसे समर्पित कर दिया। अब उसकी सेवाओ की और आवश्यकता नही रह गयी थी और इस जनश्रुत वीर को अपन जन्मस्थान मछुआ के टापू काप्रेरा लौटकर विस्मृत हो जाना पडा। हर्जेन के शब्दो म उसे यात्री को गतव्यस्थान पर पहुचा देनेवाले गाडीवान' की तरह छोड दिया गया। मार्च १८६१ म ट्यूरिन म सयुक्त इटली राज्य की उद्घोषणा की गयी और बादशाह विक्तोर एम्मानुएल को उसका शासक घोषित किया गया।

लेकिन देश का पूर्ण एकीकरण कुछ वर्ष बाद ही सपन्न हो पाया। १८६६ म आस्ट्रिया-प्रशा युद्ध के परिणामस्वरूप वेनिस प्रदेश को मुक्त किया गया और सितबर, १८७० म द्वितीय साम्राज्य के पतन के बाद पुरातन राजधानी रोम का फिर इटली के साथ सम्मिलन हो गया।

इटली का एकीकरण दो समातर प्रक्रियाओ द्वारा हुआ था – एक ऊपर से और दूसरी नीचे से'। इसमे निर्णायक भूमिका गैरिबाल्डी और मज्जीनी के नतृत्व म जनसाधारण की क्रातिकारी कार्रवाइयो ने अदा की थी। किंतु व इस प्रक्रिया की उसकी तर्कसगत परिणति – गणराज्य की

गैरिब

स्थापना – तक ने जान म
मत्ता अपन हाथो म ल लन
क रूप म एकीकृत करने म
दश जब सयुक्त हो था
डग का प

उदार बूर्जुआजी
राजतत्र
यह तथ्य
महत्त

गया। फिर भी रूमानी राज्य का एकीकरण स्वय म एक प्रगतिशील कदम था। यद्यपि रूमानिया अब भी औपचारिक रूप म तुर्की क सुल्तान का अपना अधिराज स्वीकार करता था फिर भी व्यवहार म १८५६ क बाद स वह पूणत स्वतत्र राज्य ही था।

क्रीट का विद्रोह

लेकिन इस काल क सभी मुक्ति सग्रामो का अत विजय म नही हुआ। १८६६ मे क्रीट द्वीप पर विद्रोह फूट पडा, जहा तुर्को क निर्मम उत्पीडन ने लोगो को निराशोन्मत्त कर दिया था और व अपने का विदेशी जूए म मुक्त करन क लिए एकजान होकर मैदान म उतर आये। क्रीट की जनता क न्याय्य हेतु के लिए सघर्ष करने के वास्ते यूरोप स कितन ही स्वातत्र्यप्रेमी भी वहा पहुच गय। इन लोगो म ब्लाकी का मित्र फ्रासीसी क्रातिकारी गुस्ताव फ्लुरास (१८३८-१८७१) भी था। किंतु उन्ह क्रीट की सहायता के लिए कोई भी महाशक्ति आगे नही आयी और १८६६ म इस विद्रोह का पाशविक निर्ममता के साथ कुचल दिया गया।

१८६३ का पोल विद्रोह

अठारहवी शताब्दी मे रूस प्रशा तथा आस्ट्रिया द्वारा पोलैड के विभाजित किये जाने के बाद से वहा जनता का मुक्ति सग्राम अविराम चलता रहा था। पोल जन अपने देश को विदेशी जूए स मुक्त करने और उसके एकीकरण के लिए लडते रहे। यह कार्य इसलिए और भी मुश्किल था कि पोलैड की उत्पीडक यूरोप की तीन बडी शक्तिया थी—जारशाही रूस प्रशा राज्य (बाद मे जर्मनी) और आस्ट्रियाई साम्राज्य। इतने शक्तिशाली शत्रुओ के सामने सफलता पाने के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण था कि सारी पोल जनता एक हो। पोल मुक्ति आदोलन का दुर्भाग्य यह था कि उसक नेता अभिजात तथा भूस्वामी थे, जो कृषक समुदाय स डरते थे और जिन्होने उसपर विश्वास नही किया व उसकी उचित मागो की उपेक्षा की। उनमे से कुछ नेताओ को आशा थी कि उन्ह पश्चिमी शक्तियो से सहायता मिल जायगी, क्योकि वे देश की प्रभुता की पुनर्स्थापना म पोल जनता का नही, बल्कि पश्चिमी शक्तियो को ही निर्णायक कारक मानते थे।

१८६३ के विद्रोह म प्रदर्शित अनुपम साहस और शौर्य के बावजूद पोल मुक्ति सग्राम की यह अतर्निहित कमजोरी ही उसकी असफलता का मुख्य कारण बनी। विद्रोह के नेता किसानो स पहले की तरह ही डरते रहे

और उनके प्रति बहुत ढुलमुल नीति अपनाते रहे जिसके कारण वे उन्हें आरम्भ में ही अपने गिर्द एकत्र नहीं कर सके। इसी बीच जारशाही रूस और प्रशा में जल्दी ही इस बात में सहमति हो गयी कि क्या कार्यनीति अपनायी जानी चाहिए जबकि अपने ही क्रुटिन इरादों से निर्देशित पश्चिमी शक्तियों ने पोलों की सहायता करने के प्रश्न की गंभीरता से जांचा भी नहीं। अंग्रेज और फ्रांसीसी मजदूरों और रूस के प्रगतिशील हलकों ने तुरंत पोल जनता के प्रति अपनी सहानुभूति को व्यक्त किया किंतु वे उन्हें नैतिक समर्थन के सिवा और कुछ नहीं दे सकते थे। परिस्थितियां ऐसी थीं कि १८६४ के वसंत तक इस विद्रोह को निर्ममतापूर्वक कुचल दिया गया।

जर्मनी का एकीकरण

जर्मनों के सम्मुख भी अपने देश का एकीकरण करने का कार्यभार अभी बाकी था। १८४८ की क्रांति के कुचले जाने के बाद आयी राजनीतिक प्रतिक्रिया के लिए जर्मन राज्यों की तीव्र आर्थिक प्रगति को अवरुद्ध कर पाना संभव सिद्ध नहीं हुआ था। राइन प्रदेश सैक्सनी सिलेशिया तथा बर्लिन में शक्तिशाली सुसज्जित उद्योग पैदा हो गया था जिसके परिणामस्वरूप सर्वहारा की संख्या में जबरदस्त वृद्धि हुई थी। इस तीव्र पूंजीवादी विकास के कारण राजनीतिक तथा आर्थिक एकता का अभाव सामंती मध्ययुग के एक और भी असहनीय पुरावशेष के रूप में स्पष्टतः दिखायी देने लगा था।

इटली की ही भांति जर्मनी में एकीकरण को दो तरीकों से हासिल किया जा सकता था – ऊपर से या नीचे से। प्रतिभाशाली स्वशिक्षित खरादी आगस्त बेबेल (१८४०-१९१३) जो आगे चलकर जर्मन मजदूर आंदोलन का एक उत्कृष्ट संगठनकर्ता बना और कार्ल मार्क्स के शिष्य तथा अनुगामी, पत्रकार विल्हेल्म लीब्कनेख्त (१८२६ १९००) जिसके साथ लंदन में अपने निर्वासन के समय मार्क्स ने घनिष्ठ संबंध कायम रखे थे के नेतृत्व में प्रगतिशील जर्मन मजदूरों ने एकीकरण के उपरोक्त तरीके को ही अपनाया। बेबेल और लीब्कनेख्त ने पहले मजदूर संघों की रहनुमाई की और बाद में मार्क्स तथा एंगेल्स से परिचित होने के बाद उन्होंने १८६९ में जर्मनी की सामाजिक जनवादी मजदूर पार्टी की स्थापना की। जर्मनी का एकीकरण करने की जीवंत आवश्यकता को अच्छी तरह समझते हुए वे यह मानते थे कि उसकी सिद्धि केवल जर्मन जनता के क्रांतिकारी आंदोलन के परिणामस्वरूप और संयुक्त जर्मन लोकतंत्रीय गणराज्य के रूप में ही हो सकती है। लेकिन बेबेल और लीब्कनेख्त को सभी जर्मन मजदूरों का समर्थन प्राप्त नहीं था जिनमें से बहुत से फर्दीनांद लसाल (१८२५ १८६४) द्वारा

१८६३ म स्थापित जर्मन मजदूर महासघ म शामिल थे। श्रोताओ को मत्रमुग्ध कर देनेवाला यह प्रतिभाशाली वक्ता और पत्रकार अपने सैद्धांतिक विचारो या अपनी राजनीतिक गतिविधियो के लिहाज से कोई सच्चा सर्वहारा क्रातिकारी नही था। जर्मन एकता के प्रश्न पर लसाल प्रशियाई राजतत्र के अधीन सयुक्त जर्मनी के निर्माण के पक्ष म था और उसने इस विषय म बिस्मार्क के साथ गुप्त वार्ता तक की थी। जर्मन मजदूर महासघ म उसके उत्तरवर्ती नेताओ ने उसकी इस गलत और अवसरवादी नीति का ही अनुकरण किया। मजदूर आदोलन म इस फूट ने देश को एकीकरण की ओर ले जानेवाली घटनाओ के क्रम पर उसके प्रभाव को कमजोर किया।

जर्मनी का एकीकरण दूसरे ही तरीके स हुआ। १८६२ से प्रशियाई सरकार का प्रधान प्रिस ओटो वान बिस्मार्क (१८१५-१८९८) था। यह प्रतिक्रियावादी पोमेरानी युकर निर्मम और सख्त होने के साथ साथ बहुत ही चालाक और चतुर राजनीतिज्ञ भी था। बिस्मार्क जर्मनी को एकीकृत करने की आवश्यकता को अच्छी तरह से समझता था, लेकिन उसने यह सुनिश्चित करने के लिए कोई कसर न छोडी कि एकीकरण पूर्णत प्रशियाई तरीको से ही हो। उसका कहना था कि इस जमाने के महत्वपूर्ण प्रश्नो को भाषणो और बहुमत के प्रस्तावो से नही – १८४८ और १८४९ की भूल यही थी – बल्कि सिर्फ खून और लोहे से ही हल किया जा सकता है।"

जर्मनी के एकीकरण की सिद्धि सचमुच "खून और लोहे' के ज़रिये ही की गयी। १८६४ मे प्रशा ने आस्ट्रिया के साथ मिलकर डेनमार्क से युद्ध छेडा और इस प्रकार श्लेसविग प्रात पर कब्जा पाया जब कि आस्ट्रिया को होलश्ताइन (हालस्टन) प्राप्त हुआ। दो ही साल बाद १८६६ मे प्रशा ने अपने कुछ वर्ष पहले के मित्र देश के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। ३ जून १८६६ को सादोवा की लडाई म आस्ट्रियाई सेना बुरी तरह परा जित हुई और युद्ध छिडने के मात्र सात ही सप्ताह बाद दोनो देशो मे सधि हो गयी। इस पराजय के बाद आस्ट्रिया इस स्थिति मे नही रह गया कि प्रशा की प्रमुखता मे जर्मनी के एकीकरण मे बाधक बन सके।* आस्ट्रिया ने ऐसे कई जर्मन राज्य भी प्रशा के हवाले कर दिये जो युद्ध मे उसके पक्ष म लडे थे (होलश्ताइन हैनोवर आदि)। १८६७ म बिस्मार्क उत्तर जर्मन

* १८६६ के बाद जर्मन राज्यो मे मुख्य भूमिका का दावा करने मे अपनी असमर्थता को समझकर आस्ट्रियाई सरकार ने १८६७ मे आस्ट्रिया हगरी के दोहरे राजतन्त्र ... सा ... कर दी थी।

राज्यमडल की स्थापना करन म सफल हो गया जिसमे २२ राज्य थे और उसम प्रशा को ही प्रमुखता प्राप्त थी। जर्मन एकीकरण क रास्त पर यह एक वहुत महत्वपूण कदम था।

दूसरा साम्राज्य

लेकिन प्रशा क नेतृत्व म सयुक्त जर्मनी के गठन क रास्त म अभी एक और गभीर अवरोध बाकी था और यह था लुई नेपोलियन (नपोलियन तृतीय) का फ्रास।

दूसरे साम्राज्य का सत्ताकाल फ्रास म औद्योगिक क्राति के पूर्ण हाने का ज़माना था। इसके बाद तीव्र आर्थिक विकास का दौर आया और नूतनतम मशीनो के प्रचलन के परिणामस्वरूप फ्रास का औद्योगिक उत्पादन काई तीन गुना अधिक हो गया। लेकिन विशाल आधुनिक कल कारखानो के पैदा होन के साथ साथ विलास और फैशन की वस्तुओं का छोटे पैमाने पर हाथो द्वारा उत्पादन अब भी बडी भूमिका अदा कर रहा था। यह जबरदस्त आर्थिक प्रगति सभी के लिए समृद्धि को लेकर नही आयी थी — वड औद्योगिक प्रतिष्ठानो की होड म न टिक पान के कारण कितने ही छाट पैमान क उद्यमकर्ता दीवा लिये हो गय थे। निर्वाह व्यय मे तेज़ वढौती की वजह से सभी महनतकशा के लिए जीना दूभर हा गया था।

श्रमिक वर्ग का शापण पहले से भी अधिक प्रखर हा गया था। नयी आर्थिक प्रगति के सभी सुफला का कारखानास्वामी उद्यमकता और वित्तपति ही उपभोग कर रहे थे। वित्तपतियो न दूसर साम्राज्य के वर्षो म अभूतपूर्व पैमान पर भाति-भाति की सट्टेवाज़ी और वित्तीय कारसाजियो के जरिय खासकर तेज़ी के साथ अपन जेबो को भरा। सम्राट द्वारा छेड गय युद्धो की बदौलत वड बूर्जुआज़ी और सभी तरह के व्यापारियो ने बेतहाशा मुनाफे बटार।

सत्ता मे आने के कुछ ही वाद नपोलियन ततीय न घोषित किया था कि 'साम्राज्य का मतलब शाति है।" कितु व्यवहार म इसका उलटा ही सत्य सिद्ध हो रहा था। एक क बाद दूसरा युद्ध छिड रहा था और सिर्फ इसलिए नही कि उनसे वित्तपतियो और उद्योगपतिया को भारी मुनाफे हासिल होते थे, वल्कि इसलिए भी कि व सम्राट क राजवशीय हिता का साधन करते थे। सत्ता को वलात हाथ मे ले लन और अपन विख्यात चाचा क नाम का पूरा फायदा उठान क बाद इस मुहिमबाज ने महसूस किया कि अपनी प्रतिष्ठा को बढाने क लिए सैनिक विजय प्राप्त करना आवश्यक है। दूसर साम्राज्य के अस्तित्व मे आने के कुछ ही वाद १८५३ म नपालियन तृतीय न फ्रास को रूस के विरुद्ध युद्ध म झोक दिया। यह युद्ध तीन साल चला फ्राम का

उसमे भारी जन-धनहानि पहुंची और बदले में कोई उल्लेखनीय लाभ नहीं प्राप्त हुए। १८६६ में आस्ट्रिया में युद्ध के भी ऐसे ही महत्वहीन परि निकले क्योंकि उसमें जहां फ्रांस को सवाय और नीस मिल गये वहां ही इतालिया के रूप में उसे एक नया शत्रु भी मिल गया।

छठे सातवें दशकों में फ्रांस अविराम औपनिवेशिक युद्धों में भी उ रहा। फ्रांस अल्जीरिया में और भीतर घुसा और उसने सहारा के ब बड़े हिस्से को कब्जे में ले लिया। १८५७-१८५८ और १८६० में फ्रांस चीन के खिलाफ दस्यु युद्ध चलाया और उसके बाद उसने वियतनाम कब्जा करने के लिए युद्ध छेड़ा जो पूरे एक दशक चला। कंबोडिया कोचीन-चीन भी फ्रांसीसी उपनिवेशवादियों के जूए के नीचे आ गए। १ में मैक्सिको में बड़े भारी पैमाने पर औपनिवेशिक अभियान शुरू किया ग लेकिन इस महान शाही उपक्रम का अंत असफलता में हुआ और १८ में मुंह की खाने के बाद फ्रांसीसी अभियान सेना को मैक्सिको छोड़ना पड़

मैक्सिको अभियान की असफलता दूसरे साम्राज्य की सबसे बड़ी पराज में एक थी और उसके बाद उसे कितनी ही और पराजयों का भी साम करना पड़ा। दूसरे साम्राज्य की जोखिमभरी विदेश नीति के परिणामस्वरू रूस, इटली और ब्रिटेन जैसी कई बड़ी शक्तियां में फ्रांस के संबंध बिग गये। नेपोलियन को जर्मनी के प्रति अपनी नीति में भी पराजय का मुं देखना पड़ा। आस्ट्रिया-प्रशा युद्ध में फ्रांस इस आशा से तटस्थ रहा था कि युद्ध के परिणामस्वरूप उसे पर्याप्त मुआवजा मिल जायगा। लेकिन प्र के ऐसे कोई इरादे नहीं थे और उसने फ्रांस की सभी मांगों को ठुकरा दिया

इस समय तक दूसरे साम्राज्य की विदेश नीति के दीवालियेपन क छिपाना असंभव हो चुका था, जिसने अपनी अंतर्निहित कमजोरी को प्रक कर दिया था और भीतरी संकट को पास लाने में योग दिया था। नेपोलियन तृतीय की सरकार की विभिन्न समूहों के साथ जोड़-तोड़ करने और उनकी अनुकंपा पाने की चाल शासन के लिए समर्थन नहीं जुटा सकती थी। सातवें दशक के अंत में हुए चुनावों ने यह जाहिर कर दिया कि अधिकांश आबादी - हर वर्ग अपने ही कारणों से - बोनापार्ती साम्राज्य के भ्रष्ट शासन के विरुद्ध है। प्रसिद्ध लेखक और लोकतंत्रवादी चिंतक विक्टोर ह्यूगो (१८०२-१८८५) अपना 'छोटा नेपोलियन' शीर्षक पैम्फलेट १८५२ में ही लिख चुका था और उसके बाद से उसने दूसरे साम्राज्य के विरुद्ध अपने संघर्ष को कभी बंद नहीं किया था। अब अधिकांश फ्रांसीसी जन ह्यूगो के बोनापार्त विरोधी विचारों से सहमत हो गये थे।

१८७०-१८७१ का फ्रास प्रशा युद्ध

बढते आतरिक सक्ट के बावजूद नेपोलियन तृतीय की सरकार अब भी यही मानकर नयी मुहिमबाजिया म लगी रही कि सक्ट को सिर्फ सामरिक सफल ताओ से ही टाला जा सकता है। इस समय प्रकट शत्रु प्रशा ही था जो राजनीतिक युद्धभन मे फ्रास को पहले ही चालाकी स मात द चुका था। १९ जुलाई, १८७० का दूसर साम्राज्य की सरकार न प्रशा के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

पेरिस मे मजदूरा के वश म पुलिसवाला न सडको पर घूम घूमकर "चलो बर्लिन !" के नारो स लोगो को जमा किया। नपोलियन तृतीय को मुख्य सेनापति बना दिया गया और वह सेना म जा मिलन के लिए चल पडा। उस और उसके सैनिक सलाहकारा को द्रुत विजय की आशा थी। लेकिन फ्रासीसी सेनाए आरभ म ही शत्रु के मुकाबले बहुत हीन सिद्ध हुई। यह युद्ध बोनापार्ती शासन को डगमगाती शक्ति का एक और प्रमाण था। एक के बाद दूसरी पराजय होती गयी और युद्ध के घोषित किये जाने के सिर्फ छ हफ्ते बाद ही, २ सितबर, १८७० के दिन सेदान की लडाई म नपोलियन तृतीय की कमान म एक लाख सैनिका की फ्रासीसी सेना न जर्मनो के आगे हथियार रख दिये।

इस सैनिक दुर्घटना न दूसरे साम्राज्य के भाग्य का निर्णय कर दिया। ४ सितबर १८७० को पेरिस के विद्रोही निवासिया न दूसरे साम्राज्य की घृणास्पद और बदनाम सरकार का तख्ता पलट दिया और तीसरी बार गण राज्य की उद्घोषणा कर दी।

जर्मनी के एकीकरण की सपूर्ति

युद्ध चलता ही रहा और प्रशियाई रणनीति न अब स्पष्टत आक्रामक स्वरूप ग्रहण कर लिया। १८ जनवरी १८७१ के दिन होहेनजालर्न वश के विल्हेल्म प्रथम का जर्मनो द्वारा अधिकृत वर्साई म जर्मनी का सम्राट उदघोषित कर दिया गया। बवारिया और सेक्सनी सहित दक्षिणी जर्मन राज्यो को नये साम्राज्य मे समामेलित कर लिया गया। फ्रास के साथ १० मई १८७१ को सपन्न हुई फ्राकफुर्त शाति सधि के अतर्गत नवविजित एलसस-लार प्राता को भी जर्मन साम्राज्य म शामिल कर लिया गया। इस प्रकार अत म एक विजय युद्ध के बाद 'खून और लाहे' के जरिये जर्मन एकता की सिद्धि कर ली गयी और प्रशा के होहेनजोलर्न वश के प्रतिक्रियावादी शासको के अधीन एक सैन्यवादी साम्राज्य अस्तित्व म आ गया।

अतर्राष्ट्रीय मजदूर आदोलन

पूजीवादी उद्योग की तीव्र वृद्धि के साथ साथ अनिवायत मजदूर वर्ग की भी तेजी से वृद्धि हुई। सवहारा की वर्ग चेतना, उसके सगठन और जुझारूता मे भी तेज बढती आयी। इस समय तक श्रमिक वर्ग सघर्ष म काफी अनुभव का अर्जन कर चुका था।

१८४८ १८४९ की क्रातियो तथा प्रतिक्रातियो के सबका न भी उसे अमूल्य अनुभव प्रदान किया था। मजदूरो न अब अपने सगठन स्थापित करने शुरू कर दिये – ब्रिटेन फ्रास, सयुक्त राज्य अमरीका तथा जर्मनी म श्रमिक सघ – ट्रेड यूनियन – पैदा होने लगे। हडताले अधिकाधिक आम होती गयी और उनम प्राप्त सफलताओ ने समूचे तौर पर हडताल आदोलन के लिए उत्प्रेरक का काम दिया। समाजवादी मडलियो और दलो की स्थापना होने लगी और मजदूरो न अब अपनी समस्याओ को अपने ही कारखाने शहर या देश के तग नजरिये से देखना बद कर दिया। अतर्राष्ट्रीय सर्वहारा एकजुटता तेजी से जडे पकडने लगी खासकर सातवे दशक के आरभ से। फ्रासीसी और ब्रिटिश मजदूरो ने १८६३ म पोल विद्रोहियो का समर्थन किया। सयुक्त राज्य अमरीका मे गृहयुद्ध के समय, जब ब्रिटिश सरकार ने दासस्वामी दक्षिण की सहायता करने का यत्न किया तो ब्रिटिश मजदूर सगठनो ने उस पर उसके विरुद्ध जबरदस्त कारगर प्रभाव डाला।

पहला इटरनेशनल

उन्नीसवी शताब्दी के सातवे दशक तक पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर लेने और वर्ग चेतना की नयी बुलदियो पर पहुच जाने के बाद मजदूर आदोलन अतराष्ट्रीय स्तर पर अपनी शक्तियो को एकजुट करने के लिए तैयार हो चुका था। पहला अतराष्ट्रीय सवहारा सगठन कम्युनिस्ट लीग, छठे दशक के आरभ म ही अस्तित्वहीन हो चुका था और उसम जनव्यापी सगठन बनने की क्षमता नही थी। अब मेहनतकश अवाम को एक नये अतर्राष्ट्रीय सगठन म एकताबद्ध करने का समय आ गया था।

२८ सितबर १८६४ के दिन लदन म हुई एक सभा म जिसम ब्रिटेन, फ्रास जर्मनी, इटली तथा कई अन्य देशो के मजदूरो ने भाग लिया था, अतर्राष्ट्रीय श्रमिक जन सघ की स्थापना की गयी, जो इतिहास म प्रथम इटरनेशनल के नाम म विख्यात है। उसके अध्यक्षमडल म जर्मन मजदूरो का प्रतिनिधि सवहारा के मुक्ति सघर्ष का अप्रतिम नेता कार्ल मार्क्स भी था। उसने उद्घाटन अभिभाषण तथा सामान्य नियमावली तैयार करने

का कार्य सौपा गया था। कार्ल मार्क्स तथा फ्रेडरिक एगल्स आदोलन के मुख्य राजनीतिक और वैचारिक नेता थे। अतर्राष्ट्रीय सघ – इटरनेशनल – मे शामिल होनेवाले मजदूरो की राजनीतिक चेतना का स्तर अलग अलग था और इसी कारण उसका कार्यक्रम – उद्घाटन अभिभाषण – इस तरह रचना पडा था कि वैज्ञानिक कम्युनिज्म के बुनियादी सिद्धान्तो पर अडिग रहने के साथ साथ वह सभी के लिए बोधगम्य तथा स्वीकार्य भी हो सके। मार्क्स ने इस काम को असाधारण निपुणता से पूरा किया। उद्घाटन अभिभाषण ने पूजीवाद के अतर्गत मजदूरो के रहन-सहन की भयानक अवस्थाओ का वर्णन किया और यह बताया कि इसी कारण से 'राजनीतिक सत्ता को हस्तगत करना मजदूर वर्ग के सम्मुख सर्वोच्च महत्व का कार्यभार बन गया है।" अभिभाषण मे यह इगित किया गया था कि मजदूर वर्ग इतना बडा हो चुका है कि सफल सघर्ष कर सके, लेकिन सगठन और अनुभव भी सख्या जितने ही महत्वपूर्ण है। उद्घाटन अभिभाषण' ने मजदूरो से आक्रामक युद्धो का विरोध करने की अपील की थी।

उस समय राजनीतिक पार्टिया अस्तित्व मे नही आयी थी किंतु यूरोप के विभिन्न देशो तथा सयुक्त राज्य अमरीका के अनेक ट्रेड यूनियन सहकारी समाज, श्रमिक शिक्षण मडल तथा अन्य सगठन पहले इटरनेशनल मे सम्मिलित हो गये। इन सभी देशो मे अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक जन सघ की राष्ट्रीय शाखाए स्थापित हो गयी और थोडे ही समय के भीतर इटरनेशनल एक व्यापक अतर्राष्ट्रीय सर्वहारा सगठन बन गया। इटरनेशनल का मुख्य कार्यकारी निकाय उसकी काग्रेस थी और काग्रेसो के बीच की अवधि मे उसकी गतिविधियो का सचालन महापरिषद (जनरल काउसिल) करती थी जिसकी बैठके लदन मे होती थी। महापरिषद का राजनीतिक नेता कार्ल मार्क्स था जिसकी रचनाए उसकी प्रेरणा का स्रोत थी।

लेकिन मार्क्स इसके साथ ही जबरदस्त सैद्धातिक कार्य भी कर रहा था। १८६७ मे उसने 'पूजी' का प्रथम खड प्रकाशित किया जिसके लेखन मे बीस वर्ष से अधिक समय लग गया था। इस कृति मे पूजीवाद के आर्थिक तथा सामाजिक पहलुओ का गहन विश्लेषण और पूजीवाद के उदय तथा अतत उसके अवसान की अनिवार्यता का वैज्ञानिक प्रमाणीकरण प्रस्तुत किया गया था। इस महान कृति ने मजदूर वर्ग को आवश्यक ज्ञान तथा अपने सघर्ष मे सुस्पष्ट मार्गदर्शन प्रदान किया।

किंतु अपने सैद्धातिक कार्य मे निमग्न रहने पर भी मार्क्स ने मजदूर आदोलन की कतारो मे अपने दैनदिन व्यावहारिक क्रातिकारी कार्य को कभी नही छोडा। उसके नेतृत्व मे महापरिषद अतर्राष्ट्रीय मजदूर आदोलन का जुझारू मुख्यालय बन गयी। इटरनेशनल ने मजदूरो के हडताल आन्दोलन

का राजनीतिक मार्गदर्शन के साथ-साथ भौतिक सहायता भी प्रदान की। उस समय ब्रिटेन, स्विटजरलैंड और बेल्जियम जैसे कितने ही देशों में बड़ी-बड़ी हड़ताल संगठित की जा रही थी। इंटरनेशनल की सहायता और मार्गदर्शन की बदौलत कई हड़तालों ने महती सफलताएं प्राप्त की और मालिकों से महत्वपूर्ण रिआयतें वसूल की। इसके कारण सर्वहारा में इंटरनेशनल की प्रतिष्ठा बढ़ी तथा मजबूत हुई। घटनाओं ने मजदूरों को अब इसका कायल कर दिया कि इंटरनेशनल के "दुनिया के मजदूरो, एक हो!" के नारे को कार्यरूप में परिणत करने से कितना कुछ हासिल किया जा सकता है।

इंटरनेशनल की कांग्रेसों में महापरिषद के सदस्य और मार्क्स के मित्र तथा अनुयायी बड़ी मेहनत के साथ मजदूरों के दैनंदिन संघर्ष से मिसालें दे देकर प्रूदों तथा बाकूनिन के निम्न बूर्जुआ समाजवाद की असंगतियों को दर्शाया करते थे, जिनके फ्रांसीसी, स्पेनी, बेल्जियमी तथा अन्य मजदूरों में काफी अनुगामी थे। प्रूदोंवादी और बाकूनिनवादी यद्यपि इस समस्या के प्रति अपना-अपना विशिष्ट दृष्टिकोण रखते थे, फिर भी दोनों ही के मत में संसार का रूपांतरण करने में समर्थ मुख्य शक्ति श्रमिक वर्ग नहीं, वरन छोटे पैमाने के मालिक थे और यह भ्रांत प्रस्थापना ही उनकी सारी नीति का आधार बनी। इंटरनेशनल की कांग्रेसों की बैठकों में चलनेवाले उग्र विवादों में धीरे-धीरे वैज्ञानिक कम्युनिज्म को अन्य सिद्धांतों के मुकाबले अधिक स्वीकृति मिलने लगी। विचारधारात्मक और संगठनात्मक, दोनों ही दृष्टियों से पहला इंटरनेशनल अधिकाधिक एकजुट और शक्तिशाली अंतर्राष्ट्रीय मजदूर संगठन बनता चला गया। मेहनतकश जनों के उत्पीड़कों के खिलाफ श्रमिक वर्ग का मुक्ति संघर्ष इस समय तक और नयी, ज्यादा ऊंची बुलंदियों पर पहुंच चुका था।

तेरहवा अध्याय

१८७१ का पेरिस कम्यून

१८ मार्च १८७१ की भोर के समय पेरिस के मेहनतकशा और गरीबा की पत्नियां और माए उन थाडी स बकरियां क आग लगी लकीरो म अपनी जगह लेने क लिए लपक रही थीं जिन्हान अभी तक राटी बेचना बद नही किया था (पेरिस छ महीन स प्रशियाइयो क घेरे म था) कि तभी मोमार्त स गालियां चलन की आवाज आयी। वहा पहुचन पर उन्होन देखा कि फ्रासीसी सैनिक अपन अफसरा क आदेश से मोमार्त पहाडी स उन तोपा का हटा रहे है, जिनके लिए पेरिस क मजदूरों न चदा इकट्ठा किया था और जिन पर सशस्त्र मेहनतकशा – राष्ट्रीय गार्ड – का पहरा था। ये व ताप थीं जा पेरिस की प्रशाई हमलावरो म रक्षा कर रही थी।

स्त्रिया न तुरत राष्टीय गार्ड क सैनिका को जगाया और नगरवासिया को भी जमा कर लिया। पेरिस क निवासी क्रोध स भभक उठे। राष्ट्रीय गार्ड को उस समय निरस्त्र करना कि जब पेरिस प्रशियाइयो क घेरे म था और नगर के प्रतिरक्षको को उनकी तोपो स वंचित करना खुला राष्ट्रद्रोह के समान था।

राष्टीय गार्ड क दस्तो और पेरिस के निवासिया ने सरकारी फौजा के खिलाफ हथियार उठा लिये। कुछ सरकारी सैनिका न अपन देशवासिया पर गोली चलान से इन्कार कर दिया और जनता के पक्ष म आ गये जब कि शेष को मौके से हट जाना पडा। जन विद्रोह नगर के एक क बाद दूसरे हलके को अपनी चपेट म लेता हुआ तेजी से फैलता चला गया। दोपहर तक यह साफ हो गया कि इस टक्कर मे जनता का पलडा ही भारी रहा है। तत्कालीन सरकार का प्रधान लुई अदोल्फ थियर अश्वारोही पुलिस के पहरे म खिडकियो पर परदे पडी बग्घी मे बैठकर विद्रोही राजधानी

से भाग खडा हुआ। टाउन हाल – ओतल दी वील – पर लाल थडा लहराने लगा।

अगले दिन, रविवार २ा मज़दूर इलाक़ा के दसिया हज़ार परिसवाना नगर के मुख्य मार्गो और चौका म उमड आय। वह सुहाना दिन लागा क हास्य गान और हर्षपूर्ण किलकारिया से गुजित हा उठा। लाग अकारण ही खुशिया नही मना रह थे – यह पहला अवसर था कि जव व अपनी नियति के स्वय निर्धारक वन थे।

लेकिन नगर के पश्चिमी और दक्षिणी इलाको म, जो वर्साई के सबस करीब थे विलकुल दूसरा ही दृश्य देखन मे आ रहा था। वहा की सडक लोगो, घोडो और घोडागाडियो स अटी पडी थी। सामान के वडे-वडे गट्ठरा को रस्सो से वाधकर वैसे भी सदूको, वोरो और थैलो से बेतरह लदी हुई गाडियो मे ठूसा जा रहा था और धनी लोग, अभिजात, अश्वारोही सेना के अफसर और उनके अनिच्छुक सैनिक, सभी राजधानी से दहशतभरी भागमभाग म एक दूसरे से टकराय जा रहे थे।

राष्टीय गार्ड के सैनिक और गरीवो के वीवी-वच्चे इन ठाठदार भद्रजनो को जो अभी कल ही तक बिलकुल निश्चित और दर्पपूर्ण थे शहर से भागने के पहले अपनी सारी बढिया पोशाको को इस तावडतोड वाधते देख हसी क मारे दोहरे हुए जा रहे थे। मजदूर लोग और उनके घरवाले उनसे पीछा छूटने की खुशी मे किलकारिया मार रहे थे। उनके बिना पेरिस कही अधिक उजला और सुथरा शहर वन गया था – उसके इतिहास मे एक नये ही अध्याय का समारभ हो गया था और उसकी नियति अब स्वय जनसाधारण के हाथो म आ गयी थी। ससार के इतिहास मे पहली वार श्रमिक वर्ग ने सत्ता को अपने हाथो मे ले लिया था।

पेरिस कम्यून की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

१८७१ म पेरिस के सर्वहारा का सत्ता को अपने हाथो मे ले लना कोई आकस्मिक घटना न थी। उसका पथ १७८९ की क्राति के बाद के सपूर्ण ऐतिहासिक विकास और वर्ग सघर्ष के अनुभव ने प्रशस्त किया था।

औद्योगिक सर्वहारा उद्योग मे मशीनो के प्रचलन के साथ अस्तित्व मे आया था और पूजीवादी उत्पादन के विकास के साथ वढता गया था। मजदूरो को उनकी असहनीय निर्वाह परिस्थितियो ने ही वर्ग सघर्ष म खीचा था। चौदह सोलह घटे रोज काम करने के वाद भी उन्हे नाममात्र की मजदूरी मिलती थी जिसका मतलव यह था कि उनके और उनके परिवारो के भाग्य म भूख और सतत नैर्धन्य ही वदा था। मज़दूर उन्नीसवी सदी के आरभ से जो सघर्ष करत आय थे, वह ऐसा था कि जिसम खिचे विना व नही

रह सकते थे—वे उस वीभत्स जीवन का जीने के लिए तैयार नही थ जिसके लिए उनके पूजीवादी स्वामी उन्हे मजबूर करत थे। लेकिन उस समय मजदूरा को वर्ग सघर्ष का अधिक अनुभव नही था उन्हे इसकी समझ नही थी कि उन पर इतनी मुसीबते लानवाली अन्यायपूर्ण व्यवस्था को वदलन के सबस अच्छ तरीके क्या हो सकते है। चतना के इस अभाव के कारण वे बहुत गलतिया करते थ और अकसर पराजित होत थे।

लेकिन असफलताओ और पराजया के इस अनुभव ने उन्हे अधिक परिपक्वता और वर्ग चेतना प्रदान की। उन्नीसवी सदी के आरभ मे, जब मजदूर मशीनो को नष्ट करके अपन अध क्रोध को व्यक्त किया करते थे वर्गजन्य घृणा की पहली स्वत स्फूर्त अभिव्यक्तियो से १८६४ म सर्वप्रथम अतर्राष्ट्रीय श्रमिक सगठन—पहले इटरनेशनल—के उद्घाटन तक भारी प्रगति हो चुकी थी। १८३१ और १८३४ म लियो के बुनकरा के विद्रोह, मेहनतकशा का पहला व्यापक राजनीतिक आदोलन—चार्टिस्ट आदोलन पहली अतर्राष्ट्रीय सर्वहारा पार्टी—कम्युनिस्ट लीग, १८४८ का जून विद्रोह १८४८ १८४६ की बूर्जुआ-लोकतात्रिक क्रातियो म सर्वहारा की सहभागिता छठे सातवे दशको का हडताल आदोलन उस काल के प्रगतिशील लोकतात्रिक आदोलनो को श्रमिका द्वारा प्रदत्त समर्थन—ये सभी सर्वहारा की वग चेतना के विकास म महत्वपूर्ण चरण थे। इन सभी न अतर्राष्ट्रीय मजदूर आदोलन को अपने सबसे महत्वपूर्ण कार्यभार को क्रियान्वित करन की तैयारी मे सहायता प्रदान की, और यह कार्यभार था राजनीतिक सत्ता को हस्तगत करना।

उन्नीसवी शताब्दी के मध्य मे ही श्रमिक वर्ग के महान नेता कार्ल मार्क्स तथा फ्रेडरिक एगेल्स अपनी कृतियो म सामाजिक विकास के नियमा का प्रतिपादन करन के वाद इस निष्कर्ष पर पहुच चुके थे कि पूजीवाद और समाजवाद के बीच सर्वहारा के अधिनायकत्व की एक सक्रमणकालीन अवस्था होनी चाहिए। यह सैद्धातिक खोज अपार महत्व की थी, किंतु न मार्क्स न एगेल्स और न ही उस समय किसी और व्यक्ति को इसका स्पष्ट अहसास था कि यह अधिनायकत्व व्यवहार मे कौन से ठोस रूप ग्रहण करेगा।

न फ्रासीसी मजदूरो को ही इसके बारे म कुछ मालूम था, जिन्हे इतिहास म सबस पहले इस प्रकार के अधिनायकत्व को स्थापित करना था। जब फ्रासीसी मजदूरो ने १८७१ मे हथियार उठाये तब भी अभी वे सचेत होकर श्रमिक वर्ग की सत्ता के लिए सघर्ष नही कर रहे थे—उनम से अधिकाश अभी कार्ल मार्क्स के विचारो से परिचित नही थे और उनका सघर्ष बहुत हद तक स्वत स्फूर्त ही था।

घटनाआ का सिलसिला इस प्रकार चला—सेदान म नपोलियन तृतीय

को सेना के हथियार डाल देने के बाद दूसरे साम्राज्य का पतन हो गया था। ४ सितंबर १८७० की क्रांति मेहनतकशों ने की थी, किंतु उसकी उपलब्धियों का लाभ बूर्जुआ राजनीतिक नेताओं ने उठाया। बूर्जुआजी ने सत्ता को हथिया लिया। जर्मनों के फ्रांसीसी राजधानी की तरफ बढ़ते जाने की अवस्थाओं में बूर्जुआ सरकार ने अपने को "राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार" का नाम दिया।

परिस्थिति अत्यंत गंभीर थी। तीसरे गणराज्य की उद्घोषणा हो जाने के बाद भी प्रशा ने अपने आक्रामक युद्ध को जारी रखा। प्रशियाई सेनाओं ने फ्रांस के उत्तरी तथा उत्तर-पूर्वी भागों को कब्ज़े में ले लिया, पेरिस को घेर लिया और वर्साई को सर कर लिया। वहां १८ जनवरी को दर्पणवाले कक्ष में प्रशा के राजा को जर्मन साम्राज्य का सम्राट उद्घोषित किया गया।

जर्मन विजेताओं से जूझने को कृतसंकल्प फ्रांसीसी जनता आरंभ में जनरल त्रोशू और वकील जूल फाव्र जैसे राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार के नेता बूर्जुआ राजनीतिज्ञों को स्वीकार करने को तैयार थी। लेकिन जल्दी ही यह तथ्य सामने आया कि राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार व्यवहार में प्रतिरोध का संगठन नहीं, बल्कि आक्रमणकारियों को तुष्ट करने और उनके साथ समझौते का पथ प्रशस्त कर रही थी, क्योंकि फ्रांसीसी बूर्जुआजी श्रमिकों से जर्मनों से भी अधिक डरता और नफ़रत करती था। पेरिस के वीर प्रतिरक्षकों की पीठ पीछे फ्रांसीसी सरकार आत्मसमर्पण के दगाघातक रास्ते पर चल रही थी और बाद में उसने जर्मनों के साथ गुप्त वार्ताएं भी शुरू की। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार ने व्यवहार में अपने को राष्ट्रीय विश्वासघात की सरकार सिद्ध किया। २८ जनवरी, १८७१ को सरकार ने जनता की इच्छा की अवहेलना करते हुए जर्मनों के साथ युद्धविराम संधि कर ली, जिसके अंतर्गत उसने पेरिस को उनके हवाले कर देने और दूसरी अपमानजनक शर्तों को स्वीकार कर लिया।

पेरिस के मेहनतकश छः महीने के घेरे को झेल चुके थे और घोर दुष्काल तथा अभावों से त्रस्त थे। उन्हें कबूतरों, कौओं, बिल्लियों और कुत्तों को खाकर जीना पड़ रहा था। लोग अपने बिन गरमाये और बिन रोशनी के मकानों में ठंड से मर रहे थे। लेकिन इन अभावों और आपदाओं के बावजूद जनता आत्मसमर्पण करने के लिए तैयार नहीं थी।

यह महसूस करके कि सरकार व्यवहार में राष्ट्रद्रोह की नीति पर ही चल रही है, पेरिस की जनता ने सरकार का तख्ता उलटने के प्रयास में ३१ अक्तूबर, १८७० और २२ जनवरी, १८७१ को अपने शासकों के खिलाफ़ हथियार उठाये। इन दोनों विद्रोहों को कुचल दिया गया, लेकिन अपनी बारी में प्रतिक्रियावादी सरकार ने यह पाया कि उसमें सशस्त्र पेरिसवासियों को नियंत्रण में रखने की शक्ति नहीं है। इसलिए उसने जर्मन संगीनों का सहारा लिया और १ मार्च को जर्मन सेनाएं पेरिस में दाखिल हो गयीं।

लेकिन राष्ट्रीय गार्ड और उसके निर्वाचित कायाग–केंद्रीय समिति–ने इस प्रतिक्रियावादी साजिश का पर्दाफाश करने में सफलता प्राप्त कर ली। उसने पेरिस के निवासियों से अनुरोध किया कि वे आक्रमणकारियों के साथ किसी भी प्रकार के संपर्क में न आयें। जरा ही देर में सड़कें निर्जन हो गयी मकानों के दरवाजे बंद हो गये और खिड़कियों पर परदे गिर गये। तीन दिन मूक घृणा के इस वातावरण में शहर में रहने के बाद जर्मन सेनाएं पेरिस से चली गयी।

इस आपराधिक विश्वासघात के निष्फल सिद्ध हो जाने के बाद प्रतिक्रियावादी बूर्जुआजी ने पेरिस की क्रांतिकारी शक्तियों को निहत्था करने और उनकी तोपों को छीनने के लिए रात में अचानक हमला करने की योजना बनायी। श्रमिक वर्ग के जानी दुश्मन थियेर ने जो फरवरी में सरकार का प्रधान चुना गया था इस योजना को क्रियान्वित करने की तैयारियां की। १७ मार्च की रात को सरकारी सेनाओं को जर्मनों के खिलाफ नहीं बल्कि पेरिस की जनता के विरुद्ध भेजा गया। इस कार्रवाई का क्या परिणाम निकला यह पहले ही बताया जा चुका है।

राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति की क्रांतिकारी सरकार

१८ मार्च के विप्लव की पहले से तैयारी नहीं की गयी थी और वह बहुत हद तक स्वतःस्फूर्त ही था। लेकिन विप्लव के नेतृत्व को और बाद में राजनीतिक सत्ता को भी राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति ने संभाल लिया था और इस तरह वह मजदूर वर्ग की पहली क्रांतिकारी सरकार बन गयी।

चिढ़े हुए बूर्जुआ राजनीतिज्ञों ने इसके खिलाफ बहुत जोरों से शोर मचाया कि पेरिस में सत्ता अब अनजान व्यक्तियों के हाथों में पहुंच गयी है। राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति के सदस्यों के नाम सचमुच अभिजातों और बूर्जुआ वर्गीयों के बैठकखानों में अनजाने थे मगर मजदूर बस्तियों और राजधानी के गरीब इलाकों का हर निवासी उनसे भली भांति परिचित था।

नयी सरकार का एक प्रमुख सदस्य लुई वार्ले (१८३९-१८७१) नामक अपार कर्मठता और मजदूरों के हेतु के प्रति निस्स्वार्थ निष्ठा रखनेवाला स्वशिक्षित जिल्दसाज था जो इंटरनेशनल की पेरिस शाखा का एक संगठनकर्ता था। वार्ले ने १८ मार्च को थियेर द्वारा जनता के विरुद्ध भेजे सैनिकों के खिलाफ संघर्ष में भाग लिया था और उसे क्रांतिकारी सरकार में बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त थी। दूवाल (१८४१-१८७१) नाम के ढलाई मजदूर को जिसने २२ जनवरी और १८ मार्च के विद्रोहों में भी भाग लिया था पहले पुलिस विभाग का

की सेना के हथियार डाल देने के बाद दूसरे साम्राज्य का पतन हो गया था। ४ सितम्बर, १८७० की क्रांति महत्वपूर्ण थी, किंतु उसकी उपलब्धियों का लाभ बूर्जुआ राजनीतिक नेताओं ने उठाया। बूर्जुआजी ने सत्ता को हथिया लिया। जर्मनों के फ्रांसीसी राजधानी की तरफ बढ़ते जाने की अवस्थाओं में बूर्जुआ सरकार ने अपने को "राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार" का नाम दे दिया।

परिस्थिति अत्यंत गंभीर थी। तीसरे गणराज्य की उद्घोषणा हो जाने के बाद भी प्रशा ने अपने आक्रामक युद्ध को जारी रखा। प्रशियाई सेनाओं ने फ्रांस के उत्तरी तथा उत्तर-पूर्वी भागों को कब्जे में ले लिया, पेरिस को घेर लिया और वर्साइ को सर कर लिया। यहां १८ जनवरी को दर्पणागार कक्ष में प्रशा के राजा को जर्मन साम्राज्य का सम्राट उद्घोषित किया गया।

जर्मन विजेताओं से जूझने को कृतसंकल्प फ्रांसीसी जनता आरंभ में जनरल त्रोशू और वकील जूल फाव्र जैसे राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार के नेता बूर्जुआ राजनीतिज्ञों को स्वीकार करने को तैयार थी। लेकिन जल्दी ही यह तथ्य सामने आया कि राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार व्यवहार में प्रतिरोध का संगठन नहीं, बल्कि आक्रमणकारियों को तुष्ट करने और उनके साथ समझौते का पथ प्रशस्त कर रही थी, क्योंकि फ्रांसीसी बूर्जुआजी श्रमिकों से जर्मनों से भी अधिक डरती और नफ़रत करती थी। पेरिस के वीर प्रतिरक्षकों की पीठ पीछे फ्रांसीसी सरकार आत्मसमर्पण के दगाघातक रास्ते पर चल रही थी और बाद में उसने जर्मनों के साथ गुप्त वार्ताएं भी शुरू कीं। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार ने व्यवहार में अपने को राष्ट्रीय विश्वासघात की सरकार सिद्ध किया। २८ जनवरी, १८७१ को सरकार ने जनता की इच्छा की अवहेलना करते हुए जर्मनों के साथ युद्धविराम संधि कर ली, जिसके अंतर्गत उसने पेरिस को उनके हवाले कर देने और दूसरी अपमानजनक शर्तों को स्वीकार कर लिया।

पेरिस के मेहनतकश छः महीने के घेरे को झेल चुके थे और घोर दुष्काल तथा अभावों से ग्रस्त थे। उन्हें कबूतरों, कौओं, बिल्लियों और कुत्तों को खाकर जीना पड़ रहा था। लोग अपने बिना गरमाये और बिना रोशनी के मकानों में ठंड से मर रहे थे। लेकिन इन अभावों और आपदाओं के बावजूद जनता आत्मसमर्पण करने के लिए तैयार नहीं थी।

यह महसूस करके कि सरकार व्यवहार में राष्ट्रद्रोह की नीति पर ही चल रही है, पेरिस की जनता ने सरकार का तख्ता उलटने के प्रयास में ३१ अक्तूबर, १८७० और २२ जनवरी, १८७१ को अपने शासकों के खिलाफ़ हथियार उठाये। इन दोनों विद्रोहों को कुचल दिया गया, लेकिन अपनी बारी में प्रतिक्रियावादी सरकार ने यह पाया कि उसमें सशस्त्र परिसवासियों को नियंत्रण में रखने की शक्ति नहीं है। इसलिए उसने जर्मन संगीनों का सहारा लिया और १ मार्च को जर्मन सेनाएं पेरिस में दाखिल हो गयीं।

लेकिन राष्ट्रीय गार्ड और उसके निर्वाचित कायाग–केंद्रीय समिति–ने इस प्रतिक्रियावादी साजिश का परदाफाश करने में सफलता प्राप्त कर ली। उसने परिस के निवासियों से अनुरोध किया कि वे आक्रमणकारियों के साथ किसी भी प्रकार के संपर्क में न आयें। ज़रा ही देर में सड़कें निर्जन हो गयीं, मकानों के दरवाज़े बंद हो गये और खिड़कियों पर परदे गिर गये। तीन दिन मूक घृणा के इस वातावरण में शहर में रहने के बाद जर्मन सेनाएं परिस से चली गयीं।

इस आपराधिक विश्वासघात के निष्फल सिद्ध हो जाने के बाद प्रतिक्रियावादी बूर्जुआज़ी ने परिस की क्रांतिकारी शक्तियों को निहत्था करने और उनकी तोपों को छीनने के लिए रात में अचानक हमला करने की योजना बनायी। श्रमिक वर्ग के जानी दुश्मन थियर ने, जो फ़रवरी में सरकार का प्रधान चुना गया था, इस योजना को क्रियान्वित करने की तैयारियां कीं। १७ मार्च की रात को सरकारी सेनाओं को जर्मनों के ख़िलाफ़ नहीं, बल्कि परिस की जनता के विरुद्ध भेजा गया। इस कार्रवाई का क्या परिणाम निकला, यह पहले ही बताया जा चुका है।

राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति की क्रांतिकारी सरकार

१८ मार्च के विप्लव की पहले से तैयारी नहीं की गयी थी और वह बहुत हद तक स्वतःस्फूर्त ही था। लेकिन विप्लव के नेतृत्व को और बाद में राजनीतिक सत्ता को भी राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति ने संभाल लिया था और इस तरह वह मज़दूर वर्ग की पहली क्रांतिकारी सरकार बन गयी।

चिढ़े हुए बूर्जुआ राजनीतिज्ञों ने इसके ख़िलाफ़ बहुत ज़ोरों से शोर मचाया कि परिस में सत्ता अब अनजान व्यक्तियों के हाथों में पहुंच गयी है। राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति के सदस्यों के नाम सचमुच अभिजातों और बूर्जुआ वर्गीयों के बैठकख़ानों में अनजान थे, मगर मज़दूर बस्तियों और राजधानी के ग़रीब इलाक़ों का हर निवासी उनसे भली भांति परिचित था।

नयी सरकार का एक प्रमुख सदस्य लुई वार्ले (१८३९-१८७१) नामक अपार कर्मठता और मज़दूरों के हेतु के प्रति निस्स्वार्थ निष्ठा रखनेवाला स्वशिक्षित जिल्दसाज़ था, जो इंटरनेशनल की परिस शाखा का एक संगठनकर्ता था। वार्ले ने १८ मार्च को थियर द्वारा जनता के विरुद्ध भेजे सैनिकों के ख़िलाफ़ संघर्ष में भाग लिया था और उस क्रांतिकारी सरकार में बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त की। दूवाल (१८४१-१८७१) नाम के ढलाई मज़दूर को, जिसने २२ जनवरी और १८ मार्च के विद्रोहों में भी भाग लिया था, पहले पुलिस विभाग का

सगठन करने के लिए भेजा गया और बाद म जनरल तथा नगर की सशस्त्र सना का एक सेनानायक बना दिया गया। सत्ताईसवर्षीय विद्यार्थी एमिल एद को भी, जिसे पहले दूसरे साम्राज्य के विरुद्ध क्रातिकारी आदोलन म भाग लेने के कारण मृत्युदड सुनाया गया था, केंद्रीय समिति ने जनरल बना दिया। अपनी जवानी के बावजूद अट्ठाईसवर्षीय शार्ल अमूर को, जो पशे से टोपिया बनानेवाला कारीगर था और क्रातिकारी सघर्ष का काफी अनुभव अर्जित कर चुका था केंद्रीय समिति ने १८ मार्च के विप्लव की विजय के बाद अपना प्रतिनिधि बनाकर लियो और मार्सेल्ज भेजा। केंद्रीय समिति के एक और सदस्य छोटी सी लाड्री के मालिक ग्रेन्ये को गृह मत्रालय का प्रतिनिधि (अर्थात व्यवहार मे मत्री) नियुक्त किया गया। अट्ठाईसवर्षीय फ्रासुआ जूर्द को जो इटरनेशनल की पेरिस शाखा म बहुत समय स सक्रिय था, वित्त मत्रालय का डेलीगेट बनाया गया। क्रातिकारी आदोलन के तप हुए वीर, मोची एदुआर्द रूल्ये को, जो १८४८ क जून विद्रोह म भाग ल चुका था, शिक्षा मत्रालय सौपा गया।

राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति एक प्रकार से पेरिसवासियो की इच्छा का सजीव रूप थी। मजदूरो के साथ साथ उसमे दस्तकार चित्रकार और लेखक भी थे और वह राजधानी की नानारूप आबादी, उसके पेशा और हुनरो की व्यापकता का प्रतिनिधित्व करती थी। राजनीतिक एकरूपता का अभाव भी उस काल के फ्रासीसी सर्वहारा की राजनीतिक परिपक्वता क स्तर को सही तौर पर प्रतिबिंबित करता था – केंद्रीय समिति म ब्लाकीवादो प्रूदोवादी नव जैकोबिन और असबद्ध लोकतत्रवादी भी शामिल थे।

राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति की सबसे बडी उपलब्धि यह थी कि जब घटनाक्रम न उस एक बार जन क्राति का नेता बना दिया, तो उसन अपने आपको जनसाधारण के साथ प्रत्यक्ष सबध कायम रखने और उनकी इच्छा को कार्यरूप म परिणत करन के योग्य सिद्ध किया।

स्वय जीवन ने ही केंद्रीय समिति को साहसिक क्रातिकारी नीति पर चलने के लिए विवश कर दिया था।

क्रातिकारी सरकार ने जिस सबसे महत्वपूर्ण कदम के साथ अपने कार्य का समारभ किया, वह था नियमित सेना को विघटित करना, जो अब तक शासक वर्गो के हाथो म महनतकशो के खिलाफ उत्पीडन का साधन थी। पेरिसवासियो ने अपने १८ मार्च क सशस्त्र सघर्ष मे थियेर के फौजी दस्तो को हरा दिया था और उन्हे भागने के लिए मजबूर कर दिया था। १८ और १९ मार्च को पुलिस और राजनीतिक पुलिस ने भी उनका अनुकरण किया और भागकर वर्साई मे शरण ली। १९ मार्च को केंद्रीय समिति ने घेर की स्थिति के उठाये जाने और सैनिक अभिकरणो के खत्म किये जाने की घोषणा

की और राजधानी मे रह गये सभी सैनिको को राष्ट्रीय गार्ड की कतारो म शामिल होने की आज्ञा दे दी। ये सैनिक निरकुशता का खात्मा करने के लिए जान बूझकर उठाये गये कदम थे। नियमित सेना तथा पुलिस को भग करने के बाद त्रातिकारी सरकार ने यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाये कि पेरिस म जो एकमात्र सशस्त्र सेना रहे, वह राष्ट्रीय गार्ड अर्थात शस्त्रधारी जनसाधारण ही हो।

विजयी जन विप्लव के तुरत बाद ही राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति को त्रातिविरोधी सरकारी अधिकारियो के अतर्ध्वस के खिलाफ कदम उठाने के लिए मजबूर होना पडा। १६ मार्च के बाद मत्रालय और प्रशासनिक कार्यालय पूर्णत निर्जन हो गये थे। थियेर सरकार के आदेश का पालन करते हुए जो इस समय वर्साई मे स्थित थी, मत्रालयो और प्रशासनिक कार्यालयो के कर्मचारी काम पर हाजिर नही हुए। लेकिन यह सामूहिक अतध्वस मजदूरो के सकल्प को कमज़ोर नही कर पाया। राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति ने उसी दिन एक आधिकारिक घोषणा जारी करके ऐलान कर दिया कि गणराज्य की नयी सरकार ने सभी मत्रालयो और प्रशासनिक निकायो का नियत्रण अपने हाथो मे ले लिया है।

केंद्रीय समिति के सदस्यो – मज़दूरो छात्रो पत्रकारो और दस्तकारो – को मत्रालयो तथा प्रशासनिक कार्यालयो के कार्य का सगठित करने के लिए भेजा गया। स्वाभाविकत उन्हे राज्य प्रशासन का अनुभव नही था। किंतु वे त्रातिकारी उत्साह से भरे हुए थे और इस नये काम म दिलोजान स लग जाने के लिए और ज़रूरी होने पर जनता के हेतु के लिए अपनी जान तक कुरबान कर देने को तैयार थे और उनके इन गुणो ने अनुभव के अभाव की कमी को पूर्णत पूरा कर दिया। त्रातिकारी सरकार अत्यल्प समय के भीतर जनता की असीम क्रियाशीलता और उत्साह के सहारे राजकीय सस्थाआ को नये लोकतात्रिक सिद्धातो के अनुसार सगठित करन और उनका सुचारु कार्य सुनिश्चित करने मे सफल हो गयी। राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति द्वारा उठाये गये इन कदमो ने बूर्जुआ सैन्य-नौकरशाही राज्यतत्र पर कमरतोड प्रहार किया और उत्पीडको के नही बल्कि उत्पीडितो के हितो का सरक्षण करनेवाले एक नये ही प्रकार के राज्य की नीव डाली।

पेरिस कम्यून – सर्वहारा अधिनायकत्व का पहला प्रयोग

राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति के काम को पेरिस कम्यून न जारी रखा और वह उसे एक मजिल और आगे ले गया। १८ मार्च के सफल विप्लव

के अगले ही दिन केंद्रीय समिति ने घोषणा की कि पेरिस कम्यून के लिए चुनाव होंगे। ये चुनाव २६ मार्च को हुए और २८ मार्च के दिन आतेल दी वील में भारी भीड़ के सामने कम्यून के उद्घाटन की विधिपूर्वक घोषणा कर दी गयी।

कम्यून का निर्वाचन सार्विक पुरुष मताधिकार के सिद्धांत के अनुसार हुआ था। वर्साई स्थित प्रतिक्रांतिकारी सरकार ने जनता से निर्वाचन का बहिष्कार करने की अपील की थी और बूर्जुआ तथा अभिजात मुहल्लों में डाले मतों की संख्या बहुत कम थी। यह तो और भी अच्छा था, क्योंकि इसका मतलब यह था कि कम्यून मुख्यतः मेहनतकशों द्वारा ही चुना गया है। कम्यून के सदस्यों में राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति के वार्ले, दूवाल, जूदे, एद और वाइयां जैसे सबसे प्रमुख लोग भी थे।

राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति की ही भांति कम्यून भी अपने को पेरिस नगर का नगरपालिका निकाय नहीं, वरन जनतंत्र की केंद्रीय क्रांतिकारी सरकार मानता था।

कम्यून ने सर्वोच्च विधानांग के तौर पर काम करते हुए कानून बनाना शुरू कर दिया। साथ ही कम्यून कानूनों के क्रियान्वयन का भी अधीक्षण करता था, अर्थात वह सर्वोच्च कार्यांग भी था। विधायी तथा कार्यपालक शक्तियों का एक ही निकाय में यह संयोजन कम्यून के सबसे महत्वपूर्ण लक्षणों में एक था।

कम्यून ने केंद्रीय समिति द्वारा शुरू किये गये पुराने बूर्जुआ राज्यतंत्र का खात्मा करने की ओर लक्षित कार्य को पूरा किया। नियमित सेना तथा पुलिस को इस समय तक आधिकारिक रूप में भंग किया जा चुका था। अतर्ध्वंसात्मक कार्यों में सलग्न पुराने नौकरशाही तंत्र के स्थान पर जनता की कतारों से आये नये कर्मचारियों को नियुक्त कर दिया गया था। कम्यून ने आनप्तियां अंगीकार करके नौकरशाही के बेहद ऊंचे वेतन पानेवाले सदस्यों को बरखास्त कर दिया और राज्य कर्मचारियों के लिए वेतन की नयी अधिकतम सीमाएं निर्धारित कर दीं, जिनका लक्ष्य औसत सरकारी कर्मचारी के वेतन को कुशल मजदूर के वेतन के स्तर पर ले आना था। कम्यून ने यह भी आदेश दिया कि सरकारी कर्मचारी जनता द्वारा चुने जाने चाहिए, उन्हें जनता के आगे उत्तरदायी होना चाहिए और किसी भी समय जनता की मांग पर वापस बुलाया जा सकना चाहिए।

राष्ट्रीय गार्ड की केंद्रीय समिति तथा कम्यून द्वारा उठाये गये इन सभी कदमों ने एक नये ही प्रकार के राज्य की नींव डाली, जिसकी इतिहास में पहले कोई मिसाल नहीं थी।

लेकिन स्वयं पेरिस के मजदूरों और उनके नेताओं – कम्यून के सदस्यों – तक को इसका अहसास नहीं था कि वे किस चीज का निर्माण कर रहे हैं।

[illegible] पेरिस कम्यून ने सरकारी अधिकारियों को अपने पूर्ण रूप से नियंत्रण में रखा था, [illegible] था। कम्यून के प्रशासन के अधिनायकों की [illegible] के पक्ष में प्रयोग [illegible] था। [illegible] प्रयोग कर यह और जनता के [illegible] उत्तरदायित्व होता था। फिर भी कम्यून ने यह दिखाया कि सरकारी [illegible] सरकार [illegible] और उसके स्थान पर राज्यतंत्र के उच्चतर रूप की स्थापना करने में और इस प्रकार जनतंत्र के उच्चतर स्वरूप—मजदूरों के हितों में, जनता के हितों के—सर्वहारा जनतंत्र का पथ प्रशस्त करने में समर्थ है और इस तरह करना भी चाहिए।

पेरिस कम्यून ने सामाजिक विधिनिर्माण के क्षेत्र में भी बहुत कुछ हासिल किया। मात्र ७२ दिन की अपनी छोटी सी ज़िन्दगी के बावजूद कम्यून ने दिखा दिया कि [illegible] शासन था जिसके लिए पहला और सबसे बड़ा सरोकार मेहनतकश जनसाधारण का कल्याण था।

राष्ट्रीय गार्ड की केन्द्रीय समिति ने सत्ता में आने के साथ कई नये महत्वपूर्ण कानूनी फैसले किये थे। विद्रोह के अगले ही दिन १९ मार्च को उन सभी राजनीतिक बन्दियों के लिए उन्मुक्ति की घोषणा कर दी गयी जिन्हें शासक वर्गों की सरकार ने गिरफ्तार किया या सजा दी थी। गिरवी चीज़ों की बिक्री को निषिद्ध करने और १५ फ्रांक से कम मूल्य की वस्तुएं उनके स्वामियों को लौटाए जाने के बारे में एक आज्ञप्ति स्वीकार की गयी। इसी प्रकार किरायों के न देने पर किरायेदारों को मकानों से निकाला जाना भी निषिद्ध कर दिया गया। इन सभी कानूनों का, जिन्हें बाद में कम्यून ने अनुमोदित किया, उद्देश्य गरीबों और मेहनतकशों के हितों की रक्षा करना था। राष्ट्रीय गार्ड के सैनिकों को नियमित वेतन दिये जाने और गरीबों के लिए अनुदानस्वरूप बांटे जाने के लिए दस लाख फ्रांक विनियुक्त करने की आज्ञप्तियों का भी यही उद्देश्य था।

पेरिस कम्यून ने पहली क्रांतिकारी सरकार के सामाजिक विधान को दृढ़तर आधार प्रदान किया और कई नये महत्वपूर्ण कानून मंजूर किये। १६ अप्रैल को एक आज्ञप्ति जारी करके भूतपूर्व स्वामियों द्वारा परित्यक्त सभी उद्यमों को मजदूरों और उत्पादकों के संघों को हस्तांतरित कर दिया गया।

यह आज्ञप्ति वास्तविक समाजवादी स्वरूप की थी और अगर कम्यून कुछ ज्यादा चला होता तो निस्सदेह उसकी नीति का समाजवादी अतर्य और भी अधिक स्पष्टता के साथ सामने आ गया होता।

इसी प्रकार कम्यून ने आधारभूत महत्व की एक आज्ञप्ति जारी करके पेरिस से भाग हुए बूर्जुआ मालिकों द्वारा त्यक्त सभी फ्लैटो को ज़ब्त करने और उन्हे नगर के रक्षकों को और सबसे पहले उन लोगो का, जिनके आवास लडाई के दौरान क्षतिग्रस्त हो गये थे, बाटने की व्यवस्था की। एक अन्य आज्ञप्ति द्वारा चर्च का राज्य से पृथक्करण कर दिया गया। जनसाधारण के बीच शिक्षा के प्रसार के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाये गये—लूव्र त्यूइल्येरी तथा अमूल्य कला निधियो से युक्त अन्य सग्रहालयो और प्रासादो को सर्वसाधारण के लिए खोल दिया गया और कला की सभी विधाओ तथा स्कूली शिक्षा को हर तरह से बढावा दिया गया।

इन सभी उपायों से कम्यून ने अच्छी तरह से साबित कर दिया कि श्रमिक वर्ग की सरकार जनता के कल्याण के लिए कितना ज़बरदस्त काम कर सकती है। लेकिन कम्यून की उपलब्धियो को अमर बना देनेवाले इन कदमो के साथ-साथ कई गलतिया भी की गयी, जो प्रतिक्रातिकारी बूर्जुआज़ी के विरुद्ध सघर्ष के लिए घातक सिद्ध हुई।

इनमे से सबसे बडी गलतिया वही थी, जो १८ मार्च की शानदार विजय के लगभग तुरत बाद की गयी थी। पहली बात तो यही थी कि कम्यूनियो ने उन सैन्य दलो को नगर से बेरोक टोक जाने दिया, जो थियेर के प्रति वफादार थे। इससे भी बडी गलती यह थी कि पेरिस के लोग अपनी विजय को उसकी तर्कसगत परिणति पर नही ले गये यानी तुरत बढकर वर्साई जाने थियेर की हतोत्साह सेना पर सहारक प्रहार करने और देश भर मे क्राति की विजय सुनिश्चित करने के लिए लडते रहने के बजाय राष्ट्रीय गार्ड की केद्रीय समिति जीवत महत्त्व रखनेवाली आक्रामक नीति से इन्कार कर निष्क्रिय बैठकर यह देखने लगी कि पासा किस तरफ पलटेगा।

इस घातक विलब ने वर्साई स्थित सरकार के लिए अपनी आरभिक पराजय से सभलना, क्राति को पेरिस तक ही सीमित कर देना और नगर पर प्रत्याक्रमण की तैयारी करना सभव बना दिया।

१८ मार्च के फौरन बाद कई और नगरो—लियो, मार्सेल्ज, सा एत्यन तुलूज पर्पीन्या क्रूजो, आदि—मे भी कम्यूनो की स्थापना हो गयी। यह इसका प्रमाण था कि पेरिस मे जो जन विद्रोह फूटा था, वह फैलकर सारे देश को भी अपनी परिधि मे ले सकता था। लेकिन आक्रामक कार्रवाइयो की नितात आवश्यकता को समझ सकने की कम्यून नेताओ की असमर्थता ने बूर्जुआज़ी के लिए देश के विभिन्न भागो मे क्राति के अलग अलग केद्रो को

पेरिस मे कम्यूनियो का वध

कुचल दना मभव बना दिया। अप्रैल क आरभ तक प्राता म इन सभी विद्राहो को कुचला जा चुका था और बूर्जुआ प्रतिक्रातिकारी शक्तियो के लिए अपने सभी प्रयासो का परिस के विरुद्ध सकेद्रित कर देना सभव हो गया था।

इस समय तक पेरिस दश क अन्य भागा से कट चुका था। इन हालतो म राजधानी का श्रमिक वग कृपक समुदाय क साथ आवश्यक सम्पर्क स्थापित नही कर पाया। इस बात की पुष्टि कि कम्यून के नताओ का इस कार्यभार का अहसास था, क्रातिकारी सरकार द्वारा किसानो को सबोधित बहुत सी अपीला स हाती है। लकिन कम्यूनी कृपक समुदाय के साथ यह सम्पर्क स्थापित करन और उसक समर्थन का उपयोग कर सकन की स्थिति म किसी भी प्रकार नही थ।

कम्यूनिया ने सारे ही दश की आर्थिक गतिविधिया के मर्मस्थल फ्रासीसी बैक जैसी अत्यधिक महत्वपूर्ण सस्थाआ के प्रति भी घातक रूप से अनिश्चित और ढुलमुल नीति अपनायी। बैक को राष्ट्रीकृत कर देन और इस प्रकार बूर्जुआजी की आर्थिक शक्ति की जडो को कमजार करन क बजाय कम्यून बैक क मैनेजर स मामूली रकमो के लिए अनुरोध ही करता रहा जब कि

थियर की प्रतिक्रातिकारी सरकार न इसी स्रोत से भारी-भारी रकमो के उपयोग करने म कभी किसी तरह की हिचकिचाहट नही दिखायी।

क्या य गलतिया सायोगिक थी? निस्सदेह किसी भी प्रकार नही। य भाडी भूले गलतिया और मिथ्यानुमान १८७१ मे फ्रासीसी और अतर्राष्ट्रीय मजदूर आदोलन की भी अपरिपक्वता के परिणाम थे। उस समय तक पूजीवाद की निहित क्षमताए अभी समाप्त नही हुई थी। वेशक मजदूर आदोलन अव तक विकास की इतनी ऊची अवस्था म पहुच चुका था कि वह राजनीतिक सत्ता के लिए सघर्ष के भारी महत्त्व को समझ गया था और नयी, वेहतर और अधिक न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का स्थापित करने की अपनी क्षमता का प्रदर्शन भी कर चुका था। फिर भी अभी तक वह अपने को अतीत की अनेक भ्रातियो से मुक्त नही कर पाया था और सामाजिक विकास तथा वर्ग सघर्ष क नियमो की स्पष्ट समझ अभी नही प्राप्त कर पाया था। कम्यून की पराजय के मूल म यही कारण थे।

अपनी सैनिक क्षमता का धीरे धीरे सुदृढीकरण कर लेन के बाद वर्साई सरकार ने अप्रैल के उत्तरार्ध म पेरिस पर अपने आक्रमण का समारभ किया। कम्यूनिया न वड शौर्य के साथ लोहा लिया, किंतु सभी तरफ से कट हान के कारण व श्रेष्ठतर सरकारी सेनाओ का सामना न कर सके। थियर सरकार न फ्रासीसी मजदूरो क प्रतिरोध को कुचलन म सहायता क लिए बिस्मार्क स अनुरोध करके अपने को सदैव के लिए कलकित कर लिया। उस समय फ्रासीसी भूमि पर काबिज जर्मन सैन्यवादियो न सहर्ष थियर की सहायता प्रदान की।

१० मई १८७१ को फ्राकफुर्त म एक अत्यत अपमानजनक सधि पर हस्ताक्षर किय गय। जर्मनी न फ्रास स दो औद्योगिक प्रात–एलसस और लार–छीन लिय और उसस ५०० करोड फ्राक की युद्ध क्षतिपूर्ति की माग की। थियर सरकार न जर्मनी क साथ इस कमरतोड सधि को वडी जल्दी सपन्न कर लिया ताकि स्वदेश म मेहनतकशो क प्रतिरोध को कुचलन क लिए अपने हाथ खाली रख सक।

२२ मई को वर्साई सरकार की सेनाओ न राजधानी म फिर प्रवेश किया और उसीक साथ रक्तरजित मई सप्ताह शुरू हो गया। प्रतिक्रातिकारी सेनाओ न अपनी तोपो और मशीनगनो स कम्यून क रक्षको क विरुद्ध पाशविक प्रतिशोधात्मक कारवाइया शुरू कर दी जो सडको पर मोर्चाबन्दिया कायम करके उनका वीरतापूर्वक सामना कर रहे थे।

२८ मई तक सब कुछ खत्म हो चुका था। इसके बाद बूर्जुआजी न पराजित मजदूरो स पाशविक निर्ममता क साथ बदला लिया। उस समय क बूर्जुआ समाचारपत्र एक ही नारा लगा रहे थे–कम्यूनियो स बदला लो!

और बूर्जुआजी न अमानवीय निदयता क साथ मजदूरो के खून की नदिया वहाना शुरू कर दिया। कम्यून क वीर प्रतिरक्षका का मुकदम चलाय बिना गोलियो स उडा दिया गया। इस तरह मार गय लोगो की सही सख्या कभी नही निधारित की जा सकी है—अनुमान सत्रह हजार स लकर पैतीस हजार तक जात ह। हजारो को गिरफ्तार करक न्यू कलेडानिया क बदनाम उष्ण कटिबधीय प्रदेशा म कालापानी द दिया गया।

कम्यून का पराजित कर दिया गया था और उसक रक्षक शहीदो की मौत मारे गय थ। लकिन चाहे बूर्जुआ प्रतिक्राति सफल हो गयी फिर भी पेरिस के मजदूरा क यशस्वी कारनाम विस्मति क गर्भ म नही समा गय।

परिस कम्यून विश्व क्रातिकारी आदोलन म जबरदस्त प्रगति का सूचक था जिसन सभी को दिखाया कि सर्वहारा का मुक्ति सघर्ष राजनीतिक सत्ता पर कब्ज का तकाजा करता है। क्रातिकारियो की आगामी पीढियो न जिन्होन १८७१ म कम्यूनियो द्वारा शुरू किय महान काय को जारी रखा पेरिस कम्यून की भव्य उपलब्धियो और गभीर गलतियो—दोनो ही स मूल्यवान शिक्षा ली।

चोदहवा अध्याय

उन्नीसवी शताब्दी के अत का पूजीवादी विश्व

पूजीवादी देशो के आर्थिक तथा सामाजिक विकास के मख्य लक्षण

उन्नीमवी सदी क अतिम तीन दशको म पूजीवाद का वडी तेज़ी के साथ विकास हुआ और उसने कितन ही और देशा म अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया (दक्षिण-पूर्वी यूरोप, उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका, जापान और किसी हद तक चीन म भी)। प्रमुख पूजीवादी देशा म पूजीवादी उत्पादन वहुत प्रगति कर रहा था – वहा तेजी से नगर वढ रहे थे और परिवहन तथा सचार साधनो म सुधार आ रहा था। एक ही पीढी क जीवनकाल के भीतर जिदगी विलकुल वदल गयी थी।

उन्नीसवी सदी का अत इस्पात क युग के नाम से जाना जाता है। धातु अव अधिकाधिक वड पैमान पर लकडी की जगह लेती जा रही थी। १८७० और १६०० क वीच इस्पात के उत्पादन मे ५६ गुना वृद्धि हुई। धातुकर्म की अन्य शाखाओ ने भी तेज़ प्रगति की। प्राविधिक तथा प्रौद्योगिक आविष्कारा तथा बढती माग न इजीनियरी उद्योग को भी वढावा दिया। सदी के अत तक ससार के रेलमार्गा का भी ज़बरदस्त विस्ता[illegible] चुका था और उनकी कुल लवाई १८७० के २१० हजार किलामी[illegible] मुकाबले १६०० मे ८०० हज़ार किलोमीटर हो गयी थी। उन्नीसवी सदी के अतिम दशक म कई शहरो म घुडट्रामो की जगह एक नये आविष्कार – बिजली की ट्रामो – ने ले ली थी। विजली का अब उद्योग, परिवहन तथा सचार मे व्यापक उपयोग होने लगा था। सदी क अत मे टेलीफोन भी वैसा ही दैनदिन सुविधा साधन वन गया जैसा कि कुछ समय पहले तार वना था।

इस समय तक उद्योग व्यापार तथा वैकिग म सकेद्रण महत्वपूर्ण भूमिका अदा करन लग गया था। लगातार तेजी पकडती होड मे अव वडे उद्यमा न वाज़ार स मझोले और छोटे उद्यमा को वेदखल करना शुरू कर दिया था।

विश्व आर्थिक सकटो के दौरान, जो नियमित अतराला – लगभग हर दस वर्ष बाद – पर आते थे, बडे उद्यम विनाश के कगार पर खडे छोटे उत्पादको को लीलने लग जाते थे। आर्थिक जीवन के कितने ही क्षेत्रा मे शक्तिशाली इजारे या एकाधिकार (मोनोपोली) – बडे बैक ट्रस्ट और सयुक्त पूजी कपनिया – पैदा हो गये। इस तरह की इजारेदारिया धीरे धीरे बैकिग और उद्योग क अपन विशिष्ट क्षेत्रो मे प्रमुख भूमिका निबाहन लगी।

उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरवर्ती भाग का पूजीवादी विकास अपेक्षाकृत "शातिपूर्ण" ढग का था। उसके अतिम तीस वर्षो मे न कोई बडी क्रातिया और न ही महाद्वीपीय पैमाने की लडाइया ही हुई। बेशक, इस काल मे भी उत्पीडित जनगणो मे अनेक क्रातिकारी विप्लव फूटे और एशिया तथा अफ्रीका क जनगण के विरुद्ध औपनिवेशिक लूटखसोट के नन्हे युद्धो ' का लगातार सिलसिला चलता रहा मगर फ्रास प्रशा युद्ध और १८७१ के पेरिस कम्यून के बाद से ससार को १६०४-१६०५ के रूस-जापान युद्ध और १६०५-१६०७ की रूसी क्राति क अलावा किसी भारी उथल पुथल का सामना नही करना पडा। फिर भी पूजीवादी विश्व म अतर्विरोध बढते जा रहे थे। और उनका अतत विस्फोट होना अनिवार्य था। इस काल म पूजीवादी देशो के आर्थिक तथा राजनीतिक विकास की गति सर्वथा असमान थी।

जर्मन बूर्जुआ युकर साम्राज्य

१८७१ म जर्मनी का एकीकरण सपन्न हो जाने के बाद देश का बडी तेजी के साथ आर्थिक विकास शुरू हो गया। फ्राम प्रशा युद्ध क बाद युद्ध क्षतिपूर्ति के रूप म फ्रास से वसूले ५०० करोड फ्राक न जर्मन उद्योग को महत्वपूर्ण उद्दीपन प्रदान किया। उन्नीसवी शताब्दी के अत तक जर्मन उद्योग फ्रास के उद्योग को वृद्धि की गति ओर विकास के स्तर – दोना ही म पीछे छाड चुका था और कुछ क्षेत्रो मे ब्रिटेन से भी आगे निकल गया था। इस समय तक जर्मनी ससार की एक प्रमुख औद्योगिक शक्ति बन चुका था और रासायनिक उद्योग तथा विद्युत-प्रौद्योगिकी मे वह उन देशो को भी बहुत पीछे छोड गया था जहा पूजीवाद ने कही पहले जडे जमायी थी। जमन कृषि भी तजी के साथ पूजीवादी स्वरूप ग्रहण करती जा रही थी – विराट युकर फार्म पूजीवादी ढग के अनाज तथा मास उत्पादक कारखानो जैसे बन गये थे।

लेकिन जर्मनी की इस सारी आर्थिक उन्नति के बावजूद वहा किमी भी प्रकार की कोई सामाजिक प्रगति नही हुई थी। जर्मनी अब भी उन बहुत कम युरोपीय देशो म एक था, जिन्होने किसी सफल जन क्राति का अनुभव नही किया था और इस कारक न देश के समस्त भावी

विकास उसकी जनता और उसकी राष्ट्रीय परपरा पर अपनी छाप छाडी।

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है देश का एकीकरण प्रतिक्रियावादी प्रशा और उसके होहेनजोलर्न शासकों के अधीन स्पष्ट सैन्यवादी प्रकार के अर्धनिरकुश जर्मन साम्राज्य के रूप में सपन्न हुआ था। अभिजाता, युकरो और सैन्यशाही के सभी आर्थिक तथा राजनीतिक विशेषाधिकार पूर्ववत् बने रहे थे और वे पहले ही की तरह देश के मामलों में मुख्य भूमिका अदा करते रहे।

पूरे बीस साल – १८६० तक – जर्मन साम्राज्य की आतरिक तथा विदेश नीति चासलर बिस्मार्क के हाथों में रही। यह चालाक और सिद्धातशून्य राजनीतिज्ञ देश के उन्नतिशील पूजीवाद के हितों का सवर्धन करने का अभिलाषी था। उसने देश की सैन्य शक्ति को भरसक बढाया और जटिल राजनयिक जोडतोड के जरिये जर्मनी के लिए यूरोप के मामलों में निर्णायक भूमिका सुनिश्चित करने का प्रयास किया। उसने प्रशा तथा होहेनज़ोलर्न वश के अधीन जर्मन एकता के सुदृढीकरण के लिए सारा जोर लगा दिया था और उसके लिए जर्मनी का प्रमुख शत्रु देश के सीमाओं के भीतर ही, अपना मजदूर वर्ग था। १८७८ और १८६० के बीच उसने समाजवाद विरोधी 'असाधारण कानून'' लागू करके जर्मन सामाजिक जनवादी पार्टी पर पाबदी लगा दी। लेकिन इससे जर्मन श्रमिक वर्ग निरुत्साहित नहीं हुआ और आगस्त बेबेल तथा विल्हेल्म लीब्कनेख्त के नेतृत्व में सामाजिक जनवादी पार्टी सुदृढ होती गयी और अपनी राजनीतिक चेतना बढाती गयी। जर्मन प्रतिक्रियावादियों की आशाओं के विपरीत देश मे पार्टी का प्रभाव घटा नहीं, बल्कि और प्रबल ही बना। १८६० मे समाजवाद विरोधी कानूनों को वापस ले लिया गया। यह बिस्मार्क की एक गभीर पराजय और जर्मन मज़दूर वर्ग की जबरदस्त जीत थी।

नये सम्राट (कैसर) विल्हेल्म द्वितीय (शासनकाल – १८८८ १६१८) के गद्दी पर बैठने के बाद जो सभी राजकीय मामलों में मुख्य भूमिका अदा करने का आकाक्षी था बिस्मार्क के लिए अपने पद से त्यागपत्र दे देने के अलावा और कोई चारा न रहा। लेकिन इस नये निजाम मे भी जर्मन नीति की सैन्यवादिता के कम होने का कोई आसार नजर नहीं आया। पिछली शताब्दी के अतिम दशक में जर्मन उद्योग की और उन्नति हुई। देश की आर्थिक शक्ति के बढते जाने के साथ साथ जर्मन पूजीपतियों की आकाक्षाए भी अधिकाधिक बढती गयी। जर्मन शासक वर्ग विश्व नीति'' की बातें करने लगे और जर्मनी भी विदेशी उपनिवेशों को हथियाने तथा जलसेना का निर्माण करने की दौड में शामिल हो गया। विल्हेल्म द्वितीय इस 'फौलादी पजे' की नीति का पक्का समर्थक था और उसके सैन्यवादी साम्राज्य ने विश्वयुद्ध के लिए अप्रच्छन्न तैयारियां करना शुरू कर दिया।

इधर ब्रिटेन ने जो पिछली डेढ सदियो से पश्चिमी जगत का अगुआ रहता आया था, उन्नीसवी सदी के अतिम तीस वर्षो मे अपनी पुरानी प्रमुखता को गवाना शुरू कर दिया था।

यह सही है कि ब्रिटेन के पास अब भी विराट औपनिवेशिक साम्राज्य था जो उसके लिए अकूत समृद्धि का स्रोत था और उसकी शक्तिमत्ता का मुख्य आधार था। उसके पास ससार का सबसे बडा व्यापारी बेडा और सबसे बडा जगी बेडा भी था और दुनिया भर मे उसके अपार पूजी साधन लगे हुए थे। लेकिन साथ ही यह भी सही था कि ब्रिटेन के पास अब वह औद्योगिक एकाधिकार नही रह गया था जिसे उसने उन्नीसवी सदी के पूर्वार्ध तक इतनी सफलता के साथ बनाये रखा था। अब सयुक्त राज्य अमरीका औद्योगिक उत्पादन के परिमाण मे उसे पीछे छोड चुका था और कुछ क्षेत्रो मे जर्मनी भी उससे आगे निकल गया था। औद्योगिक वृद्धि की दर के लिहाज से भी ब्रिटेन अब कई युवा पूजीवादी राज्यो से पीछे पड गया था।

ब्रिटेन के शासक वर्गो ने औपनिवेशिक साम्राज्य का और अधिक प्रसार करके ससार मे अपने देश की स्थिति को मजबूत करने का प्रयास किया। आठवे दशक के अत मे ब्रिटेन ने दक्षिणी अफ्रीका मे जूलुओ के विरुद्ध विनाशकारी युद्ध छेड दिया, जिससे वह विशाल प्रदेशो को हथियाने मे सफल हो गया। इसी समय उसने अफगानिस्तान के खिलाफ भी लबा औपनिवेशिक युद्ध चलाया जिसकी जनता ने अपनी स्वतत्रता की सफलतापूर्वक रक्षा की। १८८२ मे ब्रिटेन ने मिस्र पर कब्जा कर लिया। इसके कुछ पहले ब्रिटेन राजनयिक तिकडमो के जरिये साइप्रस को तुर्को से छीनने मे सफल हो गया था और १८७८ मे उसने उसे अपने साम्राज्य मे मिला लिया। सूडान को नवे दशक मे कब्जे मे लाया गया और वर्मा को १ जनवरी १८८६ को साम्राज्य मे शामिल कर लिया गया। ब्रिटिश औपनिवेशिक साम्राज्य अपने सीमातो को फैलाता और अफ्रीका, एशिया तथा ओशेनिया मे अपने अधीनस्थ जनो को शोषण और दमन के शिकजो मे कसता चला गया।

इस पूरे काल मे आयरलैड का प्रश्न ब्रिटेन मे राजनीतिक विवाद का एक मुख्य विषय बना रहा — मरकत द्वीप (आयरलैड) के पराभूत निवासियो ने अग्रेज उत्पीडको के विरुद्ध अदम्य सघर्ष को जारी रखा।

उन्नीसवी सदी की अतिम तिहाई मे ब्रिटेन की राजनीतिक सत्ता दो बूर्जुआ पार्टियो — उदार (लिबरल) और अनुदार (कजरवेटिव) — के बीच बदलती रही। उदार नेता विलियम ग्लैडस्टन (१८०९ १८९८) जो चार

बार प्रधान मंत्री बना राजनीतिक समझौतो और राजनीतिक गुत्थियो को सुलझान म माहिर था। अनुदार नेता बेजामिन डिज्राएली (१८०४ १८८१) ताकत पर अधिक भरोसा करता था, खासकर अतर्राष्ट्रीय सबधो के क्षेत्र म। वह खतरे से खेलने का शौकीन था। सारत दोनो ही दलो की नीतियो म बहुत सामान्यता थी – उदार और अनुदार, दोना ही ब्रिटिश बडे बूर्जुआजी, भूस्वामियो और उपनिवेशको के हितो के सरक्षक थे। लेकिन देश की आबादी मे मजदूरो और उनके परिवारो की भारी बहुसख्या को देखते हुए उन्हे धीरे धीरे कुछ लोकतान्त्रिक तथा सामाजिक सुधार भी करन पडे, हालाकि उनका असली उद्देश्य देश के मामलो मे सभ्रात वर्गो के प्रभुत्व को कायम रखना ही था। आठवे दशक म बहुत से नये और महत्त्वपूर्ण सामाजिक कानून मजूर किये गये – १८८० मे प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बना दिया गया, टेड यूनियनो को वैध कर दिया गया, बाल श्रम के सरक्षण के लिए नये कानून बनाये गये और १८७५ के लोक स्वास्थ्य अधिनियम क अतर्गत देश भर म लोक स्वास्थ्य अधिकारी नियुक्त किये गये। १८८४ के तीसरे ससदीय सुधार विधेयक ने मताधिकार का प्रसार करके पुरुष निर्वाचको की सख्या को दोगुना कर दिया।

ये आशिक रिआयते जिन्हे देने के लिए शासक वर्गो को मजबूर होना पडा था, ब्रिटिश श्रमिक वर्ग की राजनीतिक सरगरमी का परोक्ष परिणाम थी। पिछली सदी के अत मे ट्रेड-यूनियन ही ब्रिटिश सर्वहारा के मुख्य सगठन थे। नवे दशक मे जाकर ही ब्रिटिश मजदूर आदोलन म समाजवादी सगठन पैदा होन लगे थे और वे भी बहुत छोटे और कम असरवाले थ। १८९३ म स्वतत्र मजदूर दल (इडीपेडेट लेबर पार्टी) की स्थापना हुई जिसका नेता कीर हार्डी (१८५६-१९१५) था। इस पार्टी ने सर्वहारा के राजनीतिक सघर्ष को अन्य सभी चीजो के मुकाबले प्राथमिकता दी। लेकिन फिर भी वह ब्रिटिश सर्वहारा का जुझारू क्रातिकारी सगठन बनने के योग्य सिद्ध न हो सकी।

इस काल के ब्रिटिश मजदूर अक्सर बडे पैमाने की हडताल किया करते थे लेकिन उन्नीसवी सदी के अतिम चरण के इस हडताल आदोलन मे चार्टिस्ट आदोलन के मुकाबले निश्चित रूप मे कम जुझारूता थी। इसका एक महत्वपूर्ण कारण यह था कि उस समय तक बूर्जुआजी मजदूर अभिजात वर्ग ' के रूप मे समर्थन के एक विश्वस्त आधार का निर्माण कर चुका था, जिसम कुशल मजदूरो के बेहतर वेतन पानेवाले सस्तर शामिल थे।

बेशक सर्वहारा के सभी अशक बूर्जुआजी के प्रभाव के इस हद तक शिकार नही हुए थे फिर भी सगठित मजदूर आदोलन – ट्रेड-यूनियनो, स्वतत्र मजदूर दल और सहकारी आदोलन – की कतारो म बूर्जुआजी का प्रभाव अवसरवादी विचारधारा और कार्यनीति म प्रतिबिबित होता था।

कम्यून की पराजय के बाद सघर्ष के वर्षों मे बूर्जुआ गणतत्रवादी लियो गाबेता (१८३८-१८८२) और जूल फरी (१८३२-१८९३) ने जनता को सुधारो के व्यापक कार्यक्रम का आश्वासन दिया था। लेकिन सत्ता मे आने के बाद उन्होने इन सुधारो के एक छोटे से हिस्से को ही कार्यरूप मे परिणत किया और वह भी थोडी थोडी मात्रा मे और काफी लबे-लबे अतराल के बाद। १८८० मे कम्यूनियो के लिए दडमुक्ति की घोषणा की गयी और नवे दशक के आरभ मे अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का प्रचलन हुआ, ट्रेड-यूनियनो को वैध किया गया और प्रेस स्वातन्त्र्य को प्रत्याभूत किया गया। ये सुधार महत्वपूर्ण थे किंतु मेहनतकशो को सतुष्ट करने के लिए वे काफी नही थे। श्रमिक वर्ग ने औपनिवेशिक प्रसार की नीति का भी विरोध किया, जिसे बूर्जुआ सरकार अपने हितो का सवर्धन करने के लिए प्रोत्साहन प्रदान कर रही थी। फ्रास ने १८८१ मे ट्यूनीशिया को कब्जे मे ले लिया। १८८३ से १८८५ के निर्ममतापूर्ण युद्ध के बाद वियतनाम को हिंदचीन मे फ्रासीसी प्रदेशो के साथ सलग्न कर दिया गया। नवे और दसवे दशको मे फ्रासीसी उपनिवेशवादियो ने मडागास्कर को और विषुवतीय तथा उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका मे विशाल प्रदेशो को दबोच लिया।

१८७९ १८८० मे फ्रास मे मजदूर दल की स्थापना की गयी, जिसके नेता समाजवाद के वीर सघर्षकर्ता जूल गेद (१८४५-१९२२) और पोल लफार्ग (१८४२-१९११) थे। गेद तथा लफार्ग कार्ल मार्क्स के शिष्य और अनुगामी थे और वे अकसर मार्क्स तथा एंगेल्स की सलाह सम्मति लेते रहते थे। फ्रासीसी मजदूर दल का दृष्टिकोण बुनियादी तौर पर मार्क्सवादी था।

लेकिन मजदूर दल के साथ-साथ फ्रासीसी मजदूर आदोलन मे कई और गैर-मार्क्सवादी दल भी पैदा हो गये, जैसे ब्लाकीवादी सभवतावादी (जो खुले तौर पर अवसरवादी थे) और अलेमानवादी। फ्रासीसी ट्रेड-यूनियन आदोलन मे अराजकतावादी श्रमिकसघवादियो को व्यापक प्रभाव प्राप्त था। फ्रासीसी मजदूर आदोलन मे इस फूट और समागता के अभाव के कारण सर्वहारा की स्थिति कमजोर हुई और मेहनतकश जनता के अन्य अशको को प्रभावित करने की उसकी क्षमता मे भी कमी आयी।

इस स्थिति का पूरा लाभ उठाते हुए बूर्जुआजी के शासक वर्गो ने न सिर्फ कोई और सुधार करने से ही इन्कार कर दिया, बल्कि लोकतात्रिक शक्तियो पर खुले आक्रमण के रास्ते पर भी चलना शुरू कर दिया। अतिम दशक मे बूर्जुआ गणतत्रवादियो और राजतत्रवादियो मे फिर मेल हो गया। इन दोनो ने अपने पुराने मतभेदो को भुला देना सही समझा और एक दूसरे की तरफ सुलह का हाथ बढाया। उन्हे उनके सामान्य लक्ष्य साथ लाये थे

और वे ये घरेनू नीति म लोकतत्र का विरोध करना और विदेश नीति म औपनिवशिक लूट स अधिकतम मुनाफ बटारना। धनकुबेर और सेना तथा पादरी वर्ग क उच्च सस्तर अपन मतभेदो को भुलाकर धीर धीरे मयुक्त प्रतिक्रियावादी गुट म एक्यवद्ध हो गय।

अतिम दशक म प्रतिक्रिया और नोकतत्र की गक्तिया म प्रखर सघर्ष चला। प्रमुख फ्रासीसी लखका न लोकतात्रिक आदोलन की कतारा म श्रमिक वग के साथ मिलकर सघर्ष म भाग निया। इनम एमील ज़ोला (१८४० १९०२) और अनातोल फ्राम (१८४४ १९२४) जैस विशिष्ट व्यक्ति भी थे। धीर-धीरे सघर्ष क दौरान लोकतत्र की शक्तिया का पलडा भारी हान लगा और प्रतिक्रिया को रिआयत दन क लिए विवश होना पडा। फिर भी फ्रासीसी बूजुआज़ी न, जिम अत्र तक प्रचुर अनुभव प्राप्त हा चुका था वामपथी गक्तियो की निर्णायक विजय को रोकन के लिए कारगर कदम उठाय। कुटिल जोडतोड से उसन अपने विरोधिया की कतारो मे फूट पैदा कर दी। १८९९ म वाल्दक रूमो क नतृत्व म नयी बूर्जुआ सरकार कायम की गयी जिसमे समाजवादी अलेक्मादर मिल्यरा का भी शामिल होन का निमत्रण दिया गया। मिल्यरा की स्वीकृति न ममाजवादी आदोलन की कतारो म फूट डाल दी— दक्षिणपथिया न उमका अनुमादन किया और वामपथिया न उसकी आलोचना की। ममाजवादी आदोलन म इसस उत्पन्न फूट न सारी ही लाकतात्रिक गक्तिया को कमजोर किया।

सयुक्त राज्य अमरीका का तीव्र पूजीवादी विकास

गहयुद्ध समाप्त होन के बाद सयुक्त राज्य अमरीका न तीव्र आर्थिक विकास के युग मे प्रवश किया। अत्यल्प समय क भीतर वह ससार क आर्थिक दप्टि स सबस उन्नत राज्या म एक हो गया। १८६० म मयुक्त राज्य अमरीका को औद्योगिक उत्पादन क परिमाण क लिहाज स दुनिया मे चौथा स्थान प्राप्त था किंतु १८९४ तक वह अन्य पूजीवादी दशा को बहुत पीछ छाडकर सर्वोच्च स्थान पर पहुच गया। रलमार्गो के जाल न देश क विस्तार का आरपार काट दिया था और लाखा की आबादीवाल न्यूयार्क और गिकागा फिलाडेल्फिया तथा सान फासिस्को जैसे नगर यूरोप क लिए सर्वथा अनदखी अनजानी रफ्तार से बढ ने लग गय थे। अमरीकी फार्मर इडियनो को उनकी पारपरिक वासभूमियो से खदड बाहर करते हुए पश्चिम की असीम उपजाऊ भूमिया पर आबाद होते जा रहे थे। अतहीन खुले इलाको की उपलभ्यता और श्रमशक्ति क अभाव से मशीना के प्रचलन को प्रोत्साहन मिला। सयक्त राज्य अमरीका

ने कुछ ही समय के भीतर उद्योग के सभी क्षेत्रो मे यंत्रीकरण का अनुपम स्तर प्राप्त कर लिया।

गृहयुद्ध के बाद दासप्रथा के उन्मूलन ने सर्वतोमुखी पूजीवादी विकास के मार्ग मे अंतिम बडे अवरोध को भी मिटा दिया और असीमित आर्थिक प्रसार का पथ उन्मुक्त कर दिया। लेकिन इसका एक नकारात्मक पहलू भी था। पूजीवादी होड से जनित भीषण आपाधापी और धन के लिए गलाकाट स्पर्द्धा अमरीकी जीवन के अभिन्न लक्षण बन गये। सबसे खसोटू धनलिप्सुओ ने बेहिसाब दौलत जमा कर ली और उसके लिए वे कोई भी छल, बदमाशी या अपराध करने को तैयार रहते थे। वाडरविल्ट, राकफैलर, मार्गन और गूल्ड जैसे महान अमरीकी धनकुबेरो ने एेसे ही तरीको से अपनी अपार सपत्तिए एकत्र की थी। उस काल के श्रेष्ठ अमरीकी लेखको, जैसे मार्क ट्वेन (१८३५-१९१०) जैक लडन (१८७६-१९१६) और ओ'हैनरी (१८६२-१९१०) ने हिंसा, छल अपराध और नयी दुनिया के इस सपन्न गणराज्य को अपनी गिरफ्त मे जकड लेनेवाली इस अधी होड का भरपूर परदाफाश किया है।

अपनी सहगामी बुराइयो के साथ अमरीकी पूजीवाद के इस तीव्र विकास का एक और पहलू ' गैर-अमरीकी मूल ' के मजदूरो के खिलाफ जातीय विभेद और निर्मम शोषण था। आप्रवासी मजदूरो, अमरीका मे जन्मे चीनियो व जापानियो, लैटिन अमरीकी देशो से आये लोगो और सबसे बढकर नीग्रो लोगो को याकियो (गोरे अमरीकियो) के मुकाबले कही बदतर हालतो मे रहना और काम करना पडता था। वे अमरीकी मजदूरो की तुलना मे कम मजदूरी पर और कही ज्यादा काम करते थे और बुनियादी मानव अधिकारो से भी वचित थे। १८८१ मे टैनसी मे एक कानून द्वारा नीग्रो लोगो का उन रेल के डिब्बो मे सफर करना वर्जित कर दिया गया, जिनमे गोरे लोग सफर करते थे। बाद मे अन्य दक्षिणी राज्यो मे भी विभेदमूलक कानून बनाये गये और नीग्रो लोगो को लगभग सभी राजनीतिक अधिकारो से वचित करके ' दूसरे दरजे ' के नागरिक बना दिया गया।

इस प्रकार ससार मे सबसे उन्नत प्रविधि और उच्चतम औद्योगिक वृद्धि-दर रखनेवाला सयुक्त राज्य अमरीका एक एेसा देश बन गया, जिसमे मात्र चमडी के रग के आधार पर ही आबादी के एक बहुत बडे हिस्से के खिलाफ निर्मम विभेद और अधेरगरदी का बोलबाला था।

जापान का पूजीवादी विकास

१८६७ १८६८ की बूर्जुआ क्राति अथवा माइजी प्रत्यावर्तन ने जापान मे अपेक्षाकृत तीव्र पूजीवादी विकास का पथ उन्मुक्त कर दिया। सामती

फूट और भूस्वामित्व के सामती स्वरूप अब अतीत की बात बन गये और हर रही बड पैमाने के उद्योग पैदा होने लगे। कृषक समुदाय के दबाव से जो सामती प्रथाओ के अवशेषो के विरुद्ध सघर्ष किये जा रहा था शासक वर्गो को कई कृषि सुधार करने पडे। १८७२-१८७३ मे किये गये एक सुधार ने भूधृति को उन लोगो का अधिकार बना दिया जो व्यवहार मे उसके स्वामी थे अर्थात जिन लोगो का भूधृति अधिकार मौरूसी था वे अपने द्वारा काश्त की जानेवाली जमीनो के स्वामी बन गये और जो लोग उसे अस्थायी तौर पर लगान पर लेते थे उनका स्वामित्व जाता रहा। रेहन जमीन उनकी सपत्ति बन गयी, जिन्होने धन देकर उन्हे छुडा लिया। इस सुधार ने भूस्वामियो धनी किसानो व्यापारियो और महाजनो को भारी लाभ पहुचाया जिनके पास किसान पहले अपनी जमीन रेहन रखा करते थे। किसानो का पहले जिन जमीनो पर स्वामित्व था उनका कोई तिहाई हिस्सा उनके हाथो से निकल गया। शामिलात जमीन – वन चरागाह और मैदान – सम्राट की सपत्ति बन गयी, जिससे वह देश का सबसे शक्तिशाली भूस्वामी हो गया। छोटी जोतो के मालिको के लिए जो पहले ही सिर तक कर्जो मे डूबे हुए थे और जिन पर अब बढे हुए लगानो का और बोझ आ पडा था, कुछ ही समय के भीतर नये सुधार से प्राप्त जमीनो को अपने हाथो मे रख पाना असभव हो गया और वे भूस्वामित्व के सभी अधिकारो से हीन असामी काश्तकार बनकर रह गये। उनकी जमीन बडे भूस्वामियो और धनी किसानो की सपत्ति बन गयी, जिन पर वे शीघ्र ही अपनी जीविका के लिए आश्रित हो गये।

इसका यह मतलब था कि देहात मे अर्धसामती व्यवस्था ही बनी रही जिसने कृषि मे पूजीवादी विकास को अवरुद्ध किया। सुधार के बाद के प्रारभिक वर्षो मे उद्योग मे भी अपेक्षाकृत मद पूजीवादी विकास का यही कारण था। लेकिन बूर्जुआजी की भूमिका के अधिक महत्वपूर्ण होते जाने के साथ साथ सरकार औद्योगिक उपक्रम को अधिक सक्रिय प्रोत्साहन प्रदान करने और नये कारखानो के निर्माण मे काफी पूजी लगाने लगी। उन्नीसवी सदी के अतिम दशक मे जापान मे सामती काल से ही चले आ रहे पुराने वाणिज्यिक घरानो की बुनियाद पर पहले इजारो का उदय होना शुरू हुआ।

औद्योगिक विकास के साथ-साथ श्रमिक वर्ग भी बढता गया। जापान मे पहली ट्रेड-यूनियन उन्नीसवी सदी के बिलकुल अत मे पैदा हुई। उनकी स्थापना को प्रगतिशील मजदूरो और बुद्धिजीवियो के नेतृत्व मे ट्रेड-यूनियन स्थापना समाज ने उत्प्रेरित किया था। इस समाज का अध्यक्ष सेन कातायामा (१८५९-१९३३) था। १८९८ मे जापान मे पहले मई दिवस प्रदर्शन का आयोजन किया गया।

मजदूर आदोलन की ओर उन्नति को रोकने के लिए १६०० मे सरकार ने एक व्यवस्था अनुरक्षण कानून जारी करके हडतालो को निषिद्ध कर दिया। पुलिस के दमन के कारण कई ट्रेड-यूनियनो ने अपनी सरगरमियो को कम कर दिया। लेकिन १६०१ मे ही मज़दूर आदोलन ने फिर जोर पकडना शुरू कर दिया। कातायामा कातारू और कावाकामी जैसे प्रगतिशील बुद्धिजीवी और मजदूर आदोलन के नेता इस निष्कर्ष पर पहुचे कि समाजवाद के परचम के नीचे संघर्षशील मजदूरो की राजनीतिक पार्टी को स्थापित किया जाना अत्यावश्यक है। उसी साल २० मई को सामाजिक-जनवादी पार्टी की विधिवत स्थापना की गयी। पार्टी का कार्यक्रम संघर्ष के सिर्फ वैध तरीको को ही मान्यता देता था और सार्विक मताधिकार के लिए आदोलन को अपना मुख्य कार्यभार मानता था। इसके अलावा उसमे सेना मे कमी करने, उच्च सदन के उन्मूलन और आम चुनावो की भी माग की गयी थी। सरकार ने तुरत ही पार्टी को अवैध घोषित कर दिया।

उन्नीसवी शताब्दी के अत मे अपने उदय के समय से ही जापानी साम्राज्यवाद सैन्य सामतवादी स्वरूप का था, क्योकि देश का इजारेदार पूजीवाद अब भी पूर्व-पूजीवादी उत्पादन सबधो के जटिल जाल से छूट नही पाया था। देश के राजनीतिक जीवन मे सामती अवशेष सैन्य तथा भूस्वामी हलको के जबरदस्त प्रभाव मे विभिन्न निरकुशतावादी प्रवृत्तियो मे, ससदीय प्रणाली की कमज़ोरी मे, राज्यतत्र मे सेना के प्रतिनिधियो के प्रभुत्व मे और इस बात मे अभिव्यक्त होते थे कि जनसाधारण सभी राजनीतिक अधिकारो से पूर्णत वचित थे।

जापानी शासक हलको ने सुसज्जित सेना का निर्माण करने के लिए धन की कभी कजूसी नही की। इस काल मे जापानी सैन्यवादियो की आक्रामक योजनाओ मे कोरिया को एक प्रमुख स्थान प्राप्त था। उसपर कब्जा करने के लक्ष्य से जापान ने १८६४ मे चीन पर आक्रमण किया और अपने अतिविशाल पडोसी को बडी जल्दी ही पराजित कर दिया। इस सैनिक सफलता और चीन से प्राप्त भारी युद्ध क्षतिपूर्ति ने जापान के पूजीवादी विकास के लिए शक्तिशाली उद्दीपन का काम किया।

चीन पर विजय से देश मे उग्र अधराष्ट्रवादी प्रचार की जबर्दस्त लहर भी दौड गयी। जापानी शासक हलको ने कोरिया, चीन के उत्तर पूर्वी प्रातो, मगोलिया और पूर्वी साइबेरिया सहित "महान जापानी साम्राज्य" के निर्माण के विचारो का प्रचार करते हुए औपनिवेशिक प्रसार की भाति भाति की योजनाए बनाना शुरू कर दिया। जापानी बूर्जुआज़ी को जारशाही रूस ही एशिया मे अपने प्रभुत्व के सघर्ष मे मुख्य प्रतिद्वद्वी नजर आता था, जो उसकी तरह ही चीन तथा कोरिया मे पैर जमाने को आकाक्षी था।

मिर्फ ब्रिटन म ही नही जिसक साथ जापान न १९०२ म रूस क विरुद्ध लक्षित मधि मपन्न कर ली थी बल्कि अमरीका स भी समर्थन का आश्वासन पाकर जापान न १९०४ म रूम पर हमला कर दिया। प्रगतिशील जापानी मजदूर रूमी प्रगतिशील मजदूरो की भाति अच्छी तरह समझते थ कि यह युद्ध बूर्जुआजी क हितो का सवर्धन करने के लिए लडा जा रहा था जबकि उसस दोनो ही देशो क महनतकशो को कठिनाइयो और अभावो क अलावा और कुछ नही मिलनवाला था। अगस्त १९०४ म एमस्टरडम म हुई दूमर इटरनशनल की काग्रेस म प्लेखानाव तथा कातायामा न एक दूसरे का मित्रो की तरह अभिवादन किया। लेकिन उस समय मजदूर सगठन इतने शक्तिशाली नही थ कि अपनी अपनी सरकार पर दबाव डाल पाते। फलस्वरूप युद्ध चलता ही रहा। जारशाही को जापानी सैन्यवादियो के विरुद्ध इस युद्ध म मानमर्दक हार खानी पडी। दश के भीतर क्राति को कुचलन और किसी भी कीमत पर अपनी सत्ता कायम रखने के लिए जारशाही को १९०५ मे पाट्समथ की मधि करनी पडी जिसन जापान को काफी रिआयत प्रदान की। उसक अतगत दक्षिणी सखालिन जापान को दे दिया गया और उसके परिणामस्वरूप रूस अपने एक प्रशात सागरद्वार से वचित हो गया। कमचात्का तथा चुकोत्का के रूसी प्रदेशो के साथ सचार तक जापान के नियत्रण मे आ गया।

पोर्टसमथ की मधि न लम्बे समय के लिए सुदूर पूर्व म शक्ति सतुलन को तत्वत बदल दिया। जापान को भी अब महाशक्ति माना जाने लगा। फिर भी इस सधि ने जापानी सैन्यवादियो की क्षुधा को सतुष्ट नही किया न युद्धलिप्सु जापानी भूस्वामियो और बूर्जुआजी के आक्रामक मिजाज को ही ठडा किया। १९०६ म जापानी सैन्यवादियो ने सरकार को सेना तथा जलसेना क प्रसार का अधिक महत्वाकाक्षी कार्यक्रम स्वीकार करन के लिए राजी कर लिया।

रूस-जापान युद्ध के बाद जापानी बूर्जुआजी न जिसकी शक्ति इस विजय के परिणामस्वरूप सुदृढ हो गयी थी देश की अर्थव्यवस्था और विशेषकर उद्योग के तीव्र विकास को बढावा दिया। १९०५ और १९१३ के बीच अर्थव्यवस्था मे ३८० करोड येन का निवेश किया गया जिसका ४६ ८ प्रतिशत सिर्फ उद्योग पर ही लगाया गया था। यह निवेश जल्दी ही प्रभावशाली परिणाम उत्पन्न करन लगा – कच्चे लोहे का उत्पादन १९०६ मे १४५ ००० टन से बढकर १९१३ मे २४३,००० टन हो गया इसी काल मे इस्पात का उत्पादन ६९,००० टन से बढकर २,५५ ००० हो गया और उद्योग म बिजली के उपयोग मे भी तेज वृद्धि हुई। इस काल म उत्पादन तथा पूजी के सकेद्रण न भी तीव्र प्रगति की और देश क अर्थतत्र पर मित्सुई मित्सुबीशी सूमीतोमा

और यासूदा जैसे शक्तिशाली निगमो का अधिकाधिक प्रभुत्व स्थापित होता गया। जापान के विदेश व्यापार के परिमाण मे प्रभावशाली वृद्धि हुई और वह १९०३ मे ६०६ करोड येन से बढकर १९१३ मे १३६१ करोड येन का हो गया।

इस समय तक जापान की आर्थिक वृद्धि की दर कई अन्य पूजीवादी देशो से अधिक हो चुकी थी। जापान की पूजीवादी अर्थव्यवस्था के इस तीव्र विकास को कोरिया तथा दक्षिणी मचूरिया के निवासियो तथा स्थानीय किसानो और मजदूरो के शोषण और लूट ने ही सभव बनाया था। राजकीय उद्यमो मे काम करनेवाले मजदूरो के अलावा (एसे प्रत्येक उद्यम मे १० से कम मजदूर काम करते थे) जापान के औद्योगिक मजदूरो की सख्या १९०४ मे ५२६००० से बढकर १९१३ मे ९,१६,००० हो गयी थी।

१९०५-१९०७ की रूसी क्राति ने जापान पर महत्वपूर्ण परोक्ष प्रभाव डाला था। ५ सितबर को तोकियो मे एक जन सभा हुई और पुलिस तथा भीड मे बडी झडपे हुई। इस सभा के बाद आनेवाले महीनो और वर्षो मे देश भर मे मजदूर आदोलन की लहर दौड गयी। १९०६ मे रेल मजदूरो, खनिको तथा कूरे और तोकियो के शस्त्र कारखानो के मजदूरो और तोकियो, ओसाका तथा कोबे और अन्य नगरो मे ट्रामचालको तथा कडक्टरो ने हडताल कर दी।

समाजवादी आदोलन भी अधिक सक्रिय हो गया। फरवरी, १९०६ मे समाजवादी पार्टी की पुनःस्थापना की गयी। उसके नेता अब कातायामा, सकाई, नीशीकावा तथा मोरी, आदि थे। पार्टी ने 'हिकारी' (प्रकाश) नामक समाचारपत्र का प्रकाशन शुरू किया, जिसका स्थान १९०७ मे 'हैइमीन शिबून' (जन समाचारपत्र) ने ले लिया। पार्टी ने कई जन सभाओ और प्रदर्शनो का सगठन किया। लेकिन फरवरी, १९०७ मे पार्टी पर रोक लगा दी गयी और उसके कुछ बाद 'हैइमीन शिबून' का प्रकाशन भी बद हो गया।

जुलाई, १९०८ मे कत्सूरा के नेतृत्व मे एक नयी सरकार बनी, जो सेना के प्रत्यक्ष सहयोग से काम करती थी। इस नयी सरकार का निर्माण मजदूर आदोलन के प्रगतिशील नेताओ के विरुद्ध क्रूर पुलिस उत्पीडन के समारभ का द्योतक था। १९१० मे समाजवादी पार्टी के एक नेता कोतोकू और उसके २४ अनुगामियो पर सम्राट के विरुद्ध षडयत्र का झूठा आरोप लगाकर मुकदमा चलाया गया। कोतोकू सहित १२ प्रतिवादियो को मृत्युदड दे दिया गया और शेष को कठोर कारावास का दड दिया गया। लेकिन इस दमन के बावजूद ११ दिसबर, १९११ को सेन कातायामा ने तोकियो के परिवहन मजदूरो की एक बडी हडताल का सगठन किया।

इस बीच जापान लगातार अपनी सेना को बढ़ाता उसके साजसामान को सुधारता और सुदूर-पूर्व म अपनी स्थिति को मजबूत करता रहा। १६१० म जापान ने कोरिया के राजा को जापान के सम्राट के सम्मुख समर्पण करन और गद्दी त्याग देने के लिए विवश कर दिया। २२ अगस्त १६१० को इसे एक सधि द्वारा औपचारिक अनुमोदन प्रदान किया गया, जिसन कोरिया को एक जापानी उपनिवेश म परिणत कर दिया। एशिया म जापानियो का ऐसा सक्रिय प्रसार जापान तथा सयुक्त राज्य अमरीका क पारस्परिक सबधो मे तनाव का कारण बना।

महाशक्तियो की विदेश नीति

उन्नीसवी शताब्दी के अत म महाशक्तियो क नेता शाति क बारे म बहुत बढ चढकर बात करते थे। उनसे लगता था कि महाशक्तियो के बीच सबधो मे एक नये ही युग का समारभ होनेवाला है जिसम युद्ध की निदा की जायगी और शातिपूर्ण समझौत करन के रास्त निकाले जाया करगे। लकिन व्यवहार म इसका उलटा ही सच था। शाति के बारे म सारी सुहानी बात युद्ध की सक्रिय तैयारियो के लिए महज़ नकाब थी। महाशक्तियो के बीच अतर्विरोध कम होने के स्थान पर लगातार बढते ही जा रहे थे। उन्नीसवी सदी क अत तक सभी महाशक्तिया औपनिवेशिक अधिग्रहण की सक्रिय नीति पर चलन लग गयी थी। ब्रिटन और फ्रास क बीच आपस म मिस्र पर नियत्रण हासिल करन और दक्षिण-पूर्वी एशिया, उत्तर पश्चिमी तथा विषुवतीय अफ्रीका की लूट के लिए होड चल रही थी। मध्य एशिया म ब्रिटेन और रूस क बीच तलवार बज रही थी। अफ्रीका और एशिया म जर्मनी क औपनिवेशिक अधिग्रहणो ने पुरानी औपनिवेशिक शक्तियो के 'समाज म नाराज़ी पैदा कर दी थी। ब्रिटेन और सयुक्त राज्य अमरीका क बीच लैटिन अमरीका म प्रभुत्व क लिए प्रखर सघर्ष चल रहा था। औपनिवेशिक लूट म सबस बड हिस्स क लिए सघर्ष निरतर झगडो को जन्म दे रहा था।

महाशक्तियो क आपसी सबध यूरोप म अतविरोधी हितो क कारण भी बिगड रहे थ। १८७१ की फ्राकफुर्त की सधि न जिसन फ्रास को एल्सास तथा लोरे से वचित कर दिया था जर्मनी तथा फ्रास क बीच कटु वैमनस्य क बीज बो दिय थ। फ्रास की प्रतिशोध पिपासा और सहयोगी पाने की इच्छा न जर्मनी को डरा दिया, जो इस समय तक फ्रास को हथियारो की दौड म पीछ छोड चुका था और जान-बूझकर राजनयिक विवाद पैदा करवाता रहा था। बिस्मार्क और जर्मन फौजशाही का इरादा यह था कि फ्रास क नये मित्र प्राप्त करन और जर्मनी क खिलाफ फिर युद्ध की घोषणा करन म समर्थ

हो पाने के पहले ही उस पर एक और ध्वंसात्मक प्रहार कर दिया जाये। इधर रूस जो फ्रांस को जर्मनी की तेजी से बढ़ रही स्थानतसार सैनिक शक्ति का स्वाभाविक प्रतिभार समझता था जर्मन सैन्यवादियों की फ्रांस के विरुद्ध नया युद्ध छेड़ने की योजनाओं को अवरुद्ध करने के लिए प्रयासशील था।

१८७७ में रूस और तुर्की के बीच युद्ध छिड़ गया, जिसके परिणामस्वरूप बुल्गारिया को तुर्क शासन से मुक्ति मिल गयी। इस युद्ध से महाशक्तियों के बीच और विशेषकर रूस तथा ब्रिटेन और रूस तथा आस्ट्रिया हंगरी के बीच तनाव और भी बढ़ गया। १८७८ में बर्लिन की कांग्रेस में जर्मनी द्वारा समर्थित ब्रिटेन तथा आस्ट्रिया-हंगरी के रवैये के कारण रूस अपने कई दावों को तजने के लिए विवश हुआ। परिणामस्वरूप स्थिति का लाभ उठाकर आस्ट्रिया हंगरी ने बोस्निया तथा हर्जेगोवीना को अधिकार में ले लिया और ब्रिटेन ने साइप्रस को हथिया लिया।

सैनिक गुटों का निर्माण

इस नयी परिस्थिति में बिस्मार्क ने जल्दी से आस्ट्रिया हंगरी के साथ सैनिक राजनीतिक सहबंध स्थापित कर लिया (७ अक्तूबर १८७६)। यह द्विपक्षीय सहबंध रूस तथा फ्रांस के विरुद्ध लक्षित था। मई १८८२ में द्विपक्षीय सहबंध त्रिपक्षीय सहबंध हो गया जब फ्रांस द्वारा ट्यूनीशिया को दबाचने से इतालवी बूर्जुआजी में उत्पन्न रोष का पूरा पूरा लाभ उठाते हुए जर्मन राजनयज्ञों ने इटली को भी उसमें शामिल होने के लिए राजी कर लिया। यह त्रिपक्षीय सहबंध यूरोप में स्थापित किया जानेवाला पहला सैनिक-राजनीतिक गुट था। यद्यपि इसके प्रवर्तक इसे 'शांति संघ' कहा करते थे पर व्यवहार में यह जर्मनी के नेतृत्व में एक आक्रामक सैनिक गुट था और जर्मनी की यूरोप तथा संसार में प्रभुत्व स्थापित करने की आकांक्षाओं का संवर्धन करने के लिए ही स्थापित किया गया था।

त्रिपक्षीय सहबंध के जवाब में १८६१ और १८६३ के बीच रूस तथा फ्रांस ने आपस में सहबंध कर लिया जिसका यह मतलब था कि यूरोप अब दो बड़े विरोधी गुटों में विभक्त हो गया था। कुछ समय तक ब्रिटेन ने इन दोनों गुटों के मतभेदों से फायदा उठाने की आशा में उनसे अलग रहना ही ठीक समझा। लेकिन जल्दी ही ब्रिटेन तथा जर्मनी के बीच विश्व प्रभुत्व के लिए प्रतिद्वंद्विता अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की एक मुख्य समस्या के रूप में उभरकर सामने आ गयी।

सैन्यवाद का चढता ज्वार

उन्नीसवी सदी के अत म यूरोप म आया युद्धहीन युग हथियारो की जबरदस्त होड का युग था। इसलिए इस सशस्त्र शाति का युग भी कहत ह। महाशक्तिया के बीच अपने सैनिक बजट बढान, नवीनतम सैनिक तथा नौसैनिक शस्त्रास्त्रो व सामरिक तकनीको मे लैस होन और अपनी सशस्त्र सेनाओ म वृद्धि करन के लिए भयकर प्रतिस्पर्धा चल रही थी। इनम से अधिकाश देशो म सेना म स्वैच्छिक भरती का स्थान अनिवार्य सैनिक सेवा न ले लिया था और सैन्य सामग्रियो का व्यापक पैमान पर आधुनिकीकरण किया जा रहा था।

ब्रिटेन और जर्मनी और उनसे कुछ छोटे पैमाने पर रूस फ्रास, जापान इटली और सयुक्त राज्य अमरीका अपनी नौसेनाओ का बढान म लगे हुए थे जिन पर वायुयानो का युग आन के पहले बहुत आशाए कद्रित की जा रही थी। दोनो सैनिक सहबधो के कायम होने से हथियारो की होड और तेज हो गयी और दोनो शिविर खुले तौर पर युद्ध की तैयारिया करन म लग गये।

पूजीवादी देशो मे बढता हुआ वर्ग सघर्ष

इस बात के बावजूद कि १८७१ के पेरिस कम्यून के बाद से यूरोप म कोई बडी क्रातिकारी उथलपुथल नही हुई थी वर्ग अतर्विरोध कम होा के बजाय लगातार ज्यादा सगीन ही होते चले गय थ।

लबे और कठोर सघर्ष के परिणामस्वरूप श्रमिक वर्ग बूर्जुआजी । कई रिआयते हासिल करन मे सफल हो गया था। कार्य दिवस घटा [illegible] गया था और कार्य अवस्थाओ म कुछ सुधारो तथा वेतन म वृद्धि [illegible] मे लाया जा चुका था। लेकिन ये रिआयते मजदूरो को सतुष्ट [illegible] काफी नही थी जिनकी कामकाज की अवस्थाए अधिका [illegible] म पहले जैसी ही कठोर थी। कार्य दिवस की अवधि दस [illegible] की और कुछ शाखाओ म तो और भी ज्यादा थी। [illegible] ही उत्पादन प्रक्रियाओ को तेज कर दिया गया था। सकटो और [illegible] न मजदूरो और उनके परिवारो को असुरक्षित बना दिया [illegible] सिर पर सदा बरोजगारी और भुखमरी का खतरा मडरा [illegible] काल म शहरी आबादी की तीव्र वृद्धि स मकानो व [illegible] और उसके साथ साथ खान पीन की चीजो की [illegible] भी बढोतरी हुई जिसके परिणामस्वरूप कठोर [illegible] वेतन वृद्धि बेकार हो गयी। निपुण मजदूरो [illegible]

को छोडकर अधिकाश औद्योगिक मजदूरो की उजरत सदी के अत मे बढने की जगह कम ही हुई थी। सर्वहारा वर्ग ने हडतालो, प्रदर्शनों, जलूसों और राजनीतिक प्रदर्शनो द्वारा इस हालत के खिलाफ अपना विरोध जाहिर किया। इस काल मे विशेषकर नये स्तर मे, ब्रिटेन, सयुक्त राज्य अमरीका, फ्रास जर्मनी और इटली मे समय समय पर जबरदस्त हडतालो की लहर दौडती रही।

बडे पैमाने के उद्योग की तीव्र वृद्धि ने छोटे उत्पादको को तबाह कर दिया जिनमे अपने शक्तिशाली प्रतिद्वद्विया का मुकाबला कर सकने की सामर्थ्य नही थी। दस्तकार शिल्पी और छोटे व्यापारी दीवालिये हो गये। कृषक समुदाय की कतारो मे भी स्तरीकरण की प्रक्रिया लक्षित होने लगी। अल्प सख्य धनी किसान अधिक सपन्न होते गये, जब कि कभी खत्म न होनेवाले कृषि सकट से उन्नीसवी सदी के अत मे कृषक समुदाय के लगभग अन्य सभी सस्तर घोर अभावो का शिकार बनते रहे।

इधर उत्पीडित जनगण के राष्ट्रीय मुक्ति सघर्ष भी अधिक सक्रिय होते जा रहे थे—और केवल अफ्रीका तथा एशिया के देशो मे ही नही, जहा मुक्ति आदोलन मे एक नये अध्याय का समारभ हो गया था बल्कि विकसित पूजीवादी देशो मे भी। पोल जन अपनी राष्ट्रीय स्वाधीनता को फिर से प्राप्त करने के लिए जारशाही रूस, कैसर के जर्मनी और आस्ट्रिया हगरी के विरुद्ध सघर्ष कर रहे थे। आयरी लोग भी अब भी स्वशासन के लिए इगलैड के खिलाफ अनम्यतापूर्वक लड रहे थे। सयुक्त राज्य अमरीका मे नीग्रो लोग जिन्हे समाज से बहिष्कृत समझा जाता था, अपने न्याय्य सामाजिक अधिकारो को हासिल करने के तरीके खोज रहे थे।

फिनो ने भी अपनी राष्ट्रीय स्वतत्रता के लिए लडना शुरू कर दिया था। हगेरियाई, चेक और यूगोस्लाव अब भी हाप्सबर्गवशियो के जूए के नीचे तडप रहे थे।

पूजीवादी विश्व के कितने ही देशो मे महत्वपूर्ण बूर्जुआ लोकतात्रिक सुधारो की क्रियान्विति का कार्यभार अभी बाकी था। यूरोप के अधिकाश देश अब भी राजतत्र ही थे और जर्मनी तथा आस्ट्रिया हगरी मे अर्धस्वेच्छाचारी शासन फूल-फल रहे थे। ससार मे कही भी स्त्रिया अभी तक राजनीतिक अधिकार नही प्राप्त कर पायी थी और अधिकाश पूजीवादी देशो मे मताधिकार अब भी सापत्तिक तथा अन्य अर्हताओ पर निर्भर था। मेहनतकश जनसाधारण का विपुल बहुलाश अब भी मत देने के अधिकार से वचित था।

मेहनतकशो का वर्ग सघर्ष, पराधीन राष्ट्रो के राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन और लोकतात्रिक स्वतत्रताओ के लिए आदोलन—ये सभी सघर्ष के एक सामान्य ज्वार के अग थे जिसने वर्ग विरोधो को और भी प्रचड बनाया। ये वर्ग अतर्विरोध किसी भी समय फूटकर सतह पर आ सकते थे।

सिकदरिया मे ब्रिटिश फौजे

मजदूर पार्टियो की स्थापना। दूसरा इटरनेशनल

शोषितो और वेदारो की कतारो को ऐक्यबद्ध करनेवाली मुख्य शक्ति मजदूर वर्ग था। उन्नीसवी सदी के अतिम तीन दशको म सर्वहारा वर्ग परिपक्वता के ऐसे स्तर पर पहुच गया कि अब वह अपनी मजदूर पार्टियो की स्थापना कर सकता था।

१८८३ मे मजदूर वर्ग के महान नेता और शिक्षक कार्ल मार्क्स का

देहात हो गया। नवीन मानस ने महानतम जो महान क्रांतिकारी सिद्धांत-मार्क्सवाद – विरासत में दी थी, उनके अनुगामियों की संख्या लगातार बढ़ती गयी। उसने धीरे धीरे अपनी पूर्ववर्ती भानी भानी यूटोपियाई सिद्धांतों पर श्रेष्ठता प्राप्त कर ली और मजदूर वर्ग की मुख्य विचारधारा बन गया।

आठवें तथा नवें दशक में जो मजदूर पार्टियां अस्तित्व में आयीं वे मुख्यत मार्क्सवादी पार्टियां ही थीं। १८७५ में जर्मन सामाजिक जनवादी पार्टी की और १८७७ में अमरीका की समाजवादी मजदूर पार्टी की स्थापना की गयी, १८७९-१८८० में फ्रांसीसी मजदूर पार्टी स्थापित हुई और १८८३ में रूस में श्रम मुक्ति दल बना, १८८८ में आस्ट्रिया में सामाजिक-जनवादी पार्टी की स्थापना की गयी और १८८९ में स्विटजरलैंड तथा स्वीडन और १८९१ में बुल्गारिया में भी यही हुआ। मजदूर पार्टियों का स्थापित किया जाना संगठित मजदूर आंदोलन के विकास में एक महत्वपूर्ण कदम का द्योतक था।

अब जब कि कई देशों में अपनी स्वतंत्र मजदूर पार्टियां पैदा हो चुकी थीं, कुदरती तौर पर यह प्रश्न उठा कि उन्हें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एकबद्ध करने का सबसे अच्छा तरीका क्या है जिससे वे सामान्य हेतु के लिए ज्यादा कारगर ढंग से लड़ सकें। १४ जुलाई १८८९ को फ्रांसीसी क्रांति की शत वार्षिकी के अवसर पर पेरिस में दूसरे इंटरनेशनल की उद्घाटन कांग्रेस शुरू हुई। दूसरे इंटरनेशनल की तैयारी और निर्माण में मार्क्स के मित्र तथा सहयोगी तथा मजदूर वर्ग के ध्येय के लिए संघर्ष करनेवाले सुप्रसिद्ध योद्धा फ्रेडरिक एंगेल्स ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

अपने कार्यकलाप के प्रारंभिक वर्षों में दूसरा इंटरनेशनल बुनियादी तौर पर सर्वहारा संगठन बना रहा और मुख्य प्रश्नों के बारे में मार्क्सवादी रवैया अपनाता रहा यद्यपि आरंभ से ही कतिपय सामाजिक जनवादी पार्टियों मे और समूचे तौर पर इंटरनेशनल मे भी कुछ अवसरवादी प्रवृत्तियां देखी जा सकती थीं। इस प्रारंभिक अवस्था में दूसरे इंटरनेशनल ने बहुत से ऐसे काम किये जो निश्चित रूप में सकारात्मक थे। १८८९ में उसकी पहली कांग्रेस मे पहली मई को सभी देशों के मजदूरों द्वारा अपनी सर्वहारा एकजुटता का प्रदर्शन करने के लिए अंतराष्ट्रीय श्रमिक दिवस के रूप में मनाने के बारे मे प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

दूसरे इंटरनेशनल की कांग्रेसों मे सैन्यवाद को निरुद्ध करने और युद्ध को रोकने के उपायों पर विस्तार से विचार विमर्श किया गया। इंटरनेशनल ने अपने प्रस्तावों मे पूंजीवादी विश्व की सरकारों की सैन्यवादी नीतियों की भर्त्सना की और समाजवादियों का आह्वान किया कि वे संसदों में युद्ध ऋणों के विरुद्ध मत दें और बूर्जुआ सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ अविराम आंदोलन

नाय। सैन्यवाद तथा युद्ध के विरुद्ध संघर्ष को अब श्रमिक वर्ग का एक मुख्य यभार माना जाने लगा।

दूसरे इंटरनेशनल ने सर्वहारा द्वारा अनुसृत की जानेवाली कार्यनीतियों निरूपण समाजवादियों द्वारा वैध संसदीय मंच का उपयोग में लाने की छनीयता ट्रेड-यूनियनों में उनकी भूमिका आदि के बारे में विचार विमर्श प्रसंग में कुछ बहुत ही उपयोगी कार्य किया। सर्वहारा पार्टियों के लिए जनीतिक संघर्ष की जटिल कला में सिद्धहस्तता प्राप्त करना और अपेक्षाकृत शांतिमय काल में वैध कार्यकलापों में नैपुण्य प्राप्त करना अत्यावश्यक ; ताकि आसन्न वर्ग संग्रामों के लिए तैयार रहा जा सके। लेकिन इस ल में भी इंटरनेशनल की कतारों में कुछ विभ्रांत आवाजें सुनी जा सकती । और कभी कभी गलत निर्णय भी ले लिये जाते थे। इन सभी का मूल न बढ़ती अवसरवादी प्रवृत्तियों में था, जो मजदूर आंदोलन में रूप लेने ग गयी थी। बूर्जुआजी ने मजदूर वर्ग में फूट डालने, औद्योगिक अभिजात वर्ग समर्थन का खरीदने और उसमें तथा सर्वहारा समुदाय के मुख्य भाग में रार डालने के लिए कोई कसर बाकी नहीं रहने दी थी। उन्नीसवीं सदी अंत में मजदूर अभिजात वर्ग ही मजदूर आंदोलन में अवसरवाद तथा धारवाद का मुख्य सामाजिक स्रोत था। लेकिन इसके बावजूद इंटरनेशनल पना सबसे महत्वपूर्ण कार्यभार पूरा करने में सफल रहा – उसने सर्वहारा था उसकी पार्टियों को निर्णायक महत्व के आसन्न वर्ग संग्रामों के लिए तैयार रने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

पद्रहवा अध्याय

भूदासत्व उन्मूलन के बाद का रूस। सुधार से क्राति तक

रूस मे पूजीवाद का विकास

भूदासत्व क उन्मूलन (१८६१) के बाद क और १६०५ की पहली रूसी क्रान्ति क बीच के वर्षो को लेनिन न 'रूसी इतिहास क जलविभाजक' की सना दी थी।

यह वह काल था कि जिसमे महान सुधार क पहले के रूस की लाक्षणिक युगो पुरानी सामती परपराओ का विलोपन और बूर्जुआ समाज क सूचक नये सामाजिक स्वरूपो का उदय हुआ। भूदासत्व के उन्मूलन के बाद देश के कई भागो म बडे बडे कल कारखान उठ खडे हुए। बीस ही वर्ष की अवधि के भीतर यात्रिक श्रम अधिकाश रूसी उद्योग से शारीरिक श्रम का बहिष्कृत कर चुका था।

देश क मानचित्र पर मास्को तथा उराल प्रदेश जैसे औद्योगिक क्षेत्रो क अलावा अनक नये औद्योगिक क्षेत्र भी नजर आन लगे। दोनत्स बेसिन मे कोयला खनन और क्रिवोई राग प्रदेश मे बडे पैमाने पर लोहा खनन विकसित हो गये। दक्षिणी उक्रइना क भूतपूर्व निर्जन स्तेपी प्रदेशो म बडे बडे धातुकर्म कारखानो का निर्माण किया गया जिनके आसपास बडे बडे शहर पैदा हो गये, मिसाल क लिए यूजोव्का (अब दोनेत्स्क), जो आरभ म अजोव सागर के निकट स्तेपी म ऐसे ही एक कारखान की छोटी सी मजदूर बस्ती था। तगानराग मरीऊपोल (अब ज्दानोव) और ओदेस्सा जैसे पुराने तटवर्ती नगर इतने बदल गये कि पहचान भी नही जाते थे। १६०० तक दक्षिण के औद्योगिक केद्रो म रूस के आधे से अधिक कच्चे लोहे का उत्पादन होन लगा और इस तरह उराल जो रूसी लोहा उद्योग का मूल केद्र था, अब दूसर स्थान पर ही रह गया।

रूस ससार का सबसे बडा देश था। उन्नीसवी सदी के मध्य म रूसी

साम्राज्य भूमडल के स्थल प्रदश के नव भाग पर फैला हुआ था। इस विराट देश म अकूत प्राकृतिक साधन थे जो भूदासत्व के कारण अब तक अप्रयुक्त और अज्ञात ही पड हुए थे। १८६१ क सुधार के बाद हजारा किलोमीटर रेलमार्गो का निर्माण किया गया, जिन्हान देश के कद्रीय प्रदशो का दूरस्थ सीमातक इलाको स जोडा और काकेशिया कजाखस्तान तथा साइबेरिया के समृद्ध खनिज भडारो का रूसी उद्याग की पहुच क भीतर ला दिया। आजरबैजान म बाकू एक प्रमुख तेल निष्कर्षण कद्र बन गया और बाद म उत्तरी काकेशिया म ग्राज्नी के आसपास और भी तेल क्षेत्र विकसित किय गये। जजकाजगान (कजाखस्तान) म ताबे की खान खुली जहा ताम्र अयस्क के समृद्ध अछूते निक्षेप थ। साइबेरिया क कुज्नेत्स्क क्षेत्र (कुजबास) म भी कोयला खनन शुरू किया गया।

रूस के ईधन तथा खनिज स्रोत अथाह थे। १८६० मे रूस की जनसख्या यूरोप की कुल आबादी की चौथाई थी और १९०० तक लगभग तिहाई हो चुकी थी। इसका मतलब था १८६० से १९०० तक के ४० वर्षो क भीतर ८० प्रतिशत की वद्धि (७४ करोड से १३ ३ करोड)। उस काल क रूसी पूजीपतियो को श्रम शक्ति का अक्षय रिजर्व उपलभ्य था – कराडा किसान, जिनक पास या तो बहुत ही कम जमीन थी या बिलकुल भी नही थी, किसी भी शर्त पर काम करने क लिए तैयार थ। अतिम बात यह थी कि जायमान रूसी पूजीवाद पश्चिम के उन्नत पूजीवादी दशा द्वारा अर्जित औद्योगिक अनुभव का लाभ उठा सकता था और उनकी उपलब्धियो मे बहुत कुछ सीख सकता था।

१८६० और १९०० के बीच रूस म औद्योगिक उत्पादन ७ गुन से अधिक बढा, जब कि इसी काल म फास तथा ब्रिटन मे क्रमश २ ५ और २ गुनी वद्धि ही हुई थी। रूसी कच्चे लाहे का उत्पादन मात्र दस वर्ष (१८८६-१८९६) के भीतर तीन गुना हो गया था। इतनी ही बढातरी हासिल करने म फास को २८ सयुक्त राज्य अमरीका का २३ और ब्रिटन को २२ साल लगे थ।

उद्योग मे सकेद्रण का पैमाना भी रूस म पश्चिम स अधिक था। १८९० तक कुल औद्योगिक श्रमिक शक्ति की लगभग आधी ५०० या अधिक मजदूरा वाले बडे कारखाना मे काम करन लगी थी।

लेकिन जहा तक प्रति व्यक्ति उत्पादन का सवाल था रूस उन्नत पूजीवादी दशो से अब भी बहुत पीछे था। ब्रिटन रूस क मुकाबल मात्र म लगभग पाच गुना अधिक कच्चे लोहे का प्रति व्यक्ति उत्पादन किया करता था।

औद्योगिक विकास और नगरो के प्रसार ने कच्चे माल और खाद्य पदार्थों की माग को बढ़ा दिया। इसके फलस्वरूप १८६१ के सुधार के बाद मे कृषि तथा पशुपालन अधिकाधिक वाणिज्यिक स्वरूप ग्रहण करते गये – खाद्य पदार्थ लगातार अधिक मात्रा मे बिक्री के लिए उत्पन्न किये जाने लगे।

गरीबी और जमीन की भूख ने रूसी किसानो को देश के मध्यवर्ती प्रदेशो मे दक्षिण तथा पूर्व जाने के लिए विवश किया। इस उत्प्रवास के परिणामस्वरूप उजइना, उत्तरी काकेशिया, वाल्गा के पूर्वी तट और साइबेरिया मे परती जमीनो पर बड़े पैमाने पर खेती होने लगी। नये रूसी आबादकारो की देखादेखी इन इलाको के देशज निवासियो ने भी अधिक अनाज बोना शुरू कर दिया। देश के एशियाई भाग के कई दूरस्थ प्रदेशो मे, जहा शिकारियो और पशुचारको के स्थानीय कबीलो को कृषि का कोई अनुभव नही था, रूसी किसानो ने ही सबसे पहले जमीन काश्त करनी शुरू की थी।

१८६१ का सुधार रूसी ग्रामीण जीवन मे बहुत सी सामती प्रथाओ का अत नही कर पाया था और इनमे बड़ी भूसपत्तियो का अब भी बने रहना सबसे महत्वपूर्ण था। भूदासत्व के उन्मूलन के बाद कुछ भूस्वामियो ने, विशेषकर देश के पश्चिमी तथा दक्षिणी प्रदेशो मे, अपने को सुधार के परिणामस्वरूप अस्तित्व मे आये नये आर्थिक सबधो के अनुरूप करने का प्रयास किया। उन्होने मशीने खरीदी, उजरत पर मजदूर रखे और अपनी जागीरो पर कृषि के पूजीवादी तरीको का उपयोग करके उन्हे माम और अनाज के कारखानो मे परिणत करने लगे। लेकिन अधिकाश, और विशेषकर मध्य रूस के भूस्वामियो ने बड़ी जागीरो के स्वामियो की हैसियत से अपनी विशेषाधिकारप्राप्त स्थिति के साथ जुड़े मुनाफो को छोड़ने की कोई इच्छा नही जाहिर की। उन्होने अपनी जमीन के कुछ हिस्से को छोटे छोटे टुकड़े करके जमीन के भूखे किसानो को इस शर्त पर खेती के लिए दे देना पसद किया कि वे उनकी शेष जमीन को बिला पारिश्रमिक काश्त करे या अपनी आधी फसल दे। जमीन का यह बदोबस्त सुधार के पहले विद्यमान बदोबस्त से बहुत मिलता था, जब किसान काश्त करने के लिए दी गयी जमीन पर निश्चित लगान देते थे और साथ ही खिदमती मजदूरी भी करते थे।

भूस्वामियो को चूकि अपने असामी काश्तकारो को मेहनत के लिए कुछ भी नही देना पड़ता था, इसलिए उन्हे महगी मशीने खरीदने और आधुनिक कृषि विधियो को अपनाने की कोई जरूरत नजर नही आती थी। स्वय किसानो के पास ऐसा करने के लिए काफी धन होता नही था, क्योकि कमरतोड़

लगान और भारी करों के कारण उधार विपन्नता की अवस्था से उबर ही नहीं पाते थे।

मालिकों का हिसाब चुकता कर देने के बाद आम तौर पर किसानों के पास जो अनाज बच रहता था वह अगली फसल तक गुजारे के लिए भी काफी नहीं होता था और इसलिए उन्हें और उनके परिवारवालों को अधभूखे रहना पडता था। उनके बच्चे आये दिन बीमार पडते रहते थे। उन दिनों ग्रामीण रूस में टाइफस हैजा और पेचिश जैसी महामारियाँ अक्सर फैली रहती थीं।

पैसा बहुत कम होने के कारण किसान कारखानों की बनायी चीजों को भी नहीं खरीद सकते थे। आबादी का अधिकांश किसानों का ही था इसलिए किसानों की नीची क्रयशक्ति देश की आतरिक मडी के विकास को रोक रही थी। इस प्रकार कृषि में सामती प्रथाओं के अवशेष ग्रामीण क्षेत्रों और उद्योग में भी आर्थिक प्रगति में बाधा डालकर रूस में पूजीवाद के विकास को अवरुद्ध कर रहे थे।

निस्सदेह, इसका यह मतलब नहीं कि सभी किसानों की दशा इतनी ही खराब थी। सुधार के पहले भी गावों में अमीर और गरीब किसान थे। १८६१ के बाद, जब व्यापार कृषि के स्वरूपों पर अधिक असर डालने लगा तो किसानों के भारी बहुलाश के दरिद्रीकरण और धनी किसानों के छोटे से समूह के उदय की प्रक्रिया कहीं अधिक तेज हो गयी। उजरती मजदूरों का शोषण करनेवाले धनी किसान एक नये पूजीपति वर्ग में परिणत हो गये और गरीब किसान जिनकी छोटी छोटी जोत उनको और उनके परिवारों का पेट भरने के लिए काफी नहीं थी उजरत करने को विवश हो गये। गरीब किसान वास्तविक अर्थों में किसान रहे ही नहीं बल्कि जोतावाले खेतिहर मजदूर जैसे ही बन गये।

ग्रामीण रूस में पुरानी पितृसत्तात्मक जीवन प्रणाली तेजी के साथ विलुप्त हो रही थी। रूसी गावों में परस्पर विरोधी हित रखनेवाले नये ही प्रकार के समूहों का उदय होने लगा था। ये विरोधी समूह ग्रामीण बूर्जुआजी और ग्रामीण सर्वहारा थे। मझोले किसानों की सख्या में काफी कमी आ गयी। बरबादी का शिकार होकर उनमें से अधिकाश शहरी सर्वहारा की या गावों में उजरती मजदूरों की कतारों मे शामिल हो गये। कृषक समुदाय के इस सस्तर के बहुत थोडे लोग ही सुधारोपरात कृषि के क्षेत्र में मची भीषण प्रतियोगिता में टिक पाये।

रूस में पूजीवादी उद्योग के विकास के परिणामस्वरूप उजरती मज़दूरों की संख्या में वृद्धि हुई जो कृषि और दस्तकारी उद्यमों से नाता तोड़ देश के बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठानों में काम करने के लिए आ गये थे। इस प्रकार धीरे धीरे एक शक्तिशाली औद्योगिक सर्वहारा अस्तित्व में आ गया जिसे आगे चलकर समाज के क्रांतिकारी रूपांतरण में प्रमुख भूमिका अदा करनी थी।

अन्य औद्योगिक देशों की तरह रूस में भी औद्योगिक सर्वहारा के उदय में किसानों के औद्योगिक केंद्रों की तरफ़ व्यापक उत्प्रवास ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। ग्रामीण जीवन के पुराने स्वरूपों के ध्वस्त होते जाने के साथ साथ वे भारी संख्या में काम की खोज में शहरों में आने लगे थे। बरबाद दस्तकार भी औद्योगिक सर्वहारा की कतारों में शामिल हुए, पर फिर भी औद्योगिक मजदूरों का अधिकांश भूतपूर्व किसानों का ही था।

यद्यपि ये नये मजदूर अब अपने भूतपूर्व ग्रामीण घरों से कट गये थे पर उन्होंने गांवों में रह गये अपने नाते रिश्तदारों के साथ संबंध बनाये रखा। मजदूरों और किसानों में यह घनिष्ठ संपर्क तत्कालीन रूस में वर्ग शक्तियों के संतुलन में बहुत महत्त्व रखता था। उसने आगे चलकर मजदूर वर्ग तथा कृषक समुदाय के बीच दृढ़ सहबंध के निर्माण को संभव बनाया।

यूरोप के किसी भी और देश में श्रमिक वर्ग को ऐसी अमानवीय अवस्थाओं को नहीं झेलना पड़ा था कि जैसी रूस में थीं। यूरोप में और कहीं भी मजदूर इतने अधिकारहीन नहीं थे और न ही कहीं उन्हें पूंजीपतियों के विरुद्ध अपनी शक्तियों को कानूनी तरीकों से एकजुट करने में इतनी सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। श्रम और रहन सहन की इन असहनीय परिस्थितियों में रूसी मजदूर वर्ग में वर्ग चेतना और जुझारू क्रांतिकारी भावना का जल्दी ही उदय हो गया। बड़े पैमाने के प्रतिष्ठानों में संकेंद्रण ने रूसी मजदूरों के लिए पूंजीवादी शोषण का विशेषकर दृढ़ और अदम्य प्रतिरोध करना संभव बना दिया।

कृषक समुदाय के साथ घनिष्ठतः संबद्ध रूसी मजदूर वर्ग का आगे चलकर रूसी किसान समुदाय का शक्तिशाली सहयोगी और नेता बन जाना स्पष्टतः अटल और अनिवार्य ही था। रूसी उद्योग मुख्यतः देश के केंद्रीय भाग में – सेंट पीटर्सबर्ग, मास्को, इवानोवो और तूला में तथा उनके आस पास – ही संकेंद्रित था। फिर भी, जब देश के दक्षिणी तथा पूर्वी भागों में नये औद्योगिक केंद्र खुले, तो रूसी मजदूरों ने भी देश के बहिर्वर्ती प्रदेशों की तरफ़ उत्प्रवास में किसानों का अनुसरण किया।

नये उद्योगो की स्थापना के फलस्वरूप नये इलाको मे अपन जातीय सर्वहारा का उदय हुआ और रूसी मज़दूरो के साथ सपर्क मे आने के परिणामस्वरूप स्थानीय मजदूर जल्दी ही उनके वैचारिक प्रभाव मे आ गय। उक्रइनी सर्वहारा भूतपूर्व उक्रइनी और रूसी गरीब किसानो स बना था। वाल्टिक प्रातो, वेलोरूस, काकेशिया और मध्य एशिया के सर्वहारा की कतारो मे रूसी मजदूरो की तादाद काफी बडी थी। यह रूसी साम्राज्य की ही एक विशिष्टता थी। उदाहरण के लिए भारत मे ब्रिटिश मजदूर या इडोनेशिया मे डच मज़दूर नही थे। किसी भी औपनिवेशिक साम्राज्य म शासक देश के सर्वहारा ने पराधीन जातिया के मुक्ति सग्राम मे रूसी साम्राज्य के सीमातवर्ती प्रदेशो म रूसी सर्वहारा जैसी महत्वपूर्ण भूमिका अदा नही की थी और न ही उस पर उतना व्यापक प्रभाव डाला था।

रूसी सर्वहारा के क्रातिकारी सघर्ष मे अन्य जातिया के मजदूरो का शामिल होना ज़ारशाही उपनिवेशवाद के विरुद्ध रूस के जनगण के सयुक्त मोर्चो के निर्माण और १६१७ की विजयी रूसी क्राति के परिणामस्वरूप उनकी अवश्यभावी जातीय स्वतत्रता का पूर्वाधार सिद्ध हुआ।

रूस मे राजकीय पूजीवाद

१८६१ क सुधार के बाद रूस मे पूजीवाद का विकास सिर्फ नीचे से ही नही, बल्कि ज़ारशाही सरकार द्वारा अनुसृत नीतिया के नतीजे के तौर पर ऊपर से भी हुआ।

ज़ारशाही सरकार ने सदा विशेषाधिकारप्राप्त अभिजात वर्ग तथा भूस्वामिया के राजनीतिक प्रभुत्व को कायम रखन और परिवहन तथा सचार साधनो के सुधार और खानो तथा कारखानो के निर्माण द्वारा साम्राज्य की आर्थिक तथा सैनिक शक्ति को सुदृढ करने का प्रयास किया था। इस काल विशेष म सरकार के लिए पूजी का सकेद्रण करना और उस अर्थव्यवस्था के उन क्षेत्रो की तरफ मोडना बहुत महत्व रखता था, जिनके विकास म सरकार का निहित स्वार्थ था।

ज़ारशाही ने भारी सीमाशुल्को द्वारा स्थानीय उद्योग को विदेशी प्रतियोगिता से सरक्षण प्रदान किया। इसके अलावा उसन देश क आर्थिक जीवन मे सक्रिय भूमिका अदा करते हुए बडे-बडे कारखाना को अनुकूल शर्तो पर विशाल क्रयादेश दिये और रेलो के प्रसार के लिए भारी धनराशिया विनियुक्त की। राज्य बैंक न बडे पूजीपतिया को अनुकूल शर्तो पर लाखा रूबल उधार दिय। फलस्वरूप थोड ही समय के भीतर अलग-अलग पूजीपति राज्य बैंक के ४० लाख रूबल के ऋणी हो गये।

१८६१ के सुधार के पहले भी जारशाही राजकोष देश की अर्थव्यवस्था के एक महत्त्वपूर्ण राजकीय क्षेत्र का नियन्त्रित करता था जिसके अन्तर्गत जमीन तथा वन खान और कारखाने आते थे। १८६१ के बाद राजकीय क्षेत्र भी पूजीवादी स्वरूप ग्रहण करने लगा। इसके अलावा जारशाही सरकार ने अपने खर्चे से रेलो का निर्माण करना या निजी रेलो को खरीदना भी शुरू कर दिया था। १८६४ तक देश की आधी से अधिक रेल प्रणाली सरकार के हाथो मे आ चुकी थी। साथ ही सरकार ने कई बडे रेल इजीनियरी कारखाने और शस्त्रास्त्र बनानेवाले कारखानो को भी निजी उद्यमकर्ताओ से खरीद लिया था।

कई सरकारी पदाधिकारी और मत्री भी पूजीवादी उद्यमो के शेयर खरीदते थे। इसके कारण उनका इस तरह के उद्यमो के मुनाफो मे निजी स्वार्थ था और इसलिए वे उनके लिए लाभदायी क्रयादेश और दीर्घकालिक ऋण सुनिश्चित करने मे कोई कसर नही रहने देते थे। इन सरकारी नौकरो के जरिये शक्तिशाली पूजीपति जारशाही सरकार की नीतियो पर निश्चित प्रभाव डाल सकते थे।

औद्योगिक विकास को और तेज़ करने के लिए जारशाही सरकार ने बाद मे विदेशी पूजी के आयात की भी अनुमति दे दी और उसका यह कदम विदेशी वित्तपतियो के लिए बहुत ही लाभदायी सिद्ध हुआ जिन्होने इस नयी रिआयत का पूरा पूरा लाभ उठाया। इसके परिणामस्वरूप उन्नीसवी शताब्दी के अत तक फ्रासीसी, बेल्जियनी, जर्मन, ब्रिटिश तथा अन्य पूजीपतियो ने रूस के अनेक बडे-बडे औद्योगिक उद्यमो को – खासकर खनन तथा धातुकर्म उद्योगो मे – अपने कब्जे मे ले लिया।

औद्योगिक प्रसार का सवर्धन करने की ओर लक्षित इन कदमो ने रूस मे पूजीवादी विकास को सचमुच बढावा दिया। लेकिन साथ ही ऊपर से पूजीवाद के प्रवर्तन ने रूसी बूर्जुआज़ी के उपक्रम को कुठित भी किया, क्योकि उसे सरकार से खैरात पाने की आदत पड गयी थी। इसके अलावा, भारी विदेशी पूजी निवेश के परिणामस्वरूप औद्योगिक मुनाफो का काफी बडा भाग रूस के बाहर जा रहा था। सरकारी कारखानो और रेलो से प्राप्त आय को जारशाही सरकार ऐसे लक्ष्यो पर खर्च करती थी, जिनका रूसी जनता की सबसे महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओ से तनिक भी सरोकार नही था।

उन्नीसवीं शताब्दी के अत की
रूसी सस्कृति

उन्नीसवी शताब्दी का अतिम चरण रूस मे साहित्य कला तथा विज्ञान के अपूर्व मुकुलन का काल था। लेव तोलस्तोय (१८२८-१६१०) की कृतियो ने ससार के सभी राष्ट्रो मे जनमानस पर ज़बरदस्त प्रभाव डाला। फ्योदोर

व्लादीमिर इल्योच लेनिन, १६००

दोस्तायेव्स्की (१८२१-१८८१), इवान तुर्गेनेव (१८१८ १८८३) तथा अतोन चेखोव (१८६०-१९०४) की रचनाओ ने समस्त विश्व मे ख्याति अर्जित की। इसी काल मे रूस ने दुनिया को चाइकोव्स्की (१८४० १८९३) मूसोर्ग्स्की (१८३९-१८८१), रीम्स्की कोर्साकोव (१८४४-१९०८) और बोरोदीन (१८३३ १८८७) का विलक्षण सगीत भी दिया। पेरोव (१८३३ १८८२) क्राम्स्कोय (१८३७ १८८७) तथा रेपिन (१८४४-१९३०) जैसे यथार्थवादी चित्रकारो की तूलिकाओ से प्रसूत चित्रो ने अपने समकालीनो पर ज़बरदस्त सामाजिक प्रभाव डाला।

इस काल के रूसी विज्ञान ने भी विश्व विज्ञान के विकास मे भारी योगदान किया। इस समय के सबसे प्रसिद्ध रूसी वैज्ञानिको मे दमीत्री मंदेलेयेव (१८३४-१९०७), जिसने तत्वो की आवर्त सारणी का आविष्कार किया असाधारण भौतिकविज्ञानी स्तोलेतोव (१८३९-१८९६) और प्रतिभाशाली जीवविज्ञानी मेच्निकोव (१८४५-१९१६) तथा तिमिर्याजेव (१८४३ १९२०) के नाम उल्लेखनीय है।

नरोदनिक आदोलन

भूदासत्व के उन्मूलन के बाद भी रूसी देहातो मे किसान बलवो का अत नही हो गया था। किसान अब १८६१ के इस सुधार से जनित अवस्थाओ के विरुद्ध, जो व्यवहार मे भूस्वामियो के हितो का साधन करती थी, नाराज़ी को ज़ाहिर कर रहे थे। वे अपनी जोतो के घटाये जाने को बरदाश्त करने के लिए तैयार नही थे वे उन ज़मीनो के लौटाये जाने की जो उनसे ले ली गयी और भूस्वामियो के हवाले कर दी गयी थी और विमोचन शुल्को का अत किये जाने की माग कर रहे थे। किसान बलवे कभी यहा तो कभी वहा लगातार चलते ही रहे और देश भर मे जनता का कालातीत सामती प्रथाओ के विरुद्ध सघर्ष अविराम चलता रहा।

प्रगतिशील रूसी बुद्धिजीवी समुदाय ने सपत्तिहीन किसानो के साथ अपनी गहन सहानुभूति का प्रदर्शन किया। उनमे से बहुतो को पक्का विश्वास था कि सारे किसानो को ऐक्यबद्ध करके रूसव्यापी विद्रोह सगठित करना बडा आसान होगा, जिसके जरिये शोषण का अत किया जा सकेगा और जनता के लिए सुख तथा स्वतत्रता का जीवन सुनिश्चित किया जा सकेगा। चेर्निशेव्स्की और हर्ज़ेन के रास्ते पर चलनेवाली रूसी जनवादी बुद्धिजीवियो की इस पीढी का खयाल था कि गाव के सभी निवासियो को ऐक्यबद्ध करने वाला ग्रामसमुदाय स्वय ही समाजवादी समाज का भ्रूणरूप है और वह किसानो को सामूहिक रूप मे रहना और काम करना सिखाता है। इसी तरह के विचारो

से यह विचार पैदा हुआ कि पूजीवाद से गुजरे बिना तथा राजनीतिक सत्ता हथियाये बिना समाजवाद मे सीधे सक्रमण किया जा सकता है।

लेकिन ये विचार नितात गलत थे। किसान, जिनकी वर्ग चेतना तथा सामाजिक चेतना बिलकुल भी विकसित नही थी, अभी एकयबद्ध कार्रवाई करने के लिए तैयार नही थे। ग्रामसमुदाय मे निर्धन किसानो के हितो की औरो के शोषण से मालामाल उन अमीर किसानो के हितो के साथ कोई सामान्यता न थी। मेहनतकश किसानो को शोषण से मुक्ति दिलाने का एकमात्र रास्ता औद्योगिक सर्वहारा के साथ सहबध और उसके नेतृत्व मे सयुक्त सघर्ष ही हो सकता था।

इस समय तक कई रूसी क्रातिकारी कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एगेल्स की कृतियो से परिचित हो चुके थे। विदेश मे रहते समय उन्हे पश्चिमी यूरोपीय देशो मे मजदूर आदोलन के उभार को देखने का अवसर मिल चुका था और उनमे से कुछ तो सर्वहारा के क्रातिकारी सग्रामो के सहभागी तक रह चुके थे। १८७० मे स्विटजरलैंड मे निर्वासन मे रहनेवाले रूसी क्रातिकारियो के एक दल ने अपने को पहले इटरनेशनल की रूसी शाखा घोषित कर दिया था। उसी वर्ष रूसी क्रातिकारी गेर्मान लोपातिन (१८४५-१९१८) इटरनेशनल की महापरिषद का सदस्य चुना गया था। अपने मित्रो की सहायता से लोपातिन ने 'पूजी' के पहले खड का रूसी मे अनुवाद भी किया। तब से इस कृति का न जाने कितनी भाषाओ मे अनुवाद हो चुका है, किंतु यह रूसी सस्करण ही उसका सर्वप्रथम अनुवाद था।

१८७१ मे मार्क्स के आग्रह पर लदन मे इटरनेशनल की महापरिषद ने रूसी क्रातिकारी येलिजावेता द्मीत्रियेवा को पेरिस कम्यून मे अपनी अधिकृत प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। वह घेरे मे बद राजधानी पहुचने मे सफल हो गयी थी और उसने कम्यून के कार्य मे सक्रिय भाग लिया था।

लेकिन मार्क्स और एगेल्स के कार्यकलाप तथा कृतित्व से अवगत होने के बावजूद तत्कालीन रूसी क्रातिकारियो ने क्रातिकारी मार्क्सवाद के विचारो को अभी पूरी तरह से आत्मसात नही किया था। इसका मुख्य कारण रूस का पिछड़ापन था—पूजीवादी विकास अब भी अत्यत प्रारभिक अवस्था मे ही था और औद्योगिक सर्वहारा का उदय शुरू ही हुआ था। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि बहुत से रूसी बुद्धिजीवी अब भी मजदूर वर्ग की ऐतिहासिक भूमिका को समझ पाने की स्थिति मे नही थे और अब भी अपने इस भ्रात विचार पर ही दृढ थे कि रूस मे कृषक समुदाय ही मुख्य क्रातिकारी शक्ति है।

१८७४ मे कोई एक हजार नौजवान रूसियो ने किसानो का बाना पहनकर गावो का रास्ता पकड़ा। उनमे से कुछ किसानो को विद्रोह के लिए

प्रेरित करने और इस प्रकार देशव्यापी विप्लव सगठित करने की आशा से तो अन्य समाजवादी विचारो का प्रचार करने के लिए गये थे। रूसी क्रातिकारी युवजन का यह अभियान जनता के बीच जाने" के अभियान के नाम से विख्यात हुआ। बाद मे इसमे भाग लेनेवाले और उनके अनुयायी नरोदनिक" (रूसी शब्द "नरोद — जनता — से) कहलाये।

नरोदनिक और जारशाही के विरुद्ध उनका सघर्ष

किसानो पर नरोदनिको की अपीलो का कोई असर नही हुआ। वे सगठित सामूहिक विद्रोह के लिए तैयार नही थे और समाजवादी विचारो को स्वीकार करने के लिए तो और भी कम तैयार थे। इस असफलता के बाद कुछ नरोदनिको ने हतोत्साह होकर आदोलन को तज दिया जब कि अन्य अपने प्रचार कार्य को जारी रखने के इरादे से दस्तकारो छोटे व्यापारियो या चिकित्सा सहकारियो के रूप मे देहातो मे ही बस गये। अपने कार्यकलाप को ऐक्यबद्ध करने की आवश्यकता को समझकर इन युवा क्रातिकारियो ने ज़ेम्ल्या इ वोल्या (ज़मीन और आज़ादी) नामक गुप्त सगठन स्थापित कर लिया। उन्होने अपनी अवैध पत्रिका निकालने के लिए एक गुप्त छापाखाना भी स्थापित किया। यह पत्रिका जारशाही की जनविरोधी नीतियो का परदाफाश करती थी।

लेकिन जल्दी ही बहुत से नरोदनिको का ग्रामो मे अपने प्रचार कार्य की कारगरता मे विश्वास जाता रहा। उनमे से कुछ सबसे सक्रिय लोग सघर्ष का सही रास्ता ढूढने मे असफल रहकर जारशाही के खिलाफ आतकवादी कार्यनीति का प्रतिपादन करने लगे। वे राजनीतिक हत्याओ को अपने सघर्ष का सर्वोच्च साधन मानने लगे। उनका विश्वास था कि कुछ जारशाही मत्रियो और स्वय ज़ार की हत्या रूस के शासक हलको मे दहशत पैदा कर देने के लिए काफी होगी जिसके बाद राज्यसत्ता को हस्तगत करना कोई कठिन समस्या नही रहेगी। नरोदनिको का राजनीतिक सघर्ष के पथ पर अग्रसर होना बिलकुल उचित था मगर उन्होने राजनीतिक सघर्ष का जो स्वरूप चुना, वह गलत था। यह विचार कि आतकवादी कारवाइयो से और कुछेक उच्च अधिकारियो की हत्या से राज्य की राजनीतिक व्यवस्था को बदला जा सकता है सर्वथा निराधार था और बाद की घटनाओ ने यह सिद्ध भी कर दिया।

१८७९ मे नरोदनिक आतकवादियो ने नरोद्नाया वोल्या (जन स्वतत्रता) नामक नये गुप्त सगठन की स्थापना की। उसके नेता अद्रेइ ज़ेल्याबोव सोफ्या पेरोव्स्काया तथा अलेक्सादर मिखाइलोव जैसे अनुभवी

म यह विचार पैदा हुआ कि पूजीवाद से गुज़रे बिना तथा राजनीतिक सत्ता हथियाय बिना समाजवाद म सीधे सक्रमण किया जा सकता है।

लेकिन ये विचार नितात गलत थे। किसान, जिनकी वर्ग चतना तथा सामाजिक चतना बिलकुल भी विकसित नही थी, अभी एक्यबद्ध कार्रवाई करन के लिए तैयार नही थे। ग्रामसमुदाय मे निर्धन किसानो के हितो की औरो के शोषण से मालामाल बन अमीर किसानो के हितो के साथ कोई सामान्यता न थी। महनतकश किसाना को शोषण मे मुक्ति दिलान का एकमात्र रास्ता औद्योगिक सर्वहारा क साथ सहबध और उसके नतृत्व मे सयुक्त सघर्ष ही हो सकता था।

इस समय तक कई रूसी क्रातिकारी कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एगेल्स की कृतिया से परिचित हो चुके थे। विदश म रहते समय उन्ह पश्चिमी यूरोपीय दशो म मजदूर आदोलन के उभार को दखने का अवसर मिल चुका था और उनमे स कुछ ता सर्वहारा के क्रातिकारी सग्रामो के सहभागी तक रह चुक थे। १८७० म स्विटजरलैड म निर्वासन मे रहनवाले रूसी क्रातिकारियो के एक दल न अपन को पहल इटरनेशनल की रूसी शाखा घोषित कर दिया था। उसी वर्ष रूसी क्रातिकारी गमान लोपातिन (१८४५-१९१८) इटरनेशनल की महापरिषद का सदस्य चुना गया था। अपने मित्रो की सहायता से लोपातिन न 'पूजी' के पहले खड का रूसी म अनुवाद भी किया। तब स इस कृति का न जाने कितनी भाषाओ मे अनुवाद हो चुका है, किंतु यह रूसी सस्करण ही उसका सर्वप्रथम अनुवाद था।

१८७१ म मार्क्स के आग्रह पर लदन म इटरनेशनल की महापरिषद ने रूसी क्रातिकारी यलिजावेता द्मीत्रियेवा को पेरिस कम्यून म अपनी अधिकृत प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। वह घेरे मे बद राजधानी पहुचन म सफल हो गयी थी और उसने कम्यून क कार्य म सक्रिय भाग लिया था।

लेकिन मार्क्स और एगेल्स के कार्यकलाप तथा कृतित्व से अवगत होन के बावजूद तत्कालीन रूसी क्रातिकारियो ने क्रातिकारी मार्क्सवाद के विचारो को अभी पूरी तरह से आत्मसात नही किया था। इसका मुख्य कारण रूस का पिछडापन था—पूजीवादी विकास अब भी अत्यत प्रारभिक अवस्था मे ही था और औद्योगिक सर्वहारा का उदय शुरू ही हुआ था। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि बहुत से रूसी बुद्धिजीवी अब भी मजदूर वर्ग की ऐतिहासिक भूमिका को समझ पाने की स्थिति मे नही थे और अब भी अपने इस भ्रात विचार पर ही दृढ थे कि रूस मे कृषक समुदाय ही मुख्य क्रातिकारी शक्ति है।

१८७४ म कोई एक हजार नौजवान रूसियो ने किसाना का बाना पहनकर गावो का रास्ता पकडा। उनम से कुछ किसानो को विद्रोह के लिए

प्रेरित करन और इस प्रकार दशव्यापी विप्लव सगठित करन की आशा से तो अन्य समाजवादी विचारो का प्रचार करन क लिए गये थे। रूसी क्रातिकारी युवजन का यह अभियान जनता के बीच जान ' क अभियान के नाम स विख्यात हुआ। बाद म इसम भाग लनवाले और उनके अनुयायी "नरोदनिक" (रूसी शब्द नरोद" – जनता – से) कहलाये।

नरोदनिक और ज़ारशाही के विरुद्ध उनका सघर्ष

किसानो पर नरोदनिको की अपीलो का कोई असर नही हुआ। व सगठित सामूहिक विद्रोह के लिए तैयार नही थे और समाजवादी विचारो को स्वीकार करन क लिए तो और भी कम तैयार थे। इस असफलता के बाद कुछ नरोदनिको न हतोत्साह होकर आदोलन को तज दिया जब कि अन्य अपन प्रचार कार्य को जारी रखन क इरादे से दस्तकारो छोटे व्यापारियो या चिकित्सा सहकारियो क रूप मे देहातो म ही बस गये। अपन कार्यकलाप को ऐक्यबद्ध करन की आवश्यकता को समझकर इन युवा क्रातिकारियो ने जेम्ल्या इ वोल्या (जमीन और आजादी) नामक गुप्त सगठन स्थापित कर लिया। उन्होने अपनी अवैध पत्रिका निकालन के लिए एक गुप्त छापाखाना भी स्थापित किया। यह पत्रिका ज़ारशाही की जनविरोधी नीतियो का परदाफाश करती थी।

लेकिन जल्दी ही बहुत से नरोदनिको का ग्रामो म अपने प्रचार कार्य की कारगरता म विश्वास जाता रहा। उनमे से कुछ सबसे सक्रिय लोग सघर्ष का सही रास्ता ढूढन मे असफल रहकर ज़ारशाही क खिलाफ आतकवादी कार्यनीति का प्रतिपादन करन लगे। वे राजनीतिक हत्याओ को अपन सघर्ष का सर्वोच्च साधन मानन लगे। उनका विश्वास था कि कुछ जारशाही मत्रियो और स्वय जार की हत्या रूस क शासक हलको मे दहशत पैदा कर लेने के लिए काफी होगी, जिसके बाद राज्यसत्ता को हस्तगत करना कोई कठिन समस्या नही रहेगी। नरोदनिको का राजनीतिक सघर्ष के पथ पर अग्रसर होना बिलकुल उचित था मगर उन्होन राजनीतिक सघर्ष का जो स्वरूप चुना, वह गलत था। यह विचार कि आतकवादी कार्रवाइयो स और कुछेक उच्च अधिकारियो की हत्या से राज्य की राजनीतिक व्यवस्था को बदला जा सकता है सर्वथा निराधार था और बाद की घटनाओ न यह सिद्ध भी कर दिया।

१८७९ म नरोदनिक आतकवादियो न नरोदनाया वोल्या (जन स्वतत्रता) नामक नये गुप्त सगठन की स्थापना की। उसके नेता अद्रेई जेल्याबोव सोफ्या पेरोव्स्काया तथा अलेक्सादर मिखाइलोव जैसे अनुभवी

क्रातिकारी थे। इस नये सगठन के सदस्यो ने अपनी असीम कार्यशक्ति तथा सपूर्ण प्रतिभा और ज्ञान को आतकवादी कार्य करने पर लगा दिया। उन्होने कई ऊचे सरकारी अधिकारियो की हत्या करने मे सफलता प्राप्त कर ली और उसके बाद स्वय ज़ार अलेक्सादर द्वितीय को ही मृत्युदड देने का निश्चय किया। पूरे डेढ साल तक ज़ार के सर पर लगातार मौत का साया मडराता रहा। उसपर टहलते समय गोलिया चलायी गयी, शाही रेलगाडियो मे सुरग रखी गयी और एक बार तो सेट पीटर्सबर्ग के बीचोबीच उसके राजमहल मे भोजनकक्ष के नीचे ही डाइनमाइट का विस्फोट किया गया। ससार भर मे प्रगतिशील व्यक्तियो की सहानुभूति ज़ारशाही निरकुशता के इन साहसी विरोधियो के साथ थी यद्यपि वे नरोदनिक कार्यक्रम और कार्यनीति का किसी भी प्रकार अनुमोदन नही करते थे।

आखिर १ मार्च १८८१ को जार की उस समय हत्या कर दी गयी, जब वह राजधानी की एक सडक पर शाही बग्घी मे जा रहा था। बग्घी पर फेके पहले बम ने उसे उडा दिया और इग्नाती ग्रिनेवीत्स्की द्वारा फेके गये दूसरे बम ने जार तथा स्वय आतकवादी, दोनो को साघातिक रूप मे घायल कर दिया और दोनो ही कुछ ही घटो के भीतर मर गये। ज़ार का बेटा और उत्तराधिकारी अलेक्सादर तृतीय राजधानी को छोडकर सेट पीटर्सबर्ग के बाहर गात्चिना के राजमहल मे रहने चला गया जहा सशस्त्र पहरेदार और पुलिस उसकी रखवाली करने लगे। रूस के बाहर नये ज़ार को व्यग्यपूर्वक गात्चिना का कैदी" कहा जाता था।

लेकिन रूस की राजनीतिक व्यवस्था मे फिर भी कोई परिवर्तन नही आया। जारशाही सरकार अपनी पुरानी नीतियो पर ही चलती रही, अलबत्ता उसने क्रातिकारी तत्वो का दमन करने के लिए पहले से भी अधिक सक्रिय कदम उठाना शुरू कर दिये। नरोदनाया वोल्या की कार्यकारिणी समिति का नये जार को लिखा वह पत्र भी बेकार हो गया जिसमे उसने जार से दडमुक्ति घोषित करने की और जनता के प्रतिनिधियो का समाह्वान करने की अपील की थी और बदले मे अपनी आतकवादी कार्रवाइयो को बद कर देने का वचन दिया था। जार उनके अनुनय विनय के प्रति बहरा ही बना रहा, जब कि राजनीतिक पुलिस ने क्रातिकारियो के विरुद्ध पाशविक दमन चक्र चला दिया। कुछ ही समय के भीतर नरोदनाया वोल्या के सभी प्रमुख नेताओ को गिरफ्तार करके जेल मे डाल दिया गया। उनमे से चार को फासी दी गयी और शेष को लबे कारावास का दड दिया गया। इस समय तक यह सगठन पूर्णत ध्वस्त हो चुका था और उसे फिर से खडा करने के प्रयास निष्फल सिद्ध हुए। लेनिन के बडे भाई अलेक्साद्र उल्यानोव को नये ज़ार की हत्या के एक और प्रयास मे अपनी सहभागिता का मूल्य अपने प्राणो

से चुकाना पडा। उसे योजना के कार्यरूप म परिणत किये जाने क पहले ही गिरफ्तार करक मृत्युदड दे दिया गया।

नरोदनाया वोल्या सगठन तथा उसके सदस्यो की नियति ने यह दिखा दिया कि व्यक्तिगत साहस और सकल्प ही क्रातिकारी सगठन को सफलता दिलान के लिए काफी नही हो सकत। इसके लिए विजय के सही मार्ग को दिखानेवाला क्रातिकारी सिद्धात आवश्यक था और नरोदनिको के पास ऐसा कोई सिद्धात नही था। षड्यत्रो और अलग-थलग हत्याओ स सफ्ल क्राति नही की जा सकती थी।

पहले मजदूर सगठन

उन्ही वर्षो म कि जब नरोदनिक देहातो म किसानो के बीच अपना क्रातिकारी प्रचार कर रहे थे, नगरो म मजदूरो का सामूहिक आदोलन बल पकड रहा था।

ज़ारशाही रूस मे सरकारी अधिकारी और राजनीतिक पुलिस पूजीपतियो के हिता का सरक्षण करन के लिए तो सारा ज़ोर लगा देत थे मगर मज़दूरो को फिर भी कोई राजनीतिक अधिकार नही थे। उनके द्वारा मालिका के खिलाफ किसी भी प्रकार क विरोध प्रदर्शन को पुलिस तथा ज़ारशाही अधिकारी अवज्ञा या विद्राह ही समझते थे। हडताल को राज्य के विरुद्ध अपराध समझा जाता था, हडतालियो के नेताओ को गिरफ्तार कर लिया जाता था और हडताल म भाग लेनवालो को नौकरी से बरखास्त करके शब्दश कारखाने के बाहर फेक दिया जाता था।

लेकिन इसके बावजूद रूस म हडतालो की सख्या लगातार बढती ही चली गयी और उसके साथ-साथ मजदूर एकता की आवश्यकता की समझ भी बढती गयी।

बढते औद्योगिक असतोष की इस पृष्ठभूमि म १८७५ मे दो गुप्त सगठनो की स्थापना की गयी – ओदेस्सा बदरगाह म दक्षिणी रूस मज़दूर सघ और सेट पीटर्सबर्ग मे उत्तरी रूसी मज़दूर सघ। इनम से प्रथमोक्त को एक नरोदनिक बुद्धिजीवी येव्गेनी ज़ास्लाव्स्की ने और अताक्त को दो मज़दूरो – वीक्तर ओब्नोर्स्की नामक फिटर और स्तेपान खाल्तूरिन नामक बढई – ने सगठित किया था। ये दोनो प्रगतिशील मज़दूरो के प्रतिनिधि थे, जो नरोदनिक कार्यक्रम तथा कार्यनीति का अनुमोदन नही करते थ और सघर्ष के नये रूप खोजन के आकाक्षी थे। ओब्नोर्स्की पढा लिखा था और तीन बार विदेश भी हो आया था। उसे पश्चिमी यूरोप म मज़दूर सगठनो के अनुभव का अध्ययन करने का अवसर मिल चुका था और वह अतर्राष्ट्रीय मज़दूर आदोलन क विभिन्न नेताओ से परिचित था। खाल्तूरिन न भी अपन को शिक्षित करन

के लिए काफी पढा था। इन दानो न मजदूरा का अपन को सगठित करन और राजनीतिक अधिकारो के लिए सघर्ष करन के वास्त आह्वान किया। उनके द्वारा तैयार किये उत्तरी रूसी मजदूर सघ के कार्यक्रम पर पहले इटरनेशनल द्वारा प्रचारित विचारा का प्रत्यक्ष प्रभाव था।

ये दोनो मजदूर सघ रूसी सर्वहारा के सर्वप्रथम स्वतन्त्र क्रातिकारी सगठन थे। वे अधिक नही चल पाय और उन्हे राजनीतिक पुलिस न जल्दी ही कुचल दिया। लेकिन उनके जो नेता दमन-चक्र स निकल भागन म सफल हो गये उन्होंने जनता म अपना क्रातिकारी प्रचार जारी रखकर सर्वहारा की एकता को सवर्धित किया और उसकी राजनीतिक चेतना को वढाया।

हर दशक के साथ रूसी मजदूर आदोलन अधिकाधिक व्यापक होता चला गया और मजदूरा का विरोध प्रदर्शन भी अधिक सगठित बनता गया। १८८५ म मास्को के निकट ओरेखोवो जूयवो म मोरोजोव कपडा कारखान के आठ हज़ार मजदूरो ने हडताल कर दी। उत्तरी रूसी मजदूर सघ के भूतपूर्व सदस्य प्योत्र मोइसेयेको के नतृत्व म प्रगतिशील मज़दूरो के एक दल ने हडतालियो का मागपत्र तैयार किया। मज़दूरो की मुख्य माग यह थी कि मालिको द्वारा मजदूरो पर अपनी मरजी मुताबिक थोपे जानेवाल बेरोक जुरमाना की पद्धति खत्म कर दी जाये। जव प्रातीय गवर्नर सशस्त्र सिपाहियो को लेकर कारखान आया तो उस मागपत्र दिया गया। जव गवर्नर ने मजदूर नेताओ को गिरफ्तार करने का आदश दिया, तो हडताली अपने नताओ को वचाने के लिए मैदान मे उतर जाये और भयकर मुठभेड शुरू हो गयी। नतीजे के तौर पर ८०० से अधिक मज़दूरो को नगर से निर्वासित कर दिया गया और हडताल के ३३ नताओ पर मुकदमा चलाया गया।

मोरोजोव कपडा कारखाने की इस मज़दूर हडताल ने सरकार को इस बुरी तरह डरा दिया कि अगल ही साल जार अलेक्सादर तृतीय ने एक कानून जारी करके मालिको द्वारा मजदूरा पर लगाये जानेवाले जुरमानो की सीमा निर्धारित कर दी। यह मजदूर आदालन द्वारा जारशाही से वसूल की गयी पहली वडी रिआयत थी। रूस के मजदूर वर्ग ने अव अपनी ताकत को दिखलाना शुरू कर दिया था। प्रतिक्रियावादी पत्रकारो तक को घवडाकर मानना पड गया कि 'मज़दूर समस्या' रूस मे भी पैदा हो गयी है।

नरोदवाद से मार्क्सवाद तक

अब तक का सारा इतिहास सर्वहारा को रूसी जनवादी आदोलन म नतृत्वकारी भूमिका अदा करने के लिए तैयार करता आया था। मज़दूर प्रदर्शना की लगातार वढती सख्या जोरदार हडताल और मजदूर एकता

के अदम्य प्रयास, इन सभी ने देश भर मे जन-जीवन पर और सामाजिक चितन के विकास पर ज़बरदस्त प्रभाव डाला।

नरोदनाया वोल्या सगठन क ध्वस्त कर दिये जाने क बाद नरोदनिको की खासी बडी सख्या न क्रातिकारी सघर्ष से नाता तोड लिया और अपनी शक्ति को उदारवादी प्रबोधन के क्षेत्र मे लगाना शुरू कर दिया। लेकिन उनम से जो लोग क्रातिकारी परपराओ के प्रति निष्ठावान बने रह उन्होंने सुसगत क्रातिकारी सिद्धात की खोज मे प्रमुख पश्चिमी चितको की कृतियो और अन्य यूरोपीय देशो मे राजनीतिक सघर्ष के अनुभव का अध्ययन करना शुरू कर दिया। मार्क्स तथा एगल्स की रचनाओ का अध्ययन करने और सर्वहारा क्रातिकारी विरोध आदोलन के चढते ज्वार को देखने के बाद इन बुद्धिजीवियो ने अपना ध्यान मज़दूर आदोलन पर केंद्रित करना शुरू कर दिया।

१८८२ मे भूतपूर्व नरोदनिक गओर्गी प्लेखानोव ने कम्युनिस्ट घोषणापत्र का रूसी मे अनुवाद किया और १८८३ म उसन तथा उसके सहयोगियो ने जनेवा (स्विटज़रलैंड) म पहले रूसी सामाजिक जनवादी सगठन की स्थापना की, जिसे उन्होने श्रम मुक्ति दल का नाम दिया। इस दल क सदस्यो ने मार्क्सवादी विचारो का लोकप्रिय बनान और नरोदनिक कार्यक्रम की असगतियो तथा नरोदनिको की भ्रात कार्यनीति का परदाफाश करन क लिए व्यापक प्रचार कार्य किया और मार्क्स तथा एगेल्स की प्रमुख कृतियो के रूसी अनुवादो का और स्वय अपनी पुस्तिकाओ का प्रकाशन किया। इस प्रकार रूसी क्रातिकारियो न नरोदवाद से मार्क्सवाद की दिशा म एक महत्वपूर्ण कदम उठाया।

प्लेखानोव और उसके सहयोगियो न सिद्ध किया कि अन्य देशो की ही भाति रूस म भी मज़दूर वर्ग को क्रातिकारी आदोलन म अग्रणी भूमिका अदा करनी होगी और विजय प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि मज़दूर वर्ग राजनीतिक सघर्ष करे और राज्यसत्ता पर अधिकार जमाये। पेरिस म १८८९ म दूसर इटरनेशनल की पहली काग्रेस म भाषण देत हुए प्लेखानोव न कहा था, 'रूस म क्रातिकारी आदोलन केवल तभी विजयी हो सकता है जब वह मज़दूरो का क्रातिकारी आदोलन बन जाय।

श्रम मुक्ति दल के सदस्यो न पश्चिमी यूरोप क क्रातिकारी मार्क्सवादियो के घनिष्ठ सपर्क म काम किया। एगल्स न रूस म क्रातिकारी आदोलन की प्रगति म बडी दिलचस्पी रखी और वहा पहले सामाजिक-जनवादी सगठन की स्थापना का स्वागत किया। उसकी स्थापना के दो साल बाद एगेल्स ने लिखा था, मैं यह जानकर गर्व का अनुभव करता हू कि रूस क युवजन म एक ऐसी पार्टी है जो खुले तौर पर और बिना किसी हिचकिचाहट क

मार्क्स के महान आर्थिक तथा ऐतिहासिक सिद्धातो को स्वीकार करती है मार्क्स स्वय अगर कुछ अधिक जिये होते, तो उन्होन भी इतने ही गर्व का अनुभव किया होता।"

लेकिन श्रम मुक्ति दल के कार्यक्रम म अनेक असगतिया थी, जिनका मूल उसके सदस्यो द्वारा कृपक समुदाय की क्रातिकारी क्षमता का अल्पाकन और उदार बूर्जुआजी जो ज़ारशाही की प्रतिक्रियावादी नीति की आलोचना करने पर भी जन आदोलनो के प्रति अपने शत्रुभाव के कारण क्रातिकारी आदोलन को समर्थन नही दे सकता था, के शासन विरोध की अतिरजना करने मे निहित था।

श्रम मुक्ति दल के अलावा, जिसका मुख्यालय विदेश मे था, स्वय रूस मे भी – पहले सट पीटर्सवर्ग मे और बाद मे दूसरे बडे शहरो मे – सामाजिक-जनवादी ग्रुप पैदा होने लगे थे।

इन मार्क्सवादी ग्रुपो मे से एक वोल्गातटीन कज़ान नगर मे था, जिसके सदस्यो मे एक किशोर छात्र भी था जो मार्क्सवादी क्रातिकारी सिद्धात का उत्कट अध्येता था। यही छात्र आगे चलकर व्लादीमिर इल्यीच लेनिन के नाम से सारे ससार मे विख्यात हुआ। लेनिन को ही रूसी क्रातिकारी आदोलन मे व्याप्त नरोदनिक विचारो पर ध्वसात्मक प्रहार करना था।

लेनिन के क्रातिकारी कार्यकलाप का आरभ

लेनिन का जन्म पेरिस कम्यून के एक वर्ष पूर्व और रूस म पहले मज़दूर सघ के स्थापित किये जाने के पाच साल पहले, १८७० मे हुआ था। उनके पिता इल्या उल्यानोव एक शिक्षक थे, जिन्होने अपनी सारी शक्ति जनता के बीच शिक्षा के प्रसार म लगा दी थी। उनकी माता जो स्वय भी अध्यापिका थी, अत्यत सुशिक्षित थी। उनका फ्रासीसी अग्रेज़ी तथा जर्मन भाषाओ पर अच्छा अधिकार था और वह विश्व साहित्य तथा शास्त्रीय सगीत से सुपरिचित थी और उन्होंने अपने बच्चो म ज्ञान के प्रति गहन अनुराग पैदा कर दिया था।

लेनिन ने अपना बचपन वोल्गातटीन सिवीर्स्क नगर (अब उल्यानोव्स्क) म बिताया। स्कूली जीवन म ही उन्ह नदी के घाटो पर कुलियो की हैसियत से पैसा कमान के लिए काम करने आनेवाले किसानो और वोल्गा प्रदश मे निवास करनेवाली चूवाश तथा तातार जैसी अल्पसख्यक जातिया की रहन सहन तथा काम करन की कठोर अवस्थाओ को देखन का अवसर मिल गया था।

अतीव सफलता के साथ अपनी माध्यमिक शिक्षा पूरी करन के बाद सत्रह साल की उम्र मे लेनिन न कज़ान विश्वविद्यालय म प्रवेश लिया।

दृढ विश्वास स ओतप्रोत थी। उसमे उन्होने लिखा था कि " सभी जनवादी तत्वा का नता वनकर उठ खडा रूसी मज़दूर स्वेच्छाचारी शासन का तख्ता पलट देगा और खुले राजनीतिक सघर्ष के सीधे मार्ग से रूसी सवहारा को (सभी देशो क सर्वहारा के साथ) विजयी कम्युनिस्ट क्राति की तरफ ल जायेगा।

लेनिन मज़दूरो मे राजनीतिक तथा वैचारिक शिक्षा के कार्य पर भी वडा ध्यान देते थे। वह उन्ह क्रातिकारी सघर्ष क लिए आन्दोलित तथा उनके वीच समाजवादी विचारो का प्रचार करत थे। वह मजदूरा से उनकी समस्याओ और उनकी रहन सहन तथा कामकाज की हालतो के बारे म वातचीत करते थे और इसके वाद पर्चे लिखकर सीधी सादी भाषा मे यह वताते थे कि मज़दूरा को पूजीपतियो के विरुद्ध अपने दैनदिन सघर्ष मे अपने सामने किन लक्ष्या को रखना चाहिए। लेनिन के उदाहरण का अनुकरण करते हुए अन्य सामाजिक जनवादी ग्रुपो के सदस्या ने भी सर्वहारा जनसाधारण के साथ अधिक घनिष्ठ सबध स्थापित करना शुरू कर दिया और मज़दूर आदोलन म सक्रिय भाग लेने लग गये।

१८९५ के शरद म लेनिन के आग्रह पर सट पीटर्सबर्ग के सभी सामाजिक जनवादी ग्रुप मजदूर मुक्ति सघर्ष लीग नामक एक नये सगठन मे ऐक्यवद्ध हो गये। यह रूस म क्रातिकारी मजदूर पार्टी की स्थापना की दिशा म एक महत्वपूर्ण कदम था। इसके कुछ ही बाद मास्को तूला, रोस्तोव आन दोन तथा रूस क अन्य औद्योगिक केद्रो म पहले के बिखर हुए सामाजिक-जनवादी ग्रुप भी अधिक शक्तिशाली और घनिष्ठत सवद्ध सगठनो म सयुक्त हो गय। सामाजिक जनवादियो न जो इस समय तक औद्योगिक हडताल आदालन मे सक्रिय भाग लेने लग गये थे, उसमे सगठन तथा चेतना लाने का प्रयास किया। धीरे धीरे वैज्ञानिक समाजवाद को मजदूर आदोलन के क्रातिकारी सिद्धात के रूप म स्वीकार कर लिया गया

जारशाही पुलिस जल्दी ही लेनिन का पता लगा लेने और उन्ह गिरफ्तार करन मे कामयाव हो गयी लेकिन उनके जो साथी अब भी आज़ाद थे, उन्होन लेनिन द्वारा निर्धारित रास्ते पर चलना जारी रखा। १८९६ म उन्हान सट पीटर्सवग के कपडा कारखानो म हडताल का सगठन किया, जिसम ३० ००० मजदूरा न भाग लिया था। यह रूसी सर्वहारा की अब तक की सबसे बडी और सवसे सुसगठित हडताल थी। उसन मजदूर वर्ग की शक्ति और मार्क्सवादी क्रातिकारी सिद्धात की सटीकता को प्रदर्शित करके रूसी समाज पर समूच तौर पर जवरदस्त असर डाला। अन्य देशा के मजदूरा न रूसी हडतालियो की सहायता क लिए चदा इकट्ठा करना शुरू किया।

सोलहवा अध्याय

साम्राज्यवाद – पूजीवाद की चरम और अतिम अवस्था

पूजीवाद का साम्राज्यवादी अवस्था मे प्रवेश

उन्नीसवी और बीसवी शताब्दियो के सधिकाल मे पूजीवाद अपन विकास की उच्चतम अवस्था मे पहुच गया था। इस समय तक सारे ससार मे न केवल सामाजिक सबधो की पूजीवादी प्रणाली का प्रभुत्व ही स्थापित हो चुका था, बल्कि स्वय उसकी प्रकृति और विकास मे भी कई नये लक्षणो और नयी परिघटनाओ ने प्रकट होना शुरू कर दिया था। निस्सदेह यह सब अचानक ही नही हो गया था, वरन एक धीमी और क्रमिक प्रक्रिया का सिलसिला था, जिसन शताब्दियो के इस सधिकाल मे ही अपनी पूर्णता को प्राप्त किया था।

पूजीवाद के ये नये लक्षण अर्थव्यवस्था तथा राजनीति म और वर्ग सबधो के क्षेत्र मे प्रकट हुए। इन नये लक्षणो की तरफ कई लोगो का ध्यान गया था। अथशास्त्रियो और समाजविज्ञानियो न इन परिघटनाओ के विभिन्न पहलुओ का वर्णन किया था किन्तु इस नये विकास को शासित करनेवाले नियमो को समग्र रूप से समझने और सामान्यीकृत करन मे व असमर्थ ही रह।

यह लेनिन ही थे, जिन्होने अपनी विख्यात कृति साम्राज्यवाद पूजीवाद की चरम अवस्था' (१९१६) मे सबसे पहले साम्राज्यवाद के सारतत्व का प्रकट किया और उसके ऐतिहासिक महत्व को परिभाषित किया। लेनिन ने सिद्ध किया कि साम्राज्यवाद पूजीपतियो के इस या उस समूह द्वारा स्वीकृत अथवा अस्वीकृत नीति नही बल्कि पूजीवाद के विकास म एक निश्चित इतिहासत निधारित उसकी नूतनतम उच्चतम तथा अतिम अवस्था है।

आथिक क्षत्र म पूजीवाद के इस नये चरण की विशपताए य है सबस पहल उत्पादन तथा पूजी का सकेद्रण इतनी ऊची अवस्था म पहुच जाता

है कि देश की अर्थव्यवस्था म इजारेदारिया ही निर्णायक भूमिका अदा करन लगती है। बडी इजारेदारिया – शक्तिशाली ट्रस्ट और निगम – धीरे धीरे छोटे कम शक्तिशाली उद्यमो को अपन अधिकार म ले लती है और अपन अपन क्षेत्र मे प्रभावी स्थिति ग्रहण कर लती है। उदाहरण के लिए उन्नीसवी शताब्दी के अंत तक राकफेलर तेल ट्रस्ट – स्टैंडर्ड आइल – सयुक्त राज्य अमरीका के ९० प्रतिशत तेल उत्पादन के ऊपर अपना नियत्रण स्थापित कर चुका था और मार्गन द्वारा १९०१ म सस्थापित यूनाइटेड स्टेटस स्टील कारपोरेशन जिसकी परिसपत्ति १०० करोड डालर से अधिक थी इस समय तक लगभग दो तिहाई अमरीकी इस्पात उद्योग को अपन नियत्रण म ल चुका था। जर्मनी म दो विराट विद्युत इजीनियरी फर्मो – सीमस हाल्स्के तथा ए० ई० जी० – ने अपन कमजोर प्रतिद्वद्वियो को अपन अधिकार म ले लेन के बाद कुल मिलाकर इस उद्योग के लगभग दो तिहाई पर अपना नियत्रण कायम कर लिया था। फ्रास म दो निगमो – क्यूलमन तथा स गोवेन – का सपूर्ण रासायनिक उद्योग म अबाध प्रभुत्व था।

सपूर्ण पूजीवादी विश्व म इजारेदारिया औद्योगिक विकास म निर्णायक भूमिका अदा कर रही थी। बैकिंग जगत म भी इसी प्रकार का सकेद्रण हो रहा था। इसम भी अपनी शाखाओ तथा सबद्ध वित्तीय कारबार के जाल के साथ हर देश म नियमत चार या पाच बैको का ही प्रभुत्व था।

पूजीवादी विकास की साम्राज्यवादी अवस्था का दूसरा विशिष्ट लक्षण बैक पूजी तथा औद्योगिक पूजी मे घनिष्ठ सलयन और फलस्वरूप वित्तीय पूजी तथा शक्तिशाली वित्तीय गुटो का उदय था।

पूजी का निर्यात जो अब माल के निर्यात के मुकाबले अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निबाहन लगा था साम्राज्यवाद का एक और चारित्रिक लक्षण था। उदाहरण के लिए, १९१४ तक ब्रिटिश पूजी निर्यात का कुल योग ७५ अरब से १ खरब फ्राक के बीच, फ्रासीसी पूजी निर्यात का योग ६० अरब फ्राक और जर्मन का ४४ अरब फ्राक हो चुका था। इस प्रकार इन देशो ने ही उस समय लगभग २ खरब फ्राक की कल्पनातीत राशि का निर्यात कर रखा था।

पूजीवादी विकास की साम्राज्यवादी अवस्था का चारित्रिक चौथा लक्षण अतर्राष्ट्रीय इजारेदार गुटबदियो का निर्माण और ससार का इन पूजीवादी सघो के प्रभाव क्षेत्रो म विभाजन था। इसका एक उदाहरण अतर्राष्ट्रीय रेल कार्टेल था जिसन ब्रिटेन, जर्मनी तथा बेल्जियम के लिए निश्चित कोटा कायम कर दिये थे। बाद मे फ्रास आस्ट्रिया, स्पेन और सयुक्त राज्य अमरीका भी इस कार्टेल मे शामिल हो गये। १९०९ म एक अतर्राष्ट्रीय जस्त सिडीकेट स्थापित किया गया, जो जर्मन, बेल्जियन, फ्रासीसी, स्पेनी

और ब्रिटिश कारखानो के लिए उत्पादन का परिमाण निर्धारित करता था। कई नये अतर्राष्ट्रीय सघ पैदा हो गये और विभिन्न देशो के कुछ प्रमुख इजारो क बीच बिक्री की मडियो के विभाजन क बार म समझौते सपन्न किये गये (लेकिन इसका यह मतलब नही कि उनक बीच प्रतिद्वद्विता खत्म हो गयी थी)।

पाचवा और अतिम लक्षण प्रमुख पूजीवादी शक्तियो के बीच ससार क क्षेत्रीय विभाजन का पूरा होना और विश्व क पुनर्विभाजन के लिए सघर्ष का शुरू होना था।

ससार क पुनर्विभाजन क लिए पहला साम्राज्यवादी युद्ध १८९८ का स्पेनी-अमरीकी युद्ध था। इस युद्ध म सयुक्त राज्य अमरीका का हर सभव साधन से क्षेत्रीय प्रसार क लिए आतुर अपेक्षाकृत युवा और उत्साही पूजीवाद स्पेन का विरोध कर रहा था, जिसकी शक्ति पहल ही उतार पर थी और जिसके लिए अपने विस्तृत औपनिवेशिक साम्राज्य को अधिकार म बनाये रखना अधिकाधिक कठिन होता जा रहा था। इस टक्कर म सयुक्त राज्य अमरीका विजयी हुआ और उसने स्पेनियो को फिलिपीन द्वीपसमूह और क्यूबा से निकाल दिया। इन दोनो देशो के निवासियो ने अपनी स्वाधीनता तथा स्वतत्रता की रक्षा के लिए हाथो मे हथियार उठा लिये – फिलिपीनियो और क्यूबाइयो की जितनी स्पेनी शासन के जूए क नीचे रहन की इच्छा नही थी, उतनी ही अमरीकी शासन मे रहने की भी नही थी। लेकिन उस समय साम्राज्यवाद-विरोधी मुक्ति सग्राम क उषाकाल म न क्यूबा और फिलिपीन द्वीपसमूह के निवासी इतने शक्तिशाली थे कि अपनी स्वतत्रता की रक्षा कर सकते और न अतर्राष्ट्रीय रगभूमि म वर्ग शक्तियो का सतुलन अभी मुक्ति-सघर्ष की विजय के अनुकूल ही था।

लेकिन ससार के विद्यमान औपनिवेशिक विभाजन को हथियारो के बल पर बदलने के इच्छुक अकेले अमरीकी साम्राज्यवादी ही नही थे। जर्मन साम्राज्यवादियो की भी, जो इस समय तक आपादमस्तक शस्त्रसज्जित हो चुके थे ऐसी ही आकाक्षाए थी। इसी प्रकार जापानी साम्राज्यवाद भी, जो कोरियाई जनता को ही दबाकर सतुष्ट नही हो गया था चीन मे पाव फैलाने के सपने देख रहा था। इतालवी साम्राज्यवादी जो अपने प्रतिद्वन्द्वियो से कही कम सामर्थ्यवान होने पर भी अत्यधिक आक्रामक थे १८९६ म ही इथिओपिया को 'हडपने' का प्रयास कर चुके थे।

इधर प्रतिष्ठापित औपनिवेशिक शक्तिया – ब्रिटेन फ्रास हालैड पुर्तगाल और स्पेन – भी अपने दीर्घकाल से अधिकृत प्रदेशो पर अपनी जकड को मजबूत कर रही थी और उनमे से किसी से भी नाता तोडने की कोई मशा नही जता रही थी। उनके बाद म पैदा हुए शक्तिशाली नये साम्राज्य

वादी देशो की महत्वाकाक्षाओ के परिणामस्वरूप, जो पुराने विजेताओ से औपनिवेशिक प्रदेश छीनने के इच्छुक थे, अनिवार्यत दोनो समूहो म कटु सघर्ष शुरू हो गया। पूजीवादी विश्व म औपनिवेशिक लूट के विभाजन का सवाल केवल एक ही तरीके से हल किया जा सकता था और वह तरीका युद्ध था। ससार तथा औपनिवेशिक प्रदेशो के पुनर्विभाजन के लिए चल रहे सघर्ष की परिणति साम्राज्यवादी युद्ध म होनी अनिवार्य ही थी।

साम्राज्यवाद, पूजीवाद की अतिम अवस्था

साम्राज्यवाद के विभिन्न लक्षणो म सबसे महत्वपूर्ण तथा आधारभूत लक्षण इजारेदारियो का उदय है। लेनिन ने कहा था कि अगर हम साम्राज्यवाद की सक्षिप्ततम परिभाषा देनी हो तो हम कहेगे कि पूजीवाद की इजारेदारी वाली अवस्था का नाम ही साम्राज्यवाद है। निस्सदेह, इसमे अनेक स्थानिक रूपातरो को ध्यान म रखना जरूरी था। उदाहरण के लिए, लेनिन ने ब्रिटिश साम्राज्यवाद को "औपनिवेशिक साम्राज्यवाद", जर्मन साम्राज्यवाद को "युकर साम्राज्यवाद", फ्रासीसी साम्राज्यवाद को 'सूदखोर साम्राज्यवाद' और रूसी साम्राज्यवाद को 'सैनिक सामती साम्राज्यवाद' कहा था। लेकिन इन देशो मे विद्यमान सारे अतरो के बावजूद, जो कभी-कभी बहुत महत्वपूर्ण होते थे उनका विकास पूजीवाद के विकास की एक निश्चित अवस्था—साम्राज्यवाद—के लिए लाक्षणिक सामान्य नियमो को ही प्रतिबिबित करता था।

अपने विकास के इस उच्चतम स्वरूप—इजारेदारी—म पहुच चुकने के बाद पूजीवाद अपनी इतिहासत निर्धारित सीमा पर पहुच गया। इजारेदार पूजीवाद न केवल पूजीवाद की उच्चतम अवस्था है, बल्कि उसकी अतिम अवस्था भी है। साम्राज्यवाद के अतर्गत न सिर्फ उत्पादन के एक भिन्न, समाजवादी ढग मे सक्रमण के लिए आवश्यक सभी वस्तुगत भौतिक परिस्थितियो का ही निर्माण हो चुका होता है, बल्कि पूजीवादी व्यवस्था म अतर्निहित सभी बुनियादी अतर्विरोध इतने सगीन हो चुके होते है कि उनका क्रातिकारी समाधान अनिवार्य हो चुका होता है। इसी विचार के आधार पर लेनिन ने यह दावा किया था कि साम्राज्यवाद समाजवादी क्राति की पूर्व वेला है।

बीसवीं शताब्दी के आरभ मे पूजीवादी व्यवस्था की परजीविता और ह्रास

साम्राज्यवाद क पतन की एतिहासिक अनिवार्यता अपन आपको विभिन्न स्वरूपो म प्रतिविबित करती आयी है और अब भी करती है। बीसवी सदी क आरभ म भी, जब पूजीवादी सामाजिक सबध सारी दुनिया पर हावी थे, उसके ह्रास तथा अपकर्ष के आसार प्रत्यक्ष होन लग गये थ। इजारेदारी की प्रकृति ही ऐसी है कि वह गतिहीनता और ह्रास को जन्म देती है। लेकिन, निस्सदह, इसका यह मतलब नही कि साम्राज्यवादी अवस्था मे आते ही पूजीवाद तुरत उत्पादन म गतिहीनता ले आता है। इसके विपरीत, पूजीवाद की साम्राज्यवादी अवस्था म उत्पादन मे वृद्धि तक आती है और कई उद्योग तो बहुत तज़ी के साथ प्रसार करते ह। लकिन इसीक साथ साथ पूजीवादी विकास की असमानता कही अधिक स्पष्टता क साथ सामने आ जाती है और पूजीवाद के परजीविता और ह्रास जैसे विभिन्न नय लक्षण प्रकट होन लगते है।

य लक्षण शासक वर्गो म अनुत्पादक सस्तर की वृद्धि, ब्याजजीवियो – कर्ज दी गयी पूजी क सूद पर जीनवालो – की बढती सख्या जैसी परिघट नाओ मे प्रकट होत है। ब्याजजीवी या सूदखोर तत्वत परजीवी होत है और कोई उपयोगी सामाजिक कार्य नही करते। साम्राज्यवाद क युग म वे कई विकसित पूजीवादी देशो मे समाज क खासे बडे हिस्से का निर्माण करते है। जो देश पूजी का निर्यात करते ह और उस पर ब्याज लेते ह व भी ब्याजजीवियो या सूदखारो की ही भूमिका अदा करत हे और ब्याजजीवी या सूदखोर राज्य बन जाते हे। फ्रास ने १६१४ म विदेशो म जा ६० अरब फ्राक लगाये थे, व यदि स्वय अपने ही देश म लगाये गये होते तो निस्सदेह अर्थव्यवस्था मे नये जीवन का सचार कर दते। अगर हम यह ध्यान म रखे कि १८७१-१८७३ मे जर्मनी को मिली पाच अरब फ्राक की युद्ध क्षतिपूर्ति ने किस प्रकार उसके उद्योग को जबरदस्त उत्प्रेरण प्रदान किया था, तो यह बात विशेषकर स्पष्टता के साथ सामने आ जाती है। लकिन पूजी का निर्यात करनेवाले धनकुबेर अपने देश की अर्थव्यवस्था के बार मे ज्यादा नही सोचते और अधिकतम मुनाफे हासिल करना ही उनकी सबसे बडी चिता होती है। जिन दशा म उनका बोलबाला होता है व धीरे धीरे सूदखार राज्यो मे परिणत होते जाते ह।

पूजीवाद की अतिम, साम्राज्यवादी अवस्था म परजीविता और ह्रास की एक और अभिव्यक्ति विभिन्न प्रकार के अनुत्पादक कार्यो मे लगे लोगो की सख्या म तीव्र, बल्कि अधाधुध वृद्धि हैं। मानव श्रम की एक अकूत

माना का युद्धो के जरिये अपव्यय हो जाता है। १६१४-१६१८ के साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध के समय सात मुख्य युद्धरत देशा म छ करोड स अधिक समर्थाग लोगो को लामबद किया गया था और उत्पादक कार्य करन के स्थान पर एक दूसरे का सहार करन म लगाया गया था। इस युद्ध म कुल मिलाकर ३६ देशो ने भाग लिया था और उनकी कुल जनसख्या १ अरब स अधिक थी।

लेकिन शातिकाल मे भी सैनिक व्ययो और हथियारो की होड पर हर देश के श्रम का काफी हिस्सा स्वाहा हो जाता है। प्रथम विश्वयुद्ध की पूर्ववेला मे जर्मनी म सैनिक कार्यो के लिए विनियुक्त धनराशि अन्य सभी कार्यो के लिए विनियुक्त धनराशि के ढाई गुन से ज्यादा थी। इस काल म फ्रास का सैनिक व्यय भी पूरे बजट के एक तिहाई से अधिक था।

पूजीवाद का ह्रास इसमे भी प्रतिबिबित हुआ कि कई मामला म उसने प्राविधिक प्रगति मे बाधक बनना शुरू कर दिया। जिन मामलो मे इजारेदारियो के हित प्राविधिक नवाचारो तथा सुधारा की अपेक्षा नही करते थे उनम वे किसी भी सुधार या आविष्कार को प्रोत्साहित नही करती थी बल्कि जान बूझकर उनमे बाधा ही डालती थी।

साम्राज्यवाद और राजनीतिक प्रतिक्रिया

लेकिन बीसवी शताब्दी के आरभ मे पूजीवादी व्यवस्था मे प्रकट होनेवाले परजीविता ह्रास और अपकर्ष के य चिह्न उसके आक्रामक और प्रतिक्रियावादी चरित्र मे किसी भी प्रकार की कमी के सूचक नही थे। इसके विपरीत साम्राज्यवादी युग मे आन के बाद तो पूजीवादी व्यवस्था मे अत र्निहित ये प्रतिक्रियावादी और आक्रामक लक्षण और भी अधिक प्रत्यक्ष तथा प्रबल हो गये। इस युग मे आकर हथियारो की होड कम होने के बजाय और भी ज्यादा तेज हो जाती है। अपनी सैन्यवादी नीतियो खुली फौजी धमकियो और साम्राज्यवादी युद्धो के जरिये बडी साम्राज्यवादी शक्तिया कमजोर देशा को जीतकर और अधीन बनाकर अपने खुद के प्रभाव और प्रभुत्व को बढाने और सुदढ करने का प्रयास करती है। साम्राज्यवाद और युद्ध म चोली दामन का साथ है।

पर साम्राज्यवाद का अर्थ मात्र विदेशी भूमि पर आक्रमण ही नही है। साम्राज्यवादी युग विभिन्न पूजीवादी देशो की गृह तथा विदेश नीति म बढती प्रतिक्रिया का युग भी है। एक बार सत्ता के शिखर पर पहुचने और उत्पीडको का शासक वर्ग बन जाने के बाद बूर्जुआजी की सामाजिक प्रगति म कोई दिलचस्पी नही रह जाती। सच तो यह है कि साम्राज्यवादी

बूर्जुआजी प्रगति का घोर विरोधी होता है और प्रतिक्रिया तथा प्रतिक्रांति का एक गढ़ बन जाता है। साम्राज्यवादी बूर्जुआजी – इजारेदारों, बैंकपतियों, कारखानेदारों, बड़े व्यापारियों, उपनिवेशवादियों और अतिधनपत्तिवालों – के समस्त क्रियाकलाप की प्रेरक शक्ति अधिकतम मुनाफा हासिल करने की कोशिश ही होती है। उसके अलावा और सभी कुछ उनके लिए बेमानी और बेकार होता है। एक समय था कि जब बूर्जुआजी के कार्य और विचार बहुत से विरुद्ध निर्देशित थे, लेकिन बीसवीं सदी में आकर साम्राज्यवादी बूर्जुआजी और वर्ग में अपने सामान्य स्वार्थपूर्ण हितों की रक्षा करने के लिए चालीकामना का मेल हो गया। एक जमाना था कि जब बूर्जुआजी वंशागत अभिजाततंत्र और निरंकुशता का शत्रु था, लेकिन अब वह स्वयं ऐश्वर्यशाली अभिजातवर्ग में परिणत हो गया, सामंत वर्ग के अवशेषों के साथ घनिष्ठतम संबंध स्थापित करने के लिए एड़ी चोटी का जोर लगाने लगा और अपने हितों का साधन करनेवाले राज्यतंत्र के सुदृढ़ीकरण के लिए हर संभव प्रयास करने लगा। कुछ ही समय पहले तक, यानी अठारहवीं सदी में बूर्जुआजी स्वतंत्रता तथा विवेक की विजय में अपना विश्वास जता रहा था, सामाजिक तथा वैयक्तिक स्वतंत्रता के पक्ष में आवाज उठा रहा था और जनसाधारण का समर्थन प्राप्त करने का प्रयास कर रहा था। लेकिन बीसवीं सदी के आते-आते यही वर्ग प्रतिक्रिया और रूढ़िवाद के मुख्याधार में परिणत होकर सैन्यवाद और हिंसा, महाशक्ति राष्ट्रवाद और पाशविक अंधराष्ट्रवाद का प्रचारक बन बैठा। उसके भूतपूर्व नायक मुक्त चिंतन के पक्षपोषक वाल्तेयर का स्थान अब घोर प्रतिक्रियावादी जर्मन दार्शनिक नीत्शे (१८४४-१९००) ने ले लिया, जिसकी रचनाएं पाशविक बल के गुणगान और भांति भांति के मानवद्वेषपूर्ण विचारों से ओतप्रोत हैं।

साम्राज्यवादी प्रतिक्रिया के विरुद्ध संघर्ष

साम्राज्यवादी युग में प्रतिक्रिया की संयुक्त शक्तियों को लोकतंत्र तथा जनता के हितों का समर्थन करनेवाली शक्तियों के विरोध का सामना करना पड़ता है। श्रमिक वर्ग के साथ साथ, जो साम्राज्यवादी बूर्जुआजी का मुख्य शत्रु है, मेहनतकश जनता के गैर सर्वहारा अंशक भी इस संघर्ष में शिरकत करते हैं। उन्नीसवीं और बीसवीं सदियों के संधिकाल में श्रेष्ठतम साहित्यकारों ने अपनी कृतियों में पूंजीवादी जगत, उसकी व्यवस्था और नीति का पर्दाफाश किया। इन महान साहित्यकारों में अनातोल फ्रांस (१८४४-१९२४), रोमां रोलां (१८६६-१९४४), हेनरिख मान (१८७१-१९५०), टामस मान (१८७५-१९५५) और जैक लंडन (१८७६-१९१६)

जैस लाग भी थ। नौकरीपेशा लोगो न निचल तथा मझाल मस्तरा, अध्यापकों और अन्य बुद्धिजीवी लोगों न भी, जा अब तक वर्ग सघष स दूर रहत आय थ उसम भाग लना शुरू कर दिया।

मजदूर वग इस काल म लोकतत्र की मुख्य शक्ति क रूप म अधिकाधिक सामन आता जाता है। जब जब सवहारा न लोकतान्त्रिक शक्तियो क साथ मिलकर आक्रामक रवैया अपनाया, शासक वर्गों का रिआयत दन पर मजबूर होना पडा। उदाहरण क लिए ब्रिटन म मजदूर आदालन म आयी सक्रियता की नयी लहर क सामन लायड जार्ज (१८६३-१६४५) जैस चतुर और बुद्धिमान प्रधानमत्री क नतृत्व म लिबरल पार्टी की सरकार का कई सुधार शुरू करन पड जिनम स कुछ य है—खनिका क लिए आठ घट का कार्य दिवस (१६०८) बीमारी तथा बराजगारी म सहायता दन के लिए मजदूरो का सामाजिक बीमा (१६११), १६११ का ससदीय विधयक आदि। इसी तरह १६०५ म फ्रास म एक कानून जारी करक चर्च का राज्य से पृथक्करण कर दिया गया और १६०७ म आस्ट्रिया म सार्विक मताधिकार (पुरुषो क लिए) लागू कर दिया गया।

उपनिवेशवाद और औपनिवेशिक नीति

साम्राज्यवाद अपन साथ साथ औपनिवशिक आक्रमण म भी तेजी लकर आया। महाशक्तिया और बेल्जियम तथा हालैड जैसी छोटी, किंतु औद्योगिक दृष्टि स विकसित पूजीवादी शक्तियो न भी अपन अपन औपनिवशिक प्रदशा म स्थानीय लोगो का शोषण बढान मे काई कसर बाकी नही रखी। इसी क साथ साथ उन्होंने हर एसे इलाके पर अपना प्रभुत्व जमान की कोशिश भी की जिसपर किसी कारण से (आम तौर पर विभिन्न दावदारा म प्रतिद्वद्विता क कारण) अभी तक किसी का अधिकार नहीं हो पाया था। औपनिवशिक दौड म सबसे देर से शामिल होनवाले दश ही नहीं बल्कि पुरानी औपनिवशिक शक्तिया भी नय-नये इलाके हथियान को आतुर थी।

बीसवी शताब्दी के आरभ म सबसे बडा औपनिवशिक साम्राज्य ब्रिटन क पास था। १६०० म उसक उपनिवशो तथा अधीनस्थ प्रदेशो का क्षेत्रफल शासक देश स १०६ गुना अधिक और आबादी ८८ गुना अधिक थी। ब्रिटेन के हाथा मे ससार क ४४ ६ प्रतिशत औपनिवशिक प्रदेश सकद्रित थे और य उपनिवश ही उसकी शक्ति ओर एश्वर्य क स्रात थे। लेकिन ब्रिटिश उपनिवशवादियो की क्षुधा को तुष्ट करने के लिए इतना ही काफी नही था—व साम्राज्य के सीमाता को और भी अधिक दूर ल जाने, और

भी अधिक व्यापक बनाने पर तुले हुए थे। फलस्वरूप १८९९ और १९०२ के बीच ब्रिटेन ने ट्रासवाल तथा ओरेन्ज फ्री स्टेट के दो बोअर गणराज्यो के विरुद्ध अप्रच्छन्न आक्रामक युद्ध चलाया और अत मे उनका अधिनहन कर लिया। बोअर युद्ध उन सबसे पहले साम्राज्यवादी युद्धो मे एक था जिसने हर कही प्रगतिमना लोगो मे न्याय्य आक्रोश उत्पन्न किया था। १९०६ मे ब्रिटेन ने न्यू हैब्रीडीज़ द्वीपो को भी दबोच लिया। यद्यपि ब्रिटेन की आर्थिक शक्ति अब उसके प्रतिद्वद्वियो के लिए पहले जैसा गभीर खतरा नही रही थी, फिर भी इसका यह मतलब नही था कि वह अपने अपार साम्राज्य के छोटे से छोटे कोने को भी छोड देने के लिए तैयार हो गया था। ब्रिटिश सिंह ने अपने शिकार पर पजा मजबूती के साथ जमा रखा था और जब भी कोई उसके पास आने की कोशिश करता था तो वह डरावनी गर्जना करने लगता था।

क्षेत्रफल और जनसख्या, दोनो ही दृष्टियो से फ्रास का साम्राज्य दूसरा सबसे बडा साम्राज्य था, लेकिन यह फ्रासीसी उपनिवेशवादियो की क्षुधा को तुष्ट करने के लिए काफी नही था। बीसवी सदी के पहले दशक मे जर्मन साम्राज्यवादियो की घोर नाराजगी के बावजूद जिन्होने इस सदर्भ मे युद्ध की बारबार धमकिया दी, फ्रास मोरक्को मे घुसने लग गया। १९११ तक सभी व्यावहारिक अर्थो मे मोरक्को का अधिनहन किया जा चुका था और उसे फ्रासीसी औपनिवेशिक साम्राज्य मे शामिल कर लिया गया।

छोटे से किंतु आर्थिक दृष्टि से शक्तिशाली देश बेल्जियम ने उन्नीसवी शताब्दी के अत मे मध्य अफ्रीका मे कागो के विशाल प्रदेश को जीत लिया और उसके निवासियो का निर्मम शोषण शुरू कर दिया।

औपनिवेशिक लूट की इन अप्रच्छन्न कार्रवाइयो के अलावा महाशक्तिया तथा आर्थिक दृष्टि से विकसित अन्य पूजीवादी देश प्राय औपनिवेशिक प्रसार के अपरोक्ष तरीको को भी अपनाया करते थे। साम्राज्यवादियो के लिए कई बार खुले तौर पर जोर-जबरदस्ती का प्रयोग करने के बजाय अपने आपको आर्थिक दृष्टि से पिछडे हुए देशो के लोगो के मित्रो और रक्षको के रूप मे पेश करना अधिक लाभदायक और सुविधाजनक सिद्ध हुआ करता था। मिसाल के लिए सयुक्त राज्य अमरीका के शक्तिशाली साम्राज्यवादी हलको ने यही रास्ता अपनाया था।

अमरीकी डालर भी कई अवसरो पर अमरीकी साम्राज्यवादी धन-कुबेरो के लिए सगीनो से अधिक कारगर हथियार साबित हुआ। लैटिन अमरीकी देशो मे, जिन्हे औपचारिक रूप मे प्रभुतासपन्न राज्य माना जाता था अमरीकी प्रभुत्व आर्थिक अत प्रवेश के जरिये ही स्थापित किया गया

था। अमरीकी पूजी ने शीघ्र ही लेटिन अमरीकी देशो के आर्थिक जीवन के सभी क्षेत्रो मे प्रवेश कर लिया और अपने अधिकाश ब्रिटिश प्रतिद्वद्वियो को बाहर खदेड दिया। लैटिन अमरीका के नाम के लिए आजाद देश व्यवहार मे अमरीकी पूजी के खिदमतगारो जैसे बन गये।

चीन का औपनिवेशिक अधीनीकरण एक दूसरे ही तरीके से किया गया। औपचारिक रूप मे चीन अब भी (१६११ की क्राति के पहले तक) स्वतत्र, प्रभुतासपन्न साम्राज्य ही था। लेकिन व्यवहार मे वहा चलती ब्रिटिश अमरीकी, जापानी, रूसी फासीसी और जर्मन साम्राज्यवादियो के प्रतिद्वद्वी गुटो की ही थी। चीन कितने ही साम्राज्यवादी देशो की दया पर निर्भर था।

साम्राज्यवादी दासता का एक और रूप वह था, जो सदियो के सधिकाल मे ईरान मे देखा जा सकता था। बहुत समय से रूस और ब्रिटेन मे इस देश पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए आपस मे प्रतिद्वद्विता चलती आ रही थी। आखिर १६०७ मे उन्होने एक समझौते पर हस्ताक्षर करके अपने अपने प्रभाव क्षेत्रो को परिभाषित कर दिया – रूसी प्रभाव क्षेत्र उत्तर मे था और ब्रिटिश प्रभाव क्षेत्र दक्षिण मे। देश के मध्यवर्ती भाग को तटस्थ क्षेत्र बना दिया गया। इस तरह औपचारिक रूप मे स्वतत्र होने पर भी ईरान सभी व्यावहारिक मामलो मे इन दोनो महाशक्तियो – ब्रिटेन तथा रूस – के अधीन हो गया।

लेकिन उपनिवेशवाद ने खुला या प्रच्छन्न, कोई भी रूप क्यो न लिया हो उसका सारतत्व ज्यो का त्यो ही रहा। उपनिवेशवाद उन सभी जनो के लिए जिन्हे उसने अपनी दासता की बेडियो मे जकडा था उत्पीडन, बरबादी शोषण और सहार ही लाता था।

भारत मे, जिसे ब्रिटिश ताज का मोती कहा जाता था, ब्रिटिश शासन के अधीन आदमी का औसत जीवनकाल २६ वर्ष से अधिक नही था। कुछ औपनिवेशिक जना, उदाहरण के लिए न्यूज़ीलैड के माओरी, न्यूगिनी के पापुआ और सयुक्त राज्य अमरीका के इडियनो को तो लगभग उन्मूलन के गर्त मे धकेल दिया गया था।

साम्राज्यवादी प्रतिद्वद्विता की पराकाष्ठा। यूरोप का सैनिक शिविरो मे निर्णायक विभाजन

बढते औपनिवेशिक प्रसार, मडियो पूजी निवेश के क्षेत्रो, कच्चे मालो के नये स्रोतो और प्रभाव क्षेत्रो' के लिए भीषण प्रतिद्वद्विता और ससार के पुनर्विभाजन की मुहिम, जो अब अपने पूरे जोरो पर थी इन सभी ने

पहले ही गहरे साम्राज्यवादी अतर्विरोधो को और भी अधिक गहरा बना दिया। साम्राज्यवादी शक्तियो के विभाजित करनेवाले अतर्विरोधो मे ब्रिटेन तथा जर्मनी के बीच के अतर्विरोध सबसे ज्यादा सगीन थे। औपनिवेशिक लूट के अपने हिस्से को छीनने तथा विश्व प्रभुत्व प्राप्त करने के लिए पूर्णत तत्पर शक्तिशाली और आक्रामक जर्मनी ब्रिटिश साम्राज्यवादियो के हितो मे आडे आने का कोई भी अवसर नही गवा रहा था। यह बिलकुल प्रत्यक्ष था कि शीघ्र ही जर्मन सैन्यवादी आर्थिक तथा राजनीतिक दबाव डालना रोककर ब्रिटेन के विरुद्ध हथियारो का उपयोग करने लगेगे।

ब्रिटिश राजनयज्ञो को अपनी पुरानी कार्यनीति तजनी पडी। अब वे "भव्य अलगाव" की नीति पर और अधिक चलने की स्थिति मे नही रह गये थे। फलस्वरूप उन्हे मित्रो की खोज मे लगना पडा। १९०४ मे ब्रिटेन और फ्रास ने अपने औपनिवेशिक प्रदेशो के बारे मे आपस मे समझौता कर लिया (मिस्र ब्रिटेन के हिस्से मे गया और मोरक्को फ्रास के) और इस समझौते ने इन दोनो देशो के बीच आतात कार्दिआल या मैत्रीपूर्ण सौहार्द का पथ प्रशस्त कर दिया। ऐसे ही आधार पर ब्रिटेन ने १९०७ मे रूस के साथ भी समझौता कर लिया (ईरान मे प्रभाव क्षेत्रो का विभाजन)। इन दोनो समझौतो का व्यवहार मे आशय यही था कि ब्रिटेन अब फ्रासीसी-रूसी सहबध मे शामिल हो गया है। यद्यपि ब्रिटेन ने फ्रास और रूस की तरह कोई प्रत्यक्ष सैन्य दायित्व ग्रहण नही किये थे, फिर भी उस समय के तनावपूर्ण आग्ल-जर्मन सबधो की पृष्ठभूमि मे वह स्वाभाविकतया 'त्रिराष्ट्र सौहार्द' या आतात (मित्रराष्ट्रो) का, जो आग्ल-फ्रासीसी-रूसी गुट को दिया गया नाम था, एक सबसे सक्रिय सदस्य बन गया।

यूरोप अब दो शक्तिशाली साम्राज्यवादी गुटो – त्रिराष्ट्र सहबध और त्रिराष्ट्र सौहार्द – मे विभाजित हो गया था और दोनो ही गुट युद्ध के लिए सक्रिय तैयारिया करने मे लगे हुए थे। इस बात को देखते हुए कि अधिकाश महाशक्तिया इनमे से किसी न किसी गुट मे शामिल थी और उनके सारे भूमडल पर बिखरे हुए खास बडे औपनिवेशिक प्रदेश थे और सबधो तथा हितो की एक व्यापक श्रृखला दाव पर लगी हुई थी, यह अनिवार्य ही था कि यूरोप मे आसन्न युद्ध मात्र यूरोपीय युद्ध ही नही रह जायेगा, प्रत्युत विश्वव्यापी युद्ध मे परिणत हो जायेगा।

सत्रहवा अध्याय

रूस का
विश्व क्रातिकारी आदोलन का
केंद्र बन जाना।
एशिया का जागरण

रूस मे क्रातिकारी सकट

१८७१ के परिस कम्यून के वाद से पश्चिमी यूरोप म कोई शक्तिशाला जनव्यापी क्रातिकारी विस्फोट नही हुए थे। लेकिन रूस म, इसके विपरीत मजदूरो और किसाना का जनव्यापी आदोलन हर दशक के साथ लगातार और ज्यादा तेजी क साथ वढता ही चला गया था।

ज़ारशाही रूस क साम्राज्यवादी युग मे पदार्पण ने पहले से ही विद्यमान अतर्विरोधो को और भी विपम वना दिया। दश म आधुनिक उद्योग और वित्तीय पूजी के साथ साथ भूस्वामित्व के मध्ययुगीन स्वरूप अव भी वने हुए थे, जिनके परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रो मे अर्ध सामती सवध अभी तक वरकरार थे।

यूराप म एसा और कोई वडा देश न था कि जहा ऐसे घोर सामाजिक विपर्यास देखन म आते हो, जैस कि रूस म। उस ज़माने के रूस म अगर एक ओर विशाल कल कारखाने, वैकपतियो तथा उद्योगपतिया के एश्वर्ययुक्त निवास और विजली से जगमगाते नगर थ, तो दूसरी आर एसे नन्हे नन्ह दूरस्थ ग्राम भी थे, जिनके निवासी छाल क वन जूते और हाथ से कत वुन कपडे पहना करत थे, जमीन कालातीत हला स जाता करत थ फसल हाथ मे काटा करत थ और अपनी लगभग आधी उपज भूस्वामिया को कर तथा लगान के रूप म दन को मजवूर होते थ। इजारेदार पूजी न न सिर्फ भूदासत्व क अवशेषो म दखल न देना ही उचित समझा वल्कि अधिकतम मुनाफे सुनिश्चित करन के लिए उन्ह वनाये रखन की कोशिश भी की। दश क सामान्यरूपेण पिछडेपन और अधिकाश आवादी की घोर विपन्नता क परिणामस्वरूप मेहनतकशो क शोपण को प्रखर करने क और भी अधिक अवसर प्राप्त थे।

रूस मे जनसाधारण पूजीवादी उत्पीडन ही नही बल्कि भूस्वामियो की मनमानियो और जारशाही की निरकुशता का भी शिकार थे। परिणाम स्वरूप राजनीतिक वातावरण लगातार अधिक सगीन होता चला गया। जन साधारण की देशव्यापी क्राति आसन्न बन गयी। इस क्राति का नेतृत्व तथा सगठन मजदूर वर्ग का करना था जो इस समय तक हडताल आदोलन मे काफी अनुभव अर्जित कर चुका था और विगत दशको के वर्ग सघर्षो मे तपकर फौलादी हो चुका था।

उन्नीसवी और बीसवी शताब्दियो के सधिकाल मे आये औद्योगिक सकट के साथ मजदूरो और किसानो की क्रातिकारी सरगरमियो ने बल पकड लिया। मजदूरो ने शुद्ध आर्थिक मागो के स्थान पर राजनीतिक कारणो से हडताले करना और जलूस निकालना शुरू कर दिया जिनके कारण जार-शाही पुलिस और फौजो के साथ अक्सर झडप हुआ करती थी। किसानो ने भी विरोध प्रदर्शन के अधिक सक्रिय रूप अपना लिये। महज़ अर्ज़ियां पेश करने और पारपरिक खिदमती मजदूरी से इन्कार करने के स्थान पर उन्होने अब भूस्वामियो पर हमले करना उनकी जागीर जायदादो को लूटना और उनकी जमीनो को ज़बरदस्ती क़ब्जे मे लेना शुरू कर दिया।

मजदूरो और किसानो के क्रातिकारी सघर्ष के इस बढते सैलाव ने बुद्धिजीवियो के जनवादी सस्तरो को भी अपनी लपेट मे ले लिया। कई शहरो मे जहा विश्वविद्यालय थे छात्र सघर्ष की जबरदस्त लहर दौड गयी।

१९०३ की गरमियो मे दक्षिण के औद्योगिक नगरो मे हुई हडतालो के सिलसिले ने बढकर ओदेस्सा तथा रोस्तोव आन दोन से लेकर ठेठ बाकू और बतूमी तक फैली ज़बरदस्त आम हडताल का रूप ग्रहण कर लिया। इसमे रूसी, उक्रइनी जार्जियाई आर्मीनी आज़रबैजानी आदि विभिन्न जातियो के दो लाख मज़दूरो ने हिस्सा लिया था।

इतने बडे पैमाने की हडतालो और विभिन्न जातियो के मजदूरो की ऐसी एकता को उस काल मे और किसी भी देश मे नही देखा गया था। रूसी सर्वहारा स्पष्टत अतर्राष्ट्रीय क्रातिकारी आदोलन का हरावल बनता जा रहा था।

रूस मे
क्रातिकारी मार्क्सवादी पार्टी की स्थापना

इसके लिए कि रूसी मजदूर वर्ग अपनी ऐतिहासिक भूमिका का सफलतापूर्वक निष्पादन कर सके यह अपरिहार्य था कि वह अपनी क्रातिकारी मार्क्सवादी पार्टी की स्थापना करे। रूसी सामाजिक जनवादी हलके श्रम मुक्ति दल के समय से ही इसकी आवश्यकता की तरफ ध्यान खीचते आये थे। इस तरह

की पार्टी की स्थापना का पहला प्रयास मजदूर मुक्ति सघर्ष लीग थी, जिसे लेनिन ने १८९५ म मट पीटर्सवर्ग म सगठित किया था और जो पुलिस द्वारा कुछ ही समय के भीतर कुचल दी गयी थी। तीन साल वाद १८९८ म कई सामाजिक-जनवादी सगठनो के प्रतिनिधियो की मीन्स्क म एक गुप्त वैठक हुई जिसमे रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की स्थापना की घोषणा की गयी। लेकिन पार्टी व्यावहारिक रूप नही ग्रहण कर पायी, क्योकि उसकी पहली काग्रेस म भाग लेनवालो का जल्दी ही गिरफ्तार कर लिया गया और परिणामस्वरूप देश भर मे बिखरी भूमिगत समितिया और ग्रुप पुन केंद्रीय नेतृत्व से वचित हो गये।

१९०० मे लेनिन की पहल पर, जो साइबेरिया मे निर्वासन की सजा काटकर हाल ही म वापस आये थे रूसी मार्क्सवादी क्रातिकारियो न विदेश म 'ईस्क्रा (चिंगारी) नामक समाचारपत्र का प्रकाशन करना शुरू किया। ईस्क्रा क पहल अक का सपादकीय, जिसका शीर्षक हमारे आदोलन के तात्कालिक कार्यभार था लेनिन का लिखा हुआ था।

जारशाही रूस म जहा भाषण सभा अथवा सयाजन की किसी भी प्रकार की कोई स्वतत्रता नही थी, यह अवैध अखवार व्यापक राजनीतिक प्रचार तथा आदोलन करने और प्रगतिशील मजदूरो को एकयवद्ध करन का एकमात्र साधन सिद्ध हुआ। विदेश मे मुद्रित 'ईस्क्रा' की प्रतिया रूमानिया ईरान फिनलैंड जर्मनी तथा अन्य देशो की राह चोरी स रूस म लायी जाती थी। सपादकमडल न कई अनुभवी पेशेवर क्रातिकारियो को प्रतिनिधि (एजट) नियुक्त किया था जो अखवार को रूस के सभी कोना म पहुचात थे और स्थानीय सामाजिक-जनवादी समितियो के साथ घनिष्ठ सबध वनाये रखत थ। किशिनेव तथा वाकू मे स्थित गुप्त छापाखाने भी 'ईस्क्रा का व्यापक वितरण सुनिश्चित करन म सहायता देते थे। ईस्क्रा' केवल प्रचारात्मक लेख ही नही छापता था वल्कि रूस भर म फैले अपन सवाददाताओ की रिपोर्टे भी छापता था और सभी सामयिक घटनाओ पर तुरत अपना मत व्यक्त करता था।

ईस्क्रा न रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की १९०३ म होनवाली दूसरी काग्रेस की तैयारी म प्रमुख भूमिका अदा की थी। इस काग्रेस म लनिन तथा उनक साथी 'कट्टर ईस्क्रापथियो" ने एक नये ही प्रकार की पार्टी क अपन द्वारा विकसित सिद्धाता पर सभी तरह के अवसरवादियो क प्रहारो का डटकर मुकावला किया। पार्टी क नतृत्वकारी निकायो क चुनाव म लनिन तथा उनक समथका को ही अधिकाश मत प्राप्त हुए, जिसके कारण व तभी स वाल्शेविक (रूसी ' वालशिस्त्वा -वहुमत-से) और उनक विरोधी मेन्शेविक (मेनिस्त्वा -अल्पमत-म) कहलान लग।

दूसरी काग्रेस का सबसे महत्वपूर्ण कार्य पार्टी कार्यक्रम का स्वीकार किया जाना था। कार्यक्रम के दो हिस्से थे — न्यूनतम कार्यक्रम और अधिकतम कार्यक्रम। न्यूनतम कार्यक्रम में पार्टी के तात्कालिक कार्यभारो को स्पष्टत परिभाषित किया गया था — जारशाही स्वेच्छाचारी शासन का तख्ता उलटना, गणराज्य की स्थापना सभी जातियो को समान अधिकारो की और आत्मनिर्णय के अधिकार की प्रत्याभूति आठ घटे का कार्य दिवस लागू करना और देहातो में सामती प्रथाओ का अत किया जाना। अधिकतम कार्यक्रम में पार्टी के अतिम लक्ष्य निरूपित किये गये थे — समाजवादी क्राति और समाजवादी समाज का निर्माण। उस समय ससार के किसी भी और देश में ऐसी कोई मजदूर पार्टी नही थी कि जिसके पास ऐसा मूलत क्रातिकारी कार्यक्रम था। इस लिहाज से रूसी मार्क्सवादी क्रातिकारियो द्वारा इस प्रकार के कार्यक्रम का तैयार किया जाना रूसी मजदूर वर्ग ही नही, वरन समूचे तौर पर अतराष्ट्रीय मजदूर आदोलन के लिए भी एक महत्वपूर्ण घटना थी। रूसी सामाजिक-जनवादियो की दूसरी काग्रेस का सबसे महत्वपूर्ण परिणाम रूसी क्रातिकारी मार्क्सवादी पार्टी का स्थापित किया जाना था।

पहली रूसी क्राति

इधर रूस में क्रातिकारी आदोलन का ज्वार चढता ही जा रहा था। देश भर में व्याप्त असतोष १९०४-१९०५ के रूस जापान युद्ध में पराजयो के बाद तो और भी ज्यादा तेजी के साथ बढने लगा।

जनवरी १९०५ के आरभ से ही सेट पीटर्सबर्ग के बडे बडे कारखानो में हडताल होने लग गयी। मजदूरो को क्रातिकारी हलचल से विरत करने के प्रयास में गेओर्गी गपोन नामक पादरी ने पुलिस के प्रोत्साहन से राजधानी के मजदूरो को इसके लिए राजी कर लिया कि वे जार के पास जाकर उसके सामने अपनी मागो की अरजी पेश करें। बहुत से मजदूर जार को अब भी भोलपन से "पिता जार" समझते थे और यह विश्वास करते थे कि उसे उनकी असली हालत के बारे में मालूम नही है। चुनाचे रविवार ९ जनवरी, १९०५ को शहर के कोने कोने से लगभग डेढ लाख मजदूरो की विराट भीड इकट्ठा हो गयी और जार के सामने अपनी दरख्वास्त पेश करने के लिए सलीबो, देवप्रतिमाओ और जार की तसवीरो को लेकर जलूस बनाकर शिशिर प्रासाद की तरफ चल पडी।

लेकिन जार निकोलाई द्वितीय मजदूरो से मिलना नही चाहता था। वह राजधानी के बाहर स्थित अपने ग्रीष्म प्रासाद में चला गया और शहर को सेना की आला कमान के सुपुर्द कर गया। सेना ने मजदूरो के जलूस

का गोलियो की बौछारा से स्वागत किया, जिससे एक हजार से ज्यान लोग मारे गये और कोई दो हजार घायल हुए।

यह दिन इतिहास मे 'खूनी रविवार' क नाम स विज्ञात हुआ। शातिपूण जलूस पर जार क निर्मम दमन ने देश भर म सख्त नाराजी की लहर पैदा कर दी और अत म जनसाधारण को इसका कायल कर दिया कि जार उनका पिता" नही, प्रत्युत घोर शत्रु है। उसी शाम से मट पीटर्सबर्ग के कुछ मुहल्लो मे मजदूरो न हथियार इकट्ठा करना शुरू कर दिया और सडका पर बैरिकड खडे करने लग गये। इसके बादवाल दिना म देश क कोने-कोने म शक्तिशाली विरोध आदोलन का सैलाब फैल गया।

मई मे कुछ दिन की खामोशी क बाद क्रातिकारी आदोलन ने नवबल प्राप्त कर लिया। इवानोवो वोज्नेसेस्क के हडताली कपडा मजदूरो न अपनी हडताल का नतृत्व करने के लिए एक विशेष परिषद या सोवियत चुनी। ऐसी सोवियत और कई अन्य नगरो म भी चुनी गयी। ये ही मजदूर प्रतिनिधियो की व सर्वप्रथम सोवियते थी जिन्हे आगे चलकर रूस म क्रातिकारी सत्ता के निकाय बन जाना था।

जून के महीने म युद्धपात पोत्योम्किन के जहाजियो न बलवा कर दिया। इसक पहले कभी इतने बडे युद्धपोत पर क्राति की पताका नही लहरायी थी। इसी इन्कलाबी परचम के तले पोत्योम्किन न ओदेस्सा बदर म प्रवेश किया जहा उस समय आम हडताल चल रही थी। बागी जहाज को कब्जे म लने के लिए भेजे गये विशेष स्क्वाड्रन (जहाजो क दल) न एक भी गाला नही दागा क्योकि नौसैनिको न अपने अफसरो के आदेश का मानन स इन्कार कर दिया और अपन साथियो के साथ खुली हमदर्दी प्रकट की। यद्यपि पोत्योम्किन क जहाजी काला सागर तट के नगरो के मेहनतकशो के साथ आवश्यक सपर्क नही स्थापित कर पाये और उन्हे बाद म जहाज को एक रूमानियाई बदर मे ल जाकर उसे त्यागने के लिए मजबूर होना पडा मगर फिर भी यह विद्रोह असाधारण ऐतिहासिक महत्व रखता था। उसने यह सिद्ध कर दिया था कि अब जारशाही समर्थन के लिए स्वय अपनी सेना पर भी निर्भर नही कर सकती थी।

मास्को क प्रेस मजदूरा की हडताल न क्रातिकारी आदालन म एक नयी ही मजिल का समारभ किया जिसकी परिणति अक्तूबर १९०५ म एक देशव्यापी राजनीतिक हडताल म हुई, जिसम कोई बीस लाख औद्योगिक तथा रेल मजदूरा न भाग लिया था। रूस के भीतरी भागा म ही नही बल्कि जातीय प्रदेशा म भी रेलो और कल कारखाना का काम ठप हो गया। अतराष्ट्रीय मजदूर आदोलन क इतिहास म अब तक इतन व्यापक पैमाने की हडताल कभी देखने म नही आयी थी।

मजदूरो और उनके संघर्ष में शामिल होनेवाले निम्नश्रेणी नौकरी पेशा लोगों, अध्यापकों तथा छात्रों की कतारों में अभूतपूर्व एकता को देखकर सरकारी हलके पूर्णत आतंकग्रस्त हो गये। कुछ समय दुविधा में रहने के बाद जार निकोलाई द्वितीय ने समझ लिया कि इस बढ़ते क्रान्तिकारी आंदोलन को कुचलने के लिए मात्र दमन पर निर्भर करना व्यर्थ होगा। १७ अक्तूबर को उसने एक घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करके जनता को लोकतांत्रिक स्वतंत्रताएं प्रदान करने और विधायी संस्था – राज्य दूमा – का समाह्वान करने का वचन दिया।

लेनिन और बोल्शेविकों ने जार की चालबाजियों की असलियत का पर्दाफाश किया और साथ ही सर्वहारा का आह्वान किया कि वह जारशाही निरंकुश शासन का तख्ता पलटने के लिए देशव्यापी सशस्त्र विद्रोह की तैयारियां करे। अक्तूबर हड़ताल के समय ही देश के कई औद्योगिक केंद्रों में मजदूर प्रतिनिधियों की सोवियतें पैदा होने लग गयी थीं। लेनिन ने बताया कि इन सोवियतों को हड़ताल संघर्ष संगठित करने के निकायों से विद्रोह के निकायों में और अंतत नयी क्रांतिकारी सरकार के निकायों में परिणत हो जाना चाहिए।

इस क्रांतिकारी उभार का चरम दिसंबर १९०५ में मास्को के मजदूरों द्वारा संगठित सशस्त्र विद्रोह था जिसके समर्थन में रोस्तोव-आन दोन नोवोरोस्सीइस्क, सोर्मोवो तथा अन्य औद्योगिक केंद्रों में भी सशस्त्र विद्रोह फूट पड़े। इन सभी शहरों में बोल्शेविक विद्रोहियों की सबसे अगली कतारों में रहते हुए मजदूरों को गोलबंद करते थे और जारशाही फौजों के साथ लड़ाइयों में उनकी हिम्मत बंधाते थे। लेकिन बोल्शेविकों को उस समय सड़कों पर लड़ाइयों और सशस्त्र विद्रोह संगठित करने का अधिक अनुभव नहीं था। इसके अलावा इन विद्रोहों के अलग अलग समय पर फूटने और एक नेतृत्वकारी केंद्र के अभाव के कारण उनके देशव्यापी क्रांति में परिवर्तित होने में बाधाएं पड़ीं। मेन्शेविकों की समझौतावादी नीतियों ने भी मजदूरों के मनोबल पर बहुत बुरा असर डाला। फलस्वरूप जारशाही सरकार के लिए क्रांति के केंद्रों को अलगाव में डालना और फिर बाकायदा कुचल देना संभव हो गया। देश में सर्वत्र भीषण सैनिक राजनीतिक आतंक और दमन का चक्र चल पड़ा।

क्रांतिकारी संघर्ष १९०६-१९०७ में भी चलता रहा लेकिन अब उसका ज्वार उतार पर था। सर्वहारा तथा कृषक समुदाय में दृढ़ संबंध का अभाव इस समय बहुत स्पष्टता के साथ महसूस किया गया। देश के विभिन्न भागों में हुए कृषक बलवों ने जारशाही को मजबूर कर दिया था कि वह १८६१ में प्राप्त जमीनों के लिए किसानों द्वारा विमोचन धन अदा

किये जाने का कानून रद्द कर दे। लेकिन ये बलवे अब भी स्वतस्फूर्त और अलग-थलग ही थे। किसानो को अब भी यह भ्राति थी कि ज़ार की अनुकपा से या दूमा क निर्णय से उनकी हालत सुधर सकती है और उन्हे ज्यादा जमीन प्राप्त हो सकती है। किसानो जैसा ढुलमुलपन सैनिको म भी विद्यमान था। विभिन्न रेजीमटो और कुछेक जहाजो पर बलवो के बावजूद सेना और नौसेना समूचे तौर पर क्राति के पक्ष मे नही आयी, बल्कि उनका ज़ारशाही ने क्राति को कुचलने के लिए उपयोग ही किया।

ज़ारशाही शासन इस क्रातिकारी आघात को सहकर भी जमा रहा और इसमे पश्चिमी पूजीवादी देशो ने उसकी सहायता की, जिन्हाने ज़ार शाही सरकार को उसकी सबसे सकटपूर्ण घडी मे एक बडा ऋण प्रदान किया। ज़ारशाही को बडे बूर्जुआज़ी का भी समर्थन प्राप्त था, जिसे इस जन-क्राति के पैमाने ने घबरा दिया था और जिसने "कानून और व्यवस्था कायम करने" मे ज़ारशाही अधिकारियो की सहायता की।

पहली रूसी क्राति को पराजित होना पडा लेकिन उससे प्राप्त उप योगी शिक्षाए बेकार नही गयी। उसने मेहनतकशो के राजनीतिक शिक्षण को बढावा दिया और उनकी ज़ार की पूजनीयता विषयक भ्रातियो से मुक्ति पाने मे सहायता की। घटनाओ ने यह भी साबित कर दिया था कि क्राति कारी आदोलन म अगुआ भूमिका सर्वहारा को ही अदा करनी होगी। उन्हाने सर्वहारा तथा कृषक समुदाय म दृढ सहबध की और सेना को क्राति के पक्ष म लाने की अपरिहार्य आवश्यकता को भी स्पष्ट कर दिया था।

१९०५-१९०७ की क्राति के दौरान आम राजनीतिक हडताला और सशस्त्र विद्रोह जैसे सघर्ष के साधनो और मजदूर प्रतिनिधियो की सोवियतो जैसे निकायो के महत्व ने अपने को स्पष्ट कर दिया। क्राति के अनुभव ने दिखा दिया कि एकमात्र अविचल क्रातिकारी पार्टी मार्क्स और लेनिन के अनुगामियो की पार्टी – बोल्शेविको की पार्टी – है।

पहली रूसी क्राति के ऐतिहासिक महत्व की चर्चा करते हुए लेनिन ने बाद मे लिखा था, १९०५ के सवेश पूर्वाभ्यास' के बिना १९१७ म अक्तूबर क्राति की विजय असभव होती।

रूसी क्राति का
अतर्राष्ट्रीय मजदूर आदोलन पर प्रभाव

रूसी मजदूर वर्ग क क्रातिकारी सघर्ष न पश्चिमी यूरोप के विभिन्न देशो म श्रमिक आदोलन के लिए उद्दीपक का काम किया। खूनी रविवार की खबर न सारे ही यूरोप के मजदूरो म सख्त नाराजी की लहर फैला कर

दी, जिन्होने सभाओ और प्रदर्शनो मे रूस के मेहनतकशो के साथ अपनी एकजुटता को प्रदर्शित किया। फ्रासीसी ट्रेड-यूनियनो के नेताओ न रूमी मजदूरो के नाम एक विशेष सदेश मे लिखा था, "हम पर भरोसा कीजिये! आप हमारी सहायता के वारे मे निश्चित हो सकते है। ज़ार मुर्दावाद! सामाजिक क्राति ज़िदावाद!"

वामपथी जर्मन सामाजिक-जनवादियो द्वारा प्रकाशित किए जानेवाल समाचारपत्र 'लाइपज़िगर फोल्क्स त्साइतुग' ने इस प्रसग मे लिखा था कि ज़ारशाही निज़ाम पर रूसी मज़दूर वर्ग जो विजय पाने जा रहा है उम अतर्राष्ट्रीय मजदूर आदोलन पूजीवाद पर अपनी विजय के लिए आवश्यक मानता है।

१६०५ मे यूरोपीय देशो मे सभी जगह हडताल आदोलन ने नया वल प्राप्त किया। पश्चिमी यूरोप मे वहुत वर्षो से इस पैमाने पर वर्ग सघर्ष देखने मे नही आये थे। रूस की घटनाओ ने पश्चिम के मजदूरो को आम राजनीतिक हडतालो की कारगरता का कायल कर दिया, जिन्हे उन्हान 'रूसी तरीको" की ही सज्ञा द दी। सितवर म वुडापेस्ट के मज़दूरो न आम राजनीतिक हडताल कर दी। अक्तूबर और नववर म वियना प्राग तथा क्राकाऊ के मज़दूर राजनीतिक हडताल करने के लिए सडको पर निकल आये। आस्ट्रियाई और चेक मज़दूरो के तूफानी प्रदर्शनो की परिणति सडको पर बैरिकेड खडा करने और पुलिस तथा सेना के साथ मुठभेडो म हुई।

'जो रूस मे हुआ है वह हमारे यहा भी होगा।' का नारा विदेशी मजदूरो की वीर रूसी मजदूर वर्ग के उदाहरण का अनुकरण करन की आकाक्षाओ को अभिव्यक्त करता था। दिसवर १६०५ म वुडापेस्ट म एक और राजनीतिक हडताल सगठित की गयी और एक ही महीने के बाद जर्मन श्रमिक आदोलन के इतिहास मे पहली वार हैम्वर्ग म आम राजनीतिक हडताल फूट पडी।

रूस म क्राति के अनुभव ने सारी क्रातिकारी शक्तियो की गोलबदी और एकता की आवश्यकता को दर्शाया। १६०५ के क्रात म हडताल आदोलन के चढते ज्वार के दृष्टिगत फ्रासीसी समाजवादियो न अपनी धाराओ को ऐक्यवद्ध करके एकीकृत पार्टी की स्थापना की।

ज़ारशाही स्वेच्छाचार के विरुद्ध रूसी जनता के सघर्ष के साथ एक जुटता के आदोलन का सारे ही यूरोप के प्रगतिमना लोगो का समर्थन प्राप्त था। प्रसिद्ध फ्रासीसी लेखक अनातोल फ्रास न जो रूसी जनता के मित्र समाज के प्रधान थे उस समय लिखा था रूसी क्राति एक विश्व क्राति है। उसने विश्व सर्वहारा के समक्ष अपन सघर्ष के तरीका और अपन शक्ति

का अपनी शक्ति और अपनी स्थिति का प्रदर्शन कर दिया है नव युग के भाग्य और मानवजाति के भविष्य का इस समय नेवा, विस्चुला और वोल्गा के तटों पर निर्धारण किया जा रहा है।"

पहली रूसी क्रांति ने स्पष्टतः दिखा दिया कि रूस विश्व क्रांतिकारी आन्दोलन का केंद्र बन चुका था।

एशिया का जागरण

उन्नीसवीं तथा बीसवीं शताब्दियों के संधिकाल में एशिया और उत्तरी अफ्रीका के अधिकांश देशों में भावी राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलनों के बीज बोये जा चुके थे। औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों के शोषण के नये स्वरूपों में यूरोपीय तथा उत्तरी अमरीकी पूंजी के हित में इन देशों के प्राकृतिक साधनों और निवासियों का अधिक प्रखर शोषण करना ही नहीं बल्कि उसके साथ साथ पूंजीवादी संबंधों को बढ़ाना भी सन्निहित था।

पूंजी के निर्यात के परिणामस्वरूप, जो पूंजीवाद के विकास की साम्राज्यवादी अवस्था का विशिष्ट लक्षण है एशियाई देशों में, जहा सस्ते कच्चे माल और श्रम शक्ति अपार मात्रा में उपलब्ध थे पूंजीवादी औद्योगिक प्रतिष्ठानों विशाल बागानों और खनन उद्योगों की स्थापना हो गयी। कच्चे मालो के निर्यात और यूरोपीय औद्योगिक सामानों का बेचने की आवश्यकता तथा इन देशों में बड़े-बड़े नगरों के उदय ने रेलों सड़कों, बदरगाहों और सावजनिक सुविधा साधनों के निर्माण को प्रोत्साहन प्रदान किया। यूरोपीयो द्वारा स्थापित इन कारखानों और बागानों में श्रमिक वर्ग अस्तित्व में आने लगा। कितने ही औपनिवेशिक देशों में श्रमिक वर्ग की उत्पत्ति स्थानीय औद्योगिक बूर्जुआजी के उदित होने के पहले ही हो चुकी थी।

इन मजदूरो का, जिनमें से बहुत से वे भूतपूर्व दस्तकार थे कि जो यूरोपीय औद्योगिक मालो के आयात की बाढ़ से तबाह हो गये थे, यूरोपीय मालिकों और उनके नानासख्य निरीक्षको या ओवरसीयरो और ठेकेदारो द्वारा निर्मम शोषण किया जाता था। मजदूर लोग लगभग पूर्णतः निरक्षर थे और उनका आम तौर पर अपने गावो के साथ अब भी घनिष्ठ संबंध बना हुआ था। उन पर अब भी मध्ययुगीन धार्मिक तथा जातिगत परंपराओं का बहुत गहरा असर कायम था। इन मजदूरो की वर्ग चेतना अभी प्रारंभिक अवस्था में ही थी लेकिन रहन सहन और कामकाज की भयंकर अवस्थाएं उन्हे जब-तब अपने बुनियादी आर्थिक अधिकारो की मांग करने के लिए स्वतःस्फूर्त संघर्ष की तरफ ढकेलती रहती थी।

साम्राज्यवादियों के उद्योगों का प्रभुत्व उपनिवेशों के स्थानीय औद्योगिक बूर्जुआजी के तीव्र विकास में बाधक था। क्योंकि बूर्जुआजी के लिए अपने से अधिक सुविधाजनक स्थिति वाले उन्नत पूंजीवादी देशों के बूर्जुआजी के साथ प्रतिस्पर्धा कर पाना लगभग असंभव था। इन परिस्थितियों में उसे मजबूर होना पड़ा कि वह अपने को व्यापार तथा लघु औद्योगिक उद्यमों तक ही सीमित रखे जिनके लिए बड़े पैमाने की पूंजी निवेश अपेक्षित नहीं था और जो आसानी से जल्दी ही पूरी हो सके। साम्राज्यवादियों ने जिनका औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों को अपने कृषिजन्य पदार्थों तथा औद्योगिक कच्चे मालों का स्रोत बनाए रखने में निहित स्वार्थ था इन देशों के औद्योगीकरण के, प्रधान उत्पादन साधनों के उत्पादन के क्षेत्र में अनेक अवरोध खड़े कर दिए थे।

उपनिवेशों तथा पराधीन देशों में साम्राज्यवादी शक्तियों के समर्थन का मुख्य आधार थे प्रतिक्रियावादी भूस्वामी और व्यापार में बिचौलियों की हैसियत से मालामाल होनेवाले दलालगण (कंप्रडोर) लोग। अधिकांश जमीन के बड़े-बड़े भूस्वामियों के हाथों में संकेंद्रण ने कम जमीनवाले और भूमिहीन किसानों का कमरतोड़ लगानों द्वारा, जो सामंती युग के चारित्रिक लक्षण थे, शोषण सुगम बना दिया था। भूस्वामी लोग नाना प्रकार की तिकड़मों और तरीकों से किसानों से उनकी अधिकांश पैदावार से वंचित कर देते थे। इसी के कारण कृषि की पूंजीवादी विधियां अपनाने में भी उनकी कोई दिलचस्पी नहीं थी। भूस्वामियों और समृद्ध किसानों के लिए महज कुछ औद्योगिक फसलों की खेतीबारी के वास्ते ही बंधुआ मजदूर रखना और बड़े फार्मों का संगठन करना अधिक लाभजनक सिद्ध होता था।

कृषक समुदाय के स्तरण की प्रक्रिया प्रखर हो रही थी, लेकिन उसका एक बहुत छोटा सा हिस्सा ही फूलफल सकने की स्थिति में था किसानों का विपुल बहुभाग बरबादी का शिकार हो गया, अपनी जोत-जमीनों से हाथ धो बैठा और व्यवहार में शक्तिशाली भूस्वामियों के ऋणदासों जैसा बन गया।

इन देशों में मेहनतकश जनसाधारण ही नहीं, अपितु राष्ट्रीय बूर्जुआजी को भी प्रशासन में किसी भी प्रकार की सहभागिता प्राप्त नहीं थी और वे सतत उत्पीड़न तथा भेदभाव के शिकार थे। राजनीतिक, प्रशासनिक तथा विधिक – सभी शक्तियां उपनिवेशवादियों और स्थानीय प्रतिक्रियावादी वर्गों में उनके गुर्गों के हाथों में ही थीं। इन सभी कारकों के परिणामस्वरूप औपनिवेशिक जनगण और साम्राज्यवादियों के बीच अशाम्य अंतर्विरोध पैदा हो गये थे।

अर्ध-औपनिवेशिक देशों में महनतकश जनता और राष्ट्रीय पूर्जुआजी को भ्रष्ट निरंकुश शासकों, बड़े भूस्वामियों और नौकरशाही के प्रत्यक्ष विरोध का सामना करना पड़ता था। वास्तव में ये शासक साम्राज्यवादी शक्तियों के हाथों में आज्ञाकारी कठपुतलों से ज्यादा कुछ भी नहीं थे। यह साम्राज्यवादियों के हित में था कि अर्ध औपनिवेशिक देशों का आर्थिक तथा राजनीतिक पिछड़ापन बरकरार रहे। लेकिन कालातीत सामंती शासकों के मुख्य आधार के रूप में साम्राज्यवादियों की इस भूमिका को अभी इन देशों के बहुत से प्रगतिशील तत्व भी पूरी तरह से नहीं समझ पाये थे।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ तक एशिया तथा उत्तरी अफ्रीका के सभी देशों में सामंतवाद और विदेशी साम्राज्यवादियों के विरुद्ध संघर्ष सर्वोपरि महत्व का कार्यभार बन चुका था। इस संघर्ष में सफलता पाये बिना उनका स्वतंत्र राष्ट्रीय विकास असंभव था। इन देशों के विभिन्न प्रदेशों के बीच घनिष्ठतर संबंधों के पैदा होने से और आतरिक मंडी के विकास से, यद्यपि वह मंद गति और असमान रूप से ही हो रहा था, राष्ट्रों की उत्पत्ति में योगदान मिला। कितने ही औपनिवेशिक तथा पराधीन देश में आबादी अनेक भिन्न भिन्न कौमों और जातीय समूहों से मिलकर बनी हुई थी। इसलिए इन इलाकों में राष्ट्रों का उदय एक अत्यंत जटिल प्रक्रिया थी। उदाहरण के लिए उस्मान साम्राज्य में विभिन्न गैर-तुर्क जनगण में राष्ट्रों के उदय की प्रक्रिया स्वयं तुर्कों में उसकी समातर प्रक्रिया से कहीं अधिक आगे बढ़ी हुई थी। इस साम्राज्य में अरब, मकदूनी और अल्बानी जन अपने आपको तुर्क स्वेच्छाचारी शासन के जूए से मुक्त करने और अपने स्वाधीन राज्यों की स्थापना करने के वास्ते संघर्ष कर रहे थे।

भारत, इंडोनेशिया और फिलिपीन तथा कुछ अन्य औपनिवेशिक देशों में राष्ट्रों के उदय में दो समातर प्रक्रियाएं देखने में आती थी – कुछ राष्ट्र किसी जाति विशेष के विकास के आधार पर उदित हुए थे, जैसा कि भारत में गुजरातियों, बंगालियों और मराठों के मामले में, इंडोनेशिया में जावाइयों के मामले में और फिलिपीन में तागालोग जनों के मामले में था, तो कुछ अन्य राष्ट्रों का उदय विभिन्न जातियों के विलयन के परिणाम स्वरूप हुआ था। औपनिवेशिक देशों में विभिन्न जातियों के लोगों के विदेशी साम्राज्यवादी प्रभुत्व के विरुद्ध संघर्ष में सामान्य हितों ने उनमें राष्ट्रीय स्तर पर घनिष्ठतर एकता का पथ प्रशस्त किया और उदीयमान बूर्जुआ राष्ट्रवादी आदोलनों को सार्वदेशिक स्वरूप प्रदान किया। इन देशों में स्थानीय बुद्धिजीवी समुदाय इस वर्धमान सामतवाद-विरोधी तथा साम्राज्य वाद विरोधी संघर्ष का प्रवक्ता बन गया।

इस बुद्धिजीवी समन्वाय के सर्वप्रथम प्रतिनिधि विशपाधिकारभोगी सभ्रात वर्गों क सदस्य थ। उनम स कइ लोगों को विल्गो म शिक्षा अर्जित करन का अवसर प्राप्त हो चुका था। लेकिन इसी क साथ साथ अर्ध औप निवेशिक देशों म आधुनिक धर्मनिरपक्ष शिक्षा का प्रसार भी शुरू हो गया था। उपनिवेशवादियों न सरकारी निकायो तथा निजी प्रतिष्ठानो क लिए आवश्यक अवर कर्मी प्रशिक्षित करने और डाक्टरो तथा वकीलो का इतजाम करन क वास्ते स्कूल, विशेष प्रशिक्षण सस्थाए और विश्वविद्यालयो तक खोलना शुरू कर दिया था।

यूरोपीय शिक्षा के सीमित पैमान पर प्रचलित किय जाने का एक और उद्देश्य स्थानीय निवासियो पर अपना वैचारिक प्रभाव डालना और उनम अपन साम्राज्यवादी शासकों तथा उनकी सस्कृति की श्रेष्ठता को स्वीकार करन की भावना पैदा करना भी था। तथापि साम्राज्यवादी अब इस स्थिति म नही रह गये थे कि इन देशो के युवजन मे और मुख्यतया विशेषाधि-कारहीन वर्गों स आनवाले बुद्धिजीवियो म प्रगतिशील विचारो के प्रवेश को रोक सकें।

उन्नीसवी शताब्दी के अत मे ही भारत के अंग्रेज अधिपतियो को छात्र समुदाय म प्रतिरोध की बढती भावना और क्रातिकारी तथा राष्ट्रवादी विचारो के प्रभाव न चिंतित करना शुरू कर दिया था। वाइसराय लार्ड कर्ज़न न इस उद्देश्य स एक विशेष विश्वविद्यालय सुधार प्रवर्तित किया कि विश्वविद्यालयो म जनवादी विचार रखनवालो का प्रवेश पाना अधिक कठिन बनाया जा सके।

इन देशो म बूर्जुआ तथा भूस्वामी तबको म जन्मे बुद्धिजीवियो न जो अपन यहा विद्यमान व्यवस्था के आलोचक थे सर्वप्रथम और सर्वोपरि स्वय अपने ही वर्गो के हितो का अनुरक्षण करन के लिए प्रशासन म सह भागिता पाने की माग की और आर्थिक सुधार करन का तकाज़ा किया। समाज के विशेषाधिकारभोगी सस्तर का एक अत्यल्प हिस्सा ही क्रातिकारी निम्न बूर्जुआ बुद्धिजीवियो के साथ मिलकर अधिकारहीन एव उत्पीडित महनतकश जनसाधारण क पक्ष म आवाज बुलद कर सका।

किन्तु उदीयमान राष्ट्रीय बूर्जुआ वर्ग का अपन वर्ग हितो के अनुरक्षणार्थ सघर्ष साथ ही साम्राज्यवाद तथा सामतवाद के विरुद्ध निदेशित राष्ट्रीय और सामान्यत जनवादी स्वरूप का सघर्ष भी था। अत समाज क सभी वर्ग उसकी सफलता मे रुचि रखते थे। इन सभी देशो म इस समय तक राष्ट्रीय एकता और सबद्धता के लिए आवश्यक पूर्वापेक्षाए पैदा हो चुकी थी।

इस प्रकार, बीसवी शताब्दी के आरभ तक एशिया के बहुत स देशो म बूर्जुआ क्राति के लिए परिस्थितिया परिपक्व हो चुकी थी। पर इमी

सविधान के स्वीकार किये जाने की खुशी मे जुलाई, १६०८ मे इस्तबूल मे जलूस

क्रातियो का सपन्न करन क अवसरा उनक पैमाना और सभाव्य परिणामा म देश देश म वैभिन्य था जा अनक आतरिक तथा बाह्य कारका पर निर्भर करता था।

अपराजय समझे जानवाल ज़ारशाही रूस की जापान के साथ युद्ध म पराजय और विशेषकर १६०५-१६०७ की रूसी क्राति न एशिया क जनगण की राष्ट्रीय चेतना क जागरण और उनके साम्राज्यवाद विरोधी तथा सामतवाद विरोधी सघर्ष पर जबरदस्त प्रभाव डाला। लेनिन न उस समय कहा था विश्व पूजीवाद और १६०५ के रूसी आदोलन न अतत एशिया को जागत कर दिया है।

१६०५ की रूसी क्राति मजदूर वर्ग के नेतृत्व म की जानेवाली इतिहास की सवप्रथम बूर्जुआ जनवादी क्राति थी। पहल की किसी भी अन्य बूर्जुआ क्राति के मुकाबले रूसी क्राति ने अपने सामन समाज म दूरगामी लोकतात्रिक परिवर्तन पाने का कार्यभार रखा था। इसने उसे ससार के कई देशो क वास्ते एक उदाहरण और नमूना बना दिया था। यह बात जैसा कि स्वाभाविक भी था पूर्व के उन देशा क बार म विशेषकर सही थी, जिन्हे ऐसी समस्याओ का सामना करना पड रहा था कि जो बूर्जुआ क्राति का तकाजा करती थी। यह एक

एसी अवस्था थी, जिसस होकर अधिकाश पश्चिमी देश बहुत पहल ही गुजर चुक थे।

रूस की घटनाओं न रूसी साम्राज्य के सीमावर्ती एशियाई देशो पर विशेषकर प्रबल प्रभाव डाला, जो जारशाही के साम्राज्यवादी प्रसार क लक्ष्य रह थे लेकिन साथ ही जिनपर नम्र अर्से से प्रगतिशील रूसी जनवादियों क विचारो की छाप भी पडती जायी थी।

रूस के सीमावर्ती देशो के अनेक आप्रवासियो – बाकू तथा मध्य एशिया म ईरानियो, साम्राज्य क सुदूर पूर्व म कोरियाइयो और चीनी पूर्वी रेलवे क निर्माण पर काम करनेवाले चीनियो – न जारशाही शासन क खिलाफ १९०५ की क्राति म रूसियो क साथ-साथ भाग लिया था। बाद म वे क्रातिकारी विचारो और अनुभव को अपने साथ अपने अपने देशो म ले गये।

१९०५-१९११ की फारसी क्राति

फारस म सामती समाज का सकट विदेशी पूजी के भारी अतर्वाह के कारण और भी ज्यादा सगीन हो गया था। फारस पर ब्रिटेन और रूस का जो दु सह कर्ज लद गया था, उसने सरकार को इन दोनो साम्राज्यवादी शक्तियो को और भी ज्यादा व्यापारिक रिआयते और विशेषाधिकार प्रदान करने क लिए मजबूर किया। १९०१ मे ड'आर्सी नामक ब्रिटिश व्यवसायी न उत्तरी सूबो को छोडकर शेष सारे ही फारस म तेल का निष्कर्षण करने की रिआयत हासिल कर ली। आगे चलकर यही रिआयत एग्लो-पर्शियन आइल कपनी की स्थापना का आधार बनी जो फारस क औपनिवेशिक दासीकरण म साम्राज्यवाद के मुख्य साधनो मे एक थी। देश की वित्तीय व्यवस्था पर अग्रेजो क इपीरियल बैंक आफ पर्शिया का प्रभुत्व था जिसकी देश मे ढेरो शाखाए थी और जिसे मुद्रा जारी करने का अधिकार भी था। उत्तर म रूसी-फारसी बैंक का बोलबाला था। सीमाशुल्क तथा उत्पादन शुल्क (आबकारी) बेल्जियनो क हाथो म थे। शाह के खास अनुरोध पर रूसी अफसरो की सहायता स और उनकी कमान म एक कज्जाक ब्रिगेड की स्थापना की गयी थी, जो पूरी तरह स शाह के प्रति वफादार थी।

शाह मुजफ्फरुद्दीन और उसके सामती अधिकारियो न मेहनतकशो क शोषण को और तेज कर दिया। शाही खजाने का अधिकाश धन और विदेशी कर्जों क जरिये हासिल ज्यादातर धन भी शाही दरबार म और उसक मुसाहिबो द्वारा खर्च किया जाता था। इन सभी बातो से देश म असतोष लगातार बढता जा रहा था। देश के विभिन्न भागो म लगातार स्वतस्फूर्त बगावते भडक रही थी। सेना म भी जहा सैनिको का अक्सर महीनो वेतन नही मिलता

तेहरान मे ब्रिटिश दूतावास के अहाते मे बस्त

था इस तरह के विद्रोह फूटते रहते थे। शहरी आबादी के अधिकाधिक आशक शाह और उसके गुरगो की निरकुशता पर लगाम लगाने की आवश्यकता महसूस करते जा रहे थे।

कमज़ोर फारसी बूर्जुआजी, जिसके पास कोई राजनीतिक पार्टी या सगठन नही था भूस्वामी वर्ग का एक हिस्सा जिसकी जागीरे इस समय तक वाणिज्यिक आधार पर सचालित की जाने लगी थी, और मजहबी नेता तक जिनके आर्थिक तथा राजनीतिक विशेषाधिकारो का शाह की सरकार द्वारा उल्लघन किया जा रहा था सभी सुधार आदोलन का समर्थन कर रहे थे। इस तनावपूर्ण वातावरण मे रूसी क्राति का प्रभाव आवेगकारी सिद्ध होना ही था। मामूली से मामूली बहाना भी व्यापक क्रातिकारी आदोलन के प्रवाह को उन्मुक्त कर देने के लिए काफी साबित हो सकता था।

१२ दिसबर १९०५ के दिन तेहरान मे कुछेक व्यापारियो की गिर

ग्नारी और उनके साथ दुर्व्यवहार ने जिन्होंने कमरतोड करों और शाह के एक बेरहम गुरगे के खिलाफ विरोध प्रदर्शित किया था देश भर मे सख्त नाराजगी पैदा कर दी। बाजार और दस्तकारी कारखाने बद हो गये। एक मसजिद मे विशेष जनसभा की गयी जिसमे कई घृणित सरकारी अधिकारियों के बरखास्त किये जाने की और जनता की शिकायतो को जानने के लिए एक विशेष आयोग के नियुक्त किये जाने की माग रखी गयी। इस सभा को बलप्रयोग द्वारा भग कर दिया गया जिससे जनता की नाराजगी और बढ गयी। विरोध प्रदर्शनार्थ कई धार्मिक नेता राजधानी छोडकर चले गये और एक मसजिद मे बस्त (शब्दश बद या एकत्र यहा आश्रय) ले लिया। उनके साथ वहा कोई दो हजार व्यापारी और दस्तकार आकर शामिल हो गये। उन्होंने शाह के पास और अन्य नगरो मे अपने प्रतिनिधि भेजे। शीराज और मशहद मे बलवे शुरू हो गये। वे राजधानी मे भी जारी रहे, जहा नगर सेना का कुछ हिस्सा भी उनमे भाग ले रहा था।

इस जनव्यापी आदोलन से घबराकर शाह कई रिआयते देने के लिए तैयार हो गया और उसने अपने सामने पेश की गयी मागो को भी पूरा करने का वचन दिया। उसने तेहरान तथा करमान के सूबेदारो को जो विशेषकर अलोकप्रिय थे, हटा दिया और एक आज्ञप्ति जारी करके एक अदालतखाना या न्यायसदन स्थापित कर दिया। इस पर बस्तदार राजधानी लौट आये। लेकिन शाह की सरकार अपने वचनो को पूरा करने की कोई जल्दी मे नही थी, क्योकि उसे आशा थी कि वह आदोलन पर काबू पा लेगी। उधर जन असतोष का ज्वार चढता ही चला जा रहा था। १९०६ की गरमियो मे राजधानी मे हथियारो के बल से प्रदर्शनकारियो की एक भीड का, जिसने सुधार के एक लोकप्रिय पैरोकार को गिरफ्तारी से छुडा लिया था, विसर्जित किया जाना जनव्यापी सघर्ष का सूचक बन गया। एक बार फिर दूकाने और बाजार बद हो गये और कुछ ही समय के भीतर तेहरान की सडके लोगो की भीडो से भर गयी जिन पर शाह की सेना ने गोलिया चलायी। १५ जुलाई को २०० धार्मिक नेता राजधानी से कुम रवाना हो गये। अगले दिन तेहरान के प्रमुख व्यापारियो के एक जत्थे ने ब्रिटिश दूतावास के बाग मे बस्त। कुछ ही समय के भीतर बस्तगार होनेवालो की सख्या १३,००० हो गयी। उन्होंने अपनी मागो को एक दरख्वास्त मे लिखा, जो शाह के हाथो मे दी गयी और कुम तथा अन्य नगरो को भी भेज दी गयी। इन मागो को सघर्ष का कार्यक्रम मान लिया गया। इस बार पुरानी मागो के अलावा एक नयी माग और शामिल कर ली गयी थी और यह थी सविधान बनाने व लागू करने की मजलिस या ससद के कायम किये जाने की माग। इस नयी माग का बहुत से नगरो मे समर्थन

किया गया। कुम म इमामो और मुल्लाओ न एलान कर दिया कि अगर शाह दस्तदार होनेवाला की मागा को मजूर नही करगा, तो व देश को छोडकर चले जायग। शाह न एक बार फिर कई रिआयते द दी–उसन तत्कालीन प्रधान मत्री को बरखास्त कर दिया और उसकी जगह मुशीरुद्दौला को प्रधान मत्री नियुक्त किया, जो अधिक उदार था। अगस्त क आरभ म मजलिस के समाह्वान के लिए चुनावो की घोषणा की गयी। इसके बाद बस्तनशीन बिखर गय और बाजार फिर से खुल गय।

चुनाव द्विस्तरीय और अलोकतात्रिक थे, क्योकि उनमे किसाना और उजरती मजदूरा को भाग नही लेने दिया गया था। इसके बावजूद इन चुनावो न, जो फारस क इतिहास म पहले चुनाव थे, जनसाधारण म विशेषकर नगरो म बहुत उत्तेजना पैदा की।

फारसी आजरबैजान की राजधानी मे जिस पर शाह के घोर प्रतिक्रियावादी बेटे और वारिस मोहम्मद अली का शासन था आबादी ने चुनावो म विशेषकर बहुत सक्रियता स भाग लिया। चुनाव मे बाधा डालने के मोहम्मद अली क प्रयासो न तब्रीज नगर तथा उसके आसपास क इलाके की आबादी को उद्वेलित कर दिया। इन्ही इलाको म सर्वप्रथम जनव्यापी सामाजिक राजनीतिक सगठना–अजुमनो–की स्थापना की गयी थी। जल्दी ही इस प्रकार क सगठन देश क अन्य भागो म भी पैदा होन लग गय। इनमे व्यापारी दस्तकार शहरी गरीब और यहा तक कि कुछ प्रतिक्रियावादी तबको क प्रतिनिधि भी शामिल होते थे। इन अजुमनो क कार्यकलाप का वास्तविक स्वरूप अधिकाशत उनकी सरचना पर और उनम जनवादी तत्वो की सख्या पर निर्भर करता था। राजधानी म जो बहुत स अजुमन थ उनम स एक तो काजर शहजादो का कायम किया अजुमन भी था। लकिन अधिकाश मामला म य अजुमन जनसाधारण की सामतवाद विरोधी आकाक्षाओ को ही व्यक्त करते थ। बहुत से शहरो म अजुमनो न स्थानीय प्रशासन को व्यवहार म अपन नियत्रण म ले लिया था।

फारस क उत्तरी सूबो म रूसी क्राति क प्रभाव के परिणामस्वरूप इन सूबो म भी और उन फारसिया म भी जो अपना देश छोडकर पार काकेशिया चले गय थ पहले गुप्त जनवादी राजनीतिक सगठना–मुजाहिद अजुमना–की स्थापना हुई। इन सगठना म व्यापारी दस्तकार शहरा क निर्धन लोग मजदूर और मजहबी पदसोपान क निम्नपदस्थ लोग शामिल थ। मुजाहिदो न आमूल बूर्जुआ जनवादी सुधारा की माग सामने रखी। इन सगठना म प्रमुख भूमिका निम्न-बूर्जुआ तत्वा की थी।

अक्तूबर १९०६ म पहली मजलिस का उद्घाटन हुआ। उसके सदस्या म स अधिकाश क अलोकतात्रिक झुकावा क बावजूद उसक इजलासो

फारस का सावैधानिक राजतंत्र में रूपांतरण एक प्रगतिशील कदम था लेकिन फिर भी इसका यह मतलब नहीं था कि शाह और प्रतिक्रियावादी अभिजात अपनी पुरानी सत्ता और विशेषाधिकारों को छोड़ देने के लिए तैयार हो गये थे।

संविधान के अंगीकृत किये जाने के साथ बूर्जुआज़ी, उदार भूस्वामियों और धार्मिक नेताओं ने यह मान लिया कि क्रांति पूरी हो गयी है। वे सावैधानिक सम्राट के साथ सहयोग करने के लिए तैयार थे। लेकिन मोहम्मद अली ने जो इस बीच अपनी वफादार फौजों को राजधानी के पास बुला चुका था १९०७ के शरद में प्रतिक्रांतिकारी सत्ता परिवर्तन का अपना पहला प्रयास किया। मुजाहिद संगठनों की पहल पर गठित अवामी अंजुमनों और फिदाई टुकड़ियों ने संविधान की रक्षा के लिए हथियार उठा लिये। तब्रीज के अंजुमन ने शाह का तख्ता उलट देने की आवाज उठायी। प्रतिक्रांति के प्रयास को कुचल दिया गया। लेकिन इधर जनसाधारण की बढ़ती हुई सक्रियता से उदारवादी तत्व डरने लग गये थे जिनका मजलिस में बहुमत था। उन्होंने शाह के साथ सौदेबाजी कर ली, जिसने कुरान पर हाथ में रखकर संविधान का पालन करने की झूठी कसम खायी। किन्तु जून १९०८ तक फिर साफ हो गया कि एक और प्रतिक्रांतिकारी सत्ता परिवर्तन की तैयारियां की जा रही हैं।

जनवादी शक्तियां संविधान को बचाने के लिए गोलबंद हो गयीं, लेकिन उदारवादियों द्वारा नियंत्रित मजलिस ने शांति बनाये रखने की अपील की और एक बार फिर शाह के साथ समझौता करने का प्रयास किया। २२ जून के दिन राजधानी में आपात स्थिति की उद्घोषणा कर दी गयी और अगले दिन ल्याखोव नामक रूसी कर्नल की कमान में कज्जाक ब्रिगेड ने मजलिस को भंग कर दिया। मजलिस की रक्षा के लिए आनेवाली फिदाई टुकड़ियों को तोपखाने के बल पर कुचल दिया गया। तेहरान में आतंक का दौरदौरा शुरू हो गया। मजलिस के वामपंथी सदस्यों और राजधानी के जनवादी अंजुमनों के बहुत से नेताओं को, जिन्होंने क्रांति की जय जयकार करने और शाह की आलोचना करने की हिम्मत की थी तथा कितने ही पत्रकारों और शायरों को पकड़ लिया गया और यंत्रणाएं दे देकर मार डाला गया या प्राणदंड दे दिया गया।

फिर भी तेहरान में यह बलात सत्ता परिवर्तन क्रांति के अंत का द्योतक नहीं था। उसका मुख्य केंद्र अब विद्रोही तब्रीज था जिसे प्रतिक्रांतिकारी शक्तियां तेहरान की जून की घटनाओं के बाद सर करने में नाकामयाब रही थीं। तब्रीज में सत्ता अंजुमन के हाथों में थी। अधिकांश उदारपंथियों ने अंजुमन का समर्थन करना बंद कर दिया लेकिन दस्तकारों, किसानों

और क्रांतिकारी बूर्जुआ तत्त्वों के प्रतिनिधियो के शामिल हो जाने से उसकी ताकत और बढ गयी।

अजुमन के प्रतिरोध का आधार फिदाई टुकडिया थी, जिनमे कुल कोई २०,००० शस्त्रधारी थे। नगर की रक्षा का सगठन भूतपूर्व किसान और मुजाहिद नेता सत्तार तथा बाकिर के हाथो मे था। शहर मे क्रातिकारी व्यवस्था की स्थापना की गयी और चोरबाजारी को रोकने के लिए कठोर उपाय अपनाये गये। तब्रीज विद्रोह स्पष्टतया क्रातिकारी जनवादी स्वरूप का था।

चीन मे क्रातिकारी लहर

पूर्व के देशो मे इस काल मे राजनीतिक चेतना और क्रातिकारी सक्रियता का जो प्रसार हो रहा था उसने चीन मे विशेषकर प्रभावोत्पादक आकार ग्रहण किया। राष्ट्रीय चेतना और देशप्रेम की भावना के विकास ने केवल बुद्धिजीवी समुदाय और छात्रो की कतारो मे ही नही बल्कि आबादी के दूसरे सस्तरो (राष्ट्रीय बूर्जुआजी प्रगतिशील मजदूर आदि आदि) मे भी क्रातिकारी विचारो के प्रसार मे सहायता की। स्वतत्रता तथा स्वाधीनता के विचारो के प्रचार मे और क्रातिकारी सगठनो की स्थापना मे सुन यात सेन (१८६६-१९२५) ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

चीनी उत्प्रवासियो तथा छात्रो मे क्रातिकारी विचारो के प्रसार रूसी क्राति की खबर और स्वय चीन मे होनेवाले नानासख्य विप्लवो ने सुन यात सेन को सभी मचू विरोधी सगठनो का एक नये जनव्यापी क्रातिकारी सगठन – चीन नवजागरण समाज – मे ऐक्यबद्ध करने की आवश्यकता का अहसास करवाया।

१९०५ के वसत मे ब्रसेल्स मे क्रातिकारी चीनी छात्रो की एक सभा मे सुन यात सेन ने जनता के तीन प्राथमिक तत्वो – राष्ट्रवाद जनतत्र और जन कल्याण – के अपने प्रसिद्ध सिद्धात को प्रतिपादित किया। चीन मे उस समय व्याप्त परिस्थितियो मे इन तत्वो का निहितार्थ था मचू राजवंश का तख्ता उलटा जाना लोकतान्त्रिक गणराज्य की स्थापना और भूस्वामित्व के समान अधिकारो का प्रवर्तन। इन तत्वो ने वह मच प्रदान किया जिस पर उसी साल विभिन्न चीनी क्रातिकारी सगठनो ने चीनी क्रातिकारी सघ की स्थापना की। इस पार्टी मे सिर्फ बूर्जुआ लोकतत्रवादी तत्व ही नहीं बल्कि राष्ट्रीय बूर्जुआजी के प्रतिनिधि अधिक प्रगतिशील भूस्वामियो के कुछ अशक और क्रातिकारी छात्र भी शामिल हो गये। उन सभी का एक ही सामान्य लक्ष्य था – चीन मे मचूरी शासन का खात्मा करना। सुन यात

सन का चीनी क्रांतिकारी संघ का अध्यक्ष चुना गया और उसने तुरंत ही क्रांतिकारी विप्लव की तैयारियां शुरू कर दीं। चीनी क्रांतिकारी संघ ने "जनता" नामक समाचारपत्र की स्थापना की, जिसे तोक्यो में छापा जाता था। लेनिन ने यह कहते हुए सुन यात सेन के कार्यक्रम का स्वागत किया था कि "सुन यात सेन के कार्यक्रम की हर पंक्ति जुझारू तथा सच्चे जनवाद की भावना से ओतप्रोत है।"

चीनी क्रांतिकारी संघ ने एक ऐसे समय अपना काम शुरू किया था कि जब देश पहले से ही क्रांतिकारी उफान की जकड़ में आया हुआ था। देश के दक्षिणी और दक्षिण पश्चिमी भागों में १९०६-१९११ की अवधि में कई जन विद्रोह हुए थे। १९०६ में चीन के इतिहास में सर्वप्रथम मजदूर विद्रोह हुआ (क्यांगसी प्रांत के पिंगस्यांग नगर में)। १९०७-१९०८ में क्वांगतुंग, क्वांगसी, युनान तथा आन्ह्वेइ प्रांतों में किसानों, दस्तकारों और निम्न बूर्जुआ तत्वों के विद्रोह हुए। १९१० में चांगशा तथा शांतुंग प्रांतों में कृषक विद्रोह फूट पड़े। ये सभी विद्रोह खराब संगठन और सेना तथा देश के अन्य भागों में जनसाधारण के साथ अपर्याप्त संबंधों के कारण असफल सिद्ध हुए।

सुन यात सेन और उसके नेतृत्व में चीनी क्रांतिकारी संघ ने इन सभी क्रांतिकारी सरगरमियों के संगठन में सक्रिय भाग लिया। उन्होंने ऐसे सभी विद्रोह स्थलों पर अपने प्रतिनिधि भेजे और वहां हथियार और धन, आदि पहुंचाने की व्यवस्था की। हाल की असफलताओं के अनुभव को ध्यान में रखते हुए चीनी क्रांतिकारी संघ ने "आधुनिक सेनाओं" (यूरोपीय नमूने पर गठित टुकड़ियां) के सैनिकों के बीच अपना प्रचार कार्य बढ़ा दिया। सुन यात सेन की अपील के प्रत्युत्तर में चीनी क्रांतिकारी संघ के अधिकांश सदस्य और विशेषकर उसके छात्र सदस्य सैनिकों के बीच क्रांतिकारी प्रचार करने के इरादे से सेना में भरती हो गये।

लेकिन इसके बावजूद १९१० में क्वांगचाऊ में हुआ सैनिक विद्रोह असफल रहा, क्योंकि क्रांतिकारी संघ ने अभी षड्यन्त्रकारी नीति का परित्याग करना नहीं सीखा था। २८ अप्रैल, १९११ को वहां सैनिकों का एक और विद्रोह हुआ, जिसमें उन सैनिकों ने भाग लिया था, जिन पर क्रांतिकारियों के प्रचार का प्रभाव पड़ा था। विद्रोहियों ने स्थानीय मंचूरी सूबेदार के महल पर कब्जा कर लिया, लेकिन सरकारी सेनाएं उनके मुकाबले कहीं ज्यादा शक्तिशाली थीं। विद्रोहियों ने घोर प्रतिकूल परिस्थितियों में भी वीरतापूर्वक टक्कर ली, लेकिन उन्हें कुचल दिया गया। कैद किये गये सभी विद्रोहियों को मौत के घाट उतार दिया गया। लड़ाई में मारे गये या बाद में मारे डाले गये ७२ सैनिकों के शवों को स्थानीय आबादी ने उठाकर क्वांगचाऊ के बाहर

ह्वागह्वाकाग पहाडी पर दफना दिया। कालातर म इस शौर्यपूर्ण कारनामे की स्मृति म इस सामूहिक समाधि पर एक सूचीस्तभ खडा किया गया। क्वागतुग विद्रोह की उस अतिम पराजय क बाद ' सुन यात सेन न लिखा है ' क्राति के समर्थको की सख्या दिन प्रति दिन बढन लगी थी।

१९०८ क अत म सम्राट क्वाग सू और सम्राज्ञी का लगभग एक ही साथ देहात हो गया और क्वाग सू क दो वर्षीय भतीज पू यी को सम्राट घोषित किया गया। वास्तविक सत्ता अब राजा चिन और राजा चुन (पू यी का पिता) क नतृत्व म मचूरी सामतो क हाथो म आ गयी थी। चीनी सामतो को राज्य क सभी उच्च पदो म वचित कर दिया गया।

इसन चीनी बूर्जुआजी और भूस्वामियो म सख्त असतोष पैदा कर दिया। प्रातीय परामर्शदात्री समितियो की स्थापना शिक्षा प्रणाली का पुनर्गठन, आदि कुछ सुधार लागू करन और देश म सावैधानिक राजतत्र की स्थापना का वचन देन क बावजूद सरकार इस बार असतोष को बढने म रोक नही पायी। उसन ससद क समाह्वान को कई बार टाला फिर भी क्राति की घडी लगातार अधिक निकट आती चली गयी।

१९११ १९१३ की सीन हाइ क्राति

९ मई १९११ को चीनी सरकार न एक आज्ञप्ति जारी करक हूपे हूनान तथा क्वागतुग के रेलमार्गो का और निमाणाधीन रेलमार्गो का राष्ट्रीयकरण कर दिया। यह कदम चीनी बूर्जुआजी पर एक सख्त प्रहार था जो स्वय रेलवे परियोजनाओ के निर्माण मे लगा हुआ था। २० मई को रेलमार्गो क निर्माण का कार्य अमरीकी ब्रिटिश फ्रासीसी तथा जर्मन पूजी द्वारा समर्थित एक बैक सघ (कसोर्टियम) क सुपुर्द कर दिया गया। चीनी राष्ट्रीय हितो का खुला उल्लघन करनेवाली इस कार्रवाई स सारे ही देश म सख्त नाराजगी की लहर दौड गयी। जनता के इस देशव्यापी आक्रोश क प्रत्युत्तर म सीच्वान प्रात क सूबेदार चाओ एर फग न ७ सितबर १९११ को रेलवे निमाण के राष्ट्रीयकरण क कारण भारी नुकसान उठानवाले अश धारियो के हितो की रक्षा करने क लिए शुरू किये गय आदोलन क नेताओ को गिरफ्तार कर लिया। इस कार्रवाई न जनता क धैय के प्याल को लबालब भर दन के लिए आखिरी बूद का काम किया। प्रात की राजधानी चगतू म बडा जबरदस्त विद्रोह फूट पडा। सूबेदार को मार डाला गया और उसक सिर को काटकर एक खभ पर लटका दिया गया जिस पर यह इबारत लिखी हुई थी अपनी जिदगी मे आप लोगो को ऊपर म देखना पसद करते थे। अब मृत्यु के बाद भी आप ऐसा ही करत रह।

सुन यात-सेन

चीनी क्रांतिकारी सघ न विद्रोहियो की कार्यवाइयो मे समन्वय स्थापित करने के वास्ते अपने प्रतिनिधियो को सीच्वान भेजा। अक्तूबर, १६११ म वूचाग मे भी जहा चीनी क्रांतिकारी सघ तथा दूसरे भूमिगत क्रांतिकारी सगठनो के प्रतिनिधि सक्रिय थे एक फौजी इजीनियर बटालियन ने विद्रोह कर दिया।

११ अक्तूबर १६११ को हूपे प्रात म परामर्शदात्री समिति न विद्रोहियो के साथ समझौते के अनुसार चीन को गणराज्य घोषित कर दिया। वूचाग की इन घटनाओ के बाद हाको तथा हानयाग म भी क्रांतिकारी सत्ता स्थापित कर दी गयी। एक अस्थायी क्रांतिकारी सरकार की स्थापना की गयी और क्रांतिकारी सेना का निर्माण किया गया जिसम शामिल होन के लिए मजदूरो किसानो और भूतपूर्व सैनिकों का ताता लग गया। क्रांतिकारी सेना क बनाये जान का देश मे सर्वत्र व्यापक समर्थन किया गया।

वूचाग के उदाहरण ने चीन के अन्य नगरो तथा प्रदेशो को भी ऐसा ही करने की प्रेरणा प्रदान की। इस क्रातिकारी आदोलन की प्रेरक शक्ति मज़दूर और किसान तथा बूर्जुआजी के निचले और मध्यवर्ती अशक थे।

लेकिन असल मे प्रातो मे सत्ता को क्रातिकारी होने का दिखावा करनेवाले भूस्वामियो और दलालपेशा (कप्रेडोर) बूर्जुआजी ने अपने हाथो मे ले लिया था। उन्होने जनसाधारण की क्रातिकारी सरगरमी पर लगाम लगाये रखने के लिए कोई कसर बाकी न रहने दी ताकि क्राति का मचू राजवश का तख्ता पलटने तक ही सीमित रखा जा सके।

दिसबर १६११ मे वर्षो निर्वासन मे रहने के बाद सुन यात सेन स्वदेश वापस लौटकर आया। शघाई मे उसका हर्पोन्मादपूर्ण स्वागत किया गया। २६ दिसबर, १६११ को सत्रह प्रातो के प्रतिनिधियो ने उसे नान किंग मे चीनी गणराज्य का राष्ट्रपति चुना। गणराज्य की अतत १ जनवरी १६१२ के दिन उद्घोषणा की गयी। जनता के नाम अपने घोषणापत्र मे सुन यात सेन ने लिखा था, "मै स्वेच्छाचारी शासन के विषैले अवशेषो का मूलोच्छेदन करने गणराज्य की स्थापना करने, क्राति के मुख्य लक्ष्य को कार्यरूप देने के लिए जनता के कल्याण के हितो मे काम करने और जनता की आशाओ तथा आकाक्षाओ को यथार्थ मे परिणत करने की प्रतिज्ञा करता हू।" लेकिन इस घोषणापत्र मे चीनी क्रातिकारी सघ के मूल कार्यक्रम मे सन्निहित कई मुद्दे और विशेषकर भूस्वामित्व के समान अधिकारो की माग को शामिल नही किया गया था। सुन यात सेन को अब भी जनसाधारण की शक्ति मे पर्याप्त विश्वास नही था और उसने लोकतान्त्रिक सुधारो का स्पष्ट कार्यक्रम तैयार नही किया था। उसके विदेशनीतिक कार्यक्रम मे भी सुसगतता का अभाव देखने मे आता था। विदेशी शक्तियो के नाम अपने सबोधन मे स्वतत्र तथा शक्तिशाली और समानाधिकारी चीन के लिए सघर्ष के विचार को पेश करने के ही साथ-साथ सुन यात सेन ने साम्राज्यवादी शक्तियो से इस लक्ष्य को प्राप्त करने मे चीन की सहायता करने का भी अनुरोध किया था। सुन यात सेन की सरकार बूर्जुआ क्रातिकारियो पुरानी नौकरशाही के अफसरो और उदारपथियो का गठजोड थी जिसमे उदारपथियो का प्राधान्य था।

उदारपथियो के इस प्राधान्य ने नयी सरकार की भावी नीतियो को ढाला। देश के सामाजिक आर्थिक ढाचे के आधार को बदलने या सामती अथवा साम्राज्यवादी प्रभुत्व का खातमा करने के लिए कोई कदम नहीं उठाये गये जिससे जनसाधारण की माग अतुष्ट ही रही। सरकार क्राति को पूर्णत बूर्जुआ चौखट के भीतर ही सीमित रखने के लिए कृतसकल्प थी।

इधर पीकिंग मे भी क्रातिकारी ज्वार का नियत्रण मे लाने के लिए

प्रयत्नो न चूंचुआजा और भूस्वामियों ने राजतंत्र का खात्मा करने के बाद

कदम उठाए। पू यी को गद्दी से उतार दिया गया और उसके बाद राजवंश

के अन्य सदस्यों ने भी अपने सिंहासनाधिकार का त्याग किया। उदारपंथी

जमींदारों और बूर्जुआजी ने क्रांतिकारी आंदोलन की व्याप्ति और शक्ति

से घबराकर राजनीतिक तिकड़मबाज यूआन शिह काइ के समर्थन के लिए

गोलबंद होना शुरू कर दिया। यूआन शिह काई को पीकिंग में सभी प्रतिक्रांतिकारी सेनाओं का मुख्य सेनापति नियुक्त कर दिया गया। साम्राज्यवादी शक्तियां चीनी सरकार पर लगातार ज्यादा दबाव डालती जा रही थीं और प्रत्यक्ष हस्तक्षेप की धमकियां दे रही थीं।

साम्राज्यवादी सुन तौर पर यूआन शिह काई का समर्थन करने लगे। गृहयुद्ध और विदेशी हस्तक्षेप से बचने के लिए सुन यात-सेन ने १४ फरवरी १९१२ को राष्ट्रपति पद से त्यागपत्र दे दिया और सत्ता यूआन शिह काइ को सौंप दी।

यूआन शिह काइ सरकार को क्रांतिकारी दक्षिण के नगर नानकिंग से पीकिंग ले गया जहां प्रतिक्रिया की शक्तियां बड़ी संख्या में सेनाएं उपलब्ध थीं। किसानों ने जिनकी अवस्था इस क्रांति के परिणामस्वरूप सुधरी नहीं थी जमीन और कम लगान की मांग करते हुए भूस्वामियों के खिलाफ बगावत शुरू कर दी। श्रमिक वर्ग भी फिर मैदान में उतर आया। लेकिन इन अलग-अलग विद्रोहों को यूआन शिह काई की सेनाओं ने जल्दी ही कुचल दिया। साम्राज्यवादियों ने उसकी नीतियों का अनुमोदन किया और अंतर्राष्ट्रीय बैंक संघ ने उसे एक बड़ा ऋण प्रदान किया। २५ अगस्त १९१२ को सुन यात सेन तथा चीनी क्रांतिकारी संघ के कई अन्य भूतपूर्व नेताओं ने कुछ उदारपंथियों के साथ मिलकर कुओमिताग (राष्ट्रीय दल) नामक एक नयी पार्टी की स्थापना की। उनके कार्यक्रम में भी भूस्वामित्व के समान अधिकारों का कोई भी उल्लेख नहीं था और चीनी क्रांतिकारी संघ के कार्यक्रम के अन्य सिद्धांतों को भी कम निश्चयात्मक और कम क्रांतिकारी ढंग से सूत्रबद्ध किया गया था। इस लिहाज से यह नया कार्यक्रम पश्चगमन का परिचायक था। लेकिन यूआन शिह काई को यह संशोधित रूप भी ग्राह्य नहीं था और उसने कुओमिताग के सदस्यों को घोर दमन का शिकार बनाना शुरू कर दिया।

१९१३ के जुलाई महीने में सुन यात सेन ने जनता से दूसरी क्रांति शुरू करने की अपील की। देश के कुछेक दक्षिणी प्रांतों में सेनाओं ने उसके आह्वान पर बगावत का झंडा खड़ा कर दिया लेकिन पहली क्रांति के परिणामों से निराश हुए जनसाधारण ने विद्रोही सैनिकों का समर्थन प्रदान नहीं किया जिन्हें यूआन शिह काई की सेनाओं ने जल्दी ही कुचल दिया।

इसके बाद कुओमिताग का अवैध घोषित कर दिया गया और सुन यात सेन तथा अन्य नेताओं को विदेशो मे जाकर शरण लेनी पडी। इस प्रकार इस दौर मे प्रतिक्रिया की ही विजय प्राप्त हुई थी।

क्राति के मुफ्त का सारा लाभ चीनी भूस्वामियो और दलालपेशा बूर्जुआजी को ही मिला था। जनसाधारण को और विशेषकर किसानो को न जमीन मिली और न कोई स्वतत्रताए ही जिनकी खातिर उन्होने वर्षो निस्स्वार्थ सघर्ष किया था।

लेकिन इसके बावजूद सीन हाइ क्राति ने चीनी जनता के राष्ट्रीय स्वाधीनता तथा सामाजिक उद्धार के सघर्ष मे नवजीवन का सचार करने मे अत्यत महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। वास्तविकता यह है कि १९१२ मे प्राग मे हुए सम्मेलन मे एशिया की मुक्ति लाने और यूरोपीय बूर्जुआजी के प्रभुत्व को कमजोर करनेवाले चीनी जनता के क्रातिकारी सघर्ष के विश्वव्यापी महत्व ' का उल्लेख किया गया था।

लैटिन अमरीका के जनगण का मुक्ति सघर्ष

साम्राज्यवादी युग का प्रभात अपने साथ लैटिन अमरीका के देशो मे विदेशी पूजी के प्रसार की नयी लहर को लेकर आया। उस समय तक लैटिन अमरीकी देश उल्लेखनीय प्रगति कर चुके थे और उनमे से कुछ मे राष्ट्रीय बूर्जुआजी और मजदूर वर्गो का उदय हो चुका था। कितने ही देशो (उदाहरण के लिए, अर्जेटीना मेक्सिको ब्राजील और चिली) मे कृषि मे पूजीवादी स्वरूप तेजी से विकसित हो रहे थे और वहा पूजीपतिनुमा भूस्वामियो का एक सस्तर भी पैदा हो चुका था। लेकिन प्रगतिशील राष्ट्रीय विकास की यह प्रक्रिया सामतवाद के अवशेषो और विदेशी पूजी के प्रवेश द्वारा अवरुद्ध की जा रही थी। साम्राज्यवादी इजारेदारिया इन देशो को कच्चे मालो के स्रोतो और पूजी निवेश के क्षेत्रो मे परिणत करने के प्रयास कर रही थी। इसके परिणामस्वरूप लेटिन अमरीकी देशो की अर्थव्यवस्था विरूपित हो गयी जिससे वे जल्दी ही एक फसली देश बनकर रह गये। क्युबा मुख्यतया गन्ना तथा चीनी उत्पादक देश बन गया और ब्राजील काफी का, अर्जेटीना गोश्त का, बोलीविआ टिन का और मेक्सिको चादी तथा तेल का मुख्य प्रदायकर्त्ता बन गया। साम्राज्यवादी देश उन प्रतिक्रियावादी बूर्जुआ भूस्वामी गुटो का समर्थन करते थे जिनका इन लेटिन अमरीकी देशो मे अबाध प्रभुत्व था।

लेकिन इतिहास की गति को और प्रगति के प्रवाह को न स्थानीय अल्पतत्र रोक सकते थे और न विदेशी पूजी का प्रभुत्व ही अवरुद्ध कर

सकता था। विदेशी इजारेदारो के सारे प्रयासो के बावजूद स्थानीय पूजीवाद का शनै शनै विकास होने लगा और नये वर्गो तथा सामाजिक शक्तियो का उदय होने लगा। राष्ट्रीय बूर्जुआजी और पूजीपति भूस्वामियो के प्रगतिशील अशो मे यह विश्वास जड पकडता गया कि अर्धसामती अल्पतत्र के उन्मूलन के और विदेशी पूजी के प्रभुत्व के खातमे के बिना अबाधित तथा तीव्र आर्थिक और राजनीतिक विकास सुनिश्चित करना असभव होगा।

उन्नीसवी और बीसवी शताब्दियो के सधिकाल मे एक ओर तो सामती स्वरूपो का उन्मूलन करने और दूसरी ओर, विदेशी प्रभुत्व का अत करने के कार्यभार अन्योन्याश्रित हो गये और लैटिन अमरीकी जनगणो के राष्ट्रीय मुक्ति आदोलनो ने सामतवाद विरोधी तथा साम्राज्यवाद विरोधी स्वरूप ग्रहण कर लिया।

१६१०-१६१७ की मेक्सिको क्राति

इस प्रक्रिया की सबसे प्रभावशाली अभिव्यक्ति १६१०-१६१७ की मेक्सिको क्राति थी जो सपूर्ण लैटिन अमरीका के इतिहास मे स्वाधीनता सग्रामो के बाद सबसे महत्वपूर्ण घटना थी। यह पहली लैटिन अमरीकी क्राति थी कि जिसके दौरान जनता ने कालातीत सामती प्रथाओ और साम्राज्यवादी प्रभुत्व का अत करने का प्रयास किया था।

मेक्सिको तानाशाह जनरल पोरफीरिओ दिआस द्वारा अनुसृत नीतियो के परिणामस्वरूप जो राष्ट्रीय हितो के साथ पूर्णत असगत थी बीसवी सदी के आरभ तक ब्रिटेन तथा सयुक्त राज्य अमरीका के अर्ध उपनिवेश मे परिणत हो चुका था। पोरफीरिओ दिआस और उसके अनुगामी यह दावा करते थे कि मेक्सिको सिर्फ बडे पैमाने के विदेशी पूजी निवेश की सहायता से ही विकसित देश बन सकता है। ब्रिटिश और अमरीकी कपनियो ने रेलो के निर्माण और खानो के विकास के लिए तरजीही शर्तो पर रिआयते प्राप्त कर ली थी। इस समय तक भूमि के विराट विस्तार विदेशी कपनियो और स्थानीय बडे भूस्वामियो के हाथो मे आ चुके थे।

बीसवी शताब्दी के आरभ मे तेल के समृद्ध भडारो की खोज होने पर ब्रिटिश और अमरीकी तेल कपनियो ने उनको हासिल करने के लिए पूरी शक्ति से प्रयास करना शुरू कर दिया।

किसानो को अपनी जमीनो से इस हद तक मोहताज कर दिया गया था कि कुछ ही समय के भीतर कुछ राज्यो मे तो ६८ ६६ प्रतिशत किसान ऐसे हो गये कि जिनके पास नाम को भी जमीन नही रही। जनसाधारण को न केवल तानाशाह दिआस के नेतृत्व मे स्थानीय अल्पतत्र के शोषण का

ही अन्य विदेशी इजारेदारियों के शोषण से भी शिकार होना पड़ रहा था।

१९११ के शुरू तक इस देश का अंतर्विरोध अत्यधिक विषम हो चुके थे कि तभी जमीन के वास्ते संघर्ष करने के लिए उठ किसान छापामार आंदोलन शुरू हो गया। इस आंदोलन के नेता कृषक हितों के लोकप्रिय प्रतिपादक एमीलियानो सापाता (१८७९-१९१९) और पांचो (फ्रांसिस्को) वील्या (१८७७-१९२३) थे। नवजात मेक्सिकी मजदूर भी अपने वर्गशत्रु शोषण के खिलाफ संघर्ष के मैदान में उतर आया। राष्ट्रीय बूर्जुआजी और पूंजीपति भूस्वामी भी दियास गुट की सत्ता उलटने के लिए प्रयत्नशील थे, जो देश के संसाधनों को लगातार विदेशी साम्राज्यवादियों के हाथों बेचता चला जा रहा था।

क्रांति की शुरुआत अक्तूबर १९१० में हुई। मई १९११ में तानाशाही का तख्ता उलट दिया गया और लोकप्रिय उदारपंथी नेता फ्रांसिस्को मदेरो के नेतृत्व में एक नयी सरकार की स्थापना कर दी गयी। किंतु फरवरी १९१३ में मदेरो की हत्या कर दी गयी और यह रहस्योद्घाटन हुआ कि हत्या के षड्यंत्र में अमरीकी राजदूत का हाथ था। सत्ता को जनरल विक्टोरियानो ऊएर्ता के नेतृत्व में एक प्रतिक्रियावादी गुट ने हथिया लिया। लेकिन जुलाई १९१४ में जनता ने इस लुटेरे से सत्ता वापस छीनने में सफलता प्राप्त कर ली।

क्रांति ने अब एक नयी ही मंजिल में प्रवेश किया। अब व्यापक जनसाधारण संघर्ष में उतर आये और उसकी दिशा को निर्धारित करने तथा उसे लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान करने लगे। संघर्ष के दौर में कृषक सेनाएं क्रांतिकारी लहर की चपेट में आये हुए इलाकों के किसानों के साथ मिलकर एक कृषिक क्रांति भी कर रही थीं। आम जनता के उपक्रम और सरगर्मियों से उदारपंथी लोग भयभीत हो गये और उनके नेता वेनूस्तियानो करांसा ने सापाता तथा वील्या की किसान सेनाओं को पूरी तरह से सफाया कर देने का अभियान चला दिया। यह क्रांति साथ ही विदेशी इजारेदारों के लिए भी खतरा पेश कर रही थी और यही कारण है कि संयुक्त राज्य अमरीका ने दो अवसरों पर (१९१४ में और १९१७ में) मेक्सिकी क्रांति को कुचलने के उद्देश्य से सशस्त्र हस्तक्षेप किया। किंतु मेक्सिकी जनता के दुर्दम प्रतिरोध ने इन प्रयासों को निष्फल कर दिया। क्रांतिकारी मेक्सिको के प्रति संयुक्त राज्य अमरीका की आक्रामक नीति ने सभी लैटिन अमरीकी देशों में सख्त नाराजगी और बेचैनी पैदा कर दी और वहां के जनगण ने मेक्सिकी क्रांतिकारियों के साथ अपनी एकजुटता को व्यक्त किया।

मेक्सिकी क्रांति सामंतवाद विरोधी और साम्राज्यवाद विरोधी क्रांति थी और उसकी इस विशेषता ने उसे बूर्जुआ-जनवादी स्वरूप प्रदान कर

दिया था। लेकिन इस सघर्ष म जनसाधारण विजय नही प्राप्त कर
और इसका कारण सर्वहारा तथा कृपक समुदाय का आपस म सहवध स्था
न कर पाना था। मक्सिको म सवहारा अभी इस स्थिति म नही था
क्रातिकारी आदोलन का नतृत्व कर सक अत नतृत्वकारी भूमिका बूर्जु
ही अदा कर रहा था। बूर्जुआजी न आम जनता के साथ मिलकर दि
की तानाशाही और शक्तिशाली भूस्वामिया तथा पादरियो क अल्पतत्र
विदेशी साम्राज्यवादियो स टक्कर ली थी। लकिन जैस ही बूजुआजी
वर्ग हितो का कृपक समुदाय तथा सवहारा क वर्ग हिता के साथ टक
हुआ उसन जनसाधारण का दृढतापूर्वक विरोध करना शुरू कर दि
इसके परिणामस्वरूप गृहयुद्ध क दौरान, जो १९१५ स १९१७ तक च
रहा बूर्जुआजी और भूस्वामियो का सहवध अत म कृपक सेनाओ का परा
करन म और फिर सर्वहारा क विद्रोहो को कुचल देन म कामयाब हा गय

मक्सिकी क्राति के क्या नतीजे निकले? उसने प्रतिक्रियावादी दि
तानाशाही का तख्ता उलटा, चर्च की शक्ति को गभीर चोट पहुचायी अ
दश पर विदशी पूजी के शिकजे को कमजोर किया। यह सब करक उ
नयी बूर्जुआ व्यवस्था का सुदृढीकरण, अधिक तीव्र पूजीवादी विकास
पथ प्रशस्त किया और मक्सिको की राष्ट्रीय प्रभुसत्ता को पुष्ट किया। लै
अमरीकी दशो के जनगण की निगाहो म मेक्सिको साम्राज्यवाद के विरुद्ध स
का प्रतीक बन गया था। क्राति का एक और फल १९१७ का सविधान थ
जो क्रातिकारी आदोलन की सामतवाद विरोधी और साम्राज्यवाद विरा
आकाक्षाओ का प्रतिबिंबित करता था। यह सविधान उस समय तक सस
म सवाधिक लोकतात्रिक बूजुआ सविधान था। लकिन १९१७ क सविधा
क सारे प्रगतिशील तत्वो के बावजूद इस बात को ध्यान म रखना चाहि
कि वह वास्तविक क्रातिकारी उपलब्धिया का प्रतिनिधित्व नही करता था
प्रत्युत एक ऐसा कार्यक्रम ही था जो यह दिखाता था कि जनता का अ
क्या कुछ हासिल करन क लिए सघर्ष करना होगा। इसके अलावा, दे
का शासन अब चूकि बूजुआजी और भूस्वामी वर्ग के हाथो म चला गय
था और उन्ह उस सविधान को कियान्वित करना था इसलिए उस
बहुत स अनुच्छदो को तो आज तक भी कायरूप म परिणत नही किय
जा सका है।

मक्सिकी क्राति लैटिन अमरीका क राष्ट्रीय मुक्ति आदालन क एव
महत्वपूर्ण ऐतिहासिक चरण क अत की परिचायक थी। इस चरण म राष्ट्री
मुक्ति आन्दोलन की मुख्य विशपता यह थी कि जहा जनसाधरण ही सघर्
क मुख्य आघात को झेलत थ सबस ज्यादा कुरबानिया करत थ और
सबस भारी अभावो और कष्टो को सहत थ वहा इस सघर्ष क फला का

उपभोग उनके नही, बल्कि शासक वर्ग के भाग्य मे लिखा था। आधारभूत कार्यभार–साम्राज्यवादी प्रभुत्व का विनाश, लातीफूंदिया का अंत और प्रतिक्रियावादी निज़ामो का तख्ता पलटा जाना–अभी तक अधूरा ही था।

अतर्राष्ट्रीय मजदूर आदोलन मे क्रातिकारी और अवसरवादी प्रवृत्तिया

१९०५-१९०७ की पहली रूसी क्राति ने यूरोप के लगभग सभी बडे पूजीवादी देशो मे प्रचड वर्ग संघर्षो के एक पूरे सिलसिले का ही सूत्रपात कर दिया।

१९०९ मे स्वीडन मे, १९१२ मे ब्रिटेन मे और १९१३ मे बेल्जियम मे मजदूरो की बहुत ही जबरदस्त और व्यापक हडताले हुई। कभी कभी सर्वहारा का संघर्ष बहुत ही निश्चायक रूप ग्रहण कर लिया करता था, जैसा कि १९०९ मे स्पेन मे मजदूरो के सैन्यवाद विरोधी प्रदर्शनो मे देखने को मिला, जब बार्सिलोना की सडको पर बैरिकेड खडे कर दिये गये थे। १९१४ की गरमियो मे मिलान, वेनिस तथा इटली के दूसरे शहरो मे भी सडको पर बैरिकेड खडे किये गये और उन पर मुठभेडे हुई। किसान भी मजदूरो की सहायता करने को आ गये–उन्होने शस्त्रागारो और पुलिस बैरको को लूट लिया। पूरे एक सप्ताह भर देश आम हडताल की जकड मे आकर ठप पडा रहा। यह सप्ताह बाद मे "लाल सप्ताह" के नाम से मशहूर हुआ।

रूस का सर्वहारा अब भी अतरराष्ट्रीय मजदूर आदोलन के लिए प्रेरणा का मुख्य स्रोत बना हुआ था। प्रतिक्रिया के प्रहारो से सभल चुकने के बाद रूस के मजदूरो ने १९१० के उपरात रक्षात्मक हडतालो के स्थान पर आक्रामक हडताले सगठित करनी शुरू कर दी थी। पूर्वी साइबेरिया मे लेना तट की सोना खानो मे १९१२ मे हडतालियो पर जारशाही सेनाओ द्वारा अधाधुध गोलिया बरसाये जाने के बाद, जिसमे बहुत से मजदूर मारे गये, देश भर मे विरोध आदोलन की जबरदस्त लहर दौड गयी। क्रातिकारी उभार की इस नयी लहर ने अपने आपको देश के सभी मुख्य औद्योगिक केंद्रो मे हडताल आदोलन के तीव्र प्रसार मे अभिव्यक्त किया। हडतालियो द्वारा आयोजित सभाए और जलूस रोजमर्रा की बात बन गये। १९१४ की गरमियो मे सेट पीटर्सबर्ग की सडको पर बैरिकेड खडे हो गये और मजदूरो तथा पुलिस के बीच मुठभेडे अधिकाधिक प्रायिक होती चली गयी। रूस एक बार फिर राष्ट्रव्यापी राजनीतिक हडताल की दहलीज पर पहुच गया था।

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि साम्राज्यवाद के युग मे पूजीवादी

देशा के भीतर गहराते वर्ग विरोधो के परिणामस्वरूप जनसाधारण की क्रांतिकारी सक्रियता म वृद्धि आती गयी। अपनी बारी म इसन अतराष्ट्रीय समाजवादी आदोलन म क्रांतिकारी रुझान को सवधित किया। बीसवी शताब्दी के पहले डेढ दशको मे यानी प्रथम विश्वयुद्ध के शुरू होने के पहले इस सभी यूरोपीय देशो म अधिकाधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करने जाना था।

रूस म एक नये ही प्रकार की पार्टी की स्थापना की जा चुकी थी, जो अपनी अनन्य क्रांतिकारिता के लिहाज से दूसरे इटरनेशनल की अन्य सभी पार्टियो म सवथा भिन्न थी। जर्मनी म सामाजिक जनवादी पार्टी का वामपक्ष कार्ल लीब्कनेख्त तथा रोजा लुक्जेमबुर्ग के नेतृत्व म अपनी कतारो को सुदृढ कर रहा था और बुल्गारिया म दिमीतर ब्लागोयेव के नेतृत्व म वामपथी या तेस्न्याकी समाजवादियो की एक अलग पार्टी स्थापित हो गयी थी। फ्रासीसी समाजवादियो की कतारो म भी उन लोगो की सख्या लगातार बढती जा रही थी जो बूर्जुआ पार्टियो के साथ सहयोग के विरोधी थे।

लेकिन इसीके साथ साथ अतराष्ट्रीय समाजवादी आदोलन म एक और अवसरवादी प्रवत्ति भी जन्म ले रही थी। इस प्रवृत्ति का सामाजिक आधार तथाकथित श्रमिक अभिजात वर्ग था। यूरोपीय सर्वहारा के इस ऊपरी सस्तर को पूजीपतियो ने खरीद लिया था, जो इसकी खातिर औपनि वेशिक लूट से प्राप्त अपने अतिलाभो का एक बहुत ही छोटा अश बलिदान करने के लिए तैयार थे। यह कहना अनावश्यक है कि मालिको की एसी जूठन पर पलनेवाले इस विशेष सस्तर के मजदूरो का पूजीवादी व्यवस्था के विलोपन म कोई निहित स्वार्थ नही था। वे बूजुआजी से आर्थिक सुधार इस वर्ग के साथ लडकर नही बल्कि सहयोग करके प्राप्त करने की कोशिश करते थे। इसके अलावा जसे जैसे समाजवादी विचार अधिकाधिक लोक प्रियता प्राप्त करते गये वसे वैसे अतराष्ट्रीय समाजवादी आदोलन म निम्न बूर्जुआजी की कतारो से भी अधिकाधिक सहगामी शामिल होते गये। समाज वादी पार्टियो म शामिल होनेवाले इन तत्वो ने सर्वहारा विरोधी मनोभावनाओ को जन्म दिया और अवसरवादी नेताओ का सहारा बने।

उन्नीसवी सदी के अत म ही फ्रेडरिक एगेल्स के देहात (१८९५) के कुछ ही बाद जर्मन सामाजिक जनवाद के एक प्रमुख नेता बर्न्स्टीन ने मार्क्सवाद को कालातीत कहकर उसमे सशोधन करने की मुहिम चलायी थी और प्रस्ताव रखा था कि समाजवादी क्राति के विचार के स्थान पर शातिपूर्ण सुधारवादी काय के विचार को स्वीकार किया जाय। पहली रूसी क्राति के समय दूसरे इटरनेशनल के बहुत से नेता उसके अतराष्ट्रीय महत्व

का स्वीकार करने के लिए तैयार नही थे और उन्होंने रूसी सर्वहारा के संघर्ष के अनुभव का अध्ययन करने और उसे अपनाने की कोई इच्छा नही प्रकट की।

रूसी क्रांति की पराजय का अवसरवादियों ने सर्वहारा क्रांतिकारी संघर्ष के सिद्धांत की खिल्ली उड़ाने के लिए और सुधारवादी तरीकों की श्रेष्ठता को प्रदर्शित करने के लिए उपयोग किया।

दूसरे इंटरनेशनल पर अवसरवादियों के बढ़ते प्रभाव ने अपने आपको उसके कुछ नेताओं द्वारा सैन्यवाद तथा साम्राज्यवादी युद्ध के खतरे के खिलाफ जो लगभग १९०५ में ही अधिकाधिक प्रत्यक्ष होता जा रहा था संघर्ष शुरू करने से इन्कार में अभिव्यक्त किया। दूसरे इंटरनेशनल की कांग्रेसों में जर्मन तथा बेल्जियन सामाजिक जनवादी पार्टियों के अवसरवादी नेता खुले तौर पर उपनिवेशवादियों के पैरोकारों की भूमिका अदा करते हुए सिर्फ पूंजीवाद ही नहीं बल्कि 'समाजवाद के अंतर्गत' भी उपनिवेशों की आवश्यकता का प्रतिपादन करते थे। डच और ब्रिटिश अवसरवादी भी साम्राज्यवादी शक्तियों के 'सभ्यता प्रसार मिशन' का गुणगान करने में उनके साथ हो जाते थे।

बोल्शेविकों का
अवसरवाद के विरुद्ध संघर्ष

क्रांति की देहरी पर खड़े देश में सक्रिय निष्ठावान क्रांतिकारी मार्क्सवादी होने के नाते रूसी बोल्शेविकों ने बर्न्सटीन द्वारा प्रतिपादित सुधारवादी सिद्धांतों की भर्त्सना करने में तनिक भी हिचकिचाहट नही प्रकट की। पूंजीवाद में सन्निहित अन्तर्विरोधों के शनैः शनैः शान्त पड़ते जाने के बारे में सुधारवादियों की जो भ्रान्तियां थीं, उनका पर्दाफाश करते हुए लेनिन ने मार्क्स के आर्थिक सिद्धांत और समाजवादी क्रांति के उनके सिद्धांत के आधारिक तत्वों का समर्थन किया। साथ ही लेनिन ने मार्क्सवाद के सर्जनात्मक सारतत्व पर और साम्राज्यवाद के युग की नयी परिस्थितियों की रोशनी में इस सिद्धांत का और अधिक विकास किये जाने की आवश्यकता पर भी जोर दिया।

लेनिन और उनके समर्थकों को स्वयं रूस में भी अवसरवाद के विरुद्ध प्रचंड संघर्ष चलाना पड़ा। ऐक्यबद्ध सर्वहारा पार्टी की स्थापना करने के अपने प्रयासों में रूसी क्रांतिकारी मार्क्सवादियों ने अर्थवादियों के विरोध का सामना किया, जो सर्वहारा की स्वतंत्र राजनीतिक पार्टी की आवश्यकता से इन्कार करते थे और सर्वहारा के कार्यभारों को पूर्णतः ट्रेड यूनियन पूंजीपतियों के विरुद्ध आर्थिक संघर्ष तक ही सीमित मानते थे।

अपने साइबेरिया निर्वासन (१८९७-१९००) के दौरान भी लेनिन

न अर्थवाद की अवसरवाद के एक रूप के नाते भर्त्सना की थी। लेनिन द्वारा संस्थापित ईस्क्रा अर्थवाद के अवसरवादी अतर्य का अनथक पर्दाफाश करता रहा था। लेनिन द्वारा लिखित और १९०२ में प्रकाशित पुस्तक 'क्या करें?' ने अर्थवादियों की वैचारिक पराजय में निर्णायक भूमिका अदा की थी।

रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस के बाद बोल्शेविकों को मेन्शेविकों की अवसरवादी नीतियों के खिलाफ लंबा संघर्ष चलाना पड़ा, जिनकी यह मान्यता थी कि रूस में आसन्न क्रांति में मुख्य भूमिका बूर्जुआजी को अदा करनी चाहिए और इसलिए वे सर्वहारा से बूर्जुआजी के साथ मेल करने का इसरार कर रहे थे।

१९०५ की क्रांति की पराजय के बाद व्याप्त कठिन परिस्थितियों में, जब देश में प्रतिक्रिया का अबाध शासन था, बोल्शेविकों को अपने विद्यमान भूमिगत क्रांतिकारी संगठनों को मजबूत करना पड़ा, क्योंकि मेन्शेविक पार्टी को, जो बस भी अवैध रूप से काम कर रही थी, खत्म करने पर उतारू थे। १९१२ में प्राग में हुए पार्टी सम्मेलन में मेन्शेविक विसर्जकों को पार्टी से निकाल दिया गया और लेनिन के नेतृत्व में नयी केंद्रीय समिति को चुना गया।

रूसी क्रांतिकारी मार्क्सवादियों ने ऐसी ही दृढ़ता के साथ दूसरे इंटरनेशनल में अवसरवादी रुझानों के खिलाफ भी संघर्ष किया। अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी कांग्रेसों में लेनिन अवसरवादी नेताओं की और विशेषकर आसन्न साम्राज्यवादी युद्ध के प्रति उनके दृष्टिकोण की तीखी आलोचना किया करते थे। इन कांग्रेसों के दौरान लेनिन वामपंथी सामाजिक-जनवादियों की विशेष बैठकों का आयोजन करते थे और अवसरवाद के विरुद्ध संघर्ष में उनकी कतारों को एकताबद्ध करने का हर संभव प्रयास करते थे।

बोल्शेविक पार्टी ही संसार की एकमात्र ऐसी बड़ी मजदूर पार्टी थी कि जिसने सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयतावाद के सिद्धांतों को कभी तिलांजलि नहीं दी। १९१२-१९१४ के बीच लेनिन ने राष्ट्रीय प्रश्न से संबंधित पार्टी के क्रांतिकारी कार्यक्रम के समर्थन में, जिसमें राष्ट्रों के अलग होने के अधिकार सहित आत्मनिर्णय के अधिकार की घोषणा की गयी थी, कितनी ही बार अपने विचार व्यक्त किये थे। अवसरवादियों की साम्राज्यवादी शक्तियों की औपनिवेशिक नीतियों का औचित्य सिद्ध करने की कोशिशों की तीव्र भर्त्सना करते हुए लेनिन ने सर्वहारा के हेतु के लिए औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों के राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन के जबरदस्त महत्व को दर्शाया।

अठारहवां अध्याय

पहला साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध और रूस मे जारशाही का पतन

युद्ध की पूर्वबेला मे यूरोप

उन्नीसवी तथा बीसवी शताब्दियो के सधिकाल मे जब पूजीवाद [illegible] साम्राज्यवाद की अवस्था मे प्रवेश किया तो महाशक्तियो के [illegible] द्वंद्विता और वैमनस्य भी पराकाष्ठा पर पहुचने लगा। [illegible] की अब ज्यादा गुजाइश नहीं रह गयी थी क्योकि [illegible] अधिकाश का पहले ही आपस मे बटवारा कर चुकी थी और [illegible] उनके बीच तथाकथित प्रभाव क्षेत्रो के लिए प्रचड सघर्ष [illegible] अतराष्ट्रीय सकटो का अनवरत सिलसिला जो [illegible] दावानल मे परिणत हो सकता था सारी दुनिया मे [illegible] तिक वातावरण को प्रतिबिबित कर रहा था।

इगलैड द्वारा १८९९ से १९०२ तक दक्षिणी अफ्रीका मे [illegible] तथा आरेज फ्री स्टेट के बोअर गणराज्यो के विरुद्ध [illegible] युद्ध का अत उनके ब्रिटिश साम्राज्य मे शामिल कर लिए [illegible] १९०० मे यूरोपीय शक्तियो जापान और सयुक्त राज्य अमरीका [illegible] मे हस्तक्षेप किया। १९०४ मे रूस जापान युद्ध छिड गया और [illegible] मोरक्को मे फासीसी प्रसार को रोकने के जर्मन प्रयासो [illegible] जर्मनी के पारस्परिक सबधो मे गभीर तनाव उत्पन्न हो गया। १९०८ मे आस्ट्रिया हगरी द्वारा बोस्निया तथा हर्जेगोवीना के अधिग्रहण [illegible] युद्ध मे परिणत हो जाने का खतरा पैदा कर दिया। १९११ मे फ्रास और जर्मनी के बीच दूसरा मोरक्को सकट पैदा हुआ और जर्मनी [illegible] "पैथर" को मोरक्को की समुद्री सीमा के भीतर [illegible] ताकि फ्रास को मोरक्को मे और अधिक प्रवेश [illegible] समय तक लगभग पूर्ण हो ही चुका था। १९१२ से १९१३ [illegible]

वाल्कन युद्धों में थरथराता रहा। युद्धों में भाग लेनेवाले छोटे छोटे राज्य के पीछे दो विरोधी खेमों में बँटी हुई महाशक्तियाँ ही थीं।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में शक्तियों का विन्यास अंतिम रूप ले चुका था। एक तरफ जर्मनी, आस्ट्रिया हंगरी तथा इटली का त्रिपक्षीय गठबंध था और दूसरी तरफ ब्रिटेन, फ्रांस तथा रूस में निर्मित 'त्रिक सौहार्द' या एतन्त था।

दोनों ही शिविर युद्ध की सक्रिय तैयारियाँ करने में लगे हुए थे। उनके बीच हथियारों की भयंकर दौड़ चल रही थी और नये सहयोगी प्राप्त करने के लिए वे राजनयिक क्षेत्र में एक दूसरे के साथ भयंकर प्रतिस्पर्धा में उलझे हुए थे। जर्मनी ने रूस को ब्रिटेन तथा फ्रांस से अलग करने की पूरी कोशिश की। फ्रांस को इटली को त्रिपक्षीय गठबंध से निकलवाने में ज्यादा कामयाबी मिली।

युद्ध का प्रारंभ

पहला विश्वयुद्ध १ अगस्त १९१४ को शुरू हो गया। दोनों ही पक्ष दशकों से उसकी तैयारियाँ करने में लगे हुए थे और वह दोनों ही ओर से एक साम्राज्यवादी युद्ध था। तथापि युद्ध की घोषणा करने में पहल जर्मनी ने ही की। जर्मन शासक हलके और विशेषकर जर्मन सैनिक हलके युद्ध जल्दी से जल्दी छेड़ देना चाहते थे, क्योंकि जर्मनी को उस समय सैनिक श्रेष्ठता प्राप्त थी, जो कुछ समय बाद खत्म भी हो सकती थी। इस बीच बोस्निया की राजधानी सरायेवो में एक सर्व देशभक्त ने आस्ट्रियाई युवराज फ्रांज फर्डीनांड की हत्या कर दी। जर्मनी और उसके सहयोगी आस्ट्रिया हंगरी ने इस अंतराष्ट्रीय युद्ध छेड़ने के लिए इस्तेमाल किया। आस्ट्रिया हंगरी ने सर्बिया को स्पष्टतः अस्वीकार्य अल्टीमेटम देकर उसके खिलाफ युद्ध छेड़ दिया। जर्मन राजनय को इस आस्ट्रिया सर्बिया संघर्ष को यूरोपव्यापी संघर्ष में परिणत करते देर न लगी। रूस के तुरंत आम लामबंदी के एलान के जवाब में १ अगस्त को जर्मनी ने रूस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। ३ अगस्त को जर्मनी ने फ्रांस के विरुद्ध भी युद्ध घोषित कर दिया और ४ अगस्त को जर्मन सेनाएं बेल्जियम में घुस आयीं। बेल्जियम की तटस्थता का उल्लंघन हुआ देखकर इंगलैंड भी जर्मनी के खिलाफ युद्ध में शामिल हो गया। जर्मन सेनाओं ने जल्दी ही बेल्जियम की सेनाओं के प्रतिरोध को कुचल दिया और फ्रांस पर जा चढ़ीं।

फान श्लीफेन योजना की विफलता

युद्ध आरभ करत हुए जर्मन आला कमान अपनी सैनिक कार्रवाइया का सचालन एक विशेष योजना क आधार पर कर रही थी जिस आठ सौ साल पहल जनरल अल्फ्रेड फान श्लीफन न बडी सावधानी क साथ तैयार किया था। फान श्लीफेन की योजना म पश्चिमी मार्चे पर शत्रु का सफाया करन क लिए चार-छ सप्ताह के लटित युद्ध की और उसके बाद पूर्वी मार्चे पर भी लगभग इतन ही समय म विजय प्राप्त करन के वास्त सारा जोर लगा दन की कल्पना की गयी।

दोना मोर्चो को एक एक करक ध्वस्त कर देन पर शरद तक पूर्ण विजय प्राप्त कर ली जानी थी।

आरभ म सभी बातो स यही प्रतीत होता था कि योजना सफल हा जायगी। जर्मन सना की मुख्य शक्तिया बेल्जियम का तेजी म पार करती हुइ फ्रास म गहराई तक दाखिल हो गयी। सितबर तक व मान नदी तक जा पहुची। पेरिस अब दूर न था। फ्रासीसी सरकार को बडी जल्दी म पेरिस स बोर्दा ले जाया गया। लगता था कि फ्रास का पतन हान ही वाला है। उधर जमन अपनी विजय की खुशिया मनाना शुरू करन ही वाले थ कि तभी उनकी योजनाओ पर पानी फिर गया। घमडी जमन आला कमान न रूस की अपनी सेनाओ को थोड ही समय क भीतर लामबद कर सकन और उन्ह युद्ध क लिए तयार कर लेन की क्षमता का ठीक स नही आका था। लेकिन जमना के अनुमान क विपरीत रूस म लामबदी जल्दी ही हा गयी और जब जमन आक्रमण स घबराकर फ्रासीसी आला कमान न रूसी आला कमान स सहायता का अनुरोध किया तो रूसी सनाओ न अगस्त क अत म ही पूर्वी प्रशा पर आक्रमण कर दिया और साथ ही आस्त्रिया हगरी क खिलाफ भी बढना शुरू कर दिया। ३ सितबर का ल्वाव पर रूसी सनाओ का अधिकार हो गया।

उधर आगे बढती जर्मन सेनाओ और जनरल जाफ्र की कमान म फ्रासीसी सेनाओ मे ५ से १२ सितबर के बीच मान क तट पर एक जबरदस्त टक्कर हुइ। जमना न रूसी प्रगति स डरकर अपनी टाइ सैन्य कोर को स्थानातरित करक पूर्वी मार्चे पर भज दिया था जिसस वहा रूसियो को हारना पडा। लेकिन इसक परिणामस्वरूप मान पर जमन सना खासी कमजोर हा गयी थी और फ्रासीसियो क लिए न सिर्फ अपन मार्चे का कायम रखना बल्कि जल्दी ही एक प्रबल प्रत्याक्रमण करना भी सभव हो गया। जमना को पीछ हटन क लिए मजबूर होना पडा।

म विभाजित हो गया – जमन गुट के समाजवादी ऐटट गुट या मित्र देशा क समाजवादी और तटस्थ देशो के समाजवादी।
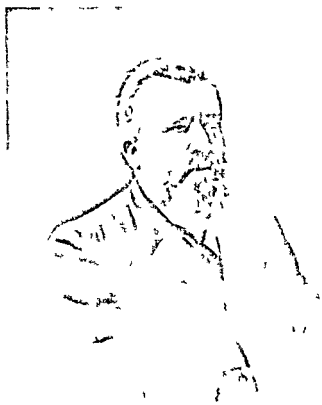
जान जोरेस

बोल्शेविको का युद्ध के विरुद्ध आर सकट की क्रातिकारी परिणति के लिए सघप

बाल्शविक पार्टी ही एकमात्र ऐसी पार्टी थी कि जो सवहारा अतग प्टीयतावाद क सिद्धातो क प्रति निष्ठावान वनी रही। पाच बाल्शविक प्रति निधिया को जिन्होन राज्य दूमा म युद्ध क विरुद्ध विचार व्यक्त किए गिरफ्तार कर साइबेरिया निवासित कर दिया गया। लनिन न जो उस समय स्विट्जरलड म रह रह थे सितबर १९१४ म युद्ध की अवस्थाओ म क्रातिकारी सघप का एक नया कायक्रम प्रस्तुत किया। लनिन न युद्ध को साम्राज्यवादी युद्ध की सज्ञा दनवाले और दूसर इटरनशनल क नताओ क

आचरण को सर्वहारा के हेतु के साथ विश्वासघात घोषित करनेवाले पहले समाजवादी थे। उन्होंने उन सवालों का जवाब सामने रखा कि जो उस समय हर ईमानदार समाजवादी को हर मजदूर और हर उत्पीडित आदमी को उद्वेलित कर रहे थे और ये सवाल थे—क्या किया जाय? किस रास्ते पर चला जाये?

युद्ध जनसाधारण के लिए अकल्पनीय मुसीबत और तकलीफ लाया था। उसके अनगिनत मोर्चों पर लाखों आम लोगों, मजदूरों और किसानों को इसलिए बलि चढाया जा रहा था कि कारखाना मालिक भूस्वामी जनरल और उच्च अधिकारी अपने पहले से ही भरे हुए जेबों को और भी ज्यादा भर सके। रोजी कमानेवालों के न रहने पर उनकी बीवी बच्चे भूखों मरने के लिए मजबूर हो गये। लेनिन तथा दूसरे बोल्शेविक जानते थे कि जनसाधारण इस दारुण स्थिति का अंत चाहते हैं इसलिए वे जनता की शांति की आकांक्षा का समर्थन करते थे।

लेकिन सवाल यह था कि किस तरह की शांति का लक्ष्य बनाया जाय? क्या साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच शांति? लेनिन ने इसे पूर्णत अस्वीकार्य माना। उन्होंने कहा कि इस तरह की शांति का मतलब मात्र लडाई में विराम होगा और सत्ता फिर साम्राज्यवादियों के हाथ में आ जायेगी, जिसमें जनसाधारण का उत्पीडन चलता रहेगा और उनकी सारी कुरबानियां बेकार जायेंगी। कुछ ही समय के बाद साम्राज्यवादी मजदूरों और किसानों को फिर नरमेध के लिए भेजना शुरू कर देंगे।

लेनिन का कहना था कि स्थायी शांति को सुनिश्चित करने के लिए और भविष्य में युद्धों को असंभव बनाने के लिए या कम से कम उनके छिडने का खतरा कम करने के लिए युद्धों के कारण को दूर किया जाना चाहिए साम्राज्यवाद का तख्ता पलटा जाना चाहिए।

क्या यह संभव था? या यह निरा हवाई सपना ही था? लेनिन के बहुत से विरोधी जनता में अपने राष्ट्रीय बूर्जुआ वर्ग के साथ मेल करने का इसरार करनेवाले साम्राज्यवाद के हित साधक समाजवादी—सामाजिक साम्राज्यवादी—इसे निरा हवाई सपना ही समझते थे।

किंतु लेनिन ने दिखलाया कि साम्राज्यवादी युद्ध की अवस्थाओं ने ही साम्राज्यवाद का तख्ता उलटने के कार्यभार को पूर्णत संभव और व्यावहारिक बना दिया है। ऐसा क्यों? इसलिए कि युद्ध ने जनसाधारण की हालत को बहुत ही बदतर कर दिया था कीमतों में अभूतपूर्व वृद्धि करके लोगों को भूख और अभावों में जूझने को छोड दिया था और इस प्रकार यूरोप के अधिकांश देशों में गंभीर संकट पैदा कर दिया था। इस संकट का युद्ध के साथ अधिकाधिक गंभीर होते जाना और जनसाधारण के क्रांतिकारी जाग

का तीव्रता प्रदान करना अनिवार्य ही था। सवाल था – इस सकट का क्याकर हल किया जाय ? वर्गचेतन सर्वहारा द्वारा उसका किस प्रकार उपयोग किया जाय ? लेनिन ने इन सवालो के जवाब भी पेश किये।

लेनिन ने कहा कि स्वय शासक वर्गो ने ही आवश्यकतावश जनता का हथियारबद कर दिया है। उन्होने मजदूरो और किसानो को बदूके इसलिए दी है कि वे एक दूसरे को जान से मारे। लेकिन इन बदूको को दूसरी ही दिशा मे – पूजीपतियो भूस्वामियो और उपनिवेशवादियो की तरफ साम्राज्य वाद की शक्तियो की तरफ – भी ताना जा सकता है और ताना भी जाना चाहिए।

इस प्रकार लेनिन ने युद्धकाल के अपने सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक नारे का निरूपण किया – साम्राज्यवादी युद्ध को गहयुद्ध मे परिणत कर दिया जाना चाहिए। दूसरे शब्दो मे युद्ध का अत साम्राज्यवाद का तख्ता पलटन के जरिये ही किया जाना चाहिए।

लेनिन का समाजवादी क्राति का सिद्धात

यह बिलकुल स्वाभाविक ही था कि लेनिन ने साम्राज्यवादी युद्ध के वर्षो मे ही, जब वह रूस तथा दूसरे देशो के मजदूरो का युद्ध को क्रातिकारी सघर्ष मे परिणत कर देने के लिए आह्वान कर रहे थे समाजवादी क्राति के अपने सिद्धात के मूल तत्वो का पूरी तरह से निरूपण और निष्पादन किया। समाजवादी क्राति के वास्ते सघर्ष ही अब समय की सबसे बडी पुकार था।

लेनिन ने युद्धकाल मे कई महत्वपूर्ण कृतियो की रचना की जैसे 'साम्राज्यवाद पूजीवाद की चरम अवस्था सर्वहारा क्राति का युद्ध सबधी कार्यक्रम तथा अन्य। साम्राज्यवादी अवस्था मे पूजीवाद के सभी नूतनतम लक्षणो को ध्यान मे रखते हुए उन्होने सर्वहारा द्वारा नयी ऐतिहासिक परिस्थितियो मे अनुसृत की जानेवाली रणनीति और कार्यनीति का निरूपण किया। लेनिन ने मार्क्स तथा एगेल्स की शिक्षा के आधार पर साम्राज्यवाद के युग मे व्यवहार्य समाजवादी क्राति का नया सिद्धात विकसित किया।

लेनिन ने आधारभूत महत्व के दो सिद्धात प्रतिपादित किये। पहला सिद्धात यह था कि समाजवादी क्राति इसीलिए सभी देशो मे एकसाथ विजयी नही हो सकती कि वे आर्थिक तथा राजनीतिक विकास की अलग अलग मजिलो मे है। समाजवाद की पहले कुछ ही या सिर्फ एक ही देश मे विजय होना सभव है। उनका दूसरा नया सिद्धात यह था कि सर्वहारा साम्राज्यवाद

के विरुद्ध अपने संघर्ष में नये साथी प्राप्त करने लगा। दूसरे समुदाय के अलावा, जो पूंजीवादी देशों में मजदूरों का मित्र बन ही चुका था, औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों के उत्पीड़ित जनगण भी उसके मित्र बन जायेंगे। मजदूर वर्ग का साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष उत्पीड़ित जनगणों के साम्राज्यवाद के विरुद्ध मुक्ति संग्राम के साथ एकाकार हो जायेगा और साम्राज्यवाद विरोधी आन्दोलन की शक्तियां बढ़ती ही जायेंगी।

लेनिन के इन विचारों का मात्र भारी सैद्धांतिक महत्व ही नहीं, अपार व्यावहारिक महत्व भी था। उन्होंने मजदूर वर्ग के सामने क्रांतिकारी संघर्ष की नयी संभावनाएं प्रस्तुत कर दीं।

साम्राज्यवादी युद्ध का प्रसार

साम्राज्यवादी युद्ध, जो १९१४ में एक यूरोपीय लड़ाई के रूप में शुरू हुआ था, शीघ्र ही विश्वयुद्ध में परिणत हो गया। युद्धरत देशों की संख्या में तेजी से वृद्धि होती गयी। जर्मनी और आस्ट्रिया हंगरी बुल्गारिया तथा तुर्की को अपने पक्ष में खींच लाने में सफल हो गये। इस चतुर्राष्ट्र सहबंध का मुखिया सैन्यवादी जर्मनी था, जिसके पास विराट सैन्य शक्ति थी और जो विश्व प्रभुत्व के सपने देख रहा था।

जर्मनी के विरोधी 'त्रिराष्ट्र सौहार्द' में अधिकाधिक राष्ट्र सम्मिलित होते जा रहे थे। सर्बिया और बेल्जियम ने और उसके बाद अलग अलग समयों पर जापान, इटली, रूमानिया तथा संयुक्त राज्य अमरीका और कई अन्य देशों ने भी जर्मन गुट के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी। युद्ध में सभी महाद्वीप खिंच आये थे, लेकिन संघर्ष के मुख्य स्थल यूरोप में कोई भी पक्ष अधिक प्रगति नहीं कर पा रहा था। एक एक चप्पा जमीन के लिए भयंकर लड़ाइयां लड़ी जा रही थीं। उदाहरण के लिए, १९१६ में वरदन के लंबे और खूनी युद्ध में दोनों पक्ष महीनों उलझे रहे, पर आगे न जर्मन बढ़ पाये और न फ्रांसीसी। १९१६ की गरमियों में साम्मे नदी के पास हुई लड़ाइयां भी ऐसी ही रक्तरंजित और व्यर्थ रहीं। बेशक, जर्मनों ने पूर्वी मोर्चे पर १९१५ में कई विजय प्राप्त कीं, पर वे रूस को युद्ध से निकाल देने के अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में असफल रहे। जैसे जैसे युद्ध खिंचता गया, वैसे वैसे यह भी प्रत्यक्ष होता गया कि उसमें सबसे अधिक आर्थिक सामर्थ्य रखनेवाले पक्ष की ही विजय होगी। जर्मनी की अस्थायी विजयों के बावजूद उसकी अंतिम पराजय सिर्फ समय का सवाल बनकर रह गयी थी।

युद्ध ने उत्पादक शक्तियों को अपार, अभूतपूर्व नुकसान पहुंचाया। उसमें मानवता का सौरभ विनष्ट हो गया – एक करोड़ नौजवान मारे गये और

तथा तात्की (रूस) थे। बहुत से दुलमुल लोग जो ऐसी वर्गों की नीति से असंतुष्ट हो गये थे पर अभी पूरी क्रांतिकारी चेतना नहीं प्राप्त कर पाये थे मध्यमार्गियों का अनुगमन करने लगे।

सितंबर १९१५ में साम्राज्यवादी युद्ध तथा आधिकारिक सामाजिक जनवादी नेताओं की अंधराष्ट्रवादी नीतियों के विरोधी समाजवादियों का पहला अंतराष्ट्रीय सम्मेलन स्विटजरलैंड के जिमरवाल्ड ग्राम में शुरू हुआ। प्रतिनिधियों में मध्यमार्गी, मध्यमार्गी झुकाव रखनेवाले समाजवादी और वामपंथी अंतराष्ट्रीयतावादी भी थे। सम्मेलन में लेनिन ने भी भाग लिया।

लेनिन इस सम्मेलन में इसलिए आये थे कि यह अंधराष्ट्रवादी समाजवादी नेताओं से नाता तोड़ने की दिशा में पहले कदम का परिचायक था। लेनिन का मुख्य लक्ष्य वामपंथी अंतराष्ट्रीयतावादियों को एक्यबद्ध करना था और इसमें उन्हें आंशिक सफलता प्राप्त हुई। इस सम्मेलन में जिमरवाल्ड वामपक्ष का उदय हुआ। यह अंतराष्ट्रीयतावादी और युद्धविरोधी समाजवादियों की दलबंदी थी जिससे आगे चलकर तीसरे इंटरनेशनल को पैदा होना था।

अप्रैल १९१६ में जिमरवाल्ड अंतराष्ट्रीय समाजवादी समिति ने किएन्थाल (स्विटजरलैंड) में एक और सम्मेलन का आयोजन किया। वामपंथी अंतराष्ट्रीयतावादियों को ऐक्यबद्ध करने के लेनिन के अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप जिमरवाल्ड वामपक्ष पिछले सम्मेलन के मुकाबले कहीं ज्यादा मजबूत हो चुका था और अपने निर्णयों तथा वैचारिक झुकाव के लिहाज से यह सम्मेलन महत्वपूर्ण प्रगति का परिचायक था।

औपनिवेशिक देशों पर युद्ध का प्रभाव

विश्वयुद्ध ने सभी औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों पर भी प्रभाव डाला। साम्राज्यवादी शक्तियों ने अपने उपनिवेशों तथा अधीनस्थ देशों का शत्रु के साथ अपने संघर्ष में रिजर्व की तरह उपयोग किया। भारत और अफ्रीका में पश्चिमी मोर्चे के लिए सैनिकों की जबरन भरती की गयी। दसियों हजार वियतनामियों को जबरदस्ती खाइयां खोदने और मोर्चाबन्दियों के पीछे काम करने के लिए फ्रांस ले जाया गया। समुद्र में हुई लड़ाइयों ने, विशेषकर जर्मन पनडुब्बियों की कार्रवाइयों ने एशियाई देशों तथा यूरोपीय शासक देशों के बीच सामान्य वाणिज्यिक सूत्रों को भंग कर दिया था। साथ ही शासक देश अब इस हालत में नहीं रहे थे कि अपने उपनिवेशों को उन सभी औद्योगिक वस्तुओं का निर्यात करते रहें, जो वे उन्हें अब तक बेचते आये थे।

सयुक्त राज्य अमरीका और जापान ने इन परिस्थितिया से विशेषकर बहुत लाभ उठाया और एशिया म यूरोपीय उपनिवशो को उनके निर्यात म काफी वृद्धि आयी। जापान ने चीन म अपन आर्थिक तथा राजनीतिक प्रभाव का ज्यादा सुदृढ करन के अलावा स्याम (थाइलैंड) इडोनेशिया और फिलिपीन म भी ज़ोरशोर के साथ प्रवेश प्रसार करना शुरू कर दिया।

तुर्की, जो युद्ध की पूववेला म ही जर्मन गुट मे सम्मिलित हो गया था, पूरी तरह स जर्मनी पर निर्भर था। ईरान, जिसने युद्ध म अपनी तट स्थता घोषित कर दी थी, दोनों युद्धरत शिविरो क बीच भयकर प्रतिद्वद्विता का अखाडा बन गया था।

जर्मनी ने ईरान के इगलैड और ज़ारशाही रूस के साथ विवादो का शाह-विरोधी गुटो को अपने पक्ष म लाने क लिए उपयोग करने का प्रयास किया। इरान जर्मन गुप्तचरो और अतर्ध्वसको का अड्डा बन गया। इगलैड को ईरानी तेल के भेजे जाने मे हर तरह स बाधाए खडी की जाने लगी। जर्मनी ने अफगान भारतीय सीमात पर झगडा पैदा करन की लक्ष्य स ईरान के ज़रिये अपने सैनिक मिशन अफगानिस्तान भी भेजे।

शीघ्र ही ईरान जर्मन तुर्क अभियान सेना और रूसी मेना क बीच लडाई का मैदान भी बन गया। उत्तरी ईरान मे होनवाली लडाइया पारकाक शिया की रूसी तुक लडाइयो का ही सिलसिला थी। जमन सरगरमिया का विफल बनान क ब्रिटेन तथा रूस क प्रयासो के परिणामस्वरूप ईरान लगातार इन दानो देशो के अधीनस्थ प्रदेश जैसा बनता चला गया।

युद्ध ने एशिया तथा अफ्रीका के जनगण की हालत का और भी ज्यादा खराब कर दिया। कृपिजन्य उपज की मडी के सीमित हो जान के कारण किसानो की हालत और खराब हो गयी। गावो मे और खासकर शहरा म कीमतें आसमान को छूने लगी। लेकिन साथ ही इन दशो का बूर्जुआजी खूब समृद्ध ही बना। इसका कारण यह था कि अपनी मडियो म जापान और अमरीका की बढती घुसपैठ क डर से यूरोपीय शक्तिया इन दशा मे स्थानीय उद्याग को और विशेषकर हलक उद्योग को प्रात्साहन दने लग गयी थी।

लगभग सभी एशियाई देशो मे जनसाधारण की हालत बिगड जान स वहा व्यापक जन असताप फैल गया। वहा आये दिन किसान बलव फूटन लग जो अक्सर धार्मिक साम्प्रदायिक रूप लिये होते थे।

बढते राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन म स्थानीय बूर्जुआज़ी ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की जिसने शासन मे सहभागिता की ओर अधिक आर्थिक अवसर प्रदान किये जान की माग पेश की।

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस ने अपने लखनऊ अधिवशन म माग की कि भारत को तत्काल स्वशासन दिया जाये भारतीया को सेना म उच्च पदा

42—352

पर किया जाय और सीमा शुल्क और वित्त विभागों पर भारतीयों का नियंत्रण हो। इन मांगों का मुस्लिम लीग ने भी समर्थन किया जिसका भी उस समय लखनऊ में ही अधिवेशन हुआ था। स्वशासन के वास्ते आंदोलन करने के लिए होमरूल लीगों की स्थापना की गयी।

इंडोनेशिया में युद्धकाल में इसलामी संघ एक जनव्यापी संगठन में परिणत हो गया। उसमें नेतृत्वकारी भूमिका क्रांतिकारी निम्न-बूर्जुआजी और वे लोग अदा करते थे जो वामपंथी सामाजिक जनवादी द्रिन्नूल पार्टी द्वारा स्थापित सामाजिक जनवादी संघ से संबंधित थे। इसलामी संघ ने अपने १९१६ के महाधिवेशन में विशेषकर अक्तूबर, १९१७ के महाधिवेशन में डच साम्राज्यवाद और देश में उसके प्रतिक्रियावादी गुरगों की सख्त आलोचना की।

१९१७ के महाधिवेशन ने एक प्रस्ताव स्वीकार किया, जिसमें 'कुत्सित पूंजीवाद' की भर्त्सना की गयी थी। युद्धकाल में देश में बहुत से मजदूर संघ पैदा हो गये और मजदूर रहन-सहन तथा कामकाज की बेहतर अवस्थाओं की अपनी मांगों को ज्यादा जोरदार तरीके से व्यक्त करने लगे।

फिलिपीन में बूर्जुआजी और उदारपंथी भूस्वामियों ने, जिनकी शक्ति युद्धकाल में बढ़ गयी थी स्वतंत्रता की अपनी मांग को तेज कर दिया और मेहनतकशों ने उसका सक्रिय समर्थन किया।

फ्रांसीसी हिन्दचीन में समाज के सभी स्तरों में असंतोष बहुत बढ़ गया था और सेना में जबरन भरती तथा दूभर वसूलियों के खिलाफ किसान दंगों ने कुछ स्थानों में सशस्त्र संघर्ष का रूप ले लिया था। १९१६ में एक किसान सेना ने सैगान (अब हो ची मिन्ह) पर चढ़ाई कर दी और उसे सर करके कुछ समय अपने कब्जे में रखने और कारागार को नष्ट करने में सफलता प्राप्त कर ली। कई जिलों में किसान जबरन भरती किये रंगरूटों को छुड़ाने में भी कामयाब हो गये। कई सामंतों ने भी इसी प्रकार अपने असंतोष को खुले तौर पर व्यक्त किया। ह्वे नगर में युवा सम्राट दुइ-तान के नेतृत्व में एक षड्यंत्र रचा गया। षड्यंत्रकारियों ने फ्रांसीसी रक्षक सेनाओं के कमजोर होने का लाभ उठाकर, जिनका काफी हिस्सा पश्चिमी मोर्चे पर भेज दिया गया था १९१६ में विद्रोह कर दिया। लेकिन अधिकांश सामंत उन्हें अपना समर्थन देने के लिए तैयार नहीं थे। इसके अलावा उनके विद्रोह की जड़ जनता में भी नहीं थी। फलस्वरूप विद्रोह को कुचल दिया गया और दुइ-तान को कैद करके रेयूनियों द्वीप पर निर्वासित कर दिया गया। उसकी जगह साम्राज्यवादियों के वफादार एक कठपुतली सम्राट को गद्दी पर बैठा दिया गया। यद्यपि इसके बाद भी जन विद्रोह होते ही रहे पर उनमें वांछित संगठन और नेतृत्व का अभाव था।

साम्राज्यवादियो को राष्ट्रीय मुक्ति आदोलन स निपटन और क्राति कारी उत्पातो का निरोध करने के लिए पचीदा चालो और तिकडमो का सहारा लेना पडा। औपनिवेशिक शक्तियो न राष्ट्रीय बूर्जुआजी और सपत्तिवान वर्गो का समर्थन और वफादारी प्राप्त करन के लिए हर तरह क वायद किय। सयुक्त राज्य अमरीका की काग्रस द्वारा १६१६ म पारित जान्स अधिनियम न अपन दश के शासन मे फिलिपीनियो की सहभागिता को बढा दिया और फिलिपीन को निकट भविष्य म ही स्वशासन दने का वचन दिया।

ब्रिटिश ससद की लोक सभा (हाउस आफ कामन्स) म भारत सचिव लाड मोटेग्यू द्वारा की गयी घोषणा ने भारत को शनै शनै डोमीनियन स्टेटस देने का वचन दिया। भारत मे वाइसराय लार्ड चम्सफोर्ड ने भी इसी तरह के वायदे किये। हालैंड भी इडानेशिया का १६१६ म राष्ट्रीय परिषद नामक प्रतिनिधिक निकाय देने का वचन दिया।

जनता की मागो का ध्यान म रखते हुए अरब देशो क मामले मे भी तरह तरह की तिकडम की गयी। इगलैंड न स्थानीय शासक वर्गो का समर्थन प्राप्त करके उस्मान साम्राज्य को कमजोर करन और वहा अपन प्रभाव को बढान की हर सभव कोशिश की। १६१६ म मिस्र को जिसे ब्रिटिश सरक्षित प्रदेश घोषित कर दिया गया था उच्चायुक्त न तुर्की क जर्मनी के पक्ष म युद्ध म शामिल होन के तुरत बाद मक्का के शाह हुसन को यह वचन दिया कि ब्रिटिश सरकार हाशिमी राजवश के अधीन स्वतत्र प्रभुसत्ता सपन्न अरब राज्य के निर्माण का समर्थन करगी। शाह हुसन न तुर्की क खिलाफ जिहाद का ऐलान कर दिया। इस लडाइ म अरब सनाओ का नतृत्व हुसेन क पुत्र फैजल न किया था जिस प्रसिद्ध ब्रिटिश एजट लारेंस (लारेंस आफ अरबिया) से सक्रिय सहायता मिली थी।

लेकिन इसीके साथ साथ मित्र देश उस्मान साम्राज्य के विभाजन क बारे म आपस म गुप्त समझौता करन म भी लगे हुए थे।

युद्धकाल म कई अफ्रीकी देशो म भी साम्राज्यवाद विरोधी आदोलन पैदा हो गया। युद्ध शुरू होते ही दक्षिणी सहारा म मित्र देशो और जर्मनी क बीच लडाई शुरू हो गयी थी। जर्मन पूर्वी अफ्रीका के सिवा जर्मनी क अन्य सभी अफ्रीकी उपनिवेशो को अग्रेजो और फ्रासीसियो न अपन कब्जे म ले लिया। अफ्रीकियो को सैनिको मजदूरो और खानसामाओ की हैसियत स काम करन के लिए जबरन भरती किया गया।

स्थानीय आबादी न अपन घरो से भागकर और कभी-कभी (मिसाल क लिए दहोमी और आइवरी कोस्ट म) खुला प्रतिरोध सगठित करक इन ज्यादतियो स बचन की कोशिश की। न्यासालैंड म अग्रज बागानमालिको क खिलाफ विद्रोह फूट पडा। दक्षिण अफ्रीका सघ म जबरदस्त हडताल फूट

पडी और १६१७ मे अफ्रीकी मजदूरो ने अपन पहले सम्मेलन का आयाजन करक औद्योगिक मजदूर सघ (इडस्ट्रियल वर्कर्स लीग) की स्थापना की, जिसन आगे चलकर अफ्रीकियो के लिए विशेष पासपोर्ट प्रणाली तथा जाताय विभेद क अन्य रूपा के खिलाफ प्रबल विरोध आदोलन का नतृत्व किया।

एशिया और अफ्रीका के सभी देशा का साम्राज्यवाद विराधी आदालन म १६१७ की महान अक्तूबर समाजवादी क्राति के बाद ज़बरदस्त उभार आ गया।

रूस मे क्राति का चढता ज्वार

युद्ध क लबा जान से कई यूरोपीय देशो को गभीर आर्थिक क्षति पहुची। उसन भीषण खाद्याभाव पैदा कर दिया और जनसाधारण की रहन सहन की हालत बिगडती ही गयी। युद्ध से बूर्जुआजी द्वारा बटोरे जानेवाले बेश मार मुनाफो न जनसाधारण के लिए युद्ध के साम्राज्यवादी स्वरूप का और भी ज्यादा स्पष्ट कर दिया। सेना तथा पुलिस की निगरानी के बढन और श्रम के सैन्यीकरण के बावजूद युद्धरत देशो म युद्ध और पूजीवादी उत्पीडन के खिलाफ जनव्यापी विरोध आदोलन तेजी के साथ फैलने लगा।

युद्ध के दूसरे ही साल जर्मनी मे सडको पर जबरदस्त जलूस निकलने लग और फ्रास तथा इगलैड म हडतालो का नया सिलसिला शुरू हा गया। १६१६ के वसत म आयरलैंड म ब्रिटिश शासन के विरुद्ध विद्रोह फूट पडा, जिसे ब्रिटिश सेनाओ ने कुचल दिया।

ज़ारशाही रूस म जिसकी अर्थव्यवस्था अन्य मुख्य युद्धरत शक्तिया की तुलना मे युद्ध के बाझ को झेलने मे कम समर्थ थी आर्थिक विश्रृखलता पर दबाव और खाद्याभाव विशेषकर सगीन हो गये थे।

सेना तक को रसद और साज़सामान क अभाव का सामना करना पड रहा था। जून १६१६ मे रूसी फौज ने जनरल ब्रुसीलोव की कमान म एक नया प्रत्याक्रमण शुरू किया और आस्ट्रियाई मोर्चे को तोडकर दो आस्ट्रिया हगेरियाई सेनाओ का लगभग पूरी तरह से सफाया करते हुए उसन गली शिया और बूकोविना को अधिकार म ले लिया। लेकिन इसके बावजूद रूसी सेना इस सफलता का लाभ न उठा सकी, क्योकि निर्णायक लडाइया के आत आते रूसी तोपखाने के पास पर्याप्त गाले नही रह गये थ।

सैनिका का राशन धीरे-धीरे कम होता चला गया। स्थानबद्ध युद्ध के बाझ के अलावा रूसी सैनिको पर अब भूख का अतिरिक्त बाझ आ पडा था। सना की सप्लाई व्यवस्था म भ्रष्टाचार का बालबाला था और इसके बार म फैलती अफवाह आम सैनिका का असताप और भी बढा दती थी।

उधर देश में अपने ही पहाड़ टूटी हुई भूख की मारी औरतों ने खान-पान के सामान की दुकानों को लूटा और युद्धविरोधी नारों के साथ सड़कों पर विरोध प्रदर्शन करने के लिए जलूस निकालना शुरू कर दिया था। इस हड़ताल आन्दोलन ने शीघ्र ही राजनीतिक स्वरूप ग्रहण कर लिया। १९१६ में खूनी रविवार की वार्षिकी के अवसर पर पेत्रोग्राद (जर्मनी के साथ युद्ध शुरू होने पर सेंट पीटर्सबर्ग का नाम यही हो गया था) के मजदूरों ने सड़कों पर क्रांतिकारी गीत गाते हुए और "जंग मुर्दाबाद!" के नारे लगाते हुए जलूस निकाला। देहातों में ऊपर असंतोष बढ़ गया था। गृहमंत्री को ज़ार को आगाह करना पड़ा "लोगों की देहातें १९०५ की भावना से भभक रहा है।" १९१६ की गरमियों में मध्य एशियाई और कज़ाख मेहनतकशों ने ज़ारशाही के औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया।

सैनिक असफलताओं और नये क्रांतिकारी उत्पात के खतरे ने बूर्जुआज़ी और कुछ भूस्वामियों में भी विरोध पैदा कर दिया। दूमा में बूर्जुआ भूस्वामी धड़ा तथाकथित प्रगतिशील गुट में संगठित हो गया और उसने "जनता का विश्वास पाने में" समर्थ उत्तरदायी सरकार की स्थापना किये जाने' क्रांतिकारी आंदोलन का कुचलने और युद्ध को विजयांतक परिणति तक ले जाये जाने की माँग की।

लेकिन शासक गुट ने दूमा के नेताओं के प्रस्तावों का तिरस्कार योग्य समझा। ज़ार निकोलाई द्वितीय की जर्मन पत्नी साम्राज्ञी अलेक्सांद्रा ने उनके बारे में लिखा था, "ये पिद्दी लोग उस मामले में हिस्सा लेने और दखल देने की कोशिश कर रहे हैं, जिनका उनसे कोई सरोकार नहीं है ... इससे कहीं बेहतर यह होगा कि वे अपने ही नालियों के मामले में व्यस्त रहें।"

ज़ारशाही की कमज़ोरी अक्सर होते रहनेवाले मन्त्रिमंडलीय परिवर्तनों में अत्यंत स्पष्टतापूर्वक प्रतिबिंबित होती थी। युद्ध के पहले दो वर्षों में रूस में चार प्रधान मंत्री और छः गृह मंत्री बदल गये। इन मन्त्रियों का साम्राज्य के शासक हलकों के भीतर भी कोई ज्यादा प्रतिष्ठा या सत्ता प्राप्त नहीं थी। शासक हलकों की आड़ में साम्राज्ञी के कृपापात्र ग्रिगोरी रास्पूतिन का वीभत्स व्यक्तित्व सक्रिय बनता जा रहा था। यह जाहिल और अधपढ़ा साइबेरियाई किसान दरबारी सामंतों और पदवीधारियों की स्त्रियों की अंधविश्वास और रहस्यवाद के चक्कर में आने की कमज़ोरी का बड़ी चालाकी के साथ उपयोग करके 'महात्मा' और 'दिव्यदृष्टा' बन बैठा था। साम्राज्ञी और उसके ज़रिये ज़ार को पूरी तरह से वशीभूत करने के बाद रास्पूतिन ने राज्यकार्य में खुलकर दखलदाज़ी करना शुरू कर दिया और ज़ारशाही आला कमान की सामरिक योजनाओं तक को भी प्रभावित करने की कोशिशें कीं।

१६०६ के अंत तक कट्टर से कट्टर राजतंत्रवादी भी शांति का शासन की खातिर जार निकोलाई द्वितीय को राजगद्दी से अलग करने की आवश्यकता के कायल हो चुके थे। उन्होंने रास्पूतिन की हत्या के साथ शुरुआत करने का निश्चय किया। उन्हें आशा थी कि इसके परिणामस्वरूप जार अपनी नीति बदलने के लिए मजबूर हो जायगा और बूर्जुआजी तथा भूस्वामियों के अधिक अनुकूल नीति पर चलना शुरू कर देगा। रास्पूतिन की हत्या राजा युसूपोव नामक प्रसिद्ध धनी के घर में की गयी और उसकी लाश को ठंड से जमी नेवा नदी में फेंक दिया गया। लेकिन इस आतंकवादी कारवाई के बाद भी जारशाही नीति में कोई परिवर्तन नहीं आया। जारशाही स्वेच्छाचारी शासन का रथ पूरी गति के साथ अपने आसन्न विनाश की तरफ दौड़ता चला गया।

स्वेच्छाचारी शासन का पतन

१६१७ के आरंभ में रूस में जन असंतोष बहुत तेजी के साथ बढ़ने लगा। सरदियों में युद्धजन्य अभावों को झेलना खासकर बहुत मुश्किल हो गया था। राजधानी में भी ईंधन की सख्त कमी थी और खाद्य सामग्री का भंडार खत्म होता जा रहा था। फरवरी में बीस लाख आबादी के इस महानगर में सिर्फ दस दिन योग्य आटा और तीन दिन योग्य मक्खन-तेल ही बाकी था। रोटी की दूकानों के सामने औरतों की लंबी कतारें घोर तुषार में भी घंटों इंतजार में खड़ी रहती थीं।

इन असहनीय परिस्थितियों में पेत्रोग्राद के सर्वहारा ने प्रचंड हड़ताल संघर्ष शुरू कर दिया। राजधानी के मजदूर १६०५ की क्रांतिकारी परंपराओं को भूले नहीं थे। जनवरी, १६१७ में 'खूनी इतवार' की बारहवीं सालगिरह के मौके पर डेढ़ लाख मजदूरों ने हड़ताल की। ३ मार्च को पुतीलोव कारखाने के, जो राजधानी के सबसे बड़े कारखानों में एक था, मजदूरों ने काम करना बंद कर दिया। प्रबंधकों ने कारखाने की तालाबंदी की घोषणा कर दी और मजदूर सड़कों पर निकल आये, जहां रोटी की दूकानों पर कतार लगाकर खड़ी स्त्रियां भी उनके साथ आ मिलीं। राजधानी के दूसरे कारखानों के मजदूरों ने भी उनकी हमदर्दी में हड़ताल कर दी और सड़कों पर निकल आये।

८ मार्च तक ९०००० मजदूर हड़ताल में शामिल हो चुके थे और दो दिन बाद वह ढाई लाख मजदूरों की आम हड़ताल में बदल गयी। सड़कों पर बोल्शेविक पार्टी की पेत्रोग्राद समिति के परचे बांटे गये, जिनपर ये नारे छपे हुए थे—"जारशाही स्वेच्छाचार मुर्दाबाद! जंग मुर्दाबाद! दुनिया के मजदूरों का भाईचारा जिंदाबाद!

ज़ारशाही सेनाधिकारियो न प्रदशनकारियो को तितर बितर करन के लिए फौजी दस्ते भेजे। स्त्रिया न सैनिको का घर लिया और उनसे जनता पर गोली न चलान का अनुरोध किया। सैनिक हिचकिचाहट म पड गय। पत्राग्राद के एक प्रमुख चौक म जिसका नाम अब प्लोश्चद वस्स्तानिया (विप्लव चौक) है, जब एक पुलिस अफसर न भीड पर गोली चलान का हुक्म दिया, तो एक कज्जाक सैनिक अपनी तलवार भाजते हुए उसी पर यपट पडा।

११ मार्च को राजधानी क विभिन्न भागो म सारे दिन सडको पर मुठभड चलती रही। जार निकोलाई द्वितीय उस समय राजधानी स सैकडो किलोमीटर दूर मोगिल्योव मे था जहा उस समय सेना का सदर मुकाम स्थित था। राज्य दूमा के अध्यक्ष मिखाईल रोद्ज्याको न तार पर तार भेजकर जार से एक ऐसी सरकार कायम करन का अनुरोध किया कि जिस देश का "विश्वास प्राप्त" हो। लेकिन जार का कोई रिआयत देन का इरादा नही था।

१२ मार्च की सुबह वोलीन्स्की रेजीमट क कैडेटो न विद्रोह कर दिया अपन कमाडर को मार डाला और सडको पर जाकर मजदूरो क साथ मिल गय। इसक बाद नगर सेना की अन्य रेजीमटो न भी सामूहिक विद्रोह कर दिया और व क्राति के पक्ष म चली गयी। शस्त्रागार पर कब्जा कर लिया गया और मजदूरो न ४० हज़ार रायफल अपन कब्जे म ल ली। पुलिस मुख्यालय और कचहरियो को आग लगा दी गयी। विद्रोही रेजीमटो क सैनिक और मजदूर जलो म जा घुस और उन्होन राजनीतिक बंदियो को आजाद कर दिया। सडको पर पुलिसवालो को निरस्त्र कर दिया गया और ज़ारशाही मत्रियो तथा जनरलो को गिरफ्तार करना शुरू कर दिया गया।

तत्काल उपाय किय जान चाहिए क्योकि कल समय निकल चुका होगा रोद्ज्याको न जार को तार भेजा। निकोलाई द्वितीय न दूसरा जवाब दूमा को निलबित करन के आदेश स दिया।

१२ मार्च, १९१७ की शाम तक पत्राग्राद विद्रोही जनसाधारण क हाथो म आ चुका था। रूस म उस समय प्रचलित पचाग क अनुसार उस दिन २७ फरवरी थी। यही कारण है कि राजधानी म विजयमान दूसरी रूसी क्राति इतिहास म फरवरी क्राति क नाम म विख्यात है।

इधर पत्रोग्राद की सडको पर क्रातिकारी तूफान आया हुआ था उधर दूमा म आतकग्रस्त बूर्जुआ नेता जल्दी जल्दी एक अस्थायी समिति का निर्माण करन म लग हुए थे। उसी दिन (१२ मार्च को) मजदूर और सैनिक प्रतिनिधियो की पत्राग्राद सोवियत की पहली बैठक हुई। इसक बार म जानन पर अगले दिन १३ मार्च को दूमा की अस्थायी समिति न सरकार

की बागडोर को अपने हाथो म ले लेन का ऐलान किया। पेत्रोग्राद सोवियत के नेताओ मे जो समझौतावादी थे उन्हाने इस निर्णय का तुरत अनुमोदन कर दिया। १५ मार्च को औपचारिक रूप म एक अस्थायी सरकार का निर्माण किया गया, जिसम अधिकाश मत्री बूर्जुआ पार्टियो के सदस्य थे। उनम एकमात्र लोकतत्रवादी" करेन्स्की नामक वकील था, जो पेत्रोग्राद सोवियत मे वामपथी लफ्फाजी किया करता था। वह अस्थायी सरकार म न्याय मत्री बन गया।

उसी दिन, १५ मार्च को, रेल मजदूरो न जार की पेत्रोग्राद आती ट्रेन को प्स्कोव स्टेशन पर रोक लिया और जार को वही के वही, अपने शाही डिब्बे म ही, राज्य परित्याग प्रपत्र पर हस्ताक्षर करन पडे।

जारशाही का तख्ता उलटा जा चुका था। उसका पतन रूसी जनता की क्रातिकारी शक्तियो की विजय की बदौलत हुआ था, जिसका नेतृत्व वीर मजदूर वर्ग ने किया था और जिसे करोडो किसानो का समर्थन प्राप्त था, जिनके बेटो न, सैनिक वरदियो मे इस बार सकल्पपूर्वक क्राति के पक्ष म कदम उठा लिया था। रूस के समस्त जनगण न और सारी प्रगतिशील मानव जाति न जारशाही स्वेच्छाचारी शासन के उलट जान की खबर का हर्षातिरेक के साथ स्वागत किया।

यूरोप में क्रातिकारी सकट

जैसे जैसे युद्ध और उसके साथ साथ करोडो लोगो के बलिदानो कष्टो और अभावो का अतहीन सिलसिला खिचता गया, वैसे-वैसे जन असतोष भी अधिकाधिक बढता चला गया। अधिकाश युद्धरत देशो म और विशेषकर रूस आस्ट्रिया हगरी तथा जर्मनी मे यह असतोष अपने आपको खुले दगो के रूप म अभिव्यक्त करन लगा और राजनीतिक वातावरण अत्यधिक तेजी के साथ क्षुब्ध होता गया।

जब लेनिन न सितबर १९१४ म पहली बार यह विचार प्रकट किया था कि साम्राज्यवादी युद्ध क्राति की तरफ ले जायेगा और सारी कोशिश इस दिशा मे ही की जानी चाहिए तो सामाजिक अधराष्ट्रवादियो ने उनके शब्दो को खुले अविश्वास तथा उपहास के साथ और मध्यमार्गियो न व्यग्य पूर्ण मुसकानो और सशय के साथ ग्रहण किया था।

लेकिन सिर्फ तीन ही साल बाद घटनाओ न लेनिन के विचारो की पूर्णत पुष्टि कर दी थी। मार्च १९१७ मे (तत्कालीन रूसी पचाग के अनुसार फरवरी मे) पेत्रोग्राद म जनव्यापी क्राति का समारभ हो गया था और उसके परिणामस्वरूप कुछ ही सप्ताह के भीतर – नगण्य प्रतिरोध के साथ –

रोमानोव राजवंश का तख्ता उलट दिया गया था, जो देश पर पिछली तीन सदियों से शासन करता आया था।

रूस की फरवरी क्रांति तो क्रांतियों के उस सिलसिले में महज सबसे पहली ही थी, जिसने सारे यूरोप को हिला दिया। अक्तूबर, १९१८ में हाप्सबुर्ग राजवंश का तख्ता उलट गया और आस्ट्रिया-हंगरी साम्राज्य विखंडित हो गया। नवंबर, १९१८ में जर्मनी में भी क्रांति की विजय हो गयी और वह अपने साथ होहेनजोलर्न वंश का भी सिंहासन से बहाती ले गयी और दंभी और घमंडी कैसर विल्हेल्म द्वितीय को अपने परिवार को छोड़कर शरण लेने के लिए हालैंड भागकर जाना पड़ा। लेनिन की भविष्यवाणी के अनुसार ही यूरोप में साम्राज्यवादी युद्ध गृहयुद्ध में परिणत हो रहा था।

समाजवादी क्रांति के पथ पर

यद्यपि रूस में समझौतावादियों ने बूर्जुआजी को शासन की बागडोर हथियाने का मौका दे दिया था, फिर भी बूर्जुआ अस्थायी सरकार के लिए अब मजदूर तथा सैनिक प्रतिनिधियों की सोवियतों के रूप में विद्यमान दूसरी सत्ता की उपेक्षा कर पाना संभव नहीं रह गया था। इसके परिणामस्वरूप एक विचित्र परिस्थिति उत्पन्न हो गयी, जिसे लेनिन ने "दोहरी सत्ता" की संज्ञा दी थी।

जनसाधारण के दबाव में सोवियतों के समझौतावादी नेताओं को ऐसे कदम उठाने पड़े, जो अस्थायी सरकार की राजनीतिक लाइन के खिलाफ जाते थे। उदाहरण के लिए, पेत्रोग्राद सोवियत के आग्रह पर जन मिलीशिया की स्थापना की गयी, जन न्यायालयों का चुनाव किया गया और प्रत्येक सैनिक इकाई में कमानाधिकारियों पर नियंत्रण रखने के लिए विशेषतया निर्वाचित सैनिक समितियां कायम की गयीं।

अप्रैल, १९१७ में लेनिन रूस वापस लौट आये और उन्होंने सारी सत्ता सोवियतों को शांतिपूर्वक हस्तांतरित करने का नारा दिया: "अस्थायी सरकार का कोई समर्थन नहीं! सारी सत्ता सोवियतों को!"

लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविक जनसाधारण को राजनीतिक शिक्षा देने और संगठित करने में, समझौतावादियों का पर्दाफाश करने और सोवियतों के कार्यकारी निकायों में बहुमत प्राप्त करने में लग गये। इस सारे काम का लक्ष्य क्रांति को उसकी बूर्जुआ अवस्था से समाजवादी अवस्था में रूपांतरण करना था।

लेनिन के विचारों का प्रभाव अधिकाधिक बढ़ता गया। लोग शांति के लिए आतुर थे, मगर अस्थायी सरकार फिर भी युद्ध को चलाते रहने के

ही पक्ष म थी। उसका नारा था— 'युद्ध का विजयपूर्ण परिणति तक ल जाओ।' जून म रूसी सनाओ न ल्वोव पर एक असफल प्रत्याक्रमण शुरू किया और सितंबर म रीगा का विश्वासघातपूर्वक जमनी क हाथो म चल जान दिया गया। बूर्जुआ मंत्रियो की जनविरोधी नीतियो स मजदूरो और किसानो म असतोष बढ़न लगा जो शांति रोटी और आजादी क आकाक्षी थ। लकिन अस्थायी सरकार का जनता की मागो को पूरा करन का कोई इरादा नही था।

जुलाई १९१७ म मजदूरो और सैनिको की भीड़ न पत्रोग्राद की सड़को पर निरतर सारी सत्ता सोवियतो को हस्तातरित किय जान की माग की। अस्थायी सरकार क आदश पर इस शातिपूर्ण जलूस पर प्रतिक्राति कारी सैन्य दलो न गोलिया चलायी। इसक बाद बूर्जुआजी न समझौता वादियो की सहायता स पूरी तरह स सत्ता को हथिया लिया और करन्स्की प्रधान मंत्री बन गया। बोल्शविको क खिलाफ भयकर दमनचक्र चला दिया गया और लनिन को जिनकी जिदगी खतर म पड़ गयी थी राजधानी पत्रोग्राद क बाहर राज्लीव झील क पास एक निर्जन जगह म जाकर अज्ञातवास करना पड़ा।

क्राति का शातिमय दौर खत्म हो चुका था। बोल्शविको की छठी काग्रेस न जो छिप तौर पर हुई थी मजदूर वग को गरीब किसानो क साथ मिलकर बूर्जुआजी की तानाशाही को उलट दन और बलप्रयोग द्वारा, सशस्त्र विद्रोह क जरिय सत्ता को अपन हाथो म ल लन क लिए ललकारा। यह समाजवादी क्राति क लिए ललकार थी।

कालानुक्रमणिका

ईसा पूर्व

चौथी सहस्राब्दी का उत्तरार्ध	– मिस्र और मैसोपोटामिया म दासप्रथा, राज्य और लेखन का आविर्भाव
तीसरी सहस्राब्दी	– मिस्र का पुरातन राज्य
२१५० से सोलहवी शती तक	– मिस्र का मध्य राज्य
२३६६	– अक्काद के नेतृत्व म मैसोपाटामिया का एकीकरण
२०२४	– मैसोपोटामिया पर अमारियो और एलामिया के हमले
दूसरी सहस्राब्दी का पूर्वार्ध	– एशिया ए कोचक म दासप्रथात्मक समाज की स्थापना
	– बाबुली साम्राज्य का अभ्युदय और हमुराबी के शासनकाल म उसका स्वर्ण युग
अठारहवी सत्रहवी शती	– वर्णमाला का आविष्कार सिनाई लिपि
१७०० १५७०	– मिस्र पर हिक्सोमा का अधिकार
सालहवी शती से १०५० तक	– मिस्र मे नूतन राज्य

पद्रहवी शती	– एशिया ए कोचक म हित्ती राज्य का उत्कर्ष
पद्रहवी तरहवी शती	– यूनान म एक्रियाई काल
दूसरी सहस्राब्दी का उत्तरार्ध	– फराऊन तूथमासिस तृतीय क विजयाभियान
दूसरी सहस्राब्दी का मध्य	– चीन म शाग यिन राज्य की स्थापना
१८००	– मिस्र म फराऊन अमनहातप चतुर्थ के धार्मिक सुधार
१३१७ १२५१	– रामसस द्वितीय क विजयाभियान
दूसरी सहस्राब्दी का मध्य	– गगा घाटी सभ्यता
बारहवी शती	– त्रोय की लडाई
	– यूनान पर दारिया का आक्रमण
११२२ ७७१	– चीन मे चाऊ वश का शासन
ग्यारहवी नौवी शती	– यूनान म होमरी काल
दूसरी सहस्राब्दी का अत	– उत्तरी ईरान म आर्य कबीला का आगमन
– पहली सहस्राब्दी का आरभ	
पहली सहस्राब्दी का आरभ	– उरार्तू राज्य की स्थापना
दसवी शती	– फिनीशियाई नगरो का प्रकर्ष
आठवी शती	– उरार्तू राज्य का उत्कर्ष
	– अशर राज्य का चरमोत्कर्ष
७५३	– रोम की स्थापना (परपरानुसार)
आठवी छठी शती	– यूनानी उपनिवेशा का प्रसार
आठवी शती	– एशिया ए कोचक म यूनानी नगरा का विकास
सातवी शती का अत	– मीडिया का उत्थान

छठी शता	— लैटियम पर एत्रूरियाइया का अधिकार
	— फारस का उत्थान
छठी पाचवी शती	— भारत म बौद्ध धर्म का प्रसार
५९४	— अथम म सोलान क सुधार
५८६	— यरूशलम पर बाबुलियो का अधिकार
	— यहूदिया राज्य का अत
५५०	— फारस क शाह कुरूप क द्वारा मीडा की पराजय
५४७	— कुरुप की आर्मीनिया तथा कपाडाशिया की विजय
५४६	— कुरुप द्वितीय द्वारा लीडिया की विजय
५३८	— बाबुल पर पारसीका का कब्जा
५२५	— पारसीको द्वारा मिस्र विजय
	— पारसीक साम्राज्य की स्थापना
५१० ५०९	— क्लीस्थेनीज द्वारा अथनी सविधान म सुधार
५०९	— रोमन गणराज्य की स्थापना (परपरानुसार)
५०० ४९३	— फारस के विरुद्ध आयोनी नगरा का विद्रोह
५०० ४४९	— फारस यूनान युद्ध
पाचवी चौथी शती	— चीन म कनफूशस और ताओ मता का प्रसार
४९०	— अतीका पर पारसीक हमला मैराथन युद्ध म यूनानिया की विजय
पाचवी तीसरी शती	— चीन म चान कुआ (लडनवाल राज्या का) काल
४८०	— थर्मापीली और सलामीस म पारसीका पर यूनानिया की विजय
४७९	— प्लातीआ और मिकाल क युद्ध
४७८	— दीलोमी सघ (पहल अथनी नौसैनिक सघ) की स्थापना
पाचवी सदी का मध्य	— अथस म लोकतत्र का उत्कर्ष

४३१-४०४	– अथेस और स्पार्ता के बीच पेलापोनिनियाई युद्ध
३९५ ३८६	– कोरिंथी युद्ध
३९०	– गालो द्वारा रोम का विध्वस
३७८	– दूसरा अथेनी नौसैनिक सश्रय
३४३ २९०	– सेमनीती युद्ध, मध्य इटली पर राम के प्रभुत्व की स्थापना
३३४-३२४	– सिकदर महान क पूर्वी अभियान
३२४	– भारत म मौर्य वश की स्थापना
३२१ २७६	– सिकदर के साम्राज्य का विघटन, उसके उत्तराधिकारियो के बीच लडाइया, यूनान प्रभावित राज्यो का उदय
२८० २७५	– पीरस के इटली तथा सिसली अभियान
२६४ २४१	– पहला प्यूनिक युद्ध
२१८-२०१	– दूसरा प्यूनिक युद्ध
२१६	– कैंनी के युद्ध म रोम की पराजय
२१५ २०५, २००-१९७ १७१-१६७	– मकदूनिया के विरुद्ध रोम की लडाइया
१४९-१४६	– तीसरा प्यूनिक युद्ध, कार्थेज का विनाश
१४६	– कोरिथ का भूमिसात्करण यूनान पर राम का अधिकार
१४० ८७	– हान वश के शासन म चीन का उत्वर्प
१३६ १३२	– सिसली म पहला दास विद्रोह
१३३-१२३	– रोम क सामान्यजनो का कृपि आदालन, – ग्राक्स वधुओ (तिबेरियस और गयस) के कृपि सुधार
१०४ ९९	– दूसरा दास विद्राह

६० ८८	–रोमन गृहयुद्ध इतालवी नगरो का रोम के विरुद्ध विद्रोह
८९ ६४	–पोंतस के राजा मिथ्रीदतीज के विरुद्ध रोम की लड़ाई
७३ ७१	–दक्षिणी इटली में स्पार्तक्स के नेतृत्व में तीसरा दास विद्रोह
६५ ६३	–पांपी का पूर्वी अभियान
६०	–पांपी सीज़र और क्रासस का पहला त्रिशासकत्व
५८ ५१	–सीज़र की गाल विजय
५४ ५१	–रोमनों के खिलाफ गालों का विद्रोह
५४ ५३	–पारसीकों के विरुद्ध क्रासस के अभियान
४९-४५	–रोमन गृहयुद्ध जूलियस सीज़र का अधिनायक बनना
१५ मार्च, ४४	–सीज़र की हत्या
४३ ३१	–अंतोनियस, ओक्तवियन और लेपीदस का दूसरा त्रिशासकत्व पुन गृहयुद्ध
३१-३०	–रोम की मिस्र विजय
२७ १४ ई०	–रोमन सम्राट आगस्तस का शासन
ईसवी	
पहली शती	–रोमन साम्राज्य के पूर्वी प्रांतो में ईसाई धर्म का प्रसार –गाल अफ्रीका और ब्रिटेन में रोम के विरुद्ध विद्रोह
१८ २८	–चीन में 'लाल भौहवालों' का विद्रोह
६६ ७०	–फिलिस्तीन में यहूदियों का विद्रोह
पहली शती का अंत–दूसरी शती का आरंभ	–रोमन साम्राज्य का उत्कर्ष काल

१८४-२०८	–चीन मे 'पीली पट्टावालो' का विद्रोह
तीसरी शती	–रोमन साम्राज्य म सामाजिक आर्थिक सकट
३१३	–सम्राट कोस्तान्तीन का मिलान राजादेश
३३०	–रोमन साम्राज्य की राजधानी का कुस्तुतुनिया म स्थानातरण
३७०-३८०	–हूणो के हाथो गोथो की हार और यूराप पर हूणो के हमले
३९५	–रोमन साम्राज्य का पूर्वी और पश्चिमी साम्राज्यो मे पूर्ण विभाजन
४१०	–अलेरिक के नतृत्व म विसीगोथो की रोम विजय
४५१	–शैलो के युद्ध म अतीला और उसकी हूण सेनाओ की पराजय
४५५	–वैडलो द्वारा रोम की लूटपाट
४७६	–पश्चिमी रोमन साम्राज्य का अत
पाचवी सती का मध्य–आठवी शती का आरभ	–स्पेन का विसीगोथ राज्य
पाचवी सदी का उत्तरार्ध	–जापान मे आरभिक सामती राज्य का उदय
पाचवी सदी का अत	–भारत मे गुप्त साम्राज्य का पतन
४९३ ५५५	–इटली का ओस्त्रोगोथ राज्य
५३२	–कुस्तुतुनिया का नीका विद्रोह
५३५-५५५	–वैजतिया द्वारा इटली के ओस्त्रोगोथ राज्य की विजय
५६३ ५६७	–तुर्को द्वारा श्वेत हूण राज्य का विध्वस, मध्य एशिया म तुर्क खाना की सत्ता की स्थापना
५६८-लगभग ६००	–इटली म लबार्ड राज्य की स्थापना
५८३-५८६	–मध्य एशिया म बगावते
५८९	–चीन का एकीकरण

६३७ ६५१	– अरवो की ईरान विजय
६४५	– जापान म ताइक्वा सुधार
६६१ ७५०	– उमैया खिलाफ्त
सातवी सदी का अत – आठवी सदी का आरभ	– कारिया का सिल्ला राज्य
७५० ९४५	– अब्बामी खिलाफ्त (आध्यात्मिक नतृत्व १२५८ तक)
८१६ ८३७	– आजरबैजान और पश्चिमी ईरान म बावेक के नतृत्व म किमानो के विद्रोह
८१९ ९९९	– मध्य एशिया म सामानी वश का राज
नौवी सदी	– प्राचीन रूस म राज्य का आविर्भाव, ईरान स अरवो का निष्कासन
८२९	– इगलैड म वेसैक्स के अधीन आग्ल सैक्सनी राज्यो का एकीकरण
नवी सदी का उत्तराध	– सीरिया (शाम) मिस्र और फिलिस्तीन मे अरव शासन का अत
९५०	– स्वतत्र वियतनामी राज्य की स्थापना
दसवी सदी का उत्तरार्ध	– पोलिश राज्य का उदय
१०६६	– नार्मनो द्वारा इगलैड की विजय
१०९६ १०९९	– पहला धर्मयुद्ध
११२७	– उत्तरी चीन मे हान जुर्चेन राज्य की स्थापना
११४७ ११४९	– दूसरा धर्मयुद्ध
११८९-११९२	– तीसरा धर्मयुद्ध
१२१५	– इगलैड म मैग्ना कार्टा पर हस्ताक्षर
१२३७ १२४०	– बातू खा की फौजो द्वारा रूमी रजवाडा की विजय
१२४२ अप्रैल ५	– वर्फ पर नरमेध पाइपस झील पर रूसिया के हाथो ट्यूटोनी नाइटो की पराजय

१२५८	–बगदाद पर मगोलो का कब्जा
१२६५	–इगलैण्ड की प्रथम पार्लियामेंट
१२७०	–अतिम (आठवा) धर्मयुद्ध
१३०२	–फ्रास म पहली बार स्टेटस-जनरल का समाह्वान
१३३७ १४५३	–शतवर्षीय युद्ध
१३५६	–जर्मन सम्राट कार्ल चतुर्थ का स्वर्ण आदेशपत्र
१३८०	–कुलिकोवो की लडाई स्वर्ण ओर्दू पर रूसिया की पहली वडी विजय
१३८१	–इगलैड मे वाट टाइलर के नेतृत्व मे किसान विद्रोह
१४१०	–ग्रियूनवाल्ड की लडाई
१४१६ १४३७	–बोहेमिया मे हुसपथी युद्ध (महान कृपक युद्ध)
१४५३	–कुस्तुतुनिया पर तुर्को का कब्जा, बैजती साम्राज्य का अवसान
१४५५ १४८५	–गुलावा की लडाई
१४८०	–तातार मगोल अधिपत्य स रूस की मुक्ति
१४६२	–कोलवस द्वारा अमरीका की खोज
१४६७-१४६८	–वास्को द गामा द्वारा भारत क समुद्रमार्ग की खोज
१५१७	–जमनी म धर्मसुधार आदोलन की शुरूआत
१५१६ १५२२	–मजलान की पहली विश्व परिक्रमा
१५२४-१५२५	–जर्मनी म महान कृपक युद्ध
१५२६	–भारत म महान मुगल साम्राज्य की स्थापना
१५६६	–नीदरलैंड म वूर्जुआ क्राति की शुरूआत
१५७२ अगस्त २४	–फ्रास म सट वार्थोलाम्यू हत्याकाड

१६०३	– जावा म पहले डच उपनिवेश की स्थापना, जापान म तोकूगावा शोगनशाही की स्थापना
१६२७ १६४५	– चीन म किसान युद्ध
१६४० १६६०	– इगलैड की बूर्जुआ त्राति
१६४०, अप्रैल-मई	– अल्पकालीन पार्लियामट
१६४० १६५३	– दीर्घकालीन पार्लियामट
१६४१, नववर	– चार्ल्स प्रथम के विरुद्ध पार्लियामट का महान विरोध प्रस्ताव (ग्रेड रिमास्ट्स)
१६४२ अगस्त	– इगलैड म गृहयुद्ध की शुरूआत
१६४४ १६८३	– मचू शासन के विरुद्ध चीनी प्रातो म विद्रोह
१६४८-१६५४	– पोल शासन के विरुद्ध तथा रूस के साथ सम्मिलन के लिए उक्रइना म बोग्दान स्मेल्नीत्स्की के नतृत्व मे विद्रोह
१६४९, जनवरी ३०	– इगलैड के चार्ल्स प्रथम को फासी
मई, १९	– इगलैड मे गणराज्य की उदघोषणा
१६५१	– ब्रिटिश पार्लियामट द्वारा नौपरिवहन अधिनियम पारित
१६५३, दिसबर १६	– क्रामवेल द्वारा ससद भग और परम सरक्षक (लॉर्ड प्रोटेक्टर) बनना
१६५४, जनवरी	– रूस और उक्रइना का सम्मिलन
१६५४	– आयरलैड और स्काटलैड का इगलेड म सम्मिलन
१६५४ १६६७	– रूस पोलैड युद्ध
१६६०	– इगलैड मे स्टुअर्ट वश का पुन सिहासनारोहण
१६६७-१६७२	– रूस मे स्तपान राजिन के नतृत्व म किसान विप्लव

१६७४	–शिवाजी का राज्याभिषेक
१६८८-१६८९	–इगलेड मे गारवमय क्राति (ग्लारियम रिवोल्यूशन)
१६८९	–रूस और चीन के बीच नरचिस्क की सधि
१६९९	–तुर्की, आस्ट्रिया पोलैड और वनिस के बीच कार्लोविटज की सधि
१७००-१७२१	–रूस और स्वीडन क बीच उत्तरी युद्ध
१७०१-१७१४	–स्पेनी उत्तराधिकार युद्ध
१७०९ जून २७	–पोल्तावा की लडाई म स्वीडो पर रूसिया की विजय
१७१०-१७१५	–पजाब मे किसान विद्रोह
१७११	–पीटर महान द्वारा सीनेट की स्थापना
१७२१	–नीश्ताद की शाति सधि और उत्तरी युद्ध का अत , –रूस का साम्राज्य घोषित किया जाना
१७२८	–रूस और चीन के बीच क्यात्ता की सधि
१७३९	–फारस के शाह नादिरशाह द्वारा दिल्ली की लूट
१७४० १७४८	–आस्ट्रियाई उत्तराधिकार युद्ध
१७५६ १७६३	–इगलैड और फ्रास क बीच सप्तवर्षीय युद्ध
१७५७	–चीनी वदरगाहा म (मकाआ के अलावा) विदेशी व्यापारिया का प्रवश निषध
१७१५ १७५९	–जुगार तथा काशगर पर चीन का अधिकार
१७६४	–बक्सर म अवध क नवाब और अफगाना की सयुक्त सेना की अग्रजा क हाथा पराजय
१७६७ १७६९	–अग्रजा क खिलाफ मैसूर का सघर्ष

१७६८ १७७४	– रूस-तुर्की युद्ध
१७७४	– कुचूक कैनार्जी की सधि तुर्की द्वारा रूस का वडी रिआयत दिया जाना
१७६६	– चीन की बमा विजय
१७७३ १७७५	– रूस म पुगाचाव क नतृत्व म किसान विप्लव
१७७४ सितवर ५ स अक्तूबर २६ तक	– उपनिवशो की पहली महाद्वीपीय काग्रेस
१७७५ १७८३	– अमरीकी स्वाधीनता सग्राम
१७७५	– फिलाडेल्फिया म दूसरी महाद्वीपीय काग्रस का उद्घाटन
१७७६, जुलाई ४	– सयुक्त राज्य अमरीका की स्वाधीनता की उदघापणा
१७८३	– क्रीमिया का रूस म सम्मिलन
१७८३, सितवर ३	– वर्साई की सधि अमरीकी स्वाधीनता की मान्यता
१७८५	– येकातरीना द्वितीय का अभिजाता को अनुग्रह पत्र '
१७८७	– सयुक्त राज्य अमरीका क दूसर सविधान का अगीकरण
१७८८-१७६०	– वियतनाम द्वारा चीन के सरक्षकत्व की मान्यता
१७८६	– अमरीकी काग्रेस द्वारा अधिकारपत्र (विल आफ राइट्स) पारित
जुलाई १४	– वस्तील पर धावा और फ्रासीसी क्राति की शुरूआत
अगस्त ४ ११	– मुआवजा दकर सामती दायित्वा स किसाना की मुक्ति से सवधित फ्रासीसी सविधान सभा की आनप्तियां

अगस्त २६	– मानव अधिवारा की फ्रासीसी घोपणा
अक्तूबर ५-६	– वसाई की आर प्रयाण
नवम्बर	– चर्चो की जमीना की जब्ती स सबधित फ्रासीसी सविधान सभा की आनप्ति
१७६१ जून १४	– ले शपेलिये का फ्रास म मजदूर सघा पर पाबदी लगानवाला कानून
अगस्त २७	– आस्ट्रिया तथा प्रशा द्वारा पहले फ्रास विराधी सहबध का निर्माण
सितबर ६	– फ्रासीसी सविधान का अगीकरण
१७६२ अप्रैल २०	– फ्रास द्वारा आस्ट्रिया के विरुद्ध युद्ध की घापणा
अगस्त १०	– पेरिस मे जन विद्रोह, राजतत्र का पतन
सितबर २१	– राष्ट्रीय कवेशन का उद्घाटन, फ्रास मे गणराज्य की उद्घोपणा
१७६२-१८०७	– तुर्की के सुलतान सलीम तृतीय के सुधार
१७६३ जनवरी २१	– लुई सोलहव को मृत्युदड
फरवरी १	– फ्रास द्वारा इगलैड के विरुद्ध युद्ध की घोपणा
मई ३१-जून २	– पेरिस म जन विद्रोह, जैकोबिनो द्वारा क्रातिकारी अधिनायक्त्व की स्थापना
जून ३ जुलाई १७	– सामती अधिकारा तथा दायित्वो का बिला मुआवजा उन्मूलन
जून २४	– कवेशन द्वारा नये फ्रासीसी सविधान का अगीकरण
जुलाई १३	– मरात की हत्या
१७६४ मार्च अप्रैल	– एबेरपथियो और दातोपथियो की गिरफ्तारी और मृत्युदड
जुलाई २७	– ६ थर्मीदोर की प्रतिक्राति

१७९५, अगस्त २२	– फ्रास मे क्राति सवत ३ का सविधान पारित
१७९५ १७९९	– डायरेक्टरी
१७९६	– ग्राक्स बावफ के नतृत्व म समानो का षड्यत्र
१७९६-१८०४	– चीन मे श्वत कमल गुप्त समाज के नतृत्व म किसानो का विद्रोह
१७९८, मई-जून	– आयरलैड म विनगर हिल विप्लव
१७९८-१८०२	– फ्रास के विरुद्ध दूसरा (इगलैड, नपल्स, आस्ट्रिया रूस और तुर्की का) सहबध
१७९९, नवबर ९-१०	– अठारहवी ब्रूमेर का सत्तापरिवर्तन, नपोलियन का सत्ता मे आना
१७९९-१८०४	– फ्रास म कोसुलशाही
१७९९	– अग्रेज़ो की मैसूर विजय
१८०१, फरवरी ९	– फ्रास तथा आस्ट्रिया के वीच ल्यूनवील की शाति सधि
१८०२, मार्च २७	– ब्रिटेन और फ्रास के बीच आम्ये की शाति सधि
अगस्त २	– नेपोलियन आजीवन कोसुल घोषित
१८०३ १८०५	– मराठा राज्यो के विरुद्ध ईस्ट इडिया कपनी की लडाइया
१८०४, मई १८	– नेपोलियन सम्राट घोषित
१८०५, अगस्त	– फ्रास के विरुद्ध तीसरा (ब्रिटेन, रूस और आस्ट्रिया का) सहबध
अक्तूबर २१	– ट्रैफलगर की लडाई सयुक्त फ्रासीसी स्पेनी वेडे पर ब्रिटिश बेडे की विजय
दिसबर २	– औस्टरलिट्ज़ की लडाई
दिसबर २६	– फ्रास और आस्ट्रिया के वीच प्रसबुग की शाति सधि

१८०६ सितबर	—फ्राम र विरुद्ध चौथा (ब्रिटन, प्रशा, रूस, सैक्सनी और स्वीडन रा) महयुध
१८०६ १८०७	—यूरोपीय व्यवस्था (काटिनटल सिस्टम), नपोलियन द्वारा इगलैड की नाकबदी की घोषणा
१८०७ फरवरी ८	—रूसिया और फ्रासीसिया क बीच प्रसिश एयलाऊ री लडाइ
जून १४	—फ्रीडलैड री लडाई
जुलाई ७	—फास और रूस क बीच टिल्सिट की सधि
१८०९	—फ्राम र विरुद्ध पाचवा (आस्ट्रिया और ब्रिटन रा) महयुध
अक्तूबर १४	—आस्ट्रिया और फ्रास क बीच शानब्रुन की शाति सधि
१८१० १८१८	—लैटिन अमरीकी स्वाधीनता सग्रामा का पहला दौर
१८११ जुलाई ५	—वनजुएला गणराज्य की घोषणा
१८११-१८१२	—इगलेड म लडी आन्दोलन
१८१२ जून २४	—नपोलियन की महावाहिनी द्वारा रूस पर आक्रमण
सितबर ७	—बारोदिनो की लडाई
सितबर १४	—फ्रासीसी सैनिको का मास्का म प्रवेश
१८१३, जुलाई १	—ब्रिटिश पार्लियामट द्वारा भारत के साथ व्यापार पर ईस्ट इडिया कपनी के एकाधिकार का निरसन
अक्तूबर १६ १९	—लाइपजिग मे राष्ट्रा का युद्ध
१८१४ मार्च ३१	—पेरिस मे मित्र सेनाओ का प्रवेश
अप्रैल ६	—फ्रास म बूर्बो राजवश का पुन सिहासनारोहण

१८१४, अक्तूबर	–वियना काग्रस (जून १८१५ तक)
१८१४	–स्पेन म बूर्बो राजवश का पुन स्थापन
१८१५, मार्च-जून	–सौ दिन नपोलियन द्वारा विजय क लिए अतिम प्रयास
जून, १८	–वाटरलू की लडाई म नपोलियन की पूर्ण पराजय
सितबर, २६	–पवित्र सहबध की स्थापना
१८१६, जुलाई ६	–ला प्लाटा (१८२६ स अर्जेंटीना गणराज्य) के ११ सयुक्त प्रातो की स्वाधीनता की घोषणा
१८१७ १८१८	–भारत म अग्रजा द्वारा मराठा महासघ का विखडन
१८१९, अगस्त १६	–पीटरलू हत्याकाड मैनचेस्टर मे ससदीय सुधारो की माग के लिए आयोजित सभा का सेना द्वारा दमन
दिसबर १७	–विशाल कोलबिया गणराज्य की उदघोषणा
१८२० १८२३	–स्पेन की क्राति
१८२०-१८२१	–इटली की क्राति
१८२१ अप्रैल	–यूनान म स्वाधीनता सग्राम की शुरूआत
सितबर २८	–मेक्सिको की स्वाधीनता की घोषणा
१८२२ सितबर ७	–ब्राजील की स्वाधीनता की घोषणा
१८२३ जुलाई १	–मध्य अमरीका द्वारा स्वाधीनता घोषणापत्र का अगीकरण
१८२४ १८२६	–प्रथम आग्ल-बर्मी युद्ध
१८२४-१८२९	–रूस-तुर्की युद्ध
१८२५ दिसबर १४	–सेट पीटर्सबर्ग मे दिसबरी विद्रोह

१८३० फरवरी ३	—लदन की सधि यूनान की स्वाधीनता की मान्यता
जून १४	—अल्जीरिया पर फ्रासीसी सेनाओ का हमला
जुलाई २७ २६	—फ्रास की जुलाई क्राति
१८३१-१८३३	—मिस्र तुर्की युद्ध
१८३१ १८३४	—लियो के कपडा मजदूरो के दगे
१८३२ जून ४	—इगलैड मे ससदीय सुधार विधयक पारित
१८३३ जुलाई ८	—रूस और तुर्की के बीच उकार इस्केलेस की सधि
१८३४	—तुर्की मे सामती सैनिक भू धारण प्रथा का उन्मूलन
१८३६	—अदन पर ब्रिटेन का आधिपत्य
नवबर ३	—तुर्की मे सुधार कार्यक्रम की घोषणा
१८३६-१८४०	—दूसरा तुर्की मिस्र युद्ध
१८३६ १८४२	—पहला आग्ल-अफगान युद्ध
१८३६-१८४२	—पहला अफीम युद्ध (ब्रिटेन और चीन के बीच)
१८३६-१८४८	—इगलैड मे चार्टिस्ट आदोलन
१८४२ अगस्त २६	—नानकिंग की सधि ब्रिटेन की चीन के साथ पहली असमान सधि। हागकाग पर ब्रिटेन का अधिकार
१८४४ जून ४ ५	—सिलेशिया के कपडा मजदूरो की बगावते
१८४४	—सयुक्त राज्य अमरीका और फ्रास की चीन के साथ असमान सधिया
१८४५-१८४६ १८४८ १८४६	—आग्ल सिख युद्ध
१८४६ १८४८	—सयुक्त राज्य अमरीका और मेक्सिको के बीच युद्ध

१८४७, जून	—न्यायप्रियो की लीग का कम्युनिस्ट लीग के रूप म पुनर्गठन
१८४८, फरवरी	—मार्क्स और एगल्स द्वारा कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र की रचना
फरवरी २२ २४	—पेरिस म क्राति जुलाई बादशाहत का पतन
फरवरी २४	—फ्रास मे गणराज्य की उदघोषणा
मार्च १३-१५	—वियेना मे विप्लव
मार्च १५	—हगरी की क्राति
मार्च १७ २२	—वेनिस की क्राति गणराज्य की उदघोषणा
मार्च १८-१९	—वर्लिन की क्राति
मार्च १८ २२	—मिलान म विप्लव
मई १५-१६	—नेपल्स क विप्लव का दमन
मई १८	—फ्रैकफर्ट मे अखिल जमन ससद का उद्घाटन
जून १२-१७	—प्राग मे विप्लव
जून २३-२६	—पेरिस क मजदूरा का विप्लव
नवबर ४	—फ्रास की सविधान सभा द्वारा दूसर गणराज्य का सविधान पारित
नवबर १५	—रोम म विप्लव
दिसवर ५	—प्रशियाई सविधान सभा भग
दिसवर १०	—लुई नेपोलियन फ्रासीसी गणराज्य का राष्ट्रपति निर्वाचित
१८४८-१८५२	—ईरान म बाबी विद्रोह
१८४९, अप्रैल १४	—हगरियाई ससद द्वारा हगरी की स्वाधीनता की उद्घोषणा
मई ३-जुलाई २३	—सैक्सनी वादन और फाल्त्स म विद्रोह

जून १६	– फ्रैंकफर्ट मसद भग
अगस्त २२	– वनिस गणराज्य का पतन
अगस्त	– हगरियाई क्राति का दमन
१८५० १८६६	– चीन म ताइ पिग विद्राह
१८५१	– ताइ पिग क्रातिकारियो द्वारा "महासौभाग्य शाली दिव्य साम्राज्य" की स्थापना
दिसवर २	– लुई बोनापार्त द्वारा सत्ता पर अधिकार
१८५२ दिसवर २	– फ्रास म दूसरे साम्राज्य की स्थापना, लुइ बोनापार्त का नपोलियन तृतीय बनना
१८५३-१८५६	– क्रीमियाई युद्ध
१८५४ मार्च ३१	– प्रथम जापान-अमरीका सधि
१८५५, फरवरी ७	– प्रथम रूस जापान सधि
१८५६-१८६०	– दूसरा अफीम युद्ध (चीन के विरुद्ध ब्रिटेन तथा फ्रास)
१८५७-१८५९	– ब्रिटिश शासन क विरुद्ध भारतीया का स्वाधीनता सग्राम
१८५८	– ब्रिटेन, फ्रास, रूस और सयुक्त राज्य अमरीका के साथ चीन की असमान सधिया
१८५८ १८६२	– वियतनाम के विरुद्ध फ्रास के सैनिक अभियान
१८५९	– मोल्दाविया और वलाखिया का एकीकरण और स्वतन्त्र रूमानिया की स्थापना
१८६० अक्तूबर-नवबर	– चीन, ब्रिटेन, फ्रास और रूस के बीच पीकिंग की सधिया
१८६१, मार्च	– इटली राज्य की स्थापना
मार्च ३ (फरवरी १९)	– रूस मे भूदासप्रथा का उन्मूलन
१८६१-१८६५	– अमरीकी गृहयुद्ध

१८६१ — रूस म 'जम्ल्या इ वाल्या' नामक गुप्त समाज की स्थापना

१८६३ — पोल विद्राह (जनवरी १८६३–मार्च १८६४)

मई — जर्मन मजदूर महासघ की स्थापना

अगस्त ११ — कवाडिया का फ्रासीसी सरक्षित राज्य बनना

१८६४, सितबर २८ — प्रथम इटरनेशनल की स्थापना

१८६५, जनवरी ३१ — सयुक्त राज्य अमरीका म दासप्रथा का उन्मूलन

१८६७, फरवरी ८ — आस्ट्रिया हगरी के दोहरे राजतत्र की स्थापना

अगस्त १५ — इगलैड म दूसरा ससदीय सुधार विधेयक पारित

१८६७-१८६८ — जापान की बूर्जुआ क्राति (माइजी पुन स्थापन)

१८६९ अगस्त ७-९ — आइजेनाख म जर्मन सामाजिक-जनवादी पार्टी की उद्घाटन काग्रस

१८७०, जुलाई १९ — फ्रास प्रशा युद्ध की शुरूआत

सितबर १-२ — सेदान म फ्रासीसी सेनाओ का आत्मसमर्पण

सितबर ४ — पेरिस म विद्रोह दूसरे साम्राज्य का पतन राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार का गठन

१८७१, जनवरी १८ — प्रशा के विल्हेल्म प्रथम जर्मनी का सम्राट घोषित

जनवरी २८ — पेरिस का आत्मसमर्पण फ्रास तथा आस्ट्रिया के बीच युद्धविराम सधि

जनवरी — इटली का पूर्ण एकीकरण

मार्च १८ — पेरिस मे विप्लव राष्ट्रीय गार्ड की केद्रीय समिति का सत्ता पर अधिकार

मार्च १९-२७ — फ्रास मे विप्लव मार्सेल्ज लियो तुलूज और अन्य नगरो म कम्यूनो की उदघोषणा

मार्च २६-२८ — चुनावो क बाद पेरिस कम्यून की उदघोषणा

अप्रैल १६ — जर्मनी मे शाही सविधान पारित

मई १०	– फ्रैंकफर्ट मे जर्मनी और फ्रास के बीच शाति सधि
मई २८	– पेरिस कम्यून का दमन
१८७५ मई २३-२६	– गोथा काग्रेस के उपरात जर्मन सामाजिक जनवादी मजदूर पार्टी की स्थापना
१८७६	– रूस म नरोदवादी गुप्त क्रातिकारी सगठन की स्थापना
	– सयुक्त राज्य अमरीका मे मजदूर लेबर पार्टी की स्थापना (१८७७ से समाजवादी मजदूर पार्टी के नाम से ज्ञात)
१८७७, अप्रैल १२	– ब्रिटेन द्वारा ट्रासवाल का अधिनहन
१८७७ १८७८	– रूस-तुर्की युद्ध
१८७८ जून ४	– ब्रिटेन और तुर्की का साइप्रस कवशन, साइप्रस की सत्ता ब्रिटेन को अतरित
जून १३-जुलाई १३	– बर्लिन काग्रेस, बाल्कन समझौता
१८७८ १८८०	– दूसरा आग्ल-अफगान युद्ध
१८७८-१८९०	– जर्मनी म समाजवाद-विरोधी कानून लागू
१८७९ अक्तूबर	– फ्रासीसी मजदूर पार्टी की स्थापना
१८८० १८८२	– फ्रास द्वारा कागो के एक हिस्से पर अधिकार
१८८१ मार्च १	– नरोदनिको द्वारा ज़ार अलेक्सादर द्वितीय की हत्या
नवबर १५	– सयुक्त राज्य अमरीका मे सगठित ट्रेड-यूनियन और मजदूर लीग महासघ की स्थापना (१८८६ स अमरीकी मजदूर महासघ के नाम से ज्ञात)
१८८२ मई २०	– जर्मनी आस्ट्रिया हगरी और इटली का गुप्त सहबध – त्रिपक्षीय सहबध
जुलाई सितबर	– मिस्र पर ब्रिटन का कब्जा

१८८३, अक्तूबर	– रूस म श्रम मुक्ति ल्ल नामक मार्क्सवादी सगठन की स्थापना
१८८५, दिसवर	– भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना
१८८६, जनवरी १	– ब्रिटेन द्वारा बर्मा का अपने साम्राज्य म विलयन
१८८८, दिसवर १८६६, जनवरी	– आस्ट्रिया म सामाजिक-जनवादी पार्टी की स्थापना
१८८६, जुलाई १४-२०	– पेरिस म दूसरे इटरनेशनल की उदघाटन कांग्रेस
१८६०	– हगरी की सामाजिक जनवादी पार्टी की स्थापना
१८६१, जुलाई	– बुल्गारिया की सामाजिक जनवादी पार्टी की स्थापना
१८६२	– इटली की समाजवादी पार्टी की स्थापना
१८६२ १८६३	– रूमानिया की सामाजिक जनवादी पार्टी की स्थापना
१८६३, फरवरी १	– सयुक्त राज्य अमरीका द्वारा हवाई द्वीपसमूह का अधिग्रहण
१८६३	– फ्रास रूस सहबध ब्रिटेन मे स्वतन्त्र मजदूर दल (इडिपेडट लेबर पार्टी) की स्थापना
१८६४ १८६५	– चीन-जापान युद्ध
१८६५, अक्तूबर १	– मडागास्कर फ्रासीसी सरक्षित प्रदेश घोषित
अक्तूबर दिसबर	– सेट पीटर्सबर्ग मे लेनिन की पहल पर मजदूर मुक्ति सघर्ष लीग की स्थापना
१८६५-१८६६	– इटली अबीसीनिया युद्ध
१८६८ मार्च १३-१५	– मीस्क म रूसी सामाजिक जनवादी मजदूर पार्टी की पहली कांग्रेस

अप्रैल २१-अगस्त १२ – स्पेन-अमरीका युद्ध

१८९९ १९०२	– बोअर युद्ध
१८९९-१९०१	– चीन मे बाक्सर विद्रोह
१९००, फरवरी	– इगलैंड म मजदूर प्रतिनिधित्व समिति की स्थापना (१९०६ से लेबर पार्टी के नाम से विज्ञात)
१९०१, मई	– जापान मे सामाजिक-जनवादी पार्टी की स्थापना
१९०३ जुलाई ३० अगस्त २३	– रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की दूसरी काग्रेस, पार्टी मे दो प्रवृत्तिया – बोल्शेविक और मेशेविक – का उदय
१९०४-१९०५	– रूस-जापान युद्ध
१९०४, अप्रैल ८	– मिस्र, मोरक्को तथा अन्य उपनिवशो के बारे मे आग्ल फ्रासीसी समझौता
१९०५, जनवरी २२	– सट पीटर्सबर्ग मे शातिपूर्ण प्रदर्शनकारिया पर गोलियो की वर्षा, पहली रूसी क्राति का आरभ
जनवरी फरवरी	– रूहर के खान मजदूरा की आम हडताल
मार्च	– पहला मोरक्का सकट (जनवरी, १९०६ तक जारी)
जून २७	– युद्ध-पोत पोत्योम्किन" के जहाजिया का विद्रोह
सितबर	– बुडापेस्ट म जनव्यापी राजनीतिक हडताल
अक्तूबर-नवबर	– रूस भर म राजनीतिक हडताल
अक्तूबर ३० (१७)	– जार निकालाई द्वितीय का जनता का राजनीतिक अधिकार दन क आश्वासना स युक्त घोषणापत्र
दिसबर	– मास्को ख्रारकाव चिता और रूसी साम्राज्य के अन्य नगरा म सशस्त्र विद्राह

१६०५-१६११	—ईरान की क्राति
१६०८, जुलाई २३	—युवा तुर्क क्राति
अक्तूबर ५	—बुल्गारिया की स्वाधीनता की घोषणा
अक्तूबर ७	—आस्ट्रिया हगरी द्वारा बोस्निया और हेर्जेगोवीना का अधिनहन बोस्निया सकट की शुरूआत
१६१०, अगस्त	—जापान का कोरिया पर अधिकार
१६१० १६१७	—मेक्सिकी क्राति
१६११, जुलाई नववर	—दूसरा मोरक्को सकट
अक्तूबर १०	—वूचाग विद्रोह, चीन म क्राति का आरभ (१६१३ तक जारी)
१६१२, अगस्त २५	—चीन म कुओमिताग (राष्ट्रीय पार्टी) की स्थापना
अक्तूबर ६	—पहला बाल्कन युद्ध (३० मई १६१३ तक जारी)
१६१३ जून २६-अगस्त १०	—दूसरा बाल्कन युद्ध
जुलाई	—चीन म दूसरी क्राति का आरभ
१६१४, जुलाई २८	—आस्ट्रिया-हगरी द्वारा सर्बिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा
अगस्त १	—जर्मनी द्वारा रूस के विरुद्ध युद्ध की घोषणा
अगस्त ३	—जर्मनी द्वारा फ्रास के विरुद्ध युद्ध की घोषणा
अगस्त ४	—बेल्जियम पर जर्मन आक्रमण ब्रिटेन द्वारा जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा
अगस्त २३	—जापान द्वारा जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा
सितबर ५-१२	—मार्न के तट पर लडाई
१६१५, जनवरी १८	—जापान की चीन स इक्कीस माग
मई २३	—इटली द्वारा आस्ट्रिया हगरी क विरुद्ध युद्ध

	की घोषणा
१९१६ फरवरी २१ दिसबर १८	—वरदन की लडाई
जुलाइ १ नववर १३	—सोम्मे के तट पर लडाई
१९१७ मार्च १२ (२७ फरवरी)	—रूस की बूर्जुआ-जनवादी न्राति, ज़ारशाही का पतन
मार्च १५	—रूस म अस्थायी सरकार का गठन
अप्रेल ६	—सयुक्त राज्य अमरीका द्वारा जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा
जून १६ जुलाई ७	—मजदूरो और सैनिको के प्रतिनिधियो की पहली अखिल रूसी काग्रेस

हमारे नये प्रकाशन

प्रकाशित हो चुकी है

भारत का सामाजिक-आर्थिक विकास

(१८ – २० सदी)

पुस्तक मे भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास के महत्त्वपूर्ण चरणो पर प्रकाश डाला गया है। देश के आर्थिक विकास के विश्लेषण की ओर विशेष ध्यान दिया गया है पूजीवाद के उद्भव तथा भारतीय अर्थव्यवस्था के बहुपद्धतियोवाले ढांचे के गठन पर विस्तार से गौर किया गया है। भारत के समसामयिक आर्थिक विकास की समस्याओ का विश्लेषण किया गया है औद्योगीकरण की नीति के निरूपण और इस प्रक्रिया मे राज्य की भूमिका की ओर तथा राज्य द्वारा औद्योगिक आर्थिक विकास के नियमन के प्रश्नो की ओर खास तौर पर ध्यान दिया गया है। कृषि क्राति की समस्याओ तथा उसके विकास के मार्गों पर विचार किया गया है।

प्रकाशित होनेवाली है

व० अफनास्येव

वैज्ञानिक कम्युनिज्म के मूल सिद्धात

विख्यात सोवियत विद्वान, अकादमीशियन व० अफनास्येव ने इस पुस्तक म सरल तथा सुगम शैली मे वैज्ञानिक कम्युनिज्म के मूलभूत तत्वो पर प्रकाश डाला है और बताया है कि वैज्ञानिक कम्युनिज्म के सिद्धात का आविर्भाव तथा विकास कैसे हुआ। लेखक ने समाजवादी क्राति तथा आधुनिक कम्युनिस्ट व मज़दूर आन्दोलन, समाजवादी समाज के विकास तथा उसके कम्युनिस्ट समाज म रूपातरण, कम्युनिज्म के माली व तकनीकी आधार के निर्माण, कम्युनिस्ट सामाजिक सबधो की स्थापना, समाजवादी समाज के वैज्ञानिक सचालन और व्यक्ति के सर्वागीण विकास आदि प्रश्नो पर भी बहुत ध्यान दिया है।

पुस्तक के अत मे विषय निर्देशिका दी गयी है।

पाठको से

प्रगति प्रकाशन
इस पुस्तक की विषयवस्तु
अनुवाद और डिज़ाइन के बारे म
आपक विचार जानकर
आपका अनुगृहीत होगा।
आपक अन्य सुझाव प्राप्त करके भी
हम बडी प्रसन्नता हागी।

कृपया हमे इस पते पर लिखिये

प्रगति प्रकाशन
१७, जूबोव्स्की बुल्वार,
मास्को,
सोवियत सघ